।। कोबातीर्थमंडन श्री महावीरस्वामिने नमः ।।

।। अनंतलब्धिनिधान श्री गौतमस्वामिने नमः ।। ।। गणधर भगवंत श्री सुधर्मास्वामिने नमः ।।

।। योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।। ।। चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीमद् कैलाससागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।।

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

पुनितप्रेरणा व आशीर्वाद

राष्ट्रसंत श्रुतोद्धारक आचार्यदेव श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

जैन मुद्रित ग्रंथ स्केनिंग प्रकल्प

ग्रंथांक : १

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-३८२००७ (गुजरात)
(079) 23276252, 23276204
फेक्स : 23276249
Websiet : www.kobatirth.org
Email : Kendra@kobatirth.org

शहर शाखा

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
शहर शाखा
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
त्रण बंगला, टोलकनगर
परिवार डाइनिंग हॉल की गली में
पालडी, अहमदाबाद – ३८०००७
(079) 26582355



भारत-भैषज्य-रत्नाकर

भाग ५

रसवैद्य नगिनदास छगनलाल शाह

आयुर्वेदीय साहित्य में फार्माकोपिया के अभाव को ध्यान में रखकर इस ग्रन्थ को परिश्रमपूर्वक तैयार किया गया था और आज भी यह ग्रन्थ उतना ही उपयोगी है जितना तब था। इसमें क्वाथ, चूर्ण, अवलेह, गुटिका, घृत, तैल, रस इत्यादि प्रकरणों में विभक्त दस सहस्र से अधिक प्राचीन एवं आर्वाचीन प्रयोगों का संग्रह सैकड़ों ग्रन्थों का मन्थन करके किया गया है।

इस ग्रन्थ में कोश-शैली का अनुसरण किया गया है, जिससे इष्ट प्रयोग बिना किसी कठिनाई के ढूंढा जा सकता है। एक और लाभ इस शैली का यह है कि भिन्न-भिन्न ग्रन्थों और पृथक्-पृथक् अधिकारों में एक नाम के जितने प्रयोग पाए जाते हैं वे सब इसमें एक ही स्थान में आ गए हैं। उद्धरण जिन ग्रन्थों से लिए गए हैं उनके नाम एवं अधिकार भी दे दिए गए हैं। रोगानुसारिणी सूची "चिकित्सापथ-प्रदर्शिनी" नाम से अन्त में दे दी गई है, जिससे ग्रन्थ की व्यावहारिक उपयोगिता बहुत बढ़ गई है।

(सम्पूर्ण ५ भागों में) मूल्य: रु० ५००

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

पञ्चम भाग

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

पञ्चम भाग

संग्रहकर्ता
रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह

व्याख्याकार
भिषग्रत्न गोपीनाथ गुप्त

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास

मोतीलाल बनारसीदास
मुख्य कार्यालय : बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली ११० ००७
शाखाएँ : चौक, वाराणसी २२१ ००१
अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४
६ अपर स्वामी कोइल स्ट्रीट, मैलापुर, मद्रास ६०० ००४

प्रथम संस्करण : ऊँझा (उत्तर गुजरात), १६२४-३७
पुनर्मुद्रण : दिल्ली, १६८५
मूल्य : रु० ५०० (पांच भागों में सम्पूर्ण)

नरेन्द्र प्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली ७
द्वारा प्रकाशित तथा शान्तिलाल जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस, ए-४५,
फेज-१, नारायणा, नई दिल्ली २८ द्वारा मुद्रित।

द्रष्टव्य

इस ग्रन्थ के तीसरे, चौथे और पांचवें भाग की टीका में जल, दुग्ध, तैलादि द्रव पदार्थों का परिमाण परिभाषा के अनुसार द्विगुण करके लिखा गया है, अर्थात् जहां मूलपाठ में १ प्रस्थ है वहां टीका में २ प्रस्थ (२ सेर) लिखा है, इत्यादि। परन्तु प्रथम और द्वितीय भाग में द्विगुण करके नहीं लिखा। अतएव उन भागों में हिन्दी टीका में द्रव पदार्थों का जितना परिमाण लिखा हो परिभाषा के अनुसार उससे द्विगुण लेना चाहिए।

प्रयोग-निर्माण के समय प्रथम भाग के परिशिष्ट में दिए हुए 'मान-परिभाषा' शीर्षक लेख को अवश्य पढ़ लेना चाहिए।

विषयानुक्रमणिका

चिकित्सा-पथप्रदर्शिनी की अनुक्रमणिका

पञ्चम भाग

॥ ॐ ॥

भारत-भैषज्य-रत्नाकरः

पञ्चमो भागः

॥ श्री धन्वन्तरये नमः ॥

अथ मङ्गलाचरणम्

यो गोपिकावस्त्रहरोऽप्यचौरः
मायाविकारोपगतोऽप्यदोषः ।
यो दृश्यते योगिजनेन योगे
तथाप्यरूपी तमहं भजिष्ये ॥*

देवेन्द्रैर्महितं विकल्परहितं यत् सच्चिदानन्दितम्
संसाराकलितं जगत्त्रयहितं कल्याणकल्पद्रुमम् ।
मायामारविकारमोहगलितं तद्धाम शिवं स्फुरन्
नत्वाऽहं प्रविशामि भारत-भिषग्-भैषज्य-रत्नाकरम् ॥

*गावः इन्द्रियाणि, तानि पाति रक्षतीति गोपो मनः, तस्य स्त्री गोपिका; अविद्या, तदेव वस्त्रावरणं, तद्धरतीति गोपिकावस्त्रहरः। द्वितीय श्लेषे तु स्पष्टमिदं अतएवाप्यचौरः—अस्तेनः। मा लक्ष्मीः, तस्यायः प्राप्तिस्तत्रापि अविकारः विकाररहितः, तमुपगतः सम्प्राप्तः। द्वितीय श्लेषे तु स्पष्टमिदं अतएवाप्यदोषः दोषरहितः।

यश्च योगिनां जनः समुदायस्तेन योगे योगमार्गे दृश्यते तथाप्यरूपीत्युच्यते। तं ईश्वरं अहं भजिष्ये भजिष्यामि वा।

श

अथ शकारादिकषायप्रकरणम्

(७१७१) शक्राह्वादिक्वाथः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

क्वथितं तण्डुलपयसा शक्राह्वकटुरोहिणीसहितम् ।
क्वाथं यष्टीमधुना विनाशनं पित्तज्वराणां तु ॥

इन्द्रजौ, कुटकी और मुलैठी समान भाग ले कर सबको चावलोंके पानीमें पका कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ पित्त ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(७१७२) शक्राह्वादिक्वाथः (२)

(वृ. नि. र. । विषमज्वरा.)

शक्राह्वदद्रुघ्नवृषामृतानां
निर्गुण्डिकाभृङ्गमहौषधानाम् ।
क्षुद्रायवानीसहितः कषायः
शीतज्वरारण्यहिरण्यरेताः ॥

इन्द्रजौ, पंमाड़, बासा, गिलोय, संभालु, भंगरा, सोंठ, कटेली और अजवायन समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ शीत ज्वरको इस प्रकार नष्ट कर देता है जिस प्रकार दावानल बनको ।

(७१७३) शङ्खपुष्पीरसयोगः

(यो. र. । छर्दि.)

शङ्खपुष्पीरसं टङ्कद्वयं समरिचं मुहुः ।
सक्षौद्रं मनुजः पीत्वा छर्दिभ्यः किल मुच्यते ॥

शंखपुष्पीका रस १० माशे ले कर उसमें (१ माशा) काली मिर्चका चूर्ण और (२ तोले) शहद मिला कर पीनेसे छर्दि अवश्य नष्ट हो जाती है ।

(७१७४) शठ्यादि कल्कः

(वृ. मा. । आमवा. ; ग. नि. । आमवा. २२ ; व. से. । आमवाता.)

शठीविश्वौषधीकल्कं वर्षाभूक्वाथसंयुतम् ।
सप्तरात्रं पिबेज्जन्तुरामवातविपाचने ॥

कचूर और सोंठके कल्कको पुनर्नवा (साठी) के क्वाथमें मिला कर पीनेसे सात दिनमें आमवातका नाश होता है ।

(७१७५) शठ्यादिकषायः (१)

(वै. जी. । विलास १)

शठी शुण्ठी रेणुः सुरतरुरनन्ता च बृहती
घनस्तिक्ता तिक्तं खलु नवभिरेभिर्विरचितः ।
कषायः पीतोऽयं मधुकणविमिश्रः शमयति
त्रिदोषं निश्शेषं विषममपि जीर्णज्वरमपि ॥

कचूर, सोंठ, पित्तपापड़ा, देवदारु, अनन्तमूल, कटेली, नागरमोथा, कुटकी और चिरायता समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें शहद और पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे सन्निपात, विषमज्वर और जीर्णज्वरका नाश होता है।

(७१७६) **शठ्यादिकषायः** (२)

(यो. र. । कासा. ; वृ. नि. र. । कासा. ; वृ. यो. त. । त. ७८ ; व से. । कासा.)

शठी ह्रीबेर बृहती शर्करा विश्वभेषजम् ।
एतं क्वाथं पिबेत्पूतं सघृतं पित्तकासनुत् ॥

कचूर, सुगन्धबाला, कटेली और सोंठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें खांड और घी मिलाकर पीनेसे पित्तज खांसी नष्ट होती है।

(७१७७) **शठ्यादिक्वाथः** (१)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शठीपुष्करभार्गीभिर्पाठाकट्फलदारुभिः ।
पर्पटारिष्टशृङ्गीभिः पिबेत्क्वाथं कफज्वरे ॥

कचूर, पोखरमूल, भरंगी, पाठा, कायफल, देवदारु, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल और काकड़ासिंगी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कफज्वरको नष्ट करता है।

(७१७८) **शठ्यादिक्वाथः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २९)

शठीसौवर्चलं शुण्ठी पाचनं क्वाथ गुल्मिने ।

गुल्म रोगमें कचूर और सोंठके क्वाथमें संचल (काला नमक) मिलाकर पीना चाहिये।

(७१७९) **शठ्यादिक्वाथः** (३)

(भा. प्र. । म. खं. २ ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

शठी निशाद्वयं दारु शुण्ठी पुष्करमूलकम् ।
एला गुडूची कटुका पर्पटश्च यवासकः ॥
शृङ्गी किराततिक्तश्च दशमूली तथैव च ।
क्वाथमेषां पिबेत्कोष्णं सिन्धुचूर्णयुतं नरः ॥
ज्वरान्सर्वान्द्रुतं हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥

कचूर, हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, सोंठ, पोखरमूल, इलायची, गिलोय, कुटकी, पित्तपापड़ा, जवासा, काकड़ासींगी, चिरायता और दशमूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें सेंधानमक मिला कर गर्म गर्म (मन्दोष्ण) पीनेसे समस्त प्रकारके ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(७१८०) **शठ्यादिक्वाथः** (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

शठीवचानागरकट्फलानां
वत्सादनी धन्वयवासकानाम् ।
क्वाथो हितः सर्वभवे ज्वरे च
सम्पाचनं स्यान्मनुजे त्रिदोषे ॥

कचूर, वच, सोंठ, कायफल, गिलोय और धमासा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ त्रिदोषज ज्वरमें दोषोंको पचाता है।

(७१८१) शठ्यादिक्काथः (५)

(ग. नि. । ज्वरा. १ ; कृम्य. ६)

शठ्याखुपर्णीकृमिहाविशाला
ह्रीबेरमेला सुरदारुशिग्रुः ।
किराततवासाकुटजोग्रगन्धा-
निशाद्वयं तिक्तकरोहिणी च ॥
कषाय एषां कृमिजातरोग-
युक्तं त्रिदोषं शमयेदुदीर्णम् ॥

कचूर, मूषाकर्णी, बायबिड़ंग, इन्द्रायण, सुगन्धवाला, इलायची, देवदारु, सहंजनेकी छाल, चिरायता, वासा, कुड़ेकी छाल, बच, हल्दी, दारुहल्दी और कुटकी समान भाग ले कर काथ बनावें ।

यह काथ कृमिरोग और ज्वरको नष्ट करता है ।

(७१८२) शठ्यादिक्काथः (६)

(यो. र. । आमवाता. ; वृ. मा. । आमवा.; ग. नि. । आमवाता. २२; भा. प्र. । म. खं. २)

शठी शुण्ठ्यभया चोग्रा देवाह्वाऽतिविषाऽमृता ।
कषायमामवातस्य पाचनं रूक्षभोजिनाम् ॥

कचूर, सोंठ, हर्र, बच, देवदारु, अतीस और गिलोय समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसे सेवन करने और रूक्षाहार करनेसे आमवात रोगमें दोषोंका पाचन होता है ।

(७१८३) शठ्यादिगणः

(च. द. । ज्वरा. ; वृ. मा. । ज्वरा. ; ग. नि. । ज्वरा. १ ; व. से. । ज्वरा.)

शठी पुष्करमूलं च व्याघ्री शृङ्गी दुरालभा ।
गुडूची नागरं पाठा किरातं कटुरोहिणी ॥
एष शठ्यादिको वर्गः सन्निपातज्वरापहः ।
कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिश्वासे तन्द्र्यां च शस्यते ॥

कचूर, पोखरमूल, कटेली, काकड़ासिंगी, धमासा, गिलोय, सोंठ, पाठा, चिरायता और कुटकी समान भाग ले कर काथ बनावें ।

यह काथ सन्निपात, कास, हृद्ग्रह, पार्श्वपीड़ा, श्वास और तन्द्राको नष्ट करता है ।

(७१८४) शठ्यादिपाचनम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

सठी किराततं कटुका विशाला
गुडूचिशृङ्गी बृहतीद्वयं च ।
महौषधं पौष्करधन्वयास
रास्ना सुराह्वं गजपिप्पली च ॥
पीतं तु निःक्वाथ्य हितं नराणां
सठ्यादिचातुर्दशकं प्रशस्तम् ।
हिनस्ति तन्द्राश्वसनं शिरोऽर्तिं
जाड्यं सशूलज्वरमाशु हन्ति ॥

कचूर, चिरायता, कुटकी, इन्द्रायणकी जड़, गिलोय, काकड़ासींगी, छोटी और बड़ी कटेली, सोंठ, पोखरमूल, धमासा, रास्ना, देवदारु और गजपीपल समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसके सेवनसे ज्वर नष्ट होता तथा तन्द्रा, श्वास, शिरपीड़ा, जड़ता और शूलादि ज्वरके उपद्रव शान्त होते हैं ।

(७१८५) शतपुष्पादिकषायः

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शतपुष्पा वचा कुष्ठं देवदारु हरेणुका ।

कुस्तुम्बरूणि नलदं मुस्तं चैवाप्सु साधयेत् ॥
क्षौद्रेण सितया वापि युक्तः क्वाथो अनिलात्मके ।

सोया, बच, कूठ, देवदारु, रेणुका, कुस्तुम्बरु, जटामांसी (अथवा पीली खस), और नागरमोथा समान भाग ले कर क्काथ बनावें ।

इसमें शहद या मिश्री मिला कर पीनेसे वातज ज्वर नष्ट होता है ।

(कफ विशेष हो तो शहद मिलाना चाहिये और वायुके साथ पित्त हो तो मिश्री मिलानी चाहिये ।)

(७१८६) शतमूलीक्काथः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२.)

शतमूलिकायाः क्वथितः कषायः
पीतः कणाचूर्णयुतः सुखोष्णः ।
नृणां निहन्यान्मरुतोद्भवं तु
कासं सशूलं च विपाचनं स्यात् ॥

शतावरके मन्दोष्ण क्काथमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे वातज कास और शूलका नाश होता है ।

(७१८७) शतावरीकल्कः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २३)

शतावरी वचा शुण्ठी रास्नाकदरशल्लकी ।
दशमूली बला बिल्वस्तुम्बुरु च गुडूचिका ॥
एष कल्को घृतैर्युक्तो हन्ति वातं शरीरगम् ॥

सतावर, बच, सोंठ, रास्ना, सफेद खैर, शल्लकी वृक्षका गोंद (या छाल), दशमूल, खरैटी, बेलछाल, तुम्बरु (धनियाभेद) और गिलोय समान भाग ले कर सबको पानीके साथ पीसकर कल्क (पिट्ठीसी) बनावें ।

इसे घीमें मिला कर सेवन करनेसे शरीर गत वायु नष्ट होता है ।

(मात्रा—४ माशे)

(७१८८) शतावरीकल्कः (२)

(भा. प्र. । म. खं. २; वृ. यो. त । त. ६४)

पीत्वा शतावरीकल्कं पयसा क्षीरभुग् जयेत् ।
रक्तातिसारं पीत्वा वा तया सिद्धं घृतं नरः ॥

शतावरीके कल्कको दूधके साथ सेवन करने और दुग्धाहारपर रहनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है ।

शतावरीके साथ सिद्ध घृत सेवन करनेसे भी रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(७१८९) शतावरीकल्कः (३)

(यो. र. । प्रसूतरो.)

शतावरी क्षीरपिष्टा पीता स्तन्यविवर्द्धिनी ।
कवोष्णं कणया पीतं क्षीरं क्षीरविवर्द्धनम् ॥

(१) शतावरको दूधमें पीस कर पीनेसे स्त्रियोंके स्तनोंमें दूध बढ़ जाता है ।

(२) मन्दोष्ण दूधमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे भी स्तनोंमें दूध बढ़ जाता है ।

(७१९०) शतावरीमूलयोगः

(हा. स. । स्था. ३ अ. ३२;)

पिबेच्छतावरीमूलं शीतपानीयचूर्णितम् ।
अतः शर्कररोगार्तः शर्करासंप्रयोजितम् ॥

शतावरकी जड़को ठण्डे पानीमें पीस कर, मिश्री मिला कर पीनेसे शर्कराका नाश होता है।

(७१९१) शतावरीयोगः

(ग. नि. । अपस्मारा. ३)

क्षीरान्नाशी शतावर्याः प्रातर्मूलरसं पिबेत् ।
शृतं चूर्णं तथा क्षीरमपस्मारप्रशान्तये ॥

प्रातःकाल शतावरीकी जड़का रस, या शतावरका काथ, या चूर्ण अथवा शतावरसे सिद्ध किया हुवा दूध सेवन करनेसे अपस्मार नष्ट होता है।

इस प्रयोगके सेवन कालमें केवल दूध भात पर रहना चाहिये।

(७१९२) शतावरीस्वरसः

(भै. र. । प्रमेहा.)

शतावर्या रसं नीत्वा क्षीरेण सह यः पिबेत् ।
प्रमेहा विंशतिस्तस्य क्षयं यान्ति न संशयः ॥

शतावरके रसको दूधमें मिला कर पीनेसे २० प्रकारके प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

(७१९३) शतावर्यादिकषायः

(वं. से. । रक्तपित्ता. ; यो. र. ; वृ. नि. र.)

शतावरी वरा रास्ना काश्मर्यसपरूषकम् ।
पाययेद्रक्तपित्तघ्नं सद्यः शूलहरं परम् ॥

शतावर, त्रिफला, रास्ना, खम्भारीकी छाल और फालसेकी छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसके सेवनसे रक्तपित्त शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(७१९४) शतावर्यादिक्काथः (१)

(यो. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

शतावर्यास्तु मूलानां निष्क्वाथःससितामधु ।
मूत्रदोषं निहन्त्याशु वातपित्तकफोद्भवम् ॥

शतावरकी जड़के क्वाथमें मिश्री और शहद मिला कर पीनेसे वातज, पित्तज तथा कफज मूत्रदोषों (मूत्रकृच्छ्रादि) का नाश होता है।

(७१९५) शतावर्यादिक्काथः (२)

(वृ. मा. । शूला. ; यो. र. ; ग. नि. । शूला. २३; च. द. । शूला. २६; भै. र. । शूला.)

शतावरी सयष्ट्याह्ववाट्यालकुशगोक्षुरैः ।
शृतशीतं पिबेत्तोयं सगुडक्षौद्रशर्करम् ॥
पित्तासृग्दाहशूलघ्नं सद्यो दाहज्वरापहम् ॥

शतावर, मुलैठी, खरैटी, कुश और गोखरु समान भाग ले कर काथ बनावें।

इसे ठण्डा करके गुड़, शहद या खांड मिला कर पीनेसे रक्तपित्त, दाह, शूल और दाह युक्त ज्वरका नाश होता है।

(७१९६) शतावर्यादिक्काथः (३)

(वृ. मा. । शूला. ; वृ. नि. र. । शूला. ; भै. र. ; यो. र. । शूला.)

शतावरीरसं क्षौद्रयुक्तं[१] प्रातः पिबेन्नरः ।
दाहशूलोपशान्त्यर्थं सर्वपित्तामयापहम् ॥

शतावरके स्वरसमें शहद मिला कर प्रातःकाल सेवन करनेसे दाह, शूल और अन्य पित्तज रोगोंका नाश होता है।

१ क्षीरं क्षौद्रमिति पाठान्तरम्।

(७१९७) **शतावर्यादिक्काथः** (४)

(भा. प्र.; ग. नि. । मूत्रकृच्छ्रा. ; वृ. मा. । मूत्रकृच्छ्रा.; यो. र.; व. से.; च. द.; वृ. नि. । मूत्रकृ)

शतावरीकाशकुशश्वदंष्ट्रा
विदारिशालीक्षुकसेरुकाणाम् ।
क्वाथं पिबेन्माक्षिकसम्प्रयुक्तं
कृच्छ्रे सदाहे सरुजे विबन्धे ॥

शतावर, कास, कुशकी, जड़, गोखरु, विदारीकन्द, शाली धान्यकी जड़, ईखकी जड़, और कसेरु समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे दाह और पीड़ायुक्त मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है ।

(७१९८) **शतावर्यादिद्वादशाङ्गकषायः**

(ग. नि. । वाता. १९)

शतावरीपुष्करमूलमुस्ता
पथ्यामृताः सातिविषाः सरास्नाः ।
वराटरूषः सुरदारु शुण्ठी
दुरालभा वातहरः कषायः ॥

शतावर, पोखरमूल, नागरमोथा, हर्र, गिलोय, अतीस, रास्ना, त्रिफला, बासा, देवदारु, सोंठ और धमासा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वातव्याधिको नष्ट करता है ।

(७१९९) **शतावर्यादिपयः**

(यो. र. । मूर्च्छा.)

शतावरीबलामूलद्राक्षासिद्धं पयः पिबेत् ।
ससितं भ्रमनाशाय बीजं वाट्यालकस्य च ॥

शतावर, बला (खरैटी) की जड़ और मुनक्काके साथ पकाया हुवा दूध मिसरी मिला कर पीने या खरैटीके बीजों (बीज बन्द) का चूर्ण सेवन करनेसे भ्रम (मूर्च्छा) का नाश होता है ।

(ओषधियां २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी ८० तोले । मिला कर पानी जलने तक पकावें ।)

(७२००) **शतावर्यादियोगः**

(ग. नि. । रक्तपित्ता. ८)

शतावरीगोक्षुरके शृतं वा
शृतं पयो वाऽप्यथ पर्णिनीभिः ।
रक्तं निहन्त्याशु विशेषतस्तु
यन्मूत्रमार्गात्सरुजं प्रयाति ॥

शतावर और गोखरुके साथ या शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी और माषपर्णीके साथ पकाया हुवा दूध पीनेसे मूत्र मार्गसे पीड़ाके साथ निकलने वाला रक्त बन्द हो जाता है ।

(ओषधियां २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी ८० तोले । पानी जलने तक पकावें ।)

(७२०१) **शतावर्यादिरसः**

(यो. र. । अश्मर्य.)

शतावरीमूलरसो गव्येन पयसा समः ।
पीतो निपातयत्याशु ह्यश्मरीं चिरजामपि ॥

शतावरके स्वरसको गोदुग्धमें मिला कर सेवन करनेसे पुरानी अश्मरी भी शीघ्र ही निकल जाती है ।

(७२०२) शतावर्यादिस्वरसः (१)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शतावरीगुडूचीभ्यां स्वरसो यन्त्रपीडितः ।
गुडप्रगाढः शमयेत्सद्यो वातात्मकं ज्वरम् ॥

शतावर और गिलोयके स्वरसको गुड़से मीठा करके पीनेसे वातज्वर शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(७२०३) शतावर्यादिस्वरसः (२)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । मूत्राघाता.)

वरीगोक्षुरभूधात्री मूलानां स्वरसं पलम् ।
माषमेकं यवक्षारं सौरं माषद्वयं तथा ॥
द्विगुञ्जं टङ्कणक्षारं सर्वमेकत्र मेलयेत् ।
पिबेत्तत्तु विनाशाय मूत्राघाते सुदारुणे ॥

शतावरकी जड़का रस, गोखरुकी जड़का रस और भुई आमलेकी जड़का रस समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें । ५ तोले इस रसमें १ माषा जवाखार, २ माशे केशर और २ रत्ती सुहागेकी खील मिला कर पीनेसे भयंकर मूत्राघात भी नष्ट हो जाता है।

(७२०४) शताह्वादिकल्कः

(व. से. । गुल्मा. ; वृ. मा. ; यो. र. । गुल्मा.)

शताह्वा चिरबिल्वत्वग्दारुभार्ङ्गीकणाभवः ।
कल्कः पीतो जयेद्गुल्मं तिलक्वाथेन रक्तजम् ॥

सोया, करञ्ज, दालचीनी, देवदारु, भरंगी और पीपल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ पीस कर कल्क (पिट्ठीसी) बनावें ।

इसे तिलके काथके साथ सेवन करनेसे रक्तज गुल्म नष्ट होता है ।

(७२०५) शम्पाकादिक्वाथः

(भै. र. । वातरक्ता.)

शम्पाकामृतवासानामेरण्डस्नेहसंयुतम् ।
पीत्वा क्वाथमसृग्वातं क्रमात् सर्वाङ्गजं जयेत् ॥

अमलतास, गिलोय, और वासे (अडूसे) के काथमें अण्डीका तेल (केष्ट्रायल) मिला कर पीनेसे सर्वाङ्गगत वातरक्त शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(७२०६) शम्पाकादिगणः

(र. का. धे. । प्रमेहा.)

शम्पाकानलनिम्बराठबदरीपाठाश्च शार्ङ्गेष्टिका
स्फोतापाटलिकापटोलकुटजं सैरेयपारुषकाः ।
व्याघ्रः सप्तदलामृतामधुरसाः कुष्ठज्वरच्छर्दिजित्
कण्डूमेहकफामयान् सहविषानारग्वधादिर्जयेत् ॥

अमलतास, चीता, नीमकी छाल, मैनफल बेरीकी छाल, पाठा, करञ्ज, अनन्तमूल, रक्त कर-वीर, पटोल, कुड़ेकी छाल, पियाबांसा (कटसरैया), फालसेकी छाल, लाल अरण्डकी जड़, सतौनेकी छाल, गिलोय और मूर्वा ।

इनका काथ कुष्ट, ज्वर, छर्दि, खाज, प्रमेह, कफ और विषविकारोंको नष्ट करता है ।

(७२०७) शरपुङ्खादिकल्कः

(यो. चि. म. । अ. ४)

शरपुङ्खायाः कल्कः पीतस्तक्रेण नाशयत्यचिरम् ।
चिरतरकालसमुत्थं प्लीहानां रूढमवगाढः ॥

सरफोंकेकी जड़के कल्कको तक्रके साथ पीनेसे बहुत पुराना तिल्ली रोग भी शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(७२०८) शरपुङ्खारसयोगः

(राजमार्त. । व्रणा. २५)

शस्त्रक्षते दशनचर्वितबाणपुङ्खा-
मूलोद्भवं विनिदधीत रसं प्रयत्नात् ।
तस्मिन्पुरीषमथवा महिषीसुतस्य
प्राङ्निर्गतं मसृणचूर्णितमाशु दद्यात् ॥

हथियारके ताज़े घावमें, सरफोंकेकी जड़को मुंहसे चबाकर उसका रस निकाल कर भरना चाहिये । अथवा भैंसके बच्चे (कटेरे) का पहिली बारका किया हुवा गोबर खूब बारीक पीस कर भरना चाहिये ।

(७२०९) शर्करादियोगः

(व. से. । उदावर्त्ता.)

शर्करेक्षुरसं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ।
सर्वत्रैव प्रयुञ्जीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधिम् ॥

ईखका रस और दूध तथा खांड मिला कर पीनेसे या मुनक्काका रस पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और अश्मरिका नाश होता है ।

(७२१०) शाखोटककाथः

(शा. सं. । खं. २ अ. २)

शाखोटवल्कलक्वाथं गोमूत्रेण युतं पिबेत् ।
श्लीपदानां विनाशाय मेदोदोषनिवृत्तये ॥

सखुवाकी छालके क्वाथमें गोमूत्र मिला कर पीनेसे श्लीपद और मेदविकारका नाश होता है ।

(७२११) शाखोटादियोगः

(व. से. । व्रणा. ; वृ. मा. । व्रणा.)

कल्कः काञ्जिकसम्पिष्टः स्निग्धः शाखोटकत्वचः ।
सुपर्ण इव नागानां वातशोथविनाशनः ॥

सिहोड़ेकी स्निग्ध छालको कांजीमें पीस कर पीनेसे वातज शोथ शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(७२१२) शार्ङ्गेष्टादिकाथः

(वृ. मा. । उदरा.)

शार्ङ्गेष्टानिर्यूहः ससैन्धवस्तिन्तिडीकसम्मिश्रः ।
प्लीहव्युपरमयोगः पक्वाम्ररसोऽथ वा समधु ॥

मकोयके रसमें सेंधानमक और इमलीका गूदा मिला कर सेवन करनेसे अथवा पक्के आमका रस शहद मिला कर पीनेसे प्लीहावृद्धि नष्ट होती है ।

(७२१३) शालिपर्ण्यादिकाथः (१)

(वृ. नि. र. । वातज्वरा. ; वृ. यो. त. । त. ५९)

शालिपर्णी बलाद्राक्षा गुडूची सारिवा तथा ।
आसां क्वाथं पिबेत्कोष्णं तीव्रवातज्वरच्छिदम् ॥

शालपर्णी, खरैटी, मुनक्का, गिलोय और सारिवा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसे मन्दोष्ण करके पीनेसे तीव्र वातज्वर नष्ट होता है ।

(७२१४) **शालिपर्ण्यादिक्वाथः** (२)

(व. से. । बालरोगा.)

शालिपर्णी पृश्निपर्णी घोटात्वक् क्वथितं जलम्।
क्षौद्रयुक्तं त्रिदोषघ्नं सर्वातीसारनाशनम् ॥

शालपर्णी, पृष्ठपर्णी और सुपारीकी छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं ।

(७२१५) **शालिपिष्टयोगः**

(ग. मा. । स्त्री रोगा. ३०)

उदुम्बरीक्वाथयुतं सिताढ्यं
सुगन्धिशालिप्रभवं सितं च ।
या पिष्टमश्नाति न गर्भपात-
पीडामसौ विन्दति जातु नारी ॥

सुगन्धित शाली चावलोंको पीस कर उनमें मिश्री मिला कर कठूमरके काथके साथ पीनेसे गर्भपातका भय जाता रहता है ।

(७२१६) **शाल्मलीमूलकल्कः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

शाल्मलीमूलत्वक्गुडदुग्धेन च पेषितं पानम् ।
पित्तातिसारशमनं सरक्तदाहेन शोषहरम् ॥

सेंभलकी जड़की छालको दूधमें पीसकर गुड़ मिलाकर पीनेसे पित्तातिसार, दाहयुक्त रक्तातिसार और शोषका नाश होता है ।

(७२१७) **शाल्मलीयोगः**

(वृ. यो. त. । त. १०३)

शाल्मलित्वग्रसः क्षौद्ररजनीचूर्णसंयुतः ।
पीतो निहन्ति निखिलान्प्रमेहानल्पवासरैः ॥

सेंभलकी छालके रसमें शहद और हल्दीका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह शीघ्रही नष्ट हो जाते हैं ।

(७२१८) **शिग्रुक्वाथः** (१)

(ग. नि. । शूला. २३)

मातुलुङ्गरसोपेतः शिग्रुक्वाथस्तथापरः ।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्बस्तिशूलजित् ॥

सहंजनेकी छालके काथमें बिजौरेका रस, जवाखार, और शहद मिलाकर पीनेसे पसली, हृदय और बस्तिका शूल नष्ट होता है ।

(७२१९) **शिग्रुक्वाथः** (२)

(वृ. यो. त. । त. १०५)

शोथप्लीहोदरं हन्ति पिप्पली मरिचान्वितः ।
अम्लवेतससंयुक्तः शिग्रुक्वाथः ससैन्धवः ॥

सहंजनेके काथमें सेंधा नमक, अम्लवेत, पीपल और काली मिर्चका चूर्ण मिला कर पीनेसे शोथ और प्लीहोदरका नाश होता है ।

(७२२०) **शिग्रुक्वाथः** (३)

(वृ. नि. र. । अश्मर्य.)

क्वाथो निपीतः सक्षारः शिग्रुत्वग्वरुणत्वचोः ।
कफजामश्मरीं हन्ति शक्राशनिरिव द्रुमम् ॥

सहंजने और बरनेकी छालका काथ जवाखार मिला कर पीनेसे कफज अश्मरि शीघ्रही नष्ट हो जाती है ।

(७२२१) शिग्रुत्वगादिकषायः

(ग. नि. । कृम्य. ७)

शिग्रुत्वक्त्रिफलाभ्यां तु कृतः क्वाथो निषेवितः।
जठरस्थान् क्रिमीन् क्षिप्रमुद्धरत्यविचारतः ॥

सहंजनेकी छाल और त्रिफलाका काथ सेवन करनेसे उदरके कृमि नष्ट हो जाते हैं ।

(७२२२) शिग्रुमूलक्वाथः

(यो. र. ; वृ. नि. र. । अश्मर्य. ; वं. से. । अश्म.)

क्वाथश्च शिग्रुमूलोत्थः कदूष्णाश्मरिपातनः ।
क्षीराम्भुग्बर्हिशिखामूलं वा तन्दुलाम्बुना ॥

सहंजनेकी छालका मन्दोष्ण काथ पीनेसे अश्मरि निकल जाती है ।

मयूरशिखाकी जड़को चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे भी अश्मरि नष्ट हो जाती है ।

पथ्य—दूध भात ।

(७२२३) शिग्रुमूलादिक्षारः

(ग. नि. । उदरा. ३२)

शिग्रुमूलरसो वह्निः सैन्धवं ब्रह्मवृक्षकः ।
क्षारभक्षणतोऽमीषां याति सर्वोदरं शमम् ॥

सहंजनेकी जड़के रसमें चीता, सेंधा और पलाशका क्षार मिला कर सेवन करनेसे समस्त प्रकारके उदर रोग नष्ट होते हैं ।

(७२२४) शिग्रुमूलादियोगः

(वृ. मा.; व. से. । विद्रध्य.)

शिग्रुमूलं जले धौतं जलपिष्टं प्रगालयेत् ।
तद्रसं मधुना पीत्वा हन्त्यन्तर्विद्रधिं नरः ॥

सहंजनेकी जड़को जलसे धो कर पानीके साथ पीस लें और कपड़ेसे निचोड़ कर रस निकालें ।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे अन्तर्विद्रधि नष्ट होती है ।

(७२२५) शिग्रुवादिकषायः

(वै. जी. । विलास ४ ; वृ. नि. र. । विद्र.)

शिग्रुदीप्यवरुणद्वियामिनी
कुञ्जराशनकृतः कषायकः ।
बोलचूर्णसहितोन्तरस्थितं
विद्रधिं प्रशमयेदसंशयम् ॥

सहंजनेकी छाल, अजवायन, बरनेकी छाल, हल्दी, दारुहल्दी और पीपलवृक्ष (अश्वत्थ) की छाल समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसमें बोलका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे अन्तर्विद्रधि अवश्य नष्ट हो जाती है ।

(७२२६) शिरीषमूलादिकल्कः

(ग. नि. । अर्शो.)

शिरीषमूलं पुष्पं च शाल्मलेस्तिनिशस्य च ।
निर्यासश्च पलाशस्य बदर्याः ककुभस्य च ॥
रोध्रं शाल्मलिनिर्यासः कटुङ्गस्तण्डुलीयकः ।
मधुकार्जुनपुष्पाणि धातकीरोध्रयोरपि ॥

शोभाञ्जनं शङ्खनाभी कङ्गुकाः षष्टिकास्तथा।
एषां कल्कं मधुयुतं पाययेत्तण्डुलाम्बुना ॥
अर्शांसि शमयत्येष पीतः पित्तात्मकानि तु।
रक्तपित्तमतीसारं रक्तार्शांसि च नाशयेत् ॥

सिरसकी जड़, सेंभलके फूल, तिनिशके फूल, पलाशका गोंद, बेरीका गोंद, अर्जुनका गोंद, लोध, मोचरस, अरलुकी छाल, चौलाई, मुलैठी, अर्जुनके फूल, धायके फूल, लोधके फूल, सहंजनेकी छाल, शंखनाभि, कङ्गुनी और साठीके चावल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ पीस कर कल्क बनावें।

इसमें शहद मिला कर चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे पित्तज अर्श, रक्तपित्त, अतिसार और रक्तार्शका नाश होता है।

(७२२७) शिरोविरेचनीयो दशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

ज्योतिष्मतीक्षवकमरीचपिप्पलीविडङ्ग-शिग्रुसर्षपापामार्गतण्डुलश्वेतामहाश्वेता इति दशेमानि शिरोविरेचनोपगानि भवन्ति ।

मालकंगनी, नकछिकनी, काली मिर्च, पीपल, बायबिडंग, सहंजना, सरसों, अपामार्ग (चिरचिटे) के चावल, सफेद और काली कोयल।

ये दश पदार्थ शिरो विरेचनमें उपयोगी हैं।

(७२२८) शिशिरादिकषायः

(वृ. नि. र. । विषमज्वरा. ; वै. जी. । विलास १; यो. र. । ज्वरा.)

सशिशिरः सघनः समहौषधः
सनलदः सकणः सपयोधरः ।
समधुशर्करं एष कषायको
जयति बालमृगाक्षि तृतीयकम् ॥

लाल चन्दन, धनिया, सोंठ, खस, पीपल और नागरमोथा समान भाग ले कर काथ बनावें।

इसमें शहद और खांड मिला कर पीनेसे तृतीयक ज्वर नष्ट होता है।

(७२२९) शीतप्रशमनो दशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

तगरागुरुधान्यकशृङ्गवेरभूतिकवचाकण्ट-कारिकाग्निमन्थ• श्योनाकपिप्पल्य इति दशेमानि शीतप्रशमनानि भवन्ति ।

तगर, अगर, धनिया, सोंठ, अजवायन, बच, कटेली, अरणी, सोनापाठा और पीपल; ये दश ओषधियां शीत प्रशमन कषायद्रव्योंमें श्रेष्ठ हैं।

(७२३०) शुक्रजननो दशको महाकषायः

(च. स. । सू. अ. ४)

जीवकर्षभककाकोलीक्षीरकाकोलीमुद्गपर्णी माषपर्णीमेदावृक्ष रुहाजटिलाकुलिङ्गा इति दशेमानि शुक्रजननानि भवन्ति ।

जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीर काकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, वन्दा, काकड़ासिंगी और जटामांसी; ये दश ओषधियां शुक्रजनक हैं।

(७२३१) शुक्रशोधनो दशको महाकषायः

(च. स. । सू. अ. ४)

कुष्ठैलवालुककट्फलसमुद्रफेनकदम्ब-

निर्यासेक्षुकाण्डेक्ष्विक्षुरकवसुकोशीराणीति दशेमानि शुक्रशोधनानि भवन्ति ॥

कूठ, एलवालुक, कायफल, समुद्रफेन, कदम्बनिर्यास, ईख, काण्डेक्षु, तालमखाना, वसुक और खस; ये दश ओषधियां शुक्र शोधक कषाय द्रव्योंमें श्रेष्ठ हैं।

(७२३२) शुण्ठीक्वाथः

(वृ यो. त. । त. ६२ ; यो. र. । ज्वरा. ; वृ. नि. र. । जीर्ण ज्वरा.)

अरुचिमनलमान्द्यं पीनसश्वासकासा-
नुदरमुदकदोषानाशु हन्यादशेषान् ।
जनयति मतिकान्तिं चित्तनेत्रप्रसादम्,
पलपरिमितशुण्ठीक्षोदसिद्धः कषायः ॥

५ तोले सोंठको कूट कर ४० तोले पानीमें पकावें और १० तोले शेष रहने पर छान लें।

इसे सेवन करनेसे अरुचि, अग्निमांद्य, पीनस, श्वास, कास, उदर रोग और जलदोष नष्ट होते तथा मति और कान्तिकी वृद्धि होती है एवं चित्त प्रसन्न रहता और नेत्र स्वच्छ होते हैं।

(७२३३) शुण्ठयादिकल्कः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

शुण्ठीघनागजकणासुरदारुधान्या-
तिक्ताकलिङ्गदशमूलसमोऽपि कल्कः ।
श्रेष्ठस्त्रिदोषजनितज्वरनाशनाय
श्वासभ्रमारुचिविबन्धहृदामयघ्नः ॥

सोंठ, नागरमोथा, गजपीपल, देवदारु, धनिया, कुटकी, इन्द्रजौ और दशमूल समान भाग ले कर कल्क बनावें।

यह कल्क त्रिदोषज ज्वर, श्वास, भ्रम, अरुचि, विबन्ध और हृद्रोगको नष्ट करता है।

(७२३४) शुण्ठयादिकल्कः (२)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

भोजनादौ नरैर्युक्तं शुण्ठीराज्यभयोत्थितं ।
कल्कं तु सहते नित्यं नानादेशोद्भवं जलम् ॥

सोंठ, हर्र और राईके कल्कको हमेशा भोजनके प्रारम्भमें खानेसे देश विदेशका पानी विकार नहीं करता।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(७२३५) शुण्ठयादिकल्कः (३)

(भा. प्र. । म. खं.)

शुण्ठ्यजाजीगुडं पिष्टं पीतमुष्णेन वारिणा ।
जीर्णमद्येन तक्रेण तीव्रं शीतज्वरं जयेत् ॥

सोंठ, और जीरेके कल्कको गुड़में मिलाकर गरम पानी, पुराने मद्य या तक्रके साथ पीनेसे तीव्र शीत ज्वर नष्ट होता है।

(७२३६) शुण्ठयादिकल्कः (४)

(शा. सं. म. खं. । अ. ६)

शुण्ठीतिलगुडैः कल्कं दुग्धेन सह योजयेत् ।
परिणामभवं शूलमामवातं च नाशयेत् ॥

सोंठ, तिल और गुड़ समान भाग ले कर कल्क बनावें। इसे दूधके साथ सेवन करनेसे परिणाम शूल और आमवातका नाश होता है।

(७२३७) शुण्ठयादिकषायः (१)

(यो. र. । स्त्रीरोगा.)

शुण्ठीबिल्वकषायं तु यवसक्तुसमन्वितम् ।
गर्भिणीं पाययेद्वैद्यश्छर्दतीसारनाशनम् ॥

सोंठ और बेलके क्वाथमें जौका सत्तू मिला कर पिलानेसे गर्भिणीकी वमन और अतिसारका नाश होता है।

(७२३८) शुण्ठ्यादिकषायः (२)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शुण्ठीयवासकवृषाब्दकृतः कषायः ।
श्लेष्मोद्भवं शमयति ज्वरमाशु पीतः ॥

सोंठ, जवासा, बासा और नागरमोथेका काथ सेवन करनेसे कफज ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(७२३९) शुण्ठ्यादिक्वाथः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४२)

शुण्ठीकणाखदिर पाटलिकापटोली
मञ्जिष्ठदारुविषबिल्वयवानिकानाम् ।
वासाफलत्रिकजलेन कषायसिद्धः
पानान्निहन्ति मनुजस्य च कुष्ठदोषम् ॥

सोंठ, पीपल, खैरसार, लाल कनेरकी छाल, पटोल, मजीठ, देवदारु, अतीस, बेलकी छाल, अजवायन, बासा और त्रिफला समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसके सेवनसे कुष्ठ नष्ट होता है।

(७२४०) शुण्ठ्यादिक्वाथः (२)

(वृ. यो. त. । त. १०२ ; वृ. मा. । अश्मर्य.; व. से. । अश्मर्य. यो. र.; वृ. नि. र. । अश्मर्य. ग. नि. । अश्मर्य. २९)

शुण्ठ्यग्निमन्थपाषाणभिच्छिग्रुवरुणागोक्षुरैः ।
अभयारग्वधफलैः क्वाथं कृत्वा विचक्षणः ॥
रामठक्षारलवणचूर्णं दत्त्वा पिबेन्नरः ।
वाताश्मरीं हन्ति कृच्छ्रमान्द्यमग्नेश्च तद्रजः ॥
कटयूरुगुदमेढ्रस्थं वङ्क्षणस्थं च मारुतम् ॥

सोंठ, अरनी, पाषाणभेद, सहंजने और वरनेकी छाल, गोखरु, हर्र और अमलतासके फलोंका गूदा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें हींग, जवाखार और सेंधानमकका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे वातज अश्मरि, मूत्रकृच्छ्र, अग्निमांद्य, कटिस्थित वायु, उरुस्थित वायु, तथा गुद, लिंग और वंक्षण स्थित वायुका नाश होता है।

(७२४१) शुण्ठ्यादिक्वाथः (३)

(धन्व. । आमवाता. ; ग. नि. । आमवाता. व. से. ; यो. र. ; वृ. मा. । आमवाता.)

शुण्ठीगोक्षुरकक्वाथः प्रातः प्रातर्निषेवितः ।
आमे वातकटीशूले पाचनो रुक्प्रणाशनः ॥

सोंठ और गोखरुका क्वाथ प्रातःकाल सेवन करनेसे आमवात, कटिशूल और शरीर पीड़ा नष्ट होती है। यह क्वाथ पाचक भी है।

(७२४२) शुण्ठ्यादिक्वाथः (४)

(वृ. नि. र. । पित्तातीसारा.)

शुण्ठीसुवर्चलाहिङ्गुरभयेन्द्रयवा मताः ।
पित्तातिसारहृत्क्वाथो निपीतो मधुना सह ॥

सोंठ, हुलहुल, हींग, हर्र, और इन्द्रजौ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तातिसार नष्ट होता है।

(७२४३) शुण्ठ्यादिक्वाथः (५)

(वै. जी. । विलास २)

शुण्ठीछिन्नरुहाविषाजलधरैस्तुल्यैः कषायः कृतो मन्दाग्नौ ग्रहणीगदेपि सततं सामानुबन्धे हितः।

सोंठ, गिलोय, अतीस और नागरमोथा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ मन्दाग्नि, ग्रहणीदोष और आमको नष्ट करता है ।

(७२४४) शुण्ठ्यादिक्वाथः (६)

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

अयि प्राणप्रिये जातिफललोहितलोचने ।
शुण्ठीभार्ङ्गीकृतः क्वाथः श्वासत्रासाय पाययेत् ॥

सोंठ, और भरंगीका क्वाथ श्वासको नष्ट करता है ।

(७२४५) शुण्ठ्यादिक्वाथः (७)

(वृ. मा. । शोथा. ; यो. र. । शोथा. ; वृ. नि. र.)

शुण्ठीपुनर्नवैरण्डपञ्चमूलशृतं जलम् ।
वातिके श्वयथौ शस्तं पानाहारपरिग्रहे ॥

सोंठ, पुनर्नवा (बिसखपरा), अरण्डकी जड़, बेलकी जड़, श्योनाक (अरलु) की जड़, खम्भारीकी जड़, पाढलकी जड़ और अरणीमूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वातज शोथको नष्ट करता है ।

(७२४६) शुण्ठ्यादिक्वाथः (८)

(ग. नि. ; व. से. ; वृ. मा. । ग्रहण्य. ; यो. र.)

शुण्ठीं समुस्तातिविषां गुडूचीं
पिबेज्जलेन क्वथितां समांशाम् ।
मन्दानलत्वे सततामताया-
मामानुबन्धे ग्रहणीगदे च ॥

सोंठ, नागरमोथा, अतीस और गिलोय समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसके सेवनसे अग्निमांद्य, पेटमें सदा आम सञ्चित होते रहना और आमयुक्त संग्रहणीका नाश होता है ।

(७२४७) शुण्ठ्यादिक्वाथः (९)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शुण्ठीमुस्तादुरालभागुडूचीक्वथितं जलम् ।
पिबेदष्टावशेषं यत्तद्धि वातज्वरं हरेत् ॥

सोंठ, नागरमोथा, धमासा और गिलोय समान भाग ले कर आठगुने पानीमें पकावें और आठवां भाग पानी शेष रहने पर छान लें ।

इसके सेवनसे वातज ज्वर नष्ट होता है ।

(७२४८) शुण्ठ्यादिक्वाथः (१०)

(व. से. । ज्वरा.)

शुण्ठीवराब्दोशीरैश्च पिबेत्तोयं सुसाधितम् ।
दाहशीतज्वरहरं पाचनं भिषजां मतम् ॥

सोंठ, त्रिफला, नागरमोथा और खस समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ दाह और शीतज्वर नाशक तथा पाचक है ।

(७२४९) शुण्ठ्यादिक्वाथः (११)

(वैद्यामृत)

शुण्ठीदारुशठीरजोबृहतिकातिक्ताकिराताम्बुदा-
नन्ताभिर्जनितः कषायकवरः कृष्णामधुभ्यां युतः ।
निःशेषं त्रितयोद्भवज्वरहरो जीर्णज्वरस्यान्तकृत्
कासारिर्विषमापहोपि गदितः शुण्ठ्यादिकः सूरिभिः ॥

सोंठ, देवदारु, कचूर, पित्तपापड़ा, कटेली, कुटकी, चिरायता, नागरमोथा और अनन्तमूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद और पीपलका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे तृतीयक ज्वर, जीर्णज्वर, कास और विषमज्वरका नाश होता है ।

(७२५०) शुण्ठ्यादिक्वाथः (१२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

शुण्ठीविषाजलधरामृतावत्सकानां
तिक्ताद्वयं च कृतशीतलकः कषायः ।
पाने विधेय मधुना प्रतिसाधितस्तु
ज्वरातिसारशमनाय सदा प्रदेयः ॥

सोंठ, अतीस, नागरमोथा, गिलोय, कुड़ेकी छाल और कुटकी समान भाग ले कर शीतकषाय बनावें । इसमें शहद मिला कर पिलानेसे ज्वरातिसार नष्ट होता है ।

(७२५१) शुण्ठ्यादिपाचनम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

शुण्ठीबालकमुस्ताबिल्वं पाठा विषा च धान्यानि।
पाचनमरुचौ छर्दिज्वरातिसारं विनाशयति ॥

सोंठ, सुगन्धबाला, नागरमोथा, बेलगिरी, पाठा, अतीस और धनिया समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ पाचन तथा अरुचि, छर्दि और ज्वरातिसार नाशक है ।

(७२५२) शुण्ठ्यादिमहाकषायः

(वृ. यो. त. । त. १२०)

शुण्ठीनिम्बकिराततिक्तककणाः पाठा हरिद्राद्वयं
त्रायन्ती त्रिफलाऽमृताऽब्दकटुका वासा वचा वाकुची ।
मञ्जिष्ठाऽतिविषा दुरालभामहानिम्बाग्निषड्ग्रन्थिका
व्याधिघ्ना गजचिर्भटा सकुटजा भार्गी समुस्ता यवाः ॥
मूर्वा चैव पटोलपत्रसहिता रक्तं तथा चन्दनं
श्यामा पर्पटसारिवा कृमिहरा गायत्रिकासंयुता।
गोमूत्रेण महाकषायमरुणोद्भूते पिबेद्यः पुमान्
तस्याष्टादश यान्ति नाशमचिरात्कुष्ठानि दुष्टान्यपि ॥

सोंठ, नीमकी छाल, चिरायता, पीपल, पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, त्रायमाणा, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, नागरमोथा, कुटकी, बासा (अडूसा) बच, बाबची, मजीठ, अतीस, धमासा, बकायनकी छाल, चीता, अम्बाहल्दी (आमहरिद्रा), अमलतास, इन्द्रायण, कुड़ेकी छाल, भरंगी, नागरमोथा, जौ, मूर्वा, पटोलपत्र, लाल चन्दन, काली निसोत, पित्तपापड़ा, सारिवा, बायबिडंग और खैरसार समान भाग ले कर गोमूत्रमें पका कर क्वाथ बनावें ।

इसके सेवनसे १८ प्रकारके कुष्ठ शीघ्रही नष्ट हो जाते हैं।

(७२५३) शूलप्रशमनो दशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेरमरिचाजमोदाजगन्धाजाजीगण्डीराणीति दशेमानि शूलप्रशमनानि भवन्ति ।

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, काली मिर्च, अजमोदा, बन तुलसी, जीरा और सेहुंड (थूहर) ये दश ओषधियां शूलनाशक कषाय द्रव्योंमें श्रेष्ठ हैं।

नोट—'गण्डीर' का अर्थ कई टीकाकारोंने शमठशाक भी किया है।

(७२५४) शृङ्गवेरक्वाथः

(वृ. नि. र. । संग्रहण्य.)

कफजे शृङ्गवेरस्य क्वाथो नित्योपयौगिकः ।

कफज ग्रहणीमें सोंठका क्वाथ नित्य प्रति सेवन करना अत्युपयोगी है।

(७२५५) शृङ्गवेररसयोगः

(वृ. नि. र. । श्वासा. ; वृ. मा. । कासा.)

स्वरसं शृङ्गवेरस्य माक्षिकेण समन्वितम् ।
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अदरकके रसमें शहद मिला कर चाटनेसे श्वास, खांसी और प्रतिश्याय तथा कफका नाश होता है।

(७२५६) शृङ्गवेरादिक्वाथः

(वृ. मा. । अम्लपित्ता. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

कफपित्तवमीकण्डूज्वरविस्फोटदाहहा ।
पाचनो दीपनः क्वाथः शृङ्गवेरपटोलयोः ॥

अदरक (या सोंठ) और पटोलका क्वाथ कफ, पित्त, वमन, कण्डू, ज्वर, विस्फोटक और दाहको नष्ट करनेवाला तथा दीपन पाचन है।

(७२५७) शृङ्ग्यादिक्वाथः (१)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

शृङ्गीधन्वयवासपुष्कर-
जटाभार्गीशठीसिंहिका- ।
क्वाथः पानविधानतः कफ-
हरोऽभिन्यासविध्वंसकः ॥

काकड़ासींगी, जवासा, पोखरमूल, भरंगी, कचूर और कटेली समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कफ और अभिन्यास सन्निपात नाशक है।

(७२५८) शृङ्ग्यादिक्वाथः (२)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

शृङ्गीवत्सकचेतकी-
घनसटीभूनिम्बभार्गीनिशाः
तिक्तापुष्करचित्रकैः
समरिचैर्व्याघ्रीद्वयामिश्रितैः ।
धात्रीदारुविभीतकैश्च
चविकाविश्वाकणाकट्फलैः
पीतः कृन्तति कण्ठकुब्ज-
मचिरात्कोष्णः कषायस्त्विह ॥

काकड़ासिंगी, कुड़ेकी छाल, चेतकीहर्र, नागरमोथा, कचूर, चिरायता, भरंगी, हल्दी, कुटकी, पोखरमूल, चीतामूल, काली मिर्च, कटेली, बासा, आमला, देवदारु, बहेड़ा, चव, सोंठ, पीपल और कायफल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ मन्दोष्ण करके पीनेसे कण्ठकुब्ज सन्निपात शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(७२५९) **शृङ्ग्यादिक्काथः** (३)

(यो. र. ; वृ. नि. र. ; भा. प्र. ; वै. र.)

शृङ्गीभार्ग्यभयाजाजीकणाभूनिम्बपर्पटैः ।
देवदारुवचाकुष्ठयासकट्फलनागरैः ॥
मुस्तधान्याकतिक्तेन्द्रयवपाठाहरेणुभिः ।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकैः ॥
विशालारग्वधारिष्टशठीबाकुचिकाफलैः ।
विडङ्गरजनीदार्वीयवानीद्वयसंयुतैः ॥
समांशैर्विहितः क्वाथो हिङ्ग्वाद्रकरसान्वितः ।
अभिन्यासं ज्वरं घोरं हन्ति तन्द्रां च तत्क्षणात् ॥
प्रमेहं कर्णशूलं च सन्निपातांस्त्रयोदश ।
हिक्कां श्वासं च कासं च तथा सर्वानुपद्रवान् ॥

काकड़ासिंगी, भरंगी, हर्र, जीरा, पीपल, चिरायता, पित्तपापड़ा, देवदारु, बच, कूठ, जवासा, कायफल, सोंठ, नागरमोथा, धनिया, कुटकी, इन्द्रजौ, पाठा, रेणुका, गजपीपल, अपामार्ग (चिरचिटा), पीपलामूल, चीता, इन्द्रायण, अमलतास, नीमकी छाल, कचूर, बाबचीके बीज, बायबिड़ंग, हल्दी, दारु हल्दी, अजवायन और अजमोद समान भाग लेकर काथ बनावें ।

इसमें हींग और अदरकका रस मिला कर सेवन करनेसे घोर अभिन्यास ज्वर, तन्द्रा, प्रमेह, कर्ण शूल, १३ प्रकारके सन्निपात, हिक्का, श्वास और कास आदि उपद्रव शीघ्रही नष्ट हो जाते हैं ।

(७२६०) **शेफालिकाक्काथः**

(ग. नि. । वा. रो. २०)

शेफालिकादलैः क्वाथो मृद्वग्निपरिपाचितः ।
दुर्वारं गृध्रसीरोगं पीतमात्रः प्रणाशयेत् ॥

संभालूके पत्तोंका मन्दाग्निपर बनाया हुवा क्वाथ कष्टसाध्य गृध्रसीको भी शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(७२६१) **शेफालिकादिक्काथः**

(वृ. नि. र. । ऊरुस्तम्भा.)

शेफालिकादलक्वाथं कणायुक्तं पिबेन्नरः ।
कफघ्नं यच्च तत्सर्वमूरुस्तम्भे प्रयोजयेत् ॥

संभालूके पत्तोंके क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है ।

उरुस्तम्भ रोगमें अन्य कफघ्न उपाय भी करने चाहियें ।

(७२६२) **शोथघ्न्यादिक्काथः**

(वृ. नि. र. । अतिसारा.)

शोथघ्नीन्द्रयवापाठाविडङ्गातिविषाघनाः ।
क्वथिता सोषणाः पीताः शोथातीसारनाशनाः ॥

लाल पुनर्नवा (बिसखपरा), इन्द्रजौ, पाठा, बायबिड़ंग, अतीस और नागरमोथा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर पीनेसे शोथातिसार नष्ट होता है।

(७२६३) शोथहरो दशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

पाटलाग्निमन्थबिल्वश्योनाककाश्मर्यकण्टकारिकाबृहतीशालपर्णीपृश्निपर्णी गोक्षुरका इति दशेमानि शोथहराणि भवन्ति ।

पाटला, अरणी, बेल, अरलु, खम्भारी, कटेली, बड़ी कटेली, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, और गोखरु; ये दश ओषधियां (दशमूल) शोथनाशक हैं।

(७२६४) शोभाञ्जनादिकल्कः

(भा. प्र. । म. खं. २ विद्रध्य. ; वृ. मा.)

शोभाञ्जनकनिर्यूहो हिंगुसैन्धवसंयुतः ।
हन्त्यन्तर्विद्रधिं शीघ्रं प्रातः प्रातर्विशेषतः ॥

सहंजनेकी जड़के रसमें हींग और सेंधानमक मिला कर सेवन करनेसे अन्तर्बिद्रधि शीघ्रही नष्ट हो जाती है।

(७२६५) श्यामादिकषायः

(व. से. । नेत्र रोगा.)

श्यामामूलं कषायं वा मधुना व्रणशुक्रिणाम् ।

काली निसोतके क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे नेत्रोंका सव्रण शुक्र नष्ट होता है।

(७२६६) श्रमहरो दशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

द्राक्षाखर्जूरप्रियालबदरदाडिमफल्गुपरूषकेक्षु यवयष्टिका इति दशेमानि श्रमहराणि भवन्ति ।

द्राक्षा, खजूर, पियाल, (चिरौंजी), बेर, दाडिम, कठूमरका फल, फालसा, ईख, जौ और मुलैठी; ये दश ओषधियां श्रमनाशक हैं।

(७२६७) श्रीखण्डादि कषायः (१)

(ग. नि. । ज्वरा.)

श्रीखण्डयष्टीमधुकाकजङ्घाः
श्रीपर्णिकापर्पटमुस्तद्राक्षाः ।
खर्जूरकोशीरयुगान्विताश्च
पित्तज्वरे शर्करया कषायः ॥

चन्दन, मुलैठी, काकजंघा, गंभारी, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, द्राक्षा, खजूर और दो प्रकारको खस समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें खांड मिलाकर पीनेसे पित्त ज्वर नष्ट होता है।

(७२६८) श्रीखण्डादिकषायः (२)

(ग. नि. । कासा. १०)

श्रीखण्डयष्टीमधुशालिपर्णी
पाठापटोलेन्द्रयवा बृहत्यौ ।
मूर्वागुडूची कटुका कषायः
क्षयोत्थकासे च सपिप्पलीकः ॥

चन्दन, मुलैठी, शालपर्णी, पाठा, पटोल, इन्द्रजौ, छोटी और बड़ी कटेली, मूर्वा, गिलोय और कुटकी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें पीपलका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे क्षयकी खांसी नष्ट होती है।

(७२६९) श्रीपर्ण्यादिक्वाथः

(ग. नि. । ज्वरा. १)

श्रीपर्णीचन्दनोशीरपरूषकमधूकजः ।
शर्करामधुरो हन्ति कषायः पैत्तिकं ज्वरम् ॥

खम्भारीकी छाल, लाल चन्दन, खस, फालसेकी छाल और महुवेकी छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसे खांडसे मीठा करके पीनेसे पैत्तिक ज्वर नष्ट होता है ।

(७२७०) श्रीपर्ण्यादिपाचनम्

(वृ. नि. र. । वातज्वरा.)

श्रीपर्णीतर्कारी श्रीफलटिण्टूकपाटलामूलैः ।
पाचनमुचितं मारुतजमितज्वरहारिवारिभिः क्वथितैः ॥

खम्भारी, अरनी, बेलगिरी, अरलुकी छाल और पाटला (पाढल) की जड़की छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वात ज्वरमें दोषोंको पचाकर ज्वरको नष्ट करता है ।

(७२७१) श्रीफलगुडूच्यादिक्वाथः

(वृ. मा. । छर्दि.)

श्रीफलस्य गुडूच्या वा कषायो मधुसंयुतः ।
पेयश्छर्दित्रये शीतो मूर्वा वा तण्डुलाम्बुना ॥

बेलगिरी या गिलोयके क्वाथमें शहद मिलाकर पीने या मूर्वाके कल्कको चावलोंके पानीके साथ पीनेसे तीनों दोषोंसे उत्पन्न छर्दि नष्ट होती है ।

(७२७२) श्रीफलादिकल्कः

(यो. र. ; वृ. मा. । ग्रहण्य.)

श्रीफलशलाटुकल्को नागरचूर्णेन मिश्रितः समुडः ।
ग्रहणीगदमत्युग्रं तक्रभुजा शीलितो जयति ॥

बेलगिरीके कल्कमें सोंठका चूर्ण मिला कर उसे गुड़के साथ खानेसे उग्र ग्रहणी रोग भी नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—तक्र ।

(७२७३) श्रेष्ठादिक्वाथः

(यो. चि. म. । अ. ४)

श्रेष्ठानिम्बपटोलमुस्तरजनीत्रायन्ति
हेमामृताकृत्वा षड्गुणवारिणा
विनिहितं षष्ठांशपीतो निशि ।
भ्रूशङ्खाक्षिशिरोरुजां बहु-
विधां कर्णस्य नासागदं
नक्तान्ध्यं तिमिरं च काच-
पटलं दैत्यान् यथा केशवः ॥

त्रिफला, नीमकी छाल, पटोल, नागरमोथा, हल्दी, त्रायमाना, नागकेसर और गिलोय समान भाग ले कर ६ गुने पानीमें पकावें और छठा भाग शेष रहने पर छान लें ।

इसे रात्रिके समय सेवन करनेसे भ्रू, शंख, अक्षि, शिर और कानोंकी अनेक प्रकारकी पीड़ा, नासारोग, नक्तान्ध्य, तिमिर, काच और पटलका नाश होता है ।

(७२७४) श्वदंष्ट्रादिक्काथः

(भै. र. । अश्मर्य.)

श्वदंष्ट्रैरण्डपत्राणि नागरं वरुणत्वचम् ।
एतत्क्वाथवरं प्रातः पिबेदश्मरिभेदनम् ॥

गोखरु, अरण्डके पत्ते, सोंठ और बरनेकी छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसे प्रातः काल सेवन करनेसे अश्मरि नष्ट होती है ।

(७२७५) श्वासहरो दशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

शटी पुष्करमूलाम्लवेतसैलाहिङ्ग्वगुरुसुरसातामलकीजीवन्ती चण्डा इति दशेमानि श्वासहराणि भवन्ति ।

कचूर, पोखरमूल, अम्लवेत, इलायची, हींग, अगर, तुलसी, भुई आमला, जीवन्ती और चण्डा (चोरक) ये दश चीज़ें श्वास नाशक हैं ।

(७२७६) श्वेतचन्दनादियोगः

(यो. र. । मसूरिका.)

श्वेतचन्दनकल्काढ्यं हिलमोचाभवं द्रवम् ।
पिबेन्मसूरिकारम्भे नैम्बं वा केवलं रसम् ॥

मसूरिकाके प्रारम्भमें हुलहुलके रसमें सफेद चन्दनका कल्क मिला कर देना या केवल नीमका रस पिलाना चाहिये ।

(७२७७) श्वेतपर्णासमूलयोगः

(वै. म. र. । पट. ६)

श्वेतपर्णासमूलेन सविश्वेन भृतं जलम् ।
अजीर्णं शमयेत्तूर्णं कर्णः कार्श्यमिवार्थिनाम् ॥

सफेद तुलसीकी जड़ और सोंठका काथ पीनेसे अजीर्ण शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(७२७८) श्वेतपुनर्नवामूलयोगः (१)

(ग. नि. । विषा. ३)

यः पिबति पुष्यदिवसे जलपिष्टं सितपुनर्नवामूलम् ।
तत्सन्निधौ न वर्षं वृश्चिकभुजगाः प्रसर्पन्ति ॥

जो व्यक्ति पुष्य नक्षत्रमें सफेद पुनर्नवाकी जड़को पानीमें पीस कर पीता है उसे १ वर्ष तक सर्प और बिच्छूके काटनेका भय नहीं रहता ।

(७२७९) श्वेतपुनर्नवामूलयोगः (२)

(रा. मा. । उदरा.)

मूलं समं तन्दुलधावनेन
प्रपेषितं श्वेतपुनर्नवायाः ।
पीतं भवेत्प्लीहविनाशहेतु
पाठाजटा छिन्नरुहा जटा वा ॥

सफेद पुनर्नवाकी जड़को चावलोंके पानीमें पीस कर पीनेसे अथवा पाठाकी या गिलोयकी जड़को पीस कर पीनेसे प्लीहा-वृद्धि नष्ट होती है ।

(७२८०) श्वेतवर्षाभ्वादिक्काथः

(भा. प्र. म. खं. २ । विद्रध्य.)

श्वेतवर्षाभुवो मूलं मूलं वा वरुणस्य च ।
जलेन क्वथितं पीतमन्तर्विद्रधिहृत्परम् ॥

सफेद पुनर्नवा (बिसखपरा) की या बरनेकी जड़का क्वाथ पीनेसे अन्तर्विद्रधि नष्ट हो जाती है ।

इतिशकारादिकषायप्रकरणम्

अथ शकारादिचूर्णप्रकरणम्

(७२८१) **शठ्यादिचूर्णम्** (१)

(यो. र. । श्वासा.)

शठी भार्गी वचाव्योषपथ्यारुचककट्फलम् ।
तेजोह्वा पौष्करं शृङ्गी सक्षौद्रं श्वासकासनुत् ॥

कचूर, भरंगी, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, सज्जी, कायफल, तेजबल, पोखरमूल और काकड़ासिंगी, समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे श्वास और खांसीका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१॥ माशा)

(७२८२) **शठ्यादिचूर्णम्** (२)

(वा. भ. । चि. अ. ४)

शठी तामलकी भार्ङ्गी चण्डा वालकपौष्करम् ।
शर्कराष्टगुणं चूर्णं हिध्माश्वासहरं परम् ॥

कचूर, भुई आमला, भरंगी, शंखपुष्पी, सुगन्धबाला और पोखरमूल १-१ भाग तथा खांड ८ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे हिचकी और श्वासका नाश होता है ।

(**मात्रा**—३-४ माशा । अनुपान मधु ।)

(७२८३) **शठ्यादिचूर्णम्** (३)

(यो. र. । प्रतिश्याया. ; वृ. नि. र. । नासा. ; वृ. यो. तं. । त. १३०; व. से. । नासा.)

शठीतामलकीव्योषचूर्णं सर्पिर्गुडान्वितम् ।
हरेद्घोरं प्रतिश्यायं पार्श्वहृद्बस्तिशूलनुत् ॥

कचूर, भुई आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे गुड़ और घीमें मिला कर सेवन करनेसे घोर प्रतिश्याय, पार्श्व पीड़ा, हृदय शूल और बस्तिशूलका नाश होता है ।

(**मात्रा**—चूर्ण १॥ माशा । गुड़ ६ माशे । घी ६ माशे ।)

(७२८४) **शठ्यादिचूर्णम्** (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १६)

शठी दार्व्यभया शुण्ठी मागधी घृतसंयुता ।
चूर्णं तक्रेण संयुक्तं हन्ति छर्दिं त्रिदोषजाम् ॥

कचूर, दारु हल्दी, हर्र, सोंठ और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घीमें मिला कर तक्रके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषज छर्दि नष्ट होती है ।

(**मात्रा**-चूर्ण १॥ माशा । घी ६ माशे ।)

(७२८५) **शठ्यादिचूर्णम्** (५)

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

शठी व्योषाभया क्षारौ ग्रन्थिकं बीजपूरकम् ।
लवणाम्लाम्बुना पेयं श्लैष्मिके ग्रहणीगदे ॥

कचूर, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, जवाखार, सज्जीखार, पीपलामूल, बिजौरे नीबूका गूदा और सेंधानमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे कांजीके साथ सेवन करनेसे कफज ग्रहणीरोग नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—१॥ माशा ।)

(७२८६) शठ्याद्यं चूर्णम्

(वृ. यो. त. । त. ८० ; व. से. । श्वासा. वृ. मा. । हिक्का श्वासा. ; ग. नि. । चूर्णा. ३ ; वृ. नि. र.)

शठी पुष्करजीवन्तीत्वङ्मुस्तं पुष्कराह्वयम् ।
सुरसा तामलक्योऽपि पिप्पल्यगुरुवालकम् ॥
नागरं च समं चूर्णं कृत्वा द्विगुणशर्करम्[1] ।
सर्वथा तमकश्वासे हिक्कायां च प्रयोजयेत् ॥

कचूर, कमलकन्द, जीवन्ती, दालचीनी, नागरमोथा, पोखरमूल, तुलसी, भुई आमला, पीपल, अगर, सुगन्धवाला और सोंठ १-१ भाग तथा खांड सबसे दो गुनी ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण तमक श्वास और हिचकीको नष्ट करता है ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

(अनुपान—मधु ।)

(७२८७) शतपुष्पादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । अतिसारा)

शतपुष्पा च विश्वा च श्वेताजाजी हरीतकी ।
खाखसस्य फलं चैव पलार्द्धं तु पृथक् पृथक् ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायाथ घृतभ्रष्टं तु कारयेत् ।
सर्वार्द्धा तु सिता देयः पलार्द्धं दधिसंयुतम् ॥
प्रातःकाले भक्षयेत्तु सर्वातीसारनाशनम् ।
पथ्यं कुर्यात् विशेषेण शालिभक्तं स तक्रकम् ॥

सौंफ, सोंठ, सफेद जीरा, हर्र और पोस्तका डोडा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें तथा उसे मन्दाग्नि पर घीमें सेक लें और फिर उसमें सबसे आधी मिसरी मिला लें ।

मात्रा—२॥ तोला ।

इसे दहीमें मिला कर प्रातःकाल सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं ।

पथ्य—शाली चावलोंका भात और तक्र ।

(व्यवहा. मात्रा—३ माशे ।)

(७२८८) शतपुष्पाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. ३; आमवाता. २३; वृ. मा. । आमा.)

शतपुष्पा विडङ्गानि सैन्धवं मरिचं समम् ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पीतमग्निसन्दीपनं परम् ॥

सौंफ (या सोया), बायबिडंग, सेंधा नमक और काली मिर्च समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे अग्निदीप्त होती है ।

(मात्रा—१-१॥ माशा)

(७२८९) शतावर्यादिचूर्णम् (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. ७)

शतावरी गोक्षुरश्च बीजं च कपिकच्छुजम् ।
गाङ्गेरुकी चातिबला बीजमिक्षुरकोद्भवम् ॥
चूर्णितं सर्वमेकत्र गोदुग्धेन पिबेन्निशि ।
न तृप्तिं याति नारीभिर्नरश्चूर्णप्रसादतः ॥

सतावर, गोखरु, कौंचके बीज, नागबला (गंगेरन) की जड़, अतिबला (कंघी) की जड़ और तालमखाना समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

१ अष्ट गुणशर्करमिति पाठान्तरम् ।

इसे रात्रिके समय गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे कामशक्ति इतनी प्रबल हो जाती है कि बार बार स्त्री समागम करने पर भी तृप्ति नहीं होती।

(मात्रा—१॥–२ माशे।)

(७२९०) **शतावर्यादिचूर्णम्** (२)

(यो. र. । वाजीकरणा.)

शतावरीगोक्षुरकाश्वगन्धा
पुनर्नवानागबलामुसल्या ।
घृतेन खण्डेन तु भक्षणीयाः
क्षीणा नरा नागबला भवन्ति ॥

शतावर, गोखरु, असगन्ध, पुनर्नवा (बिसखपरा), नागबला (गंगेरन) की जड़ और मूसली समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसमें घी और खांड मिला कर सेवन करनेसे क्षीण पुरुष भी हाथीके समान बलवाले हो जाते हैं।

(७२९१) **शतावर्यादिचूर्णम्** (३)

(यो. र. । वाजीकरणा ; न. मृ. । त. ३)

शतावरीनागबलाविदारी–
त्रिकण्टकैरामलकीफलान्वितैः ।
विचूर्णितैः पञ्चभिरेकशः पृथक्
प्रकल्पितैर्वा घृतमाक्षिकप्लुतैः ॥
इति प्रयोगाः षडिमे भिषग्वरै–
रुदीरिताः शर्करया समन्विताः ।
नृणां मदान्ध प्रमदोपसर्पिणां
प्रधानधातोरतिरेककारणम् ॥

शतावर, नागबला (गंगेरन), विदारीकन्द, गोखरु और आमलेका चूर्ण पृथक् पृथक् या समान भाग मिला कर खांड, घी और शहदके साथ सेवन करनेसे अत्यन्त वीर्यवृद्धि होती है।

(मात्रा—३–४ माशे।)

(७२९२) **शतावर्यादिचूर्णम्** (४)

(व. से. । रसायना.)

शतावरी मुण्डतिका गुडूची
सहस्तिकर्णा सह तालमूली ।
एतानि कृत्वा समभागयुक्त्या
सर्पिर्मधुभ्यां सततं विलिह्यात् ॥
जरारुजामृत्युविमुक्तदेहो
भवेन्नरः कान्तिबलादियुक्तः ।
विभाति देवोपम एव नित्यं
शुद्धाशयो भूरिविशुद्धबुद्धिः ॥

शतावर, मुण्डी, गिलोय, हस्तिकर्णा और तालमूली समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करनेसे जरा, व्याधि और (अकाल) मृत्युका नाश हो कर कान्ति, बल और बुद्धि आदिकी वृद्धि होती है।

(७२९३) **शतावर्यादिचूर्णम्** (५)

(वै. मृ. । विषय २८)

शतावरीनागबलात्मगुप्ते–
क्षुरश्वदंष्ट्रातिलमाषचूर्णम् ।
पयः सिताढ्य निशि तेन पेयं
कान्ता शतं यस्य गृहे विभाति ॥

शतावरी, नागबला (गंगेरन), कौंचके बीज, तालमखाना, गोखरु, तिल और उड़द समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे मिसरी मिले दूधके साथ रात्रिके समय सेवन करनेसे काम शक्ति इतनी अधिक बढ़ जाती है कि मनुष्य सैकड़ों स्त्रियोंसे समागम कर सकता है।

(मात्रा—३-४ माषा।)

(७२९४) शतावर्यादिचूर्णम् (६)

(यो. र. । वाजीकरणा.)

शतावर्यश्वगन्धा च वानरी मुसली तथा।
गोकण्टो शर्करा क्षीरं पिबेन्नष्टेन्द्रियो नरः॥

शतावर, असगन्ध, कौंचके बीज, मूसली, और गोखरु समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे खांड मिले हुवे दूधके साथ सेवन करनेसे नपुंस्कता नष्ट होती है।

(मात्रा—३-४ माशे।)

(७२९५) शर्करादियोगः

(रा. मा. । स्त्री रोगा. १० ; यो. र. ; वैद्या. । अल. ४)

शर्कराबिसतिलैः [1]समांशकै-
र्माक्षिकेण सह भक्षितैः स्त्रियः।
नास्ति गर्भपतनोद्भवं भयं
पापभीतिरिव तीर्थसेवया॥

खांड, बिश (कमलकन्द) और तिल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिला कर चाटनेसे गर्भपातका भय नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—६ माशेसे ९ माशे तक।)

(७२९६) शर्कराद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

शर्कराहिङ्गुमरिचं सूक्ष्मचूर्णीकृतं पिबेत्।
सुखोदकेन तद्ध्याशु शूलघ्नममृतोपमम्॥

खांड, हींग और काली मिर्च समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ पीनेसे शूल अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है। शूलके लिये यह अमृतके समान गुणकारी है।

(७२९७) शर्करासमं चूर्णम्

(वृ. यो. त. । त. ७८ ; व. से. । कासा.; ग. नि.; यो. र.; वृ. नि. र. । हिक्काश्वा.)

शुण्ठीकणामरिचनागदलत्वगेला
चूर्णीकृतं क्रमविवर्धितमूर्ध्वमन्त्यात्।
खादेदिदं समसितं गुदजाग्निमान्द्य-
गुल्मारुचिश्वसनकण्ठहृदामयेषु॥

इलायची १ भाग, दारचीनी २ भाग, तेजपात ३ भाग, नागकेसर ४ भाग, काली मिर्च ५ भाग, पीपल ६ भाग और सोंठ सात भाग तथा खांड २८ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे अर्श, अग्निमांद्य, गुल्म, अरुचि, श्वास, तथा कण्ठ और हृद्रोगोंका नाश होता है।

(मात्रा—३-४ माशे।)

१ शर्करायवतिलैरिति पाठभेदः

शर्करासमं चूर्णम् (बृहत्)

प्र. सं. ६६४३ "बृहच्छर्करासमचूर्णम्" देखिये।

(७२९८) **शल्लकीत्वचादियोगः**

(ग. नि. । अतिसारा. २; वृं. मा. । अतिसारा.)

शल्लकीबदरीजम्बूपियालाम्रार्जुनत्वचः ।
पीताः क्षीरेण मध्वाढ्याः पृथक् शोणित-नाशनाः ॥

शल्लकी, बेरी, जामन, पियाल (चिरौंजी वृक्ष), आम और अर्जुनमेंसे किसी भी वृक्षकी छालके चूर्णको शहदमें मिलाकर दूधके साथ सेवन करनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है।

(७२९९) **शाकवृक्षमूलयोगः**

(ग. नि. । मूत्राघाता. २८)

शर्कराजपयः पीता शाकवृक्षस्य मूलिका ।
मूत्ररोधं तथा दाहं नाशयत्यतिवेगतः ॥

शाक वृक्ष (सागोन) की जड़के चूर्णको खांडमें मिला कर बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे मूत्रावरोध और दाहका अत्यन्त शीघ्र नाश हो जाता है।

(७३००) **शार्दूलं चूर्णम्** (१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

भागवृद्धयुत्तरं हिङ्गुवचाबिडमहौषधम् ।
यवानीमभयां चैव चूर्णं मस्त्वादिभिः पिबेत् ॥
विबन्धानाहशूलार्शोवर्ध्मश्वासोदरापहम् ॥

हींग १ भाग, बच २ भाग, बिड नमक ३ भाग, सेोठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग और हर्र ६ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे मस्तु आदिके साथ सेवन करनेसे विबन्ध (मल मूत्रादिका अवरोध), आनाह, शूल, अर्श, वर्ध्म, श्वास और उदर-रोगोंका नाश होता है।

(७३०१) **शार्दूलं चूर्णम्** (२)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

हिङ्ग्वाबिडशुण्ठ्यजाजीविजयावाट्याभिधा-नामयै-
श्चूर्णं कुम्भनिकुम्भमूलसहितैर्भागोत्तरं वर्धितैः।
पीतं कोष्णजलेन कोष्ठकरुजागुल्मोदरादीनयं
शार्दूलं प्रसभं प्रमथ्य हरति व्याधीन्मृगौघानिव॥

हींग १ भाग, बच २ भाग, बिड नमक ३ भाग, सेोठ ४ भाग, जीरा ५ भाग, भांग ६ भाग, पोखरमूल ७ भाग, कूठ ८ भाग, निसोत ९ भाग और दन्तीमूल १० भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे कोष्ठरुजा, गुल्म और उदरादि रागोंका अवश्य नाश होता है।

(मात्रा—१॥-२ माशे।)

(७३०२) **शिरीषादिचूर्णम्** (१)

(वृ. यो. त. । त. १२६)

शिरीषोदुम्बराश्वत्थवटप्लक्षत्वचां रजः ।
उद्धूलनेन जयति मसूरीं क्लेदमुल्वणम् ॥

सिरसकी छाल, गूलरकी छाल, पीपल वृक्षकी छाल, वटकी छाल और पिलखनकी छाल समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे मसूरिकाकी क्लेद (चिपचिपाहट) युक्त फुंसियों पर छिड़कनेसे लाभ होता है ।

(७३०३) **शिरीषादिचूर्णम्** (२)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शिरीषो लाङ्गली कुष्ठं निम्बो देवी हरीतकी ।
मध्वाज्यभक्षितं चूर्णं विषमज्वरनाशनम् ॥

सिरसकी छाल, लांगली (कलियारी) की जड़, कूठ, नीमकी छाल, हुल हुल और हर्र समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीमें मिला कर सेवन करनेसे विषम ज्वरका नाश होता है ।

(**मात्रा**—४–६ रत्ती ।)

(७३०४) **शिरीषादियोगः**

(यो. र.; वं. से. । विषा.)

शिरीषपुष्पस्वरसे[1] सप्ताहं मरिचं सितम् ।
भावितं सर्पदष्टानां पाने नस्याञ्जने हितम् ॥

सिरसके फूलोंके (या पत्तोंके) स्वरसमें सहंजनेके बीज (श्वेत मिर्च) भिगो दें और एक सप्ताह तक भीगे रहने दें एवं तदनन्तर (छायामें सुखाकर) पीस लें ।

इसे पिलाने, इसकी नस्य देने और इसका अंजन लगानेसे सर्पविष नष्ट होता है ।

(७३०५) **शिरीषाद्युद्वर्तनम्**

(रा. मा. । कुष्ठा. ८)

शिरीषपद्मकोशीररोध्रोद्वर्तितविग्रहः ।
ग्रीष्मोष्मणाऽपि नाप्नोति दौर्गन्ध्यं जातु मानवः ॥

१. पाठभेद—शिरीषपत्रस्वरसे.

सिरसकी छाल, कूठ, खस और लोध समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर चूर्ण बनावें ।

इसे शरीरपर मलनेसे ग्रीष्म कालमें भी शरीरसे पसीनेकी दुर्गन्ध नही आती ।

(७३०६) **शिवादिचूर्णम्**

(यो. त. । त. ४३)

शिवा वचा हिङ्गु विषा कलिङ्गं रुचकं समम् ।
कर्षमुष्णाम्बुना पेयमनुपानं हि शूलिभिः ॥

हर्र, बच, हींग, अतीस, इन्द्रजौ और काला नमक (संचल) समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे शूल नष्ट होता है ।

मात्रा—१। तोला । (व्यवहारिक मात्रा–१।। माशा)

(७३०७) **शिवाद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । मूत्रकृच्छ्रा ७)

शिवा पिप्पलिका द्राक्षा बीजं धवकुरण्टयोः ।
कर्कटयाश्च कुबेराक्ष्या बीजं पाषाणभेदतः ॥
एषां चूर्णं समांशानां भक्षितं मधुना समम् ।
अश्मरीं शर्करां हन्ति मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥

हर्र, पीपल, मुनक्का, धवके बीज, कुरण्ट (कण्टाई) के बीज, काकड़ासिंगी, करञ्जके बीज और पाषाण भेद समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे अश्मरी, शर्करा और दारुण मूत्र कृच्छ्रका नाश होता है

(७३०८) **शुक्रस्तम्भकरं चूर्णम्**

(र. प्र. सु. । अ. ११)

पोस्तकं पलमेकं शुण्ठी कर्षः सितोपलैकं च ।
कर्षमितं त्वक् पयसा पीतं रेतो ध्रुवं धत्ते ॥

पोस्त ५ तोले, सोंठ १। तोला, मिश्री ५ तोला और दालचीनी १। तोला ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे वीर्य स्तम्भन होता है ।

(७३०९) **शुण्ठीचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

लघुशुण्ठीकृतं चूर्णं पलसप्तमितं बुधैः ।
तत्समं गोघृतं दत्वा भर्जयित्वा ततो बुधः ॥
शुण्ठीसमं रसोनं च पिष्ट्वा तत्र विनिक्षिपेत् ।
पक्षाघातं हनुस्तम्भं कटिभङ्गं तथैव च ॥
बाहुपीडां जयेत्तीव्रां वातरोगं च नाशयेत् ॥

छोटी जातिकी सोंठके ३५ तोले चूर्णको ३५ तोले गोघृतमें भून लें और फिर उसमें ३५ तोले पिसा हुवा ल्हसन मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे पक्षाघात, हनुस्तम्भ, कटिभंग, तीव्र बाहु पीड़ा और वात व्याधिका नाश होता है ।

(७३१०) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. ६ ; वृ. नि. र. । आमातिसारा.)

शुण्ठीप्रतिविषा हिङ्गु मुस्ताकुटजचित्रकैः ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पीतमामातीसारनाशनम् ॥

सोंठ, अतीस, हींग, नागरमोथा, कुड़ेकी छाल और चीतामूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे आमातिसार नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—१॥-२ माशा)

(७३११) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (२)

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

यवक्षारान्वितं शुण्ठीचूर्णं लीढं घृतान्वितम् ।
उष्णोदकेन वा पीतं शुण्ठीचूर्णं क्षुधाकरम् ॥

सोंठका चूर्ण और यवक्षार समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर घीके साथ चाटने या केवल सोंठके चूर्णको उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे क्षुधा-वृद्धि होती है ।

(**मात्रा**—१॥-२ माशा ।)

(७३१२) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (३)

(वृ. नि. र. । कासा.)

शुण्ठीदुरालभा द्राक्षा कर्चूरस्तवराजकम् ।
वातकासं निहन्त्याशु तैलयुक्तं हि चूर्णकम् ॥

सोंठ, धमासा, मुनक्का, कचूर और तवराज (यवास शर्करा-शीरखिस्त) समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे तेलमें मिलाकर चाटनेसे वातज कास नष्ट होती है ।

(**मात्रा**—१॥ माशा ।)

(७३१३) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (४)

(ग. से. । ग्रहण्य.)

शुण्ठी मुस्तं विडङ्गञ्च सुरातक्रोष्णवारिणा ।
श्लैष्मिकं ग्रहणीदोषं पीतं हन्त्यग्निवर्द्धनम् ॥

सोंठ, नागरमोथा और बायविडंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे सुरा, तक्र या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफज ग्रहणी विकार नष्ट हो कर अग्नि दीप्त होती है ।

(**मात्रा**—२ माशा ।)

(७३१४) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (५)

(यो. र. । स्त्री.)

शुण्ठीतिरीटयोश्चूर्णं भुक्तं सघृतशर्करम् ।
प्रबलं प्रदरं हन्ति नार्या वा कुटजाष्टकम् ॥

सोंठ और लोध समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । इसमें खांड मिला कर घीके साथ सेवन करनेसे प्रबल प्रदर रोग भी नष्ट हो जाता है । (मात्रा—२ माशे ।)

कुटजाष्टक भी प्रदरको नष्ट कर देता है ।

(७३१५) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (६)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

शुण्ठीमरिचदारूणां चूर्णं क्वाथस्य पानतः ।
सर्वे वाता विनश्यन्ति देहोपद्रवकारिणः ॥

सोंठ, काली मिर्च और देवदारु समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे इन्हीं ओषधियोंके काथके साथ सेवन करनेसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(७३१६) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (७)

(यो. र. । अतिसारा. ; वृ. नि. र.)

सत्त्वाशुण्ठ्योषणं भृङ्गीसमांशं सूक्ष्मचूर्णितम् ।
यथासात्म्यं सेवनीयं शीततोयानुपानतः ॥
सशूलमामदोषं च नाशमायाति सत्वरम् ।
दध्योदनं पथ्यमत्र उचितं रोगशान्तये ॥

सोंठ, काली मिर्च और भांग (अथवा अतीस) समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शीतल जलके साथ सेवन करनेसे शूल और आमातिसार शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—दही भात ।

(**मात्रा**—१॥ माशा ।)

(७३१७) **शुण्ठ्यादिचूर्णम्** (८)

(वृ. मा. । अजीर्णा. ; ग. नि. । अजीर्णा. ५)

भवेदजीर्णं प्रति यस्य शङ्का
स्निग्धस्य जन्तोर्बलिनोऽन्नकाले ।
पूर्वं सशुण्ठीमभयामशङ्को
भुञ्जीत सम्प्राश्य हितं हिताशी ॥

यदि अजीर्णका सन्देह हो और रोगी बलवान हो तथा उसका कोष्ठ भी स्निग्ध हो तो उसे भोजनके समय (भोजनसे पूर्व) सोंठ और हर्रका समान-भाग-मिश्रित चूर्ण खिलाना चाहिये ।

(**मात्रा**—२ माशे ।)

(७३१८) **शुण्ठ्यादियोगः**

(भा. प्र. म. खं. २ । अजीर्णा.)

गुडेन शुण्ठीमथ चोपकुल्यां
पथ्यां तृतीयामथ दाडिमं वा ।
आमेष्वजीर्णेषु गुदामयेषु
वर्चो विबन्धेषु च नित्यमद्यात् ॥

आमाजीर्ण, अर्श और मलावरोधमें नित्य प्रति सोंठ, पीपल और हर्रके समान-भाग-मिश्रित (२ माशे) चूर्णको अथवा अनार दानेके चूर्णको गुड़में मिला कर खाना चाहिये ।

(७३१९) **शुण्ठ्याद्यं चूर्णम्** (१)

(ग. नि. । परि. चूर्णा. ३)

शुण्ठीं ससौवर्चलचित्रकाभयां
सरामठां दाडिमसैन्धवान्विताम् ।
खादन्ति ये मन्दहुताशना
भुवि भवन्ति ते वाडवतुल्यवह्नयः ॥

सोंठ, संचल (काला नमक), चीतामूल, हर्र, हींग, अनारदाना, और सेंधानमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे सेवन करनेसे अग्निमांद्यका नाश हो कर जठराग्नि अत्यन्त तीव्र हो जाती है ।

(**मात्रा**—१॥-२ माशा ।
अनुपान—उष्ण जल ।)

(७३२०) **शुण्ठ्याद्यं चूर्णम्** (२)

(ग. नि. । हृद्रोगा. २७)

शुण्ठीसुवर्चलाहिङ्गुदाडिमं साम्लवेतसम् ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पेयं श्वासहृद्रोगमुक्तये ॥

सोंठ, ब्राह्मी, हींग, अनारदाना और अम्लवेत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे श्वास और हृद्रोगका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१ माषा ।)

(७३२१) **शुण्ठ्याद्यं चूर्णम्** (३)

(वै. जी. । विलास २; वृ. नि. र. । अतिसारा.)

कल्याणि काञ्चनलता ललिताङ्गयष्टे
ताम्बूलशालिवदने ललने शृणुष्व ।
शुण्ठीमदाकुसुममोचरसाजमोदा-
स्तक्रान्विताः प्रशमयन्त्यतिसारमुग्रम् ॥

सोंठ, धायके फूल, मोचरस और अजमोद समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे तक्र (मट्ठे) के साथ सेवन करनेसे उग्र अतिसार भी नष्ट हो जाता है ।

(**मात्रा**—३ माशे ।)

(७३२२) **शुण्ठ्याद्यं चूर्णम्** (४)

(वै. म. र. । पटल ३)

शुण्ठीकणासिताधात्रीरेणुः क्षौद्रेण मिश्रितः ।
हिक्कां हन्ति समालीढः, सक्षौद्रं पिच्छभस्म वा ॥

सोंठ, पीपल, मिश्री, आमला और रेणुका समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ चाटनेसे हिचकी नष्ट हो जाती है ।

(**मात्रा**—३ माशा ।)

मोरपंखकी भस्म शहदमें मिलाकर चाटनेसे भी हिचकीका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१ माशा ।)

(७३२३) **शूकरशिम्बीमूलयोगः**

(भा. प्र. म. खं. २ । स्त्री रोगा.)

शूकरशिम्बीमूलं मध्यं
वा दधिफलस्य सपयस्कम् ।
पीत्वाथो भवलिङ्गीबीजं
कन्यां न सूते स्त्री ॥

यदि किसी स्त्रीके केवल कन्या ही कन्याएं होती हैं तो उसे कौंचकी जड़का चूर्ण या कैथके गूदेका चूर्ण दूधके साथ पिलाना चाहिये अथवा शिवलिंगीके बीज सेवन कराने चाहियें ।

(७३२४) **शृङ्गबेरादियोगः**

(यो. र. ; वृ. नि. र. । अश्मर्य.)

शृङ्गबेरयवक्षारपथ्याकालीयकान्वितम् ।
आजं दधि भिनत्त्युग्रामश्मरीमाशु पातयेत् ॥

अदरक (सोंठ) जवाखार, हर्र और अगर समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे बकरीके दहीमें मिलाकर सेवन करनेसे कठिन पथरी भी टूटकर शीघ्र ही निकल जाती है ।

(**मात्रा**—२-३ माशे ।)

(७३२५) **शृङ्ग्यादिचूर्णम्** (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. ६ ; वै. र. । कासा.)

शृङ्गी प्रतिविषा कृष्णा चूर्णिता मधुना लिहेत् ।
शिशोः कासज्वरच्छर्दिशान्त्यै वा केवला विषा ॥

काकड़ासिंगी, अतीस और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिला कर चटानेसे बालकोंके ज्वर, खांसी और वमनका नाश होता है ।

(**मात्रा**—४ रत्ती ।)

केवल अतीसका चूर्ण चटानेसे भी बालकोंके ज्वर, खांसी और वमनका नाश हो जाता है ।

(७३२६) **शृङ्ग्यादिचूर्णम्** (२)

(यो. र.; भै. र. ; वै. र. ; वृ. मा. ; ग. नि. ; र. र. । हिक्का. ; वृ. यो. त. । त. ८० ; यो. चि. म. । अ. २ ; व. से. ।)

शृङ्गीकटुत्रयफलत्रयकण्टकारी-
भार्गीसपुष्करजटालवणानि पञ्च ।
चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्कां
श्वासोर्ध्ववातकसनारुचिपीनसेषु ॥

काकड़ासिंगी, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, कटेली, भरंगी, पोखरमूल और पांचो नमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे हिक्का, श्वास, उर्ध्व वात, कास, अरुचि और पीनसका नाश होता है ।

(**मात्रा**—२-३ माशे ।)

(७३२७) **शृङ्ग्यादिचूर्णम्** (३)

(र. र. । श्वासा.)

शृङ्गीमहौषधकणाघनपुष्कराणां
चूर्णं शठीमरिचयोश्च सिताविमिश्रम् ।
क्वाथेन पीतममृताविषपञ्चमूल्याः
श्वासं त्र्यहेण विनिहन्ति हि घोर-
रूपम् ॥

काकड़ासिंगी, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, पोखरमूल, कचूर और काली मिर्च १-१ भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसे गिलोय, अतीस और पंचमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरणी) के काथके साथ पीनेसे घोर श्वास भी ३ दिनमें नष्ट हो जाता है।

(७३२८) शृङ्ग्यादिचूर्णम् (४)

(ग. नि. । कासा. १०)

शृङ्गीवचाकट्फलकत्तृणाब्द-
धान्याभयाभार्ग्यमराह्वविश्वम् ।
उष्णाम्बुना हिङ्गुयुतं च पीत्वा
बद्धास्यमप्याशु जहाति कासम् ॥

काकड़ासिंगी, बच, कायफल, गन्धतृण, नागरमोथा, धनिया, हर्र, भरंगी, देवदारु और सोंठ तथा हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे खांसी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१॥-२ माशा ।)

(७३२९) शोथारिचूर्णम्

(भै. र. । शोथा.)

शुष्कमूलमपामार्गस्त्रिकटुस्त्रिफला तथा ।
दन्ती च त्रिमदश्चैव प्रत्येकश्च समं समम् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय बिल्वपत्ररसेन च ।
पाण्डुरोगं निहन्त्याशु शोथश्चैव सुदारुणम् ॥

अपामार्ग (चिरचिटे) की सूखी जड़, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, बायबिडंग, नागरमोथा और चीतामूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे बेलपत्रके रसमें मिलाकर प्रातःकाल सेवन करनेसे पाण्डु और दारुणशोथ शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(मात्रा— १॥-२ माशे ।)

(७३३०) शोभाञ्जनादिचूर्णम्

(ग. नि. । कृम्य. ६)

शोभाञ्जनः सर्षपराजिकार्क-
रसोनसिन्धूत्थकणाग्नि विश्वाः ।
एतैः कृतं चूर्णमिदं निहन्ति
व्रतं कृमीणां च तुषोदकेन ॥

सहंजनेकी छाल, सरसों, राई, आककी जड़, ल्हसन, सेंधा, पीपल, चीता और सेंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे कांजीके साथ सेवन करनेसे कृमि रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—२ माशे ।)

(७३३१) श्यामादियोगः

(ग. नि. । गुल्मा. २५)

श्यामा दन्ती त्रिवृत्कुष्ठं यवक्षारो हरीतकी ।
गुग्गुलुश्चेति मूत्रेण पातव्यं गुल्मभेदनम् ॥

पीपल, दन्तीमूल, निसोत, कूठ, जवाखार, हर्र और गूगल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे गुल्म नष्ट होता है।

(७३३२) श्यामाद्युद्वर्त्तनम्

(रा. मा. । कुष्ठा. ८)

श्यामात्मगुप्तामलयोद्भवानि
कुष्ठं च बीजानि च मूलकस्य।
समान्युपादाय कृतं नराणा-
मुद्वर्तनं सिध्महरं वदन्ति ॥

हल्दी, कौंच, बाबची, कूठ और मूलीके बीज समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे मसलनेसे सिध्म (छीप) का नाश होता है।

(७३३३) श्रीखण्डादियोगः

(ग. नि. । शिरोरोगा. १)

श्रीखण्डकुङ्कुमसुशीरकभृङ्गराज-
द्राक्षाप्रियङ्गुमरिचं च गुडूचिका च ।
यष्टी सनागरमिदं सकलं सखण्डं
दुग्धान्वितं मधुघृतेन शिरोव्यथायाम् ॥

चन्दन, केसर, खस, भंगरा, मुनक्का, फूलप्रियंगु, काली मिर्च, गिलोय, मुलैठी और सोंठ समान भाग तथा खांड सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीमें मिला कर दूधके साथ सेवन करनेसे शिरो व्यथा नष्ट होती है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(७३३४) श्वदंष्ट्रादिचूर्णम्

(रा. मा. । राजय. ११)

चूर्णं श्वदंष्ट्राफलवाजिगन्धा-
विनिर्मितं माक्षिकसम्प्रयुक्तम् ।
क्षीरेण सार्धं परिपीयमानं
शोषं च कासं च निहन्ति पुंसाम् ॥

गोखरुके फल और असगन्ध समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर दूधके साथ सेवन करनेसे शोष और कासका नाश होता है।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

इति शकारादिचूर्णप्रकरणम्.

अथ शकारादिगुटिकाप्रकरणम्

शङ्करवटी

(भै. र. । हृद्रोगा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

शङ्खवटी

रस प्रकरणमें देखिये ।

शठ्यादिकाङ्कायनवटी

(वृ. नि. र. । गुल्मा.)

प्र. सं. ७५१ "काङ्कायनगुटिका" देखिये ।

(७३३५) शठ्यादिगुटिका

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ५)

शठीपुष्करहिङ्ग्वम्लवेतसक्षारचित्रकान् ।
धान्यकञ्च यवानीञ्च विडङ्गं सैन्धवं वचाम् ॥
सचव्यपिप्पलीमूलमजगन्धां सदाडिमम् ।
अजाजीं चाजमोदाञ्च चूर्णं कृत्वा प्रयोजयेत् ॥
रसेन मातुलुङ्गस्य मधुशुक्तेन वा पुनः ।
भावितं गुडिकां कृत्वा सुपिष्टां कोलसम्मिताम् ॥

गुल्मं प्लीहानमानाहं श्वासं कासमरोचकम् ।
हिक्कां हृद्रोगमर्शांसि विविधान् शिरसोरुजान् ॥
पाण्ड्वामयं कफोत्क्लेशं सर्वजाश्च प्रवाहिकाम् ।
पार्श्वहृद्वस्तिशूलश्च गुडिकैषा व्यपोहति ॥

कचूर, पोखरमूल, हींग, अम्लबेत, जवाखार, चीतामूल, धनिया, अजवायन, बायबिडंग, सेंधानमक, बच, चव्य, पीपलामूल, बनतुलसी, अनारदाना, जीरा, और अजमोद समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे बिजौरे नीबूके रस या मधुशुक्तकी भावना दे कर ५-५ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे गुल्म, प्लीहा, अफारा, श्वास, कास, अरुचि, हिचकी, हृद्रोग, अर्श, अनेक प्रकारकी शिर पीड़ा, पाण्डु, कफोत्क्लेश, प्रवाहिका तथा पार्श्व, बस्ति और हृदयका शूल आदि रोग नष्ट होते हैं ।

(व्यवहारिक मात्रा—१॥-२ माशा ।)

नोट—मधुशुक्त बनानेकी विधि मकाराद्यासवारिष्ट प्रकरणमें देखिये ।

शतावरीमोदकः

(र. र. ; धन्व. । वाजीकरणा.)

रस प्रकरणमें देखिये

शशिलेखावटी

(यो. र. । कुष्ठा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(७३३६) शिग्रुत्वचादिवटिका

(ग. नि. । वाता. १९)

शिग्रुत्वचा पुष्करमूलशुण्ठ्यौ
गोकण्टकः पिप्पलिका गुडूची ।
रास्ना शठी सैन्धवचित्रकौ च
सर्वाङ्गवाते गुटिका विधेया ॥

सहंजनेकी छाल, पोखरमूल, सोंठ, गोखरु, पीपल, गिलोय, रास्ना, कचूर, सेंधानमक और चीतामूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और (उसे पानीमें घोटकर) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे सर्वाङ्ग वायुका नाश होता है ।

(मात्रा—१॥ माशा । अनुपान—उष्ण जल ।)

शिलाजतु वटिका

रस प्रकरणमें देखिये ।

शिवगुटिका (लघु)

(ग. नि. । गुटिका. ४ ; र. का. धे. । पाण्डु. ; व. से. । पाण्डु.)

प्र. सं. ६३४४ "लघुशिवगुटिका" देखिये ।

शिवा गुटिका.

(व. से. ; च. द. । राजयक्ष्मा.)

रस प्रकरणमें देखिये.

(७३३७) शिवामोदकम्.

(भै. र. । बालरो.)

शिवा तामलकी मूर्वा शतपुष्पा निशाद्वयम् ।
आत्मगुप्ता बला बिल्वं देवपुष्पं शतावरी ॥

मुरा मधुरिका मांसी विदारी विश्वभेषजम् ।
अनन्तामलकी श्यामा भार्गी करिकणा कणा ॥
चातुर्जातं चतुर्बीजं चन्दनं रक्तचन्दनम् ।
मूशली वाजिगन्धा च बीजं गोक्षुरसम्भवम् ॥
सर्वाण्येतानि तुल्यानि द्राक्षा सर्वसमा मता ।
सिता द्राक्षासमा चैवेत्येतानि मधुना सह ॥
सम्मर्द्य मोदकान् कृत्वा माषकप्रमितान् भिषक् ।
एकैकमेषां पयसा प्रातः प्रातः प्रयोजयेत् ॥
बालानां सर्वरोगघ्नं पुष्टिकृद् बलवर्द्धनम् ।
परं वह्निकरं मेध्यमायुष्यं ग्रहदोषहृत् ॥
भगवत्यै समुदितं शिवायै लोकमङ्गलम् ।
एतन्मोदकमीशेन युगे भगवता कृते ॥

हरीतकी, भुईआंवला, मूर्वामूल, सोया, हल्दी, दारहल्दी, कौंछके बीज, बलामूल, बेलगिरी, लौंग, शतावर, मुरामांसी, सौंफ, जटामांसी, विदारीकन्द, सोंठ, अनन्तमूल, आंवला, श्यामालता, भारंगी, गजपिप्पली, पिप्पली, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र, नागकेसर, मेथीबीज, हालों के बीज, काला जीरा, अजवायन, श्वेत चन्दन, लाल चन्दन, श्वेत मूसली, असगन्धकी जड़, गोखरुबीज; प्रत्येक समभाग। सम्पूर्ण के समान द्राक्षा। द्राक्षाके समान खांड। इन्हें एकत्र मधुसे मर्दन कर १ माशा परिमाण के मोदक बनालें। आयु आदिकी विवेचना करके एक मोदक प्रातःकाल दूधके साथ सेवन करावें। यह बालकोंके सम्पूर्ण रोगोंको नष्ट करता है तथा पुष्टिकारक, बलवर्द्धक, जठराग्निप्रदीपक, मेध्य एवं आयुष्य है। इसके सेवनसे ग्रहजनित दोष नष्ट होते हैं। शिव ने सतयुग में पार्वती को इस मोदकका उपदेश किया था ॥

शुक्रमातृकावटिका.

(र. र. । प्रमेह.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(७३३८) शुक्रसञ्जीवनीयो मोदकः

(र. र. । रसायना. ; धन्व. । रसायना.)

विदारीकन्दजं चूर्णं चतुर्दशपलोन्मितम् ।
शाखोटबीज द्विपलं लाजा पलचतुष्टयम् ॥
सिता पलशतं देयं क्षीरं दत्वा विपाचयेत् ।
जातीफलं त्रिजातञ्च सशटी ग्रन्थि पर्णिभिः ॥
यमानिका तथा व्योषं प्रत्येकं चूर्णं शुक्तिभिः।
सिद्धपाके क्षिपेत्सर्वं मोदकं शुक्रजीवनम् ॥
समृद्धयति वीर्यञ्च तेजोबलकरं परम् ॥

बिदारीकन्दका चूर्ण १४ पल, सिहोड़ेके बीज २ पल (१० तोले) धानकी खील ४ पल, मिश्री १०० पल और दूध १०० पल ले कर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतारकर उसमें २॥-२॥ तोले जायफल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, कचूर, गठौना, अजवायन, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण मिलाकर मोदक बनावें।

इनके सेवनसे बल वीर्य और तेजकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—१ तोला ।)

शुक्रस्तम्भकरा वटकाः

(र. प्र. सु.)

रस प्रकरणमें देखिये.

(७३३९) शुक्रस्तम्भकरीवटिका

(र. प्र. सु. । अ. १३)

श्रीवासमस्तकीनागकेशरं च लवङ्गकम् ।
कङ्कोलं तुलसीबीजं खुरासान्यहिफेनकम् ॥
जावित्रीकाऽब्धिशोषं च करभागुरुकुङ्कुमम् ।
कङ्कोलकतुगाक्षीरीजातीफलसमांशकान् ॥
सर्वाण्येवं विचूर्ण्याथ नालिकेरोदरे क्षिपेत् ।
दुग्धमध्ये विपाच्यैनं दिनान्येवं हि पञ्च च ॥
नालिकेरफलाद्ग्राह्यं मर्दयेन्मधुनासह ।
गुटिका कोलमात्रा हि भक्षणीया निशामुखे ॥
वीर्यस्तम्भं करोत्युग्रं चतुर्यामावधिं तथा ॥

श्रीवेष्ट (चीरका गोंद), मस्तगी, नागकेसर, लौंग, कंकोल, तुलसीके बीज, खुरासानी अजवायन, अफीम, जावत्री, समन्दर सोख, गजपीपल, अगर, केसर, कंकोल, बंसलोचन और जायफल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे एक नारियलके भीतर भर दें तथा नारियलके मुखको अच्छी तरह बन्द करके उसे ५ दिन तक दूधमें पकावें। तदनन्तर उसमेंसे औषधको निकालकर थोड़ासा शहद मिलाकर पीस लें और ५–५ माशेकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे सायंकालको १ गोली खाकर रात्रिको स्त्री–समागम करनेसे ४ पहर तक वीर्यस्तम्भन होता है।

(७३४०) शुण्ठ्यादिगुटी

(वृ. नि. र. । अरोचका.)

शुण्ठ्येकभागा द्विगुणा च कृष्णा
निशोत्रपथ्या त्रिगुणा तथा च ।
सार्धैकभागामलकी च तीक्ष्णं
चतुर्गुणं सैन्धवमम्लमर्द्यम् ॥
शाणैकमात्रा गुटिका निषेव्या
निहन्ति मन्दानलजं प्रकोपम् ॥

सोंठ १ भाग, पीपल २ भाग, निसोत ३ भाग, हर्र ३ भाग, आमला १॥ भाग, काली मिर्च ४ भाग और सेंधा नमक ४ भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे नीबूके रसमें घोटकर ५–५ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्निमांद्यका नाश होता है।

(अनुपान–उष्ण जल । व्यवहारिक मात्रा–२–३ माशे)

(७३४१) शुण्ठ्यादिगुटी.

(वृ. नि. र. । मूर्छा.)

शुण्ठीकणशताह्वानां साभयानां पलं पलम् ।
गुडस्य षट् पलान्येषां गुटिका भ्रमनाशिनी ॥

सोंठ, पीपल, सोया और हर्र ५–५ तोले ले कर चूर्ण बनावें और उसे ३० तोले गुड़में मिलाकर (६–६ माशेकी) गुटिका बना लें।

इनके सेवनसे मूर्च्छा नष्ट हो जाती है।

शूलगजकेसरीगुटिका.

(वै. र. । शूला.)

रस प्रकरणमें देखिये।

शूलवज्रिणी वटिका.

(र. च., र. रा. सु. । शूला.)

रस प्रकरणमें देखिये.

शूलेभसिंहनी वटी.

(र. का. धे. । शूला.)

रस प्रकरणमें देखिये.

श्रीखण्डवटी.

प्र. सं. ६१५८ देखिये ।

(७३४२) श्रीफलकुसुमवटिका.

(र. चं. । स्त्री रोगा.)

कर्षैकमानं नवकुङ्कुमं च
रेवाचिनीग्रन्थिकशौण्ठिकृष्णम् ।
प्रत्येकं कर्षद्वयं जातिपत्रं
खण्डं लवङ्गं ह्यपि जातिसस्यम् ॥
मिशि त्वगाजाजि पलप्रमाणं
प्रत्येकमेतत्सकलैः समानम् ।
श्री नारिकेलीकलिकाऽतिगूढा
सम्मर्द्य सर्वं वटि पूगतुल्या ॥
एका प्रगे गोपयसा च पीत्वा
पथ्यं च दुग्धोदनवारिवर्ज्यम् ।
दुःसाध्यसूतीगदनाशनाय
चतुर्दशाहानि भजेद्वटीयम् ॥

नवीन केसर १। तोला, रेवन्दचीनी, पीपलामूल, पीपल और काली मिर्च २॥–२॥ तोले तथा जावत्री, खांड, लौंग, जायफल, सौंफ, दालचीनी और जीरा ५–५ तोले एवं नारियलकी बाल कलिकाएं सबके बराबर ले कर सबका बारीक चूर्ण करके (पानीसे घोटकर) सुपारीके फलके समान गोलियां बना लें।

इनमेंसे १–१ गोली नित्य प्रति प्रातःकाल गायके दूधके साथ सेवन करनेसे १४ दिनमें दुःसाध्य सूतिका रोग भी नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—केवल दूध भात पर रहना चाहिये और पानीसे परहेज़ करना चाहिये ।

श्री मदनानन्दमोदकम्.

प्र. ५४९८ मदनानन्द मोदकम् (१) देखिये ।

श्री मन्मदनमोदकः

प्र. सं. ५१५९ मदनमोदकः देखिये ।

(७३४३) श्वासकासघ्नी वटी.

(र. र. स. । उ. अ. १३)

विश्वादित्रिकनिर्गतद्रवनिशाकीरप्रियोत्थं दलं
नीलग्रीवगलालयं सुरपतेस्तार्तीयनेत्राभिधम् ।
विद्वत्पुञ्जवती कृमिप्रतिभटं निर्गुण्डिका वारिणा
तुल्यांशाश्चणकप्रमाणवटिकाः सश्वासकास-
घ्निकाः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, सूखी हल्दी, अनारके पत्ते, शुद्ध बछनाग, चीतामूल, ब्राह्मी और बायबिडंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे संभालूके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे श्वास और खांसीका नाश होता है ।

(७३४४) श्वित्रहरी वटी.

(र. चि. म. । स्त. ४)

अङ्कोलं देवदाली च सममेतद्द्वयं भवेत् ।
प्रायः कोलसमाः कार्या गुटिकास्ताः प्रयोजयेत् ॥

प्रत्यहं दीयते सा च गुटिकैका सशर्करा ।
द्वियामे समतिक्रान्ते भोज्यं माषस्य खादयेत् ॥
दिनाष्टकमियं देया श्वित्रकुष्ठं विनाशयेत् ।

अंकोल और देवदाली समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे (पानीमें) घोटकर लगभग बेरके बराबर गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक एक गोली खांडके साथ खानी चाहिये और दवा खानेके २ पहर पश्चात् उड़दका बना हुवा आहार खाना चाहिये ।

इसके आठ दिनके सेवनसे श्वित्र कुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

इति शकारादिगुटिकाप्रकरणम् ॥

अथ शकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(७३४५) शतावरी गुग्गुलुः

(र. र. स. । उ. अ. २१)

शतावरी गुडूची च सारणी गोक्षुरः कणा ।
शताह्वा दीप्यका रास्ना ह्यश्वगन्धा च शङ्खिका॥
कर्चूरो नागरैश्चैते चूर्णनीयाः समांशकाः ।
एतैः सर्वैः समो ग्राह्यो गुग्गुलुर्महिषाख्यकः ॥
खण्डयित्वा घृतेनाऽऽर्द्रं पूर्वचूर्णं विनिक्षिपेत् ।
सम्मर्द्य सर्पिषा गाढं कर्षार्धं गुलिकां किरेत् ॥

शतावर, गिलोय, प्रसारणी, गोखरु, पीपल, सोया, अजवायन, रास्ना, असगन्ध, चोरपुष्पी, कचूर और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और सबके बराबर शुद्ध गूगल ले कर उसमें आवश्यकतानुसार घी और थोड़ा थोड़ा यह चूर्ण मिला कर खूब कूटें, यहां तक कि सब चीजें मिल कर एक जीव हो जाएं ।

यह गूगल वातव्याधिको नष्ट करता है ।

(७३४६) शिवागुग्गुलुः

(रसे. सा. सं. ; धन्व.; र. रा. सु. । आमवाता.)

शिवाविभीतामलकीफलानां
प्रत्येकशो मुष्टिचतुष्टयञ्च ।
तोयाढके तत्कथितं विधाय
पादावशेषे त्ववतारणीयम् ॥
एरण्डतैलं द्विपलं निधाय
पिचुत्रयं गन्धकनामकस्य ।
पचेत्पुरस्यात्र पलद्वयञ्च
पाकावशेषे च विचूर्ण्य दद्यात् ॥
रास्ना विडङ्गं मरिचं कणा च
दन्तीजटानागरदेवदारु ।
प्रत्येकशः कोलमितं तथैषां
विचूर्ण्य निःक्षिप्य नियोजयेच्च ॥
आमवाते कटीशूले
गृध्रसीक्रोष्टुशीर्षके ।
न चान्यदस्ति भैषज्यं
यथायं गुग्गुलुः स्मृतः ॥

हर्र, बहेड़ा और आमला २०-२० तोले ले कर सबको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें १० तोले अण्डीका तेल, ३॥। तोले शुद्ध गंधक तथा १० तोले शुद्ध गूगल मिला कर पुनः पकावें । जब पानी जल जाय तो अग्निसे नीचे उतार कर उसमें

१।-१। तोला रास्ना, बायबिडंग, काली मिर्च, पीपल, दन्तीमूल, सोंठ और देवदारुका चूर्ण मिला-कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे आमवात, कटिशूल, गृध्रसी और क्रोष्टुशीर्षका नाश होता है । इन रोगोंके लिये इससे उत्तम अन्य कोई औषध नहीं है ।

(मात्रा—३-४ माशे । अनुपान-उष्ण जल ।)

इति शकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

अथ शकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(७३४७) शठ्यादिलेहः

(वृ. नि. र. । कासा. ; यो. र. ; वृ. यो. त. । त. ७८)

शठी सातिविषा मुस्ता शृङ्गी कर्कटकस्य च ।
अभयां शृङ्गवेरं च समान्यदि पेषयेत् ॥
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तं तक्रोदकपरिप्लुतम् ।
श्लेष्मकासी लिहेदेवमवलेहं मुहुर्मुहुः ॥

कचूर, अतीस, नागरमोथा, काकड़ासिंगी, हर्र, सोंठ, हींग और सेंधा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे छाछ (तक्र) के पानीमें मि-लाकर चाटने योग्य कर लें ।

कफकी खांसी वालेको यह लेह बार बार चाटना चाहिये ।

शतपत्रिकापाकः

(वै. क. द्रु.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(७३४८) शतावर्यादिलेहः

(ग. नि. । राजयक्ष्मा. ९)

शतावरीविदार्यश्वगन्धाः पथ्या पुनर्नवा ।
बलात्रयं श्वदंष्ट्राऽऽज्यमधुलेहः क्षयापहः ॥

शतावर, विदारीकन्द, असगन्ध, हर्र, पुन-र्नवा, खरैटीकी जड़, कंघी की जड़, नागबला, (गंगेरन) की जड़ और गोखरु समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसमें घी तथा शहद मिला कर चाटने योग्य बना लें ।

इसके सेवनसे क्षयका नाश होता है ।

(७३४९) शर्करादिलेहः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

शर्करा चैव खर्जूरं द्राक्षा लाजः कणा मधु ।
सर्पिर्युतो हितो लेहः पित्तकासनिवारणः ॥

खांड, पत्थर पर पिसी हुई मुनक्का और खजूर तथा धानकी खीलोंका चूर्ण एवं पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर उसमें थोड़ा थोड़ा शहद और घी मिला लें ।

इसके सेवनसे पित्तज खांसी नष्ट होती है ।

शर्करालेहः

रस प्रकरणमें देखिये.

शशाङ्कलेखादिलेहः

रस प्रकरणमें देखिये.

शालमपाकः

रस प्रकरणमें देखिये.

(७३५०) **शालूरपर्ण्याद्यवलेहः**

(भा. प्र. म. खं. २ । सन्निपाता.)

शालूरपर्णीमालूरमूलामयमधुप्लुता ।
शङ्खपुष्पीसहिता सेव्या वाचां विशुद्धये ॥

ब्राह्मी, बेलकी जड़, शंखपुष्पी और कूठ समान भाग ले कर चूर्ण करें और शहदमें मिला कर चटनी बना लें ।

इसे चटानेसे सन्निपातके रोगीकी वाणि शुद्ध हो जाती है।

(७३५१) **शिखिपिच्छलेहः**

(वृ. नि. र. । हिक्का.)

शिखिपिच्छभस्मकृष्णाचूर्णं
मधुमिश्रितं मुहुर्लीढम् ।
हिक्कां हरति प्रबलां श्वासं
चैवातिदुस्तरां छर्दिम् ॥

मोरके पंखकी भस्म और पीपलके चूर्णको शहदमें मिला कर बार बार चटानेसे प्रबल हिक्का, श्वास और अतिदुस्तर छर्दिका नाश होता है ।

(**मात्रा**—आधा माशा ।)

शिलाजतुलेहः

रस प्रकरणमें देखिये.

(७३५२) **शिंशिपात्वगादियोगः**

(व. से. । वातव्या.)

शिंशिपात्वक् तुलां क्षुण्णां जलद्रोणद्वये पचेत् ।
अष्टभागावशिष्टञ्च पूतं लेहञ्च कारयेत् ॥
पायसं सहविष्यान्नं तत्कर्षेण च मिश्रितम् ।
भक्षयेदेकविंशाहं गृध्रसीनाशनं परम् ॥

६। सेर शीशमकी छालको कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें, और उसे पुनः पकाकर गाढ़ा कर लें ।

इसमेंसे १।-१। तोला अवलेह नित्य प्रति खीर या घृतयुक्त भातमें मिला कर खानेसे २० दिनमें गृध्रसी नष्ट हो जाती है ।

(७३५३) **शुण्ठीखण्डः** (१)

(भै. र. । अम्लपित्ता.)

शुण्ठीचूर्णस्य कुडवं खण्डप्रस्थं समावपेत् ।
दत्त्वा द्विकुडवं सर्पिः क्षीरप्रस्थद्वये पचेत् ॥
लेहेऽवतारिते दद्यात् धात्रीधान्यकमुस्तकम् ।
अजाजी पिप्पली वांशी त्रिजातं कारवी शिवा॥
त्रिशाणं मरिचं नागं षण्माषन्तु पृथक् पृथक् ।
पलत्रयञ्च मधुनः शीतीभूते प्रदापयेत् ॥
ततो मात्रां प्रयुञ्जीत अम्लपित्तनिवृत्तये ।
शूलहृद्रोगवमनैरामवातैश्च पीडितः ॥

२० तोले शुण्ठिचूर्णको १ सेर घीमे भूनें और फिर उसमें ४ सेर दूध तथा १ सेर खांड मिला कर मन्दाग्निपर पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतारकर उसमें आमला, धनिया, नागरमोथा, जीरा, पीपल, वंशलोचन, दालचीनी, इलायची, तेजपात, काला जीरा और हर्रका चूर्ण ११।-११। माशे तथा काली मिर्च और नागकेसरका चूर्ण ७।।-७।। माशे मिला दें । तदनन्तर जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें १५ तोले शहद मिला दें ।

इसके सेवनसे अम्लपित्त, शूल, हृद्रोग, वमन और आमवातका नाश होता है।

(मात्रा—६ माशे। अनुपान—दूध।)

शुण्ठीखण्डः (२)

(व. से, ; वृ. नि. र.। आमवाता. ; वृ. यो. त.। त. ९३.)

प्र. सं. ३४६६ नागराद्योवलेहः देखिये।

शुण्ठीखण्डः (३)

रस प्रकरणमें देखिये.

(७३५४) **भृङ्ग्यादिलेहः (१)**

(ग. नि.। बालरो. ; वृ. मा. ; च. द.)

शृङ्गीं सकृष्णातिविषां[1] विचूर्ण्य
लेहं विदध्यान्मधुना शिशूनाम्।
कासज्वरच्छर्दिभिरर्दितानां
समाक्षिकां चातिविषामथैकाम्॥

१ समुस्तातिविषामिति पाठान्तरम्

काकड़ासिंगी, पीपल और अतीस समान भाग ले कर चूर्ण बनाकर शहदमें मिला लें।

इसे चटानेसे बालकोंके ज्वर, कास, और वमनका नाश होता है।

केवल अतीसका चूर्ण शहदमें मिलाकर चटानेसे भी बच्चोंके ज्वर, कास और वमनका नाश हो जाता है।

(७३५५) **भृङ्ग्यादिलेहः (२)**

(वृ. नि. र.। बाला.)

एका शृङ्गी निहन्त्याशु मूलकस्य फलान्विता।
घृतेन मधुना लीढा कासं बालस्य दुस्तरम्॥

काकड़ासिंगी और मूलीके फल (सांगरी) के चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंकी दुस्तर कास नष्ट हो जाती है।

श्रीसिद्धमोदकः

(भै. र.। रसायना.)

मिश्र प्रकरणमें देखिये।

इति शकाराद्यवलेहप्रकरणम्

अथ शकारादिघृतप्रकरणम्

(७३५६) **शठ्याद्यं घृतम्**

(ग. नि.। घृता. १)

शठिर्वचाऽभया कुष्ठं पिप्पली बिल्वशुण्ठिका।
पलांशं सैन्धवं चव्यं तेजोवत्यथ पुष्करम्॥
सौवर्चलं तामलकीं भूतीकं चाक्षकसम्मितम्।
हिङ्ग्वर्धकर्षकोपेतं घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥
चतुर्गुणं जलं चात्र दत्त्वा मृद्वग्निना पचेत्।
ग्रहण्यर्शो हितं कासहिक्कोरःपार्श्वशूलनुत्॥
श्वासान् सन्धिगतांश्चान्यान् हन्याद्वातकफामयान्॥

कल्क—कचूर, बच, हर्र, कूठ, पीपल, बेलकी छाल, और सोंठ ५-५ तोले तथा सेंधा-

नमक, चव, मालकंगनी, पोखरमूल, संचल (काला नमक), भुई आमला और अजवायन १।-१। तोला एवं हींग ७॥ माशे ले कर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे संग्रहणी, अर्श, कास, हिक्का, उरःशूल, पार्श्वशूल, श्वास और सन्धिगत वात-कफज रोग नष्ट होते है।

(मात्रा—१ तोला।)

(७३५७) **शङ्खपुष्प्याद्यं घृतम्**

(ग. नि. । उन्मादा. २; वृ. नि. र. । उन्मादा)

शङ्खपुष्पीवचाकुष्ठैः सिद्धं ब्राह्मीरसे घृतम् ।
पुराणं हन्त्यपस्मारमुन्मादं च विशेषतः॥

कल्क—शंखपुष्पी, बच, और कूठ ५-५ तोले ले कर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

१॥ सेर पुराने घीमें यह कल्क और ६ सेर ब्राह्मीका रस मिला कर पकावें। जब रस जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत अपस्मार और विशेषतः उन्मादको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ तोला। दूधमें डालकर पियें।)

(७३५८) **शतपुष्पाद्यं घृतम्**

(भै. र. । वृद्धय. ; र. र. ; व. से.)

शतपुष्पामृता दारु चन्दनं रजनीद्वयम् ।
जीरके द्वे वचा नागत्रिफलागुग्गुलुत्वचम् ॥
मांसी सकुष्ठपत्रैला रास्नाभृङ्गी च चित्रकम् ।
क्रिमिघ्नमश्वगन्धा च शैलेयं कटुरोहिणी ॥
सैन्धवं तगरं चैव कुटजातिविषैः समैः ।
एतैश्च कार्षिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
वृषमुण्डितिकैरण्डनिम्बपत्रभवो रसः ।
कण्टकार्यास्तथा प्रस्थं क्षीरप्रस्थं विनिक्षिपेत् ॥
सिद्धमेतद् घृतं पीतमन्त्रवृद्धिं व्यपोहति ।
वातवृद्धिं पित्तवृद्धिं मेदोवृद्धिमथापि वा ॥
मूत्रवृद्धिं श्लीपदश्च यकृत्प्लीहानमेव च ।
शतपुष्पाद्यमेतद्धि घृतं हन्ति न संशयः ॥

कल्क—सोया, गिलोय, देवदारु, लाल चन्दन, हल्दी, दारु हल्दी, सफेद जीरा, काला जीरा, बच, नागकेसर, हर्र, बहेड़ा, आमला, गूगल, दालचीनी, जटामांसी, कूट, तेजपात, इलायची, रास्ना, काकड़ासिंगी, चीता, बायबिड़ंग, असगन्ध, भूरछरीला, कुटकी, सेंधा नमक, तगर, कुड़ेकी छाल और अतीस १।-१। तोला ले कर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

द्रव पदार्थ—बासेका रस २ सेर, मुण्डीका रस २ सेर, अरण्डकी जड़का क्वाथ २ सेर, नीमके पत्तोंका रस २ सेर, छोटी कटेलीका रस या क्वाथ २ सेर, गोदुग्ध २ सेर।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला-कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब द्रव पदार्थ जल जाएं तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे अन्त्र वृद्धि, वात वृद्धि, पित्त वृद्धि, मेद वृद्धि, मूत्र वृद्धि, श्लीपद, प्लीहा और यकृत् वृद्धिका नाश होता है।

(७३५९) शतावरीगुडूच्यादिघृतम्

(र. र. । वातरक्त.)

शतावरी रसे कल्के गुडूच्याः क्वाथकल्कयोः ।
तुल्यं क्षीरं घृतं सिद्धं वातासृक्कुष्ठजित्परम् ॥

शतावरीका रस ८ सेर, शतावरका कल्क २० तोले तथा गोदुग्ध २ सेर और गोघृत २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे वातरक्त और कुष्ठका नाश होता है।

उपरोक्त विधिसे ही गिलोयके क्वाथ और कल्क तथा दूधके साथ सिद्ध घृतसे भी वातरक्त और कुष्ठका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ तोला।)

(७३६०) शतावरीघृतम् (१)

(ग. नि. । घृता. १)

शतावरीमूलशतं द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत् ।
अष्टभागावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
जीवनीयानि सर्वाणि रास्ना गोक्षुरकं तथा ।
शतपुष्पा वचा कुष्ठं सरलं सपुनर्नवम् ॥
चन्दनं तगरं मांसी पद्मकं रक्तचन्दनम् ।
सुरसं नागरं कृष्णा विडं नागरमुत्पलम् ॥
एभिरक्षसमैर्भागैः क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ।
बृंहणं वातपित्तघ्नं क्षतशोषज्वरापहम् ॥
पङ्गूनां पृष्ठसर्पिणामर्दितानां च शस्यते ।
पुंस्त्वोपघातिनां नृणां वन्ध्यानां चैव योजितम् ॥
बलवर्णकरं ह्येतदलक्ष्मीघ्नं प्रजाकरम् ।
शतावरीघृतमिदमश्विभ्यां परिकीर्तितम् ॥

क्वाथ—६। सेर शतावरको ६४ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—जीवनीय गणकी प्रत्येक औषध, रास्ना, गोखरु, सोया, बच, कूठ, सरलकाष्ठ (चीर), पुनर्नवा, सफेद चन्दन, तगर, जटामांसी, पद्माक, लाल चन्दन, तुलसी, सोंठ, पीपल, बायबिडंग, सोंठ और नीलोत्पल १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा ८ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृत को छान लें।

यह घृत वृष्य है और वात, पित्त, क्षत, शोष, और ज्वर को नष्ट करता है। यह घृत पङ्गुता, अर्दित, नपुंस्कता और बंध्यत्वमें भी उपयोगी है तथा बल वर्ण और प्रजा (सन्तान) की वृद्धि करता है।

(**मात्रा**—१ तोला।

अनुपान—दूध।)

नोट—जीवनीय गण जकारादि कषाय प्रकरणमें देखिये।

(७३६१) शतावरीघृतम् (२)

(वृ. मा. ; व. से. ; च. द. । स्त्रीरोगा.)

शतावरीरसप्रस्थं क्षोदयित्वाऽवपीडयेत् ।
घृतप्रस्थसमायुक्तं क्षीरद्विगुणितं भिषक् ॥
अतः कल्कानिमान्दद्यात्स्थूलोदुम्बरसम्मितान् ।
जीवनीयानि यान्यष्टौ यष्टीचन्दनपद्मकैः ॥

श्वदंष्ट्रा चात्मगुप्ता च वला नागवला तथा।
शालिपर्णी पृष्ठपर्णी विदारी सारिवाद्वयम् ॥
शर्करा च समा देया काश्मर्याश्च फलानि च।
सम्यक्सिद्धं च विज्ञाय तद्धृतं चावचारयेत् ॥
रक्तपित्तविकारेषु वातपित्तकृतेषु च।
वातरक्तं क्षयं श्वासं हिक्कां कासं च दुस्तरम् ॥
अङ्गदाहं शिरोदाहं रक्तपित्तसमुद्भवम्।
असृग्दरं सर्वभवं मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥
एतान्रोगान् शमयति भास्करस्तिमिरं यथा ॥

कल्क—जीवनीय गणकी ओषधियां (देखो जकारादि कषाय प्रकरणमें), मुलैठी, सफेदचन्दन, पद्माक, गोखरु, कौंचके बीज, खरैटी, नागबला (गंगेरन), शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, विदारीकन्द, दो प्रकारकी सारिवा, खांड और खम्भारीके फल; प्रत्येक ओषधि बड़े गूलर के समान (१।-१। तोला) लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क, २ सेर शतावरका रस और ४ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृत को छान लें।

यह घृत रक्तपित्त, वात पित्त विकार, वातरक्त,क्षय,श्वास, हिक्का,कास,रक्तपित्त जनित अंगदाह, शिरोदाह, सर्व दोषज रक्तप्रदर और भयंकर मूत्र कृच्छ्रको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ तोला।)

(७३६२) शतावरीघृतम् (३)

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ३०; च. द. ; वा. भ. उ. अ. ३४ । गुह्यरो.)

शतावरी मूल तुलाश्चतस्रः संप्रपीडयेत्।
रसेन क्षीरतुल्येन पचेत्तेन घृताढकम् ॥
जीवनीयैः शतावर्या मृद्वीकाभिः परूषकैः।
पियालैश्चाक्षकैः पिष्टैर्द्वियष्टीमधुकैः पचेत् ॥
सिद्धे शीते च मधुनः पिप्पल्याश्च पलाष्टकम्।
सिता दशपलोन्मिश्रा लिह्यात्पाणितलं ततः ॥
योन्यसृक्शुक्रदोषघ्नं वृष्यं पुंसवनं च तत्।
क्षतं क्षयं रक्तपित्तं कासं श्वासं हलीमकम् ॥
कामलां वातरक्तं च विसर्पं हृच्छिरोग्रहम्।
उन्मादायामसन्यासं वातपित्तात्मकं जयेत् ॥

२५ सेर शतावरी मूलको कूटकर रस निकालें और फिर उसमें उसके बराबर दूध तथा ८ सेर घी और निम्न लिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी शुष्क हो जाय तो घीको छान लें।

कल्क—जीवनीय गण (देखो जकारादि-कषाय प्रकरणमें) शतावर, मुनक्का, फालसा, पियाल (चिरौंजीका फल), और दो प्रकारकी मुलैठी १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

जब घृत ठण्डा हो जाय तो उसमें ४०-४० तोले शहद और पीपलका चूर्ण तथा ५० तोले मिश्री मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१। तोला।

यह घृत रक्त प्रदर और शुक्रदोष नाशक, वृष्य, तथा क्षत, क्षय, रक्तपित्त, कास, श्वास, हलीमक, कामला, वातरक्त, विसर्प, हृद्ग्रह, शिरोग्रह, उन्माद, आयाम और वातपित्तज सन्यासको नष्ट करने वाला है।

(७३६३) **शतावरीघृतम्** (४)

(व. से. । मूत्रकृच्छ्रा. ; र. र. ; ग. नि. । मूत्रकृच्छ्रा. २७)

शतावरीकासकुशश्वदंष्ट्रा
विदारिकेक्ष्वामलकेषु सिद्धम् ।
सर्पिः पयो वा सितया विमिश्रं
कृच्छ्रेषु पित्तप्रभवेषु योज्यम् ॥

शतावर, कासकी जड़, कुशकी जड़, गोखरु-की जड़, विदारीकन्द, ईखकी जड़ और आमला; इनके कल्क और क्वाथसे घृत सिद्ध करें।

इसे दूधमें डालकर या मिश्री मिलाकर सेवन करने से पित्तज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(**मात्रा**—१ तोला ।)

(**कल्कार्थ** सब ओषधियां समान भाग मिश्रित १० तोले ।

क्वाथार्थ—सब ओषधियां समान भाग मिलित २ सेर, पाकार्थ जल १६ सेर शेष क्वाथ ४ सेर । घी १ सेर ।)

(७३६४) **शतावरीघृतम्** (५)

(यो. र. । पानात्यय. ; वृ. नि. र. । पानात्यय.)

शतावरीरसक्षीरयष्टीकल्कैः शृतं घृतम् ।
पुनर्नवाक्वाथयुतं पानात्ययमपोहति ॥

घी २ सेर, शतावरका रस २ सेर, दूध २ सेर, पुनर्नवा का क्वाथ २ सेर और मुलैठीका कल्क २० तोले । सबको एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत पानात्यय को नष्ट करता है।

(७३६५) **शतावरीघृतम्** (६)

(भै. र. । वातरक्ता. ; वृ. मा. ; च. द. ; ग. नि. वातरक्ता. २०)

शतावरीकल्कगर्भं रसे तस्याश्चतुर्गुणे ।
क्षीरतुल्यं घृतं पक्वं वातशोणितनाशनम् ॥

शतावरका कल्क (पिट्ठी) १० तोले, घी १ सेर, शतावरका रस ४ सेर, दूध १ सेर । सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें ।

यह घृत वातरक्तको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ से २ तोले तक ।)

(७३६६) **शतावरीघृतम्** (७)

(व. से. । वाजी. ; वृ. यो. त. । त. १४७; र. र.)

घृतं शतावरीगर्भं क्षीरे दशगुणे शृतम् ।
रेतः शुद्धिकरं तच्च शस्तं चाप्यार्तवार्तिषु ॥

घी १ सेर, शतावरका कल्क १० तोले और दूध १० सेर । सबको एकत्र मिलाकर दूध जलने तक पकावें।

यह घृत शुक्रशोधक और आर्तवदोष नाशक है।

(**मात्रा**—२ तोले)

(७३६७) **शतावरीघृतम्** (८)

(वृ. मा. । वाजीकरणा. ; व. से. ; च. द. ; यो. र.)

घृतं शतावरीगर्भं क्षीरे दशगुणे पचेत् ।
शर्करापिप्पलीक्षौद्रयुक्तं तद्वृष्यमुच्यते ॥

१ सेर घीमें १० तोले शतावरका रस और १० सेर दूध मिलाकर पकावें । जब दूध जल जाय

तो घीको छान लें । एवं उसके ठण्डा होने पर उसमें (७-७ तोले) खांड, पीपल का चूर्ण और शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

यह घृत वृष्य है ।

(७३६८) **शतावरीघृतम्** (९)

(यो. र. । मूत्रकृच्छ्रा. ; वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

घृतप्रस्थं शतावर्या रसस्यार्धाढकं पचेत् ।
अजाक्षीरेण संयुक्तं चतुष्प्रस्थान्वितेन तु ॥
द्वि गोक्षुरामृतानन्ता काशकण्टकिनी रसान् ।
कुडवार्धं पृथग्दत्त्वा पिष्टैर्यष्टिकटुत्रयम् ॥
श्वदंष्ट्राफलिनी दुग्धाशिलाजत्वश्मभेदकैः ।
त्रिसुगन्धान्वितैरर्धपलांशैः सघृतं पुनः ॥
शर्करा द्विपलोपेतं क्षौद्रपादसमन्वितम् ।
हन्ति कृच्छ्राणि सर्वाणि मूत्रदोषाश्मशर्कराः ॥
सर्वकृच्छ्राणि हन्त्याशु एतच्छतावरीघृतम् ॥

घी २ सेर, शतावरका रस ४ सेर, बकरीका दूध ८ सेर, छोटे और बड़े गोखरुका रस २०-२० तोले, तथा गिलोय, अनन्तमूल, कासकी जड़ और कटेलीका रस २०-२० तोले एवं निम्न लिखित कल्क एकत्र मिलाकर पकावें जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

कल्क—मुलैठी, सोंठ, मिर्च, पीपल, गोखरु, मेंहदी, क्षीरकाकोली, शिलाजीत, पाषाणभेद, दालचीनी, छोटी इलायची और तेजपात २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पीस लें ।

जब घी ठण्डा हो जाय तो उसमें १० तोले खांड और आधा सेर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह घृत समस्त प्रकारके मूत्रकृच्छ्र, मूत्रदोष शर्करा और अश्मरि को नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—१ से २ तोले तक ।)

(७३६९) **शतावरीघृतम्** (१०)

(वृ. यो. त. । त. १२२; भै. र. । अम्लपित्ता.; वृ. मा.; च. द.; व. से.; यो. र.; वृ. नि. र. । यो. त. । त. ६५)

शतावरीमूलकल्कं घृतप्रस्थं पयः समम् ।
पचेन्मृदग्निना सम्यक् क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥
नाशयेदम्लपित्तञ्च वातपित्तोद्भवान् गदान् ।
रक्तपित्तं तृषां मूर्छां श्वासं सन्तापमेव च ॥

शतावरकी जड़ १० तोले, घी १ सेर, पानी १ सेर और दूध ४ सेर ले कर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें ।

इसे सेवन करनेसे अम्लपित्त, वातपित्तज रोग, रक्तपित्त, तृषा, मूर्च्छा, श्वास और सन्तापका नाश होता है

(**मात्रा**—१ से २ तोले तक ।)

(७३७०) **शतावरीघृतम्** (११)

(व. से. । ग्रहण्य.; वृ. नि. र.)

शतावरीचन्दनपद्मकोत्पलं
प्रियङ्गु पाठा मगधास्थिराभिः ।
बिल्वाजमोदातिविषासमङ्गा
जीवन्तीवह्नीन्द्रयवैः सुपिष्टैः ॥
घृतं कषाये तु कलिङ्गकानां
पक्वं निहन्याद्ग्रहणीं त्रिदोषाम् ।
पित्तातिसारं रुधिरप्रवाहं
तथार्शसो दोषसमूहबन्धम् ॥

कल्क—शतावर, सफेद चन्दन, पद्माक, नीलोत्पल, फूलप्रियंगु, पाठा, पीपल, शालपर्णी, बेलकी छाल, अजमोद, अतीस, मजीठ, जीवन्ती, चीता और इन्द्रजौ २-२ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—४८ सेर इन्द्रजौको ४ सेर पानीमें पकावें और १२ सेर शेष रहने पर छान लें।

३ सेर घी में उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पानी जलने तक पकावें।

इसके सेवनसे त्रिदोषज संग्रहणी, पित्तातिसार, रुधिरस्राव और अर्शका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ से २ तोले तक।)

(७३७१) शतावरीघृतम् (१२) (लघु)

(वृ. यो. त. । त. ७५; वृ. मा. । रक्तपित्ता.; च. द.; यो. र. । रक्तपित्ता.)

शतावरीदाडिमतित्तिडीकं
काकोलिमेदे मधुकं विदारीम् ।
पिष्ट्वा च मूलं फलपूरकस्य
घृतं पचेत्क्षीरचतुर्गुणं च ॥
कासज्वरानाहविबन्धशूलं
तद्रक्तपित्तं च घृतं निहन्ति ॥

कल्क—शतावर, अनारदाना, तिन्तड़ीक, काकोली, मेदा, मुलैठी, विदारीकन्द, और बिजौरेकी जड़ १।-१। तोला लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

१ सेर घीमें यह कल्क और ४ सेर दूध मिलाकर दूध जलने तक पकावें।

यह घृत कास, ज्वर, आनाह, विबन्ध, शूल और रक्तपित्तको नष्ट करता है।

(७३७२) शतावरीघृतम् (१३) (बृहद्)

(भै. र. । वाजीकरणा.; वृ. यो. त. । त. ७५; वृ. मा. । रक्तपित्ता.; र. र. । रक्तपित्ता.)

शतावर्यास्तु मूलानां रसप्रस्थद्वयं मतम् ।
तत्समश्च भवेत्क्षीरं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा तथैव च ।
काकोली क्षीरकाकोली मृद्वीका मधुकं तथा ॥
मुद्गपर्णी माषपर्णी विदारी रक्तचन्दनम् ।
शर्करामधुसंयुक्तं सिद्धं विस्रावयेद् भिषक् ॥
रक्तपित्तविकारेषु वातरक्तगदेषु च ।
क्षीणशुक्रेषु दातव्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥
अङ्गदाहं शिरोदाहं ज्वरं पित्तसमुद्भवम् ।
योनिशूलश्च दाहश्च मूत्रकृच्छ्रश्च पैत्तिकम् ॥
एतान् रोगान् निहन्त्याशु छिन्नाभ्राणीव मारुतः ।
शतावरीसर्पिरिदं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥
स्नेहपादः स्मृतः कल्कः कल्कवन्मधुशर्करे ।
इति वाक्यबलात् स्नेहे प्रक्षेप्यं पादिकं भवेत् ॥

कल्क—जीवक, ऋषभक, मेदा, महा मेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुनक्का, मुलैठी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, विदारीकन्द और लालचन्दन, २०-२० माशे लेकर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क, ४ सेर शतावरका रस और ४ सेर दूध मिलाकर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें। और उसमें १०-१० तोला खांड और शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत रक्तपित्त, वातरक्त, शुक्रक्षीणता, अङ्गदाह, शिरोदाह, पित्तज ज्वर, योनिशूल, योनिदाह और पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रको नष्ट करता है। यह उत्तम वाजीकरण है। बल, वर्ण और अग्निको बढ़ाता है।

(मात्रा—१ तोला)

(७३७३) शतावर्यादिघृतम्

(भा. प्र. । रक्तपित्ता.)

शतावरीमूलकल्कं कल्कात्क्षीरं चतुर्गुणम् ।
क्षीरतुल्यं घृतं गव्यं सितया कल्कतुल्यया ॥
घृतशेषं पचेत्तत्तु पलार्द्धं लेहयेत्सदा ।
रक्तपित्तं ह्यम्लपित्तं क्षयं श्वासञ्च नाशयेत् ॥

शतावरका कल्क २० तोले, दूध २ सेर गायका घी २ सेर और मिश्री २० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें।

यह घृत रक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षय और श्वासको नष्ट करता है।

(मात्रा—२॥ तोले ।)

(मिश्री घी तैयार होने पर मिलाना उत्तम है।)

(७३७४) शतावर्यादियमकम्

(वा. भ. । उ. अ. २४ शिरो.)

वरीजीवन्तिनिर्य्यासपयोभिर्यमकं पचेत् ।
जीवनीयैश्च तन्नस्यं सर्वजत्रूर्ध्वरोगजित् ॥

शतावरका रस और जीवन्तीका रस तथा गोदुग्ध ४-४ सेर, घी और तिलका तेल १॥-१॥ सेर एवं जीवनीय गणका कल्क ३० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो स्नेहको छान लें।

इसकी नस्यसे समस्त ऊर्ध्वजत्रुगत (गलेसे ऊपरके) रोग नष्ट होते हैं।

(जीवनीय गण जकारादि कषाय प्रकरणमें देखिये।)

(७३७५) शरादिपञ्चमूलघृतम्

(र. र.; व. से. । अश्मर्य; ग. नि. । अश्मर्य. २९; वृ. मा.; च. द. । अश्मर्य ३३; भा. प्र. म. खं. २ । अश्मर्य.)

शरादि पञ्चमूल्या वा कषायेण पचेद्घृतम् ।
प्रस्थं गोक्षुरकल्केन सिद्धमद्यात्सशर्करम् ॥
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नं रेतोमार्गरुजापहम् ॥

शरादिपञ्चमूल (शालीधानकी जड़, कास, शर, दाभ और ईखकी जड़) का क्वाथ ८ सेर, गोखरुका कल्क २० तोले और गोघृत २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसमें खांड मिलाकर सेवन करनेसे अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र और शुक्रमार्गकी पीडा नष्ट होती है।

(मात्रा— २ तोले ।)

(७३७६) शाल्मलीघृतम् (१)

(भै. र. । प्रमेहा.)

शाल्मलीद्रवसंयुक्तं सर्पिश्छागीपयोऽन्वितम् ।
अश्वगन्धां वरीं रास्नां मूशलीं विश्वभेषजम् ॥
अनन्तां मधुकं द्राक्षां दत्त्वा च पलमानतः ।
पचेन्मन्दाग्निना वैद्यः पात्रे मृत्परिनिर्मिते ॥

प्रमेहान् निखिलान् हन्ति शुक्रमेहं विशेषतः ।
क्लैब्यं धातुक्षयं शोषं कासश्चैतद्वरं घृतम् ॥

कल्क—असगन्ध, शतावर, रास्ना, मूसली, सोंठ, अनन्तमूल, मुलैठी और मुनक्का ५-५ तोले लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें ।

४ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर सेंभलकी छालका रस तथा ८ सेर बकरीका दूध मिलाकर मिट्टीके पात्रमें मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे समस्त प्रमेहोंका और विशेषतः शुक्रमेहका नाश होता है । यह क्लीबता, धातुक्षय, शोष और कासको भी नष्ट करता है ।

(मात्रा—२ तोले ।)

(७३७७) शाल्मलीघृतम् (२)

(व. से. । स्त्री.; यो. र. । स्त्री.; वृ. यो. त. । त. १३४)

शाल्मलीपुष्पनिर्यासः पृश्निपर्णी तथैव च ।
काश्मर्यं चन्दनश्चैषां कल्केन स्वरसेन च ॥
एभिः पचेद् घृतप्रस्थमवतार्य्य सुशीतलम् ।
पिबेत्सर्पिरिदं नारी सर्वप्रदरशान्तये ॥

सेंभलके फूलोंकासार, पृष्ठपर्णी, खम्भारीके फल और सफेद चन्दन; इनके कल्क और रस (क्वाथ) के साथ यथाविधि सिद्धघृत समस्त प्रकारके प्रदरोंको नष्ट करता है ।

कल्कार्थ—प्रत्येक ओषधि २॥ तोला ।

क्वाथार्थ—प्रत्येक ओषधि आधासेर, पाकार्थ जल १६ सेर, शेष क्वाथ ४ सेर । घी १ सेर ।)

(७३७८) शिखरीघृतम्

(भै. र. । विषा.)

शिखरिस्वरसेनैव कल्कान् दत्त्वा च दाडिमम् ।
कुष्ठमेलाद्वयं शृङ्गीं शिरीषममृतं वचाम् ॥
परशू पारिभद्रञ्च चन्दनं तगरं मुराम् ।
पचेत्सर्पिस्त्वसलिलं मन्दमन्देन वह्निना ॥
घृतमेतन्निहन्त्याशु निखिलान् विषजान् गदान् ।
सन्निपातज्वरं घोरं ज्वरांश्च विषमांस्तथा ॥

कल्क---अनारकी छाल, कूठ, छोटी इलायची, बड़ी इलायची, कांकड़ासिंगी, सिरसकी छाल, बछनाग, बच, परशू (कुदालिया, कुड़ालिया), फरहदकी छाल, सफेद चन्दन, तगर और मुरामांसी समान भाग मिश्रित २० तोले ।

२ सेर घीमें ८ सेर अपामार्ग (चिरचिटे) का क्वाथ और यह कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें ।

यह घृत समस्त विषजन्य रोगोंको नष्ट करता है तथा सन्निपात और विषमज्वरमें भी उपयोगी है ।

(७३७९) शीतकल्याणकं घृतम्

(व. से.; यो. र. । स्त्री रोगा.; भै. र. । स्त्री.)

कुमुदं पद्मकोशीरं गोधूमो रक्तशालयः ।
मुद्गपर्णी पयस्या च काश्मरी मधुयष्टिका ॥
बलातिबलयोर्मूलमुत्पलं तालमस्तकम् ।
विदारी शतपुष्पी च शालपर्णी सजीवका ॥
त्रिफला त्रापुसं बीजं प्रत्यग्रं कदलीफलम् ।
एषामर्धपलान्भागान् गव्यक्षीरं चतुर्गुणम् ॥

पानीयं द्विगुणं दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
प्रदरे रक्तगुल्मे च रक्तपित्ते हलीमके ॥
अरोचके ज्वरेऽजीर्णे पाण्डुरोगे मदे भ्रमे ।
तरुणी स्वल्पपुष्पा वा या च गर्भं न विन्दति ॥
अहन्यहनि च स्त्रीणां भवति प्रीतिवर्धनम् ।
शीतकल्याणकं नाम परमुक्तं रसायनम् ॥

कल्क—लाल कमल, पद्माक, खस, गेहूं, लाल चावल, मुद्गपर्णी, क्षीरकाकोली, खम्भारीकी छाल, मुलैठी, खरैटीकी जड़, कंघी (अतिबला)की जड़, नीलोत्पल, तालफल, विदारीकन्द, सोया, शालपर्णी, जीवक, हर्र, बहेड़ा, आमला, खीरेके बीज और केलेकी कली २॥-२॥ तोले लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें ।

२ सेर घीमें यह कल्क, ८ सेर गायका दूध और ४ सेर पानी मिलाकर पकावें और पाक सिद्ध होने पर छान लें ।

इसके सेवनसे प्रदर, रक्तगुल्म, रक्तपित, हलीमक, अरुची, ज्वर, अजीर्ण, पाण्डु, मद, भ्रम, ऋतुस्राव कम होना और गर्भ न रहना आदि रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(७३८०) शुङ्गाद्यघृतम्

(व. से. । स्वरभे.)

शुङ्गांस्त्वचं क्षीरवतां द्रुमाणां
सङ्कुट्य दुग्धे विपचेत्तु तेन ।
कल्केन यष्टी मधुकस्य सर्पिः
सिद्धं पिबेत्तन्मधुशर्करात्तम् ॥

क्षीरीवृक्षों (पीपलवृक्ष, गूलर, बड़ आदि) की कोंपलें और छाल और मुलैठीके कल्क तथा दूधके साथ सिद्ध घृत स्वरभंगको नष्ट करता है ।

(७३८१) शुण्ठीघृतम् (१)

(यो. र. । ग्रह.)

घृतं नागरकल्केन सिद्धं वातानुलोमनम् ।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम् ॥

सोंठके कल्कसे पकाया हुवा घृत वातानुलोमक, और संग्रहणी, पाण्डु, तिल्ली, खांसी, तथा ज्वर नाशक है ।

(कल्क १० तोले, घी १ सेर, पानी ४ सेर ।)

(७३८२) शुण्ठीघृतम् (२)

(यो. र. । अर्शो.)

त्रिंशत्पलानि शुण्ठीनां जलद्रोणे विपाचयेत् ।
तेन पादावशेषेण कल्के तासां पचेद्घृतम् ॥
दुर्नामश्वासकासघ्नं प्लीहपाण्ड्वामयापहम् ।
विषमज्वरशान्त्यर्थं तृष्णारोचकनाशनम् ॥
शुण्ठीघृतमिदं ख्यातं कृष्णात्रेयेण पूजितम् ।
नागरेण जले पक्वं वस्तिकुक्षिगदापहम् ॥

१५० तोले सोंठको कूटकर ३२ सेर पानी में पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें २ सेर घी और २० तोले सोंठका कल्क मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे अर्श, श्वास, कास, प्लीहा, पाण्डु, विषम ज्वर, तृष्णा और अरुचिका नाश होता है ।

सोंठके कल्क और चार गुने पानीके साथ सिद्धघृत बस्ति और कुक्षिके रोगोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा--१ तोला ।)

(७३८३) शुण्ठीधान्यकघृतम्

(भा. प्र. म. खं. २ । आमवाता.)

शुण्ठीनां षट्पलं पिष्टं धान्यकं द्विपलं तथा ।
चतुर्गुणं जलं दत्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
वातश्लेष्मामयान्हन्यादग्निवृद्धिकरं परम् ।
दुर्नामश्वासकासघ्नं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥

कल्क—३० तोले सोंठ और १० तोले धनियेको पानीके साथ पीस लें ।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें ।

यह घृत वात कफज रोगोंको नष्ट करता है तथा यह अग्निवर्द्धक और अर्श, श्वास एवं कास नाशक और बलवर्ण वर्द्धक है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(७३८४) शुष्कमूलाद्यं घृतम्

(भै. र. ; ग. नि. । उदा. १४; च. द. ; भा. प्र. म. खं. २ । उदावर्ता.)

मूलकं शुष्कमार्द्रञ्च वर्षाभूमूलपञ्चकम् ।
आरेवतफलञ्चापि पिष्ट्वा तेन पचेद् घृतम् ॥
तत्पीतमात्रं शमयेदुदावर्तमसंशयम् ॥

कल्क—सूखी मूली, अदरक, पुनर्नवा, पंचमूल (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु) और अमलतासके फल समान भाग मिश्रित १० तोले लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें ।

१ सेर घी में यह कल्क और ४ सेर पानी मिलाकर पानी जलने तक पकावें ।

इसे पीनेसे उदावर्त अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(७३८५) शूलिघृतम्

(वृ. यो. त. । त. ९४ ; व. से. । शूला.)

घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलुङ्ग रसो दधि ।
शुष्कमूलककोलाम्लकषायो दाडिमाद्रसः ॥
विडङ्गं लवणक्षारं पञ्चकोलयवानिभिः ।
पाठामूलककल्केन सिद्धं शूलिघृतं मतम् ॥
हृत्पार्श्वशूलं वै श्वासकासहिक्कास्तथैव च ।
ब्रध्नगुल्मप्रमेहार्शोवातव्याधींश्च नाशयेत् ॥

कल्क—बायबिडंग, सेंधा नमक, जवाखार, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, अजवायन, और पाठाकी जड़ १-१ तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

द्रव पदार्थ-बिजौरेका रस ४ सेर, दही १ सेर, सूखी मूलीका क्वाथ १ सेर, खट्टे बेरका क्वाथ १ सेर और अनारका रस १ सेर ।

१ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और द्रव पदार्थ मिलाकर पकावें ।

इसके सेवनसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, श्वास, कास, हिक्का, ब्रध्न, गुल्म, प्रमेह, अर्श और वातव्याधिका नाश होता है ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(७३८६) भृङ्गवेराद्यं घृतम् (१)

(व. से. । आमवाता.)

भृङ्गवेरं यवक्षारं पिप्पलीमूलपिप्पली ।
सचव्यं चित्रकं हिङ्गु माणिमन्थं तथैव च ॥
कल्कं कृत्वा तु मतिमान्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
आरनालचतुष्कं दत्त्वा तत्सर्विर्जठरापहम् ॥
शूलं विबन्धमानाहमामवातं कटिग्रहम् ।
नाशयेद्ग्रहणीरोगमग्निसन्दीपनं परम् ॥

कल्क—अदरक, जवाखार, पीपलामूल, पीपल, चव, चीता, हींग और सेंधानमक २॥-२॥ तोले लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर आरनाल मिलाकर पकावें।

इसके सेवनसे उदररोग, शूल, विबन्ध, आनाह, आमवात, कटिग्रह और ग्रहणी रोगका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

(७३८७) भृङ्गवेराद्यं घृतम् (२)

(भा. प्र. म. खं. २ । आमवाता.)

भृङ्गवेरयवक्षारपिप्पलीमूलपिप्पलीः ।
पिष्ट्वा विपाचयेत्सर्पिरारनालं चतुर्गुणम् ॥
शूलं विबन्धमानाहमामवातं कटिग्रहम् ।
नाशयेद् ग्रहणीदोषमग्निसन्दीपनं परम् ॥

कल्क—अदरक, जवाखार, पीपल और पीपलामूल २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

१ सेर घीमें यह कल्क और ४ सेर आरनाल मिलाकर पकावें।

यह घृत शूल, विबन्ध, आनाह, आमवात, कटि ग्रह और ग्रहणी दोषको नष्ट करता तथा अग्निकी वृद्धि करता है।

(७३८८) शृङ्ग्याद्यं घृतम्

(ग. नि. । बालरो. २१)

शृङ्गी मधुलिका भार्गी पिप्पली देवदारुभिः ।
अश्वगन्धा द्विकाकोली रास्ना सर्षभजीवकैः ॥
सूर्यपर्णी विडङ्गैश्च कल्कितैः साधितं घृतम् ।
शिशूनाङ्गसमाङ्गे तु शुष्यतां पुष्टिकृत्परम् ॥

कल्क—काकड़ासिंगी, अंगूर, भरंगी, पीपल, देवदारु, असगन्ध, काकोली, क्षीरकाकोली, रास्ना, ऋषभक, जीवक, माषपर्णी और बायविडंग समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको पानी के साथ एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पानी जलने तक पकावें।

यदि बच्चा सूखता जाता हो तो उसके शिरपर इसकी मालिश करनी चाहिये।

(७३८९) श्यामाघृतम् (१)

(व. से. । बालरो.)

श्यामाजयासतिक्तानां पुष्पाणां क्वाथसाधितम्।
यष्टीगर्भं घृतं पीत्वा कासश्वासौ जयेच्छिशुः ॥
रक्तपित्तं पिपासाञ्च मूर्छां निरवशेषतः ॥

काली निसोत, अरणी और कुटकी; इनके फूल समान भाग मिश्रित २ सेर लेकर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

१ सेर घी में यह क्वाथ और १० तोले मुलैठीका कल्क मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो घी को छान लें।

यह घृत बच्चोंकी खांसी, श्वास, रक्तपित्त, पिपासा और मूर्च्छाको नष्ट करता है।

(७३९०) श्यामाघृतम् (२)

(व. से. । रक्तपित्ता.)

श्यामाऽश्वमोरटानन्ता शर्कराभिः श्रृतं घृतम्।
सर्वदोषहरं हृद्यं नस्यं नासागतेऽसृजि ॥

कल्क—काली निसोत, असगन्ध, क्षीर-मोरटा, अनन्तमूल, और खांड २-२ तोले लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

१ सेर घीमें यह कल्क और ४ सेर पानी मिलाकर पानी जलने तक पकावें और छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे नासासे होने वाला रक्तस्राव बन्द होता है। यह घृत सर्वदोष नाशक हृद्य है।

(७३९१) श्यामाघृतम् (३)

(व. से. । व्रणा.)

श्यामात्रिभण्डीत्रिफलासु सिद्धं
हरिद्रया तिल्वकवृक्षकेण।
घृतं सदुग्धं व्रणतर्पणेन
हन्याद्गतिं कोष्ठगतापि या स्यात् ॥

कल्क—काली निसोत, हर्र, बहेड़ा, आंवला हल्दी और लोध समान भाग मिश्रित १० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

१ सेर घीमें यह कल्क और ४ सेर दूध मिला कर दूध जलने तक पकावें; और फिर छान-कर सुरक्षित रक्खें।

इसे लगानेसे कोष्ठगत नाड़ीव्रण (नासूर) तक भी नष्ट हो जाता है।

(७३९२) श्रीवासघृतम्

(व. से. । कुष्ठा.)

श्रीवासकं सर्जरसं लोध्रं कम्पिल्लकं तथा।
मनःशिला यवानी च गन्धपाषाणमेव च ॥
पलिकैश्चूर्णितैरेतैर्घृतप्रस्थं प्रयोजयेत्।
सूर्यांशुपक्वमभ्यङ्गाद् घोरां कच्छुं व्यपोहति ॥

श्रीवास (बिरोजा), राल, लोध, कमीला, मनसिल, अजवायन और गन्धक; इनका चूर्ण ५-५ तोले, घी २ सेर और पानी ८ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर धूपमें रख दें। जब पानी सूख जाय तो घीको छान लें।

इसकी मालिशसे घोर कच्छु (कुष्ठ भेद) भी नष्ट हो जाता है।

(७३९३) श्रेयस्याद्यघृतम्

(व. से. । हृद्रोगा.)

श्रेयसीशर्कराद्राक्षाजीवकर्षभकोत्पलैः ;
बलाखर्जूरकाकोलीमेदायुग्मैश्च साधितम् ॥
सक्षीरं माहिषं सर्पिः पित्तहृद्रोगनाशनम्।

कल्क—हर्र, खांड, द्राक्षा (मुनक्का), जीवक, ऋषभक, कमल, खरैटीकी जड़, खजूर, काकोली, मेदा और महामेदा समान भाग मिश्रित १० तोले ले कर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें।

१ सेर भैंसके घीमें यह कल्क और ४ सेर (भैंसका) दूध मिला कर पकावें। जब दूध जल जाए तो घृतको छान लें।

यह घृत पित्तज हृद्रोगको नष्ट करता है।

(७३९४) श्वदंष्ट्रादिघृतम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ७७; वृ. मा.; च. द. हृद्रोगा.; ग. नि.। घृता. १; र. र.; भै. र.। हृद्रोगा.)

श्वदंष्ट्रोशीरमञ्जिष्ठा बलाकाश्मर्यकत्तृणम्।
दर्भमूलं पृश्निपर्णी जीवकर्षभकौ[1] स्थिरा ॥
पालिकं साधयेत्तेषां रसे क्षीरचतुर्गुणे।
कल्कैः स्वगुप्ताजीवन्तीमेदकर्षभजीवकैः[2] ॥
शतावर्यृद्धिमृद्वीका शर्करा श्रावणी बिसैः।
प्रस्थः सिद्धो घृताद्वातपित्तनुद्ग्राही शूलहृत् ॥
मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शः कासशोषक्षयापहः।
धनुःस्त्रीमद्यभाराध्वखिन्नानां बलमांसदः ॥

गोखरु, खस, मजीठ, खरैटीकी जड़, खम्भारीकी छाल, गन्ध तृण, दाभकी जड़, पृष्ठपर्णी, जीवक, ऋषभक और शालपर्णी ५-५ तोले ले कर ८ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

२ सेर घीमें यह क्वाथ, ८ सेर दूध और निम्न लिखित कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

कल्क—कौंच, जीवन्ती, मेदा, ऋषभक, जीवक, शतावर, ऋद्धि, मुनक्का, खांड, गोरखमुण्डी और बिस (कमलकन्द-भिसण्डा) समान भाग मिश्रित १० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

यह घृत वातपित्तज रोग नाशक, ग्राही, शूलनाशक, तथा मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, अर्श, कास, शोष और क्षयको नष्ट करने वाला है।

जो लोग धनुष चलाने, स्त्री समागम करने मद्य पीने, भार उठाने या मार्ग चलनेसे शिथिल हो गये हों उनमें यह घृत बल और मांसकी वृद्धि करता है।

(७३९५) श्वदंष्ट्रादिघृतम् (२)

(यो. र.। यक्ष्मा.)

श्वदंष्ट्रां सदुरालभां चतस्रः पर्णिनीर्बलाम्।
भागान्पलोन्मितान्कृत्वा पलं पर्पटकस्य च ॥
पचेद्दशगुणे तोये दशभागावशेषिते।
रसे पूते तु द्रव्याणामेषां कल्कान्समावपेत् ॥
सटीपुष्करमूलानां पिप्पलीत्रायमाणयोः।
आमलक्याः किराताानां त्रिकस्य कटुकस्य च ॥
फलानां सारिवायाश्च सुपिष्ट्वा कर्षसम्मितान्।
तैःसाधयेद् घृतप्रस्थं क्षीरं द्विगुणितं भिषक् ॥
ज्वरं दाहं तमः श्वासं कासं पार्श्वशिरोरुजम्।
तृष्णां छर्दिमतीसारमेतत्सर्पिर्व्यपोहति ॥

क्वाथ—गोखरु, धमासा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, खरैटीकी जड़ और पित्त पापड़ा ५-५ तोले ले कर सबको २० गुने पानीमें पकावें और दसवां भाग शेष रहने पर छान लें।

---

१ पलाशर्षभकौ इति पाठभेदः।

२ जीवकके स्थान पर ज़ीरा है।

कल्क—कचूर, पोखरमूल, पीपल, त्रायमाना, आमला, चिरायता, सोंठ, मिर्च, पीपल और सारिवाके फल १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क, ४ सेर दूध और उपरोक्त काथ मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घी ज्वर, दाह, तमक श्वास, कास, पार्श्वपीड़ा, शिर पीड़ा, तृष्णा, छर्दि और अतिसारको नष्ट करता है।

इति शकारादिघृतप्रकरणम्.

अथ शकारादितैलप्रकरणम्

(७३९६) शङ्खपुष्पीतैलम्

(भै. र. । बालरो.)

शङ्खपुष्पीमहानिम्बवासानामर्जुनस्य च ।
स्वरसेनारनालेन लाक्षातोयेन मस्तुना ॥
कल्कैश्च दाडिमीदारुनिशायुगफलत्रिकैः ।
चन्दनोशीरबालैश्च श्रीखण्डमधुकाम्बुदैः ॥
श्यामाशैवालशेफालीरक्तोत्पलरसाञ्जनैः ।
गन्धद्रव्यैश्च निखिलैः पचेत् तैलं तिलोद्भवम् ॥
प्रयोगादस्य नश्यन्ति बालानामखिलागदाः ।
कान्तिर्मेधा धृतिः पुष्टिर्वर्द्धते नात्र संशयः ॥
कल्याणाय कुमाराणां कपर्दी करुणाकरः ।
ससर्जेदं शङ्खपुष्पीतैलं भुवनमङ्गलम् ॥

द्रव पदार्थ—शंखपुष्पीका रस या क्वाथ ४ सेर, बकायनकी छालका काथ ४ सेर, बासे (अडूसे) का रस ४ सेर, अर्जुनकी छालका काथ ४ सेर, आरनाल (कांजी) ४ सेर, लाखका रस ४ सेर और मस्तु (दहीसे २ गुना पानी मिला कर बनाया हुवा तक्र) ४ सेर।

कल्क—अनारका छिलका, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, लाल चन्दन, खस, सुगन्धबाला, सफेद चन्दन, मुलैठी, नागरमोथा, श्यामालता, शैवाल (सिरवाल), हारसिंगार, लाल कमल और रसौत समान भाग मिश्रित आधा सेर।

४ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और सम्पूर्ण द्रव पदार्थ मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें। और फिर गन्ध द्रव्योंके कल्क द्वारा गन्ध पाक करें। (गन्ध द्रव्य प्रयोग सं. १२४३-१२४४ में देखिये।)

इस तेलके मर्दनसे बालकोंके समस्त रोग नष्ट होते हैं। तथा यह कान्ति, मेधा, धृति और पुष्टिकी वृद्धि करता है।

(७३९७) शतकप्रसारिणीतैलम्

(व. से. । वातव्या.)

प्रसारिणीशतक्वाथे तैलप्रस्थं पयःसमम् ।
जीवकर्षभकौ मेदे काकोल्यौ कुष्ठचन्दने ॥

शताह्वां दारु मञ्जिष्ठां रास्नां पिष्ट्वा विपाचयेत्।
बस्तिपानादिभिर्युक्तमेतन्मारुतरोगनुत् ॥

२ सेर तैलमें २ सेर दूध और २०० सेर प्रसारिणीका क्वाथ तथा निम्न लिखित कल्क मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो तैलको छान लें।

कल्क—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, कूठ, सफेद चन्दन, सोया, देवदारु, मजीठ और रास्ना, समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर सबको पानीके साथ पीस लें।

इस तेलकी बस्ति लेने, इसे पीने और इसकी मालिश आदि करनेसे वातज रोग नष्ट होते हैं।

(७३९८) शतपाकबलातैलम्
(सहस्रपाकबलातैलम्)

(च. सं. । चि. अ. २९ ; भा. प्र. म. खं. २ । वातरक्ता. ; व. से. । वातरक्ता.)

बलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरसमं तथा ।
सहस्रशतपाकं वा वातासृग्वातरोगनुत् ॥
रसायनं श्रेष्ठतममिन्द्रियाणां प्रसादनम् ।
जीवनं बृंहणं स्वर्यं शुक्रासृग्दोषनाशनम् ॥

बला (खरैटी) के कल्क और क्वाथके साथ तैल सिद्ध करके छान लें।

इसी तैलको पुनः खरैटीके क्वाथ और कल्कके साथ सिद्ध करें।

इसी प्रकार सहस्र बार या १०० बार पाक करें।

यह तैल वातरक्त और वातव्याधि नाशक तथा रसायन, इन्द्रियोंको निर्मल करने वाला, जीवनशक्ति-वर्द्धक, बृंहण, स्वरके लिये हितकारी एवं शुक्र दोष और रक्तविकार नाशक है।

(७३९९) शतपाकमधुपर्णीतैलम्

(च. सं. । चि. अ. २९ ; भा. प्र. म. खं. २ । वातरक्ता. ; व. से. । राजय.)

मधुपर्ण्याः[1]पलं पिष्ट्वा तैलप्रस्थं चतुर्गुणे ।
क्षीरे साध्यं शतकृत्वस्तदेव मधुकाच्छृतैः ॥
सिद्धं देयं त्रिदोषे स्याद्वातासृक्श्वासकासनुत् ।
हृत्पाण्डुरोग वीसर्पकामलादाहनाशनम् ॥

५ तोले मधुपर्णी (गिलोय) के कल्क और ८ सेर दूधके साथ २ सेर तेल पका कर छान लें और फिर उसे पुनः इन्हीं चीजोंके साथ पकावें।

इसी प्रकार १०० बार पाक करें।

तदनन्तर उसमें मुलैठीका ८ सेर क्वाथ मिलाकर पकावें।

यह तेल त्रिदोषज वातरक्त, श्वास, कास, हृद्रोग, पाण्डु, वीसर्प, कामला और दाहको नष्ट करता है।

(७४००) शतावरीतैलम्

(शा. सं. । खं. २ अ. ९ ; वृ. नि. र. । वातव्य.)

शतावरी बलायुग्मं पर्ण्यौ गन्धर्वहस्तकः ।
अश्वगन्धाश्वदंष्ट्रा च बिल्वः काशः कुरण्टकः ॥

---

१ मधुयष्ट्याः इति पाठान्तरम्।

एतान् सार्धपलान् भागान् कल्कयेच्च विपा-
चयेत् ।
चतुर्गुणेन नीरेण पादशेषं शृतं नयेत् ॥
नियोज्य तैलप्रस्थे च क्षीरप्रस्थं विनिक्षिपेत् ।
शतावरीरसप्रस्थं जलप्रस्थं च योजयेत् ॥
शतावरी देवदारु मांसी तगरचन्दनम् ।
शतपुष्पा बला कुष्ठमेला शैलेयमुत्पलम् ॥
ऋद्धिर्मेधा च मधुकं काकोली जीवकस्तथा ।
एषां कर्षसमैः कल्कैस्तैलं गोमयवह्निना ॥
पचेत्तेनैव तैलेन स्त्रीषु नित्यं वृषायते ।
नारी च लभते पुत्रं योनिशूलश्च नश्यति ॥
अङ्गशूलं शिरःशूलं कामलां पाण्डुतां गरम् ।
गृध्रसीं प्लीहशोषांश्च मेहान् दण्डापतानकम् ॥
सदाहं वातरक्तं च वातपित्तगदार्दितम् ।
असृग्दरं तथाऽऽध्मानं रक्तपित्तं च नश्यति ॥
शतावरीतैलमिदं कृष्णात्रेणेय भाषितम् ॥

क्वाथ—शतावर, बला (खरैटी), अतिबला (कंघी), शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, अरण्डकी जड़, असगन्ध, गोखरु, बेलछाल, कासकी जड़ और कटसरैया ७॥-७॥ तोले ले कर सबको एकत्र कूटकर ८ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहनेपर छान लें ।

अन्य द्रव पदार्थ— दूध २ सेर, शतावरका रस २ सेर और पानी २ सेर ।

कल्क—शतावर, देवदारु, जटामांसी, तगर, सफेद चन्दन, सोया, खरैटीकी जड़, कूठ, इलायची, भूरि छरीला, नीलोत्पल, ऋद्धि, मेदा, मुलैठी, काकोली और जीवक १।-१। तोला ले कर कल्क बनावें ।

२ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ, द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर गायके उपलों (कण्डों) की अग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल अत्यन्त वृष्य और स्त्रियोंके लिये पुत्रदाता है; तथा योनिशूल, अंगशूल, शिरशूल, कामला, पाण्डु, गरविष, गृध्रसी, प्लीहा, शोष, प्रमेह, दण्डापतानक, दाह, वातरक्त, वातपित्तज रोग, रक्तप्रदर, आध्मान और रक्तपित्तको नष्ट करता है ।

(७४०१) शतावरीतैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

शतावरीरसप्रस्थं क्षीरप्रस्थं तथैव च ।
शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं बला ॥
चन्दनं तगरं कुष्ठमेला सांशुमती तथा ।
एतैः कर्षसमैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
कुष्ठवामनपङ्गूनां बधिरव्यङ्गकुष्ठिनाम् ।
वायुना भग्नदेहानां येऽवसीदन्ति मैथुने ॥
जराजर्जरदेहानां वर्ध्मार्तेशुक्रशोषिणाम् ।
त्वग्गताश्चापि ये वाताः सिरास्नायुगताश्च ये ॥
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु तैलं नास्त्यत्र संशयः ।
नारायणमिदं नाम्ना विष्णुना समुदाहृतम् ॥
दशाङ्गमिति विख्यातं न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥

शतावरका रस २ सेर, दूध २ सेर, तथा निम्न लिखित कल्क और २ सेर तैल एकत्र मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

कल्क—सोया, देवदारु, जटामांसी, छारछरीला, खरैंटीकी जड़, सफेद चन्दन, तगर, कूठ, इलायची और शालपर्णी १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें।

यह तैल कुष्ठ, वामनता, पङ्गुता, बधिरता, व्यंग, वायु और मैथुन शक्तिकी कमीको नष्ट करता है। यह वृद्धोंके क्षीण शरीरको पुष्ट करता है। वर्ध्म, मुखशोष, त्वग्गत वातविकार, एवं शिरा और स्नायु गत वायु इसके सेवनसे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(७४०२) शतावरीतैलम् (३)

(ग. नि. । तैला. २)

शतावर्यास्तु मूलानां रसप्रस्थं समाहरेत् ।
क्षीरद्विगुणसंयुक्तं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं वचा ।
मञ्जिष्ठा चन्दनं कुष्ठमेला चांशुमती बला ॥
तुरङ्गगन्धा काकोली मेदा रास्ना पुनर्नवा ॥
एतैरर्धपलैर्द्रव्यैः शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
अस्य तैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥
कुब्जानां वामनानां च पङ्गूनां पीठसर्पिणाम् ॥

शतावरीका रस २ सेर, दूध ४ सेर, तेल २ सेर और निम्न लिखित कल्क एकत्र मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—सोया, देवदारु, जटामांसी, छारछरीला, बच, मजीठ, सफेद चन्दन, कूठ, इलायची, शालपर्णी, खरैंटी, असगन्ध, काकोली, मेदा, रास्ना और पुनर्नवा २।-२। तोले ले कर सबको पानीके साथ पीस लें।

यह कुब्ज, वामन, पङ्गु और पीठविसर्पि, आदि व्यक्तियोंके लिये अत्युपयोगी है।

(७४०३) शतावरीतैलम् (४)

(व. से. । वातव्या.)

क्षीराढकं शतावर्या रसप्रस्थद्वयं पृथक् ।
शृङ्गवेरस्य तैलस्य प्रस्थं साधयश्च कार्षिकैः ॥
शताह्वादारुशैलेयमांसीचन्दनवालकैः ।
त्वगेलांशुमतीरास्नातगरैरण्डसैन्धवैः ॥
अश्वगन्धा समङ्गोग्रामूर्वामरिचनागरैः ।
तन्मासपीतं विधिवत्तैलं सिद्धार्थकं जयेत् ॥
कुब्जवामनपङ्गुत्ववातभग्नावकुञ्चनम् ।
सर्वाङ्गैकाङ्गरोगांश्च हनुमन्यागलामयान् ॥
वातरक्तश्च कुष्ठानि कण्डूपामाविचर्चिकाः ।
गण्डमालापचिवक्त्रपाकोदरभगन्दरान् ॥
कुष्ठव्रणान्सविषमानारम्भान्विविधाञ्ज्वरान् ।
सन्निपातांश्च शूलानि विषमूर्च्छाभ्रमामयान् ॥
वातगुल्मं वहून्मेहानन्त्रवृद्धिश्च शर्कराम् ।
कामलां पाण्डुरोगश्च शूलं नेत्रगदोद्भवम् ॥
मूढगर्भांश्च भग्नांश्च योनेर्वन्ध्यामयान्बहून् ।
वृद्धानामल्पशुक्रदक्स्मृतीनां क्षयरेतसाम् ॥
रसायनं बलारोग्यवर्ण्यग्न्यायुर्विवर्द्धनम् ॥

द्रव पदार्थ—दूध ८ सेर, शतावरीका रस ४ सेर, और अदरकका रस २ सेर।

कल्क—सोया, देवदारु, छारछरीला, जटामांसी, सफेद चन्दन, सुगन्धबाला, दालचीनी, छोटी इलायची, शालपर्णी, रास्ना, तगर, अरण्डकी जड़,

सेंधा नमक, असगन्ध, मजीठ, बच, मूर्वा, काली मिर्च और सोंठ १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल कुब्जता, वामनता, पङ्गुता, वातभग्न किसी अंगका सिकुड़ जाना, सर्वांग और एकांग वायु, ठोडीके रोग, मन्या रोग, गल रोग, वातरक्त, कुष्ट, कण्डू (खुजली), पामा, विचर्चिका, गण्डमाला, अपची, मुख पाक, उदररोग, भगन्दर, कुष्ठ, व्रण, विषमादि अनेक ज्वर, सन्निपात, शूल, विषविकार, ऊर्ध्व जत्रुगत रोग, भ्रम, वातज गुल्म, प्रमेह, अन्त्रवृद्धि, शर्करा, कामला, पाण्डु, नेत्र रोग, मूढ गर्भ, भग्न, बन्ध्यत्व, शुक्रह्रास, दृष्टिकी कमी, स्मृतिकी न्यूनता, और वीर्यक्षयादि रोगोंमें उपयोगी है तथा रसायन है और बल, वर्ण आरोग्य, आयु, अग्नि आदिकी वृद्धि करता है।

(७४०४) शतावरीतैलम् (५)

(यो. र. । वातव्या. ; वृ. यो. त. । त. ९० ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

रुग्दारुद्रविडिप्रियङ्गुतगरं त्वक्पत्रकौन्तीनखै-
र्मांसीसर्जरसाम्बुचन्दनवचाशैलेयलामज्जकैः ॥
मञ्जिष्ठासरलागुरुद्विपबलारास्नाश्वगन्धावरी-
वर्षाभूमिसिसिन्धुभिश्च सकलैरेभिः पचेत्कल्कितैः ॥
तुल्यं गोपयसा वरीरससमं तैलं विपक्वं मृदु
स्याद्वातघ्नमिदं नृणामिति वरीतैलं भिषक्पूजितम् ॥

कल्क—कूठ, देवदारु, इलायची, फूलप्रियंगु, तगर, दालचीनी, तेजपात, रेणुका, नखी, जटामांसी, राल, सुगन्धबाला, सफेद चन्दन, बच, छरीला, पीली खस, मजीठ, चीरका काष्ठ, अगर, नागकेसर, खरैटीकी जड़, रास्ना, असगन्ध, शतावर, पुनर्नवा, सौंफ और सेंधा नमक समान भाग मिश्रित आधा सेर ले कर कल्क बनावें।

४ सेर तेलमें यह कल्क, ४ सेर गोदुग्ध और ४ सेर शतावरका रस (तथा ८ सेर पानी) मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें।

यह तेल वातज रोगोंको नष्ट करता है।

शतावरी नारायणतैलम्

प्रयोग सं. ३५०४ " **नारायण तैलम्** " देखिये।

(७४०५) शतावर्यादितैलम्

(वृ. मा. । कर्णरो. ; यो. त. । त. ७० ; यो. र. ; व. से. । कर्णरो. ; वृ. यो. त. । त. १२९)

शतावरीवाजिगन्धापयस्यैरण्डबीजकैः ।
तैलं विपक्वं सक्षीरं पालीनां पुष्टिकृत्परम् ॥

कल्क—शतावर, असगन्ध, क्षीरकाकोली और अरण्डके बीज २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

१ सेर तेलमें यह कल्क और ४ सेर दूध मिला कर पकावें। जब दूध जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे कर्णपाली पुष्ट होती है।

(७४०६) **शताह्वादितैलम्** (१)

(भा. प्र. म. खं. २ । वातरक्ता. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । वातरक्ता.)

क्वाथेन शतपुष्पायाः कुष्ठस्य मधुकस्य च ।
एकैकं साधयेत्तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

१ सेर तेलमें सोयेका ४ सेर क्काथ मिलाकर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो तेलको छान लें और फिर उसमें कूठका ४ सेर क्वाथ डाल कर पकावें । जब यह क्वाथ भी जल जाय तो मुलैठीका ४ सेर क्वाथ मिला कर पकावें और इसके जल जाने पर तेलको छान लें।

यह तैल वातरक्तको नष्ट करता है ।

(७४०७) **शताह्वादितैलम्** (२)

(ग. नि. । शिरो. १ ; वृ. मा. ; वृ. नि. र. ; च. द. ; व. से.)

शताह्वैरण्डमूलोग्रावक्रव्याघ्रीफलैः शृतम् ।
तैलं नस्यान्मरुच्छ्लेष्मतिमिरोर्ध्वगदापहम् ॥

कल्क—सोया, अरण्डमूल, बच, तगर और कटैलीके फल २-२ तोला लेकर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें ।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां ३२-३२ तोले ले कर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें ।

१ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी नस्यसे वात कफज तिमिर रोग और शिर शूलादि नष्ट होता है ।

(७४०८) **शाखोटकबिल्वतैलम्**

(वृ. यो. त. । त. १०८ ; भै. र. । गलगण्डा. ; व. से. । गलगण्डा.)

गण्डमालापहं तैलं सिद्धं शाखोटकत्वचा- ।
बिल्वाश्वमारनिर्गुण्डीसाधितं चापि नावनम् ॥

कल्क—सिहोड़ेकी छाल, बेल छाल, कनेरकी छाल और मुण्डी १॥-१॥ तोले ले कर कल्क बनावें ।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां आधा आधा सेर ले कर, कूट कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी रहने पर छान लें ।

१ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी नस्य लेनेसे गण्डमाला नष्ट होती है ।

(७४०९) **शारिवाद्यं तैलम**

(र. र. । वातरक्ता.)

शारिवारिष्टकूष्माण्डपोतकीभस्मजाऽम्बुना ।
गुडूचीक्वाथदुग्धं च कर्म्मरङ्गरसेन च ॥
पचेत्तैलञ्च तिलजं दत्त्वैतानि भिषग्वरः ।
काकोल्यौ जीरकं मेदे शताह्वा क्षीरिणी युतैः॥
जिङ्गीसिक्थामृतानन्तासर्जसैन्धवचन्दनैः ।
षड्गुञ्जाधिकचतुर्माषं कर्षद्वितयसंयुतम् ॥
हन्ति वातास्रजं घोरं स्फुटितं गलितन्तथा ।

चर्मदलश्च पामानं त्वग्दोषश्च विपादिकाम् ॥
कुष्ठान्यर्शांसि वीसर्पव्रणशोथभगन्दरान् ।
न सोऽस्ति वातरक्तस्य विकारोयं न हन्ति च ॥

द्रव पदार्थ—सारिवा, नीमकी छाल, पेठा (कुम्हड़ा), और पोईका शाक; इनके क्षारका पानी ४ सेर, गिलोयका क्वाथ ४ सेर, दूध ४ सेर और कमरखका रस ४ सेर।

कल्क—काकोली, क्षीर काकोली, जीरा, मेदा, महा मेदा, सोया, गाम्भारीकी छाल, मजीठ, मोम, गिलोय, अनन्तमूल, चीर, सेंधा नमक और सफेद चन्दन; प्रत्येक २ तोले ११ माशे ६ रत्ती (लगभग ३ तोले) ले कर कल्क बनावें।

४ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर पकावें, जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल स्फुटित और गलित घोर वातरक्त, चर्मदल, पामा, त्वग्दोष, विपादिका, कुष्ठ, अर्श, वीसर्प, व्रण, शोथ और भगन्दरको नष्ट करता है।

वातरक्तका ऐसा कोई विकार नहीं जिसे यह नष्ट न करता हो।

(७४१०) शिखरीतैलम्

(वृ. मा. । नासा.; भा. प्र. । म. खं. २ नासा.; च. द. । नासा.)

गृहधूमकणादारुक्षारनक्ताह्वसैन्धवैः ।
सिद्धं शिखरिबीजैश्च तैलं नासार्शसां हितम् ॥

कल्क—घरका धुवां, पीपल, देवदारु, जवाखार, करञ्ज बीज, सेंधा नमक और चिरचिटेके बीज समान भाग मिश्रित १० तोले लेकर कल्क बनावें।

१ सेर तेलमें यह कल्क और ४ सेर पानी मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल नासार्शको नष्ट करता है।

(७४११) शिग्रुतैलम् (१)

(व. से. । वातव्या.)

शिग्रुकुष्ठशिलाऽजाजीलशुनव्योषहिङ्गुभिः ।
वत्समूत्रे शृतं तैलं नावनं स्यादपस्मृतौ ॥

कल्क—सहंजनेकी छाल, कूठ, मनसिल, जीरा, ल्हसन, सोंठ, मिर्च, पीपल, और हींग १-१ तोला ले कर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें।

७२ तोले तेलमें यह कल्क और चार गुना गायके बछड़ेका मूत्र मिला कर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे अपस्मार नष्ट होता है।

(७४१२) शिग्रुतैलम् (२)

(व. से. । नासा.)

शिग्रुकान्तावचाव्योषद्राक्षासुरससैन्धवैः ।
नस्यदानाज्जयेत्सिद्धं तैलं नासागदं नृणाम् ॥

सहंजनेकी छाल, रेणुका, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, मुनक्का, तुलसी और सेंधानमक १-१ तोला ले कर कल्क बनावें।

७२ तोले तेलमें यह कल्क और ४ गुना

पानी मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य देनेसे नासा रोग नष्ट होते हैं।

(७४१३) शिग्र्वादितैलम्

(वृ. यो. त. । त. १३० ; भा. प्र. म. खं. २। नासा. ; यो. र. ; वृ. नि. र. ; व. से. । नासारो.)

शिग्रुसिंहीनिकुम्भानां बीजैः सव्योषसैन्धवैः।
बिल्वपत्ररसैः सिद्धं तैलं स्यात्पूतिनस्यभुत्॥

कल्क—सहंजनेके बीज, कटेलीके बीज, जमालगोटेके बीज, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक १-१ तोला ले कर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

५६ तोले तेलमें यह कल्क और ४ गुना बेलपत्रका स्वरस मिला कर पकावें। जब रस जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलकी नस्यसे पूतिनासा नामक रोग नष्ट होता है।

(यह तेल अत्यन्त तीक्ष्ण होगा अतः योग्य चिकित्सकके परामर्शसे सेवन करना चाहिये।)

(७४१४) शिलोद्भवादितैलम्

(व. से.। मूत्राघाता. ; भा. प्र. म. खं. २ । मूत्रा.)

शिलोद्भवैरण्डकुशास्थिरादि-
पुनर्नवाभीरुरसेषु सिद्धम्।
तैलं भृतं क्षीरमथानुपानं
कालेषु कृच्छ्रादिषु सम्प्रयोज्यम्॥

छरीला, अरण्डमूल, कुश, लघु पंच मूल (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु), पुनर्नवा और शतावर; इनके ४ सेर क्वाथमें १ सेर तेल मिला कर पकावें।

इसे दूधके साथ पिलानेसे मूत्रकृच्छ्रादि मूत्ररोग नष्ट होते हैं।

(७४१५) शुण्ठीतैलम्

(वृ. मा. ; व. से. । नासा. ; ग. नि. । नासा. ४ ; भा. प्र. म. खं. २ । नासा.)

शुण्ठीकुष्ठकणाबिल्वद्राक्षा कल्ककषायवत्।
साधितं तैलमाज्यं वा नस्यं क्षवथुरोगनुत्॥

सोंठ, कूठ, पीपल, बेलकी छाल और मुनक्का; इनके कल्क तथा क्वाथसे सिद्ध तैल या घीकी नस्य लेनेसे क्षवथु रोग (अधिक छींकें आना रोग) नष्ट होता है।

(**कल्कार्थ**—प्रत्येक ओषधि २ तोले। **क्वाथार्थ**—प्रत्येक ओषधि ३२ तोले, पानी १६ सेर, शेष ४ सेर। तेल या घी १ सेर।)

(७४१६) शुष्कमूलाद्यं तैलम् (१)

(भै. र.। शोथा. ; वृ. यो. त. । त. १०६; ग. नि. । श्वयथ्व. ३३ ; र. र. ; व. से. ; वृ. मा. ; भा. प्र. म. खं. २ । शोथा.)

शुष्कमूलकवर्षाभूदारुरास्नामहौषधैः।
पक्वमभ्यञ्जनात्तैलं सशूलं श्वयथुं जयेत्॥

कल्क—सूखी मूली, पुनर्नवा, देवदारु, रास्ना और सोंठ २-२ तोला ले कर कल्क बनावें।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां ३२-३२ तोले ले कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहनेपर छान लें।

(७४१७) **शुष्कमूलाद्यं तैलम्** (२)

(धन्व. । कर्ण.)

शुष्कमूलकशुण्ठीनां क्षारो हिङ्गुलनागरम् ।
शतपुष्पी वचा कुष्ठं दारुशिग्रुरसाञ्जनम् ॥
सौवर्चलं यवक्षारं सामुद्रं सैन्धवं तथा ।
भूजग्रन्थिकं बिडं मुस्तं मधु चतुर्गुणम् ॥
मातुलुङ्गरसं चैव कदलीरसमेव च ।
तैलमेभिर्विपक्तव्यं कर्णशूलापहं परम् ॥
बाधिर्यं कर्णनादश्च पूयस्रावश्चदारुणः ।
पूरणादस्य तैलस्य कृमयः कर्णयोः खिलाः ॥
क्षिप्रं विनाशमायान्ति शशाङ्ककृतशेखर ॥

कल्क—सूखी मूली और सोंठका क्षार, शिंगरफ (हिंगुल), सोंठ, सोया, बच, कूठ, देवदारु, सहंजनेकी छाल, रसौत, सञ्चल (काला नमक), जवाखार, सामुद्र लवण, सेंधा नमक, नागकेसर गठीवन, बिड लवण और नागरमोथा समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर सबको एकत्र पानीके साथ पीस लें।

२ सेर तेलमें यह कल्क, ८ सेर शहद, ८ सेर बिजौरेका रस और ८ सेर केलेका रस मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल कर्णशूल, बधिरता, कर्णनाद, पीप आना और कर्ण कृमियोंको शीघ्र ही नष्ट करता है।

(७४१८) **शुष्कमूलाद्यं तैलम्** (३) (बृहद)

(भै. र. । शोथा. ; धन्व; र. र. । शोथा.)

मूलकं दशमूलञ्च कणामूलं पुनर्नवा ।
प्रत्येकं प्रस्थमाहृत्य वारिण्यष्टगुणे पचेत् ॥
तेन पादावशेषेण तैलस्याद्धढकं पचेत् ।
दापयेत्तैलतुल्यञ्च गोमूत्रं कुशलो भिषक् ॥
मूलकं चामृता शुण्ठी पटोलं चपला बला ।
पाठा पुनर्णवामूलं बालोशीरञ्च शिग्रुजम् ॥
निर्गुण्डीन्द्राशनं श्यामा करञ्जं वासकं तथा ।
कणा हरीतकी चैव वचा पुष्करमूलकम् ॥
रास्ना विडङ्गं चव्यञ्च द्वे हरिद्रे च धान्यकम् ।
द्विक्षारं सैन्धवञ्चैव देवदारु सपञ्चकम् ॥
शटी करिकणा बिल्वं मञ्जिष्ठा च ततः क्रमात् ।
प्रत्येकार्द्धपलञ्चैषां पेषयित्वा विनिःक्षिपेत् ॥
अभ्यङ्गेनास्य तैलस्य ये गुणांस्तांस्ततः शृणु ।
नानाशोथा विनश्यन्ति वातपित्तकफोद्भवाः ॥
मलोद्भवाश्च ये केचिद्विशेषेण जलाश्रयाः ।
अवश्यं निर्जरा देहा भविष्यन्ति न संशयः ॥

क्वाथ—सूखी मूली, दशमूल, पीपलामूल और पुनर्नवामूल (साठी) १-१ सेर ले कर सबको अधकुटा करके ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—मूली, गिलोय, सोंठ, पटोल, पीपल, बला (खरैटी), पाठा, पुनर्नवा (बिसखपरा) की जड़, सुगन्धबाला, खस, सहंजनेकी छाल, संभालू, भांग, श्यामा लता, करञ्ज, अडूसा, पीपल, हर्र, बच, पोखरमूल, रास्ना, बायबिडंग, चव्य, हल्दी, दारु हल्दी, धनिया, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा-

नमक, देवदारु, पमाक, कचूर, गजपीपल, बेलकी छाल और मजीठ २॥-२॥ तोले ले कर कल्क बनावें ।

४ सेर तेलमें उपरोक्त काथ, ४ सेर गोमूत्र और कल्क मिला कर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे वातज, पित्तज, कफज और मलजनित तथा विशेषतः दुष्ट जल-विकार-जनित अनेक प्रकारके शोथका नाश होता है ।

(७४१९) शुष्कमूलाद्यं तैलम् (४) (बृहद्)

(भै. र. । शोथा.)

शुष्कमूलरसप्रस्थं शिग्रुधुस्तूरयोस्तथा ।
सिन्धुवाररसप्रस्थं दशमूलरसं तथा ॥
पारिभद्ररसप्रस्थं वर्षाभूप्रस्थमेव च ।
करञ्जस्य रसप्रस्थं प्रस्थं वरुणकस्य च ॥
तैलप्रस्थं समादाय भिषग्यत्नाद्विपाचयेत् ।
कल्कैरर्द्धपलैरेतैः शुण्ठीमरिचसैन्धवैः ॥
पुनर्नवा काकमाची शेलुत्वक् पिप्पलीयुगैः ।
कट्फलं पौष्करं भृङ्गी रास्ना यासश्च कारवी ॥
हरिद्राद्वयपूतीकद्वयानन्तायुतैः पृथक् ।
तत्साधुसिद्धं विज्ञाय शुभे भाण्डे निधापयेत् ॥
वातश्लेष्मकृतं दोषं सन्निपातभवं तथा ।
निहन्ति सर्वजं शोथमुदरश्वासनाशनम् ॥
विरुद्धभेषजभवं शोथमाशु व्यपोहति ।
व्रणशोथाक्षिशूलघ्नं कामलापाण्डुनाशनम् ॥
ये चान्ये व्याधयः सन्ति श्लेष्मजाः सन्निपातजाः ।
तान् सर्वान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥

द्रव पदार्थ—सूखी मूलीका काथ २ सेर, सहंजनेकी छालका काथ २ सेर, धतूरेका रस २ सेर, सम्भालूका रस २ सेर, दशमूलका काथ २ सेर, पारिभद्र (फरहद) की छालका काथ २ सेर, पुनर्नवाका काथ या रस २ सेर, करञ्ज पत्रका रस २ सेर और बरनेकी छालका काथ २ सेर ।

कल्क—सोंठ, काली मिर्च, सेंधा नमक, पुनर्नवा, मकोय, लिहसोड़ेकी छाल, पीपल, गज पीपल, कायफल, पोखरमूल, काकड़ासिंगी, रास्ना, जवासा, काला जीरा, हल्दी, दारु हल्दी, दो प्रकारका करंज, अनन्तमूल और श्यामा लता २॥-२॥ तोले ले कर कल्क बनावें ।

२ सेर तेलमें उपरोक्त समस्त द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे वातकफज, सन्निपातज और विरुद्ध भेषजके सेवनसे उत्पन्न शोथ, उदर रोग, श्वास, व्रणशोथ, नेत्रशूल, कामला, पाण्डु और अन्य कफज तथा सन्निपातज रोग नष्ट होते हैं ।

(७४२०) शूलगजेन्द्रतैलम्

(भै. र. ; धन्व । शूला.)

एरण्डं दशमूलञ्च प्रत्येकं पलपञ्चकम् ।
जले चाष्टगुणे पक्त्वा तैलस्यार्द्धाढकं पचेत् ॥
विश्वं जीरं यमानीञ्च धान्यकं पिप्पलीं वचाम् ।
सैन्धवं बदरीपत्रं प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ॥
यवक्वाथः पयश्चैव तैलादेयं गुणद्वयम् ।
तैलमेतन्महातेजो नाम्ना शूलगजेन्द्रकम् ॥
निहन्त्यष्टविधं शूलमुपद्रवसमन्वितम् ।
अग्निप्रदं वमिहरं श्वासकासारुचीर्जयेत् ॥
ज्वरघ्नं रक्तपित्तघ्नं प्लीहगुल्मविनाशनम् ।
श्रीमद् गहननाथेन निर्मितं विश्वसम्पदे ॥

क्वाथ—(१) २५ तोले अरण्डमूल और २५-२५ तोले दशमूलकी प्रत्येक वस्तु ले कर सबको १६ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहनेपर छान लें।

(२) ४ सेर जौको १२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—सोंठ, जीरा, अजवायन, धनिया, पीपल, बच, सेंधा और बेरीके पत्ते १०-१० तोले ले कर कल्क बनावें।

४ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा ८ सेर दूध मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल उपद्रवयुक्त आठ प्रकारके शूलोंको नष्ट करता है तथा वमन, श्वास, कास, अरुचि, ज्वर, रक्तपित्त, प्लीह और गुल्ममें भी उपयोगी है। अग्निवर्द्धक है।

(७४२१) शृङ्गबेरादितैलम्

(वृ. नि. र. । कर्ण.)

शृङ्गबेररसः क्षौद्रं सैन्धवं तैलमेव च ।
कदूष्णं कर्णयोर्धार्यमेतत्स्याद्वेदनापहम् ॥

अदरकका रस १ सेर, शहद १ सेर, सेंधा-नमक ५ तोले और सरसोंका तेल ४० तोले ले कर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब तेल मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे मन्दोष्ण करके कानमें डालनेसे कर्णपीड़ा नष्ट होती है।

(७४२२) शैलेयतैलम्

(च. सं. । चि. अ. १७; ग. नि. । श्वयथ्व. ३३ ; धन्व.; व. से.; वृ. मा. । शोथा.)

शैलेयकुष्ठागुरुदारुकौन्ती-
त्वक्पद्मकैलाम्बुपलाशमुस्तैः ।
प्रियङ्गुथौणेयकहेममांसी-
तालीसपत्रप्लवपत्रधान्यैः ॥
श्रीवेष्टकध्यामकपिप्पलीभिः
स्पृक्कानखैश्चैव यथोपलाभम् ।
वातान्वितेऽभ्यङ्गमुशन्ति तैलं
सिद्धं सुपिष्टैरपि च प्रदेहम् ॥

भूरिछरीला, कूठ, अगर, देवदारु, रेणुका, दालचीनी, पद्माक, इलायची, सुगन्ध बाला, पलाश, नागरमोथा, फूलप्रियंगु, थुनेर, जटामांसी, तालीस-पत्र, केवटीमोथा, तेजपात, धनिया, श्रीवेष्टक, ध्यामक, पीपल, स्पृक्का और नखी; इनमेंसे जितने पदार्थ मिल सकें उनके क्वाथ और कल्कसे तेल सिद्ध कर लें।

यह तेल या इन औषधोंका लेप लगानेसे वातज शोथ नष्ट होता है।

(७४२३) शोथशार्दूलतैलम्

(भै. र. । शोथा. ; धन्व.)

धुस्तूरो दशमूलञ्च सिन्धुवारं जयन्तिका ।
पुनर्णवा करञ्जश्च षट्पलानि प्रगृह्य च ॥
जलद्रोणे विपक्तव्यं ग्राह्यं पादावशेषितम् ।
प्रस्थञ्च कटुतैलस्य कल्कान्येतानि दापयेत् ॥

रास्ना पुनर्णवा दारु मूलकं नागरं कणा ।
सिद्धं तैलवरं ह्येतन्नाशयत्याशु सेवनात् ॥
शोथं सुदारुणं घोरं वातपित्तकफोद्भवम् ।
असाध्यं सर्वदेहस्थं सन्निपातसमुद्भवम् ॥
श्लीपदञ्च ज्वरं पाण्डुं कृमिदोषं विनाशयेत् ।
छिन्नव्रणप्रशमनं नाडीदुष्टव्रणापहम् ॥
शोथशार्दूलकं तैलं बलवर्णप्रसादनम् ॥

क्वाथ—धतूरा, दशमूल, संभालु, जयन्ती, पुनर्नवा और करञ्ज ३०-३० तोले ले कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—रास्ना, पुनर्नवा, देवदारु, सूखी मूली, सोंठ और पीपल, समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर कल्क बनावें।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और काथ मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज सर्व देहगत भयंकरसे भयंकर शोथको भी नष्ट कर देता है। इसके अतिरिक्त यह श्लीपद, ज्वर, पाण्डु, कृमिदोष, छिन्न व्रण और दुष्ट नाड़ी व्रणमें भी उपयोगी है। तथा बल वर्णकी वृद्धि करता है।

(७४२४) श्यामाद्यतैलम्

(धन्व. ; र. र. । बालरोगा.)

श्यामा निशा बला लाजा लवणं क्वाथये-त्समम् ।
तोये चतुर्गुणे पाच्यं पादशेषं समाहरेत् ॥
तिलतैलं क्वाथपादं तैलार्द्धं माहिषं घृतम् ।
स्नेहशेषं पचेत्तैलं नस्यैश्च मासमात्रकैः ॥
बालस्त्रीवृद्धनारीणां यौवनं कुरुते ध्रुवम् ॥

श्यामालता, हल्दी, खरैटीकी जड़, धानकी खील और सेंधा नमक १६-१६ तोले ले कर सबको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें।

आधा सेर तिलके तेलमें यह क्वाथ और पाव सेर भैंसका घी मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो स्नेहको छान लें।

इसकी नस्यसे बालक, स्त्री और वृद्धोंका स्वास्थ्य स्थिर रहता है।

(७४२५) श्योनाकतैलम्

(व. से. । कर्ण. ; वृ. नि. र. । कर्ण.)

तैलं श्योनाकमूलेन मन्दाग्नौ परिसाधितम् ।
हरेदाशु त्रिदोषोत्थं कर्णशूलं प्रपूरणात् ॥

अरलुकी जड़की छालके कल्क और काथसे सिद्ध तैल कानमें भरनेसे त्रिदोषज कर्णशूल नष्ट होता है।

(७४२६) श्रीगोपालतैलम्

(भै. र. । वाजीकर.)

रसादकं शतावर्याः कूष्माण्डामलयोस्तथा ।
वाजीगन्धासहचरबलानाञ्च शतं पृथक् ॥
परिपच्याम्भसां द्रोणे पादशेषेऽवतारयेत् ।
पञ्चमूलं महद् व्याघ्री मूर्वा केतकपूतिका ॥
पारिभद्रञ्च सर्वेषां ग्राह्यं दशपलं शुभम् ।
काथयित्वा जलद्रोणे तत्पादमवशेषयेत् ॥

आढकं तिलतैलस्य कल्कैरेतैश्च सम्पचेत् ।
अश्वगन्धा चोरपुष्पी पद्मकं कण्टकारिका ॥
बलागुरु घनं पूति शिह्वकागुरुचन्दनम् ।
चन्दनं त्रिफला मूर्वा जीवनीयकदुत्रयम् ॥
पूतिकुङ्कुमकस्तूर्याश्चातुर्जातिश्च शैलजम् ।
नखमुस्तमृणालानि नीलोत्पलमुशीरकम् ॥
मांसी मुरा सुरतरुर्वचा दाडिमतुम्बुरु ।
ऋद्धिर्वृद्धिर्दमनकं क्षुद्रैलार्द्धपलं पृथक् ॥
एतत्तैलवरं हन्ति वातपित्तकफोद्भवान् ।
व्याधीनशेषान् जनयेत् स्मृतिं मेधां धृतिं धियम्॥
वातरोगान् विशेषेण प्रमेहान् हन्ति विंशतिम् ।
गर्भं संस्थापयेत्स्त्रीणां सर्वं शूलं व्यपोहति ॥
मूत्रकृच्छ्रमपस्मारमुन्मादान् निखिलानपि ।
स्थविरोऽपि जराजीर्णस्तैलस्यास्य निषेवणात् ॥
लीलया प्रमदानाञ्च उन्मदानां शतं जयेत् ।
तिष्ठेद् यस्य गृहे तैलं श्रीगोपालाभिधं शुभम् ॥
न तत्र भूताः सर्पन्ति न पिशाचा न राक्षसाः।
न दारिद्र्यं भवेत्तस्य विघ्नः कश्चिन्न जायते ॥
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतद्विश्वकल्याणहेतवे ॥

द्रव पदार्थ—(१) शतावरका रस ८ सेर, पेठेका रस ८ सेर और आमलोंका रस ८ सेर।

(२) ६। सेर असगन्धको ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रक्खें ।

(३) झिण्टीमूल ६। सेर लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें ।

(४) खरैटीकी जड़ ६। सेर लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

(५) बेल छाल, अरलुकी छाल, खम्भारी छाल, पाढल छाल, अरणी, कटेलीकी जड़, मूर्वामूल, केवड़ेकी जड़, खट्टाशी (जुन्दबेदस्तर) और पारिभद्र (फरहद) की छाल ५०–५० तोले लेकर सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—असगन्ध, चोरपुष्पी (चोरहोली), पद्माक, कटेली, खरैटी, अगर, नागरमोथा, खट्टाशी, शिलारस, अगर, सफेदचन्दन, लालचन्दन, हर्र, बहेड़ा, आमला, मूर्वा, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, मुलैठी, सोंठ, मिर्च, पीपल, खट्टाशी, केसर कस्तूरी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, छारछरीला, नखी, नागरमोथा, मृणाल (कमलनाल), नीलोपल, खस, जटामांसी, मुरामांसी, देवदारु, बच, अनारकी छाल, धनिया, ऋद्धि, वृद्धि, दमनक और छोटी इलायची २॥–२॥ तोले लेकर कल्क बनावें ।

८ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त सम्पूर्ण द्रव पदार्थ और कल्क मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलके मर्दन से वातज, पित्तज तथा कफज; सम्पूर्ण रोग नष्ट होते हैं एवं स्मृतिशक्ति, मेधा, धृति तथा बुद्धि बढ़ती है। इसके सेवन से वातरोग तथा विशेषतः बीसों प्रमेह नष्ट होते हैं। यह तैल गर्भ स्थापक है तथा शूल, मूत्रकृच्छ्र, अपस्मार, उन्माद; प्रभृति रोगोंको नष्ट करता है। इस तैल के प्रयोग से जराजीर्ण वृद्ध पुरुष भी १०० स्त्रियों से रमण करने में समर्थ होजाता है। इस

तैल की दो तीन बूंद लिङ्ग पर मर्दन करने से ध्वजभङ्ग नष्ट होता है। जिस गृह में श्रीगोपाल तैल हो वहां भूत, पिशाच तथा राक्षस आदि नहीं जाते एवं दरिद्रता तथा कोई विघ्न नहीं होता। जगत् के कल्याण के लिये इस तैल का अश्विनी कुमारों ने निर्माण किया था।

(७४२७) **श्रीपर्णीतैलम्**

(भै. र.; च. द.; धन्व.; वृ. नि. र. । स्त्रीरोगा.)

श्रीपर्णी रसकल्काभ्यां तैलं सिद्धं तिलोद्भवम्।
तत्तैलं तूलकेनैव स्तनस्योपरि धारयेत् ॥
पतितावुत्थितौ स्त्रीणां भवेयातां पयोधरौ।
गजकुम्भसमाकारावुत्पन्नौ परिमण्डलौ ॥

गम्भारीकी छालके क्वाथ और कल्कसे सिद्ध तिल तैलमें रुई भिगोकर स्तनों पर रखनेसे पतित और शिथिल स्तन दृढ़ और पुष्ट हो जाते हैं।

क्वाथार्थ—छाल २ सेर, पानी १६ सेर, शेष ४ सेर।

कल्कार्थ—छाल १० तोले।

तिलतैल—१ सेर।

(७४२८) **श्रीबिल्वतैलम्**

(भै. र. । अम्लपित्ता.)

बालबिल्वं पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ।
पादावशेषे तस्मिंस्तु तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
धात्रीरसं तैलसमं द्विगुणं छागदुग्धकम् ।
कल्कीकृत्य पचेद्धीमान् धात्रीं लाक्षां तथाभयाम्॥
मुस्तकं चन्दनोदीच्यं सरलं देवदारु च ।
मञ्जिष्ठां चन्दनं कुष्ठमेलां तगरपादिकम् ॥
मांसीं शैलेयकं पत्रं प्रियङ्गुं शारिवां वचाम्
शतावरीमश्वगन्धां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ॥
तत्सिद्धं स्थापयेत्कुम्भे मासमेकं सुरक्षिते ।
बिल्वतैलमिदं श्रेष्ठमम्लपित्तकुलान्तकृत् ॥
शूलमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यं न संशयः ।
सूतिकारोगशमनं गर्भदं शुक्रवर्द्धनम् ॥
हस्तपादशिरोदाहं दौर्बल्यं कृशतां तथा ।
ग्रहणीगुल्महिक्कासृग्रक्तपित्तज्वरं जयेत् ॥

क्वाथ—६। सेर कच्चे बेलके गूदेको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

अन्य द्रव पदार्थ—आमलोंका रस २ सेर और बकरीका दूध ४ सेर।

कल्क—आमला, लाख, हर्र, नागरमोथा, सफेदचन्दन, सुगन्धबाला, चीर, देवदारु, मजीठ, लालचन्दन, कूठ, इलायची, तगर, जटामांसी, छार छरीला, तेजपात, फूलप्रियंगु, शारिवा, बच, शतावर, असगन्ध, सोया और पुनर्नवा समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त क्वाथ, द्रव पदार्थ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें। तत्पश्चात् उसे पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १ मास पश्चात् काममें लावें।

यह तेल अम्लपित्त, आठ प्रकारके शूल, सूतिकारोग, हाथ पैर और शिरकी दाह, दुर्बलता,

कृशता, ग्रहणीरोग, गुल्म, हिक्का, रक्तपित्त और ज्वरको नष्ट करता है तथा गर्भदाता और शुक्र वर्द्धक है।

(७४२९) श्लेष्मान्तकादितैलम्

(रा. मा. । शिरो.)

श्लेष्मान्तकाक्षपिचुमन्दककामिनीनां
काश्मर्यकस्य यदि वाऽपि हरीतकीनाम् ।
तैलं निहन्ति पलितान्युपयुक्तनस्यं
गोक्षीरभोज्यनिरतस्य सदैव पुंसः ॥

लिहसोड़े, नीम, दारुहल्दी, गम्भारी और हर्रमेंसे किसी एकके बीजोंका तेल निकलवाकर, नित्य प्रति उसकी नस्य लेने और गोदुग्धपर रहनेसे पलित रोग नष्ट होता है।

(७४३०) श्वदंष्ट्रादितैलम्

(वं. से. । वातव्या.)

श्वदंष्ट्रा स्वरसं तैलं क्षीराढकसमन्वितम् ।
शृङ्गबेरं पलान्यष्ट विंशद्गुड पलानि च ॥
सिद्धमेकत्र तत्तैलं गृध्रस्यां पादकम्पने ।
कटिपृष्ठग्रहे शोथे शस्तं वातविकारिणाम् ॥
वन्ध्यानां गर्भजननं रेतो दोषापकर्षणम् ।
बस्तौ पाने हितञ्चैव विशेषान्मूत्रकृच्छ्रिणाम् ॥

कल्क—अदरक २५ तोले और गुड़ १०० तोले लेकर कल्क बनावें।

८ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर गोखरुका रस तथा ८ सेर दूध मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे पीने और इसकी बस्ति लेनेसे गृध्रसी, पादकम्पन, कटिग्रह, पृष्ठग्रह, शोथ, और अन्य वातज रोगोंका नाश होता है।

यह तेल वन्ध्यत्व, वीर्यविकार और मूत्रकृच्छ्रमें विशेष उपयोगी है।

(७४३१) श्वित्रगजसिंहतैलम्

(र. चि. म. । स्त. ४)

लाङ्गलीमूलतोयं स्याद्दशमूलरसं पुनः ।
ज्वालामुखीरसो ग्राह्यो नीलिकाजलमानयेत् ॥
गिरिकर्णीरसं चैव कुमारीरसमानयेत् ।
तिलतैलं तथा ग्राह्यं समं तेन रसेन च ॥
कासीसं राजिकाम्पिल्लं यवक्षारश्च टङ्कणम् ।
स्वर्जिकार्कस्य दुग्धं च सेहुण्डस्य पयस्तथा ॥
रसाञ्जनमतिश्लक्ष्णं भृंगराजरसस्तथा ।
भल्लातकफलान्येव निम्बबीजानि यानि च ॥
त्रिफलाया रसः सिद्धः शुद्धं तक्रं गवामिह ।
लोहचूर्णं तथा शुद्धं विंशत्यंशेन योजयेत् ॥
पक्त्वा तैलं शुभं ग्राह्यं लेपनीय वपुः सदा ।
घर्मे स्थेयं खरे गाढं पूर्वमुक्तं च भोजनम् ॥
अवश्यं च विलीयन्ते श्वित्रकुष्ठानि सर्वथा ।
दर्भे शय्या प्रकर्तव्या मनसा निश्चलेन च ॥
ब्रह्मचर्यं निषेवेत दानं देयं स्वशक्तितः ।
मोक्षणं वध्यसत्त्वानां दया सर्वेषु जन्तुषु ॥
स्वर्णोपमा तस्य शरीरकान्तिर्धत्ते बलं मत्तग-
जस्य कामी ।
त्यक्तश्च यो वैद्यशतैः सहस्रैः श्वित्री भवेदेव
पविभिताङ्गः ।'

श्वित्रेभसिंहाभिधतैलयोगान्नरः प्रमुच्येत समस्तकुष्ठात् ।
यावन्तो हि मया प्रोक्ता प्रयोगाः कुष्ठनाशनाः ॥
त्रिफलाक्वाथतः मायाः कर्तव्याः सूतवेदिभिः ॥

कलियारीकी जड़का रस २ सेर, दशमूलका क्वाथ २ सेर, हुलहुलका रस २ सेर, नीलका स्वरस २ सेर, कोयलका स्वरस २ सेर, घीकुमारका रस २ सेर, तिलका तेल २ सेर तथा कसीस, राई, कमीला, जवाखार, सुहागा, सज्जीखार, आककादूध, सेहुंड (थूहर)का दूध, रसौत, भंगरेका रस, भिलावेके फल, नीमके बीज, त्रिफलाक्वाथ, गायका तक्र और शुद्ध लोहचूर्ण समान भाग मिश्रित ८ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और पानी जल जाने पर तेलको छान लें ।

इस तेलको श्वेतकुष्ठके स्थान पर मल कर थोड़ी देर तेज़ धूपमें बैठना और कुष्ठ रोगोचित पथ्य पालन करना चाहिये ।

यह तेल सैंकड़ों वैद्योंसे त्यक्त भयंकर श्वेत कुष्ठको भी पूर्णतः नष्ट कर देता है ।

इसके प्रयोगकालमें दाभकी शय्या पर सोना और ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये । यथाशक्ति दान देना और मारने के लिये कैद किये हुवे प्राणियोंको मुक्त कर देना चाहिये । एवं समस्त जीवोंके प्रति दया भाव रखना चाहिये ।

हमारे (रसचिन्तामणिकारके) बतलाए हुवे कुष्ठनाशक प्रयोग त्रिफलाक्वाथके साथ सेवन कराने चाहियें ।

(७४३२) श्वित्रहरतैलम्

(र. चि. म. । स्त. ४)

मनःशिलार्कसेहुण्डपयो नीलिरसस्तथा ।
गन्धकं हरितालं च कासीसं हयमारकः ॥
चित्रकं तुत्थकं मुस्तां मरिचं रजनीद्वयम् ।
त्रिफला भृङ्गराजश्च लाङ्गली दहनस्तथा ॥
नीलोत्पलस्य कन्दं च लोहचूर्णं च बाकुची ।
बीजं शेफालिकायाश्च विषं क्षारत्रयं समम् ॥
गिरिकन्या देवदाली तैलं ज्वालामुखीरसः ।
प्रपुन्नाटरसं दत्त्वा तैलं पाच्यं प्रयत्नतः ॥
घर्मे स्थित्वा च तत्तैलं तनौ संलेपयेत्ततः ।
घर्मे स्थेयं द्वियामं हि श्वित्रनाशे तदुत्तमम् ॥
शनैः शनैः खरे घर्मे श्वित्रं कृष्णं भविष्यति ।
यदि वर्षसहस्रस्य भवेच्छ्वित्रं तथापि किम् ॥
प्रणश्यत्यतिवेगेन तैलवार्ताकभक्षिणः ।
माषान्नभोजिनः कारवेलकर्कोटकाशिनः ॥
मण्डलानि प्रणश्यन्ति तथा सिध्मानि नाशयेत् ।
गजचर्माणि दद्रूणि पामाश्चापि विनाशयेत् ॥
रक्तसां सहसा हन्यात्परिसर्पं च दारुणम् ।
न काञ्चनं कान्तियुतं तदग्रे न कामदेवो मदमादधाति ॥
न कुङ्कुमस्यापि चकास्ति वर्णः तत्तैलसेवी हि भवेत्सुरूपः ॥

कल्क—मनसिल, आकका दूध, सेहुंड (थूहर)का दूध, नीलका रस, गन्धक, हरताल, कसीस, कनेरकी जड़, चीतामूल, नीलाथोथा, नागरमोथा, कालीमिर्च, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र,

बहेड़ा, आमला, भंगरा, कलियारीकी जड़, भिलावा, नीलोत्पलका कन्द, लोहचूर्ण, बाबची, हारसिंहारके बीज, बछनाग, जवाखार, सज्जीखार, और सुहागा समान भाग मिश्रित ३० तोले लेकर कल्क बनावें।

३ सेर तेलमें यह कल्क और ३-३ सेर कोयलका स्वरस, देवदाली (बिंडाल) का रस तथा कलियारी (अथवा हुलहुल) और पंमाड़का रस मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

धूपमें बैठकर श्वेतकुष्ठ पर इस तेलकी मालिश करनी और दो पहर धूपमें बैठना चाहिये।

इस प्रकार इसे लगाकर तेज़ धूपमें बैठनेसे धीरे धीरे कुष्ठका रंग काला हो जाता है।

यदि सहस्र वर्षका पुराना कुष्ठ हो तो भी चिन्ताकी बात नहीं है क्यों कि इस तेलसे वह भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

पथ्य—तेल, बैंगन, उड़द, करेला और ककोड़ा।

यह तेल मण्डल कुष्ठ, सिध्म, गजचर्म, दाद, पामा, रकसा, और वीसर्पको भी नष्ट करता है। इसके उपयोगसे शरीरकी कान्ति अत्यन्त सुन्दर हो जाती है।

(७४३३) श्वेतकरवीराद्यं तैलम् (१)

(ग. नि. । तैला. २)

श्वेतकरवीरपल्लवमूलत्वक्पुष्पचित्रकविडङ्गानि।
कुष्ठार्कमूलसर्षपशिग्रुत्वग्रोहिणीकटुकाः॥
एतैस्तैलं सिद्धं कल्कैः पादांशकैर्गवां मूत्रम्।
दत्त्वा तैलचतुर्गुणमभ्यङ्गात्कुष्ठकण्डूघ्नम्॥

कल्क—सफेद कनेरके पत्ते और मूलकी छाल तथा पुष्प; चीता, बायबिडंग, कूठ, आककी जड़, सरसों, सहंजनेकी छाल और कुटकी समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर कल्क बनावें।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावें। जब गोमूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे कुष्ठ और कण्डूका नाश होता है।

(७४३४) श्वेतकरवीराद्यं तैलम् (२)

(व. से. । कुष्ठा.)

श्वेतकरवीरमूलं विषांशसाधितं गवां मूत्रे।
चर्मदलसिध्मपामाविस्फोटकिटिभजित्तैलम्॥

१०-१० तोले सफेद कनेरकी जड़ और बछनागका कल्क, ८ सेर गोमूत्र और २ सेर सरसोंका तेल एकत्र मिला कर पकावें। जब गोमूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल चर्मदल, सिध्म, पामा, विस्फोटक और किटिभ कुष्ठको नष्ट करता है।

(७४३५) श्वेतकरवीराद्यं तैलम् (३)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

श्वेतकरवीरकरसो गोमूत्रं चित्रको विडङ्गं च।
कुष्ठे तु तैलयोगः सिद्धोऽयं सम्मतो भिषजाम्॥

सफेद कनेरका रस ४ सेर, गोमूत्र ४ सेर, सरसोंका तेल २ सेर तथा चीते और बायबिड़ंगका

कल्क १०-१० तोले ले कर सबको एकत्र मिला-कर पकावें ।

यह तेल कुष्ठको नष्ट करता है ।

(७४३६) श्वेतादितैलम्

(वृ. मा. । मुखरो.)

श्वेताविडङ्गदन्तीषु तैलं सिद्धं ससैन्धवम् ।
नस्यकर्मणि दातव्यं कवलश्च कफोच्छ्रये ॥

श्वेत सारिवा, बायबिड़ंग, दन्तीमूल और सेंधानमक २॥-२॥ तोले ले कर कल्क बनावें ।

१ सेर तिलके तैलमें यह कल्क और इन्हीं ओषधियोंका ४ सेर क्वाथ मिला कर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी नस्य लेने और इसीके कवल धारण करनेसे कफज गलशुण्डिका रोग नष्ट होता है ।

इति शकारादितैलप्रकरणम्

अथ शकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(७४३७) शार्करासवः

(ग. नि. । आसवा. ६ ; वृ. नि. र. । ग्रहण्य.; यो. र. । अर्शो.)

दुरालभायाः प्रस्थं च चित्रकस्य वृषस्य च ॥
पथ्यामलकयोश्चैव पाठाया नागरस्य च ।
दद्याद् द्विपलिकान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
पादशेषे रसे पूते सुशीते शर्कराशतम् ।
दत्त्वा कुम्भे दृढे स्थाप्यं मासार्धं घृतभाजने ॥
प्रलिप्ते पिप्पलीचव्यप्रियङ्गुमधुसर्पिषा ।
तस्य मात्रां पिबेत्काले शार्करस्य यथाबलम् ॥
अर्शांसि ग्रहणीरोगमुदावर्तमरोचकम् ।
शकृन्मूत्रानिलोद्गारविबन्धानग्निमार्दवम् ॥
हृद्रोगं पाण्डुरोगं च सर्वमेतत्प्रसाधयेत् ।

धमासा १ सेर और चीतामूल, बासा, हर्र, आमला, पाठा और सोंठ १०-१० तोले ले कर सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें ६। सेर खांड मिला दें एवं पीपल, चव्य और फूलप्रियंगुके चूर्णमें शहद तथा घी मिलाकर उसे घृतसे चिकने किये हुवे मटकेमें पोत दें और उसमें उपरोक्त औषध भर कर उसका मुख बन्द कर दें । १५ दिन पश्चात् आसवको निकालकर छान लें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, संग्रहणी, उदावर्त, अरुचि, मलावरोध, मूत्ररोध, अपानवायुका रुकना, डकारोंका बन्द होना, अग्निमांद्य, हृद्रोग और पाण्डुका नाश होता है ।

(७४३८) शारिवाद्यासवः

(भैषज्य रत्नावलि । प्रमेहा.)

शारिवा मुस्तकं लोध्रं न्यग्रोधं पिप्पलं शटीम् ।
अनन्ता पद्मकं बालं पाठां धात्रीं गुडूचिकाम् ॥

उशीरं चन्दनद्वन्द्वं यमानी कटुरोहिणीम् ।
पलमेलाद्वयं कुष्ठं स्वर्णपत्रीं हरीतकीम् ॥

एषां चतुःपलान् भागान् सूक्ष्मचूर्णीकृतान् शुभान् ।
जलद्रोणद्वये क्षिप्त्वा दद्याद् गुडतुलात्रयम् ॥

पलानि दश धातक्याः द्राक्षा षष्टिपलं भवेत् ।
मासं संस्थापयेद् भाण्डे संवृते मृण्मये शुभे ॥

शारिवाद्यासवस्यास्य पानान्मेहांश्च विंशतिः ।
शराविकादयः सर्वाः पिडिकास्तत्कृताश्च याः॥

औपदंशिकरोगाश्च वातरक्तं भगन्दरम् ।
सर्व एते शमं यान्ति व्याधयो नात्र संशयः ॥

सारिवा, नागरमोथा, लोध, बरगदकी छाल, पीपल वृक्षकी छाल, कचूर, अनन्तमूल, पद्माक, सुगन्धबाला, पाठा, आमला, गिलोय, खस, सफेद चन्दन, लालचन्दन, अजवायन और कुटकी, ५–५ तोले तथा छोटी और बड़ी इलायची, कूठ, सनाय एवं हर्र २०–२० तोले ले कर सबको एकत्र बारीक कूट लें । तदनन्तर एक मटकेमें ६४ सेर पानी डालकर उसमें यह चूर्ण और १८॥। सेर गुड़, ५० तोले धायके फूल तथा ३॥। सेर मुनक्का डाल कर उसका मुख बन्द कर दें और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें ।

यह आसव २० प्रकारके प्रमेहों तथा शराविकादि समस्त प्रमेहपिडिकाओंको नष्ट करता है । यह उपदंश, भगन्दर और वातरक्तमें भी उपयोगी है ।

(७४३९) शिरीषारिष्टः

(भैषज्य रत्नावली । विषा.)

पचेत्तुलार्धं द्विद्रोणे शिरीषस्य जले सुधीः ।
पादशेषे कषायेऽस्मिन् क्षिपेद्गुडतुलाद्वयम् ॥
कृष्णा प्रियङ्गु कुष्ठैला नीलिनी नागकेशरम् ।
रजन्यौ पलमानेन दद्यादत्र च नागरम् ॥
मासादूर्ध्वं जातरसं यथामात्रं प्रयोजयेत् ।
शिरीषारिष्टमित्येतद् विषव्यापद्विनाशनम् ॥

३ सेर १० तोले सिरसकी छालको ६४ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें १२॥ सेर गुड़ तथा ५–५ तोले पीपल, फूलप्रियंगु, कूठ, इलायची, नीलकी जड़, नागकेसर, हल्दी, दारुहल्दी और सोंठका चूर्ण मिला कर सबको मृत्पात्रमें बन्द करके रख दें और एक मास पश्चात् निकाल कर छान लें ।

यह अरिष्ट विषविकारोंको नष्ट करता है ।

(७४४०) श्रीखण्डासवः

(भैषज्यरत्नावलि । पानात्यया.)

श्रीखण्डं मरिचं मांसी रजन्यौ चित्रकं घनम् ।
उशीरं तगरं द्राक्षा चन्दनं नागकेसरम् ॥
पाठां धात्रीं कणां चव्यं लवङ्गञ्चैलवालुकम् ।
लोध्रश्चार्धपलं तत्र गुडस्य च तुलात्रयम् ॥
धातकीं द्वादशपलं चैकैकं परियोजयेत् ।
मासं संस्थाप्य मृद्भाण्डे वस्त्रपूतं रसं नयेत् ॥
पाययेन्मात्रया वैद्यो वयोशक्त्याद्यपेक्षया ।
पानात्ययं परमदं पानाजीर्णञ्च नाशयेत् ॥
पानविभ्रममत्युग्रं श्रीखण्डासव आशु च ॥

सफेद चन्दन, काली मिर्च, जटामांसी, हल्दी, दारुहल्दी, चीतामूल, नागरमोथा, खस, तगर, मुनक्का, लाल चन्दन, नागकेसर, पाठा, आमला, पीपल, चव्य, लौंग, एलवालुक और लोध २॥-२॥ तोले ले कर सबको कूट लें। तदनन्तर ६४ सेर पानीमें यह चूर्ण और १८॥ सेर गुड़ तथा ६० तोले धायके फूल मिला कर सबको मृत्पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें और १ मास पश्चाद् निकाल कर छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण तथा अत्युग्र पानविभ्रमका नाश होता है।

इति शकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

अथ शकारादिलेपप्रकरणम्

(७४४१) **शङ्खचूर्णादिलेपः**

(च. द. । क्षुद्ररोगा. ; रा. मा. । शिरोरो. १)

नवदग्धशङ्खचूर्णं
काञ्जिकसिक्तं हि सीसकं घृष्ट्वा।
लेपात्कचानर्कदलावबद्धान्
शुभ्रान्करोति नीलतरान् ॥

नवीन शंखकी भस्म और कांजीके साथ घिसा हुवा सीसा समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र कांजीमें पीस कर सफेद बालोंपर लेप करें और आकके पत्ते बांध दें। (दूसरे दिन खोलकर आमलेके पानीसे धोकर तेल लगादें)

इस लेपसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(७४४२) **शङ्खादिलेपः** (१)

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

शङ्खचूर्णस्य भागौ द्वौ हरितालश्च भागिकम्।
शुक्तेन सह संयुक्तं लोमशातनमुत्तमम् ॥

दो भाग शंख चूर्ण और १ भाग पीली हरताल ले कर दोनोंको शुक्त (या कांजी) में पीस कर लेप करनेसे योनि आदिके बाल गिर जाते हैं।

(७४४२ अ) **शङ्खादिलेपः** (२)

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११)

शङ्खचूर्णस्य भागौ द्वौ हरितालं च भागिकम्।
मनःशिला चार्धभागा स्वर्जिका चैकभागिका ॥
लेपोऽयं वारिपिष्टस्तु केशानुत्पाट्य दीयते।
अनया लेपयुक्त्या च सप्तवेलं प्रयुक्तया ॥
निर्मूलं केशस्थानं स्यात् क्षमणस्य शिरो यथा ॥

शंखका बारीक चूर्ण २ भाग, हरताल १ भाग, मनसिल आधा भाग और सज्जी १ भाग ले कर सबको पानीके साथ पीस लें। प्रथम बालोंको उखाड़कर उस जगह यह लेप लगावें। (जब एक बारका लेप सूख जाय तो उसे पानीसे धो डालें। और पुनः लेप लगावें।) इस प्रकार सात लेप करनेसे बालोंकी जड़ें निकल जाती हैं और फिर कभी बाल नहीं निकलते।

(७४४३) **शङ्खादिलेपः** (३)

(वृ. मा. । गलगण्डा. ; व. से. । ग्रन्थ्य.)

लेपनं शङ्खचूर्णेन सह मूलकभस्मना ।
कफार्बुदापहं कुर्याद्ग्रन्थ्यादिषु विशेषतः ॥

शंखचूर्ण और मूलीकी भस्म समान भाग ले कर पानीमें मिला कर लेप करनेसे कफज अर्बुद और ग्रन्थ्यादिका नाश होता है।

(७४४४) **शणमूलादिलेपः**

(यो. र. ; वृ. नि. र. ; व. से. । व्रणशोथा. ; शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

शणमूलकशिग्रूणां फलानि तिलसर्षपाः ।
सक्तवः किण्वमतसी प्रदेहः पाचनः स्मृतः ॥

सनके बीज, मूलीके बीज, सहंजनेके बीज, तिल, सरसों, जौका सत्तू, शराबकी गाद और अलसी समान भाग ले कर पीस कर लेप लगानेसे कच्चा फोड़ा पक जाता है।

(७४४५) **शतधौतसर्पिर्लेपः**

(वृ. नि. र. । विसर्प.)

सर्पिषा शतधौतेन कृतलेपो मुहुर्मुहुः ।
निहन्ति सर्ववीसर्पं पन्नगं पक्षिराडिव ॥

सौ बार धोये हुवे घृतका बार बार लेप करनेसे सर्व प्रकारके विसर्प नष्ट हो जाते हैं।

(७४४६) **शतपुष्पादिलेपः** (१)

(र. र. रसा. खं. । उप. ५)

शतपुष्पा काकमाची तिलाः कृष्णाश्च रोचनम् ।
दिनं भिन्नाम्बुना सर्वं मर्दयेल्लोहपात्रके ॥
तल्लेपं त्रिदिनं कुर्यात्केशानां रञ्जनं भवेत् ॥

सोया, मकोय, काले तिल और गोराचन समान भाग ले कर सबको एक दिन हर्रके काथमें लोहेके खरलमें घोटें।

बालोंपर तीन दिन इसका लेप करनेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(७४४७) **शतपुष्पादिलेपः** (२)

(व. से. । आमवाता. ; वृ. यो. त. । त. ९३)

शतपुष्पा वचा विश्वश्वदंष्ट्रा वरुणत्वचः ।
पुनर्नवा सदेवाह्वशठीमुण्डितिकाः समाः ॥
प्रसारणी च तर्कारी फलञ्च मदनस्य च ।
शुक्तकाञ्जिकपिष्टाश्च सुखोष्णा लेपने हिताः॥

सोया, बच, सोंठ, गोखरु, बरनेकी छाल, पुनर्नवा (बिसखपरा), देवदारु, कचूर, मुण्डी, प्रसारणी, अरनीमूल और मैनफल समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे कांजीमें पीस कर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे आमवात नष्ट होती है।

(७४४८) **शतपुष्पादिलेपः** (३)

(ग. नि. । राजय. ९ ; यो. र. ।)

शतपुष्पा समधुकं कुष्ठं तगरचन्दने ।
आलेपनं स्यात्सघृतं शिरःपार्श्वांसशूलनुत् ॥

सोया, मुलैठी, कूठ, तगर और लाल चन्दनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको घृतमें मिला कर लेप करनेसे शिर, पार्श्व और कंधोंका शूल नष्ट होता है।

(७४४९) **शतपुष्पादिलेपः**

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

शतपुष्पासुरद्रुदिनेशपयो
गदरामठसिन्धुभवं हरति ।
अपि लेपनतोऽस्थिगतं मरुतं
कटिसन्धिभवं त्रिदिनात्सततम् ॥

सोया, देवदारु, आकका दूध, कूठ, हींग, और सेंधा नमक समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें ।

इसे (पानीमें पीसकर) लेप करनेसे तीन दिनमें अस्थि, कटि, सन्धिगत वायुका नाश होता है ।

(७४५०) **शतावर्यादिलेपः**

(वृ. मा. । शिरोरोगा.)

शतावरीं कृष्णतिलान्मधुकं नीलमुत्पलम् ।
दूर्वां पुनर्नवां चापि लेपं साध्ववचारयेत् ॥
शीततोयावसेकांश्च क्षीरसेकांश्च शीतलान् ॥

शतावर, काले तिल, मुलैठी, नीलोत्पल, दूर्वा और पुनर्नवा समान भाग ले कर सबको (पानीमें) पीस कर लेप करनेसे सूर्यावर्तका नाश होता है ।

सूर्यावर्तमें शिर पर शीतल जल और शीतल दूध डालनेसे भी लाभ होता है ।

(७४५१) **शताह्वादिलेपः**

(व. से. । वातरक्ता. ; वृ. नि. र. । वातरक्ता.)

उभे शताह्वे मधुकं बला च
प्रियालकश्चापि कशेरुकश्च ।
घृतं विदारी च सितोपलांश्च
युञ्ज्यात्प्रदेहं पवने सरक्ते ॥

सोया, सौंफ, मुलैठी, खरैटीकी जड़, प्रियाल, कसेरु, विदारीकन्द और मिश्री समान भाग ले कर सबको बारीक पीस कर घीमें मिलाकर लेप करनेसे वातरक्तका नाश होता है ।

(७४५२) **शम्बूकयोगः**

(व. से. । वृद्धय. ; वृ. नि. र. । वृद्धय.)

शम्बूकोदरनिहितं गव्यं सप्ताहमातपे सर्पिः ।
स्थितमपहरति कुरण्डं सैन्धवचूर्णान्वितं लेपात् ॥

शंखके भीतर गायका घी भरकर उसका मुख बन्द करके धूपमें रख दें और सात दिन पश्चात् निकाल कर उसमें (उसके बराबर) सेंधानमकका चूर्ण मिला लें ।

इसका लेप करनेसे अण्डवृद्धिका नाश होता है ।

(७४५३) **शरपुङ्खादियोगः**

(वृ. मा. । व्रणशोथा.)

मधुयुक्ता शरपुङ्खा सर्वव्रणरोपणी कथिता ॥

सरफोंके के चूर्णको शहदमें मिला कर लेप करनेसे समस्त प्रकारके व्रण भर जाते हैं ।

(७४५४) **शरपुङ्खायोगः** (१)

(वै. म. र. । पटल १७)

अपच्यर्बुदयोः पूर्वं रक्तं हृत्वा जलौकसा ।
शरपुङ्खाशिफां लिम्पेज्ज्येष्ठाम्भोभिः सुपेषिताम् ॥

अपची और अर्बुद पर प्रथम जोंक लगवा

कर रक्त निकलवानेके पश्चात् सरफोकेकी जड़को चावलेंके पानीमें पीसकर लेप करना चाहिये ।

(७४५५) शरपुङ्खायोगः (२)

(वै. म. र. । पटल ११)

जठरोपरि परिलिप्तं शरपुङ्खं पातयेद्धि कृमीन् ।

सरफोंके को पीसकर पेट पर लेप करनेसे कृमि निकल जाते हैं ।

(७४५६) शारिवादिलेपः (१)

(भै. र. ; धन्व. । शिरोरोगा.)

शारिवोत्पलकुष्ठानि मधुकं चाम्लपेषितम् ।
सर्पिस्तैलयुतो लेपः सूर्यावर्त्तार्धभेदयोः ॥

शारिवा, नीलोत्पल, कूठ और मुलैठी समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे कांजीमें पीस लें।

इसमें घी और तेल मिला कर मस्तक पर लेप करनेसे सूर्यावर्त और अर्धावभेदका नाश होता है ।

(७४५७) शारिवादिलेपः (२)

(यो. र. । शिरो.)

शारिवाकुष्ठमधुकवचाकृष्णोत्पलैस्तथा ।
लेपः सकाञ्जिकस्नेहः सूर्यावर्तार्धभेदयोः ॥

सारिवा, कूठ, मुलैठी, बच, पीपल और नीलोत्पल समान भाग ले कर सबको कांजीके साथ बारीक पीस कर घी या तेलमें मिला कर लेप करनेसे सूर्यावर्त और अर्धावभेदका नाश होता है ।

(७४५८) शालिपर्ण्यादिलेपः

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

मूलञ्च शालिपर्ण्यास्तु पिष्टं वा तण्डुलाम्बुना ।
नाभिबस्तिभगालेपात्सुखं नारी प्रसूयते ॥

शालपर्णीकी जड़को चावलोंके पानीके साथ पीस कर नाभि, बस्ति और योनिपर लेप करनेसे स्त्रीको कष्ट–रहित प्रसव हो जाता है ।

(७४५९) शाल्मलीकण्टकादिलेपः

(वृ. मा. । क्षुद्र.)

केवलात्पयसा पिष्ट्वा तीक्ष्णान् शाल्मलिकण्टकान्
आलिप्तं त्र्यहमेतेन भवेत्पद्मोपमं मुखम् ॥

सेंभलके कांटोंको दूधमें पीस कर लेप करनेसे ३ दिनमें ही मुख कमल सदृश सुन्दर हो जाता है ।

शाल्वणयोगः

(यो. र. । वातव्या.)

प्र. सं. ५७०० महाशाल्वण योगः देखिये ।

(७४६०) शिखरिलेपः

(वृ. मा. । कुष्ठा.)

शिखरिरसेन सुपिष्टं मूलकबीजं प्रलेपतः सिध्मम्
क्षारेण कदल्या वा रजनीमिश्रेण नाशमेति ॥

चिरचिटे के रसमें मूलीके बीजोंको, अथवा केलेके क्षार और हल्दीको एकत्र पीस कर लेप करनेसे सिध्म नष्ट हो जाता है ।

(७४६१) शिग्रुत्वगादिलेपः

(ग. नि. । श्वयथु. ३३)

शिग्रुत्वङ्नक्तमालार्कदार्व्यारग्वधमूलकैः ।
गोमूत्रयुक्तैः श्वयथुः प्रलेप्तव्यः कफाधिकः ॥

सहंजनेकी छाल, करञ्जकी छाल, आककी जड़, दारुहल्दी और अमलतासकी जड़ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे गोमूत्रमें पीस कर कफ प्रधान शोथ पर लेप करना हितकारी है ।

(७४६२) शिग्रुमूलादिलेपः (१)

(व. से. । अर्बुदा.)

शिग्रुमूलकयोर्बीजं रक्षोघ्नं सरलं यवम् ।
अश्वमारञ्च सम्पिष्य तक्रलेपोऽर्बुदादिजित् ॥

सहंजनेके बीज, मूलीके बीज, सरसों, चीरका काष्ठ, जौ और कनेरकी जड़ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे तक्रमें पीस कर लेप करनेसे अर्बुदादिका नाश होता है ।

(७४६३) शिग्रुमूलादिलेपः (२)

(यो. र. । स्नायु. ; यो. त. । त. ६७; वृ. यो. त. । त. १२४)

शिग्रुमूलदलैः पिष्टैः काञ्जिकेन ससैन्धवैः ।
लेपः स्नायुकरोगाणां शमनः परमः स्मृतः ॥

सहंजनेकी छाल और पत्ते तथा सेंधा नमक समान भाग ले कर सबको कांजीमें पीस कर लेप करनेसे स्नायुक (नहरवे) का नाश होता है ।

(७४६४) शिग्र्वादिलेपः (१)

(भा. प्र. म. खं. २ । वातरक्ता.)

शिग्रुः सवरुणकल्को धान्याम्लेनानिलार्ति-
जिल्लेपात् ।
भवति न वेति विकल्पो न विधेयः सिद्धयो-
गेऽस्मिन् ॥

सहंजनेकी छाल और बरनेकी छालको कांजीमें पीस कर लेप करनेसे वातरक्तकी पीड़ा नष्ट हो जाती है ।

यह एक सिद्ध योग है । इसके विषयमें सन्देह न करना चाहिये ।

(७४६५) शिग्र्वादि लेपः (२)

(भा. प्र. म. खं. २ । कर्णक सन्नि.)

शिग्रुराजिकयोः कल्कं कर्णमूले प्रलेपयेत् ।
कर्णमूलभवः शोथस्तेन लेपेन शाम्यति ॥

सहंजनेकी छाल और राईको पानीमें पीस कर लेप करनेसे कर्णमूलकी सूजन नष्ट होती है ।

(७४६६) शिग्र्वादिलेपः (३)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

शिग्रुशेफालिकैरण्डयवगोधूममुद्गकैः ।
सुखोष्णो बहलो लेपः प्रयोज्यो वातविद्रधौ ॥

सहंजनेकी छाल, हार सिंगारकी छाल, अरण्डमूल, जौ, गेहूं और मूंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे पानीमें पीस कर मन्दोष्ण करके गाढ़ा गाढ़ा लेप करनेसे वातज विद्रधि नष्ट होती है ।

(७४६७) शिरीषबीजादिलेपः

(ग. नि. । अर्शो. ४)

शिरीषबीजसम्मिश्रां लाङ्गलीं परिपेषिताम् ।
सम्यगालेपने दद्यादर्शसामुपघातिनीम् ॥

सिरसके बीज और कलियारीकी जड़को पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे अर्शका नाश होता है ।

(७४६८) शिरीषबीजाद्यं लेपत्रयम्

(ग. नि. । अर्शो. ४)

शिरीषबीजकुष्ठार्कक्षीरपिप्पलिसैन्धवैः ।
लाङ्गलीमूलगोमूत्रस्वर्जिकादन्तिचित्रकैः ॥
चरणायुधविड्गुञ्जानिशाकृष्णाभिरुत्तमम् ।
लेपत्रयमिदं योज्यं शीघ्रमर्शोविनाशकृत् ॥

(१) सिरसके बीज, कूठ, आकका दूध, पीपल और सेंधा नमक समान भाग ले कर, सबको एकत्र पीस लें ।

(२) कलियारीकी जड़, सज्जी, दन्तीमूल और चीता समान भाग ले कर सबको गोमूत्रके साथ पीस लें ।

(३) मुरगेकी बीट (विष्ठा), गुञ्जा (चौंटली) हल्दी और पीपल समान भाग ले कर सबको पानीके साथ बारीक पीस कर लेप बनावें ।

ये तीनों लेप अर्शको शीघ्र ही नष्ट कर देते हैं ।

(७४६९) शिरीषवल्कलादिलेपः

(वृ. मा. । विस्फो.)

शुकतरुनतमांसी रजनी पद्मं च तुल्यानि ।
पिष्टानि शीततोयेन स्याल्लेपः सर्वविस्फोटे ॥

सिरसकी छाल, तगर, जटामांसी, हल्दी और कमल समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें ।

इसे ठण्डे पानीमें पीस कर लेप करनेसे समस्त विस्फोटक नष्ट होते हैं ।

(७४७०) शिरीषादिलेपः (१)

(यो. र. । विषा.)

मूलत्वक्पत्रपुष्पाणि बीजं चेति शिरीषतः ।
गवां मूत्रेण सम्पिष्टं लेपाद्विषहरं परम् ॥

सिरसकी जड़, छाल, पत्र, पुष्प और बीजोंको गोमूत्र में पीस कर लेप करनेसे विष नष्ट होता है ।

(७४७१) शिरीषादिलेपः (२)

(वृ. मा. ; व. से. । विस्फोटा.)

शिरीषोदुम्बरौ जम्बूः सेकालेपनयोर्हिताः ।
श्लेष्मातकत्वचो वाऽपि प्रलेपाश्च्योतने हिताः॥

सिरसकी छाल, गूलरकी छाल और जामनकी छालका लेप करने तथा इनके काथका अवसेक (सिंचन) करनेसे या लिहसौड़ेकी छालका लेप करने और उसके काथको आंखमें डालनेसे विस्फोटक में लाभ होता है ।

(७४७२) **शिरीषादिलेपः** (३)

(व. से. । विषा.)

शैरीषस्य च मूलं वा सक्षौद्रं तण्डुलाम्बुना ॥
अङ्कोटस्य वा मूलं बस्तमूत्रेण कल्कितम् ।
पानालेपनयोरुक्तं सर्वाखुविषनाशनम् ॥

सिरसकी जड़को चावलोंके पानीमें पीस कर शहदमें मिला कर लेप करनेसे अथवा अङ्कोटकी जड़को बकरेके मूत्रमें पीस कर लेप करनेसे एवं इन ही दोनों योगोंको पिलानेसे हर प्रकारका आखु-विष (चूहेका विष) नष्ट होता है ।

(७४७३) **शिरीषादिलेपः** (४)

(वृ. मा. ; व. से. । विस्फोटा. ; ग. नि. । विस्फो. ४०)

शिरीषोशीरनागाह्वहिंस्राभिर्लेपनाद् द्रुतम् ।
विसर्पविषविस्फोटाः प्रशाम्यन्ति न संशयः ॥

सिरसकी छाल, खस, नागकेसर और जटामांसी समान भाग ले कर, (पानीके साथ) बारीक पीस कर लेप करनेसे विसर्प, विष विकार और विस्फोटक अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

(७४७४) **शिरीषादिलेपः** (५)

(वृ. मा. । मसूरिका.)

शिरीषोदुम्बराश्वत्थशेलुन्यग्रोधवल्कलैः ।
प्रलेपः सघृतः शीघ्रं व्रणवीसर्पदाहहा ॥

सिरसकी छाल, गूलरकी छाल, पीपल वृक्षकी छाल, लिहसोड़ेकी छाल, बड़की छाल और कुड़ेकी छाल समान भाग ले कर बारीक पीस कर घीमें मिला कर लेप करनेसे व्रण, वीसर्प और दाहका शीघ्रही नाश हो जाता है ।

(७४७५) **शिरीषाष्टकः**

(ग. नि. । मसूरिका. ४१)

निशाद्वयोशीरशिरीषमुस्तकैः
सरोध्रभद्रश्रियनागकेसरैः ।
संस्वेदविस्फोटविसर्पकुष्ठ-
दौर्गन्ध्यरोमान्तिहरः प्रदेहः ॥

हल्दी, दारुहल्दी, खस, सिरसकी छाल, नागरमोथा, लोध, सफेद चन्दन और नागकेसर समान भाग ले कर लेप बनावें ।

यह लेप मसूरिकामें हितकारी है और प्रस्वेद, विस्फोटक, विसर्प, कुष्ठ तथा दुर्गन्ध को नष्ट करता है ।

(७४७६) **शिलापुष्पादिलेप**

(रा. मा. । शिरो. १)

शिलाकुसुमकर्चूरनिशाश्यामा नतैः समैः ।
पलितानां भवेत्कार्ष्ण्यं बहुशो गुडधूपितैः ॥

छारछरीला, कचूर, हल्दी, श्यामालता और तगर समान भाग ले कर सबको बारीक पीस कर बालों पर लेप करने और उन्हें बार बार गुड़की धूप (धुवां) देनेसे बाल काले हो जाते हैं ।

(७४७७) **शुण्ठयादिलेपः** (१)

(वै. म. र. । पटल १६)

स्वरसेन काकमाच्याः पिष्टा शुण्ठी जयेत् कोठान्
मुनितरुदलरसपिष्टा सा च करीषस्य वा स्वरसे॥

सोंठको मकोय या अगस्तिके पत्तोंके अथवा गोबरके रसमें पीस कर लेप करनेसे कोठ (चकते) नष्ट होते हैं ।

(७४७८) शुण्ठयादिलेपः (२)

(वै. मृ. । अलं ४)

शुण्ठीरुबुकमूलाभ्यां प्रलेपो भगशूलनुत् ।
तथा सङ्कोचनं चूर्णं मृत्स्ना मायफलोद्भवम् ॥

सोंठ और अरण्डकी जड़को (पानीमें) पीसकर लेप करनेसे योनिशूल नष्ट होता है ।

माजूफल और सौराष्ट्र मृत्तिकाको पीस कर लेप करनेसे योनि संकुचित हो जाती है ।

(७४७९) शुण्ठयादिलेपः (३)

(वै. म. र. । पटल १२)

सीमन्तिनीनां पयसा प्रलिम्पे-
च्छुण्ठीं शताह्वां लिकुचोदकेन ।
ते जानुबाहुप्रभवानिलघ्ने
स्यातां क्रमव्युत्क्रमलेपिते वै ॥

सोंटको स्त्रीके दूधमें पीस कर या सोयेको लिकुच (बढल) के रसमें पीस कर लेप करनेसे जानु और बाहूकी वातज पीड़ा नष्ट होती है ।

(७४८०) शुण्ठयादिलेपः (४)

(यो. र. । शिरो. ; शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

शुण्ठीकुष्ठप्रपुन्नाटदेवकाष्ठैः समाहिषैः ।
मूत्रपिष्टैः सुखोष्णैश्च लेपः श्लेष्मशिरोर्तिनुत् ॥

सोंठ, कूठ, पंमाड़ और देवदारु समान भाग ले कर सबको पीस कर भैंसके मूत्रमें मिला कर, मन्दोष्ण करके लेप करनेसे कफज शिर पीड़ा नष्ट होती है ।

(७४८१) शृङ्गवेरादिलेपः

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

शृङ्गवेरं विडङ्गानि कुष्ठं तगरमेव च ।
पारपिष्टानि मूत्रेण दद्रुघ्नानि प्रलेपनात् ॥

अदरक (सोंठ), बायबिड़ंग, कूठ और तगर समान भाग ले कर सबका बारीक चूर्ण करें ।

इसे गोमूत्रमें पीस कर लेप करनेसे दाद नष्ट होता है ।

(७४८२) शैलेयादिलेपः

(वृ. नि. र. । त्वग्दो.)

शैलेयकम्पिल्लकयष्टिसाह्व
सौराष्ट्रिकासर्जरसोत्पलानि ।
शिला च चूर्णो नवनीतयुक्तः
कुष्ठे स्रवत्यभ्यधिकः प्रदिष्टः ॥

छारछरीला, कमीला, मुलैठी, सौराष्ट्री मृत्तिका, राल, नीलोत्पल और मनसिल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे नवनीत (मक्खन) में मिलाकर लेप करनेसे स्राव युक्त कुष्ठ नष्ट होता है ।

(७४८३) शोभाञ्जनादिलेपः

(ग. नि. । ग्रन्थ्य. १)

शोभाञ्जनं देवदारु काञ्जिकेन तु पेषयेत् ।
कोष्णप्रलेपतो हन्यादपचीमपि निश्चयम् ॥

सहंजनेकी छाल और देवदारुके चूर्णको काञ्जीमें पीस कर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे अपची (गण्डमाला भेद) का अवश्य नाश हो जाता है ।

(७४८४) श्यामादिलेपः

(ग. नि. । शिरो. १ ; व. से. । शिरो.)

श्यामानागरसम्मिश्राच्छ्वेतस्यन्दनतत्क्षणात् ।
नाशं याति त्रिदोषोत्था शिरोर्तिः संप्रलेपनात् ॥

श्यामा (अनन्तमूल), सोंठ और सफेद कोयलको पीस कर लेप करनेसे त्रिदोषज शिर पीड़ा तुरन्त शान्त हा जाती है ।

(७४८५) श्वदंष्ट्रादिलेपः

(यो. र. ; वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

पिष्ट्वा श्वदंष्ट्रा फलमूलिका-
त्रिडैर्वारुबीजानि सकाञ्जिकानि ।
आलिप्यमानानि समानि बस्तौ
मूत्रस्य निष्यन्दकराणि सद्यः ॥

गोखरुके फल, मूलीके बीज, बायबिडंग और खीरेके बीज समान भाग ले कर सबको काञ्जीमें पीस कर बस्ति प्रदेश पर लेप करनेसे मूत्र खुल जाता है ।

(७४८६) श्वानविषहरो लेपः

(यो. चि. म. । अ. ३)

गुडतैलार्कदुग्धैश्च लेपः श्वानविषं हरेत् ।

गुड, तेल और आकके दूधको एकत्र मिलाकर लेप करनेसे श्वान (कुत्ते)का विष नष्ट हो जाता है ।

(७४८७) श्वित्रनाशकलेपः

(सु. सं. । चि. अ. ९)

तुत्थालकटुकाव्योषसिंहार्कहयमारकाः ।
कुष्ठावल्गुजभल्लातक्षीरिणीसर्षपाःस्नुही ॥
निम्बकारिष्टपीलूनां पत्राण्यारग्वधस्य वा ।
बीजं विडङ्गाश्वहन्त्रो हरिद्रे बृहतीद्वयम् ॥
आभ्यां श्वित्राणि योगाभ्यां लेपान्नश्यन्त्यशेषतः

(१) नीलाथोथा, हरताल, कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल, लाल सहंजनेकी छाल, आककी जड़, कनेरकी जड, कूठ, बाबची, भिलावा, खिरनी, सरसों और सेहुंड (सेंड) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

(२) लोध, नीमके पत्ते, पीलुके पत्ते, अमलतासके पत्ते, बायविडंग, कनेरके बीज, हल्दी, छोटी कटेली और बड़ी कटेली समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इन दोनोंमें से किसीको भी पानीमें पीस कर लेप करनेसे श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है ।

(७४८८) श्वित्रहरलेपः

(र. चि. म. । स्त. ४)

कलिहारीजटां घृष्ट्वा स्निग्धं चन्दनवत्सुधीः ।
लेपनं श्वित्रकुष्ठेषु कुर्यात्स्फोटो दिनत्रये ॥
पलाशस्य ततः पत्रं दद्याच्च तदनन्तरम् ।
मुञ्चन्ति पाण्डुरं वारि स्फोटकाश्च तदङ्गजाः ॥
दूरतः क्षालयेद्वारि यथा स्पर्शो न विद्यते ।
शरीरेऽन्यत्र नो भूयाद्यथा कार्यं प्रयत्नतः ॥

कलियारीकी जड़को चन्दनकी तरह घिसकर सफेद कुष्ठ पर लेप करदें । इससे तीसरे दिन उस जगह छाले पड़ जायंगे, तब उस पर ढाकका पत्ता बांध दें । इससे उन छालोंसे पीला पानी निकलने लगेगा । उस पानीको इस प्रकार साफ कर देना चाहिये कि जिससे अन्यत्र न लगने पावे ।

(छालेसे पानी निकल जानेके पश्चात् वहां पर मक्खन आदि लगा देना चाहिये ।)

इति शकारादिलेपप्रकरणम्.

अथ शकारादिधूपप्रकरणम्

(७४८९) **शरपुङ्खादिधूपः**

(वैद्य. । वि. १०)

शरपुङ्खाजटाधूपदानात्कासः पलायते ।
कान्तावक्षोजसंस्पर्शाद्यमिनां नियमो यथा ॥

सरफोंकेकी जड़की धूप देनेसे कास इस प्रकार नष्ट हो जाती है जिस प्रकार रमणीके स्तनोंका स्पर्श करनेसे व्रतधारियोंका नियम।

(७४९०) **शिग्रुपल्लवादिधूपः**

(व. से. । नेत्ररोगा.)

शिग्रुपल्लवनिर्यासः सुपिष्टस्ताम्रसम्पुटे ।
घृतेन धूपितो हन्ति शोथघर्षाश्रुवेदनः ॥

सहंजनेके पत्तोंके रसको ताम्रपात्रमें डालकर तांबेकी मूसलीसे घोटें और उसे घीमें मिलालें। इसकी धूप देनेसे आंखोंकी पीड़ा, अश्रुस्राव, किरकिराहट और शोथका नाश होता है।

(७४९१) **शिरीषादिधूपः**

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शिरीषबीजजम्ब्वाम्रकपित्थार्जुनपल्लवैः ।
पुराख्यशल्लकैर्धूपः सर्वज्वरग्रहापहः ॥

सिरसके बीज, जामनके पत्ते, आमके पत्ते, कैथके पत्ते, अर्जुनके पत्ते, गूगल और शल्लकी वृक्षका गोंद समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर धूप देनेसे समस्त ज्वर और ग्रहदोषोंका नाश होता है।

इति शकारादिधूपप्रकरणम्

अथ शकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(७४९२) **शङ्खनाभ्याद्या वर्तिः**

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

शङ्खनाभी वचा पथ्या मरिचं कुष्ठमक्षजा ।
भज्जैताः समभागेन संपिष्टा नरवारिणा ॥
वटिकां कारयेत्तेन छायाशुष्कां तदञ्जनात् ।
तिमिरं पिच्चिटं पुष्पं पटलं संप्रणश्यति ॥

शंखनाभि, बच, हर्र, कालीमिर्च, कूठ और बहेड़ेकी मींगी; इनके समान भाग चूर्णको मनुष्यके मूत्रमें घोटकर गोलियां बनावें और छायामें सुखा लें।

इन्हें आंखमें आंजनेसे तिमिर, पिच्चिट, फूला और पटल नामक नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(७४९३) **शङ्खपुष्पादिवटी**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४८)

शङ्खपुष्पी तथा रोध्रं शङ्खनाभिर्मनःशिला ।
काञ्जिकेन तु सम्पिष्टा छायाशुष्का भिषग्वर॥

वातिके काञ्जिकेनापि पैत्तिके पयसा हिता।
श्लेष्मले मूत्रसंयुक्ता पुष्पस्याञ्जनके हिता ॥
भृङ्गराजरसेनापि त्रिदोषशमने हिता ॥

शंखपुष्पी, लोध, शंखनाभि और मनसिल; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको कांजीमें पीस कर गोलियां बनावें और छायामें सुखा लें।

इन्हें आंखमें लगानेसे नेत्र पुष्प (फूला) नष्ट होता है।

बातदोष हो तो इन्हें कांजीमें घिसकर, पित्तदोष हो तो दूधमें घिसकर, कफ हो तो गोमूत्रमें घिसकर और त्रिदोषमें भंगरेके रसमें घिसकर आंखमें लगाना चाहिये।

(७४९४) शङ्खादिवटिका

(भ्न्व. । चक्षुरो.)

चतुर्भागानि शङ्खस्य तदर्द्धेन मनःशिला ।
सैन्धवश्च तदर्द्धेन एतत्पिष्टोदकेन च ॥
छायाशुष्कां तु वटिकां कृत्वा नयनमञ्जयेत् ॥
तिमिरं पटलं हन्ति पिच्चटस्य महौषधम् ॥

शंखचूर्ण ४ भाग, मनसिल २ भाग, और सेंधा नमक १ भाग लेकर सबको पानीके साथ घोटकर गोलियां बनावें और छायामें सुखावें।

इन्हें आंखोंमें आंजनेसे तिमिर, और पटलका नाश होता है।

(७४९५) शङ्खादिवटी

(यो. र.; वृ. नि. र. । नेत्ररोगा.)

शङ्खस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धेन मनःशिला ।
मनः शिलार्धं मरिचं मरिचार्धेन पिप्पली ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य गुटिकां कारयेत्ततः ।
वारिणा तिमिरं हन्ति चार्बुदं हन्ति मस्तुना ॥
पिच्चटं मधुना हन्ति स्त्रीक्षीरेण तथाऽर्जुनम् ।

शंखचूर्ण ४ भाग, मनसिल २ भाग, कालीमिर्च १ भाग, और पीपल आधा भाग लेकर सबको पानीके साथ पीसकर गोलियां बनावें।

इन्हें पानीमें घिसकर आंखमें लगानेसे तिमिर; दही के पानीमें घिसकर लगानेसे नेत्रार्बुद; शहदमें घिसकर लगानेसे पिच्चट और स्त्री के दूधमें घिसकर लगानेसे अर्जुन नामक नेत्ररोगका नाश होता है।

(७४९६) शङ्खाद्यञ्जनम् (१)

(व. से. । नेत्ररोग.)

नदीजशङ्खत्रिकटून्यथाञ्जनं
मनःशिला द्वे च निशे गवां शकृत् ।
सचन्दनेयं गुटिकाथ चाञ्जने
प्रशस्यते रात्रिदिनेष्वपश्यताम् ॥

शंख, सोंठ, मिर्च, पीपल; सुरमा, मनसिल, हल्दी, दारुहल्दी, गायका गोबर और लालचन्दन; इनका चूर्ण समान भाग लेकर पानीमें घोटकर गोलियां बना लें।

इन्हें आंखमें आंजनेसे नक्तान्ध्य (रतौंधा) और दिवान्ध्य नामक नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(७४९७) शङ्खाद्यञ्जनम् (२)

(वा. भ. । उ. अ. १३)

शङ्खप्रियङ्गुनेपालीकटुत्रिकफलत्रिकैः ।
दृग्वैमल्याय विमला वर्तिः स्यात्कोकिला पुनः
कृष्णलोहरजो व्योषसैन्धवत्रिफलाञ्जनैः ॥

(१) शंख, फूलप्रियंगु, मनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला; इनके समान भाग चूर्णको पानीमें पीस कर वर्ति बनावें ।

इसे आंखमें आंजनेसे नेत्र स्वच्छ हो जाते हैं।

(२) लोह चूर्ण, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधा-नमक, हर्र, बहेड़ा, आमला और सुरमा; इनके समान भाग चूर्णको पानीमें घोट कर वर्ति बनावें ।

इसका नाम '**कोकिलावर्ति**' है। यह भी नेत्रोंको स्वच्छ करती है।

(७४९८) शङ्खाद्यञ्जनम् (३) (श्यामावर्तिः)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

शङ्खस्रोतोऽञ्जनं लाक्षा मरिचं समनःशिलाम् ।
यवान्युदधिजं फेनं ताम्रचूर्णं समाक्षिकम् ॥
श्यामावर्तिर्लिखत्येव शुक्रकाचार्मपिष्टकम् ॥

शंख चूर्ण, स्रोतोञ्जन (सुरमा), लाख, काली मिर्च, मनसिल, अजवायन, समुद्र फेन और ताम्र-चूर्ण (या भस्म) समान भाग ले कर सबको शहदमें घोट कर वर्ति बनावें ।

यह वर्ति फूले, काच, अर्म और पिष्टकको नष्ट करती है।

(७४९९) शम्बूकाद्यञ्जनम् (१)

(वृ. मा. । नेत्र. ; यो. र. । नेत्ररो.)

शङ्खः क्षौद्रेण संयुक्तः कतकः सैन्धवेन वा ।
सितयाऽर्णवफेनो वा पृथगञ्जनमर्जुने ॥

शंखचूर्णको शहदमें मिला कर आंखमें आंजनेसे, या निर्मलीके फल और सेंधा नमकका बारीक चूर्ण करके आंजनेसे अथवा समुद्र फेन और मिश्रीका अंजन बना कर लगानेसे अर्जुन नामक नेत्र रोग नष्ट होता है।

(७५००) शम्बूकाद्यञ्जनम् (२)

(र. र. । नेत्र.)

शम्बूकं च वराटं वा दग्धं चैतद्विचूर्णयेत् ।
अञ्जनं नवनीतेन हन्ति पुष्पं चिरन्तनम् ॥

शंख भस्म या कौड़ी भस्मको नवनीतमें मिला कर आंखमें आंजनेसे पुराना फूला नष्ट हो जाता है।

(७५०१) शर्कराद्यञ्जनम्

(वृ. मा. । नेत्र.)

सितामधुककट्वङ्गमस्तुक्षौद्राम्लसैन्धवैः ।
पूरणं हन्ति लौहित्यं रक्तराजीमथार्जुनम् ॥

मिसरी, मुलैठी, अरलुकी छाल और सेंधा नमक; इनके समान भाग चूर्णमें दहीका पानी, शहद और कांजी मिला कर आंखमें डालनेसे आंखोंकी लाली, लाल रेखा और अर्जुनका नाश होता है।

(७५०२) शशिकलावर्ती

(वृ. नि. र. । नेत्र. ; र. चं. ; यो. र. । नेत्र. ; वृ. यो. त. । त. १३१)

रसकजलजनाभिः पौरतुर्थं समांशं
वसनगलितमेतन्निम्बुनीरेण पिष्टम् ।
हरति शशिकलैतद्वर्ति संयोजिताक्ष्णो-
स्तिमिरकुसुमकण्डूस्रावरोगार्मपिल्लान् ॥

खपरिया, शंख नाभि, गूगल और नीलाथोथा समान भाग ले कर अत्यन्त बारीक पीसें और उसे नीबूके रसमें घोट कर बत्तियां बना लें।

इन्हें आंखोंमें आंजनेसे तिमिर, फूला, आंखोंकी खाज, पानी बहना, अर्म और पिल्ल नानक नेत्र रोगोंका नाश होता है।

(७५०३) **शालिपर्ण्यादियोगः**

(व. से. । नेत्र रोगा.)

ताम्रपात्रे गुहामूलं सिन्धूत्थं मरिचान्वितम् ।
आरनालेन सङ्घृष्टमञ्जनं पिल्लनाशनम् ॥

शा . र्णीकी जड़, सेंधा नमक और मरिच; इनके समान भाग मिश्रित बारीक चूर्णको ताम्र पात्रमें आरनालके साथ खरल करके अंजन लगानेसे पिल्लरोग नष्ट होता है।

(७५०४) **शिग्रुपत्रयोगः**

(ग. नि. । नेत्र. ३ ; व. से. । नेत्ररोगा.)

वातपित्तकफसन्निपातजां
नेत्रयोर्बहुविधामपि व्यथाम् ।
शीघ्रमेव जयति प्रयोजितः
शिग्रुपल्लवरसः समाक्षिकः ॥

सहंजनेके पत्तोंके रसमें शहद मिला कर आंखमें आंजनेसे वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज अनेक प्रकारकी नेत्र पीड़ा शीघ्रही नष्ट हो जाती है।

(७५०५) **शिरीषबीजाद्यञ्जनम्**

(वृ. मा. । नेत्र रोगा. ; व. से. ; ग. नि. । नेत्र. ३)

शिरीषबीजमरिचपिप्पलीसैन्धवैरपि ।
शुक्रस्य घर्षणं कार्यमथवा सैन्धवेन च ॥

सिरसके बीज, काली मिर्च, पीपल और सेंधा नमक; इनके बारीक चूर्णको एकत्र मिलाकर अंजन बनावें।

इससे अथवा केवल सेंधा नमकके चूर्णसे आंखके फूलेको घिसना चाहिये।

(७५०६) **शिरीषाद्यञ्जनम्**

(ग. नि. । ज्वरा. १ ; व. से. । ज्वरा. ; वृ. यो. त. । त. ५९; भै. र.)

शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैन्धवैः ।
अञ्जनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥

सिरसके बीज, पीपल, कालीमिर्च, सेंधानमक, मनसिल और बचका बारीक चूर्ण तथा ल्हसन समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर गोमूत्रमें खरल करके अंजन बनावें।

इसे लगानेसे सन्निपातकी मूर्छा नष्ट हो जाती है।

(७५०७) **शिरीषाद्यं नावनाञ्जनम्**

(ग. नि. । उन्मादा. २ , यो. र. । उन्मादा.)

शिरीषो मधुकं हिङ्गु लशुनं नागरं वचा ।
कुष्ठं च बस्तमूत्रेण पिष्टं स्यान्नावनाञ्जनम् ॥

सिरसके बीज, मुलैठी, हींग, ल्हसन, सोंठ, बच और कूठ समान भाग ले कर सबको बकरेके मूत्रमें घोट कर अंजन बनावें।

इसकी नस्य देने तथा इसीका अञ्जन लगानेसे उन्माद रोग नष्ट होता है।

(७५०८) **शिलाञ्जनम्**

(यो. र. । नेत्र रोगा.)

शिलासैन्धवकासीसशङ्खव्योषरसाञ्जनैः ।
सक्षौद्रैः काचशुक्रार्मतिमिरघ्नी रसक्रिया ॥

मनसिल, सेंधा नमक, कसीस, शंख, सोंठ, मिर्च, पीपल और रसौत समान भाग ले कर सबका बारीक चूर्ण करके शहदमें मिला लें।

इसका अंजन लगानेसे काच, शुक्र, अर्म और तिमिरका नाश होता है ।

(७५०९) **शिवावर्तिः**

(ग. नि. । अजीर्णा. ६)

भल्लातकं त्रिकटुकं भूतीकं क्षवको वचा ।
फणिज्जो लशुनं कुष्ठं करञ्जस्य फलानि च ॥
वर्तिमेभिः शिवां नाम बस्तमूत्रेण पेषयेत् ।
विषूच्यामञ्जनमिदं सद्यो वेगं नियच्छति ॥

शुद्ध भिलावा, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, नकछिकनी, वच, बन तुलसीके पत्र, लहसन, कूठ और करञ्जके फल समान भाग ले कर सबको बकरेके मूत्रमें पीस कर वर्तियां बनावें ।

इनका अञ्जन लगानेसे विसूचिकाका वेग शीघ्रही शान्त हो जाता है ।

(७५१०) **शीशशलाकाऽञ्जनम्**

(वृ. मा. । नेत्र. ; व. से.)

त्रिफलाभृङ्गमहौषधमध्वाज्यच्छागपयसि
गोमूत्रे ।
नागं सप्तनिषिक्तं करोति गरुडोपमं चक्षुः ॥

सीसेको पिघला पिघला कर त्रिफलाके काथ, भंगरेके रस, सोंठके काथ, शहद, घी, बकरीके दूध और गोमूत्रमें सात सात बार बुझावें और फिर उसकी सलाई बनवा लें ।

इसे प्रातः सायं आंखमें फेरनेसे नेत्रज्योति बढ़ती है ।

(७५११) **शुक्लारिवर्तिः**

(र. र. स. । उ. अ. २३)

शम्बूकं पारदं नागं कांस्यचूर्णं रसाञ्जनम् ।
समं सर्वमिदं चिञ्चादलद्रावेण मर्दयेत् ॥
ताम्रपात्रगतां वर्तिं छायाशुष्कां तु कारयेत् ।
शुक्लार्मं तिमिरं पिल्लं हन्ति सा मधुनाञ्जिता ॥

शंख भस्म, पारद, सीसा, कांसीका चूर्ण और रसौत समान भाग ले कर प्रथम पारेमें सीसेको मिला कर घोटें और दोनोंके एक जीव हो जाने पर उसमें कांसेका चूर्ण मिला कर घोटें; जब वह भी मिल जाय तो अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर सबको ताम्रके खरलमें इमलीके पत्तोंके रसमें घोटें और बत्तियां बना कर छायामें सुखा लें ।

इन्हें शहदमें घिस कर आंखमें लगानेसे शुक्ल (फूला), अर्म, तिमिर और पिल्लका नाश होता है ।

(७५१२) **श्रीपर्ण्याद्यञ्जनम्**

(यो. र. । नेत्र.)

श्रीपर्णी पाटला धात्री धातकी तिल्वकार्जुनात् ।
पुष्पाण्यथ बृहत्याश्च बिम्बीलोध्रं च तुल्यशः ॥

मञ्जिष्ठं चापि मधुना पिष्ट्वाऽपीक्षुरसेन वा ।
रुधिरस्यन्दशान्त्यर्थमेतदञ्जनमिष्यते ॥

शालपर्णी, पाढल छाल, आमला, धायके फूल, लोध, अर्जुन, कटेलीके फूल, कन्दूरीकी जड़, पठानी लोध और मजीठ; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहद या ईखके रसमें घोट कर आंखमें लगानेसे रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है ।

इति शकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

अथ शकारादिनस्यप्रकरणम्

(७५१३) शर्करादिनस्यम् (१)

(वृ. मा. । हिक्का.)

शर्करा भृङ्गवेरं च गैरिकं मूत्रभावितम् ।
गुडार्द्रकं च दातव्यं हिक्काघ्नं नावनत्रयम् ॥

(१) खांड और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

(२) गेरुको गोमूत्रकी भावना देकर सुखा दें ।

(३) गुड़ और अदरक (सोंठ) को पीसकर बारीक चूर्ण कर लें ।

ये तीनों नस्य हिचकीको नष्ट करती हैं ।

(७५१४) शर्करादिनस्यम् (२)

(वृ. नि. र. । शिरो.; वृ. मा.)

सशर्करं कुङ्कुममाज्यभृष्टं
नस्यं विधेयं पवनासृगुत्थे ।
भ्रूशङ्खकर्णाक्षिशिरोऽर्धशूले
दिनाभिवृद्धिप्रभवे च रोगे ॥

खांड और घीमें भुनी हुई केसर समान भाग लेकर एकत्र खरल कर लें ।

इसकी नस्य लेनेसे वातज तथा रक्तज भ्रूशूल, शंख प्रदेश (कनपटि)का शूल, कर्णशूल, नेत्रशूल, आधासीसी और सूर्यके साथ साथ बढ़ने वाला शूल (सूर्यावर्त) नष्ट होता है ।

(७५१५) शालिपर्ण्यादिनस्यम्

(व. से. । शिरो.)

शालिपर्ण्यम्भसा पिष्टा नस्यमर्द्धविभेदजित् ।
चक्रमर्दकबीजैर्वा लेपः काञ्जिकपेषितः ॥

शालपर्णीको पानीमें पीसकर नस्य देनेसे अर्द्धावभेद (आधासीसी)का नाश होता है ।

पमाड़के बीजोंको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे भी आधासीसीका नाश हो जाता है ।

(७५१६) शिग्रुमूलाद्यं नस्यम्

(ग. नि. । ज्वरा. १; हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

शोभाञ्जनकमूलस्य रसं च सुरसान्वितम् ।
विसञ्ज्ञितानां नस्यं स्याद्बोधनं चाशु रोगिणाम् ॥

सहंजनेकी जड़का रस और तुलसीके पत्तोंका रस (या चूर्ण) एकत्र मिलाकर नस्य देनेसे सन्निपातकी मूर्च्छा जाती रहती है ।

(७५१७) शिरीषपुष्पनस्यम्

(रा. मा. (विषा. २८)

शिरीषपुष्पैः कुलिशद्रुमस्य
क्षीरेणपिष्टं कृतनावनानाम् ।
विषं विनाशं नयति क्षणेन
मण्डूकदंशप्रभवं नराणाम् ॥

सिरसके फूलोंको थूहर (सेंड) के दूधमें घोट कर उसकी नस्य देनेसे मण्डूक (मेंढक) का विष तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(७५१८) शिरीषपुष्पादिनस्यम्

(व. से. । ज्वरा.)

कल्कः शिरीषपुष्पस्य रजनीद्वयसंयुतः ।
नस्यं सर्पिः समायोगाज्ज्वरं चातुर्थिकं जयेत् ॥

सिरसके फूलोंके कल्कमें हल्दी और दारुहल्दी का चूर्ण मिलाकर उसे घीमें मिलाकर नस्य लेनेसे चातुर्थिक ज्वर नष्ट होता है ।

(७५१९) शिरीषादिनस्यम्

(ग. नि. । ज्वरा. १)

शिरीषनिम्बपत्राणि हिङ्गु सर्पस्य कञ्चुकी ।
समांशचूर्णमेतेषां वारिपिष्टं हि नस्यतः ॥
ग्रहभूतपिशाचानां शाकिनीराक्षसामपि ।
दोषं हन्ति ज्वरं तीव्रं तरणिस्तिमिरं यथा ॥

सिरसके पत्ते, नीमके पत्ते, हींग और सांपकी कांचली बराबर बराबर लेकर चूर्ण बनावें । इसे पानीमें पीसकर नस्य लेनेसे ग्रह, भूत, पिशाच, शाकिनी और राक्षसोंके उपद्रव नष्ट होते हैं तथा तीव्र ज्वर उतर जाता है ।

(७५२०) शिरीषादियोगः

(यो. र. । शिरोरोगा.; वृ. मा. । शिरो.)

शिरीषमूलकफलैरवपीडं प्रयोजयेत् ।
अवपीडो हितो वा स्याद्वचापिप्पलिभिः कृतः ॥

सिरसके फूल, मूली और मैनफलको पीसकर कपड़ेसे निचोड़कर रस निकालें ।

यह रस नाकमें टपकानेसे अर्धावभेदक (आधा सीसी) का नाश होता है ।

बच और पीपलको पानीके साथ पीसकर कपड़ेसे निचोड़कर रस निकालें ।

इसकी नस्य लेनेसे भी आधासीसी नष्ट हो जाती है ।

(७५२१) शिरोर्तिहररसः (नस्यम्)

(र. चं. । ज्वरा.)

शुण्ठीमरिचपिप्पल्याष्टङ्कद्वयमितं पृथक् ।
विषं टङ्कमितं चैव षट्टङ्कं भस्म कल्पयेत् ॥
पिप्पलस्य त्वचः खल्वे दृढं सर्वं विमर्दयेत् ।
गुञ्जामात्रेण नस्येन शिरोर्तिं नाशयेत्क्षणात् ॥

सोंठ, कालीमिर्च और पीपल २–२ भाग, शुद्ध बछनाग १ भाग और पीपल वृक्षकी छालकी राख ६ भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें ।

इसमेंसे १ रत्ती औषध सूंघनेसे शिरपीड़ा तुरन्त नष्ट होती है ।

(७५२२) शुष्कगोमयादियोगः

(वै. म. र. । पटल २)

तत्क्षणं क्षुण्णमाघ्रातं शुष्कगोमयमस्यति ।
नासास्रुतमसृक्स्रावं चन्दनस्योत्पलस्य वा ॥

सूखे हुवे गायके गोबरकी या सफेदचन्दनकी अथवा नीलोत्पलकी नस्य लेनेसे नाकसे गिरता हुवा रक्त बन्द हो जाता है ।

(७५२३) शृङ्गवेराद्यनस्यम्

(ग. नि. । नेत्र. ३; वृ. मा.; च. द. । नेत्र.)

शृङ्गवेरं भृङ्गराजं यष्टीतैलेन मर्दितम् ।
नस्यमेतेन दातव्यं महापटलनाशनम् ॥

सोंठ, भंगरा और मुलैठीके समान भाग मिश्रित चूर्णको तेलमें मिलाकर नस्य देनेसे पटल नष्ट होता है ।

(७५२४) शृङ्गादिनावनयोगः

(ग. नि. । रक्तपित्त. ८)

शृङ्गगैरिकयोः कल्कं धातक्या मधुकस्य वा ।
घ्राणस्रुतेऽसृजि प्रोक्तं योषित्क्षीरेण नावनम् ॥

अदरक और गेरुके कल्क अथवा धायके फूलोंके कल्क या महुवेके कल्कको स्त्रीके दूधमें मिलाकर नस्य देनेसे नासासे होने वाला रक्तस्राव नष्ट होता है ।

इति शकारादिनस्यप्रकरणम्

अथ शकारादिरसप्रकरणम्

(७५२५) शक्रवल्लभो रसः

(भै. र. । वीर्यस्तम्भा.)

रसगन्धकलौहाभ्ररौप्यहेमानि माक्षिकम् ।
शाणमानेन सङ्गृह्य तुगाक्षीरीञ्च कार्षिकीम् ॥
पलप्रमाणां विजयाबीजञ्चैकत्र मर्दयेत् ।
विजयावारिणा पश्चान्माषमानां वटीं चरेत् ॥
एकैका भक्षणीयैषा पेयश्चानु पयः पलम् ।
श्री शक्रवल्लभो नाम रसो वाजीकरः परः ॥
वीर्यस्तम्भकरोऽत्यर्थं प्रमदादर्पनाशनः ।
गतो ह्यप्सरसां शक्रो वाल्लभ्यं यत्प्रसादतः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, चांदी भस्म, स्वर्ण भस्म और सोनामक्खी भस्म ५-५ माशे; बंसलोचन १। तोला और भांगके बीजोंका चूर्ण ५ तोले लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको भांगके रसमें खरल करके १-१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १-१ गोली दूधके साथ सेवन करनी चाहिये ।

यह रस अत्यन्त वाजीकरण, स्तम्भक और कामिनी-मद भंजक है ।

(व्यवहारिक मात्रा—४-६ रत्ती ।)

(७५२६) शङ्करलोहः

(भा. प्र. म. खं. २ ; व. से. । अर्शो.)

प्रणम्य शङ्करं रुद्रं दण्डपाणिं महेश्वरम् ।
जीवितारोग्यमन्विच्छन्नारदोऽपृच्छदीश्वरम् ॥
सुखोपायेन हे नाथ शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना ।
चिकित्सामर्शसां नृणां कारुण्याद्वक्तुमर्हसि ॥

नारदस्य वचः श्रुत्वा नराणां हितकाम्यया ।
अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं भैषज्यं शङ्करोऽवदत् ॥
मुण्डवज्रादिलोहानामादायान्यतमं शुभम् ।
कृत्वा निर्मलमादौ तु कुनट्या माक्षिकेण च ॥
पत्तूरमूलकल्केन लिम्पेद्रसयुतेन च ।
वह्नौ निक्षिप्य विधिवत्साराङ्गारेण निर्द्धमेत् ॥
ज्वाला च तस्य रोद्धव्या त्रिफलाया रसेन च ।
ततो विज्ञाय गलितं शङ्कुनोर्ध्वं समुच्छयेत् ॥
त्रिफलाया रसे पूते तदाकृष्य तु निर्द्धमेत् ।
सम्यग्गालितं यत्तु तेनैव विधिना पुनः ॥
ध्मातं निर्वापयेत्तस्मिल्लोहं तत्त्रिफलारसे ।
यल्लोहं न मृतं तत्र पाच्यं भूयोऽपि पूर्ववत् ॥
मारणान्न मृतं यच्च तत्त्यक्तव्यमलोहवत् ।
ततः संशोष्य विधिवच्चूर्णयेल्लोहभाजने ॥
लोहेन च तथा पिंष्याद्दृषदा सूक्ष्मचूर्णितम् ।
कृत्वा लोहमये पात्रे मृत्तिकालिप्तरन्ध्रके ॥
रसैः पङ्कोपमं कृत्वा तं पचेद्गोमयाग्निना ।
पुटानि क्रमशो दद्यात्पृथगेभिर्विधानतः ॥
त्रिफलार्द्रकभृङ्गाणां केशराजस्य बुद्धिमान् ।
मानकन्दकभल्लातवह्नीनां सूरणस्य च ॥
हस्तिकर्णपलाशस्य कुलिशस्य तथैव च ।
पुटे पुटे चूर्णयित्वा लोहात्षोडशिकं पलम् ॥
तन्मात्रं त्रिफलायाश्च पलेनाधिकमाहरेत् ।
अष्टभागावशेषे तु रसे तस्याः पचेद् बुधः ॥
अष्टौ पलानि दत्त्वा च सर्पिषो लोहभाजने ।
ताम्रे वा लोहदर्व्या तु चालयेद्विधिपूर्वकम् ॥
ततः पाकविधानज्ञः स्वच्छे चोर्ध्वं च सर्पिषी ।
मृदुमध्यादिभेदेन गृह्णीयात्पाकमन्यतः ॥

आरम्भे तद्विधानज्ञः कृतकौतुकमङ्गलः ।
भ्रामरं घृतसंयुक्तं लिह्याद्रक्तिकाक्रमात् ॥
द्वादशरक्तिकापर्यन्तं यथाग्निबलं खादेत् ।
वर्द्धमानानुपानश्च गव्यक्षीरेण संयुतम् ॥
गव्याभावे त्वजायाश्च स्निग्धवृष्यादिभोजनम् ।
सद्यो वह्निकरश्चैव भस्मकश्च नियच्छति ॥
हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम् ।
गुल्माक्षिपाण्डुरोगांश्च निद्रालस्यमरोचकम् ॥
शूलश्च परिणामश्च प्रमेहमपबाहुकम् ।
श्वयथुं रुधिरस्रावं दुर्नामानं विशेषतः ॥
बलकृद् बृंहणश्चैव कान्तिदं स्वरबोधनम् ।
शरीरलाघवकरमारोग्यपुष्टिवर्द्धनम् ॥
आयुष्यं श्रीकरश्चैव बलतेजस्करं शुभम् ।
सश्रीकं पुत्रजननं बलीपलितनाशनम् ॥
दुर्नामारिरयं नाम्ना दृष्टो वारसहस्रशः ।
अनेनार्शांसि दह्यन्ते यथा तूलश्च वह्निना ॥
सौकुमार्याल्पकायत्वान्मद्यसेवी यदा नरः ।
जीर्णमद्यादियुक्तादिभोजनैः सह दापयेत् ॥
वृन्ताकस्य फलं शस्तं पटोलं बृहतीफलम् ।
प्रलम्बा भीरुवेत्राग्रताडकं तण्डुलीयकम् ॥
वास्तूकं धान्यशाकश्च चित्रकं चक्रमर्दकम् ।
नालिकेरञ्च खर्जूरं दाडिमं लवलीफलम् ॥
शृङ्गाटकश्च पक्वाम्रं द्राक्षातालफलानि च ।
हितान्येतानि वस्तूनि लोहमेतत्समश्नताम् ॥
नाश्नीयाल्लकुचं कोल्कर्कन्धुबदराणि च ।
जम्बीरं बीजपूरश्च तिन्तिडी करमर्दकम् ॥
कूष्माण्डकश्च कर्कोटं क्रमुकश्च विशेषतः ।
कटुकं कालशाकश्च कुण्डुरुः कर्कटी तथा ॥

ककारादीनि सर्वाणि द्विदलानि च वर्जयेत् ।
शङ्करेण समाख्यातो यक्षराजानुकम्पया ॥
जगतामुपकाराय दुर्नामारिरयं ध्रुवम् ।
स्थानाच्चलति मेरुश्च पृथ्वी पर्येति वायुना ॥
पतन्ति चन्द्रताराश्च मिथ्या चेदहमब्रुवम् ।
ब्रह्मघ्नाश्च कृतघ्नाश्च क्रूरा येऽसत्यवादिनः ॥
वर्जनीयाः सधर्मेण भिषजा गुरुनिन्दकाः ।
मुनिरसपिष्टविडङ्गं मुनिरसलीढं चिरस्थितं घर्मे ॥
द्रावयति लोहदोषान्वह्निर्नवनीतपिण्डमिव ।
काले मलप्रवृत्तिर्लाघवमुदरे विशुद्धिरुद्गारे ॥
अङ्गेषु नावसादो मनःप्रसादोऽस्य परिपाके ।
क्रिमिरिपुचूर्णं लीढं सहितं स्वरसेन वङ्गसेनस्य ॥
क्षपयत्यचिरान्नियतं लोहाऽजीर्णोद्भवं शूलम् ।
भवेद्यतिसारस्तु दुग्धं पीत्वा तु तं जयेत् ।
गुञ्जाद्वादशकादूर्ध्वं वृद्धिरस्य भयप्रदा ॥

एक बार मुनिराज नारदने लोकहितके विचारसे श्री शंकर महादेवको प्रणाम करके प्रार्थना की " हे भगवान ! कोई ऐसा उपाय बतलाइये कि जिससे शस्त्रक्रिया तथा क्षार और अग्निके बिना ही अर्श रोग नष्ट हो सके ।" तब महाराज शंकरने उन्हें निम्नलिखित औषध बतलाई थी. मुण्ड और वज्रादि लोहभेदोंमें से किसी एक प्रकारका लोह ले कर यथा विधि शुद्ध करें और फिर उसके बारीक पत्र करा लें । तदनन्तर उसके बराबर मनसिल, सोनामक्खी और पारदकी कज्जलि बना कर उसमें पतूर (शालिञ्च शाक या जल पीपल) की जड़का कल्क मिलावें और उक्त लोह पत्रोंपर लेप कर दें एवं उन्हें बेरी आदिके कोयलोंकी तीव्राग्निमें धमावें । यदि ज्वाला निकले तो त्रिफलाका रस छिड़क कर उसे शान्त कर देना चाहिये । इस प्रकार धमानेसे जब लोह पिघल जाय तो उसे त्रिफलेके स्वच्छ क्काथमें बुझा दें । तत्पश्चात् क्काथमेंसे बिना गले लोहको निकाल कर (उस पर उपरोक्त औषधोंका लेप करके) ऊपरकी विधिसे पकावें और त्रिफलाके क्काथमें बुझा दें । इसी प्रकार बार बार त्रिफलाक्काथमें बुझानेसे लोहकी भस्म हो जायगी । अनेकबार त्रिफलाक्काथमें बुझाने पर भी जो लोह कच्चा रह जाय उसे छोड़ देना चाहिये और शेष पक्क लोहको सुखा कर लोहेके खरलमें डाल कर लोहेकी मूसलीसे घोटें अथवा पत्थरकी सिल पर पीस लें ।

अब इस लोहको त्रिफलेके क्काथमें घोट कर टिकिया बनावें और यथाविधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । इसी प्रकार अदरक, भंगरा, काला भंगरा, मानकन्द, भिलावा, चीता, सूरण (जिमीकन्द) हस्तिकर्णपलाश; इनके रस और थोहरके दूधमें घोट घोट कर प्रत्येककी पृथक् पृथक् पुट दें ।

इस प्रकार भस्म किया हुवा लोहा १६ पल (१ सेर) लें और १७ पल त्रिफलेको चार गुने पानीमें पकावें तथा आठवां भाग शेष रहने पर छान कर उसमें यह भस्म और ८ पल (१ सेर) घी मिला कर लोह या ताम्रके पात्रमें पकावें और लोहेकी करछीसे चलाते रहें । जब घी अलग हो कर ऊपर आ जाय तो कढ़ाईको नीचे उतारकर रख दें एवं शीतल हो जाने पर उसमेंसे लोहको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

अपने विश्वासके अनुसार मंगलकर्म करनेके पश्चात् यह लोह एक रत्ती मात्रानुसार शहद और घीमें मिला कर सेवन करना प्रारम्भ करें और प्रतिदिन १-१ रत्ती मात्रा बढ़ाते जायं तथा इसके पश्चात् १-१ रत्ती घटानी शुरू करें। इसे १२ रत्तीसे अधिक तो कभी देना ही न चाहिये और यदि रोगी इतनी मात्रा भी सहन न कर सके तो उसकी शक्ति अनुसार कम मात्रामें देना चाहिये।

अनुपान—गायका दूध, और इसके अभावमें बकरीका दूध। इसके सेवन कालमें स्निग्ध और वृष्य भोजन करना चाहिये। इसके सेवनसे शीघ्र ही अग्नि दीप्त होती और भस्मक रोग नष्ट हो जाता है। यह लोह वात पित्त, कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, नेत्ररोग, पाण्डुरोग, निद्रा (अधिक निद्रा) आलस्य, अरुचि, शूल, परिणाम शूल, प्रमेह, अपबाहुक, शोथ, विशेषतः रक्तस्राव और अर्श तथा बलि पलितको नष्ट करता है।

यह बल वर्द्धक, बृंहण, कान्तिवर्द्धक, स्वरशोधक, शरीरको लघु करने वाला एवं आरोग्य, पुष्टि, आयु, रूप, बल और तेज वर्द्धक तथा पुत्रोत्पादनकी शक्ति देने वाला है।

इसके सेवनसे अर्श इस प्रकार नष्ट हो जाती है जिस प्रकार अग्निसे रुईका ढेर। इसके अर्शनाशक गुणकी परीक्षा सहस्रों बार हो चुकी है।

यदि रोगी सुकुमार, निर्बल और मद्य सेवी हो तो उसे पुराने मद्य युक्त आहारादिके साथ यह लोह सेवन कराना चाहिये।

पथ्य—बैंगन, परवलका फल, कटेलीका फल, चचींडा, शतावरके पत्तोंका शाक, बेतका अग्र भाग, विधारा, चौलाईका शाक, बथुवा, धनियेका शाक, चीता, पंवाड़के पत्तोंका शाक, नारियल (खोपरा), खजूर, अनार, लवलीफल (हरफारेवड़ी), सिंघाड़ा, पक्का आम, तालफल।

अपथ्य—लकुच (बढल), छोटे बड़े बेर, जम्बीरी नीबू, बिजौरा, इमली, करौंदा, पेठा, ककोड़ा, विशेषतः सुपारी, कड़वा पटोल, कालशाक (नाड़ीका शाक) कुन्टरू, ककड़ी, हरप्रकारकी दाल।

चाहे पर्वत अपने स्थानसे हिल जाएं, पृथ्वी उलट जाय, एवं चन्द्र और तारागण गिर पड़ें परन्तु यह लोह (अर्शमें) कभी निष्फल नहीं होता।

जो लोग ब्रह्म घाती, कृतघ्न, क्रूर, असत्यवक्ता और गुरु निन्दक हों उन्हें यह औषध न देनी चाहिये।

यदि लोह सेवनसे कोई विकार उत्पन्न हो जाय तो वायबिडंगके चूर्णको अगस्तिके रसमें घोट कर उसे धूपमें गरम करके चाटना चाहिये। जिस प्रकार अग्निसे जमा हुवा नवनीत पिघल जाता है उसी प्रकार इससे समस्त लोहविकार नष्ट हो जाते हैं।

यदि समय पर मल प्रवृत्ति हो, पेट हल्का हो, और डकार शुद्ध आवे तो समझना चाहिये कि लोहका ठीक ठीक पाचन हुवा है।

यदि लोह सेवनसे अजीर्ण हो जाय और शूल हो तो बायविडंगका चूर्ण अगस्तिके रसमें मिला कर चाटना चाहिये।

यदि इससे अतिसार हो जाय तो (अतिसार नाशक औषधोंसे सिद्ध) गोदुग्ध (या बकरीका दूध) पीना चाहिये।

इसकी १२ रत्तीसे अधिक मात्रा भयदायक होती है अतः इससे अधिक मात्रा कभी न देनी चाहिये।

(७५२७) शङ्करवटी

(भै. र. । हृद्रोगा.)

रसस्य भागाश्चत्वारो बलेरष्टौ तथा मताः।
त्रयो लौहस्य नागस्य द्वावित्येकत्र मर्दयेत् ॥
भावयेत् काकमाच्याश्च चित्रकस्यार्द्रकस्य च।
स्वरसेन जयन्त्याश्च वासाया बिल्वपार्थयोः ॥
ततो गुञ्जाद्वयमितां विदध्यात् वटिकां भिषक्।
एकैकां दापयेदासामीषदुष्णेन वारिणा ॥
जयेदियं फुफ्फुसजान् रोगान् हृदयसम्भवान्।
जीर्णज्वरं तथा घोरं प्रमेहानपि विंशतिम् ॥
कासश्वासामवातांश्च ग्रहणीमपि दुस्तराम्।
वटी श्रीशङ्करप्रोक्ता बलपुष्टिविवर्द्धिनी ॥

शुद्ध पारद चार भाग, शुद्ध गंधक ८ भाग, लोह भस्म ३ भाग और सीसा भस्म १ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर समस्त औषधोंको एकत्र मिला कर मकोयके रस चीतेके रस या क्वाथ, अदरकके रस, जयन्तीके रस, बासाके रस, बेलपत्रके रस और अर्जुनके क्वाथकी १-१ भावना दे कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक एक गोली मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे फुफ्फुस रोग, हृदय रोग, जीर्णज्वर, २० प्रकारके घोर प्रमेह, कास, श्वास, आमवात और भयंकर ग्रहणी रोगका नाश होता है।

(७५२८) शङ्खगर्भपोटलीरसः (१)

(शङ्खनाभिरसः)

(र. रा. सु. ; र. र. ; बृ. नि. र. ; र. का. धे. । राजय.)

शङ्खनाभिगवां क्षीरैः पेषयेन्निष्कषोडशः।
तेन मूषा प्रकर्त्तव्या तन्मध्ये भस्मसूतकम् ॥
निष्कार्द्धं गन्धकास्त्रीणि चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत्।
रुध्वा तद्वेष्टयेद्वस्त्रैर्मृत्तिकां लेपयेद्बहिः ॥
शोष्यं गजपुटे पाच्यं मूषया सह चूर्णयेत्।
मधुकृष्णानुपानेन गुञ्जामेकां प्रदापयेत् ॥
यक्ष्मरोगं निहन्त्याशु मृगाङ्करसवद्ध्रुवम् ॥

१६ निष्क शंखनाभिको गोदुग्धमें पीस कर उसकी मूषा बनावें और आधा निष्क पारदभस्म तथा ३ निष्क शुद्ध गंधकको एकत्र खरल करके उस मूषामें डाल कर उसके मुखको अच्छी तरह बन्द कर दें और उसे कपड़ेमें लपेट कर ऊपर (आधा अंगुल मोटा) मिट्टीका लेप कर दें। तदनन्तर उसे सुखा कर गजपुटमें पकावें और स्वांग शीतल होने पर निकाल कर शंखकी मूषा समेत खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

अनुपान—पीपलका चूर्ण और शहद।

यह ' मृगाङ्क रस ' के समान क्षय रोगको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

शङ्खगर्भपोटलीरसः (२)

"**शङ्खपोटली**" (१) देखिये ।

शङ्खचूडरसः

शङ्खचूलरसः देखिये ।

(७५२९) **शङ्खचूलरसः**

(र. चं.; यो. र.; र. रा. सु. । हिक्का.)

रसाभ्रहेमभस्मानि वैक्रान्तं सर्वतुल्यकम् ।
सर्वैः पञ्चगुणं शङ्खचूर्णं शुष्कं विमर्दयेत् ॥
लेहयेन्मधुना माषचतुष्कं सानुपानकम् ।
हिक्कां पञ्चविधां हन्ति मुमूर्षोरपि तत्क्षणात् ॥

पारदभस्म १ भाग, अभ्रकभस्म १ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग, वैक्रान्त भस्म ३ भाग और शंखभस्म ३० भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

मात्रा—४ माशे । (व्यवहारिक मात्रा–४ रत्ती)

इसे शहदके साथ देनेसे मुमूर्षुकी हिचकी भी तत्काल नष्ट हो जाती है । यह पांचों प्रकारकी हिचकीको नष्ट करता है ।

(७५३०) **शङ्खचूर्णम् (१)**

(भै. र. । शूला. ; रसे. सा. सं. ; र. चं.; धन्व.; र. रा. सु. । शूला. ।)

शङ्खचूर्णं पलञ्चैव पञ्चैव लवणानि च ।
क्षारटङ्कणकं जाती शतपुष्पा यमानिका ॥
हिङ्गु त्रिकटुकं चैव सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
आमवातं यकृच्छूलं परिणामसमुद्भवम् ॥
अन्नद्रवकृतं शूलं शूलञ्चैव त्रिदोषजम् ॥

शंख भस्म, सेंधा नमक, काला नमक, सामुद्र लवण, विडलवण, उद्भिद लवण, जवाखार, सुहागा, जायफल, सोया, अजवायन, भुनी हुई हींग, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इसके सेवनसे आमवात, यकृच्छूल, परिणाम शूल, अन्नद्रवशूल और त्रिदोषज शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माषा)

(७५३१) **शङ्खचूर्णम् (२)**

(शम्बूकचूर्णम्)

(वृ. मा. । शूला.; ग. नि. । शूला. २३; व. से.; र. र.; वै. र. । शूला., यो. चि. म. । अ. २; हा. सं. स्था. ३ अ. ७; वृ. यो. त. । त. ९४)

शङ्खचूर्णं[१] सलवणं सहिङ्गुव्योषसंयुतम् ।
उष्णोदकेन तत्पीतं शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥

शंख भस्म, सेंधा नमक, भुनी हुई हींग, सोंठ, मिर्च और पीपल; सबके समान भाग चूर्णको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे त्रिदोषज शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा —१–१॥ माशा ।)

१ शङ्खक्षारमिति पाठान्तरम्

(७५३२) **शङ्खद्रावकः** (१)

(भै. र. । उदररो.; यो. त. । त. २४; वृ. यो. त. । त. ७१; र. का. धे. । उदररो.; धन्व. । उदररो.)

अर्कः स्नुही तथा चिञ्चा तिलारग्वधचित्रकम् ।
अपामार्गभस्म समं वस्त्रपूतं जलं हरेत् ॥
मृद्वग्निना पचेत्तत्तु यावल्लवणताङ्गतम् ।
लवणेन समौ ग्राह्यौ द्वौ क्षारौ टङ्कणं तथा ॥
समुद्रफेनं गोदन्तं काशीशं सोरकं तथा ।
द्विगुणं पञ्चलवणं मातुलुङ्गरसेन च ॥
काचकूप्यान्तु सप्ताहं वासयेदम्लयोगतः ।
शङ्खचूर्णपलं दत्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ॥
सर्वधातून् हरेच्छीघ्रं वराटीशङ्खकादिकान् ।
रोगाणामुदरादीनां सद्यो नाशकरः परः ॥

आक, स्नुही (सेंड-थूहर), इमली, तिल, अमलतासकी छाल, चीता और अपामार्ग इनकी राख समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर २१ गुने पानीमें मिला लें और क्षार बनानेकी विधिके अनुसार स्वच्छ पानी नितार लें। (भा. भै. र. प्रथम भागका परिशिष्ट देखिये।) तदनन्तर उसे मन्दाग्नि पर पकाकर क्षार बनावें।

यह क्षार एक भाग, तथा सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, समुद्रफेन, गायका दांत, कसीस और सोरा १-१ भाग एवं पांचों नमक २ भाग लेकर सबको बिजौरेके रसमें खरल करके कांचकी शीशीमें भरदें और उसमें बिजौरेका रस डालकर रखदें। फिर सात दिन पश्चात् उसमें १ भाग शंखचूर्ण मिलाकर सबको आतशी शीशीमें भरकर वारुणियन्त्रद्वारा अर्क खींच लें।

इसमें कौड़ी और शंख डालनेसे वे गल जाते हैं।

यह उदर रोगोंको नष्ट करता है।

(मात्रा—८-१० बूंद)

(इसे ४ गुने पानीमें मिलाकर इस प्रकार पीना चाहिये कि दांतोंको न लगे; नहीं तो दांत खराब हो जायंगे।)

(७५३३) **शङ्खद्रावः** (२) (अमृतार्णवो रसः)

(वृ. यो. त. । त. ७१)

चिञ्चाश्वत्थस्नुहीमुष्कापामार्गार्कस्य भस्मतः ॥
पृथक्समुद्धरेद्युक्त्या लवणानि भिषग्वरः ।
टङ्कणं च यवक्षारं स्वर्जिकां लवणानि च ॥
रामठं तालकं चैव लोणारं नवसागरम् ।
सोमक्षारं च गोदन्तां तार्क्ष्यं गन्धकजं रजः ॥
विडं समुद्रफेनं च सौराष्ट्रीं सोरकं विषम् ।
शङ्खचूर्णं शङ्खनाभिचूर्णं पाषाणजं रजः ॥
मनःशिलां च कासीसं सममेतत्तु कारयेत् ।
अम्लवेतसजद्रावैरातपे भावयेद्दिनम् ॥
सप्तधा तदभावे तु जम्बीराम्लेन तत्त्रिधा ।
अतिशुष्कमिदं काचकूपिकाजठरे क्षिपेत् ॥
कूपीद्वयं नियोज्यान्यद्वारुणीयन्त्रमाचरेत् ।
तत्तेजस्तु ततो ग्राह्यं भिषजा गुरुमार्गतः ॥
काचपात्रे क्षिपेदेतदिष्टमन्त्राभिमन्त्रितम् ।
गुञ्जैकं पर्णखण्डेन गुञ्जाद्वयमथापि वा ॥
भक्षयेदथ वा देहबलाग्न्युचितमात्रया ॥

कासश्वासं क्षयाजीर्णं ग्रहणीमुदराणि च ॥
गुल्मारोचकमन्दाग्नि प्लीहकृच्छपिकाकृमीन् ।
अर्शोऽश्मरीमूत्रकृच्छ्रमूत्राघातांश्च पाण्डुताम् ॥
आमवातं च कुष्ठानि पक्षाघातादिकान्गदान् ।
अशीतिं संख्यान्वातोत्थाञ्श्लेष्मोत्थान्विं-शतिं तथा ॥
शूलानि शोषान्यक्ष्माणमजीर्णानि निहन्ति च ।
भुक्त्वा तु कण्ठपर्यन्तं रसं गुञ्जोन्मितं लिहेत् ॥
भस्मीभवति तद्भुक्तं पुनर्भोजनमिच्छति ।
यामार्धाद्द्रावयत्येव शङ्खधात्वश्मवज्रकम् ॥
मांसे दत्त्वाऽऽतपे स्थाप्यं मांसं द्रवति तत्क्षणात्॥

इमलीका खार, अश्वत्थ* (पीपल वृक्ष) का क्षार, स्नुही (सेहुंड) का क्षार, मुष्कक (मोखा वृक्ष) का क्षार, अपामार्गका क्षार, आकका क्षार, सुहागा, जवाखार, सज्जीखार, पांचो नमक, हींग, शुद्ध हरताल, लोणार (सामुद्र नमक), नवसादर, सोम-क्षार (सोमल ?), गोदन्तीहरताल, सोनामक्खी, शुद्ध गंधक, विड नमक, समुद्रफेन, सौराष्ट्री (सोरठी माटी या फिटकी), शोरा, शुद्ध बछनाग, शंखचूर्ण, शंखनाभि-चूर्ण, पत्थरका चूना, मन-सिल और कसीस; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको सात दिन तक अम्लवेतके रसकी धूपमें भावना दें । यदि अम्लवेतका रस न मिले तो २१ दिन तक जम्बीरी नीबूके रसकी भावना दें । तदनंतर उसे अत्यन्त शुष्क करके काचकी आतशी शीशीमें भर दें और उसका मुख दूसरी शीशीसे मिला कर वारुणी यन्त्र बनावें तथा यथा विधि अर्क खींच लें ।

मात्रा—१ या २ रत्ती ।

इसे पानमें लगाकर खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे कास, श्वास, क्षय, अजीर्ण, ग्रहणी रोग, उदर रोग, गुल्म, अरुचि, अग्निमांद्य, प्लीहावृद्धि, कृमि रोग, अश्मरि, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, पाण्डु, आमवात, कुष्ठ, पक्षाघातादि वातज रोग, कफज रोग, शूल, शोष, और अजीर्ण आदि रोग नष्ट होते हैं ।

कण्ठ पर्यन्त भोजन करके १ रत्ती यह रस खा लिया जाय तो वह सब पच जाता है और पुनः भूख लगती है ।

यह रस आधे पहरमें शंख, धातु और हीरेको गला देता है ।

यदि इसे मांस पर डाल कर धूपमें रख दिया जाय तो मांस पिघल जाता है ।

(७५३४) शङ्खद्रावः (४)

(वैद्यामृत. । अलंका. २)

अर्कस्नुक्सातलाचिञ्चापलाशकदलीतिलाः ।
अपामार्गो मुष्ककश्च कपर्दः शङ्ख एव च ॥
एतेषां भूतिजःक्षारः पारदः पटपञ्चकम् ।
पञ्चक्षाराः समं सर्वं त्रिभागो गन्धकः स्मृतः॥
भूरसा चैव सोरा च कासीसन्नवसादरः ।
एतच्चतुष्टयं सर्वैरौषधैस्तुल्यभागिकम् ॥
सर्वेषां कज्जलिं कृत्वा निम्बुनीरेण मर्दयेत् ।
प्रदद्यान्नलिकायन्त्रे वह्निं यामचतुष्टयम् ॥

* पीपलवृक्षके स्थानमें पाठान्तरके अनुसार अमलतास है ।

दत्वा द्रवं तु गृह्णीयात्सूतिकाद्रवकारकम् ।
एकवल्लं द्विवल्लं वा दद्यान्नलिकया रसम् ॥
गुल्मार्शःप्लीहमुख्यानां रोगाणामन्तकःपरम् ।
शङ्खद्रवरसो ह्येषःकृतकर्मा न संशयः ॥

आकका क्षार, स्नुही (सेहुंड-सेंड) का क्षार, सातलाकाक्षार, इमलीकाखार, पलाशक्षार, केलेका क्षार, तिलका क्षार, अपामार्गका क्षार, मुष्कक (मोखावृक्ष) का क्षार, कौड़ीभस्मका क्षार, शंखभस्मका क्षार, पारद, पांचों नमक, जवाखार, सज्जीखार, पलाशक्षार, तिलक्षार और मुष्ककक्षार १-१ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग तथा भूरसा (?), सोरा, कसीस और नौसादर ६।-६। भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको अच्छी तरह खरल करें। तदनन्तर उसे नीबूके रसमें घोटकर नलिकायन्त्र (भभके) से अर्क खींचें। ४ पहरमें अर्क निकल आयेगा।

मात्रा—३ से ६ रत्ती तक।

इसे (पानीमें मिलाकर) कांचकी नलीसे पिलाना चाहिये कि जिससे दांतोंको न लगे।

इसके सेवनसे गुल्म, अर्श और प्लीहादि रोग नष्ट होते हैं।

(७५३५) शङ्खद्रावः (५)

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

लवणानि तथा क्षाराः प्रत्येकं पञ्चभागिका ।
कासीसं टङ्कणं तुत्थं गन्धकं निम्बुकद्रवम् ॥
तिलापामार्गजं क्षारं प्रत्येकं वेदभागिकम् ।
नवसागर सौराष्ट्री सर्जिका नेत्रभागिका ॥
एतत्सर्वं समालोड्य भाव्यं जम्बीरनीरतः ।
सरन्ध्रे नलिकायन्त्रे यामयुग्मं विपाचयेत् ॥
शङ्खद्रावो भवेदेष सर्वदोषनिकृन्तनः ।
लोहपाषाणशङ्खानां द्रावकोयं न संशयः ॥

पांचों नमक, जवाखार, सज्जीखार और सुहागा ५-५ भाग; कसीस, सुहागा, नीलाथोथा, गन्धक, नीबूका रस, तिलका क्षार और अपामार्गका क्षार ४-४ भाग; तथा नौसादर, फिटकी और सज्जी २-२ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके जम्बीरी नीबूके रसमें घोटें और फिर भवके (नलिकायन्त्र)से अर्क खींच लें। दो पहरकी अग्नि देनेसे सम्पूर्ण अर्क निकल आयेगा।

यह समस्त अजीर्ण विकारोंको नष्ट करता है। इसमें लोह, पत्थर और शंख गल जाता है।

(मात्रा—३-४ बूंद। पानीमें डालकर पीना चाहिये।)

(७५३६) शङ्खद्रावः (६)

(यो. चि. म. । अ. ९)

स्फटिका च यवक्षारं सोरोथ नवसादरम् ।
समभागैरिमाभिश्च शङ्खद्रावो रसो मतः ॥
काचकूपी द्रवं नीत्वा दत्वा कर्पटमृत्तिका ।
एकस्य विवरं कृत्वा भित्वा चान्याः सदौषधीः॥
गजकुम्भास्य यन्त्रेण चुल्यां च खर्परोपरि ।
धृत्वा दत्वा च मन्दाग्निं तद्रसं काचभाजने ॥
गृहीत्वा स्थापयेत्सम्यक् गृहिणीयं शुभे दिने ।
शङ्खद्रावेति तन्मध्ये शङ्खद्रावस्ततोमतः ॥
कुम्भकेन प्रमुञ्चेत जिह्वाग्रे तालुकोपरि ।
दन्ताः पतन्ति लग्नेस्मिन् शेषरोगस्य का कथा॥

अखिलोदररोगाणां निहन्यात् गुल्मकस्य च।
कालिकं प्लीहकं हन्ति हृद्रोगं ग्रहणीयकृत् ॥
ऊर्ध्वकासं कफं श्वासं आमवातं विनाशयेत्।
कान्ति नीरोगतां पुष्टिं जठराग्निविवर्द्धनम् ॥

फटकी, जवाखर, शोरा और नौसादार समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरें और उसमें एक कांचकी नली लगाकर उसका दूसरा सिरा अन्य शीशीमें लगादें तथा औषधवाली शीशीको मिट्टीकी नांदमें रखकर चूल्हे पर चढ़ा दें और नीचे धीमी आग जलावें। दूसरी शीशीमें जो रस एकत्रित हो उसे सुरक्षित रक्खें।

यह शंखको द्रवित कर देता है इसीसे इसे शंखद्राव कहते हैं। यदि यह दांतोंको लग जाय तो दांत गिर जाते हैं।

इसके सेवनसे गुल्म, प्लीहा, यकृदादि सम्पूर्ण उदर रोग, हृद्रोग, ग्रहणी, ऊर्ध्वकास, कफ, श्वास और आमवातका नाश होकर कान्ति, आरोग्य, पुष्टि और जठराग्निकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—५–६ बूंद। थोड़े पानीमें मिलाकर सेवन करना चाहिये।)

(७५३७) शङ्खद्रावः (७)

(वृ. नि. र.; यो. र. । गुल्मा.)

सैन्धवं च यवक्षारं नव्यसारं तथैव च।
प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं सुराक्षारं चतुष्पलम् ॥
फटकी पलमेकं च पलार्धं कासिसं तथा।
सर्वमेकत्र संयोज्यं डमरूयन्त्रमध्यगे ॥
चुल्यां प्ररोहयेत्तत्तु ज्वालयेत्खदिरेन्धनैः।
द्रावितं तत्समादाय तेजोरूपं जलप्रभम् ॥
द्रावयेदखिलान् धातून् वराटांश्च न संशयः।
शङ्खद्रावरसो नाम गुल्मोदरहरः परः ॥

सेंधानमक, जवाखार और नौसादार, १०–१० तोले, शोरा २० तोले, फिटकी ५ तोले और कसीस २॥ तोले लेकर सबको आतशी शीशीयोंके नलिकायन्त्रमें डालकर चूल्हे पर चढ़ावें और नीचे खैरकी लकड़ियोंकी आग जलावें। इससे जो अर्क निकले उसे शीशीमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें समस्त धातु और कौड़ी गल जाती हैं। इसके सेवनसे गुल्मोदर नष्ट होता है।

(मात्रा—३–४ बूंद। पानीमें डालकर पियें।)

(७५३८) शङ्खद्रावः (८)

(वै. र. । शूला.)

कासीसात्पलषट्कमूषकचतुर्बिल्वविचूर्णंक्षिपेत्कूप्य
काचभवा द्वयोस्तु नलिका प्रोत्तोत्तरामित्युभे।
विन्यस्य ज्वलने यदूर्ध्वनलिकाग्रात्स्रवेत्तत्स्फुटं
शङ्खद्राव इति स्मृतं जलमिदं वल्लोन्मितं सर्पिषा ॥
लिप्ताग्रे रसनां विधाय नलिकायन्त्रे ग्रसेत्स्पृशे-
द्दन्तैरेतदुदग्रशूलविविधः प्लीहादिदुष्टोदरी।
गुल्मी तूणियुगोर्ध्ववातगुदजाजीर्णानलापाययुक्
स्यादेतस्य निषेवणादचिरतो नैषां पुनर्भोजनम् ॥

कसीस ३० तोले और सुहागा २० तोले लेकर दोनोंका चूर्ण करके कांचके नलिकायन्त्रमें डालकर अर्क खींचें।

मात्रा—३ रत्ती।

इसे खानेसे पूर्व जिह्वाको घी लगालेना चाहिये, तथा दवा काचकी नलीसे इस प्रकार कण्ठमें डालनी चाहिये कि जिससे वह दांतोंको न लगे।

इसके सेवनसे तीव्र शूल, प्लीहा, गुल्म, तूणी, प्रतूणी, ऊर्ध्व वात, अर्श, अजीर्ण और अग्निमांद्यका नाश होता है।

(७५३९) शङ्खद्रावः (९)

(व. से. । उदरा.)

स्वर्जिका च यवक्षारः कासीसं टङ्कणं तथा।
सौराष्ट्रं सैन्धवश्चैव स्फटिकं नवसारकम् ॥
सर्वमेकत्र कर्त्तव्यं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत्।
कूपिमध्ये क्षिपेत्तन्तु द्रावयेद्द्रावयन्त्रके ॥
गुल्मं प्लीहांस्तथानाहं रोगान्सर्वोदरांस्तथा।
अर्शांसि ग्रहणीदोषं भगन्दरव्रणानि च ॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो नान्यथा शङ्करोऽब्रवीत् ॥

सज्जी, जवाखार, कसीस, सुहागा, सोरा, सेंधा नमक, फिटकरी, और नौसादर समान भाग लेकर सबको एकत्र तरल करके आतशी शीशीमें भरें और नलिकायन्त्र (भपके)से अर्क खींच लें।

इसके सेवनसे गुल्म, प्लीहा, आनाह, समस्त उदर रोग, अर्श, ग्रहणी, भगन्दर और व्रणका नाश होता है।

(७५४०) शङ्खद्रावको रसः

(भै. र.; धन्व. । प्लीहय.)

योगिनीभैरवाभ्याश्च बलिमादौ प्रदापयेत्।
पश्चाद्यन्त्रश्च कर्त्तव्यमेवमाह परमेश्वरी ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम शम्भुदेवेन भाषितः।
गुह्याद् गुह्यतमं गुह्यमिदानीं कथ्यते मया ॥
शङ्खचूर्णं यवक्षारं सर्जिकाक्षारटङ्कणम्।
समश्च पञ्चलवणं स्फटिकारी नृसादरः ॥
काचकूप्यां ततः क्षिप्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत्।
यामार्द्धं द्रावयत्येष शङ्खशुक्तिवराटकान् ॥
अर्शांसि नाशयेत् षट् च मूत्रकृच्छ्राश्मरीं तथा।
उदराष्टविधं हन्ति गुल्मप्लीहोदराणि च ॥
अजीर्णं नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीश्च विशूचिकाम्।
भुक्तशेषे च भोक्तव्यो बिन्दुमात्रो रसोत्तमः ॥
क्षणमात्राद्भवेद्भस्म पुनर्भोजनमिच्छति।
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्योऽयं रसोत्तमः ॥
न रुजायां भयं क्वापि सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।
न देयं यस्य कस्यापि सदा गोप्यश्च कारयेत् ॥
रसः शङ्खद्रवो नाम वैद्यानामुपकारकः ॥

शंखद्रावक रसका आविष्कार शम्भु महादेवने किया था। इसे बनानेसे पहिले योगिनी और भैरवको बली देनी चाहिये। यह एक अत्यन्त गुप्त प्रयोग है जो आज प्रकट किया जाता है।

शंखचूर्ण, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, पांचों नमक, फटकी और नौसादार समान भाग लेकर सबको आतशी शीशीमें भरकर वारुणीयन्त्रकी विधिसे अर्क खींच लें।

यह रस शंख, सीप और कौड़ीको आधे पहरमें गला देता है।

इसके सेवनसे अर्श, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, आठ प्रकारके उदर रोग, गुल्म, प्लीहा, अजीर्ण, ग्रहणी रोग और विसूचिकाका नाश होता है।

भोजनोपरान्त इसकी एक बूंद खा लेनेसे आहार तुरन्त पच कर पुनः भूख लग आती है।

इसे भोजनके उपरान्त (पानीमें डालकर) सेवन करना चाहिये।

(मात्रा—१-२ बूंद)

(७५४१) शङ्खद्रावरसः

(र. सं. क. । उल्ला. ४)

फिटूरीं सादरं सोरं त्रयमेकत्र चूर्णयेत् ।
तत्क्षिपेन्मृण्मये कूपे नालहस्तमिते दृढे ॥
सरन्ध्रोदरकाचोत्थे कूपे तत्सन्नियोजयेत् ।
सप्तधा वेष्टयेत्पश्चात्कूपकौ वस्त्रमृत्स्नया ॥
खर्परे वालुकापूर्णे तिर्यगौषधकूपकम् ।
अर्धं यन्त्रे निधायाथ श्रीगुरोः संप्रदायतः ॥
अधोमुखं, द्वितीयं तु स्थाप्यं चुल्लेः पराङ्मुखे।
अधः प्रज्वालयेदग्निं हठाद्यावद्रसः स्रवेत् ॥
धारयेत्काचजे पात्रे शङ्खद्रावं रसायनम् ।
शाणैकं सेवयेत्पश्चाद्दन्तस्पर्शविवर्जितम् ॥
गुल्मोदरयकृत्प्लीहविद्रधिग्रन्थिशूलनुत् ।
बलपुष्टिप्रदो ह्येष भुक्तं जारयते क्षणात् ॥
विलोक्यतामहो लोका रसमाहात्म्यमद्भुतम् ।
कपर्दकाम्बुलोहानि यस्मिन् क्षिप्ते गलन्ति हि ॥

फिटकरी, नौसादर और शोरा समान भाग लेकर सबको एकत्र पीस लें और एकमिट्टीकी कूपी में भरदें। इस कूपीमें १ नाल लगादें और चूल्हे पर रेतीमें भरी हुई हांडी रख कर उसमें यह कूपी तिरछी करके रख दें। कूपीका आधा भाग रेतके भीतर दवा देना चाहिये। एवं नालका दूसरा सिरा दूसरी कांचकी शीशीके मुखमें लगादें और चूल्हेमें अग्नि जलावें।

इससे जो अर्क निकले उसे सुरक्षित रक्खें।

नोट—औषध वाली कूपी तथा दूसरी कांचकी शीशी पर सात कपरमिट्टी कर देनी चाहियें।

मात्रा—४ माशा। (व्यवहारिक मात्रा— ८-१० बूंद)

इसे इस प्रकार पीना चाहिये कि दांतोंको न लगे।

इसके सेवनसे गुल्म, यकृत, प्लीहा, ग्रन्थि और शूलका नाश होता तथा बल पुष्टिकी वृद्धि होती है। एवं भोजन शीघ्र पच जाता है।

इसमें कौड़ी, लोह और शंख डाल देनेसे वे गल जाते हैं।

शङ्खद्रावरसः

प्र. ५६९८ महाद्रावकम् देखिये।

शङ्खद्रावरसः (महा)

प्र. सं. ५६९९ महाद्रावकरसः देखिये।

(७५४२) शङ्खनाभिचूर्णम्

(वृ. यो. त. । तं. १०५ ; यो. र. ; व. से. । उदरा.)

रसेन जम्बीरफलस्य शङ्ख-
नाभिरजः पीतमवश्यमेव ।
कर्षप्रमाणं शमयेदशेषं
प्लीहामयं कूर्मसमानमाशु ॥

शंखनाभिके १। तोला चूर्णको जम्बीरी नीबूके रसके साथ सेवन करनेसे अत्यन्त प्रवृद्ध प्लीहा भी ठीक हो जाती है।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा।)

शङ्खनाभिरसः

शङ्खगर्भपोटलीरसः प्र. सं. ७५२८ देखिये ।

(७५४३) शङ्खपोटलीरसः (१)

(भा. प्र. म. खं. २ । प्रवाहिका. ; र. चि. म. । स्त. ७)

प्रत्येकं दशगद्याणाः शुद्धसूतकगन्धयोः ।
विंशति त्रिदिनं खल्वे पिष्ट्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥
पश्चादर्कस्य दुग्धेन पिष्ट्वा तां कज्जलीं त्र्यहम् ।
ततो वज्रस्य दुग्धेन पिष्ट्वा तां कज्जलीं त्र्यहम् ॥
आर्द्रकं चित्रकं श्वेतं निःसहायश्च मर्दयेत् ।
पेषयेत्तद्रसैरेवं कज्जलीं तां दिनत्रयम् ॥
पीतानाञ्च कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविंशतिः ।
विंशतिः शंखचूर्णस्य चत्वारिंशच्च मिश्रितम् ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे पूर्वोक्तेन क्रमेण च ।
त्र्यहमर्कस्य दुग्धेन वज्रीदुग्धेन च त्र्यहम् ॥
तन्मध्ये कज्जलीं क्षिप्त्वा चित्रकार्द्ररसेन तु ।
खल्वे पिष्ट्वा द्वयोः कार्या गुट्यो बदरसम्मिताः॥
लिप्त्वा दग्धाश्मचूर्णेन पक्वकुहरिकान्तरम् ।
प्रक्षिप्य गुटिकास्तत्र चूर्णलिप्तपिधानकम् ॥
दत्त्वा वस्त्रं मृदा लिप्त्वा गर्तं हस्तप्रमाणकम् ।
तद्गर्भे कुहरीं मुक्त्वा पुटो देयश्च शाणकैः ॥
पश्चाच्चित्रकनीरेण स्वांगशीतञ्च पेषयेत् ।
गुटिकां पूर्वरीत्यैव कृत्वा देयः पुनः पुटः ॥
दग्धानां गुटिकानाञ्च चूर्णं कृत्वाथ कूपके ।
क्षेप्यं चैवं हि निष्पन्नो रसोऽयं शंखपोटली ॥
आमज्वरातिसारे च श्वासे कासे तथैव च ।
श्लेष्मपित्तामवातेषु मन्दाग्नौ ग्रहणीषु च ॥
अष्टादशप्रमेहेषु जीर्णे जीर्णबलेषु च ।
द्वात्रिंशन्मरिचैः साकं संदृतं वल्लपञ्चकम् ॥
सर्वरोगेषु दातव्यं मरिच्याज्यं विना ज्वरे ।
शालयो दधिदुग्धादि भोजनं मधुरं हितम् ॥
कट्वम्लक्षारतैलाद्यान्दूरतः परिवर्जयेत् ।
विधिनाऽनेन कर्तव्यो रसोऽसौ शंखपोटली ॥
क्रमेण विनिवर्तन्ते प्रोक्तरोगा न संशयः ॥

दस दस भाग शुद्ध पारे और गन्धकको ३ दिन खरल करके कज्जली बनावें । तदनन्तर उसे ३-३ दिन आकके दूध, सेहुंड (थूहर) के दूध तथा अदरक, सफेद चीते और अमरबेलके रसमें क्रमशः खरल करें ।

तत्पश्चात् २०-२० भाग पीली कौड़ी और शंखके चूर्णको एकत्र मिला कर ३-३ दिन आक और थूहरके दूधमें खरल करें और उसमें उपरोक्त कज्जली मिला कर सबको चीतेके क्वाथ और अदरकके रसमें खरल करके बेरके समान गोलियां बना लें । इसके पश्चात उन गोलियोंको चूना पुती हुई मिट्टीकी पक्की कुल्हिया (कुल्हड़) में रख कर उस पर चूना पुता हुवा ढकना ढक दें और कपरमिट्टी करके सुखा लें । तदनन्तर भूमिमें १ हाथ गहरा गढ़ा खोद कर उसमें इस कुल्हड़को रख कर अरने कण्डोंकी पुट दें ।

जब कुल्हड़ स्वांगशीतल हो जाय तो उसमेंसे गोलियोंको निकाल कर चीतेके क्वाथमें खरल करें और पुनः गोलियां बना कर उपरोक्त विधिसे

चूना पुते हुवे कुल्हड़में बन्द करके पुट दें एवं स्वांग शीतल होने पर निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

इनके सेवनसे आमातिसार, ज्वरातिसार, श्वास, कास, कफ, पित्त, आमवात, अग्निमांद्य, ग्रहणी रोग, १८ प्रकारके प्रमेह और निर्बलता आदि रोगोंका नाश होता है।

मात्रा—१५ रत्ती (व्यवहारिक मात्रा–२–३ रत्ती।)

ज्वरके अतिरिक्त अन्य रोगोमें इसे ३२ काली मिर्चोंके चूर्ण और घीके साथ देना चाहिये।

पथ्य—शालि चावल, तथा दूध दही आदि मधुर आहार।

अपथ्य—चरपरे (मिर्च आदि) पदार्थ, खटाई, क्षार, और तैलादिको छूना भी न चाहिये।

(७५४४) शङ्खपोटलीरसः (२)

(वृ. नि. र. । क्षय.)

रसं गन्धं कम्बोर्भसितमपि कापर्दभसितम्
मरीचं भूचन्द्राम्बुधिरससहस्रांशुलविकम्।
रसांश्यंशं टङ्कं सकलमपि चूर्णीकृतमिदं
क्रमाद्यावन्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम्॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग, शंख भस्म ४ भाग, कौड़ी भस्म ६ भाग, काली मिर्च १२ भाग और सुहागा चौथाई भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल कर लें।

मात्रा—४ माशे। (व्य. मा.–१ माशा।)

इसे घीमें मिला कर सेवन करनेसे क्षयका नाश होता है।

(७५४५) शङ्खभास्कररसः

(र. सं. क. । उल्ला. ४ ; र. का. धे. । शूला.)

दग्धं शङ्खं वराटं च तुल्यार्कं नवनीतयुक्।
टङ्कार्धं भक्षयेत्सर्वशूलार्तः शङ्खभास्करः॥

शंख भस्म और कौड़ी भस्म १–१ भाग तथा ताम्र भस्म २ भाग ले कर सबको एकत्र खरल कर लें।

मात्रा—४ माशे (व्यवहारिक मात्रा–२ रत्ती).

इसे नवनीत (मक्खन) के साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

(७५४६) शङ्खमारणम्

(रसे. सा. सं.)

अन्धमूषागतं शङ्खं पदमेकं विचक्षणः।
माषार्द्धटङ्कणैर्मिश्रं दण्डयन्त्रेण मारयेत्॥
शङ्खः सर्वरुजां हन्ति विशेषादुदरामयम्।
शूलाम्लपित्तविष्टम्भमेहहृद्वह्निदीपनः॥

२४ भाग शंखमें १ भाग सुहागा मिला कर सबको अन्धमूषामें बन्द करके गजपुटमें पकावें।

जब पुट स्वांगशीतल हो जाय तो शंखको निकाल कर पीस लें।

शंख उदर रोग, शूल, अम्लपित्त, विष्टम्भ, प्रमेह और हृद्रोगको नष्ट करता तथा अग्निकी वृद्धि करता है।

(७५४७) शङ्खयोगः

(वै. म. र. । पट. ११)

शङ्खं विघृष्य सहसा प्रातः पीतं च सप्ताहात्।
अपहरति कामलार्ति बाणो रामस्य ताटकां भीमाम् ॥

शंखको पानीके साथ घिस कर सात दिन तक प्रातःकाल पीनेसे कामलाका नाश हो जाता है।

(७५४८) शङ्खवटी (१) (बृहद्)

(र. रा. सु. ; र. का. धे. ; भा. प्र. म. खं. २ । अजीर्णा.)

स्नुगर्कचिञ्चाऽपामार्गरम्भातिलपलाशजान्।
क्षारांश्च भिषगादद्यात्प्रत्येकं पलमात्रया ॥
लवणानि पृथक् पञ्च ग्राह्याणि पलमात्रया।
सर्जिका च यवक्षारं टङ्कणं त्रितयं पलम् ॥
सर्वं त्रयोदशपलं सूक्ष्मं चूर्णं विधाय तु।
निम्बूफलरसे प्रस्थसम्मिते तत्परिक्षिपेत् ॥
तत्र शङ्खस्य शकलं पलं वह्नौ प्रताप्य तु।
वारान्निर्वापयेत्सप्त सर्वं द्रवति तद्यथा ॥
नागरं त्रिपलं ग्राह्यं मरिचं च पलद्वयम्।
पिप्पली पलमाना स्यात्पलार्द्धं भ्रष्टहिङ्गुकम् ॥
ग्रन्थिकं चित्रकं चापि यवानीजीरकं तथा।
जातीफलं लवङ्गं च पृथक्कर्षद्वयोन्मितम् ॥
रसो गन्धो विषं चापि टङ्कणं च मनःशिला।
एतानि कर्षमात्राणि सर्वं सञ्चूर्ण्य मिश्रयेत् ॥
सरावार्द्धेन चुक्रेण सन्नीय वटिकां चरेत्।
माषप्रमाणा सा वैद्यैर्बृहच्छङ्खवटी स्मृता ॥
सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी।
विषूच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशिनी ॥

स्नुही (थूहर) का क्षार, आकका क्षार, इमलीका क्षार, अपामार्गका क्षार, केलेका क्षार, तिलका क्षार, पलाशक्षार और पांचों नमक १-१ पल (५-५ तोले); सज्जीखार, जवाखार और सुहागा समान भाग मिश्रित ५ तोले ले कर सबका बारीक चूर्ण बनावें और उसे १ सेर (८० तोले) नीबूके रसमें मिला दें। तदनन्तर उसमें ५ तोले शंखको तपा तपा कर सात बार बुझावें जिससे उसकी भस्म हो जाय। तत्पश्चात् उसमें १५ तोले सोंठ, १० तोले मिर्च, ५ तोले पीपल, २॥ तोले भुनी हुई हींग और २॥-२॥ तोले पीपलामूल, चीता, अजवायन, जीरा, जायफल और लौंगका चूर्ण तथा १।-१। तोला शुद्ध बछनाग, सुहागेकी खील और मनसिल एवं १।-१। तोला शुद्ध पारद और गंधककी कज्जली मिला कर घोटें और फिर २० तोले चुक्र डालकर खरल करें तथा १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अजीर्ण, शूल, विसूचिका और अलसकादि रोगोंका नाश होता है।

(७५४९) शङ्खवटी (२)

(वृ. यो. त. । त. ७१)

शङ्खं सप्त दिनानि निम्बुकरसे निर्वाप्य तप्तं पल-द्वन्द्वं तिन्तिणिभूतिका पलमिता सार्द्धं च सौवर्चलात्
सिन्धूत्थाच्च पलं समुद्रलवणं काचाह्विडाच्चैकतो
गद्याणास्त्रिकटोर्नव द्विगुणिता एतद्द्विया योजयेत्
अष्टौ रामठ गन्धयोर्मिलितयोर्गद्याणकः पारदा-च्चत्वारोऽत्र विषस्य पञ्च कथिताः कोलास्थि-मात्रा कृता।
एषा शङ्खवटी निहन्ति पवनं शूलान्यजीर्णामयं
मन्दाग्नित्वमरोचकं प्रशमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राण्यपि

१० तोले शंखको तपा तपा कर बार बार नीबूके रसमें बुझावें। जब उसकी भस्म हो जाय तो उसे नीबूके रसमें ही सात दिन तक पड़ा रहने दें। तदनन्तर ५ तोले इमलीका क्षार, ७॥ तोले संचल (काला नमक); ५-५ तोले सेंधानमक, समुद्र लवण, काच लवण और बिड लवण; ३॥।-३॥। तोले सोंठ, मिर्च और पीपल; २॥-२॥ तोले हींग और शुद्ध गंधक; २॥ तोले पारद और ३ तोले १॥ माशा शुद्ध बछनाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य समस्त औषधें मिलाकर सबको नीबूके रसमें घोट कर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे शूल, अजीर्ण, अग्निमांद्य, अरुचि और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है।

(७५५०) शङ्खवटी (३)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । अग्निमांद्या.)

द्वौ क्षारौ रसगन्धकौ सलवणौ व्योषञ्च तुल्यं विषं
चिञ्चाशङ्खचतुर्गुणं रसवरे लिम्पाकजाते कृतम्।
वारम्वारमिदं सुपाकरचितं लोहं क्षिपेद्धिङ्गुकं
भृष्टं वङ्गसमं सुमर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणा भवेत्॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलान्तकृत् पाचनी
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयोच्छेदिनी।
सर्वव्याधिविनाशिनी कृमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी॥

जवाखार, सज्जीखार, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) एक एक भाग, इमलीका खार ४ भाग, तपा तपा कर नीबूके रसमें बार बार बुझा कर भस्म किया हुवा शंख ४ भाग तथा उत्तम लोह भस्म, घीमें भुनी हुई हींग और बंग भस्म १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर सबको (नीबूके रसमें) खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह वटी अत्यन्त अग्निवर्द्धक, शूलनाशिनी और पाचनी है। इसके सेवनसे कास, श्वास, क्षय, अग्निमांद्य, वातव्याधि, उदरवृद्धि, तृष्णा और कृमि आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं।

(७५५१) शङ्खवटी (४)

(चिञ्चाशङ्खवटी)

(यो. र. । गुल्मा.)

चिञ्चाक्षारं स्नुहीक्षारमर्कक्षारं पलं पलम्।
द्विपलं शङ्खजं भस्म रामठं च पलार्धकम्॥
लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत्।
क्षारद्वयं पलार्धं च सर्वमेकत्र योजयेत्॥

जम्बीरकरसैर्मर्घमनलस्य दिनत्रयम् ।
भृङ्गराजस्य निर्गुण्ड्या मुण्डयाश्चैव पृथक् द्रवैः।
आर्द्रकस्य रसेनैव प्रत्येकं दिनमर्दितम् ।
बदरीबीजमात्रांस्तु वटकान्कारयेद्भिषक् ॥
एकैकं भक्षयेत्प्रातः पञ्चगुल्मान्व्यपोहति ।
सर्वं शूलं निहन्त्याशु अजीर्णं च विषूचिकाम्॥
मन्दाग्निं नाशयेच्छीघ्रं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम् ।
चिश्चाशङ्खवटी नाम ग्रहणीरोगहृत्परा ॥

इमलीका क्षार, स्नुही (थूहर) का क्षार और आकका क्षार ५-५ तोले; शंख भस्म १० तोले, हींग २॥ तोले, पांचों नमक ५-५ तोले एवं जवाखार और सज्जीखार २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर ३-३ दिन नीबूके रस और चीतेके क्वाथमें घोटें और फिर १-१ दिन भंगरे, संभालु, मुण्डी और अदरकके रसमें घोटकर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे पांच प्रकारका गुल्म, समस्त प्रकारके अजीर्ण, शूल, विषूचिका और अग्निमांद्यका नाश होता है । यह वटी ग्रहणी रोगमें अत्युत्तम काम करती है ।

इस पर तैल और खटाई रहित पथ्य देना चाहिये ।

(७५५२) शङ्खवटी (५)

(र. चं. ; रसे. सा. सं. । अजीर्णा.)

सार्द्धं कर्षं रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।
विषं कर्षत्रयं दद्यात् सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥
दग्धशङ्खं च तत्तुल्यं पञ्चकर्षाणि नागरात् ।
स्वर्जिका रामठकणा सिन्धु सौवर्चलं विडम् ॥
सामुद्रमौद्भिदं चैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ॥
वह्निमान्द्यकृतान् रोगान् सामदोषं विनाशयेत् ।

शुद्ध पारा और गन्धक १॥-१॥ कर्ष, शुद्ध मीठा विष (बछनाग) ३ कर्ष (३।।। तोले), मिर्चका चूर्ण ६ कर्ष (७॥ तोले), शंख भस्म ६ कर्ष; सोंठ, सज्जी, हींग, पीपल, सेंधानमक, सञ्चल (काला नमक), बिड नमक और सामुद्र नमक तथा उद्भिद् लवण ५-५ कर्ष (प्रत्येक ६। तोले) ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको नीबूके रसमें घोट कर (४-४ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, अग्निमांद्य और आमका नाश होता है ।

(७५५३) शंखवटी (६)

(र. का. धे. ; यो. र. । अजीर्णा. ; वृ. यो. त. । त. ७१; यो. त. । त. २४)

चिञ्चाश्वत्थस्नुहीक्षारादपामार्गार्कतस्तथा ।
क्षाराणि पञ्च संगृह्य ततो लवणपञ्चकम् ॥
सैन्धवाद्यं समादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।
कर्षं कर्षं विषं गन्धं रसं टङ्कणमेव च ॥
हिङ्गुपिप्पलिशुण्ठीनां तथा मरिचजीरयोः ।
द्वौ द्वौ कर्षौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः ॥
फलत्रयाच्च कर्षैकं द्विकर्षं तु लवङ्गतः ।
एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥
भावयेदम्लयोगेन सप्तधा च प्रयत्नतः ।
रसः शङ्खवटी नाम्ना सेवितः सर्वरोगजित् ॥
गुञ्जामात्रमिदं खादेद्भवेद्दीपनपाचनम् ।
अजीर्णं वातसम्भूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा ॥
विषूचीं शूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः ॥

इमलीका खार, पीपल वृक्षका क्षार, स्नुही (थूहर) का क्षार, अपामार्गका क्षार, आकका क्षार और पांचों नमक १०-१० तोले; शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद और सुहागेकी खील १।-१। तोला एवं हींग, पीपल, सोंठ, काली मिर्च, जीरा और शंख भस्म २॥-२॥ तोले; त्रिफला १। तोला और लौंग २॥ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको नीबूके रसकी सात भावना दें और १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

ये गोलिया दीपन पाचन हैं तथा वातज पित्तज और कफज अजीर्ण, विषूचिका, शूल और अफारेको अवश्य नष्ट करती हैं।

(७५५४) **शङ्खवटी** (७)

(र. का. धे. ; भै र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं.; र. रा. सु. । अग्निमांद्या.)

दग्धशङ्खस्य चूर्णं हि तथा लवणपञ्चकम् ।
चिञ्चिकाक्षारकश्चैव कटुकत्रयमेव च ॥
तथैव हिङ्गुकं ग्राह्यं विषगन्धकपारदम् ।
अपामार्गस्य वह्नेश्च क्वाथैर्लिम्पाकजै रसैः ॥
भावयेत् सर्वचूर्णं तत् अम्लवर्गैर्विशेषतः ।
यावत्तदम्लतां याति गुडिकामृतरूपिणी ॥
सद्योवह्निकरी चैव भस्मकं च नियच्छति ।
भुक्त्वाकण्ठन्तु तस्यान्ते खादेच्च गुडिकामिमाम् ॥
तत्क्षणाज्जारयत्याशु सर्वाजीर्णविनाशिनी ।
ज्वरं गुल्मं पाण्डुरोगं कुष्ठं शूलं प्रमेहकम् ॥
वातरक्तं महाशोथं वातपित्तकफानपि ।
दुर्नामारिरयञ्चाशु दृष्टो वारसहस्रशः ॥
निर्मूलं दहते शीघ्रं तूलकं वह्निना यथा ।
लोहवङ्गयुता सेयं महाशङ्खवटी स्मृता ॥
प्रभाते कोष्णतोयानुपानमेव प्रशस्यते ।
जम्बीरबीजपूरश्च मातुलुङ्गकचुक्रकम् ॥
चाङ्गेरी तिन्तिडी चैव बदरी करमर्दकम् ।
अष्टाम्लस्य वर्गोऽयं कथितो मुनिसत्तमैः ॥

शंख भस्म, पांचो नमक, इमलीका खार, सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको अपामार्ग और चीतेके क्वाथ तथा नीबूके रसकी १-१ भावना दें और फिर अम्ल वर्गमें इतना घोटें कि औषध खट्टी हो जाय। तदनन्तर (बेरकी गुठलीके बराबर) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्नि प्रदीप्त होती और भस्मक रोग नष्ट होता है।

यदि कण्ठपर्यन्त भोजन करनेके पश्चात् यह गोली खाई जाय तो वह भी तुरन्त पच जाता है।

इनके सेवनसे अजीर्ण, ज्वर, गुल्म, पाण्डु, कुष्ठ, शूल, प्रमेह, वातरक्त, शोथ और अन्य बहुतसे रोग नष्ट होते हैं।

यह अर्शको इस प्रकार नष्ट कर देता है जिस प्रकार रुईके ढेरको अग्नि; यह बात सहस्रों बार देखी है।

यदि इसमें १-१ भाग लोह भस्म और बंग भस्म मिलादी जाय तो इसीका नाम "**महाशंखवटी**" हो जाता है।

अनुपान—मन्दोष्ण जल । सेवन काल—प्रातःकाल ।

अम्लवर्ग— जम्बीरी नीबू, बिजौरा, मातुलुङ्ग, चुक्र, चाङ्गेरी, तिन्तड़ीक, खट्टा बेर और करौंदा ।

(७५५५) **शङ्खवटी** (८)

(भा. प्र. म. खं. २ । अजीर्णा. ; भै. र. ; र. रा. सु. ; यो. र. ; र. का. धे. । अग्निमांद्या. ; यो. चि. म. । अ. ३ ; वृ. यो. त. । त. ७१; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. सं. क. । उल्लास ५)

पलं चिञ्चाक्षारं पलमितमिदं पञ्चलवणं
द्रवं सम्यक्पिष्टं भवति लघुनिम्बूफलरसैः ।
ततः पिष्टे तस्मिन्पलपरिमितं शङ्खशकलं
क्षिपेद्वारान्सप्त द्रवमिह च तेनैव विधिना ॥
पलप्रमाणं कटुकत्रयञ्च पलार्द्धमानं वचहिङ्गुभागः
विषं पलद्वादशभागयुक्तं तावद्रसो गन्धक एव चोक्तः ॥
बदरास्थि प्रमाणेन वटीमेतस्य कारयेत् ।
भक्षयेत्सेवया साम्यात्सर्वाजीर्णप्रशान्तये ॥
सर्वोदरेषु शूलेषु विसूच्यां विविधेषु च
अग्निमान्द्येषु गुल्मेषु सदा शङ्खवटी हिता ॥

इमलीका खार ५ तोले और पांचों नमक ५ तोले (प्रत्येक १-१ तोला) ले कर सबको कागजी नीबूके रसमें मिलावें और फिर ५ तोले शंखको खूब तपाकर उसमें बुझावें । इसी प्रकार शंखको तपा तपाकर सात बार बुझावें । (इससे उसकी भस्म हो जायगी ।) तदनन्तर उसमें ५ तोले त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण, तथा २॥-२॥ तोले बच और हींग एवं ६० तोले शुद्ध बछनाग (मीठा विष) और ६०-६० तोले पारे गन्धककी कज्जली मिला कर (आवश्यकतानुसार नीबूका रस डाल कर) खरल करें और बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त अजीर्ण, उदररोग, शूल विसूचिका, अग्निमांद्य और गुल्मका नाश होता है ।*

(७५५६) **शङ्खवटी**(९) (**महा**)

(भै. र.; र. रा. सु.; र. का. धे. अग्निमांद्या)

कणामूलं वह्निदन्ती पारदं गन्धकं कणा ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं मरिचं नागरं विषम् ॥
अजमोदामृता हिङ्गु क्षारं तिन्तिडिकाभवम् ।
सञ्चूर्ण्य समभागन्तु द्विगुणं शङ्खभस्मकम् ॥
अम्लद्रवेण सम्भाव्य वटी गुञ्जाद्वयोन्मिता ।
अम्लदाडिमतोयेन लिम्पाकस्वरसेन च ॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय नाम्ना शङ्खवटी शुभा ।
तक्रमस्तुसुरासीधुकाञ्जिकोष्णोदकेन वा ॥

---

*पाठान्तरके अनुसार—

१ बचका अभाव है ।

२. बचका अभाव तथा हींग एक पल (५ तोला) है ।

३. बचका अभाव है तथा त्रिकुटा और हींग मिलित ५ तोले हैं । एवं पारा, गंधक और विष १-१ निष्क हैं ।

**शशैणादिरसेनैव रसेन विधिवेन च ।
मन्दाग्निं दीपयत्याशु बाडवाग्निसमप्रभम् ॥
अर्शांसि ग्रहणीरोगं कुष्ठमेहभगन्दरम् ।
प्लीहानमश्मरीं श्वासकासं मेहोदरक्रिमीन् ॥
हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च विबन्धानुदरे स्थितान् ।
तान् सर्वान्नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥**

पीपलामूल, चीतामूल, दन्तीमूल, शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, पांचों नमक, कालीमिर्च, सोंठ, शुद्ध बछनाग, अजमोद, गिलोय, हींग और इमलीका क्षार १–१ भाग तथा शंख भस्म २ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको नीबूके रसमें घोटकर २–२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

अनुपान—खट्टे अनारका रस, जम्बीरीका रस, तक्र, मस्तु, मद्य, सीधु, काञ्जी, उष्ण जल अथवा शशा और हरिन आदिका मांस रस । (जब बिना हिंसाके ही काम चल सकता है तो मांस रस लेना व्यर्थ है ।)

इनके सेवनसे मन्दाग्नि शीघ्र ही बडवानलके समान दीप्त हो जाती है तथा अर्श, ग्रहणी, कुष्ठ, प्रमेह, भगन्दर, प्लीहा, अश्मरि, श्वास, कास, उदर-कृमि, हृद्रोग, पाण्डुरोग और मलावरोधादिका नाश होता है ।

(७५५७) शङ्खादिचूर्णम् (१)

(वृ. नि. र. । शूला.)

**शङ्खः पीतवराटकस्त्रिकटुकं क्षारत्रयं त्रैफलं
सङ्कोची लवणानि गन्धकमथोजाजी यवानी पृथक् ।
कर्षद्वन्द्वमितानि हिङ्गुसहितान्येला लवङ्गानले लोहं
पारदभस्मकोमृतमथो ताम्रं च कर्षं पृथक् ॥
चूर्णं माषयुगं सुशीतलजलेनासेवितं शूलनुत्
गुल्मप्लीहमजीर्णमग्निमृदुतामत्यम्लपित्तं जयेत् ।**

शंख भस्म, पीली कौड़ीकी भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, हर्र, बहेड़ा, आमला, लज्जालुकी जड़, पांचों नमक, शुद्ध गंधक, जीरा, अजवायन और हींग २॥–२॥ तोले तथा इलायची, लौंग, चीता, लोह-भस्म, शुद्ध बछनाग और ताम्रभस्म १।–१। तोला लेकर सबको एकत्र खरल करके चूर्ण बनावें ।

मात्रा—१ माशा ।

अनुपान—शीतल जल ।

इसके सेवनसे शूल, गुल्म, प्लीहा, अजीर्ण, अग्निमांद्य और अम्लपित्तका नाश होता है ।

(७५५८) शङ्खादिचूर्णम् (२)

(वृ. नि. र. । शूला.; वै. र. । शूला.)

**दग्धशङ्खं करञ्जं च हिङ्गुत्र्यूषणसैन्धवम् ।
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं पिबेच्चोष्णेन वारिणा ॥
सर्वशूलहरं चूर्णं विख्यातं रविसागरे ।**

शंख भस्म, करञ्जकी गिरी, भुनी हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण समस्त प्रकारके शूलोंको नष्ट करता है ।

मात्रा—१–१॥ माशा ।

अनुपान—उष्ण जल ।

(७५५९) **शङ्खादिचूर्णम् (३)**

(व. से. । बालरोगा.)

शङ्खयष्ट्यञ्जनैश्चूर्णं शिशूनां गुदपाकनुत् ।

शंख भस्म, मुलैठी और रसौतका समान भाग मिश्रित चूर्ण सेवन करानेसे बच्चोंका गुदपाकरोग नष्ट होता है ।

(७५६०) **शङ्खेश्वररसः**

(र. र. स. । उ. अ. १४; र. चं. । राजय.)

शङ्खस्य वलयान्निष्कं चतुर्निष्कं वराटम् ।
निष्कार्धं नीलतुत्थस्य सर्वतुल्यं तु गन्धकम् ॥
गन्धतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम् ।
टङ्कणं रसतुल्यं स्यान्मर्द्यं पाच्यं मृगाङ्कवत् ॥
राजयक्ष्महरः सोयं नाम्ना शङ्खेश्वरो मतः ॥

शंखनाभिकी भस्म १ भाग, कौड़ी भस्म ४ भाग, शुद्ध नीलाथोथा (तूतिया) आधा भाग, शुद्ध गंधक ५॥ भाग, सीसाभस्म ५॥ भाग, पारदभस्म ५॥ भाग, और सुहागेकी खील ५॥ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके मृगांकरसके समान भावित और पाक करें ।

यह रस राजयक्ष्माको नष्ट करता है ।

(७५६१) **शङ्खोदररसः (१)**

(यो. र. । अतिसारा.)

कम्बूभस्म चतुष्कर्षं कर्षकमहिफेनकम् ।
जातीफलं टङ्कणं च पृथक्कर्षं विनिक्षिपेत् ॥
अतिसूक्ष्मं विमर्द्याथ नवनीतेन गुञ्जकम् ।
रसः शङ्खोदरो नाम सर्वातीसारनाशनः ॥

शंख भस्म ४ भाग, शुद्ध अफीम १ भाग, तथा जायफल और सुहागेकी खील १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अत्यन्त बारीक खरल करें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे नवनीत (मक्खन) के साथ मिलाकर सेवन करनेसे समस्त प्रकारका अतिसार नष्ट होता है ।

(७५६२) **शङ्खोदररसः (२)**

(र. रा. सु.; वृ. नि. र. । अतिसारा.)

सूतभस्म बलिर्लोहं विषं त्रिकटुकं समम् ।
पिष्ट्वा निम्बुजतोयेन शङ्खमेभिश्चतुर्गुणम् ॥
क्षिप्त्वा मृद्रंशुकैर्लिप्त्वा भाण्डे गजपुटे पचेत् ।
शीते च प्राग्वद्विषं क्षिप्त्वा वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ।
जातीफलं च विजया मधुनातिसृतौ ददेत् ।
ग्रहण्यां चित्रकाद्रम्बु विजया विश्वभेषजम् ॥
पृथक् देयं समधुना मरीचैश्च घृतान्वितम् ।
वह्निमान्द्यक्षये तद्वदुदरोत्थानिलामये ॥
पथ्यं दध्ना च तक्रेण क्षीरशाकैश्च संयुतम् ॥

पारद भस्म, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च तथा पीपल समान भाग लेकर सबको नीबूके रसमें खरल करें और फिर उसे सबसे चार गुने शंखके भीतर भरकर उसका मुख दूधमें पिसे हुवे सुहागेसे बन्द करदें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंकदें तथा स्वांगशीतल होने पर सम्पुटमेंसे शंखयुक्त औषधको निकालकर पीसलें और उसमें १ भाग शुद्ध बछनाग मिलाकर खरल करके रक्खें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे अतिसार में जायफल और भांगके चूर्ण तथा शहदके साथ और ग्रहणी रोगमें चीते के चूर्ण, अदरकके रस और शहदके साथ या भांग और सोंठके चूर्ण तथा शहदके साथ, देना चाहिये।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ देने से अग्निमांद्य, क्षय और उदरस्थ वायुका नाश होता है।

इसके सेवन कालमें दही, तक्र, दूध और लाभदायक शाकोंके साथ पथ्याहार देना चाहिये।

(७५६३) **शङ्खोदररसः (३)**

(र. प्र. सु. । अ. ८)

शुद्धं सूतं गन्धकं वै समांशं
चित्रोन्मत्तैर्मर्दयेद्वासरैकम् ।
चूर्णैरेतैः शङ्खमापूरितं वै
भाण्डे स्थाप्यं मुद्रितव्यं प्रयत्नात् ॥
तस्याधःस्तादष्टयामं प्रकुर्या-
द्वह्निं शीते कर्षमात्रं विषं हि ।
दत्त्वा, घर्मे त्रीणि चापि पुटानि
दद्यात्तद्वत् कन्यकाया रसेन ॥
वल्लं योज्यं जीरकेणाथ भृङ्ग्या
क्षौद्रैर्युक्तं भक्षितं च ग्रहण्याम् ।
श्वासे शूले चानिले श्लेष्मजे वा
कासेऽर्शःसु विड्ग्रहे चातिसारे ॥

समान भाग (५-५ तोले) शुद्ध पारे और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे १-१ दिन चित्रकमूल और धतूरेके रसमें खरल करके शंखमें भरदें और उसके मुखको बन्द करके उसे एक हाण्डीमें बन्द करके उसके नीचे ८ प्रहर तक अग्नि जलावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर हाण्डीमेंसे औषधयुक्त शंखको निकालकर पीसलें और उसमें १। तोला शुद्ध बछनागका चूर्ण मिलाकर घृतकुमारीके रसकी धूप में तीन भावना दें।

मात्रा—३ रत्ती.

इसे जीरे और भंगरेके चूर्ण तथा शहदके साथ सेवन करनेसे ग्रहणीविकार, श्वास, शूल, वायु, कफजरोग, खांसी, अर्श, मलावरोध और अतिसारका नाश होता है।

(७५६४) **शङ्खोदररसः (४)**

(र. का. धे. । क्षय.)

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विगुणं ताम्रभस्मकम् ।
त्रिगुणं च दैत्यमूलमायसं च त्रिभागिकम् ॥
वेदभागा माक्षिकस्य पञ्च त्रिकटुकस्य च ।
मनःशिलाया भागैकं द्वौ भागौ तालकस्य च ॥
खर्परस्य तथा त्रीणि सर्वाण्येकत्र मर्दयेत् ।
कुमारीविजयानिम्बधत्तूरार्द्रकवारिभिः ॥
प्रत्येकं भावयेत्सप्तवारांस्तीव्रातपे भिषक् ।
अस्य सर्वस्य निश्छिद्रो ग्राह्यः शंखोष्टभागिकः
तन्मध्ये निक्षिपेच्चूर्णमिष्टकापटुभूतयः ।
विमर्द्य लेपयेच्छंखं युक्त्या गुरुमुखादपि ॥
मृद्वस्त्रैः सप्तभिर्वेष्ट्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ।
पाचयेद्यामषट्कं च मन्दमध्याग्निना दृढम् ॥
निम्बुविश्वकणाकोलैः प्रत्येकं भावयेत्त्रिधा ।
वारिणाऽथ कषायेण मात्रा गुञ्जाह्वया मता ॥
कासे श्वासे क्षयेऽजीर्णे ज्वरे क्षौद्रकणायुतः ।
देयो मरिचसर्पिर्भ्यामग्निमान्द्यं जयेद्द्रुतम् ॥

बिल्वच्छागपयोयुक्तो रक्तातीसारनाशनः ।
अतीसारसमूहानां जेता विश्वकणायुतः ॥
जातीफलानुपानेन जयेत्प्रौढविसूचिकाम् ।
बाह्लीकविश्वरुचकैर्दद्याच्छूले चतुर्विधे ॥
ददीतार्शोविकारेषु त्रिफलागुडगुग्गुलुः ।
अजाजीविजयाविश्वैर्ग्रहणीरोगनाशनः ॥
गुडगुग्गुलुशुण्ठीभिः सर्ववातं हरेद्ध्रुवम् ।
शंखोदर इति ख्यातः शम्भुना निर्मितो भुवि ॥

शुद्ध पारद १ भाग, ताम्र भस्म २ भाग, शुद्ध गन्धक ३ भाग, लोह भस्म ३ भाग, स्वर्ण माक्षिक भस्म ४ भाग, त्रिकटुका चूर्ण (सोंठ, मिर्च, पीपल) ५ भाग, शुद्ध मनसिल १ भाग, शुद्ध हरताल २ भाग और खपरिया ३ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको घीकुमार (ग्वारपाठा), भांग, नीमकी छाल, धतूरे और अद्रक-के रसकी तेज़ धूपमें सात सात भावना दें। तदनन्तर सम्पूर्ण औषधके वजनसे ८ गुना वज़नी एक ऐसा शंख लें कि जिसमें छिद्रादि न हों, और उसमें वह औषध भर कर (उसके मुखको पानीमें पिसे हुवे शंखनाभिके, चूर्णसे बन्द करके) उस पर समान भाग मिश्रित लाल ईंट, सेंधानमक और अरने उपलोंकी राखके चूर्णका लेप कर दें एवं उसके सूख जाने पर उस पर सात कपर-मिट्टी करके सुखा लें। तत्पश्चात् उसे बालुका यन्त्रमें रखकर ६ पहर मृदु, मध्यम और तीव्राग्नि दें। और फिर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उस-मेंसे शंखको निकाल कर उसके ऊपरकी मिट्टी आदि धीरेसे छुड़ा दें और फिर उसे बारीक पीसकर नींबूके रस तथा सोंठ, पीपल और मिर्चके काथकी ३-३ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे खांसी, श्वास, क्षय, अजीर्ण और ज्वरका नाश होता है। काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ देनेसे अग्निमांद्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

इसे रक्तातिसारमें बेलगिरीके चूर्ण और बकरी-के दूधके साथ; अन्य प्रकारके अतिसारमें सोंठ और पीपलके चूर्णके साथ; प्रवृद्ध विसूचिकामें जायफलके चूर्णके साथ; शूल रोगमें हींग, सोंठ और काले नमकके साथ; अर्शमें त्रिफला चूर्ण, गुड़ और गूगलके साथ; ग्रहणी विकारमें जीरे, भांग और सोंठके चूर्णके साथ तथा वात विकारमें गुड़, गूगल और सोंठके साथ देना चाहिये।

(७५६५) शतपत्रिकापाकः

(वै. क. द्रु. । रक. २ राजय. ; वृ. नि. र. । राजय.)

श्वेतपुष्पसहस्रं तु घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।
घृतपक्वीकृते तत्र निक्षिपेदौषधं भिषक् ॥
सितोपला चतुःप्रस्थं चातुर्जातं पलं पलम् ।
मृद्वीका षट्पलं चैव क्षिप्त्वा मधु पलाष्टकम् ॥
धारासत्वं तवक्षीरी श्वेतजीरं पृथक् पृथक् ।
नागं वङ्गं पलार्द्धं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
कर्पूरं वल्लमात्रं च दत्त्वा स्थाप्यमृत्कुम्भके ।
भक्षयेन्निष्कमात्रं तु प्रातरेव हि पथ्यभुक् ॥
जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमान्द्ये प्रमेहके ।
दिवराभिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते ॥

प्रदरं रक्तजान् रोगान् कुष्ठार्शांसि च नाशयेत् ।
नेत्ररोगान् मुखोत्थांश्च तथा सर्वान्मुखे स्थितान् ।
नाशयेन्नात्र सन्देहो मण्डलस्य च सेवनात् ।

सेवतीके सफेद फूल १००० नग ले कर उन्हें २ सेर घीमें भूनें और फिर उनमें ४ सेर मिसरी; ५-५ तोले दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण; ३० तोले (पत्थर पर पिसी हुई) मुनक्का तथा ४० तोले शहद और २॥-२॥ तोले गिलोयका सत, तबाखीर, सफेद जीरेका चूर्ण, वंग भस्म और नागभस्म एवं ३ रत्ती कपूर मिला कर पत्थरकी बरनी आदिमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ माशे।

इसके ४० दिनके सेवनसे जीर्ण ज्वर, क्षय, कास, अग्निमांद्य, प्रमेह, दिनको या रात्रिको आने वाला ज्वर, शिरोरोग, प्रदर, रक्तविकार, कुष्ठ, अर्श, नेत्ररोग और मुखरोगोंका नाश हो जाता है ।

(७५६६) शतमूल्यादिलौहम्

(भै र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । रक्तपित्ता.)

शतमूली सिता धान्यनागकेशरचन्दनैः ।
त्रिकत्रयतिलैर्युक्तं लौहं सर्वगदापहम् ॥
तृष्णादाहज्वरच्छर्दि रक्तपित्तहरं परम् ॥

शतावर, मिश्री, धनिया, नागकेसर, सफेद चन्दन, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), त्रिफला, त्रिमद (नागरमोथा, चीता, बायबिडंग) और तिल; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल कर लें ।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।

इसके सेवनसे तृष्णा, दाह, ज्वर, छर्दि और रक्तपित्तका नाश होता है ।

(७५६७) शतावरीमण्डूरम् (१) (बृहद्)

(भै. र. । शूला. ; र. र.)

मण्डूरस्याततप्तस्य वराक्वाथप्लुतस्य च ।
चूर्णीकृत्य पलान्यष्टौ शतावरीरसस्य च ॥
दध्नश्च पयसश्चाष्टावामलक्या रसस्य च ।
चतुःपलं घृतस्यापि शाणमात्रं विनिःक्षिपेत् ॥
सिद्धे प्रत्येकमेतेषामजाजीधान्यमुस्तकम् ।
त्रिजातककणा पथ्या उपयुक्तं निहन्ति च ॥
शूलं दोषत्रयोद्भूतमम्लपित्तञ्च दारुणम् ।
अरुचिञ्च वमिञ्चैव कासश्वासञ्च नाशयेत् ॥

तपा तपा कर त्रिफलेके क्वाथमें बुझाया हुवा भस्मीभूत मण्डूर ४० तोले, शतावरका रस १ सेर, दही १ सेर, दूध १ सेर, आमलेका रस १ सेर और घी आधा सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्निपर पकावें और पाक तैयार होने पर उसमें जीरा, धनिया, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात, पीपल और हर्रका ३।॥-३।॥ माशे चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे त्रिदोषज शूल, दारुण अम्लपित्त, अरुचि, वमन, कास और श्वासका नाश होता है ।

(७५६८) शतावरीमण्डूरम् (२)

(व. से. ; यो. र. ; वृ. मा. ; भै. र. ; वृ. नि. र. ; र. र. ; धन्व. ; र. का. धे. । शूला. ; वृ. यो. त. । त. ९५ ; च. द. । परिणाम शूला. २७; ग. नि. । शूला. २३)

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरस्य पलाष्टकम् ।
शतावरीरसस्याष्टौ दध्नश्च पयसस्तथा ॥
पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिषः ।
विपचेत्सर्वमेकस्थं यावत्पिण्डत्वमाप्नुयात् ॥
सिद्धं तु भक्षयेन्मध्ये मान्ते भुक्तस्य चाग्रतः।
वातात्मकं पित्तभवं शूलं च परिणामजम् ॥
निहन्त्येव हि योगोऽयं मण्डूरस्य न संशयः ।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं यद्वा बहुसुतारसे ॥
अथवा चोभयोरेव लोहकिट्टस्य सप्तधा ।
रसो गन्धः शुभः पाके वर्तिः स्याद्यदि मर्दनात्॥
तदा पाकं विजानीयान्मण्डूरस्य भिषग्वरः ।

शुद्ध मंडूर भस्म ४० तोले, शतावरका रस ८० तोले, दही ८० तोले, दूध ८० तोले और गोघृत ४० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब सबका एक पिण्ड सा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतारकर ठण्डा करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे भोजनके आदि; मध्य और अन्तमें सेवन करनेसे वातज और पित्तज परिणामशूल नष्ट होता है ।

इस योगमें जो मण्डूर डाला जाय वह अग्निमें तपा तपा कर दूधमें या शतावरके रसमें या दोनोंमें सात बार बुझा हुवा होना चाहिये ।

मण्डूरका पाक करते करते जब उसकी गन्ध और स्वाद ठीक हो जाय तथा उंगलीसे मलनेसे बत्ती बनने लगे तो पाक सिद्ध समझना चाहिये ।

(७५६९) शतावरीमोदकः

(र. र. ; धन्व. । वाजीकरणा.)

शतावरी श्वदंष्ट्रा च बला चातिबला तथा ।
मर्कटीक्षुरबीजञ्च विदारीकन्दजं रजः ॥
एतानि समभागानि पलिकानि विचूर्णयेत् ।
चूर्णाच्चतुर्गुणं देयं त्रैलोक्यविजयारजः ॥
सर्वमेकीकृतं यावत्तदर्द्धं माहिषं पयः ।
तावन्मात्रेण दातव्यं शतावर्या रसन्तथा ॥
विदार्याः स्वरस प्रस्थं सितापलशतं न्यसेत् ।
गोलयित्वा सितान्दत्वा पात्रे ताम्रमये दृढे ॥
पचेत्पाकविधिज्ञोऽपि मोदकः परमो हितः ।
त्र्यूषणं त्रिफला भृंगी त्रिजातं सैन्धवं शठी ॥
धान्यकं वालकं मुस्तं द्विजीरं कुन्दुरुर्मुरा ।
काकोली क्षीरकाकोली द्राक्षा तुगा मृगाण्डजम् ॥
जातीकोषफलं मांसी तालाङ्कुरकशेरुकम् ।
शतपुष्पा चवी दारुग्रन्थिकं सलवङ्गकम् ॥
कुष्ठं यमानिका चात्मगुप्ता कट्फलमेथिका ।
मधुरीका च मधुकं तालीशं वरखर्जुरम् ॥
टङ्कणञ्च विचूर्ण्याथ प्रत्येकं कोलसम्मितम् ।
चूर्णार्द्धं शोधितं गन्धं गन्धपादांशपारदम् ॥
कज्जलीकृत्य दत्वा तं लोडयेत्त्रिसुगन्धिना ।
यथाशक्त्या मोदकं च कर्पूरेणाधिवासयेत् ॥
उद्धृत्यस्निग्धभाण्डे तं प्रस्थाप्य च भिषग्वरैः ।
शिवं सम्पूज्य सगणं धन्वन्तरिमुनिन्तथा ॥
कोल प्रमाणं कर्त्तव्यं क्षीरं चानु पिबेन्नरः ।
प्रातर्भोजनकाले वा सायंकालेऽपि भक्षयेत् ॥

प्रमदाशतं च भजते न च शुक्रक्षयो भवेत् ।
नातःपरतरं किंचिद्विद्यते वाजिकर्मसु ॥
शतावरीमोदकं च वासुदेवेन निर्मितम् ॥

शतावर, गोखरु, खरैटीके बीज (या मूल त्वक्), अतिबला (कंघी), कौंचके बीज, तालमखाना और विदारीकन्द इनका चूर्ण ५-५ तोले, भांगका चूर्ण पूर्वोक्त समस्त चूर्णसे चार गुना (१४० तोले), भैंसका दूध और शतावरका रस ३५-३५ छटांक (प्रत्येक १७५ तोले), विदारीकन्दका रस २ सेर और मिश्री ६। सेर ले कर सबको एकत्र मिलाकर ताम्र पात्रमें पकावें और चाशनी तैयार हो जाने पर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, काकड़ासिंगी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, सेंधानमक, कचूर, धनिया, सुगन्धबाला, नागरमोथा, काला और सफेद जीरा, कुन्दरु गोंद, मुरामांसी, काकोली, क्षीरकाकोली, मुनक्का, बंसलोचन, कस्तूरी, जावत्री, जायफल, जटामांसी, तालांकुर, कसेरु, सोया, चव्य, देवदारु, गठिवन, लौंग, कूठ, अजवायन, कौंचके बीज, कायफल, मेथी, सौंफ, मुलैठी, तालीसपत्र, खजूर और सुहागेकी खील; इनका ७॥-७॥ माशे चूर्ण मिलावें तथा इस सम्पूर्ण चूर्णसे आधा शुद्ध गंधक और गंधकसे चौथाई शुद्ध पारद ले कर दोनोंकी कज्जली बना कर उसमें मिला दें और छोटे छोटे मोदक बना कर उन्हें दालचीनी, इलायची और तेजपातके मिश्रित चूर्णमें आलोडित करें (रौंदल लें) और फिर मृत्पात्र या कांचकी बरनीमें रख कर उसमें थोड़ासा कपूर (बिना पिसा) डाल दें कि जिससे वे सुगन्धित हो जायं।

इन्हें यथोचित मात्रानुसार गोदुग्धके साथ प्रातः या भोजनके समय अथवा सायंकालके समय सेवन करनेसे अनेकों स्त्रियोंसे समागम करनेकी शक्ति आ जाती है।

शम्बूकचूर्णम्

प्र. सं. ७५३१ शङ्खचूर्णम् (२) देखिये।

(७५७०) शम्बूकयोगः

(व. से. । परिणाम शूला. ; यो. र. । शूला. ; र. चं. ; वृ. मा. ; वृ. नि. र. । शूला. ; वृ. यो. त. । त. ९५)

शम्बूकजं भस्म पीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ।
पक्तिजं विनिहन्त्येतच्छूलं विष्णुरिवासुरान् ॥

उष्ण जलके साथ क्षुद्र शंखकी भस्म सेवन करनेसे पक्तिशूल तुरन्त नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—आधा माशा।)

(७५७१) शम्बूकादिवटी (१)

(भै. र. । ग्रहण्य. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. ; वृ. नि. र. । ग्रहण्य. ; वृ. यो. त. । त. ६७)

दग्धशम्बूकसिन्धूत्थं तुल्यं क्षौद्रेण मर्दयेत् ।
माषैकेन निहन्त्याशु वातसङ्ग्रहणीगदम् ॥

क्षुद्र शंखकी भस्म और सेंधानमक समान भाग ले कर एकत्र खरल करें।

इसे शहदमें मिलाकर खानेसे वातज संग्रहणी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

मात्रा—१ माशा।

(७५७२) शम्बूकादिवटी (२)

(यो. र. । शूला.; वृ. यो. त. । त. ९५ ; व. से.; ग. नि. । शूला. २३ ; वृ. नि. र. । शूला.)

शम्बूकमूषणं[1] चैव पञ्चैव लवणानि च ।
समांशां गुटिकां कृत्वा कलम्बुकरसेन च ॥
प्रातर्भोजनकाले वा भक्षयेच्च यथाबलम् ।
शूलाद्विमुच्यते जन्तुः सहसा परिणामजात् ॥

क्षुद्र शंख भस्म, काली मिर्च (पाठान्तरके अनुसार त्रिकुटा) और पांचों नमक समान भाग ले कर सबको कलमी शाकके रसमें घोट कर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें प्रातः काल या भोजनके समय खानेसे परिणाम शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(७५७३)शम्बूकाद्या गुटिका

(ग. नि. । गु. ४)

पलानि त्रीणि शम्बूकाल्लोहचूर्णात्पलद्वयम् ।
रसाञ्जनात्पलं चैकं लोहकिट्टात्पुनः पलम् ॥
सर्वैः समां शर्करां च मधुना च परिप्लुताम् ।
सर्वमेतत्समाहृत्य मोदकान्कारयेद्भिषक् ॥
तान् भक्षयेत्प्रयत्नेन शूले गुल्मे हृदामये ।
विशेषतः पित्तशूले शोफे पाण्डूदरे भ्रमे ॥
दुर्नाम्नि कासे कृच्छ्रे च प्रमेहाश्मरिवृद्धिषु ।
अग्निमान्द्ये स्मृतिभ्रंशे पीनसार्धावभेदके ॥

क्षुद्र शंखकी भस्म १५ तोले, लोह भस्म १० तोले, रसौत ५ तोले, लोहकिट्ट (मण्डूरभस्म) ५ तोले और खांड सबके बराबर (३५ तोले) ले कर सबको एकत्र खरल करें और शहदमें मिला कर (३-३ माशेके) मोदक बना लें।

इनके सेवनसे शूल, गुल्म, हृद्रोग और विशेषतः पित्तज शूल, शोथ, पाण्डु, उदर रोग, भ्रम, अर्श, कास, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, अश्मरि, वृद्धिरोग, अग्निमांद्य, स्मृति नाश, पीनस और अर्द्धावभेदकका नाश होता है ।

(७५७४) शम्भूरसः

(र. का. धे. । अग्निमांद्य)

शुद्धसूतस्य भागैकं कर्षैकञ्च बलेस्तथा ।
अभ्रकस्य च कर्षं स्यात्तथैव शङ्खभस्मनः ॥
विषसिन्धुजगत्कोलाः प्रत्येकं शाणसम्मिताः ।
एकत्र मर्दयेच्चूर्ण्यं सर्वं कज्जलसन्निभम् ॥
भुजङ्गवल्लीपर्णेन गुञ्जैको वह्निमांद्यजित् ।
अरुचौ वह्निमान्द्ये च प्रयोक्तव्यो रसोत्तमः ॥
अयं शम्भुरिति ख्यातो वह्निसन्दीपनः परः ।

शुद्ध पारद १ भाग (१। तोला), शुद्ध गंधक १। तोला, अभ्रक भस्म १। तोला, शंख भस्म १। तोला तथा शुद्ध बछनाग, सेंधा नमक, सोंठ और बेर ३॥।-३॥। माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर अच्छी तरह खरल करें फिर पानके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य और अजीर्णका नाश होता है ।

१ शम्बूकं त्र्यूषणमिति पाठान्तरम्

(७५७५) **शर्करादिलेहः**

(वृ. नि. र. । विषा.)

शर्कराचूर्णसंयुक्तं चूर्णं ताप्यसुवर्णयोः ।
लेहः प्रशमयत्युग्रं नानायोगकृतं विषम् ॥

खांड, स्वर्णमाक्षिकभस्म और स्वर्ण भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सेवन करनेसे उग्र कृत्रिम विष नष्ट होता है ।

(७५७६) **शर्करामण्डूरम्** (१)

(र. का. धे. । शूला.)

विधिवच्छुद्धमण्डूरचूर्णप्रस्थसमन्वितम् ।
द्विप्रस्थं शर्करायाश्च षट्पलानि घृतात्तथा ॥
वर्याश्च स्वरसार्धं तु धात्रीरसतुलार्धकम् ।
एकीकृत्य पचेदेतद्यावत्तत्तन्तुली भवेत् ॥
त्रिफलायाः पृथक्चूर्णं कुडवं तत्र निक्षिपेत् ।
व्योषं त्रिलवणं कुष्ठं तुम्बुरूणि च दीप्यकम् ॥
द्विजीरकविडङ्गानि चातुर्जातकमेव च ।
एषां चूर्णीकृतानां च भागं पलमितं पृथक् ॥
पलान्यष्टौ शिवाचूर्णात्कुडवं च यवाग्रजात् ।
पलं पलं कणामूलं चव्यचित्रकमूलतः ॥
उत्तार्य शीते माक्षीकात्तत्त्रिपलसम्मितम् ।
खादेदग्निबलापेक्षी भोजनादौ विचक्षणः ॥
शूलं सर्वोद्भवं पक्तिशूलं हन्ति विशेषतः ॥

यथाविधि शुद्ध मण्डूर १ सेर, खांड २ सेर, घी ६० तोले, शतावरका रस ६। सेर और आमलेका रस ६। सेर ले कर सबको एकत्र मिला-कर पकावें और पाक तैयार होने पर उसमें निम्न-लिखित प्रक्षेप मिला दें—

प्रक्षेप द्रव्य—हर्र, बहेड़ा, आमला २०-२० तोला, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक; काला नमक, बिड नमक, कूठ, तुम्बरु, अजवायन, सफेद जीरा, काला जीरा, बायबिड़ंग, दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसर; प्रत्येकका चूर्ण ५-५ तोले; भुईआमलेका चूर्ण ४० तोले, जवाखार २० तोले तथा पीपलामूल, चव और चित्रकमूलका चूर्ण ५-५ तोले ।

प्रक्षेप मिलानेके पश्चात् जब औषध ठण्डी हो जाय तो उसमें ३० तोले शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे भोजनके आदिमें सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शूलोंका और विशेषतः पक्तिशूलका नाश होता है ।

शर्करामण्डूरम् (२)

(र. र. ; र. का. धे. । शूला.)

प्र. सं. ७५७७ " शर्करालोहम् (१) " देखिये ।

(७५७७) **शर्करालोहम्** (१)

(शर्करामण्डूरम्)

(भै. र. ; र. र. ; र. का. धे. । शूला.)

शतावरीरसप्रस्थे प्रस्थे च सुरभीजले ।
अजायाः पयसः प्रस्थे प्रस्थे धात्रीरसस्य च ॥
लौहमलपलान्यष्टौ शर्करापलषोडश ।
दत्त्वाज्यकुडवं तत्र शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
सिद्धे शीते घनीभूते द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
विडङ्गत्रिफलाव्योषयमानी गजपिप्पली ॥

द्विजीरकं घनं लौहमभ्रं कर्षद्वयं पृथक् ।
खादेदग्निबलापेक्षी भोजनादौ विचक्षणः ॥
शूलं सर्वभवं हन्ति पित्तशूलं विशेषतः ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कुक्षिवस्तिगुदे रुजम् ॥
कासं श्वासं तथा शोथं ग्रहणीदोषमेव च ।
यकृत्प्लीहोदरानाहराजयक्ष्मविनाशनम् ॥
विष्टम्भमामं दौर्बल्यमग्निमान्द्यञ्च यद्भवेत् ।
एतान् रोगान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

शतावरका रस २ सेर, गोमूत्र २ सेर, बकरीका दूध २ सेर और आमलेका रस २ सेर तथा मण्डूर भस्म ४० तोले और खांड ८० तोले एवं घी ४० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और पाक तैयार हो जाने पर उसे ठण्डा करके उसमें बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, गजपीपल, काला जीरा, सफेद ज़ीरा, नागरमोथा, लोह भस्म और अभ्रक भस्म, २॥-२॥ तोले मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे साधारणतः समस्त शूल और विशेषतः पित्तशूल, हृच्छूल, पार्श्वशूल, कुक्षिशूल, बस्तिशूल, गुदपीड़ा, एवं खांसी, श्वास, शोथ, ग्रहणी विकार, यकृत्, प्लीहा, उदर रोग, आनाह, राजयक्ष्मा, कब्ज़, आम, निर्बलता और अग्निमांद्यका इस प्रकार नाश हो जाता है जिस प्रकार सूर्योदयसे अन्धकार ।

इसे भोजनके आरम्भमें खाना चाहिये ।

(मात्रा—६ माशे ।)

पाठान्तरके अनुसार—

विडङ्गके स्थान पर पीपल है ।

घी ८ पल (८० तोले) है ।

लोह तथा अभ्रकका अभाव है ।

(७५७८) शर्करालौहम् (२)

(रसे. सा. सं. । शूला.; रसे. चि. म. । अ. ९; र. र.; धन्व.; र. रा. सु.)

त्रिफलायास्तथा धात्र्याश्चूर्णं वा काललौहजम् ।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु योजयेत् ॥

त्रिफलाका चूर्ण १ भाग, आमलेका चूर्ण १ भाग, लोहभस्म २ भाग और खांड ४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल कर लें ।

यह चूर्ण समस्त प्रकारके शूलोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा—४ से ८ रत्ती तक ।)

(७५७९) शर्कराद्यलौहम्

(रसे. सा. सं. । रक्तपित्ता.; रसे. चि. म. । अ. ९; र. का. धे.; धन्व.; र. रा. सु. । रक्तपित्ता.)

शर्करातिलसंयुक्तं त्रिकत्रययुतन्त्वयः ।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु चाम्लपित्तहरं परम् ॥

त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), त्रिमद (नागरमोथा, चीता, बायबिड़ंग), तिल और खांड १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करें ।

इसके सेवनसे रक्तपित्त और अम्लपित्तका नाश होता है।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(७५८०) शशाङ्करसः (१)

(र. का. धे । कुष्ठा.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं जीर्येदिष्टाख्ययन्त्रके ।
उद्धृत्य तुल्यगन्धेन जम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ॥
भृङ्गवाकुचिकोरण्टा अपामार्गापराजिताः ।
सर्पाक्ष्याश्च द्रवैर्मर्द्यं प्रतिद्रवं दिनं दिनम् ॥
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे मृलिप्तं स्वेदयेल्लघु ।
द्वियामं वालुकायन्त्रे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
अष्टगुञ्जामितं खादेच्छशाङ्कः श्वेतकुष्ठजित् ।

१ भाग शुद्ध पारदमें इष्टिका यन्त्र द्वारा २ भाग शुद्ध गन्धक जारण करें और फिर उसके बराबर शुद्धगन्धक मिला कर कज्जली बनावें। तदनन्तर उसे १-१ दिन जम्बीरी नीबू, भंगरा, बावची, पियोबांसा, अपामार्ग, कोयल और सर्पाक्षीके रसमें खरल करके एक गोला बनावें और उसे कपड़ेमें लपेट कर उसपर मिट्टीका लेप कर दें एवं उसे वालुका यन्त्रमें रख कर २ पहर तक मृदग्नि पर स्वेदित करें और फिर स्वांगशीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

मात्रा—८ रत्ती।

इसके सेवनसे श्वेतकुष्ठ नष्ट होता है।

(नोट—८ रत्ती मात्रा अधिक है परन्तु कुष्ठ रोगमें कुछ अधिक मात्रा ही दी जाती है अतः मात्राका निर्णय वैद्यको अपने अनुभवके आधार पर करना चाहिये।)

(७५८१) शशाङ्करसः (२)

(र. र. स. । उ. अ. २७)

मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरुकैः ।
मर्दितं हेमसूताभ्रं मूषास्थं पुटपाचितम् ।
शाल्मलीचूर्णसंयुक्तं वासराण्येकविंशतिः
भक्षयित्वा चतुर्माषं गव्यं क्षीरं पिबेदनु
सर्वाङ्गोद्वर्तनं कुर्यात्सयवैः शाल्मलीरसैः
अन्वहं मधुराहारः सहस्रं रमते स्त्रियः ॥
शशाङ्कोऽयं रसः प्रोक्तो वाजीकरणपूर्वकः।

स्वर्ण भस्म, पारद भस्म और अभ्रक भस्म समान भाग ले कर तीनोंको एकत्र खरल करके मूसली, केलेकी जड़, असगन्ध और कसेरुके रसमें १-१ दिन घोटें। तदनन्तर उसका एक गोला बना कर उसे मूषामें बन्द करके (लघु) पुटमें पकावें।

इसमें (समान भाग) सेंभलकी मूसलीका चूर्ण मिला कर २१ दिन तक गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे काम शक्ति अत्यन्त प्रबल हो जाती है।

इसके सेवन कालमें शरीर पर नित्य प्रति सेंभलके रसमें मिले हुवे यवचूर्णका मर्दन करना और मधुराहार करना चाहिये।

मात्रा—४ माशे।

(व्यवहारिक मात्रा—३-४ रत्ती।)

(७५८२) शशाङ्कलेखादिलेहः

(यो. र. । कुष्ठा.; वृ. यो. त. । त. १२०; वृ. मा. । कुष्ठा.)

शशाङ्कलेखा सविडङ्गसारा
सपिप्पलीका सहुताशमूला ।

सायोमला सामलका सतैला
सर्वाणि कुष्ठानि निहन्ति लीढा ॥

बावची, वायविडंगकी गिरी, पीपल, चीता-मूल, मण्डूरभस्म, आमला और तेल समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(७५८३) शशिलेखावटी
(शशिलेखकरसः)

(यो. र. । कुष्ठा.; वृ. यो. त. । त. १२०; रसे. चि. म. । अ. ९; र. का. धे.)

शुद्धसूतं समं गन्धं तुल्यं च मृतताम्रकम् ।
मर्दितं बाकुचीक्वाथैर्दिनैकं वटकीकृतम् ॥
निष्कमात्रां सदा खादेच्छ्वित्रघ्नीं शशिलेखिकाम्
बाकुचीतैलकर्षैकं सक्षौद्रमनुपाययेत् ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक १-१ भाग तथा ताम्रभस्म २ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ दिन बावची के क्वाथमें घोटकर १-१ निष्ककी गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे श्वित्र नष्ट होता है।

औषध खानेके पश्चात् १। तोला बावचीका तेल शहद मिलाकर पीना चाहिये।

(७५८४) शशिशेखररसः

(भै. र. । वृद्धच.)

लौहमभ्रञ्च सिन्दूरं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ।
अस्य रक्तिमितं दद्यादन्त्ररोगनिवृत्तये ॥

लोहभस्म, अभ्रकभस्म और रससिन्दूर समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें और घृतकुमारीके रसमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अन्त्ररोग नष्ट होता है।

(७५८५) शाङ्करी ज्वराङ्कुशः

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

हरिद्रा च सुधाक्षारं सिन्दूरं जातिकाफलम् ।
एतानि पलमात्राणि गृह्णीयात्तु सुधी नरः ॥
हरितालं च भल्लातं पृथक् पलचतुष्टयम् ।
एषां कृत्वा सूक्ष्मचूर्णं भावयेद्भिः पृथक् पृथक्
काकमाची भृङ्गराजसूरणस्य रसैः क्रमात् ।
अर्कदुग्धैः स्नुहीक्षीरैस्तद्वद्देयं पुटत्रयम् ॥
शुष्कं तु हण्डिकामध्ये कृत्वा देयं शरावकम् ।
पश्चाद्वै सन्धि संरोधं गुडलवणक्षारकैः ॥
हण्डिकां भस्मनापूर्य ह्यारण्योपलजैर्नवैः ।
तस्या मुखं मुद्रयित्वा मृद्भिः पटयुतैर्ध्रुवम् ॥
पश्चाच्चूल्यां समादाय हठाग्निं तु दिनार्धकम्
स्वाङ्गशीतलमुत्तार्य तोलयेत् सिद्धमौषधम् ॥
तस्य सिद्धस्य षष्ठांशं मरिचं दीयते बुधैः ।
सूक्ष्मचूर्णं विधायाथ मात्रा गुञ्जाद्वयं ददेत् ॥
पर्णपत्रेण मतिमान् सशीतज्वरसङ्घकम् ।
दाहयुक्तं तु विषमज्वरान्सर्वान् व्यपोहति ॥
सत्यमुक्तं शङ्करेण सर्वलोकस्य श्रेयसे ॥

हल्दी, सेहुंड (थूहर) का क्षार, रस सिन्दूर, और जायफल ५-५ तोले तथा शुद्ध हरताल और भिलावा २०-२० तोले लेकर सबका

बारीक चूर्ण करके उसे मकोय, भंगरे और सूरण (ज़िमीकन्द) के रस तथा आक और थूहरके दूधकी ३-३ भावना देकर सुखा लें और फिर कपरमिट्टी की हुई हांडी में भरकर उस पर (औषध पर) शराव ढकदें और सन्धिको गुड़, सेंधानमक तथा सुहागेके मिश्रणसे बन्द करके हाण्डीके शेष भागमें नवीन अरने उपलोंकी राख भरदें और उसके मुख पर शराव ढककर मजबूत कपड़मिट्टी करदें। तदनन्तर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर ४ पहर तीव्राग्नि पर पकावें और फिर हाण्डीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर तोल लें और उसका छठा भाग काली मिर्चका चूर्ण मिला-कर बारीक चूर्ण करके रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे पानमें रखकर खिलाना चाहिये।

इसके सेवनसे शीत ज्वर (म्लेरिया) और दाहयुक्त विषम ज्वरका नाश होता है।

(७५८६) शिखिपिच्छभस्मयोगः

(यो. र. । हिक्का.; यो. त. । त. २९; वृ. यो. त. । त. ७९)

शिखिपिच्छभस्म कृष्णाचूर्णं मधुमिश्रितं मुहुर्लीढम्।
हिक्कां हरति प्रबलां श्वासं चैवातिदुस्तरं छर्दिम्॥

मोरपंखकी भस्म और पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर शहदके साथ बार बार चाटनेसे प्रबल हिचकी, श्वास और दुस्साध्य छर्दिका नाश होता है।

(७५८७) शिखिवाडवरसः

(र. का. धे. । गुल्मा.)

मारितं सूतताम्राभ्रं गन्धकं माक्षिकं समम्।
मर्दयेन्निम्बुकद्रावैर्यवक्षारयुतं दिनम्॥
त्रिगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं नागवल्लीदलेन च।
वातगुल्महरः ख्यातो रसोऽयं शिखिवाडवः॥

पारद भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक और स्वर्ण माक्षिक भस्म तथा जवाखार १-१ भाग ले कर सबको १ दिन नीबूके रसमें खरल करें।

मात्रा—३ रत्ती।

इसे पानमें रख कर खाना चाहिये।

इसके सेवनसे वातज गुल्म नष्ट होता है।

(७५८८) शिरोरोगारिरसः

(र. र. स. । उ. अ. २४)

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं कान्तं ताम्रं मृतं समम्।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं पिण्डं तन्माषमात्रकम्॥
सप्ताहात्सूर्यवर्तादीन् शिरोरोगान्विनाशयेत्॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, कान्त लोह भस्म और ताम्र भस्म समान भाग ले कर सबको १ दिन सेहुंड (थूहर) के दूधमें घोट कर उड़दके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे १ सप्ताहमें सूर्यावर्तादि शिरो रोग नष्ट हो जाते हैं।

(७५८९) शिरोवज्ररसः

(शिरःशूलाद्रिवज्ररसः)

(भै. र.; रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । शिरोरोगा.)

पलं सूतं पलं गन्धं पलं लौहं पलं रवेः।
गुग्गुलोः पलचत्वारि तदर्धं त्रिफलारजः॥

यष्टिमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरक्रिमिनाशनम् ।
तोलकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥
क्काथेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभावयेत् ।
घृतयोगेन कर्त्तव्या माषैकप्रमिता वटी ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाथ वा ।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
शिरोर्त्तिं नाशयत्याशु वज्रमुक्तमिवासुरम् ।
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म और ताम्र भस्म ५-५ तोले; शुद्ध गूगल २० तोले, त्रिफलाका चूर्ण १० तोले तथा मुलैठी, पीपल, सोंठ, गोखरु, बायबिड़ंग और दशमूल आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर दशमूलके क्काथमें घोटें और घीका हाथ लगा कर १।-१। माशेकी गोलियां बना लें।

इन्हें बकरीके दूध, शहद या गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे वातज, पित्तज और कफज तथा सन्निपातज, शिर पीड़ा शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(७५९०) शिलागन्धकवटी

(रसे. सा. सं.; र. चं. । अर्शो.)

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाप्लुतम् ।
सप्ताहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत् ॥
अर्शसश्चानुलोम्यार्थं हताग्निबलवर्द्धनम् ।
रक्तिकाद्वितयं खादेत्कुष्ठादिरहितो नरः ॥

शुद्ध मनसिल और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर दोनोंको पृथक् पृथक् ७-७ दिन भंगरेके रसमें घोटें और फिर एकत्र मिलाकर थोड़ासा घी डालकर घोटें तथा अन्त में शहदके साथ घोट कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे उचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे अर्श और अग्निमांद्यका नाश होता तथा वायु अनुलोम होता है।

इसे कुष्ठादि से पीड़ित रोगियोंको न देना चाहिये।

(७५९१) शिलाजतुचूर्णम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ९)

द्वे पले मार्कवं धातुमाक्षिकं च पुनर्नवा ।
तुगा स्पृक्का शालिपर्णी वासकं च दुरालभा ॥
चूर्णार्धेन समं योज्यं त्रिगन्धं मरिचानि च ।
तालीसं मगधा चैव तदर्धेन शिलोद्भवम् ॥
शिलाभेदं तदर्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् ।
समेन तिलचूर्णं तु शर्करा समभागिकम् ॥
भुक्त्वा पश्चात् क्षीरपानं शस्यते घृतसंयुतम् ।
तेन क्षयो राजयक्ष्मा कामला च विनश्यति ॥
अपस्मारं जयत्याशु बलवीर्याधिको भवेत् ।
शाम्यन्ति च महारोगाः शुक्राढ्यो जायते नरः ॥

काला भंगरा, स्वर्णमाक्षिक भस्म, पुनर्नवा, बंसलोचन, ब्राह्मी, शालपर्णी, बासा और जवासा १०-१० तोले; दालचीनी, इलायची, तेजपात, काली मिर्च, तालीसपत्र और पीपल समान भाग मिश्रित ४० तोले, शुद्ध शिलाजीत २० तोले और पाषाणभेद १० तोले तथा इन सबके बराबर

काले तिल और तिलोंसे दो गुनी खांड लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

इसे घृतयुक्त दूधके साथ सेवन करनेसे क्षय, राजयक्ष्मा, कामला और अपस्मारका शीघ्र ही नाश होकर बलवीर्यकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(७५९२) **शिलाजतुयोगः** (१)

(न. मृ. । त. ७ ; यो. त. । त. ५१ ; वृ. नि. र. । प्रमेहा.; यो. र.)

शिलाजतुरसं पीत्वा प्रातः क्षीरसितायुतम् ।
मुच्यते सर्वमेहेभ्यस्त्रिसप्तदिवसैर्नरः ॥

प्रातः काल मिश्री युक्त दूधके साथ शिलाजीत सेवन करनेसे ३ सप्ताहमें समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—४ रत्ती ।)

(७५९३) **शिलाजतुयोगः (२)**

(यो. र. । यक्ष्मा. ; ग. नि. । राजय. ९ ; र. चं. ; भै. र. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । क्षय. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

शिलाजतु मधु व्योष ताप्यलोहरजांसि च ।
क्षीरभुग्लेढि तस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥

शिलाजीत, सोंठ, मिर्च, पीपल, स्वर्ण माक्षिक भस्म और लोह भस्म समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिला कर सेवन करने और दुग्धाहार करनेसे क्षयका शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

(मात्रा—६ रत्ती ।)

(७५९४) **शिलाजतुयोगः** (३)

(वृ. यो. त. । त. ९१)

छिन्नोद्भवा कषायेण सेव्यं शुद्धं शिलाजतु ।
पञ्चकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशान्तये ॥

पञ्चकर्म द्वारा शरीर शुद्धिके पश्चात् गिलोयके काथके साथ शुद्ध शिलाजीत सेवन करनेसे वातरक्तका नाश होता है ।

(७५९५) **शिलाजतुयोगः** (४)

(र. का. धे. । शोथा)

शिलाह्वयं वा त्रिफलारसेन
हन्यात् त्रिदोषं श्वयथुं प्रसह्य ।

त्रिफलाके काथके साथ शिलाजीत सेवन करनेसे त्रिदोषज शोथ नष्ट होता है ।

(७५९६) **शिलाजतुयोगः** (५)

(यो. चि. म. । अ. १; र. र. । राजय. ; वा. भ. । उ. अ. ३९ ; ग. नि. । राजय. ९ ; र. र. स. । उ. अ. २६; यो. र. । पाण्डु. ; र. चं. । वाजी.)

शिलाजतुक्षौद्रविडङ्गसर्पि-
र्लोहाभयापारदताप्यभक्षः ।
आपूर्यते दुर्बलदेहधातु-
स्त्रिपञ्चरात्रेण यथा शशाङ्कः ॥

शिलाजीत, बायबिडंग, लोह भस्म, हर्र, पारद भस्म (या रस सिन्दूर) और स्वर्ण माक्षिक भस्म समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीमें मिला कर सेवन करनेसे १५ दिनमें ही दुर्बल देह और क्षीणधातु व्यक्तिका शरीर पुष्ट हो जाता है ।

(७५९७) **शिलाजतुयोगः** (६)

(वृ. मा. । वातरक्ता.)

युक्पञ्चमूलपयसा लघुपञ्चमूल्या
क्वाथेन वाऽमृतलता क्वथनेन वाऽपि ।
वाट्यालकस्य सलिलेन युतं भृतेन
पीतं शिलाजतु समीरणशोणितघ्नम् ॥

दशमूलसे सिद्ध दूधके साथ या लघु पंचमूलके क्राथके साथ अथवा गिलोय या पीले फूलकी खरैंटीके क्राथके साथ शिलाजीत सेवन करनेसे वातरक्त नष्ट होता है ।

(७५९८) **शिलाजतुयोगः** (७)

(यो. र.; वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा.; वृ. यो. त. । त. १०१)

सशर्करं च ससितं लीढं सिद्धं शिलाजतु ।
निहन्ति मूत्रजठरं मूत्रातीतं च देहिनः ॥

खांड, चांदी भस्म और शुद्ध शिलाजीत एकत्र मिला कर सेवन करनेसे मूत्रजठर और मूत्रातीतका नाश होता है ।

(७५९९) **शिलाजतुयोगः** (८)

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ५)

पञ्चमूलकषायेण सक्षीरेण शिलाजतु ।
पिबेत्तस्य प्रयोगेण वातगुल्मात् प्रमुच्यते ॥

पञ्चमूल के क्वाथ और दूधके साथ शिलाजीत सेवन करनेसे वातज गुल्म नष्ट होता है ।

(७६००) **शिलाजतुयोगः** (९)

(यो. र. । अश्मर्या.; वृ. नि. र. । अश्मर्य.)

अश्मर्यां चाश्मरीकृच्छ्रे शिलाजतु समाक्षिकम् ।
यवक्षारं गोक्षुरं च खादेद्वा चाश्मरीहरम् ॥

शहदके साथ शिलाजीत सेवन करने या यवक्षार और गोखरुका चूर्ण सेवन करनेसे अश्मरी और उससे होनेवाला मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ।

(७६०१) **शिलाजतुयोगः** (१०)

(यो. र. ; वृ. मा. ; व. से. ; वृ. नि. र. । उरुस्तम्भा. ; धन्व. ; रसे. सा. सं.)

शिलाजतुं गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
ऊरुस्तम्भे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीरसेन वा ॥

शुद्ध शिलाजीत या गूगल अथवा पीपल या सोंठ गोमूत्रके साथ या दशमूलके क्राथके साथ सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भ नष्ट होता है ।

(७६०२) **शिलाजतुयोगः** (११)

(ग. नि. । उदरा. ३२)

पटोलत्रिफलातिक्तागवाक्षिक्वाथसंयुतम् ।
शिलाजतुं प्रयुञ्जीत जीर्णे क्षीरौदनाशनः ॥

पटोल, त्रिफला, कुटकी और इन्द्रायणकी जड़के क्राथके साथ शिलाजीत सेवन करनेसे पित्तोदर नष्ट होता है ।

पथ्य—औषध पचनेके पश्चात् दूध भात खाना चाहिये ।

(७६०३) **शिलाजतुयोगः** (१२)

(र. का. धे. । क्षया.)

फलत्रिकक्वाथविशुद्धमादौ
शुद्धं गुडूच्या दशमूलशुद्धम् ।
स्थिरादिकाकोलियुगादिशुद्धं
शिलाजतु स्यात्क्षयिषु प्रशस्तम् ॥

त्रिफला, गिलोय, दशमूल, लघु पंचमूल और काकोली तथा क्षीरकाकोलीके क्वाथमें क्रमशः पृथक् पृथक् शुद्ध किया हुवा शिलाजीत सेवन करनेसे क्षयरोग नष्ट होता है।

(७६०४) **शिलाजतुयोगः**(१३)

(च. द. । प्रमेहा. ३४; धन्व.)

शालसारादितोयेन भावितं यच्छिलाजतु ।
पिबेत्तेनैव संशुद्धदेहः पिष्टं यथाबलम् ॥

शालसारादि गणके क्वाथसे भावित शिलाजीत उसीके क्वाथके साथ, देहशुद्धिके पश्चात् सेवन करनेसे प्रमेह नष्ट होता है।

(७६०५) **शिलाजतुमारणम्**

(र. र. स. । पू. खं. अ. २)

शिलया गन्धतालाभ्यां मातुलुङ्गरसेन च ।
पुटितं शिलाधातुर्म्रियतेऽष्टगिरीण्डकैः ॥

× × ×

नूनं सज्वरपाण्डुशोफशमनं मेहाग्निमान्द्यापहं
मेदश्छेदकरं च यक्ष्मशमनं शूलामयोन्मूलनम् ।
गुल्मप्लीहविनाशनं जठरहृच्छूलामयोन्मूलनं
सर्वत्वग्गदनाशनं किमपरं देहे च लोहे हितम् ॥

शिलाजीत में (सोलहवां भाग) शुद्ध गन्धक, मनसिल और हरताल मिलाकर नीबूके रसमें घोटकर शरावसंपुटमें बन्द करके आठ अरने उपलोंमें फूंक देनेसे उसकी भस्म हो जाती है।

× × ×

शिलाजीत ज्वर, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अग्निमांद्य, मेद, क्षय, शूल, गुल्म, प्लीहा, जठरशूल, हृच्छूल और समस्त त्वग्रोगनाशक तथा देहको दृढ करनेवाला है।

(७६०६) **शिलाजतुरसायनम्**

(र. र. स. । पू. खं. अ. २)

भस्मीभूतशिलोद्भवं समतुलं कान्तं च वैक्रान्तकं युक्तं
च त्रिफलाकटुत्रिकं घृतैर्वल्लेन तुल्यं भजेत् ।
पाण्डौ यक्ष्मगदे तथाग्निसदने मेहेषु मूलामये
गुल्मप्लीहमहोदरे बहुविधे शूले च योन्यामये॥
सेवेत यदि षण्मासं रसायनविधानतः ।
वलीपलितनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥

शिलाजीतकी भस्म, कान्त लोह भस्म, वैक्रान्त भस्म, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च तथा पीपल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

मात्रा—३ रत्ती।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे पाण्डु, यक्ष्मा, अग्निमांद्य, प्रमेह, अर्श, गुल्म, प्लीहा, महोदर, अनेक प्रकारका शूल और योनिरोगोंका नाश होता है।

यदि इसे ६ मास तक रसायन विधिसे सेवन किया जाय तो बलि पलित रहित सौ वर्षकी सुखपूर्ण आयु प्राप्त होती है ।

(७६०७) **शिलाजतुलेहः**

(र. र. । प्रमेहा.)

शिलाजतु पलान्यष्टौ सितायाश्च पलाष्टकम् ।
बृहत्यास्तु फलं मूलं शृङ्गी धात्री कणा तुगा ॥
पृथगेषां पलश्चातुर्जातस्य मिलितं पलम् ।
सञ्चूर्ण्य मिलितं कृत्वा निहन्ति मधुना लिहन् ॥
प्रमेहशुक्रदोषासृक्श्वासकासक्षयाश्मरीम् ।
मूत्राघाताग्निमान्द्यामगुल्मप्लीहाग्निमारुतम् ॥
जीर्णज्वरारुचि हरो लेह एष शिलाजतोः ।

शिलाजीत ४० तोले, खांड ४० तोले तथा कटेलीके फल, कटेलीकी जड़, काकड़ासिंगी, आमला, पीपल और बंसलोचनका चूर्ण ५-५ तोले एवं दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर रक्खें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे प्रमेह, शुक्रदोष, रक्तविकार, श्वास, कास, क्षय, अश्मरी, मूत्राघात, अग्निमांद्य, गुल्म, प्लीहा, वातविकार, जीर्णज्वर और अरुचिका नाश होता है ।

(मात्रा—२-३ माशा)

(७६०८) **शिलाजतुवटिका**

(भै. र.; स्त्रीरोगा.)

शुद्धसूतं समं गन्धं रक्तोत्पलदलद्रवैः ।
कौटजेनाम्भसा चापि मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ।
त्वक्क्षीरी पिप्पली धात्री कर्कटाख्या पलोन्मिता ॥
निदिग्धाफलमूलाभ्यां पलं युञ्ज्यात्रिजातकम् ।
मधुनः पलसंयुक्तं कुर्यान्माषसमान् गुडान् ॥
दाडिमाम्बुपयःक्षीररसतोयसुरासवान् ।
तां भक्षयित्वात्र पिबेन्निरन्नो भुक्त एव वा ॥
पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शो भगन्दरान् ।
पूतिविण्मूत्र शुक्रादिदोषमेहमहोदरान् ॥
कासासृग्रक्तपित्तञ्च प्रदरं रक्तसम्भवम् ।
तान् सर्वान् सुतरां हन्ति सर्वदोषहरा शिवा ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक ५-५ तोले लेकर कज्जली बनावें और उसे २-२ दिन लाल कमलके पत्तोंके रस और कुड़ेकी छालके क्वाथ में घोटकर सुखा लें । तदनन्तर उसमें ४० तोले शिलाजीत, ४० तोले सफेद खांड, तथा ५-५ तोले बंसलोचन, पीपल, आमला, काकड़ासिंगी, कटेलीकी जड़, कटेलीके फल, दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण मिला कर खरल करें और फिर ५ तोले शहद डाल कर घोट कर उड़दके समान गोलियां बना लें ।

(मात्रा—१ माशा ।)

अनुपान—अनारका रस, दूध, मांस रस, पानी, सुरा अथवा आसव ।

इन गोलियोंको खाली पेट अथवा भोजनान्तमें खाना चाहिये ।

इनके सेवनसे पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा, तमक श्वास, अर्श, भगन्दर, शुक्रदोष, मेह, महोदर, कास, रक्तपित्त, और रक्तप्रदरका नाश होता है ।

(७६०९) **शिलाजतुशोधनम्**

(यो. र. ; यो. चि. म. । अ. ९ शा. सं. । खं. २ अ. ११)

हेमाद्याः सूर्यसन्तापात् द्रवन्ति गिरिधातवः ॥
जत्वाभं मृदुमृत्स्नाभं तद्भवेच्च शिलाजतु ।
शिलाजतु समानीय ग्रीष्मतप्तशिलाच्युतम् ॥
गोदुग्धैस्त्रिफलाक्वाथैर्भृङ्गद्रावैश्च मर्दयेत् ।
आतपे दिनमेकैकं तच्छुष्कं शुद्धतां व्रजेत् ॥

\+ \+ \+

मुख्यां शिलाजतुशिलां सूक्ष्मखण्डप्रकल्पिताम् ।
निक्षिप्यात्युष्णपानीयैर्यामैकं स्थापयेत्सुधीः ॥
मर्दयित्वा ततो नीरं गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ।
स्थापयित्वा च मृत्पात्रे धारयेदातपे बुधः ॥
उपरिस्थं घनं यत्स्यात् तत्क्षिपेदन्यपात्रके ।
धारयेदातपे धीमानुपरिस्थं घनं नयेत् ॥
एवं पुनः पुनर्नीत्वा द्विमासाभ्यां शिलाजतु ।
भूयात्कार्यक्षमं वन्हौ क्षिप्तं लिङ्गोपमं भवेत् ॥
निर्धूमं च ततः शुद्धं सर्वकर्मसु योजयेत् ।
अधःस्थितं च यच्छेषं तस्मिन्नीरं विनिक्षिपेत् ।
विमर्द्य धारयेद्धर्मे पूर्ववच्चैव तन्नयेत् ।

स्वर्णादि धातुओं वाले पर्वतोंसे सूर्य संतापसे पिघलकर जो लाख या कोमल मिट्टीके समान द्रव पदार्थ निकलता है उसे शिलाजीत कहते हैं । इस प्रकार पत्थरसे निकले हुवे शिलाजीतको १-१ दिन गोदुग्ध, त्रिफला क्वाथ और भंगरेके रसमें घोट कर धूपमें सुखा लेनेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

× × ×

शिलाजीतके उत्तम पत्थरको कूट कर अत्युष्ण पानीमें डाल दें और एक पहर पश्चात् अच्छी तरह मलकर कपड़ेसे छान लें तथा उस छने हुवे पानीको मिट्टीकी नांद आदिमें भर कर धूपमें रख दें । इस पानी पर जो मलाई जमे उसे निकाल कर अन्य कांचादिके पात्रमें सुरक्षित रक्खें । इसी प्रकार ज्यों ज्यों मलाई जमती जाय उसे निकालते रहें और अन्तमें जो गाद रह जाय उसमें और पानी डाल दें और इसी प्रकार उससे भी शिलाजीत निकाल लें ।

(७६१०) **शिलाजत्वादियोगत्रयम्**

(ग. नि. । पाण्डु. ७)

गोमूत्रेण पिबेत् कुम्भकामलायां शिलाजतु ।
मासं माक्षिकधातुं वा किट्टं वाऽथ हिरण्यजम् ॥

गोमूत्रके साथ शिलाजतु या स्वर्णमाक्षिक भस्म अथवा स्वर्णकिट्ट सेवन करनेसे १ मासमें कुम्भ कामला नष्ट हो जाती है ।

(७६११) **शिलाजत्वादिलौहम्**

(र. रा. सु. । यक्ष्मा. ; वृ. नि. र.)

शिलाजतुयुतं लोहं वल्लं तु विधिमारितम् ।
पथ्याशी सेवते यस्तु यक्ष्माणं व्यपोहति ॥

विधिवत् निर्मित लोह भस्म और शिलाजीत एकत्र मिला कर सेवन करने और पथ्य पूर्वक रहनेसे यक्ष्माका नाश होता है ।

(७६१२) **शिलाजत्वादिवटी**

(भै. र. । प्रमेहा.)

शिलाजत्वभ्रहेमानि लौहगुग्गुलुटङ्कणम् ।
केशराजस्य तोयेन मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥
वल्लमानां वटीं कृत्वा शैवालसलिलेन च ।
प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनिवृत्तये ॥

शिलाजीत, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गूगल और सुहागेकी खील समान भाग ले कर दो दिन भंगरेके रसमें खरल करें और ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल शैवालके रसके साथ सेवन करनेसे शुक्रमेहका नाश होता है।

(७६१३) शिलातालो रसः (श्वासकासारिरसः)

(र. रा. सु. । कासा. ; र. सं. क. । उ. ४)

त्रिकण्टकरसैर्भाव्यं तालमेकं चतुःशिला ।
दिनं वासारसैः पिष्ट्वा वालुकायन्त्रपाचितम् ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य तत्तुल्यं कटुकत्रयम् ।
निर्गुण्डीमूलचूर्णञ्च व्योषतुल्यं विमिश्रयेत् ॥
शिलातालो रसो नाम्ना माषैकं श्वासकासजित् ॥

१ भाग शुद्ध हरताल और ४ भाग शुद्ध मनसिलको एकत्र मिला कर गोखरु (पाठान्तरके अनुसार त्रिकुटा) तथा बासाके रसमें १-१ दिन घोट कर गोला बनावें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके २ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। (अथवा आतशी शीशीमें डाल कर बालुका यन्त्रमें पकावें।) तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर उसमें उसके बराबर त्रिकुटेका चूर्ण और उतना ही संभालुकी जड़का चूर्ण मिला कर खरल करें।

इसके सेवनसे श्वास कासका नाश होता है।

मात्रा—१ माशा।

(७६१४) शिलादिपानकम्

(वृ. नि. र. । विषा.)

शिलातालककुष्ठानि पिष्ट्वा निर्गुण्डिजद्रवैः ।
पानं मूषकदष्टानां दत्वा तीव्रविषं हरेत् ॥

मनसिल, हरताल और कूठ समान भाग ले कर संभालुके रसमें पीस कर पीनेसे चूहेका तीव्र विष भी नष्ट हो जाता है।

(७६१५) शिलाद्यवलेहः (१)

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

शिला व्योषभयाहिङ्गुमणिमन्थविडङ्गकैः ।
लेहः साज्यमधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते ॥

शुद्ध मनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, हींग, सेंधा नमक और बायबिडंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घी और शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे कास, हिक्का और श्वासका नाश होता है।

(मात्रा—१ माशा।)

(७६१६) शिलाद्यवलेहः (२)

(वृ. नि. र । श्वासा.)

शिलाहिङ्गु विडङ्गं च मरिचं कुष्ठसैन्धवम् ।
मध्वाज्यां लिहेत्कर्षं श्वासकासकफापहम् ॥

शुद्ध मनसिल, हींग, बायबिडंग, काली मिर्च, कूठ और सेंधा नमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और घीमें मिला कर सेवन करनेसे श्वास, कास और कफका नाश होता है।

मात्रा—१। तोला.

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा।)

(७६१७) **शिलापूतरसः**

(र. चं. । हिक्का.)

चूर्णं पाठेन्द्रवारुण्योर्भाण्डे दत्त्वाऽथ कुनटीम् ।
तत्पृष्ठे शुद्धसूतं च कुनटयंशं प्रदापयेत् ॥
सूतार्धं कुनटीचूर्णं तस्यार्धं पूर्वमूलिकाः ।
चूर्णं दत्त्वा पचेच्चुल्यां यामाष्टं मृदुवह्निना ॥
शिलापूतो रसो नाम हन्ति हिक्कां त्रिगुञ्जकः ।

कपड़मिट्टी की हुई हाण्डीमें पाठा और इन्द्रायणकी जड़का समान भाग मिश्रित चूर्ण रख कर उसके ऊपर उसके बराबर शुद्ध मनसिलका चूर्ण बिछा दें और फिर उस पर मनसिलके बराबर शुद्ध पारद रक्खें, पारदके ऊपर उससे आधा मनसिलका चूर्ण बिछावें और इसके ऊपर इससे आधा पाठा और इन्द्रायणकी जड़का चूर्ण बिछा दें । तदनन्तर उसके मुखको बन्द करके आठ पहर मन्दाग्नि पर पकावें और फिर स्वांगशीतल होने पर तैयार रसको निकाल लें ।

यह रस हिचकीको नष्ट करता है ।

मात्रा—३ रत्ती ।

(७६१८) **शिलाबद्धरसः**

(र. र. । शूला.)

मृतसूतस्य भागैकं भागैकं शोधितां शिलाम् ।
दिनं जम्बीरजैर्द्रावैर्मर्द्य रुद्ध्वा धमेल्लघु ॥
शिलाबद्धो रसो नाम गुञ्जैकं पित्तशूलजित् ।
एक हिङ्गु शतं पथ्या त्रि शुण्ठी द्वि सुवर्चला ॥
एतच्चूर्णञ्च कर्षैकमनुस्याच्छूलशान्तये ।

१-१ भाग पारद भस्म और शुद्ध मनसिलको एकत्र घोटकर १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करें और फिर उसका गोला बनाकर मूषामें बन्द करके उसे थोड़ी देर मन्दाग्निमें रख कर धमावें । तदनन्तर मूषाके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे रसको निकाल लें ।

मात्रा—१ रत्ती

यह रस पित्त शूलको नष्ट करता है ।

अनुपान—हींग १ भाग, हर्र १०० भाग, सोंठ ३ भाग और सज्जीखार २ भाग ले कर चूर्ण बनावें । उपरोक्त रस खानेके बाद १। तोला (व्यव. मा. ३-४ माशे) यह चूर्ण (पानीके साथ) खाना चाहिये ।

(७६१९) **शिलावीररसः**

(र. र. रसा. । उप. २)

रसभस्म समं गन्धं शिलाजत्वम्लवेतसम् ।
यामैकं मर्दयेत्सर्वं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥
निष्कैकैकं वर्षमात्रं शिलावीरो महारसः ।
जराकालं निहन्त्याशु जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥
पलार्धं मुशलीचूर्णं भृङ्गराजरसैः पिबेत् ।
धात्रीफलरसैर्वाऽथ क्रामकं ह्यनुपानकम् ॥

पारद भस्म, शुद्ध गन्धक, शिलाजीत और अम्लवेत समान भाग ले कर १ पहर खरल करके रक्खें ।

इसमेंसे १-१ निष्क रस शहद और घीके साथ निरन्तर १ वर्ष तक सेवन करनेसे वृद्धावस्था रहित ३०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है ।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् २॥ तोले मूसलीका चूर्ण भंगरेके रस या आमलेके रसके साथ पीना चाहिये ।

(७६२०) **शिवरसः**

(र. रा. सु. । अर्शो.)

सूतवैक्रान्तशुल्वाभ्रं कान्तभस्मसगन्धकम् ।
तुल्यांशं मर्दयेच्चादौ दाडिमोत्थै रसैस्तथा ॥
भक्षयेन्माषमेकन्तु हन्त्यर्शांसि शिवो रसः ।

पारद भस्म, वैक्रान्त भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कान्तलोह भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें और फिर अनारके रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा— १ माषा ।

(व्यहारिक मात्रा—१--२ रत्ती)

इसके सेवनसे अर्शका नाश होता है ।

(७६२१) **शिवागुटिका**

(व. से. । वातरक्ता. ; च. द. । रसा. ६५; ग. नि. । गु. ४ ; यो. र. । राजय. ; वृ. यो. त. । त. ७६)

काले तु रवितापाढ्ये
...ायसजं शिलाजतु प्रवरम् ।
त्रिफलारससंयुक्तं
त्र्यहश्च शुष्कं पुनः शुष्कम् ॥
दशमूलस्य गुडूच्या
रसे बलायास्तथा पटोलस्य ।
मधुकरसैर्गोमूत्रे
त्र्यहं त्र्यहं भावयेत्क्रमशः ॥
एकाहं क्षीरेण तु
तच्च पुनर्भावयेच्छुष्कम् ।
सप्ताहं भाव्यं स्यात्
क्वाथेनैषां यथालाभम् ॥
काकोल्यौ द्वे मेदे
विदारियुग्मं शतावरी द्राक्षा ।
ऋद्धियुगर्षभवीरा-
मुण्डितिकाजीरकेऽशुमत्यौ च ॥
रास्नापुष्करचित्रक-
दन्तीभकणाकलिङ्गचव्याब्दाः ।
कटुकाशृङ्गीपाठा
एतानि पलांशिकानि कार्याणि ॥
अब्द्रोणे साधितानां
रसेन पादांशिकेन भाव्यानि ।
गिरिजस्यैवं भावित-
शुद्धस्य पलानि दश षट् च ॥
द्विपलं च विश्वधात्री
मागधिकायाश्च मरिचानाम् ।
चूर्णं पलं विदार्या-
स्तालीसपलानि चत्वारि ॥
षोडश सितोपलानि
चत्वारि घृतस्य माक्षिकस्याष्टौ ।
तिलतैलस्य द्विपलं
चूर्णार्धपलानि पञ्चानाम् ॥
त्वक्क्षीरीपत्रत्वक्
नागैलानां च मिश्रयित्वा तु ।
गिरिजस्य षोडशपलै-
र्गुडिकाः कार्यास्ततोऽक्षसमाः ॥
ताः शुष्का नवकुम्भे
जातीपुष्पाधिवासिते स्थाप्याः ।
तासामेका काले भक्ष्या पेयापि वा सततम् ॥
क्षीररसदाडिमरसाः
सुरासवं मधु च शिशिरतोयानि ।

आलोडनानि तासा-
मनुपाने वा प्रशस्यन्ते ॥
जीर्णे लघ्वन्नपयो जाङ्ग-
लिनिर्यूहयूषभोजी स्यात् ।
सप्ताहं यावदतः परं
भवेत्सोपि सामान्य ॥
भुक्त्वापि भक्षितेयं
यदृच्छया नावहेद्भयं किञ्चित् ।
निरुपद्रवा प्रयुक्ता
सुकुमारैः कामिभिश्चैव ॥
सम्वत्सरप्रयुक्ता
हन्त्येषा वातशोणितं प्रबलम् ।
बहुवार्षिकमपि गाढं
यक्ष्माणं चाढ्यवातं च ॥
ज्वरयोनिशुक्रदोषप्लीहार्शःपाण्डुग्रहणीरोगान् ।
ब्रध्नवमिगुल्मपीनस-
हिक्काकासारुचिश्वासान् ॥
जठरं श्वित्रं कुष्ठं पाण्डयं क्लैव्यं मदं क्षयं शोषम् ।
उन्मादापस्मारौ वदनाक्षिशिरोगदान्सर्वान् ॥
आनाहमतीसारं
सासृग्दरं कामलाप्रमेहांश्च ।
यकृदर्बुदानि विद्रधिं
भगन्दरं रक्तपित्तं च ॥
अतिकार्श्यमतिस्थौल्यं
स्वेदमथ श्लीपदं च विनिहन्ति ।
दंष्ट्राविषं समौलं
गराणि च बहुप्रकाराणि ॥
मन्त्रौषधियोगादीन्
विषयुतान्भौतिकान्भावान् ।
पापालक्ष्म्यौ चेयं
शमयेद्गुडिका शिवा नाम्ना ॥
बल्या वृष्या धन्या
कान्तियशः प्रजाकरी चेयम् ।
दद्यान्नृपवल्लभतां जयं
विवादे सुखस्था च ॥
श्रीमान्प्रकृष्टमेधः
स्मृतिबुद्धिबलान्वितोऽतुलशरीरः ।
पुष्ट्यौजोवर्णेन्द्रिय-
तेजोबलसम्पदादिसदुपेतः ॥
बलिपलितरोगरहितो
जीवेच्छरदां शतद्वयं पुरुषः ।
सम्वत्सरप्रयोगाद्
द्वाभ्यां शतानि चत्वारि ॥
सर्वामयजित्कथितं
मुनिगणभक्ष्यं रसायनरहस्यम् ।
समुद्भूतामृतमन्थनोत्थः
स्वेदः शिलाभ्योऽमृतवद्गिरेः प्राक् ॥
यो मन्दरस्यात्मभुवा हिताय
न्यस्तश्च शैलेषु शिलाजरूपी ।
शिवागुडिकेति रसायन-
मुक्तं गिरीशेन गणपतये ॥
शिववदनविनिर्गता यस्मा-
न्नाम्ना तस्माच्छिवागुडिकेति ॥

ग्रीष्म कालमें कृष्ण लोह जनित उत्तम शिलाजीतको त्रिफलाके काथकी १ भावना दें और सूख जाने पर पुनः त्रिफला काथकी भावना दें । इसी प्रकार धूपमें सुखा सुखा कर त्रिफला काथकी ३ भावना दें और फिर इसी प्रकार दशमूलके काथ,

गिलोयके क्वाथ, खैरैटीके क्वाथ, पटोलके क्वाथ और मुलैठीके क्वाथ तथा गो मूत्रकी ३-३ और गोदुग्धकी १ भावना दे कर सुखा लें। तदनन्तर निम्न लिखित काकोल्यादि गणके क्वाथकी सात भावना दें—

काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, विदारीकन्द, क्षीरविदारी, शतावर, द्राक्षा, ऋद्धि, वृद्धि, ऋषभक, महा शतावर, मुण्डी, जीरा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, रास्ना, पोखरमूल, चीता, दन्तीमूल, गजपीपल, इन्द्रजौ, चव्य, नागरमोथा, कुटकी, काकड़ासिंगी और पाठा, ५-५ तोले इनमेंसे जितनी औषधें मिलें उन सबको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें। (कोई औषधि न मिले तो उसके स्थानमें उसके गुण वाली, पूर्व या पश्चात् की औषधि लेनी चाहिये।)

इस प्रकार भावना दे कर सुखाया हुवा शिलाजीत ८० तोले, सोंठ, आमला, पीपल और काली मिर्चका चूर्ण १०-१० तोले, विदारीकन्दका चूर्ण ५ तोले, तालीस पत्रका चूर्ण २० तोले, मिसरी ८० तोले, घी ४० तोले, शहद ८० तोले, तिलका तेल २० तोले तथा बंसलोचन, तेजपात, दालचीनी, नागकेसर और इलायचीका चूर्ण २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र घोटकर १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें और उन्हें सुखाकर चमेलीके फूलोंसे बसाए हुवे सुगन्धित घटमें सुरक्षित रक्खें।

(मात्रा—३-४ माशा।)

इनमेंसे नित्य प्रति १-१ गुटिका दूध, मांस रस, अनारके रस, सुरा, आसव, मधु या शीतल जलमें घोलकर पीनी चाहिये या गुटिका खाकर इनमेंसे कोई एक द्रव अनुपान रूपसे पीना चाहिये।

औषध पच जाने पर लघु अन्न, दूध या मूंग आदिके यूषके साथ खाना चाहिये। जो लोग मांसाहारी हैं वे मांस रसके साथ भी लघु अन्न खा सकते हैं।

एक सप्ताह तक इस प्रकार पथ्य पालन करनेके पश्चात् साधारण पथ्याहार किया जा सकता है।

यह गुटिका भोजन करनेके पश्चात् भी खाई जाय तब भी किसी प्रकारकी हानिका भय नहीं है। इसे सुकुमार प्रकृतिके कामी पुरुष भी निर्भय हो कर सेवन कर सकते हैं।

इसे १ वर्ष तक सेवन करनेसे बहुत वर्षोंका पुराना प्रबल और कठिन वातरक्त भी नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह गुटिका यक्ष्मा, आढ्यवात, ज्वर, योनिदोष, शुक्र दोष, प्लीहा, अर्श, पाण्डु, ग्रहणी, ब्रध्न, वमन, गुल्म, पीनस, हिचकी, कास, अरुचि, श्वास, जठर, श्वित्र कुष्ठ, नपुंसकता, मद, शोष, उन्माद, अपस्मार, मुखरोग, नेत्ररोग, शिरोरोग, आनाह, अतीसार, रक्तप्रदर, कामला, प्रमेह, यकृत्, अर्बुद, विद्रधि, भगन्दर, रक्तपित्त, अति कृशता, अति स्थूलता, स्वेद, श्लीपद, दंष्ट्रा विष, मूल विष और अनेक प्रकारके संयोगज विषोंको भी नष्ट करती है।

इसके प्रयोगसे शत्रुवों द्वारा प्रयुक्त हुवे मन्त्र औषधादिके दुष्ट प्रभाव नष्ट होते हैं तथा पाप (मनोविकार) और अलक्ष्मी (प्रभाव शून्यता) का नाश होता है।

यह गुटिका बल और कामशक्ति वर्द्धक, प्रशंसनीय तथा कान्ति, यश, और सन्तानकी वृद्धि करने वाली है। इसे मुखमें धारण करनेसे विवादमें जय और राजसभामें आदर प्राप्त होता है।

इसके सेवनसे शरीरकी कान्ति, मेधा, स्मृति, बुद्धि और बल बढ़ता है; शरीर अनुपमेय हो जाता है; पुष्टि, और ओजकी वृद्धि होती है; इन्द्रियां निर्मल हो जाती हैं; तेज बढ़ता है।

इसे एक वर्ष तक सेवन करते रहनेसे दोसौ वर्षकी बलि पलित और रोग रहित आयु प्राप्त होती है। दो वर्ष तक सेवन करनेसे ४ सौ वर्षकी आयु प्राप्त होती है यह मुनियोंके सेवन करने योग्य रसायन है।

(७६२२) शीघ्रज्वराररिसः
(र. सं. क. । उल्ला. ४)

रसहिङ्गुलनेपाला वृद्धया दन्त्यम्बुमर्दिताः ।
द्वौ यामौ ज्वरनाशाय गुञ्जैका सितया सह ॥

रस सिन्दूर १ भाग, शुद्ध हिंगुल २ भाग और शुद्ध जमालगोटा ३ भाग ले कर सबको २ पहर दन्तीमूलके क्वाथमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली मिश्रीके साथ खिलानेसे (विरेचन हो कर) ज्वर नष्ट हो जाता है।

(यह वटी नवीन ज्वरमें विशेष उपयोगी है।)

(७६२३) शीघ्रप्रभावरसः
(र. र. स. । उ. अ. १६)

पारदं गन्धकं व्योम तीक्ष्णं तालं मनःशिला ।
सौवीरमञ्जनं शुद्धं विमलं च समांशकम् ॥
एभिः कज्जलिकां कृत्वा स्वल्पतैलेन भर्जयेत् ।
ग्रन्थिकं जीरकं चित्रं दीप्यकं मुस्तकं विषम् ॥
बालाम्रं बालबिल्वं च मोचसारं समांशकम् ।
विचूर्ण्य पूर्वयत्कल्कं तदर्धेन विनिक्षिपेत् ॥
पुनर्विमर्दयेद्यत्नादेकरूपं भवेद्यथा ।
भावयेत्सप्तवाराणि पञ्चकोलकषायतः ॥
अरलुत्वग्रसेनापि दशवाराणि भावयेत् ।
प्रोक्तेन क्रमयोगेन रसो निष्पद्यते ह्ययम् ॥
जग्धो विश्वघनाम्बुना स हि रसः शीघ्रप्रभावाभिधो ।
निष्कार्धप्रमितो महाग्रहणिकारोगेऽतिसारामये॥
आध्माने ग्रहणीभवे रुचिहते वाते च मन्दानले।
मुक्ते चापि मले पुनश्चलामलशङ्कासु हिक्कासु च ॥

(१) शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध मनसिल, शुद्ध सौवीराञ्जन, और विमल भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर अच्छी तरह खरल करें। तदनन्तर उसमें थोड़ासा तेल मिलाकर मन्दाग्नि पर भूनें।

(२) पीपलामूल, जीरा, चीता, अजवायन, नागरमोथा, शुद्ध बछनाग, अमचूर, बेलगिरी और मोचरस समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। इस चूर्णको भी उपरोक्त विधिसे तेलमें भून लें।

(३) २ भाग नं. १ की औषधमें १ भाग नं. २ की औषध मिला कर अच्छी तरह खरल करें और फिर उसे पंचकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ) के काथकी सात भावना, तथा अरलुके काथकी दस भावना दे कर आधा आधा निष्क (२॥-२॥ माशे) की गोलियां बना लें।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती।)

अनुपान—सोंठ और नागरमोथेका काथ।

इसके सेवनसे भयंकर ग्रहणी, अतिसार, आध्मान, अरुचि, वायु, अग्निमांद्य, और हिचकीका नाश होता है। मलत्याग करनेके पश्चात् भी दस्तकी हाजत बनी रहती हो तो उसके लिये यह रस उपयोगी है।

(७६२४) शीतकेसरी रसः

(भा. प्र. म. खं. २; र. रा. सु. । ज्वरा.)

पारदं गन्धकञ्चैव तुत्थञ्च दरदं विषम् ।
विषादष्टगुणं योज्यं मरिचं विश्वभेषजम् ॥
अश्वगन्धाथ विजया कासमर्दः कठिल्लकः ।
चतुर्णाञ्च रसैरेतैश्चूर्णान्येतानि मर्दयेत् ॥
तुलस्यास्तु दलैः सार्धं भक्षितो रक्तिकामितः।
हन्ति शीतज्वरं घोरं नाम्नायं शीतकेसरी॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध तूतिया, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध बछनाग १-१ भाग तथा मिर्च और सोंठका चूर्ण ८-८ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर असगन्ध, भांग, कसौंदी और करेलेके रसकी १-१ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे तुलसी दलके साथ सेवन करनेसे घोर शीतज्वर नष्ट होता है।

(७६२५) शीतज्वरहररसः

(रसे. सा. सं.; र. चं. । ज्वरा.)

सूतमाक्षिकगन्धानां भागश्चारुष्करस्य च ।
तथाष्टौ तालकाच्चूर्णाद्द्विदुग्धस्य षोडश ॥
स्नुहीक्षीरस्य चैवाष्टौ सर्वं मृद्वग्निना पचेत् ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य ततः खल्ले विमर्दयेत् ॥
शीतज्वरहरो नाम्ना रसोयं परिकीर्तितः ॥

शुद्ध पारद, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध भिलावा १-१ भाग तथा शुद्ध हरताल ८ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर खरल करें। तदनन्तर उसमें १६ भाग आकका दूध और ८ भाग थूहर (सेहुंड) का दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और गाढ़ा होने पर ठंडा करके खरलमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे शीतज्वर नष्ट होता है।

शीतज्वराङ्कुशो रसः

प्र. सं. ५५८० महाशीतज्वराङ्कुशो रसः देखिये।

शीतज्वरारिरसः (१) (शीतारिरसः)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२; र. का. धे.; र. रा. सु. । ज्वरा.)

प्र. सं. २५५७ "तरुणज्वरारिरसः (१)" देखिये।

(७६२६) शीतज्वरारिरसः (२)

(र. चि. म. । स्त. ९)

षट्पलं तालकं शुद्धं बीजं भल्लातकोद्भवम् ।
सञ्चूर्ण्य भावयेद्गाढं भृङ्गराजस्य वारिणा ॥
शुक्लायाश्चापि कृष्णाया काकमाच्या रसेन च ।
अर्कसेहुण्डदुग्धेन दातव्या भावनाः क्रमात् ॥
तत्कल्कं रोटिकाकारं स्थाल्यामारोप्य यत्नतः ।
संशुष्कं च पुनर्धार्यं शरावे शुभलक्षणे ॥
तच्च वस्त्रमृदा लिप्त्वा सन्धिं रुद्ध्वा विशोषयेत् ।
ततश्च वालुकायन्त्रे धार्यं तच्च प्रयत्नतः ॥
चुल्ल्यामारोप्य दातव्यो वह्निर्यामत्रयं क्रमात् ।
स्वाङ्गशीतं गृहीत्वा तद्गोलं सञ्चूर्णयेद्दृढम् ॥
तस्मिन्मरिचचूर्णस्य द्विपलं चाथ मेलयेत् ।
नागवल्लीदलेनायं माषमात्रश्च भक्षितः ॥
हन्ति शीतज्वरं घोरं ध्रुवं तक्रौदनाशिनः ।
रसः शीतज्वरारिर्हि वैद्यवृन्दैः सुभाषितः ॥

शुद्ध हरताल और भिलावे ३०-३० तोले ले कर दोनोंको बारीक पीस कर १-१ दिन भंगरेके रस, सफेद और काली मकोयके रस, तथा आक और सेहुंडके दूधमें खरल करके उसकी एक रोटीसी बनावें और उसे उल्टी हाण्डी पर रख दें। जब वह सूख जाय तो उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके उस पर ३-४ कपड़मिट्टी कर दें और बालुकायन्त्रमें रख कर ३ प्रहर अग्नि दें। तदनन्तर जब वह स्वांगशीतल हो जाय तो औषधको निकाल कर उसमें १० तोले काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर भली भांति खरल करके रक्खें।

मात्रा—१ माशा।

इसे पानमें रख कर खानेसे घोर शीतज्वर नष्ट होता है।

पथ्य—तक्र भात।

(व्यवहारिक मात्रा ४ रत्ती।)

(७६२७) शीतज्वरारिरसः (३)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२)

तालकं तुत्थकं ताम्रं रसं गन्धं मनःशिलाम् ।
कर्षं कर्षं प्रयोक्तव्यं मर्दयेत्त्रिफलाम्बुभिः ॥
गोलं न्यसेत्सम्पुटके पुटं दद्यात् प्रयत्नतः ।
ततो नीत्वार्कदुग्धेन वज्रीदुग्धेन सप्तधा ॥
क्वाथेन दन्त्याः श्यामाया भावयेत्सप्तधा पुनः ।
माषमात्रं रसं दिव्यं पञ्चाशन्मरिचैर्युतम् ॥
गुडगद्याण कं चैव तुलसीदलयुग्मकम् ।
भक्षयेत्त्रिदिनं भक्त्या शीतारिं दुर्लभं परम् ॥
पथ्यं दुग्धौदनं देयं विषमं शीतपूर्वकम् ।
दाहपूर्वं हरत्याशु तृतीयकचतुर्थकौ ॥
द्व्याहिकं सततं चैव वैवर्ण्यं च विनश्यति ॥

शुद्ध हरताल, शुद्ध तूतिया, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, और शुद्ध मनसिल १।-१। तोला ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको त्रिफलाके क्वाथमें खरल करके गोला बनावें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके (लघुपुटमें) फूंक दें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होनेपर औषधको निकाल कर आक और थूहर (सेहुंड) के दूध तथा दन्तीमूल और काली निसोतके क्वाथकी सात सात भावना दे कर उड़दके समान गोलियां बना लें।

इनमेंसे १ गोली ५० काली मिर्चोंके चूर्णमें मिलावें और उसमें ६ माशे गुड़ तथा २ तुलसी पत्र मिलाकर रोगीको खिला दें। इसी प्रकार ३ दिन देनेसे शीत पूर्व और दाह पूर्व विषमज्वर, तृतीय ज्वर, चातुर्थिक, द्व्याहिक और सतत ज्वर तथा विवर्णताका नाश होता है।

पथ्य—दूध भात।

(७६२८) **शीतज्वरारिरसः (४)**

(भा. प्र. म. खं. २। ज्वरा. ; र. रा. सु.)

सूतकं गन्धकश्चैव हरितालं मनःशिला।
एकनिष्कं द्विनिष्कञ्च चतुर्निष्कं तथैव च॥
पञ्चनिष्कं रसैः कारवेल्ल्याः सम्यक्प्रकल्पयेत्।
ताम्रपत्राणि तुल्यानि तेन कल्केन लेपयेत्॥
शरावसम्पुटे तानि कृत्वा तेषामुपर्यपि।
दद्यात्तां पिष्टिकां पश्चात्पुटपाकेन पाचयेत्॥
ततः सञ्चूर्णयेदेवं रसः क्षौद्रेण भक्षितः।
यवैकमात्रया हन्ति घोरं शीतज्वरं ध्रुवम्॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध हरताल ४ भाग और शुद्ध मनसिल ५ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे करेलेके रसमें घोट कर १२ भाग शुद्ध ताम्र पत्रोंपर लेप कर दें और उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करके पुट लगा दें।

मात्रा—१ यवके बराबर।

इसे शहदके साथ खानेसे शीतज्वर नष्ट होता है।

(७६२९) **शीतभञ्जीरसः (१)**

(र. का. धे.। ज्वरा.)

रसहिङ्गुलतालानि तुत्थं शम्बूकजं रजः।
कन्याद्भिः सप्तधा भाव्यं पाचितव्यं शरावके॥
अहोरात्रं पुनः शीतं कुम्भाधः सिकतान्तरे।
दत्तः पथ्यं तु तक्रेण भक्तं क्षीरेण वा पुनः॥
लवणेन विना सर्वान्नाशयेद्विषमज्वरान्॥

शुद्ध पारद, हिंगुल, हरताल, नीलाथोथा और क्षुद्रशंख (घोंघे) का चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके घृत कुमारीके रसकी सात भावना दें और फिर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके १ दिन रात बालुका यन्त्रमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस लें।

(**मात्रा**— २ रत्ती)

इसके सेवनसे समस्त विषमज्वर नष्ट होते हैं।

पथ्य—तक्र भात या दूध भात। लवणसे परहेज करें।

(७६३०) **शीतभञ्जीरसः (२)**

(र. का. धे.। ज्वरा.)

रसगन्धं शिलातालौ माक्षीकं विषतुत्थके।
तुल्यं स्नुक्क्षीरपुटितं सघृतं कूर्मपाचितम्॥
शीतभञ्जी रसो हन्ति द्विगुञ्जो विषमज्वरान्।

शुद्ध पारद, गन्धक, मनसिल, हरताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध बछनाग और नीलाथोथा समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको सेहुंड (थूहर) के दूधमें घोट कर कूर्मपुटमें पकावें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे घीके साथ देनेसे विषमज्वर नष्ट होता है।

(७६३१) शीतभञ्जीरसः (३)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रङ्गौ तालं सोममलं हारिद्रं शुक्तिचूर्णकम् ।
तुत्थं वल्लीरसपुटैः शीतभञ्जी रसः परः ॥

बङ्ग भस्म, नागभस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध संखिया, हारिद्र विष, सीपका चूर्ण और शुद्ध नीलाथोथा समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके केवटी मोथेके क्काथमें घोटकर पुटमें पकावें ।

इसके सेवनसे शीतज्वर नष्ट होता है ।

(मात्रा—२-३ चावल भर)

नोट—यह औषध विषैली है अतः योग्य चिकित्सकके परामर्शके बिना सेवन न करनी चाहिये ।

(७६३२) शीतभञ्जीरसः (४)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

द्विपञ्चपञ्चपञ्चैव रङ्गालनवसारकम् ।
काकमाची कन्यकाद्भिर्मर्दितं च दिनं दिनम् ॥
सूर्ययामैः शरावेण पकोयं तु रसः परः ।
शीतभञ्जी द्विगुञ्जस्तु निहन्ति विषमज्वरान् ॥

बङ्ग भस्म १० भाग तथा शुद्ध हरताल और नवसादर ५-५ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके मकोय और घृतकुमारीके रसमें १-१ दिन खरल करके शरावसम्पुटमें बन्द करें और १२ पहर बालुकायन्त्रमें पकावें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसके सेवनसे विषमज्वर नष्ट होता है ।

(७६३३) शीतभञ्जीरसः (५)

(भै. र. । ज्वरा.)

तुत्थशम्बूकतालानां द्विगुणानां यथोत्तरम् ।
चूर्णं कुमारिकाद्रावैः पिष्ट्वा गोलं प्रकल्पयेत् ॥
शरावसम्पुटे कृत्वा पचेद्गजपुटेन तु ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चूर्णयित्वा निधापयेत् ॥
गुञ्जार्धं च सितायुक्तं खादेद् सर्वज्वरापहम् ।
पथ्यं क्षीरौदनं देयं निहन्ति विषमज्वरम् ॥

शुद्ध नीलाथोथा (तूतिया) १ भाग, शुद्ध शंख (घोंघे) २ भाग, और शुद्ध हरताल ४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर घृतकुमारीके रसमें घोटकर गोला बना लें । इसे शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें और फिर स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर खरल करके रक्खें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसे मिश्रीके साथ खानेसे समस्त विषमज्वर नष्ट होते हैं ।

पथ्य—दूध भात ।

(७६३४) शीतभञ्जीरसः (६)

(र. र. स. । उ. अ. १२ ; र. रा. सु.)

सूततालशिलास्तुल्या मर्दयेन्मर्कटीरसे [1] ।
ताम्रपात्रे विनिक्षिप्य तत्कल्कं कज्जलीकृतम् ॥
विपवेद्वालुकायन्त्रे यथोक्तविधिना ततः ।
दद्यान्मरिचचूर्णेन माषमात्रं भिषग्वरः ॥
प्रपिबेदुष्णतोयस्य चुलुकं शीतकज्वरे ।
शीतभञ्जीरसः सोयं शीतज्वरनिवारणः ॥

१ कर्कटी रसे ' इति पाठभेदः

रस सिन्दूर, शुद्ध हरताल, और शुद्ध मंसिल समान भाग ले कर सबको चिरचिटे (अपामार्ग) के काथमें घोट कर गोला बनावें और उसे ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके बालुकायन्त्रमें पकावें।

मात्रा—१ माषा (व्य. मा. २ रत्ती ।)

इसे काली मिर्चके चूर्णके साथ खा कर १ चुल्लू उष्ण जल पीना चाहिये।

इसके सेवनसे शीत ज्वर नष्ट होता है।

(७६३५) शीतभञ्जीरसः (७)

(भा. प्र. म. खं. २ । ज्वरा.)

तालकं शुक्तिकाचूर्णं तुल्यं तत्रोभयोरपि ।
नवमांशश्च तुत्थं स्यान्मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥
तत्तु संशुष्कमुपलैर्वन्यैर्गजपुटे पचेत् ।
शीतं तच्चूर्णयेदर्द्धगुञ्जामात्रं सितायुतम् ॥
प्रभाते भक्षयेत्तेन याति शीतज्वरः क्षयम् ।
वान्तिर्भवति कस्यापि कस्यचिन्न भवत्यपि ॥

शुद्ध हरताल और सीपका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध तूतिया दोनोंका नवमांश लेकर तीनोंको घृतकुमारीके रसमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें।

मात्रा—आधी रत्ती।

इसे प्रातःकाल मिसरीके साथ खानेसे शीत-ज्वर नष्ट होता है।

इसे खानेके पश्चात् किसीको वमन हो जाती है और किसीको नहीं होती।

(७६३६) शीतभञ्जीरसः (८)

(र. म. । अ. ६ ; भै. र. । ज्वरा. ; धन्व. ; र. का. धे. । ज्वरा. ; वै. कल्प. । स्क. २; वृ. यो. त. । त. ५९ ; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसं हिङ्गुलगन्धश्च जैपालं समं समम् ।
दन्तीक्वाथेन सम्मर्द्य रसो ज्वरहरः परः ॥
आर्द्रकस्वरसेनाथ दापयेद्रक्तिकामितम् ।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद्याममात्रतः ॥
शीततोयं पिबेच्चानु इक्षुमुद्गरसो हितः ।
शीतभञ्जी रसो नाम्ना सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥

शुद्ध पारद, हिंगुल, गन्धक और जमालगोटा समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको दन्तीमूलके काथमें खरल करें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे अदरकके रसके साथ देनेसे महा घोर नवीन ज्वर १ पहरमें नष्ट हो जाता है।

अनुपान—शीतल जल या ईखका रस अथवा मूंगका यूष।

शीतभञ्जीरसः (९)

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; भै. र. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. । ज्वरा. ; र. र. स. । उ. अ. १२ ; र. मं. । अ. ६ ; र. स. क. । उ. ४ ; भा. प्र. म. खं. २ । ज्वरा.)

प्र. सं. २१७० ज्वरारि रसः (१) देखिये ।*

(७६३७) **शीताङ्कुशरसः**

(यो. र. । ज्वरा.)

तुत्थं टङ्कणसूतखर्परविषं स्याद्गन्धकं तालकं
सर्वं खल्वतले विमर्द्य घटिकां तत्कारवल्लीरसैः ।
गुञ्जैका गुटिका सुशर्करयुता सज्जीरकेणाथवा
एकद्वित्रिचतुर्थशीतहरणः शीताङ्कुशो नामतः ॥

शुद्ध तूतिया, सुहागेकी खील, शुद्ध पारद, खपरिया, शुद्ध बछनाग और शुद्ध गन्धक तथा हरताल समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको १ घड़ी करेलेके रसमें घोटकर १–१ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनमेंसे एक एक गोली खांड या जीरेके चूर्णके साथ देनेसे एकाहिक आदि शीत ज्वर नष्ट होते हैं ।

(७६३८) **शीतारिरसः** (१)

(रसे. चि. म. । अ. ९; भै. र. । ज्वरा.; र. चं.; र. रा सु.; रसे. सा. सं.; र. म. । अ. ६)

पारदं गन्धकं टङ्कं शुद्धं[१] चूर्णं समं समम् ।
पारदाद्द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चात्वग्भस्म शर्करापि च ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याज्जम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ॥

गुञ्जैकं तप्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहः ।
रसः शीतारिनामायं शीतज्वरहरः परः ।

शुद्ध पारद, गन्धक और सुहागेकी खील १–१ भाग; शुद्ध जमालगोटा २ भाग तथा सेंधानमक, कालीमिर्च, इमलीकी छालकी भस्म और खांड १–१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको जम्बीरी नीबू के रसमें खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमें से १–१ गोली उष्ण जलके साथ देनेसे वातकफज ज्वर नष्ट होता है ।

(७६३९) **शीतारिरसः** (२)

(वृ. यो. त. । त. ५९)

सितमल्लमनःशिलाहिफेन
रसकाम्भोधिजताप्यतुल्यभागैः ।
सुषवीरसमर्दितैस्त्रिवारं
भजशीतारिमिमं सितार्धगुञ्जम् ॥
सेवनाद्धरते तीव्रं ज्वरं शीतं महोल्बणम् ।
मात्रात्रयेण निःशेषं पथ्यं मुद्गौदनं स्मृतम् ॥

शुद्ध सफेद संखिया, शुद्ध मनसिल, शुद्ध अफीम, खपरिया, शंख भस्म और स्वर्णमाक्षिक भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके करेलेके रसकी ३ भावना देकर आधी आधी रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमें से १–१ गोली खांडके साथ देनेसे ३ मात्रामें तीव्र शीतज्वर (मेलेरिया) अवश्य नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—मूंगका यूष और भात ।

---

* भा. प्र. में. खर्परियाके स्थान पर ताम्र है और र. सं. क. में तुत्थका अभाव है । र. का. धे. में एक दूसरा **"शीत भंजीरस"** भी है जिसमें ताम्र, स्वर्णमाक्षिक और विष अधिक है शेष प्रयोग इसी प्र. सं. २१७० के समान है ।

१ शुल्बमिति पाठान्तरम्

(७६४०) शीतारिरसः (३)

(वै. जी. । वि. ५)

शुल्वं टङ्कणगन्धकौ च गरलं तुत्थं रसं खर्परं
तालं तुल्यमिदं विमर्द्य घटिकामात्रं सुषव्यारसैः।
सूतः स्यात्त्रिपुरारिणा विरचितः शीतारित्थं स्मृतो
अजाजी शर्करया युतः प्रशमयेदेकाहिकादि-ज्वरम् ॥

ताम्र भस्म, सुहागेकी खील, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, शुद्ध तूतिया, शुद्ध पारद, खपरिया और शुद्ध हरताल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर करेलेके रसमें घोटकर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इसे ज़ीरेके चूर्ण और खांडके साथ सेवन करनेसे एकाहिक आदि ज्वर नष्ट होते हैं ।

(७६४१) शीतारिरसः (४)

(भा. प्र. म. खं. २; भै. र. ; र. चं. ; रसे. सा. सं.; र. का. धे. । ज्वरा.)

तालकं दरदोद्भूतः पारदो गन्धकः शिला ।
क्रमाद्भागार्द्धरहितं कारवेल्ल्यम्बुमर्दितम् ॥
इदमस्य प्रमाणेन ताम्रपत्रीं प्रलेपयेत् ।
अधोमुखीं दृढे भाण्डे तां निरुध्याथ पूरयेत् ॥
चुल्ल्यां वालुकया घस्रमेकं प्रज्वालयेद् दृढम् ।
शीते सञ्चूर्ण्य गुञ्जार्द्धो नागवल्लीदले स्थितः ॥
भक्षितो मरिचैः सार्द्धं समस्तान् विषमज्वरान् ।
दाहशीतादिकं हन्यात् पथ्यं शाल्योदनं पयः ॥

शुद्ध हरताल ८ तोले, शुद्ध हिंगुलोत्थ पारद ४ तोले, शुद्ध गंधक २ तोले और शुद्ध मनसिल १ तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर करेलेके रसमें घोटें । तदनन्तर १५ तोले शुद्ध ताम्रकी कटोरीके भीतर इस कल्कका लेप करदें और उसे एक हांडीमें उलटा करके रखदें तथा उसके (कटोरीके) ऊपर मिट्टीका प्याला ढककर दोनोंकी सन्धिको गुड़ चूने आदिसे बन्द कर दें और हाण्डीके शेष भागको बालूसे भर कर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे १ दिन तीव्राग्नि जलावें । तत्पश्चात् उसके स्वांगशीतल होने पर औषधयुक्त ताम्रकी कटोरीको निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसमें काली मिर्चोंका चूर्ण मिलाकर पानमें रखकर खानेसे दाहपूर्व और शीतपूर्व समस्त विषम ज्वर नष्ट होते हैं ।

पथ्य—शाली चावलोंका भात और दूध ।

(७६४२) शीतारिरसः (५) (स्पर्शवातारिरसः)

(र. चं. । वातरोगा. ; र. प्र. सु. । अ. ८ ; र. र. स. । उ. अ. २१; र. रा. सु. ; वृ. नि. र. ; धन्व. ; रस. सा. सं. । वातव्या.)

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य
पुनर्नवाग्निस्वरसैर्विभाव्य ।
पक्वार्कपत्रस्य रसेन पश्चा-
द्विपाचयेदष्टगुणेन यत्नात् ॥

रसार्धभागं च विषं च दत्वा
विपाचयेदग्निजले क्षणं तत् ।
शीतारिसञ्ज्ञस्य रसायनस्य
वल्लं च सार्धं मरिचार्द्रकेण ॥
मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन
सेवेत मासं च घृतं च पथ्यम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली बनावें । तदनन्तर उसे पुनर्नवा (बिसखपरा) और चीतेके स्वरसकी १-१ भावना दें और फिर उसमें २४ भाग आकके पके हुवे पत्तोंका रस मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब रस सूख जाय तो १२ भाग शुद्ध बछनाग मिलाकर थोड़ासा चीतेका रस मिलाकर पुनः पकावें और सूख जाने पर खरल करके रक्खें ।

मात्रा—२-३ रत्ती ।

इसे काली मिर्चोंके चूर्ण और अदरकके रसके साथ अथवा मिर्चोंके चूर्ण और घीके साथ सेवन करनेसे वातव्याधि नष्ट होती है ।

(७६४३) शीतारिरसः (६)

(भै. र.; र. रा. सु. । ज्वरा.)

कूष्माण्डक्षारचूर्णोदकतिलजे पृथक् पाचितं शुद्धतालं
तुर्यं सूतेन पिष्ट्वा त्रिदिवसमसकृत् कारवेल्लद्रवेण ।
क्षिप्त्वा तत्खर्परान्तर्दिनपतिपिहितं रन्ध्रमप्यन्धयेत्तं
नीरन्ध्रं चूर्णपथ्यागुडलवणखटीमृद्भिरप्यन्तरालम् ॥
तद्वालुकापूर्णघटे विदध्याच्छनैः पचेत् तावदुपर्यमुष्य ।
व्रीहिर्विवर्णत्वमुपैति यावत्ततस्तु शीतं विदधीत् ॥
सिद्धं तच्च समाददीत तुलसीतोयेन गुञ्जोन्मितं ।
पश्चात् क्षौद्रकणासिताज्यपयसा कृत्वानुपानं गदी
भुञ्जीताथ पयोऽन्नमुद्गसहितं साज्यञ्च हन्यान्नृणां
तापं कालरसेन सञ्चितमयं शीतारि नामा रसः॥

पेठेके क्षारके पानी, चूनेके पानी और तिलक्षारके पानी में दोलायन्त्र विधिसे पृथक् पृथक् पकाई हुई हरताल १ भाग और शुद्ध पारद १ भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके ३ दिन करेलेके रसमें घोटें । तदनन्तर उसे मजबूत शरावमें रखकर शुद्ध ताम्रकी कटोरी से ढकदें और सन्धिको चूना, हर्रका चूर्ण, गुड़, सेंधानमकका चूर्ण और खिड़िया मिट्टीके मिश्रणसे बन्द कर दें । तथा उसके ऊपर कपड़मिट्टी करके सुखा लें और उसे बालुकायन्त्रमें रखकर पकावें । जब रेतके ऊपर डाले हुवे धान फूटने लगें तो अग्नि देनी बन्द कर दें और फिर हाण्डीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर पीस लें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे तुलसीपत्रके रसके साथ खिलाने के पश्चात् शहद, पीपलका चूर्ण, मिश्री, घी, और दूध एकत्र मिलाकर पिलाना चाहिये ।

पथ्य—दूध, भात, मूंगका यूष, घी । इसके सेवनसे पुराना ज्वर नष्ट होता है ।

शीतारिरसः (७)

शीतज्वरारिरसः (१) देखिये ।

(७६४४) **शुक्तिक्षारादियोगः** (१)

(यो. र.; व. से.; वृ. नि. र. । उदररोगा.; यो. त. । त. ५३)

पातव्यो शुक्तितः क्षारः क्षीरेणोदधिशुक्तिजः ।
पयसा वा प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः प्लीहशान्तये॥

समुद्रकी सीपका क्षार या पीपल, दूधके साथ सेवन करनेसे प्लीहावृद्धि नष्ट होती है ।

(७६४५) **शुक्तिक्षारादियोगः** (२)

(यो. र. । उदरा.)

सामुद्रशुक्तिकाक्षारो यवक्षारः ससैन्धवः ।
गोदध्ना सम्प्रयुज्येत सर्वोदर विनाशनः ॥

समुद्रकी सीपका क्षार, जवाखार और सेंधा-नमक समान भाग लेकर एकत्र मिलावें ।

इसे गायकी दहीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके उदररोग नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**—१ माशा ।)

(७६४६) **शुक्तिशोधनम्**

(आ. वे. प्र. । अ. १०)

शुक्तिस्तु शिशिरा पित्तरक्तज्वरविनाशिनी ।
शोधनं शङ्खवत्तस्य शनिः प्रोक्ता कपर्दवत् ॥

शुक्ति (सीप) शीतल तथा रक्तपित्त और ज्वरनाशक है ।

शुक्तिका शोधन शंखके समान और मारण कौड़ीके समान होता है ।

(७६४७) **शुक्रमातृकावटिका**

(र. र. । प्रमेहा., भै. र. । प्रमेहा.)

गोक्षुरबीजं त्रिफलापत्रमेला रसाञ्जनम् ।
धन्याकञ्चविका जीरं तालीशं टङ्कदाडिमौ ॥
प्रत्येकार्द्धपलं दत्त्वा गुग्गुलोः कार्षिकन्तथा ।
रसाभ्रलौहगन्धानां प्रत्येकञ्च पलं क्षिपेत् ॥
सर्वमेकीकृतं वैद्यो दण्डयन्त्रैर्विमर्दयेत् ।
घृतभाण्डे तु संस्थाप्य मासमेकन्तु खादयेत् ॥
दाडिमस्वरसेनैव छागीदुग्धे वाम्भसा ।
चन्द्रनाथेन गदिता वटिका शुक्रमातृका ॥
विंशमेहान्निहन्त्याशु वातपित्तसमुद्भवान् ।
द्वन्द्वजान्सन्निपातोत्थान्मूत्रकृच्छ्राश्मरीगदान् ॥
बलवर्णाग्निजननी ज्वरदोषनिषूदनी ॥

गोखरु, त्रिफला, तेजपात, इलायची, रसौत, धनिया, चव, जीरा, तालीस पत्र, सुहागेकी खील और अनारदाना २॥-२॥ तोले; शुद्ध गूगल १। तोला; शुद्ध पारद, अभ्रकभस्म, लोहभस्म और शुद्ध गन्धक ५-५ तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको खरल करके सुरक्षित रक्खें । (या पानीसे घोट कर गोलियां बना लें ।)

इन्हें अनारके स्वरस, बकरीके दूध या पानीके साथ सेवन करनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरि और ज्वरका नाश होता तथा बल वर्ण और अग्नि की वृद्धि होती है ।

(**मात्रा**—१-२ माशा ।)

(७६४८) **शुक्रस्तम्भकरा वटकाः**

(र. प्र. सु. । अ. १३)

जातीफलाकेरकरहाटलवङ्गशुण्ठी-
कङ्कोलकेशरकणाहरिचन्दनानि ।
एतैः समानमहिफेनमनेन चाभ्रं-
श्वेतं निधाय मधुना वटकान् विदध्यात् ॥

मासद्वयोन्मितममुं निशि भक्षयित्वा
मृष्टं पयस्तदनु माहिषमाशु पीत्वा।
कुर्वन्तु कामिकजनाः प्रतिरुद्धपाता-
श्चेतांसि तानि चकितानि कलावतीनाम् ॥

जायफल, आककी जड़की छाल, अकरकरा, लौंग, सोंठ, कंकोल, केसर, पीपल, और सफेद मलियागिरी चन्दन, १-१ भाग तथा अफीम सबके बराबर और इन सबके बराबर सफेद अभ्रक भस्म लेकर सबको शहदमें घोट कर उड़दके समान गोलियां बना लें।

इसे रातको खाकर ऊपरसे मिश्री मिला भैंसका दूध पीनेसे स्त्री समागमके समय अत्यन्त स्तम्भन होता है।

मात्रा—२ गोली।

(७६४९) शुण्ठीखण्डः

(वृ. नि. र. । आमवाता.)

नागरस्य तुलामेकां घृतस्य पलविंशतिः ।
क्षीरद्रोण्यर्धके पक्त्वा खण्डस्यार्धं शतं क्षिपेत् ॥
व्योषं त्रिजातकं चैव केसरं पिप्पली जटा ।
जोङ्गकं जातिपत्रीकं जातीफलकचोरकम् ॥
अश्मभेदस्ताम्रभस्म वङ्गभस्म तथैव च ।
स्वर्णमाक्षिकमभ्रं च तथा लोहत्रयं क्षिपेत् ॥
मन्दानलविपक्वं तु लेहतं साधु साधयेत् ।
बल्यं वर्ण्यं तथायुष्यं वलीपलितनाशनम् ॥
आमवात प्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ॥

६। सेर सोंठके चूर्णको २॥ सेर घीमें भूनें और उसके भली भांति भुन जाने पर उसमें १६ सेर दूध तथा ३ सेर १० तोले खांड मिलाकर पुनः पकावें। जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित प्रक्षेप मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

प्रक्षेप—सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, केसर, पीपलामूल, अगर, जावत्री, जायफल, चोरक, पाषाण भेद; ताम्र भस्म, बङ्ग भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, अभ्रक भस्म, मुण्ड लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म और कान्त लोह भस्म ५-५ तोले।

यह लेह आमवात नाशक, बल वर्ण-वर्द्धक, आयु वर्द्धक और बलि पलित नाशक है।

(मात्रा—६ माशे।)

(७६५०) शुल्वतालेश्वरः

(र. रा. सु. । श्वासा.)

शुद्धं ताम्रं दशपलं चतुर्थांशं तु पारदम् ।
जम्बीरनीरैः सम्मर्द्य यावदेकत्र मेलितम् ॥
शुद्धतालपलं पञ्च किञ्चित् देयन्तु गन्धकम् ।
मृद्भाण्डे सन्निरुध्यैव अग्निं सञ्ज्वालयेदधः ॥
दशयामन्तु मन्दाग्निं पश्चादुत्तारयेत्तु तम् ।
स्वाङ्गशीतलसङ्ग्राह्यं देयं गुञ्जाद्वयं मृतम् ॥
ताम्बूलीदलसंयुक्तं कासे श्वासे ज्वरेषु च ।
पीनसे स्वरभेदे च मण्डले रक्तसम्भवे ॥
शूलं चाष्टविधं हन्ति कफक्षयसमुद्भवम् ।
कृमिपाण्ड्वामयं प्लीहं ज्वरेषु विषमेषु च ॥
एकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकं च चतुर्थकम् ।
शुल्वतालेश्वरो ह्येष रसः परमदुर्लभः ॥

५० तोले शुद्ध ताम्र और १२॥ तोले शुद्ध पारदको एकत्र मिलाकर जम्बीरी नीबूका रस

डाल डाल कर इतना खरल करें कि दोनों मिल कर एक जीव हो जाएं। तदनन्तर उसमें २५ तोले शुद्ध हरताल और १। तोला शुद्ध गन्धक मिलाकर पुनः खरल करें और सबके मिल जानेपर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके बालुकायन्त्रमें १० पहर मन्दाग्नि पर पकावें और स्वांगशीतल होने पर निकालकर खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे पानमें रख कर खाना चाहिये।

इसके सेवनसे कास, श्वास, ज्वर, पीनस, स्वरभेद, रक्तदोषज मण्डल, आठ प्रकारका शूल, कृमि रोग, पाण्डु, प्लीहा तथा एकाहिक, द्वयाहिक, त्र्याहिक और चातुर्थिक विषमज्वर नष्ट होता है।

(७६५१) शुल्वसुन्दररसः

(र. का. धे । शूला.)

समं ताम्रदलं पिष्ट्वा रसेन्द्रेण द्विगन्धकम्।
मृद्वस्त्रेण समावेष्ट्य पटुयन्त्रे पुटं ददेत्॥
तच्चूर्ण्य हेमवातारिचित्रकव्योषजद्रवैः।
षोडशांशं विषं दत्वा चूर्णयित्वाऽस्य वल्लम्॥
माणुकैरनुपानैश्च सद्यो वातसमुद्भवम्।
कफजं पक्तिशूलं च हन्याच्छ्रीगिरीशाज्ञया॥

शुद्ध ताम्रके कण्टक वेधी पत्र और पारद १-१ भाग तथा गन्धक २ भाग ले कर प्रथम ताम्र और पारदको एकत्र खरल करें और जब ताम्र पारदमें मिल जाय तो उसमें गन्धक मिलाकर घोटें और फिर उसका गोला बना कर उसे कपड़ेमें लपेट कर उस पर मिट्टीका लेप कर दें। तदनन्तर उसे सुखा कर लवण यन्त्रमें रखकर पुट लगा दें। इसके पश्चात् पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसमें उसका सोलहवां भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर धतूरे, अरण्डमूल, चित्रकमूल और त्रिकुटेके क्वाथकी १-१ भावना दे कर सुखा कर बारीक चूर्ण करके रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसके सेवनसे वातज और कफज पक्तिशूल शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

(**अनुपान**—शहद और घीके साथ मिला कर औषध खानेके पश्चात सेंधा नमक, जीरे और हींगका चूर्ण शहद और घीमें मिला कर चाटना चाहिये।)

(७६५२) शूलकुठाररसः

(वृ. नि. र. । शूला.)

टङ्कणं पारदं गन्धं त्रिफलाव्योषतालकम्।
विषं ताम्रं च जेपालं भृङ्गस्वरसमर्दितम्॥
द्विगुञ्जमात्रा वटिका मरिचेनार्द्रकेण वा।
सर्वशूलकुठारोयं विष्णुचक्रमिवासुरान्॥

सुहागेकी खील, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध हरताल, शुद्ध बछनाग, ताम्र भस्म और शुद्ध जमाल गोटा समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर भंगरेके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे मरिचके चूर्ण या अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

शूलकेसरी रसः

(र. र. स. । उ. अ. १८ ; र. र. । शूला.)

" शूलगजकेसरी रस " सं. ७६५४ देखिये ।

(७६५३) शूलगजकेसरीगुटिका

(वै. र. । शूला.)

पथ्याटङ्कणविश्वहिङ्गु मरिचं वह्निर्विडं गन्धकं
तुल्यं सैन्धवसंयुतं तु कुचिलं सर्वैः समं सम्मतम्।
शूलाध्मानविबन्धगुल्मकसनश्लेष्मामवातापहा
तूर्णाल्पाग्न्युदरारुचिज्वरहरी शूलद्विपघ्नी गुटी॥

हर्र, सुहागेकी खील, सोंठ, हींग, काली मिर्च, चीतामूल, बिड नमक, शुद्ध गन्धक और सेंधा नमक १-१ भाग तथा शुद्ध कुचला सबके बराबर ले कर सबको (पानीके साथ) खरल करके (मूंगके बराबर) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे शूल, आध्मान, विबन्ध, गुल्म, कास, श्लेष्मा, आमवात, अग्निमांद्य, उदररोग, अरुचि और ज्वरका नाश होता है ।

(७६५४) शूलगजकेसरीरसः (१)

(श्रीशूलगजकेशरि)

(रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; भै. र. ; र. का. धे. । शूला , र. प्र. सु. । अ. ८ ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; वृ. यो. त. । त. ९४)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं[1] यामैकं मर्दयेद्दृढम् ।
द्वयोस्तुल्ये शुद्धताम्रसम्पुटे सन्निवेशयेत् ॥
ऊर्द्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्भाण्डे स्थापयेद्भिषक्।
ततो गजपुटं दद्यात्स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥
सम्पुटं चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं पर्णखण्डे द्विगुञ्जकम् ।
भक्षयेत्सर्वशूलार्तो हिङ्गु शुण्ठी च जीरकम् ॥
वचामरिचजं चूर्णं कर्षमुष्णजलैः पिबेत् ।
असाध्यं नाशयेच्छूलं श्रीशूलगजकेशरी ॥*

शुद्ध पारद १ भाग, और शुद्ध गन्धक[1] २ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसे ३ भाग शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके उसे मिट्टीके पात्रमें, ऊपर नीचे सेंधा नमकका चूर्ण भरकर बन्द करें और उस पर कपरमिट्टी करके गजपुटमें पकावें । तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे ताम्रके सम्पुटको निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसे पानमें रखकर खाना और ऊपरसे हींग, सोंठ, जीरा, बच और काली मिर्चका १। तोला (व्यव. मा. १॥ माशा) चूर्ण मन्दोष्ण जलसे पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे असाध्य शूल भी नष्ट हो जाता है ।

(७६५५) शूलगजकेसरीरसः (२)

(यो. र. । शूला.; यो. त. । त. ४३ ; वृ. यो. त. । त. ९४.)

रसविषगन्धकपर्दक्षारेण सिन्धुपिप्पलीविश्वैः ।
अहिवल्ल्यम्बुविघृष्टः शूलेभहरिर्द्विगुञ्जोऽयम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक, कौड़ी भस्म, जवाखार, सेंधा नमक, पीपल और

*इसमें और चित्रविभाण्डक रसमें बहुत थोड़ा अन्तर है ।

१ पाठान्तरके अनुसार गन्धक १ भाग है ।

सेंठ समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर पानके रसमें घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे शूल नष्ट होता है।

(७६५६) शूलगजकेसरीरसः (३)

(र. का. धे. । शूला.)

द्विक्षारं पञ्चलवणं त्र्यूषणं रसगन्धकौ ।
पृथक् समं सर्वतुल्यं दन्तीबीजानि पेषयेत् ॥
बीजपूररसैः सप्तभावनान्ते रसो भवेत् ।
पर्णपत्रोदकाभ्यां तु स्याच्छूलगजकेसरी ॥

जवाखार, सज्जीखार, पांचो नमक, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर बिजौरेके रसकी सात भावना दें और (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनमेंसे १ गोली पानके रसमें खानेसे शूल नष्ट होता है।

(७६५७) शूलगजकेसरीरसः (४)

(र. चं. । शूला.)

मृतताम्रं पलैकं तु चिञ्चाक्षारं पलाष्टकम् ।
हिङ्गु हरीतकी व्योषं करञ्जबीजजीरकम् ॥
प्रत्येकं पलमात्रं तु चूर्णं कोष्णोदके पिबेत् ।
कर्षैकं शूलशान्त्यर्थं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥

ताम्र भस्म ५ तोले, इमलीका क्षार ४० तोले; तथा भुनी हुई हींग, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, करञ्जकी गिरी और ज़ीरा ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र खरल करें।

मात्रा—१। तोला।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त उपद्रवों युक्त शूल नष्ट होता है।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ माशे।)

(७६५८) शूलगजकेसरीरसः (५)

(र. र. स. । अ. १८)

पलप्रमाणसूतेन बलिना द्विगुणेन च ।
शुद्धत्रिपलतालेन कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम् ॥
पलमानेन कर्तव्यं शुद्धताम्रस्य सम्पुटम् ।
पिधानपात्रसंग्रस्ततलपात्रास्यवत्खलु ॥
कज्जलीं सम्पुटस्यान्तर्निदध्यात्तदनन्तरम् ।
अधस्तादुपरिष्टाच्च सम्पुटस्याऽऽक्षिपेत्खलु ॥
आकण्ठं पटुचूर्णं तु निधाय च निरुध्य च ।
विशोष्य गजसंज्ञेन पुटेन पुटयेत्ततः ॥
पटचूर्णं विधायाथ सिन्धुमध्येविनिक्षिपेत् ।
पथ्यार्द्रकरसोपेतो वल्लमानेन सेवितः ॥
रसो निःशेषशूलघ्नः स्याच्छूलगजकेसरी ॥

५ तोले शुद्ध पारद, १० तोले शुद्ध गंधक और १५ तोले शुद्ध हरतालकी कज्जली बनावें और उसे ५ तोले शुद्ध ताम्रकी डिबियामें बन्द कर दें। यह डिबिया ऐसी होनी चाहिये कि जिसका ऊपर वाला ढकना नीचेके भाग पर अच्छी तरह जम जाए। तदनन्तर उस पर ३-४ कपरौटी करके सुखा लें और फिर उसे एक हाण्डीमें सेंधा नमकके चूर्णके बीचमें रखकर हांडीका मुख शरावसे ढककर उस पर ३-४ कपड़मिट्टी कर दें। नमक हाण्डीमें

गले तक भरा हुवा होना चाहिये और औषधवाला सम्पुट उसमें बीचोंबीच दबाना चाहिये । इस हाण्डीको गजपुटकी अग्नि दे कर, स्वांगशीतल होने पर निकाल लें और उसमेंसे ताम्रकी डिबिया-को निकाल कर पीस लें।

इसमेंसे २ रत्ती चूर्ण हर्रके चूर्ण और अदरकके रसके साथ खानेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा—१-१॥ रत्ती ।)

(७६५९) शूलदावानलः

(वै. र. ; र. का. धे. ; यो. र. ; बृ. नि. र. ; र. चं. । शूला. ; यो. त. । त. ४४)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं प्रत्येकं पलमात्रकम् ।
मरिचं पिप्पली शुण्ठी हिङ्गु चैव पलद्वयम् ॥
पलाष्टं पञ्चलवणं चिञ्चाक्षारं पलाष्टकम् ।
सप्तवारं दग्धशङ्खं जम्बीराम्लेन सेचयेत् ॥
पलाष्टकं च संयोज्यं तत्सर्वं निम्बुकद्रवैः ।
दिनं मर्द्य कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥
शूलदावानलो नाम्ना शूलरोगनिकृन्तनः ॥

शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक ५-५ तोले; काली मिर्च, सोंठ, पीपल और भुनी हुई हींग १०-१० तोले तथा पांचो नमक (मिलित) और इमलीका क्षार ४०-४० तोले एवं तपा तपा कर ७ बार जम्बीरीके रसमें बुझाया हुवा शंख ४० तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको १ दिन नीबूके रसमें घोट कर जंगली बेरके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

शूलनाशिनी वटी

शूलहरणयोगः प्र. सं. ७६६४ देखिये ।

(शूलभञ्जीरसः)

प्र. सं. ४४१४ "पीडाभञ्जीरसः" देखिये ।

(७६६०) शूलराजलौहम्

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । शूला.)

कर्षैकं कान्तलौहस्य शुद्धाभ्रस्य पलन्तथा ।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधुसर्पिस्तथैव च ॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत् ।
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥
प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शिशिराम्बवनुपानतः ॥
सर्वदोषभवं शूलं कुक्षिशूलञ्च यद्भवेत् ।
हृच्छूलं कुपार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विसूचिकाम् ।
शूलराजमिदं लौहं हरेण परिनिर्मितम् ॥

कान्त लोह भस्म १। तोला, अभ्रक भस्म ५ तोले, मिश्री ५ तोले, शहद ५ तोले और घी ५ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर लोहेके खरलमें घोटें और फिर उसमें ७॥-७॥ माशे सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिड़ंग, चव और चीता—इनका चूर्ण मिला कर घोटकर रक्खें।

इसके सेवनसे सर्व दोषज कुक्षिशूल, हृदय-शूल, पार्श्व शूल, अम्लपित्त, अर्श, ग्रहणी दोष, प्रमेह और विसूचिकाका नाश होता है ।

(मात्रा—६ रत्ती ।)

अनुपान—शीतल जल ।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

(७६६१) शूलवज्रिणी वटिका.

(र. च. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. ; भै. र. ; धन्व. । शूला.)

रसगन्धकलौहानां पलार्धेन समन्वितम् ।
त्रिफला रामठं शुल्बं[1] त्रिकटु शटिटङ्कणम् ॥
पत्रं त्वगेलातालीसजातीफललवङ्गकम् ।
यवानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं तोलकं मतम् ॥
माषैका वटिका कार्या छागीदुग्धेन वा पुनः ।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी ॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा ।
अम्लपित्तामवातं च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपदं च भगन्दरम् ।
कासं श्वासं व्रणं कुष्ठं कृमिहिक्कामरोचकम् ॥
अर्शांसि ग्रहणीं दुष्टां सर्वातिसारनाशनम् ।
विषूचीं कण्डुं मन्दाग्निं पिपासां पीनसं गदम् ॥
एकजं द्वन्द्वजं वाऽपि दोषत्रयसमुद्भवम् ।
बुद्धिकान्तिप्रदा नित्यं सेविता च चिरायुषी ॥
गुरुणा चन्द्रनाथेन मह्यमेषाप्रकीर्तिता ।
संसारलोकरक्षार्थं विचिन्त्य परिनिर्मिता ॥

शुद्ध पारद, गन्धक और लोह भस्म २॥-२॥ तोले तथा हर्र, बहेड़ा, आमला, भुनी हुई हींग, ताम्र भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, कचूर, सुहागेकी खील, तेजपात, दालचीनी, इलायची, तालीसपत्र, जायफल, लौंग, अजवायन, जीरा और धनिया ७॥-७॥ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर बकरीके दूधमें घोट कर १-१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे आठ प्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदर रोग, अम्लपित्त, आमवात, कामला, पाण्डु, शोथ, गलग्रह, वृद्धि रोग, श्लीपद, भगन्दर, कास, श्वास, व्रण, कुष्ठ, कृमि, हिचकी, अरुचि, अर्श, ग्रहणी रोग, समस्त प्रकारके अतिसार, विसूचिका, कण्डु, अग्निमांद्य, पिपासा, पीनस और अन्य बहुतसे वातज, पित्तज तथा कफज रोग नष्ट होते तथा बुद्धि, कान्ति और आयुकी वृद्धि होती है ।

(७६६२) शूलसिंहरसः

(र. चं. । शूला. ; र. र. । शूला.)

विषं कर्षं वचा कर्षं त्रिकटु त्रिफला च पट् ।
भार्ङ्गीमुस्ताविडङ्गानां प्रतिकर्षं च चूर्णयेत् ॥
गुडेन सर्वतुल्येन गुटिका चणमानिका ।
शूलसिंहप्रयोगोऽयं कफरोगहरो भवेत् ॥
एरण्डतैलशुण्ठीभ्यां हिङ्गुसौवर्चलान्वितः ।
उष्णोदके पिबेच्चानु रसो वाऽऽनन्दभैरवः ॥

शुद्ध बछनाग १। तोला, बच १। तोला, एवं सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा तथा आमला

[1] किसी किसी ग्रन्थमें "शुल्व" के स्थानपर "शुण्ठी" पाठ है ।

२॥-२॥ तोले और भरंगी, नागरमोथा तथा बायबिडंग १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर घोटें और फिर उसमें सबके बराबर गुड़ मिलाकर चनेके बराबर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे कफज शूल नष्ट होता है।

अनुपान—शुण्ठी चूर्णयुक्त, अरण्डीका तेल, हींग और काला नमक अथवा उष्ण जल।

इसी अनुपानके साथ "**आनन्द भैरव**" रस देनेसे भी शूल नष्ट होता है।

(७६६३) शूलहरक्षारः

(र. र. स. । उ. अ. १८)

वन्ध्यालाङ्गलिकामूलं शङ्खं तु द्विगुणं तयोः।
त्रयाणां भावयेच्चूर्णं त्र्यहं जम्बीरजद्रवैः॥
रुध्याद् गजपुटे पश्चात्तत्क्षारं मरिचैर्घृतैः।
कर्षमात्रं पिबेच्छूली तत्क्षणात्सुखमाप्नुयात्॥

बांझ ककोड़े और लांगली (कलियारी) की जड़ १-१ भाग तथा शंख ४ भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे ३ दिन तक जम्बीरीके रसमें खरल करके शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें।

इसमें काली मिर्चका चूर्ण मिला कर घीके साथ सेवन करनेसे शूल तत्काल नष्ट हो जाता है।

मात्रा—१। तोला।

(**व्यवहा. मा.**—१ माशा।)

(७६६४) शूलहरणयोगः (शूलनाशिनीवटी)

(भै. र. ; धन्व. ; र. चं. ; र. रा. सु. । शूला.; रसे. सा. सं. । शूला. ; वै. र. । शूला. ; र. चि. म. । स्त. ९)

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिला हिङ्गु सैन्धवम्।
गन्धकञ्च समं सर्वं वटीं कुर्यात्सुखावहाम्॥
लघुकोलप्रमाणान्तु शस्यते प्रातरेव हि।
एकैका वटिका ग्राह्या गुल्मशूलविनाशिनी॥
ग्रहण्यामतिसारे च साजीर्णे मन्दपावके।
योजयेदुष्णपयसा सुखमाप्नोति निश्चितः॥
सुवर्णश्च भवेद्देहं सदोत्साहयुतं नृणाम्॥

हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध कुचला, भुनी हींग, सेंधा नमक और शुद्ध गंधक समान भाग ले कर सबको एकत्र (पानीसे) खरल करके छोटे बेरके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे गुल्म, शूल, ग्रहणी रोग, अतिसार, अजीर्ण और अग्निमांद्यका नाश होता है तथा देह सुवर्ण सदृश शुद्ध हो जाती और उत्साह बढ़ता है।

अनुपान—उष्ण दूध।

इन्हें प्रातःकाल सेवन करना चाहिये।

शूलहररसः (महा)

(महेश्वर रसः)

(बृ. नि. र. । शूला.)

प्र. सं. ५५८७ महेश्वर रस (१) देखिये।

(७६६५) शूलान्तकरसः

(र. र. स. । उ. अ. १८ ; र. चं. । शूला.)

भस्म सूतस्य खस्यापि पलमेकं पृथक् पृथक्।
ताम्रभस्म पले द्वे तु गन्धकस्य पलत्रयम्॥
हरितालस्य कर्षांशं विमलं हेममाक्षिकम्।
पलार्धं हलिनीकन्दं नागवल्ली पलार्धकौ॥
चतुष्पलं तु त्रिवृतमेतत्सर्वं विचूर्णयेत्।
भूधात्रीस्वरसेनैव भावयेत्सप्तधा भिषक्॥

तथा दन्तीद्रवैर्वल्लं दद्यादार्द्रकवारिणा ।
तेन कोष्ठे विशुद्धे तु दधिभक्तं तु भोजयेत् ॥
सर्वाणि शूलानि हरेद्रसः शूलान्तको मतः ॥

पारद भस्म और अभ्रक भस्म ५-५ तोले, ताम्र भस्म १० तोले, शुद्ध गंधक १५ तोले, हरिताल भस्म (या शुद्ध हरताल) १। तोला, रौप्य माक्षिक भस्म १। तोला, स्वर्ण माक्षिक भस्म १। तोला, कलियारीकी जड़ २॥ तोले, सीसा भस्म २॥ तोले, वंगभस्म २॥ तोले और निसोतका चूर्ण २० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर भुई आमलेके स्वरस और दन्तीमूलके काथकी सात सात भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक गोली अदरकके रसके साथ देनेसे विरेचन हो कर समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

विरेचन होनेके पश्चात् दही भात खाना चाहिये।

(७६६६) शूलान्तको रसः

(भै. र. ; धन्व. । शूला. ; र. चि. म. । स्त. ११)

त्र्यूषणत्रिफलामुस्तं त्रिवृता चित्रकं तथा ।
एकैकशः समो भागस्तदर्धं रसगन्धयोः ॥
लौहाभ्रकविडङ्गानां भागस्तु द्विगुणो भवेत् ।
एतत्सर्वं समादाय चूर्णयित्वा विचक्षणः ॥
त्रिफलायाः कषायेण गुडिकाः कारयेद्भिषक् ।
तदेकां भक्षयेत्प्रातर्भक्तवारि पिबेदनु ॥
निहन्ति परिणामोत्थमम्लपित्तं वमिं तथा ।
अन्नद्रवभवं शूलं सन्निपातसमुद्भवम् ॥
सर्वशूलान्निहन्त्याशु शुष्कदार्वनलो यथा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, निसोत और चीतामूल १-१ तोला, समान भाग पारद गंधककी कज्जली १ तोला तथा लोह भस्म, अभ्रक भस्म और बायबिड़ंग २-२ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर त्रिफलाके काथमें खरल करें और (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल कांजीके साथ सेवन करनेसे परिणाम शूल, अम्लपित्त, वमन, अन्न द्रवशूल और सन्निपातज शूलादि समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

शूलारिरसः

(र. का. धे. । शूला.)

प्र. सं. ५५९२ महोदधिरसः (वृहत्) (४) देखिये।

(७६६७) शूलेभसिंहिनी गुटिका

(र. का. धे. । शूला.)

बलेः शुद्धस्य भागार्धं भागार्धं पारदस्य च ।
विषस्य भागो विज्ञेयो मरिचस्य त्रयः स्मृताः ॥
भागैकं पिप्पलीशुण्ठ्योः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
भावयेच्छृङ्गवेरस्य रसेनैव त्रिवासरम् ॥
रुबुपत्ररसेनैव भावनात्रितयं तथा ।
पश्चात्संशोष्य चणकमात्रा कार्या वटी बुधैः ॥

तप्तोदकेन दातव्या सर्वशूलनिवारिणी ।
अञ्जयेच्छीतनीरेण नेत्रस्रावं विनाशयेत् ॥
शूलेभसिंहिनी ख्याता न देया यस्यकस्यचित् ।
शङ्करेण स्वयं प्रोक्ता गोपालपुरतः पुरा ॥

शुद्ध गन्धक आधा भाग, शुद्ध पारद आधा भाग, शुद्ध बछनाग १ भाग, काली मिर्चका चूर्ण ३ भाग तथा पीपल और सोंठका चूर्ण १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अदरक तथा अरण्डके पत्तोंके रसकी ३-३ भावना दें और चनेके समान गोलियां बनाकर सुखा लें ।

इन्हें गरम पानीके साथ सेवन करनेसे शूल नष्ट होता है और शीतल जलमें घिसकर आंखमें लगानेसे नेत्रस्राव बन्द होता है ।

(७६६८) भृङ्गाराभ्रम् (१) (बृहद्)

(न. मृ. । त. ५; रसे. सा. सं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । कासा.)

पारदं गन्धकं चैव टङ्कणं नागकेसरम् ।
कर्पूरं जातिकोषं च लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥
एतेषां कर्षभागानि सुवर्णं तत्समं भवेत् ।
शुद्धकृष्णाभ्रभस्मापि चतुष्कं पिचुभागिकम् ॥
तालीशं घनकुष्ठं च मांसी पुष्पवराङ्गकम् ।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला गजपिप्पली ॥
एषां कर्षद्वयं चैव पिप्पलीरसभावितम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥
नानारोगप्रशमनं विशेषात्कासरोगनुत् ।
वातिकं पैत्तिकं चैव श्लेष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलं च शिरःशूलं विशेषतः ।
स्वरामयं तथा कुष्ठं श्लेष्माणं वातशोणितम् ॥
रक्तपित्तं च कासं च नाशयेन्नात्र संशयः ।
मुसलीघृतक्षौद्रैश्च वाजीकरणमुत्तमम् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, सुहागेकी खील, नागकेसर, कपूर, जावत्री, लौंग और तेजपात १।-१। तोला, स्वर्ण भस्म १। तोला; कृष्णाभ्रक भस्म ५ तोले; तालीस पत्र, नागरमोथा, कूठ, जटामांसी, धायके फूल, दालचीनी, इलायचीके बीज, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और गजपीपल २॥-२॥ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको पीपलके क्वाथके साथ खरल करके (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे अनेक रोग और विशेषतः कासका नाश होता है । यह रस हृच्छूल, पार्श्वशूल, शिरशूल, स्वरभेद, कुष्ठ, कफ, वातरक्त और रक्तपित्तको नष्ट करता है ।

अनुपान—दालचीनीका चूर्ण और शहद ।

यदि इसे मूसलीके चूर्ण, घृत और शहदके साथ सेवन किया जाय तो कामशक्ति बढ़ती है ।

(७६६९) भृङ्गाराभ्रम् (२)

(र. चं. । कासा. ; धन्व. ; र. र. । वाजीकरणा. ; रसे. सा. सं. ; भै. र. ; र. रा. सु. । कासा.)

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं
शाणमानं यदन्यत् ।
कर्पूरं जातिकोषं सजलमिभकणा
तेजपत्रं लवङ्गम् ॥

मांसीतालीसमोचं गजकुसुमगदं
धातकी चेति तुल्यम् ।
पथ्या धात्री विभीतं त्रिकटुरथ पृथक्
त्वर्धशाणं द्विशाणम् ॥
एलाजातीफलाख्यं क्षितितलविधिना
शुद्धगंधस्य कोलम् ।
कोलार्धं पारदस्य प्रतिपदविहितं
पिष्टमेकत्र मिश्रम् ॥
पानीयेनैव कार्याः परिणतचणक-
स्विन्नतुल्याश्च वट्यः ।
प्रातः खाद्याच्चतस्रस्तदनु च कियत्
शृङ्गवेरं सपर्णम् ॥
पानीयं पीतमन्ते ध्रुवमपहरति
क्षिप्रमेतान्विकारान् ।
कोष्ठे दुष्टाग्निजातान् ज्वरमुदररुजो
राजयक्ष्म क्षयं च ॥
कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं
मेहमेदोविकारान् ।
छर्दिं शूलाम्लपित्तं गरगरलगदान्
पीनसं प्लीहरोगान ॥
हन्यादामाशयोत्थान् कफपवनकृतान्
पित्तरोगानशेषान् ।
बल्यो वृष्यश्च योगस्तरुणतरकरः
सर्वरोगेषु शस्तः ॥
पथ्यं मासैश्च यूषैः घृतपरिलुलितैः
गव्यदुग्धैश्च भूयः ।
भोज्यं मिष्टं यथेच्छं ललितललनया
दीयमानं मुदा यत् ॥
शृङ्गाराभ्रेण कामी युवतिजनशता
भोगयोगादतुष्टः
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिचिदथ
स्वेच्छया भोज्यमन्यत् ॥

क्रीडामोदप्रमुग्धः सपदि शुभतया
योगराजं निषेव्य ।
गच्छेद्भूयोऽथ भूयः किमपरमधिकं
भेषजं नास्त्यतोऽन्यत् ॥

कृष्णाभ्रक भस्म १० तोले तथा कपूर, जावित्री, सुगन्धबाला, गजपीपल, तेजपात, लौंग, जटामांसी, तालीसपत्र, मोचरस, नागकेसर, कूठ और धायके फूल ३॥।-३॥। माशे एवं हर्र, आमला, बहेड़ा, सोंठ, मिर्च और पीपल १५-१५ रत्ती; इलायचीके बीज और जायफल ७॥-७॥ माशे; शुद्ध गन्धक ७॥ माशे और पारा ३॥। माशे लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर पानीके साथ घोट कर उबले हुवे चनोंके बराबर गोलियां बना लें ।

मात्रा—४ गोली ।

इसे प्रातःकाल अद्रकके रस और पानके साथ खा कर ऊपरसे थोड़ा पानी पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे अग्निमांद्य, ज्वर, उदररोग, राजयक्ष्मा, क्षय, कास, श्वास, शोथ, नेत्ररोग, प्रमेह, मेदो विकार, छर्दि, शूल, अम्लपित्त, विष, पीनस, प्लीहा, आमाशयके रोग, कफ और वायुके रोग और पित्त रोग नष्ट होते हैं ।

यह रस बल्य, वृष्य, यौवनदाता और सर्व रोग नाशक है। इसे सेवन करने वाले कामी पुरुषोंकी स्त्रीसम्भोग-शक्ति शान्त नहीं होती।

इसके सेवन कालमें घृतयुक्त पथ्याहार, गोदुग्ध, मुद्गयूष और (मांसाहारियोंके लिये) मांस रसके साथ खाना चाहिये। तथा इच्छानुसार मिष्टान्न खाना चाहिये। कुछ दिनों तक शाक और अम्ल पदार्थोंको छोड़कर इसी प्रकार पथ्य पालन करना चाहिये और फिर इच्छानुसार आहार करना चाहिये।

(७६७०) शोथकालानलो रसः

(भै. र. । शोथा.)

चित्रं कुटजबीजञ्च श्रेयसी सैन्धवं तथा।
पिप्पली देवपुष्पञ्च जातीफलसटङ्कणम् ॥
लौहमभ्रं तथा गन्धं पारदेनैव मिश्रितम्।
एतेषां कर्षमात्रेण वटीं गुञ्जामितां शुभाम् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षरसेन तु।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥
कासं श्वासं तथा शोथं प्लीहानं हन्ति दुस्तरम्
मेहं मन्दानलं शूलं सङ्ग्रहग्रहणीं तथा ॥
अवश्यं नाशयेच्छोथं कर्दमं भास्करो यथा।
शोथकालानलो नाम रोगानीकविनाशनः ॥

चीतामूल, इन्द्रजौ, गजपीपल, सेंधा नमक, पीपल, लौंग, जायफल, सुहागेकी खील, लोहभस्म अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला-

कर (पानीके सा[illegible] [illegible] करके) १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें

इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल तालमखानेके रसके साथ खानेसे आठ प्रकारके ज्वर, कास, श्वास, शोथ, दुस्साध्य प्लीहा, प्रमेह, अग्निमांद्य, शूल और संग्रहणीका नाश होता है। यह रस शोथको अवश्य नष्ट करता है।

(७६७१) शोथभस्मलौहम्

(भै. र. । शोथा.)

त्रिकटु त्रिफला द्राक्षा पौष्करं सजलं शटी।
लौहं वचा लवङ्गञ्च शृङ्गी त्वक्शतपुष्पिका ॥
विभीतकं विडङ्गञ्च धातकीपुष्पमेव च।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥
सर्वद्रव्यसमञ्चात्र सुमृतं लौहकिट्टकम्।
कुटजस्य रसेनापि भ्रक्षयेत्परियत्नतः ॥
वेष्टितं जम्बूपत्रेण पङ्केन परिलेपयेत्।
ततो लघुपुटे पक्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा सेवितं गुञ्जकद्वयम्।
निहन्ति सर्वजं शोथं ग्रहणीञ्च विशेषतः ॥
उदरेषु च सर्वेषु शोथेषु च विधानतः।
विविधा व्याधयश्चान्ये सेविता यान्ति साध्यताम्

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, द्राक्षा, पोखरमूल, सुगन्धबाला, कचूर, लोह भस्म, बच, लौंग, काकड़ासिंगी, दालचीनी, सौंफ, बहेड़ा, बायबिडंग और धायके फूल १-१ भाग तथा मण्डूर भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करके कुड़ेकी छालके स्वरसमें घोट कर

गोला बनावें और उसे जामनके पत्तोंमें लपेटकर उस पर मिट्टीका (१ अंगुल मोटा) लेप करके सुखा लें। तदनन्तर उसे लघु पुटमें पकावें और फिर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर पीस लें।

मात्रा—२ रत्ती

इसे सेवन करनेसे उदरशोथ और समस्त शरीरगत शोथ विशेषतः (शोथ युक्त) संग्रहणीका नाश होता है।

(७६७२) शोथाङ्कुशो रसः

(भै. र. । शोथा.)

रसेन्द्रगन्धं मृतलौहताम्रं
नागं तथाभ्रं समसङ्ख्यकञ्च ।
निर्गुण्डिकास्फोतकपित्थचिञ्चा–
पुनर्णवाश्रीफलकेशराजम् ॥
एषां रसैर्भावितमेकशश्च
गुञ्जाप्रमाणा वटिका विधेया ।
शोथज्वरारोचकपाण्डुरोगं
सर्वाङ्गशोथं विनिवारयेच्च ॥
पित्तान्वितान् वातभवान् कफोत्थान्
शोथाङ्कुशो नाम निहन्ति रोगान् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, लोह भस्म, ताम्र भस्म, सीसा भस्म और अभ्रक भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको संभालु, आस्फोता, कैथकी छाल, इमलीकी छाल, पुनर्नवा-मूल, बेलगिरी और भंगरा; इनके रसोंकी (या काथकी) १-१ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे वातज, पित्तज और कफज शोथ तथा सर्वांग शोथ और ज्वर, अरुचि तथा पाण्डुका नाश होता है।

(७६७३) शोथारिमण्डूरम्

(भै. र. । शोथा.)

गोमूत्रशुद्धमण्डूरं निर्गुण्डीरसभावितम् ।
मानकार्द्रककन्दानां रसेष्वपि च भावयेत् ॥
त्रिफलाव्योषचव्यानां चूर्णं कर्षद्वयं पृथक् ।
चूर्णाद् द्विगुणमण्डूरं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥
सिद्धे चूर्णं क्षिपेच्छीते मधुनश्च पलद्वयम् ।
निहन्ति सर्वजं शोथं सर्वाङ्गोत्थं न संशयः ॥

गोमूत्रमें शुद्ध करके भस्म किये हुवे मण्डूर को संभालु, मानकन्द और अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर सुखा लें। तदनन्तर ३५ तोले यह मण्डूर ले कर उसे ८ गुने (१६ गुने) गोमूत्रमें पकावें और अवलेहके समान गाढ़ा हो जाने पर उसमें २॥-२॥ तोले हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल और चवका चूर्ण मिला दें तथा ठण्डा होने पर २० तोले शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे सर्व दोषज सर्वांग शोथ नष्ट होता है।

(**मात्रा**—४ रत्ती।)

(७६७४) शोथारिरसः (१)

(भै. र. । शोथा.)

श्वेतदूर्वारसैर्भाव्यो हिङ्गुलोत्थो रसो बुधैः ।
तं रसं मूषिकायान्तु कृत्वा तस्योपरि क्षिपेत् ॥

श्वेतदूर्वायमान्योश्च चूर्णं पूर्णाशयं पुनः ।
पिधानिकां ततो दत्त्वा नीरन्ध्रां मूषिकां कुरु ॥
ततो लघुपुटे पाकं विधानेन प्रदापयेत् ।
पुनस्तन्तु रसं नीत्वा गन्धकेन समेन च ॥
कज्जलीं कारयेद्धीरः पुनस्तां मिश्रयेत्समः ।
चतुःसमं तथा कुर्यादेभिर्द्रव्यैः सुशोधितैः ॥
विषताम्रकरङ्गैश्च तच्चूर्णं स्थापयेत्पुनः ।
खटिकाग्रे गृहीतं तच्चूर्णं जिह्वोपरि क्षिपेत् ॥
गिलनार्थं चतुकर्षप्रमाणायाः प्रपानकम् ।
शर्करायाः पिबेच्चानु सर्वशोथे महौषधम् ॥
भूरि प्रस्रुत्य प्रस्रुत्य महाशोथाद्विमुच्यते ॥

हिंगुलोत्थ पारदको श्वेत दूर्वा (दूब) के रसकी भावना दे कर एक मूषामें डालें और उसके ऊपर सफेद दूब (श्वेत दूर्वा) और अजवायनका चूर्ण इतना डालें कि मूषा भर जाए। तदनन्तर उस पर ढकना लगा कर सन्धि बन्द कर दें और फिर ४-५ कपड़मिट्टी करके सुखा लें और उसे लघुपुटमें पकावें। तत्पश्चात् मूषाके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे पारदको निकाल कर उसके बराबर गन्धक मिलाकर कज्जली बनावें और फिर उसमें शुद्ध बछनाग, ताम्र भस्म, और वङ्ग भस्म (प्रत्येक कज्जलीकी बराबर) मिला कर खरल करें।

इसमेंसे (आधी रत्ती) औषध जिह्वापर रखकर ५ तोले खांडके शर्बतसे निगल जाएं।

इसके सेवनसे मूत्र विरेचन हो कर शोथ नष्ट हो जाता है।

(७६७५) शोथारिरसः (२)

(र. चं. ; वृ. नि. र. ; यो. र. । शोथा.)

हिङ्गुलं जयपालं च मरिचं टङ्कणं कणाम् ।
सम्मर्द्य वल्लः सघृतः सर्वशोफहरः परः ॥

शुद्ध हिंगुल और जमालगोटा तथा काली मिर्च, सुहागेकी खील और पीपलका चूर्ण, समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शोथ नष्ट होते हैं।

(७६७६) शोथारिलौहम्

(भै. र. । शोथा.)

अयोरजस्त्र्यूषणयावशूकं
चूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन ।
शोथं निहन्यात्सहसा नरस्य
यथाशनिर्वृक्षमुदग्रवेगः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण तथा जवाखार १-१ भाग और लोह भस्म ४ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे त्रिफला क्वाथके साथ सेवन करनेसे शोथ अत्यन्त शीघ्र नष्ट होता है।

(मात्रा—२-३ रत्ती।)

(७६७७) शोथोदरारिलौहम्

(भै. र. ; व. से. ; र. र. । उदरा. ; र. का. धे. । शोथा.)

पुनर्णवामृतावह्निगवाक्षीमानशिग्रवः ।
सूर्यावर्त्तार्कमूलञ्च पृथगष्टपलं जले ॥

पादशेषे शृतं द्रोणे सुपूते वस्त्रगालिते ।
लौहभस्माष्टपलकं पचेदाज्यसमं भिषक् ॥
अर्कस्य द्विपलं क्षीरं स्नुहीक्षीरं चतुःपलम् ।
पलद्वयं कौशिकस्य गन्धकस्य पलं तथा ॥
पलार्द्धं पारदं सिद्धे वक्ष्यमाणन्तु निक्षिपेत् ।
जयपालं ताम्रमभ्रं शुद्धमत्र प्रदापयेत् ॥
कंकुष्ठवह्निकन्दानां शराख्यात् घण्टकर्णकात् ।
पलाशस्य च बीजानि कञ्चुकी तालमूलिका ॥
त्रिफलायाः क्रिमिरिपोस्त्रिवृद्दन्तिभवं तथा ।
सूर्यावर्त्तगवाक्ष्योश्च वर्षाभूर्वज्रवल्लिका ॥
एषां लौहसमां मात्रां स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
अतोऽस्य भक्षयेन्मात्रामनुपानञ्च युक्तितः ॥
हन्ति सर्वोदरं सिद्धं नात्र कार्या विचारणा ।
ये च शोथाः सुदुर्वाराश्चिरकालानुबन्धिनः ॥
ते सर्वे नाशमायान्ति तमः सूर्योदये यथा ।
नातः परतरं किञ्चिच्छोथोदरविनाशनम् ॥
उदराणि पाण्डुरोगं कामलाञ्च हलीमकम् ।
अर्शो भगन्दरं कुष्ठं ज्वरं गुल्मञ्च नाशयेत् ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा—साठी), गिलोय, चीता, इन्द्रायणकी जड़, मानकन्द, सहंजनेकी छाल, हुलहुल और आककी जड़ ४०-४० तोले ले कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें लोहभस्म ४० तोले, घी १ सेर, आकका दूध २० तोले, थूहर (स्नुही) का दूध ४० तोले, शुद्ध गूगल १० तोले और ५ तोले गन्धक तथा २।। तोले पारदकी कज्जली मिला कर पुनः पकावें। जब पाक तैयार हो जाय तो उसमें शुद्ध जमालगोटा, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कंकुष्ठ, चीतामूल, जिमीकन्द (सूरण) शरपुंखा, घण्टाकर्ण, पलाशके बीज, क्षीरकञ्चुकी, मूसली (तालमूली), हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिडंग, निसोत, दन्तीमूल, हुलहुल, इन्द्रायणकी जड़, पुनर्नवा और वज्रवल्ली (हड़जोड़ी); इनका समान भाग मिश्रित चूर्ण ४० तोले मिला कर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रा और अनुपानके साथ देनेसे समस्त प्रकारके शोथ अवश्य नष्ट हो जाते हैं। जो शोथ पुराने और कष्ट साध्य हों वे भी इससे शीघ्र ही नष्ट हो सकते हैं। शोथोदरके लिये तो इससे उत्तम कोई औषध ही नहीं है। इसके अतिरिक्त यह रस समस्त उदर रोग, पाण्डु, कामला, हलीमक, अर्श, भगन्दर, कुष्ठ, ज्वर और गुल्मको भी नष्ट करता है।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(७६७८) श्रीडामरानन्दाभ्रम्

(भै. र. । कासा.)

अभ्रस्यामलमारितस्य तु पलं क्षुद्राटरूषस्थिरा ।
बिल्वश्योणाकपाटलाकलसिकाः सब्रह्मयष्ट्यार्द्रकाः
चित्रग्रन्थिकगोक्षुरं सचविकं मार्गात्मगुप्तान्वितम्।
सत्वैर्मर्दितमेकशश्च पलिकैर्गुञ्जार्द्धकं भक्षितम् ॥
कासं पञ्चविधं स्वरामयमुरोघातं च हिक्कां ज्वरम्।
श्वासं पीनसमेहगुल्ममरुचिं यक्ष्माम्लपित्तक्षयम्॥
दाहं मोहमशेषदोषजनितं शूलं बलासं क्रिमिम् ।
छर्दिं पाण्डुहलीमकं गलगदं विस्फोटकं कामलाम्॥
मन्दाग्निं ग्रहणीक्षयञ्च यकृतं प्लीहानमर्शांसि षट् ।
हन्यादामकफोद्भवानपि गदान् श्री डामरानन्दाभ्रकम् ॥

बल्यं वृष्यमशेषदोषहरणं धातुप्रदं कामिनाम् ।
मेध्यं हृद्यरसायनं हरमुखाज्ज्ञात्वा मया भाषितम्॥

छोटी कटेली, बासा, शालपर्णी, बेलछाल, अरलुछाल, पाढल, पृश्निपर्णी, भरंगी, अद्रक, चीतामूल, पीपलामूल, गोखरु, चव्य, अपामार्ग और कौंचकी जड़; इनके १०-१० तोले स्वरस (या क्वाथ) में ५ तोले अभ्रक भस्मको पृथक् पृथक् मर्दन करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

यह रस ५ प्रकारकी खांसी, स्वरभेद, उरःक्षत, हिचकी, ज्वर, श्वास, पीनस, प्रमेह, गुल्म, अरुचि, क्षय. राजयक्ष्मा, अम्लपित्त, दाह, मोह, सर्वदोषज शूल, कफ, कृमि, छर्दि, पाण्डु, हलीमक, गलरोग, विस्फोटक, कामला, अग्निमांद्य, ग्रहणी, यकृत्, प्लीहा, अर्श तथा आम और कफ जनित रोगोंको नष्ट करता है ।

यह बल्य, वृष्य, धातुवर्द्धक, मेध्य, हृद्य और रसायन है ।

श्रीजयमङ्गलो रसः

प्र. सं. २१०३ जयमङ्गलो रसः (१) देखिये ।

श्रीनृपतिवल्लभरसः

(भै. र. । रसायना.)

प्र. सं. ३६६४ नृपतिवल्लभरसः देखिये ।

श्रीमन्मथरसः

(रसे. सा. सं. । रसा. वाजी.)

प्र. सं. ५५२० मन्मथाभ्ररसः देखिये ।

श्रीमृत्युञ्जयो रसः

मृत्युञ्जयरसः (२) देखिये ।

(७६७९) श्रीरसराजः

(भै. र. । ज्वरा.)

भागैकं रसराजस्य भागश्च हेममाक्षिकात् ।
भागद्वयं शिलायाश्च गन्धकस्य त्रयो मताः ।
तालकाष्टादशभागः शुल्वं स्याद्भागपञ्चकम् ।
भल्लातकात् त्रयो भागाः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥
वज्रीक्षीरप्लुतं कृत्वा दृढे मृण्मयभाजने ।
विधाय सुदृढां मुद्रां पचेद्यामचतुष्टयम् ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य खल्वयेत् सुदृढं पुनः
गुञ्जाद्वयमितश्चास्य पर्णखण्डेन दापयेत् ।
रसराजः प्रसिद्धोऽयं ज्वरमष्टविधं जयेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, स्वर्ण माक्षिक भस्म १ भाग, शुद्ध मनसिल २ भाग, शुद्ध गन्धक ३ भाग, शुद्ध हरताल १८ भाग, ताम्र भस्म ५ भाग और शुद्ध भिलावे ३ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको सेहुंड (थूहर) के दूधमें घोट कर दृढ मृत्पात्रमें भर दें और उसके मुखपर शराव ढककर सन्धि बन्द कर दें एवं उस पर ३-४ कपड़मिट्टी करके सुखा लें और चूल्हेपर चढ़ाकर ४ पहरकी अग्नि दें । तदनन्तर जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकालकर पीस लें ।

इसमेंसे २ रत्ती रस पानमें रखकर खिलानेसे आठ प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

श्रीरामरसः

प्र. सं. ६१५० रामरसः (श्रीरामरसः) देखिये ।

श्रीवेतालो रसः

प्र. सं. ७११८ वेतालो रसः देखिये ।

(७६८०) श्रीवेष्टादिचूर्णम् (उद्धूलनम्)

(र. चं । ज्वरा. ; वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

श्रीवेष्टफलसम्भूतभस्मभागाष्टकं शुभम् ।
मरीचस्य च चत्वारो रसस्यैको विषस्य च ॥
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा मर्दयेदतियत्नतः ।
असाध्येऽपि हि शीताङ्गे स्वेदो याति हि निश्चितम् ॥

सरल वृक्ष (चीर) के फलोंकी भस्म ८ भाग, काली मिर्चका चूर्ण ४ भाग तथा शुद्ध पारद और बछनाग १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर भली भांति खरल करें।

इसे रोगीके शरीर पर मर्दन करनेसे असाध्य शीताङ्ग भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

श्रीशूलगजकेशरिरसः

"शूलगजकेशरिरसः" प्र. सं. ७६५४ देखिये ।

(७६८१) श्लीपदगजकेशरीरसः

(भै. र. । श्लीपदा. ; धन्व. । श्लीपदा.)

व्योषामृतयमानी च सूतोऽग्निर्गन्धकं शिला ।
सौभाग्यं जयपालश्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥
भृङ्गगोक्षुरजम्बीरार्द्रकतोयैर्विमर्दयेत् ।
अस्य गुञ्जामितं खादेदुष्णतोयानुपानतः ॥
श्लीपदं दुस्तरं हन्ति प्लीहानं हन्ति सेवितः

सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध बछनाग, अजवायन, शुद्ध पारद, चीतामूल, शुद्ध गंधक, शुद्ध मनसिल, सुहागेकी खील और शुद्ध जमालगोटा समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर भंगरे, गोखरु, जम्बीरी नीबू और अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कष्टसाध्य श्लीपद और प्लीहा वृद्धिका नाश होता है।

(७६८२) श्लीपदारिलोहः

(भै. र. ; र. र. । श्लीपदा.)

हरीतक्या बिभीतस्य धात्र्याश्चूर्णं सुचूर्णितम्
षट्तोलकप्रमाणेन ग्राह्यं तेषां गुणैषिणा ॥
तोलद्वयं कान्तलौहचूर्णं तावच्छिलाजतु ।
कृत्वैकत्र समस्तेषु त्रिफलाक्वाथभावना ॥
श्लीपदाद्यगदध्वंसी सर्वव्याधिविनाशनः ।
श्लीपदारिति ख्यातो लौहो मुनिभिर्रचितः ॥

हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण ६-६ तोले एवं कान्त लोह भस्म और शुद्ध शिलाजीत २-२ तोले ले कर सबको एकत्र मिलाकर त्रिफला क्वाथकी भावना दें।

इसके सेवनसे श्लीपदादि रोग नष्ट होते हैं।

(**मात्रा**—२ माशे।
अनुपान—त्रिफला क्वाथ।)

(७६८३) श्लेष्मकालानलो रसः (१)

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
तुत्थं मनोह्वा तालश्च कट्फलं धूर्त्तबीजकम् ॥

हिङ्गु समाक्षिकं कुष्ठं त्रिवृद्दन्तीकटुत्रिकम् ।
व्याधिघातफलं वङ्गं टङ्कणं समभागिकम् ॥

स्नुहीक्षीरेण वटिकां कारयेत् कुशलो भिषक् ।
विज्ञाय कोष्ठं कालञ्च योजयेद्रक्तिकां क्रमात् ॥

वातश्लेष्मणि मन्दाग्नौ पित्तश्लेष्माधिकेऽपि च ।
जीर्णज्वरे च श्वयथौ सन्निपाते कफोल्वणे ॥

बलासप्रबलं त्यक्त्वा धातुं वातात्मकं नयेत् ।
सेवनात्सर्वरोगघ्नः श्लेष्मकालानलो रसः ॥

हिङ्गुलोत्थ पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, शुद्ध तूतिया, शुद्ध मनसिल, शुद्ध हरताल, कायफल, धतूरेके बीज, हींग, सोनामक्खीभस्म, कूठ, निसोत, दन्तीमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, अमलतासकी मज्जा, बङ्ग भस्म और सुहागा समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर थूहर (सेहुंड) के दूधमें घोट कर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

रोगीके कोष्ठ और कालका विचार करके इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करानेसे वातकफज विकार, अग्निमांद्य, पित्तकफज विकार, जीर्णज्वर, शोथ और कफोल्वण सन्निपातका नाश होता है ।

(७६८४) श्लेष्मकालानलो रसः (२)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । कफा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धकाद्द्विगुणं विषम् ।
विषात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम् ॥

रसतुल्या प्रदातव्या चाभया सविभीतकी ।
धात्रीपुष्करमूलञ्च चाजमोदाजगन्धिका ॥

विडङ्गं कट्फलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च ।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥

भावयेत्सप्तधा रौद्रे स्वरसैः सुरसोद्भवैः ।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधिं कालानलो रसः॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्ध बछनाग ४ भाग, त्रिकुटा (मिलित) का चूर्ण ८ भाग, तथा हर्र, बहेड़ा, आमला, पोखरमूल, अजमोद, बनतुलसी, बायबिडंग, कायफल, चव्य, पांचो नमक, लौंग, निसोत और दन्तीमूल १–१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर तुलसीके रसकी धूपमें सात भावना दें ।

इसके सेवनसे समस्त कफज रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—४–६ रत्ती ।)

श्लेष्मकालानलोरसः (३)

प्र. सं. ५५८१ " महा श्लेष्मकालानल रस " देखिये ।

(७६८५) श्लेष्मकुठाररसः

(र. चं. । कफरोगा. ; र. प्र. सु. । अ. ८)

पारदं च मृतशुल्बगन्धकं
नागबल्लिजरसेन पेषितम् ।

पाचितं च मृदुवह्निना
घटीयुग्ममेतदखिलं विचूर्णितम् ॥
भक्षितं च गुडमिश्रमार्द्रकैः
श्लेष्मदोषविनिवृत्तिदायकम् ॥

शुद्ध पारद, ताम्र भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे पानके रसमें खरल करके २ घड़ी मन्दाग्नि पर पकावें। तदनन्तर बारीक पीस कर रक्खें।

इसे गुड़ और अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे कफविकार शान्त होते हैं।

(मात्रा —१-१॥ रत्ती।)

(७६८६) श्लेष्मशैलेन्द्ररसः

(भै. र.। ज्वरा.)

गन्धकं पारदं चाभ्रं त्र्यूषणं जीरकद्वयम्।
शटी शृङ्गी यमानीं च पुष्करं रामठं तथा ॥
सैन्धवं यावशूकश्च टङ्कणं गजपिप्पली।
जातीकोषाजमोदे च लौहं यासलवङ्गकम् ॥
धुस्तूरबीजं जैपालं कट्फलं चित्रकन्तथा।
प्रत्येकं कार्षिकं चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
पाषाणे विमले पात्रे घृष्टं पाषाणमुद्गरैः।
बिल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रकदन्तिकाः ॥
शिखरी काञ्जिका वासा निर्गुण्डी गणिकारिका।
धुस्तूरकृष्णजीरश्च पारिभद्रकपिप्पली ॥
कण्टकार्यार्द्रयोश्चैव मूलान्येतानि दापयेत्।
एषां मूलरसं दत्त्वा घृष्टमातपशोषितम् ॥
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक्।
चतुर्विधवटीं खादेन्नित्यमार्द्रकवारिणा ॥
उष्णतोयानुपानेन श्लेष्मव्याधिं व्यपोहति।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव शिरोरोगांश्च दारुणान्॥
प्रमेहान् विंशतिं चैव पञ्चगुल्मनिषूदनः।
उदराण्यन्त्रवृद्धिश्चाप्यामवातविनाशनः ॥
पञ्चपाण्ड्वामयान् हन्ति क्रिमिस्थौल्यामयापहः।
सोदावर्त्तं ज्वरं कुष्ठं गात्रकण्डूवामयापहः ॥
यथा शुष्केन्धनैर्वह्निस्तथा वह्निविवर्धनः।
श्लेष्मामये कृपाहेतो रसेन्द्रो मुनिभाषितः ॥
श्लेष्मशैलेन्द्रको नाम रसेन्द्र गुटिकास्मृता ॥

शुद्ध गन्धक, पारद, अभ्रक भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, सफेद जीरा, काला जीरा, कचूर, काकड़ासिंगी, अजवायन, पोखरमूल, हींग, सेंधा नमक, जवाखार, सुहागेकी खील, गजपीपल, जावत्री, अजमोद, लोहभस्म, जवासा, लौंग, शुद्ध धतूरेके बीज, शुद्ध जमालगोटा, कायफल और चीता १।-१। तोला ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर पत्थरके खरलमें डाल कर बेलकी जड़की छाल, आककी जड़की छाल, चीतामूल, दन्तीमूल, अपामार्ग, जीवन्ती, बासा, संभालु, अरणी, धतूरा, काला जीरा, फरहद, पीपल, कटेली और अदरक; इनकी जड़के रसकी धूपमें १-१ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्रा—४ गोली।

अनुपान—अदरकका रस या उष्ण जल।

इसके सेवनसे समस्त कफज रोग, शिरो रोग, २० प्रकारके प्रमेह, ५ प्रकारके गुल्म, उदर रोग, अन्त्रवृद्धि, आमवात, पांच प्रकारका पाण्डु, कृमि

रोग, स्थूलता, उदावर्त, ज्वर, कुष्ठ और गात्र कण्डू (खुजली) का नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

(७६८७) श्लेष्मान्तकरसः

(र. चं. । कफ.)

अभ्रकं रससिन्दूरं शङ्खभस्म च मौक्तिकम्।
एकभागो द्वित्रिभागा ह्यर्धभागं च मौक्तिकम्॥
कर्चूरं मौक्तिकार्धं स्यात् त्रिफला कर्षसम्मिता।
सर्वं सुखल्वे सम्मर्द्य दिनं सिंहास्यतोयतः॥
छायाशुष्कां वर्ति कृत्वा रक्तिकार्धप्रमाणतः।
आर्द्रकस्य रसेनैव मधुना सह लेहयेत्॥
श्लेष्मोल्बणं वह्निमान्द्यं शूलं सपरिणामजम्।
श्लेष्मान्तको रसो नाम विनिहन्त्यनुपानतः॥

अभ्रक भस्म १ भाग, रससिन्दूर २ भाग, शंख भस्म ३ भाग, मोती भस्म आधा भाग, कचूर चौथाई भाग और त्रिफला १ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर बासेके रसमें खरल करके आधी आधी रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इन्हें अदरकके रस और मधुके साथ मिलाकर चाटनेसे कफज अग्निमांद्य और परिणाम शूल नष्ट होता है।

(७६८८) श्वदंष्ट्रादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । वृद्धय.)

श्वदंष्ट्रासिन्धुविश्वाह्वदारुकृमिहराश्मभित्।
लोहचूर्णं घृतेनाद्याद्वातवर्ध्महरं परम्॥

गोखरु, सेंधा नमक, सोंठ, देवदारु, बायबिडंग और पाषाणभेद; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करें।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे वातज वर्ध्म रोग नष्ट होता है।

(मात्रा— २-३ रत्ती।)

(७६८९) श्वदंष्ट्रादिलौहम्

(श्वदंष्ट्रादिचूर्णम्)

(वं. से.; र. र. । प्रमेहा. ; ग. नि. । प्रमेहा. ३०)

श्वदंष्ट्रा त्रिफला मुस्ता गुडूची फल्गुपल्लवान्।
दर्भं कुशञ्च मञ्जिष्ठां रोहिषस्य च पल्लवान्॥
बला पुनर्नवा श्यामा शारिवे देवदारु च।
पिप्पली नागरञ्चैव विडङ्गमरिचानि च॥
पाठा कम्पिल्लकं भार्गी द्वे हरिद्रे निदिग्धिकाम्।
एरण्डमूलं दन्तीं च चित्रकं कटुरोहिणीम्॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्।
द्विगुणं सर्वचूर्णेभ्यो लौहचूर्णं प्रदापयेत्॥
माषकत्रितयं तस्माच्चतुष्टयमथापि वा।
पिबेदुष्णेन तोयेन मद्येनापि च मद्यपः॥
मेहशूलोदरं प्लीहशोथार्शः पाण्डुरोगनुत्।
गोमूत्रपिष्टैरेतैश्च वटिकास्तद्गदापहाः॥

गोखरू, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कठूमर (गूलर भेद) के पत्ते, कुश, दाभ, मजीठ, रोहिष (मिर्चिया गन्ध) तृणके पत्ते, खरैटी, पुनर्नवा, काली निसोत, कृष्ण सारिवा, सफेद

सारिवा, देवदारु, पीपल, सोंठ बायबिडंग, काली मिर्च, पाठा. कमीला, भारंगी, हल्दी, दारुहल्दी, कटैली, एरण्डकी जड़, दन्तीमूल, चीता और कुटकी समान भाग ले कर चूर्ण बना लीजिए और फिर उसमें इससे दूनी लोह भस्म मिला लीजिए। इसे ३-४ माषेकी मात्रानुसार मद्य या गर्म पानीके साथ सेवन करनेसे बीस प्रकारके प्रमेह, शूल, उदर रोग, प्लीहा, शोथ, अर्श और पाण्डुका नाश होता है।

उपरोक्त चूर्णको गोमूत्रमें मिला कर गोलियां भी बनाई जा सकती हैं।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती ।)

पाठान्तरके अनुसार—त्रिफलाके स्थानमें पीपल होनी चाहिये।

(७६९०) श्वयथुघातीरसः

(यो. र. ; वृ. नि. र. । शोथा. ; वृ. यो. त. । त. १०६)

रसगन्धकलोहकणात्रिवृतामरिचामरदारुनिशात्रिफलाः।
दलितं मृदुगोसलिलेन पिबेदनुरूपममुं श्वयथूदरहरम् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, लोह भस्म, पीपल, निसोत काली मिर्च, देवदारु, हल्दी और हर्र, बहेड़ा तथा आमला समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको गोमूत्रमें घोट कर सुखा कर रक्खें।

इसे (गोमूत्रके साथ) सेवन करनेसे शोथोदर नष्ट होता है।

(मात्रा—१ माशा ।)

(७६९१). श्वासकालेश्वररसः

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

मृतं वङ्गं मृतं लोहं मृतार्कं मृतमभ्रकम्।
शुद्धसूतं तथा गन्धं माक्षिकं हिङ्गुलं विषम् ॥
जातीफलं लवङ्गं च त्वगेला नागकेशरम्।
उन्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम् ॥
एतानि समभागानि मरिचं च त्रिभागिकम्।
सर्वमेतत्क्षिपेत्खल्वे लोहदण्डेन मर्दयेत् ॥
तावत्सम्मर्दयेद्यत्नाद्यावत्सूतो न दृश्यते।
शक्रासनस्य स्वरसैर्भावना एकविंशतिः ॥
द्विगुञ्जा उत्तमा मात्रा आर्द्रकस्वरसैर्युता।
तदर्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते ॥
पञ्च श्वासान् क्षयं कासं राजयक्ष्मनिवारणम्।
श्वासकालेश्वरो नाम लोकानामपि दुर्लभः ॥

बंग भस्म, लोह भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध बछनाग, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, नागकेसर, शुद्ध धतूरेके बीज, शुद्ध जमालगोटा, हल्दी और जवासा १-१ भाग तथा काली मिर्च ३ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको लोहखरलमें अच्छी तरह घोटें और फिर इन्द्रजौके काथकी २१ भावना देकर सुखा कर बारीक चूर्ण करें।

मात्रा—२ रत्ती। वृद्धों और बालकोंके लिये १ रत्ती।

अनुपान—अदरकका रस।

इसके सेवनसे पांच प्रकारके श्वास, क्षय, कास, और राजयक्ष्माका नाश होता है।

(७६९२) श्वासकासकरिकेसरीरसः
(श्वासगजकेशरीरसः)

(र. च. ; र. रा. सु. । श्वासा. ; र. र. स. । उ. अ. १३)

तारताम्ररसपिष्टिकाशिला-
गन्धतालसमभागिकं रसैः।
आटरूषसुरसार्द्रसम्भवै-
र्मर्दय प्रकुरु गोलकं ततः॥
मृतस्नया च परिवेष्ट्य गोलकं
यामयुग्ममथ भूधरे पचेत्।
गन्धकेन कुरु तत्समं तत-
श्चाटरूषकटुकैश्च भावयेत्॥
श्वासकासकरिकेशरीरसो
वल्लमस्य परिसेवयेद्बुधः।

चांदी भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध मंसिल, शुद्ध गंधक और शुद्ध हरताल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके बासे, तुलसी और अदरकके रसकी १—१ भावना दें। तदनन्तर उसका एक गोला बना कर (उसे अरण्ड या बड़के पत्तोंमें लपेट कर) उस पर १ अंगुल मोटा मिट्टीका लेप करके सुखा लें और भूधरयन्त्रमें २ पहर पकावें। तत्पश्चात् उसके ठंडा होने पर गोलेको निकाल कर उसके बराबर शुद्ध गंधक मिला कर खरल करें और उसे बासेके रस तथा त्रिकुटेके काथकी १—१ भावना दे कर ३—३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे श्वास कास नष्ट होते हैं।

(७६९३) श्वासकासचिन्तामणिरसः

(रसे सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. ; धन्व. । श्वासा.)

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत्।
पारदार्द्धं मौक्तिकञ्च सूताद्द्विगुणगन्धकम्॥
अभ्रश्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम्।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन च पृथक्॥
यष्टिमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च।
भावयेत्सप्तवारञ्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत्॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम्।

शुद्ध पारद, स्वर्ण माक्षिक भस्म और स्वर्ण भस्म १—१ भाग, मोती भस्म आधा भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग और लोह भस्म ४ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर कटेलीके रस, बकरीके दूध, मुलैठीके काथ और पानके रसकी ७—७ भावना दे कर २—२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे श्वास कासका नाश होता है।

(यदि इसी रसमें स्वर्ण आधा भाग डाला जाए और पानके स्थानमें अदरकके रसकी भावना

दी जाय तो इसीका नाम "श्वास चिन्तामणि" हो जाता है।)

श्वासकासारिरसः

प्र. सं. ७६१३ " शिलातालो रसः " देखिये।

(७६९४) श्वासकुठाररसः (१)

(भा. प्र. म. खं. २ । श्वासा., ज्वरा. ; वृ. यो. त. । त. ८० ; भै. र. ; रसे. सा. सं. ; धन्व. । हिक्काश्वा. ; वै. र. ; र. का. धे. ; र. चं. ; वृ. नि. र. ; र. रा. सु. । श्वासा.; यो. त. । त. ३० ; यो. चि. म. । अ. ७)

रसो गन्धो विषश्चापि टङ्कणश्च मनःशिला।
एतानि कर्षमात्राणि मरिचं चाष्ट कर्षकम् ॥

कटुत्रयं कर्षयुग्मं पृथगत्र विनिक्षिपेत्।
रसः श्वासकुठारोऽयं सर्वश्वासनिवारणः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, सुहागेकी खील और शुद्ध मनसिल १।-१। तोला, काली मिर्च १० तोले तथा सोंठ, मिर्च और पीपल २॥-२॥ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें।

यह रस समस्त प्रकारके श्वासोंको नष्ट करता है।

(मात्रा—४-५ रत्ती।)

(नोट—मिर्चके अतिरिक्त सब चीजोंके चूर्णको एकत्र मिलाकर १-१ मिर्च डालकर खरल किया जाय तो गुण अधिक होता है।)

(पाठान्तरके अनुसार—मिर्च ५ तोले और त्रिकुटा ३॥। तोले (प्रत्येक १। तोला) होना चाहिये।)

(७६९५) श्वासकुठाररसः (२)

(र. चं. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; भै. र. ; धन्व. । श्वासा.)

टङ्कणं पारदं गन्धं विषं शिला कटुत्रिकम्।
निष्पिष्य वटिका कार्या बाणगुञ्जाप्रमाणतः ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु क्षुद्राक्वाथमथापि वा।
कासं पञ्चविधं हन्ति श्वासं श्लेष्मसमुद्भवम् ॥
शिरोरोगं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

सुहागेकी खील, शुद्ध पारद, गन्धक, बछनाग, मनसिल, सोंठ, मिर्च[1] और पीपल १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिला कर पानीके साथ घोट कर ५-५ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—उष्ण जल या कटेलीका क्वाथ।

इनको सेवन करनेसे पांच प्रकारकी खांसी, कफज श्वास और शिरोरोग अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

श्वासगजकेशरिरसः

श्वासकासकरिकेसरी रसः प्र. सं. ७६९२ देखिये।

१. पाठान्तरके अनुसार मिर्च २ भाग हैं।

श्वासचिन्तामणिः

(भै. र. । श्वासा)

प्र. सं. ७६९३ " श्वासकासचिन्तामणि रसः " देखिये ।

श्वासभैरवो रसः

(र. च. ; भै. र. । हिक्काश्वा.)

प्रयोग सं. ४९६८ " भैरवरसः " देखिये ।

(७६९६) श्वासहरवटकः

(र. र. स. । उ. अ. १३ ; र. चं. । श्वासा.)

पारदं गन्धकं चैव पलमेकं पृथक् पृथक् ।
पलत्रयं त्रिकटुकं वङ्गमेकपलं क्षिपेत् ॥
सर्वमेकत्र संयोज्य दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ।
गोमूत्रेण तथा त्रीणि दिनानि परिमर्दयेत् ॥
अक्षप्रमाणवटकं छायाशुष्कं तु कारयेत् ।
नित्यमेकं तु वटकं दिनानि त्रिंशदेव च ॥
श्वासकासज्वरहरमग्निमान्द्याऽरुचिप्रणुत् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल और वंग भस्म ५–५ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर ३ दिन खरल करें । तदनन्तर ३ दिन गोमूत्रमें खरल करके १।–१। तोलेके मोदक बना लें और छायामें सुखा लें ।

इनमेंसे १–१ मोदक ३० दिन तक सेवन करनेसे श्वास, कास, ज्वर, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—४–५ रत्ती ।)

(७६९७) श्वासहेमाद्रिरसः

(र. चं. । कासा. ; वृ. नि. र. । श्वासा.)

आच्छादितशिलां ताम्रद्विगुणां बालुकाह्वये ।
पक्त्वा सञ्चूर्ण्य गन्धेशौ दिनार्धं तां पुनःपचेत्॥
श्वासहेमाद्रिनामाऽयं महाश्वासविनाशनः ।
वर्णवृद्धिकरो ह्येष सुवर्ण्यस्तु न संशयः ॥

१ भाग शुद्ध ताम्र पत्र और २ भाग शुद्ध मनसिलका चूर्ण ले कर एक शरावमें नीचे मंसिलका आधा चूर्ण बिछा कर उस पर ताम्र पत्र रक्खें और उस पर शेष मनसिल बिछा कर दूसरा शराव ढककर सम्पुट बनावें और उस पर कपरमिट्टी करके सुखा लें तथा (१ दिन) बालुकायन्त्रमें पकावें और उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर पीस लें । तदनन्तर उसमें (उसके बराबर) समान भाग पारद गन्धककी कज्जली मिला कर (घीकुमारके रसमें घोट कर टिकिया बना लें और फिर) शरावसम्पुटमें बन्द करके आधे दिन बालुका यन्त्रमें पकावें । तत्पश्चात् उसके स्वांगशीतल होने पर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

(मात्रा—१ रत्ती ।)

इसके सेवनसे महा श्वास नष्ट होता और वर्ण वृद्धि होती है ।

(७६९८) श्वासान्तकरसः

(र. र. स. । उ. अ. १३; र. चं. । श्वासा.)

सूतः षोडस तत्समो दिनकरस्तस्यार्धभागो बलिः
सिन्धुस्तस्य समः सुसूक्ष्मसुदितः षट्पिप्पली-
चूर्णितः ।

जम्बीरस्वरसेन मर्दितमिदं तप्तं सुपक्वं भवेत्
कासश्वासगुल्मशूलजठरं पाण्डुं लिहन्नाशयेत्॥

शुद्ध पारद और ताम्र भस्म १६-१६ भाग, शुद्ध गन्धक ८ भाग, सेंधा नमक ८ भाग और पीपल ६ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर (गोला बना कर, अरण्डके पत्तोंमें लपेट कर पुटपाक विधिसे) पाक करें ।

इसके सेवनसे कास, श्वास, गुल्म, शूल, उदररोग और पाण्डुका नाश होता है ।

(मात्रा—२ रत्ती ।)

(७६९९) श्वासारिरसः

(र. रा. सु. । श्वासा.)

पारदो वत्सनाभश्च गन्धकं टङ्कणं कणा ।
समांशं द्विगुणं शुण्ठी मरिचं पञ्चभागिकम् ॥
सूक्ष्मचूर्णमिदं कृत्वा वल्लमात्रं प्रदापयेत् ।
श्वासारि सञ्ज्ञिको ह्येष सद्यः श्वासहरः परः ॥

शुद्ध पारद, बछनाग, गन्धक, सुहागेकी खील और पीपल १-१ भाग, सोंठ २ भाग और मिर्च ५ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें ।

मात्रा—२-३ रत्ती ।

यह रस श्वासको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

श्वासारिलौहम् (महा)

(र. रा. सु. ; भै. र. । श्वासा.)

प्र. सं. ५५८२ महाश्वासारि लौहम् देखिये ।

(७७००) श्वित्रकुष्ठारिरसः

(र. र. स. । उ. अ. २०)

रसगन्धकतुत्थार्कबाकुचीक्वाथमर्दितम् ।
सेवितं सोमतैलेन श्वित्रकुष्ठं नियच्छति ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, तुत्थ भस्म और आककी जड़की छाल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे बाबचीके क्वाथमें घोटकर सुखा लें ।

इसे बाबचीके तेलके साथ सेवन करनेसे श्वित्रकुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

(७७०१) श्वित्रारियोगः (१)

(र. चि. म. । स्त. २)

गन्धकं त्रिफलां भृङ्गं भल्लातकफलानि च ।
कटुनिम्बस्य बीजानि भृङ्गराजद्रवेण वै ॥
भावयेच्छोषयेच्चैतत्सम्यक् तद्दिवसत्रयम् ।
श्वेतारिर्नामयोगोयं भिषग्भिः प्रतिपादितः ॥
वल्लमात्रममुं दद्याच्छर्कराघृतमिश्रितम् ।
भोजयेद्वै प्रयत्नेन रजन्यां च विशेषतः ॥
सूरणं क्षीरवार्ताकं मत्स्यमांसं त्रिशेषतः ।
वर्जयेदम्लशाकानि श्वित्रनाशो हि तत्क्षणात् ॥

शुद्ध गन्धक, हर्र, बहेड़ा, आमला, भंगरा, शुद्ध भिलावे और कड़वे नीमके बीज (निबौली); इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र करके ३ दिन भंगरेके रसमें खरल करें और फिर सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे खांड और घीमें मिला कर सेवन करनेसे श्वित्र कुष्ठ नष्ट होता है ।

इसके सेवन कालमें रात्रिके समय पथ्य आहार करना और सूरण, दूध, बैंगन, मत्स्य, मांस तथा अम्ल शाकोंसे परहेज करना चाहिये।

(७७०२) श्वित्रारियोगः (२)

(र. चि. म. । स्त. २)

असनखदिरयूषैर्भावितां सोमराजीं
मधुघृतशिखिपथ्यालोहचूर्णैरुपेताम् ।
शरदमवलिहानः कुष्ठजन्यान्विकारां-
स्त्यजति हितमिताशी दारुणान्दुःखरूपान् ॥

बावचीके चूर्णको असना वृक्ष और खैरकी छालके काथकी (बहुतसी) भावनाएं दे कर सुखा लें और फिर उसमें शहद, घी, चित्रकमूलका चूर्ण, हर्रका चूर्ण और लोह भस्म (प्रत्येक उसके बराबर) मिला कर खरल करके रक्खें।

इसे सेवन करने और हित तथा परिमित भोजन करनेसे कुष्ठ जन्य दारुण विकार नष्ट होते हैं।

(७७०३) श्वित्रारिरसः

(र. र. स. । उ. अ. २० ; र. च. । कुष्ठा.)

कासीसरसगन्धानि मर्दयेत्सुरसारसैः ।
सम्पुटे पुटयेद्दत्वा शार्ङ्गेरीमधरोत्तराम् ॥
सर्वमेतच्च सञ्चूर्ण्य तण्डुलान्दश सप्त वा ।
आरभ्य वर्धयेद्यावत्पञ्चषष्टिक्रमेण हि ॥
अनुपानाय मध्वाज्यं दध्याज्यं नवनीतकम् ।
धात्र्यार्द्रकरसैश्चैव तिन्दुकं कदलीफलम् ॥
श्वित्रारि सञ्ज्ञितो ह्येष श्वित्रकुष्ठनिषूदनः ॥

शुद्ध कसीस, पारद और गन्धक समान भाग ले कर तीनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे तुलसीके रसमें घोट कर गोला बनावें तथा उसे चांगेरी (चूके) के कल्कके बीचमें रखकर शरावसम्पुटमें बन्द करें और गजपुटमें पकाकर ठंडा होने पर पीस लें।

इसे ७ या १० चावलकी मात्रासे सेवन करना आरम्भ करें और थोड़ी थोड़ी मात्रा बढ़ाते हुवे ६५ चावल भरकी मात्रा तक बढ़ाएं।

अनुपान—शहद और घी, या दही और घी अथवा नवनीत, या आमले और अदरकका रस अथवा तेंदु और केलेका फल।

इसके सेवनसे श्वित्र कुष्ठ नष्ट होता है।

(७७०४) श्वित्रेभसिंहो रसः

(वृ. यो. त. । त. १२०)

शुद्धसूतबलिकज्जलं शुभं
वल्लयुग्ममवलिह्य सर्पिषा ।
वायसीशशिकलाबिभीतक
क्षौद्रमक्षमितमैक्षवान्वितम् ॥
शीलयेदनु पयः पिबेदिमं
श्वित्रदन्तिहरिरीरितो रसः ।

समान भाग शुद्ध पारे और गंधककी कज्जली बनाकर ६ रत्ती मात्रानुसार घीके साथ मिला कर चाटें। इसके पश्चात् मकोय (या काकजंघा), बावची और बहेड़ेके सम भाग मिश्रित चूर्णको शहदके साथ मिलाकर ईखके रसमें घोलकर पीना चाहिये और उसके बाद दूध पीना चाहिये। इस चूर्णकी मात्रा १। तोला है।

इस विधिसे इसे सेवन करनेसे श्वित्र नष्ट होता है।

(७७०५) श्वेतकुष्ठारिरसः

(र. सं. क. । उल्ला. ४ ; र. का. धे. । कुष्ठा.)

निस्तुषीकृत्य वाकुच्या बीजानां पलविंशतिम् ।
गोजलस्थं त्रिसप्ताहं लोहं पथ्या पलद्वयम् ॥
गृहीत्वा गोजले शोष्यं सूर्यतापेऽति निष्ठुरे ।
काकोदुम्बरिकाद्रोणत्वचां क्वाथे त्रिसप्तकम् ॥
भावयेत्तस्य चूर्णस्य गन्धसूतं समं कृतम् ।
अम्लेन कज्जलीं कृत्वा सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
शिग्रुमूलरसेनापि नागवल्लीदलेन च ।
भावनां त्रिदिनं दत्त्वा कर्षार्धांशां गुटीं कुरु ॥
एकैकां भक्षयेत्मातः श्वेतकुष्ठोपशान्तये ।
चित्रकाग्रिग्रत्वचाचूर्णं रात्रौ गोदुग्धके वरम् ॥
क्षिपेद्दधि विलोड्याथ ग्राहयेत्तक्रमुत्तमम् ।
तत्तक्रकुडवं चैकं मध्येऽष्टवल्लगन्धकम् ॥
प्रक्षिप्य गुटिकां पश्चात् प्रपिबेद्द्वित्रिसंख्यकाम् ।
नवनीतेन चाभ्यङ्गः कार्यः स्थेयमातपे ॥
सर्वेश्वित्रे प्रजायन्ते स्फोटकाश्चाग्निदग्धवत् ।
प्रथमे सप्तके, पाको जायतेऽथ द्वितीयके ॥
रोहणं च तृतीये हि कुर्वन्ति च न संशयः ।
निम्बुकस्य रसोपेतं कुङ्कुमालेपनं हितम् ॥
सतक्रा गुटिका चापि रसस्यालेपने हिता ।
श्वित्राणां रोहणं रम्यं वर्णदं जायते ध्रुवम् ॥
त्रिवेलं तक्रभक्तं च पूर्वे देयं च सप्तके ।
मकुष्ठा अपि रूक्षाश्च देया जाते द्विसप्तके ॥
तृतीते सप्तके देया मकुष्ठास्त्रिफलाघृतम् ।
घृतमल्पं प्रदातव्यं श्वित्रकुष्ठी वरो भवेत् ॥
चम्पकाभं वरं देहं कान्तियुक्तं च नीरुजम् ।
प्राप्नुयाच्छ्रीयुतः सम्यक्मनुजो भूमिमण्डले ॥
रसराजप्रभावेण सत्यं सत्यं च नान्यथा ॥

बाबचीके छिलके रहित बीस पल (१०० तोले) बीजोंको गोमूत्रमें भिगो दें और २१ दिन पश्चात् उनमें १०-१० तोले लोह भस्म तथा हर्रका चूर्ण मिला कर पुनः गोमूत्र डालें और उसे कड़ी धूपमें सुखा लें । (गोमूत्र प्रतिदिन नवीन लेना चाहिये और इतना ही डालना चाहिये कि जितना एक दिनमें सूख जाए ।)

तदनन्तर १६ सेर कठूमरकी छालके काथकी उसे २१ दिन तक भावना दें । (प्रति दिन तीन पावके लगभग छालको कूट कर ६ सेर पानीमें पकावें और १॥ सेर पानी रहने पर छान कर वह पानी उक्त औषधमें डालकर रख दें । इसी प्रकार २१ दिन तक नित्य नवीन क्वाथ बनाकर डालते रहें ।) और फिर सुखाकर चूर्ण कर लें ।

तत्पश्चात् उक्त चूर्णके बराबर शुद्ध पारद और गन्धक ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और इसे १ दिन नीबूके रस या किसी अन्य अम्ल द्रवमें खरल करके उक्त चूर्णमें मिला दें । इसके पश्चात् उसे सहंजनेकी जड़की छाल और पानके रसकी ३-३ भावना दे कर आधा आधा कर्षकी गोलियां बना लें ।

सेवन विधि—रात्रिके समय गोदुग्धमें चीतामूलकी छालका चूर्ण मिला कर उसका दही जमा दें और प्रातः काल उसे मथकर तक्र बनावें । ४० तोले इस तक्रमें ३ माशे शुद्ध गन्धक और २ या ३ उपरोक्त वटी मिला कर रोगीको पिला दें । (मात्रा बहुत अधिक है, चिकित्सकको रोगीका बलाबल देख कर मात्राका निर्णय करना चाहिये ।)

इस औषधके सेवन कालमें नित्य प्रति शरीर पर मक्खनकी मालिश करके थोड़ी देर धूपमें बैठना चाहिये ।

इसे इस विधिसे सेवन करनेसे प्रथम सप्ताहमें श्वित्रके स्थान पर अग्निदग्ध वत् फफोले (छाले) उठेंगे, दूसरे सप्ताहमें उनके स्थानमें घाव हो जायंगे और तीसरे सप्ताहमें घाव भरकर कुष्ठ नष्ट हो जायगा ।

घाव भर जानेके पश्चात् उनके निशानों पर नीबूके रसमें केसर घोट कर या उक्त गुटिका तक्रमें घिस कर लगानी चाहिये ।

पथ्य—प्रथम सप्ताहमें दिनमें तीन बार तक्र भात और दूसरे सप्ताहमें घृत रहित मौठकी दालका यूष और भात देना चाहिये तथा तीसरे सप्ताहमें मौठकी दालका यूष, भात और थोड़ा त्रिफला घृत देना चाहिये ।

इस प्रयोगसे श्वित्र कुष्ठ नष्ट हो कर शरीर कान्तिमान हो जाता है ।

(७७०६) श्वेतारिरसः (१)

(भै. र. । कुष्ठा. ; र. का. धे. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

शुद्धसूतं समं गन्धं त्रिफलाभृङ्गबागुजी ।
भल्लातकं तिलं कृष्णं निम्बबीजं समं समम् ॥
मर्दयेद् भृङ्गजद्रावैः शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ।
इत्थं कुर्य्यात्त्रिसप्ताहं रसः श्वेतारिको भवेत् ॥
मध्वाज्यैर्माषमात्रन्तु खादेच्छ्वित्रं विनाशयेत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, त्रिफला, भंगरा, बाबची, भिलावा, काले तिल और नीमके बीज समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर उसे भंगरेके रसकी २१ भावना दें । (रसमें खरल करके हरबार सुखा लेना चाहिये ।)

मात्रा—१। माशा ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है ।

(७७०७) श्वेतारिरसः (२)

(वृ. यो. त. । त. १२०)

शुद्धसूतसमं गन्धं त्रिफलां भृङ्गराजकम् ।
गुञ्जां भल्लातकं कृष्णां निम्बबीजं समं पृथक् ॥
मर्दयेद्भृङ्गजद्रावैर्दिनमेकं निरन्तरम् ।
वायसी त्वग्रसैर्देया भावनाश्चैकविंशतिः ॥
बाकुचीबीजनिर्यूहैस्तावत्तिस्रः प्रकल्पयेत् ।
ततः सिद्धो भवेदेष श्वेतारिर्नामतो रसः ॥
मध्वाज्यैर्निष्कमात्रं तं खादेच्छ्वित्रविनाशनम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, हर्र, बहेड़ा, आमला, भंगरा, शुद्ध गुञ्जा, शुद्ध भिलावा, पीपल और नीमके बीज समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियों का बारीक चूर्ण मिला कर उसे १ भावना भंगरे के रसकी, २१ भावना काकजंघा (या मकोय) के रसकी और ३ भावना बाबचीके बीजोंके काथकी दे कर सुखा लें ।

मात्रा—१ निष्क ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है ।

इति भकारादिरसप्रकरणम्

अथ शकारादिमिश्रप्रकरणम्

(७७०८) शङ्करस्वेदः

(भै. र. ; धन्व. । आमवाता.)

कार्पासास्थिकुलत्थिकातिल-
यवैरेरण्डमूलातसी-
वर्षाभूशणबीजकाञ्जिक-
युतैरेकीकृतैर्वा पृथक् ।
स्वेदः स्यादिति कूर्परोदर-
शिरःस्फिक्पाणिपादाङ्गुली-
गुल्फस्कन्धकटीरुजो-
विजयते सामाः समीरानुगाः ॥

कपासके बीज (बिनौले), कुलथी, तिल, जौ, अरण्डकी जड़, अलसी, पुनर्नवा और सनके बीज; ये सब चीजें मिला कर अथवा इनमेंसे कोई एक या अधिक ले कर, पीस कर चूर्ण बनावें और उसे कांजीमें भिगोकर उसकी दो पोटलियां बनावें । तदनन्तर एक हांडीमें कांजी भरकर उसे अग्निपर चढ़ाकर उसके मुख पर चलनी ढक दें और उसपर उपरोक्त पोटलियां रक्खें । जब कांजीकी भाफसे पोटलियां गर्म हो जाएं तो उनमेंसे एक पोटलीसे पीड़ा वाले स्थानको सेकें और उसके ठंडा होने पर दूसरी पोटलीसे सेकें । इसी प्रकार पोटलियोंको बदलते रहें ।

इस प्रकार सेक करनेसे कूर्पर, उदर, शिर, स्फिक, हाथ, पैर, उंगली, गुल्फ, स्कन्ध और कमरकी आमवातज पीड़ा नष्ट होती है ।

(७७०९) शणबीजादियोगः

(यो. र. । स्नायुका.)

शणबीजचूर्णं भागमेकं, गोधूमपिष्टं भागमेकं, द्वयमेकीकृत्य घृतेन पक्तव्यं गुडेन भक्षयेत् । एवं त्रिदिनं कार्यं स्नायुको नश्यति ॥

सनके बीजोंका चूर्ण और गेहूंका आटा १-१ भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर (पानीमें घोल कर) घीमें पकावें । इसमें गुड़ मिला कर ३ दिन सेवन करनेसे स्नायुक (नहरवा) नष्ट हो जाता है ।

(७७१०) शरपुङ्खामूलयोगः

(रा. मा. । स्त्रीरोगा.)

मूलेन वा चिकुरमध्यगतेन बाण-
पुङ्खोद्भवेन सुखमेव भवेत्प्रसूतिः ॥

शिर पर (बालोंमें) सरफोंकेकी जड़ रखनेसे सुख पूर्वक प्रसव हो जाता है ।

(७७११) शरादिक्षीरम्

(वृ. नि. र. । कासा.)

शरादिपञ्चमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।
कषायेण भृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

शर (सरकण्डे) की जड़, कासकी जड़, दाभकी जड़, ईखकी जड़ और शालिमूल तथा पीपल और द्राक्षा; समान भाग ले कर क्वाथ बनावें । इसके साथ दूध सिद्ध करके उसमें शहद और खांड मिला कर पीनेसे कासका नाश होता है ।

(यह योग पित्तज कासमें उपयोगी है ।)

(७७१२) शार्दूलकाञ्जिकम्

(भै. र. । अग्निमांद्या.)

पिप्पली शृङ्गवेरश्च देवदारु सचित्रकम् ।
चविकां बिल्वपेशीञ्च अजमोदां हरीतकीम् ॥
महौषधं यमानीञ्च धान्यकं मरिचं तथा ।
जीरकञ्चापि हिङ्गुञ्च काञ्जिकं साधयेद् भिषक् ॥
एष शार्दूलको नाम काञ्जिकोऽग्निबलप्रदः ।
सिद्धार्थतैलसम्भृष्टो दशरोगान् व्यपोहति ॥
कासं श्वासमतीसारं पाण्डुरोगं सकामलम् ।
आमं च गुह्यरोगञ्च वातशूलं सवेदनम् ॥
अर्शांसि श्वयथुश्चैव भुक्ते पीतं च सात्म्यतः ।
क्षीरपाकविधानेन काञ्जिकस्यापि साधनम् ॥

पिप्पली, सोंठ, देवदारु, चित्रक, चव्य; बिल्वमज्जा, अजमोदा, हरड़; सोंठ, अजवाइन, धनिया, काली मिर्च, जीरा तथा हींग प्रत्येकका चूर्ण सम भाग। सम्पूर्ण चूर्णसे ८ गुनी काञ्जी, काञ्जीसे चौगुना जल। इन सबको एकत्र पाक करें। जब जल उड़ जाय और कांजीमात्र शेष रहे तब उतार लें। यह शार्दूलकाञ्जिक अग्नि तथा बलको बढ़ाता है। इसे श्वेत सरसोंके तेलमें छौंक करके यथायोग्य मात्रामें सेवन करावें। इसके सेवनसे कास, श्वास, अतीसार, पाण्डु, कामला, आमदोष, गुह्यरोग, वातशूल, अर्श तथा श्वयथु आदि रोग नष्ट होते हैं। काञ्जीका पाक भी क्षीरपाकके समान ही होता है।

(७७१३) शालिपर्ण्यादिपेया

(व. से. । अतिसारा.)

शालिपर्णी बला बिल्वैः पृथक्पर्णी च साधिता ।
दाडिमाम्लयुता पेया श्लेष्मपित्तातिसारिणाम् ॥

शालपर्णी, खरैंटी, बेल और पृष्टपर्णी समान भाग ले कर इनके पानीसे पेया बना कर उसमें अनारका रस मिला कर खिलाना कफपित्तातिसारमें उपयोगी है।

(७७१४) शालिपर्ण्यादियोगः

(वृ. मा. । अतिसारा. ; हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

शालिपर्णी पृश्निपर्णी बृहती कण्टकारिका ।
बलाश्वदंष्ट्राबिल्वानि पाठा नागरधान्यकम् ॥
एतदाहारसंयोगे हितं सर्वातिसारिणाम् ॥

शालपर्णी, पृष्टपर्णी, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, खरैंटी, गोखरु, बेल, पाठा, सोंठ और धनिया।

इनके पानीसे आहार (पेया, यूष आदि) सिद्ध करके देना अतिसारमें गुणकारी है।

(७७१५) शाल्मलीपुष्पयोगः

(वृ. यो. त. । १०५ त. ; यो. र. । प्लीहा.)

सुस्विन्नं शाल्मलीपुष्पं निशापर्युषितं नरः ।
राजिकाचूर्णसंयुक्तमद्यात्प्लीहोपशान्तये ॥

सेंभलके फूलोंको शमके वक्त सिजा कर (स्विन्न करके) रख दें और प्रातः काल उसमें राईका चूर्ण मिलाकर खावें।

इसके सेवनसे प्लीहा वृद्धिका नाश होता है।

(७७१६) शिग्रुपत्ररसाश्च्योतनम्

(रा. मा. । नेत्ररोगा.)

क्षौद्रान्वितः शिग्रुदलोद्भवो वा
रसोऽक्ष्णि दत्तोऽक्षिरुजं क्षिणोति ।

सहंजनेके पत्तोंके रसमें शहद मिला कर आंखमें डालनेसे नेत्रपीड़ा शान्त होती है।

(७७१७) **शिग्रुपत्रादिपिण्डी**

(यो. र. । नेत्ररोगा.)

शिग्रुपत्रकृता पिण्डी श्लेष्माभिष्यन्दहारिणी ।

सहंजनेके पत्तोंको पीस कर टिकिया बना कर आंखपर बांधनेसे कफज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है ।

(७७१८) **शिरीषपुष्पादियोगः**

(यो. त. । त. ७८; वृ. नि. र. । विषा.)

शिरीषपुष्पस्वरसे सप्ताहं मरिचं सितम् ।
भावितं सर्पदष्टानां पाननस्याञ्जने हितम् ॥

सिरसके फूलोंके रसमें सात दिन तक सफेद मिर्चोंको भिगोए रक्खें और फिर बारीक चूर्ण कर लें ।

यह चूर्ण पिलाने तथा इसकी नस्य देने और इसीका अंजन लगानेसे सर्पविष नष्ट हो जाता है ।

(सफेद मिर्च=सहंजनेके बीज)

(७७१९) **शिरीषादिकवलग्रहः**

(ग. नि. । विस्फोटका. ४०)

शिरीषपूगमञ्जिष्ठादार्व्यामलकयष्टिकैः ।
सजातीपल्लवक्षौद्रैर्विस्फोटे कवलग्रहः ॥

सिरसकी छाल, सुपारी, मजीठ, दारुहल्दी, आमला, मुलैठी और चमेलीके पत्ते समान भाग ले कर कल्क बनावें । इसमें शहद मिला कर कवल धारण करनेसे विस्फोटकमें लाभ पहुंचता है ।

(७७२०) **शिशिरजलयोगः**

(रा. मा. । रक्तपित्ता. १०)

पिबति शिशिरमम्भो यः प्रभाते निशायां
तदनु च शयनीयाधिष्ठितो याति निद्राम् ।
ध्रुवमतिविषमोऽपि क्षीयतेऽस्य त्रिरात्रा-
दधिगतपरिपाकः पीनसः स्निग्धभोक्तुः ॥

प्रातःकाल (कुछ रात्रि शेष रहने पर) शीतल जल पान करके सो जानेसे तीन दिनमें कठिन और पक्व पीनस रोग भी अवश्य नष्ट हो जाता है ।

पथ्यमें स्निग्धाहार करना चाहिये ।

(७७२१) **शीतजलकुम्भधारणम्**

(रा. मा. । क्षुद्र रोगा. ३०)

आरोपिते मूर्धनि शीतवारि-
कुम्भे शर्म गच्छति तत्क्षणेन ।
असृक्प्रवाहः प्रदरामयोत्थः
स्त्रीणां नदीस्रोत इवावरोधात् ॥

शिर पर ठण्डे पानीसे भरा हुवा घड़ा रखनेसे स्त्रियोंके रक्त प्रदरका रक्तस्राव तुरन्त बन्द हो जाता है ।

(७७२२) **शीतलजलधारायोगः**

(भा. प्र. म. खं. २ । ज्वरा.)

उत्तानसुप्तस्य गभीरताम्र-
कांस्यादिपात्रे निहिते च नाभौ ।
शीताम्बुधारा बहुला पतन्ती
निहन्ति दाहं त्वरितं ज्वरञ्च ॥

ज्वरमें दाह अधिक हो तो रोगीको पीठके बल लिटा कर उसकी नाभि पर ताम्र या कांसीका गहरा पात्र रख कर उसमें शीतल जलकी धारा छोड़नी चाहिये । इससे दाह शीघ्र ही शान्त हो जाती है ।

(७७२३) शीतजलपानयोगः

(वृ. मा. । मदात्यया.)

छर्दिमूर्छातिसारं च मदं पूगफलोद्भवम् ।
सद्यस्तच्छमयेत्पीतमातृप्तेर्वारिशीतलम् ॥

पेट भर शीतल पानी पीनेसे छर्दि, मूर्च्छा, अतिसार और सुपारीका नशा शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(७७२४) शीताम्बुयोगः

(ग. नि. । अजीर्णा. ५)

अन्नं विदग्धं हि नरस्य शीघ्रं
शीताम्बुना वै परिपाकमेति ।
तद्यस्य शैत्येन निहन्ति पित्त-
माक्लेदिभावाच्च नयत्यधस्तात् ॥

विदग्धाजीर्णमें ठण्डा पानी पीनेसे शीतलताके कारण पित्त शान्त हो कर अन्न पच जाता है और द्रवताके कारण वह पचा हुवा आहार नीचेको उतर जाता है ।

(७७२५) शीतोदकादियोगः

(ग. नि. । सा. रसा. १)

शीतोदकं पयः क्षौद्रं सर्पिरित्येकशो द्विशः ।
त्रिशः समस्तमथवा प्राक्पीतं स्थापयेद्वयः ॥

प्रातःकाल (उषःकालमें) शीतल जल, दूध, शहद और घीमेंसे कोई एक पदार्थ, अथवा दो या तीन, अथवा चारों पदार्थ पीनेसे आयु स्थिर होती है ।

(७७२६) शुण्ठीपुटपाकः

(व. से. । अतिसारा.)

शुण्ठीमल्पघृतान्वितां परिवृतां गोधूमपिष्टैस्ततः ।
सद्यो गोमयवेष्टितान्तु विपचेन्मन्दाग्निनाचातुरः ॥
शीतीकृत्य सितासमां प्रतिदिनं भक्षेन्नरः
पथ्यभुक् ।
सर्वोपद्रवसंयुतानपि जयेद्दीर्घातिसारामयान् ॥

सोंठको थोड़ा घी लगा कर पानीमें भीगे हुवे गेहूंके आटेमें लपेटकर गोला बनावें और उसके ऊपर गायके ताजे गोबरका १ अंगुल मोटा लेप करके मन्दाग्निमें पकावें । जब गोलेका रंग लाल हो जाय तो उसे निकालकर ठंडा करलें । तदनन्तर सोंठको निकालकर पीस लें और उसमें समान भाग मिश्री मिलाकर रक्खें ।

इसे सेवन करने और पथ्यपूर्वक रहनेसे उपद्रवयुक्त पुराना अतिसार भी नष्ट हो जाता है ।

(७७२७) शुण्ठ्यादिपायसः

(ग. नि. । वाता. १९; वृ. मा. । वातव्या.; व. से. । वातव्या.)

शुण्ठीगन्धर्वबीजाभ्यां पिष्टाभ्यां पायसः कृतः ।
भक्षितस्तु कटीशूलं गृध्रसीं हन्त्यसंशयम् ॥

सोंठ और अण्डीके तुष रहित बीजोंकी दूधमें खीर बनाकर खानेसे कटिशूल और गृध्रसीका अवश्य नाश हो जाता है ।

(७७२८) शुण्ठ्यादिपिण्डी

(वं. से.; वृ. मा. । नेत्ररोगा.; र. र. । नेत्ररो.)

शुण्ठीनिम्बदलैः पिण्डःसुखोष्णैः स्वल्पसैन्धवैः
धार्यश्चक्षुषि संक्षेपाच्छोफकण्डूव्यथापहः ॥

सोंठ और नीमके पत्तोंको पीसकर उसमें थोड़ा सेंधानमक मिलाकर जरा गर्म करलें और उसकी टिकिया बनाकर आंखपर बांधें।

इससे आंखोंकी सूजन, खुजली और पीड़ा नष्ट होती है।

(७७२९) शुण्ठ्यादिपुटपाकः (१)

(वै. मृ. । विषय २; शा. सं. । खं. २ अ. २)

किञ्चित् घृताक्तौषधचूर्णमेत-
देरण्डपत्रावृतमग्निपक्वम् ।
सिता समं हन्ति तनोति चैत-
दामातिसारं जठरानलं च ॥

सोंठको थोड़ा घी लगाकर अरण्डके पत्तोंमें लपेटकरे गोला बनावें और उसपर मिट्टीका लेप करके पुटपाक करें। इसे मिश्रीके साथ सेवन करनेसे आमातिसार नष्ट होता और अग्नि दीप्त होती है।

(मात्रा—३-४ माशे। दिनमें २-३ बार उष्णजलसे दें।)

(७७३०) शुण्ठ्यादिपुटपाकः (२)

(शा. सं. । खं. २ अ. २; भा. प्र. । म. खं. २)

एरण्डरससम्पिष्टं पक्वमामञ्च नागरम् ।
आमातीसारशूलघ्नं पाचनं दीपनं परम् ॥

कच्चो अथवा पुटपाक विधिसे पकाई हुई सोंठको अरण्डकी जड़के रसमें पीसकर सेवन करनेसे आमातिसार और शूलका नाश होता है। यह योग अत्यन्त दीपन और पाचन है।

(मात्रा—१-२ माशे। गुड़में मिलाकर उष्ण जलके साथ सेवन करें।)

(७७३१) शेफालिकामूलयोगः

(ग. नि. । मुखरोगा. ५)

शेफालिकामूलमुशन्ति कण्ठ-
शालूकहन्तृ प्रविचर्वितं सत् ।
रोगं निहन्यादुपजिह्विकाख्यं
नासान्तरप्रस्रुतरक्तधाराम् ॥

शेफालिका (हारसिंहार)की जड़को चबाने से कण्ठशालूक, उपजिह्वा और नासासे होनेवाला रक्तस्राव नष्ट होता है।

(नासासे रक्तस्राव होनेकी दशामें पीसकर रस निचोड़कर उसकी नस्य लेनी चाहिये।)

(७७३२) श्यामादिगणः

(वृ. मा. । उदावर्ता.; वं. से.; यो. र. । उदावर्ता.; ग. नि. । उदावर्ता. २४)

श्यामा दन्ती द्रवन्तीत्वक् महाश्यामा स्नुही त्रिवृत्।
सप्तला शङ्खिनी श्वेता राजवृक्षः सतिल्वकः[1] ॥
कम्पिल्लकः करञ्जश्च हेमक्षीरीत्ययं गणः ।
सर्पिस्तैलरजःक्वाथकल्केष्वन्यतमेन तु ॥
उदावर्तोदरानाहविषगुल्मविनाशनः ॥

काली निसोत, दन्ती, द्रवन्तीकी छाल, विधारा, सेंड (थूहर), निसोत, सप्तला, शंखिनी, सफेद कोयल, अमलतास, तिल्वक, कमीला, करञ्ज और स्वर्णक्षीरी।

इनसे सिद्ध घृत, तेल या इनका चूर्ण, क्वाथ और कल्क उदावर्त, उदर, आनाह, विष और गुल्मको नष्ट करता है।

१ "सबिल्वकः" इति पाठभेदः

(७७३३) **श्यामादिवर्तिः**

(च. सं. । चि. अ. २६)

श्यामात्रिवृन्मागधिकाग्निचूर्णं ।
गोमूत्रपीतं दशभागमाषम् ॥
सनीलिकं द्विर्लवणं गुडेन ।
वर्त्ति कराङ्गुष्ठनिभां विदध्यात् ॥

काली निसोत, पीपल, चीता और नीलकी जड़ इनका चूर्ण १०-१० माशे तथा सेंधानमक २० माशे लेकर सबको गोमूत्रमें खरल करें और फिर गुड़में मिलाकर रोगीके अंगूठेके समान बत्तियां बना लें ।

इनमें से एक बत्तीको घी लगाकर रोगीके मलमार्गमें रखनेसे उदावर्त रोग नष्ट होता है ।

(७७३४) **श्योनाकादि योगः**

(व. से. । अतिसारा.)

अरलुत्वक् प्रियङ्गुश्च मधुकं दाडिमाङ्कुरान् ।
अवाप्य पिष्ट्वा विपचेद्यवागूं दधितां पिबेत् ॥
एषा सर्वानतीसारान् हन्ति पक्वानसंशयः ॥

अरलुकी छाल, फूलप्रियंगु, मुलैठी और अनारकी कोंपलेंसे यवागू सिद्ध करके उसमें दही मिलाकर खानेसे समस्त प्रकारके पक्वातिसार नष्ट होते हैं ।

(७७३५) **श्री सिद्धमोदकः**

(भै. र. । रसायना.)

त्रिकटोस्त्रिपलं चूर्णं त्रिफलायाः पलत्रयम् ।
गुडूच्याश्च विडङ्गानां ग्रन्थिकग्रन्थिपर्णयोः ॥
रक्तचित्राङ्घ्रिजं चूर्णं ग्राह्यञ्चापि पृथक् पृथक् ।
प्रत्येकं द्विपलञ्चैषां गृह्णीयान्मतिमान्नरः ॥
कामरूपोद्भवां ग्राह्यां गुडस्यार्द्धतुलां तथा ।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य सषष्टित्रिशतं शुभम् ॥
मोदकं कारयेद्धीमान् समभागेन यत्नतः ।
प्रत्यहं प्रातरेवैतत्पानीयेनैव भक्षयेत् ॥
एवं निरन्तरं कार्यं सम्वत्सरमतन्द्रितः ।
प्रथमे मासि वाग्युक्तो द्वितीये बलवर्णवान् ॥
तृतीये नाशयेत्कुष्ठं श्वासकासौ तुरीयके ।
पञ्चमे स्त्रीप्रियत्वं च षष्ठे च पलितक्षयः ॥
सप्तमे कान्तियुक्तश्च अष्टमे बलवान् भवेत् ।
नवमे च शतायुः स्याद्दशमे च स्वरान्वितः ॥
महाबलस्त्वेकादशे अदृश्यो द्वादशे भवेत् ।
इच्छाहारविहारी स्यात्ततो दैत्यरिपोः समः ॥
षडर्मिरहितो देही प्राप्नोति कल्पजीवितम् ।
युवा निरन्तरं तिष्ठेद् यावत्कालश्च जीवति ॥
भवन्ति सिद्धयोऽस्याष्टौ याश्चापि परिकीर्त्तिताः ।
श्री सिद्धमोदको ह्येष सिद्धादिषु निषेवितः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला; इनका चूर्ण ५-५ तोले तथा गिलोय, बायबिड़ंग, पीपलामूल, गठीवन और लाल चीतेकी जड़; इनका चूर्ण १०-१० तोले एवं आसाम देशका गुड़ ३ सेर १० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मर्दन करें और ३६० मोदक बना कर सुरक्षित रक्खें।

इनमेंसे १-१ मोदक प्रतिदिन प्रातःकाल जलके साथ सेवन करें । इसी प्रकार इन्हें निरन्तर १ वर्ष तक सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे मनुष्य प्रथम मासमें वाग्मी और दूसरे महीनेमें बल वर्ण युक्त हो जाता है । तीसरे मासमें कुष्ठ और चौथेमें श्वास कासका

नाश हो जाता है। इसे ५ मास तक सेवन करनेसे काम शक्ति बढ़ती है और ६ मास तक सेवन करनेसे पलित (बालोंका श्वेत होना) रोग नष्ट हो जाता है। यदि सात मास तक यह औषध सेवन की जाय तो शरीर कान्तिमान हो जाता है; आठ मासमें बल बढ़ जाता है। ९ मास तक सेवन करने वाला मनुष्य १०० वर्ष तक जीवित रहता है। इसे निरन्तर १० मास सेवन करनेसे मनुष्यका स्वर अति श्रेष्ठ हो जाता है। ११ मासमें शरीरका बल अत्यधिक बढ़ जाता है और पूरे १ वर्ष तक सेवन करने वाला तो अदृश्य हो जाता है (?)

१ वर्ष तक इसे सेवन करनेके पश्चात् इच्छानुसार आहार विहार किया जा सकता है। इसे सेवन करते रहनेसे मनुष्य समस्त पीड़ाओंसे मुक्त हो कर कल्प पर्यन्त जीवित रहता है तथा उसे कभी वृद्धावस्था नहीं आती।

इसे सेवन करने वाले मनुष्यको आठों सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं।

(७७३६) श्वेतकरवीररस-योगः

(रा. मा. । अ. ३)

श्वेत करवीराकसलयविच्छेदरसेन पूरिताक्षस्य।
तत्कालसमुत्पन्नो नयनप्रकोपः शमं याति ॥

सफेद कनेरकी कोंपलोंको मल कर रस निकाल कर आंखमें डालनेसे तुरन्तकी दुखने आई हुई आंखको आराम हो जाता है।

(७७३७) श्वेतगिरिकर्ण्यादियोगः

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

श्वेताद्रिकर्ण्याः सपुनर्नवाया
मूलैः सुपिष्टैर्यवचूर्णयुक्तैः।
विलोचनं पूरितमम्बुयुक्तै-
र्विमुच्यते पुष्पकृतोपसर्गात् ॥

सफेद कोयलकी जड़, पुनर्नवा (बिसखपरे)की जड़ और जौके चूर्णको पानीके साथ बारीक पीस कर कपड़ेसे छान लें।

इसे आंखमें डालनेसे फूली नष्ट होती है।

(७७३८) श्वेतापराजितामूलयोगः

(रा. मा. । मुखरोगा. ६)

पुष्ये गृहीतं गिरिकर्णिकाया
मूलं सिताया गलके निबद्धम्।
गव्येन लीढं यदि वा घृतेन
निहन्ति घोरामपचीं तदेव ॥

सफेद कोयलकी जड़को गलेमें बांधने तथा गोघृतमें मिला कर चाटनेसे घोर अपची भी नष्ट हो जाती है।

इति शकारादिमिश्रप्रकरणम्

ष

अथ षकारादिकषायप्रकरणम्

(७७३९) षडङ्गक्वाथः

(यो. चि. । क्वा. ; भा. प्र. । शिरो. ;
वृ. नि. र. । शिरो.)

पथ्याक्षधात्रीभूनिम्बैर्निशानिम्बामृतायुतैः ।
कृतः क्वाथः षडङ्गोयं सगुडः शीर्षशूलहा ॥
भ्रूशङ्खकर्णशूलानि तथार्धशिरसोरुजम् ।
सूर्यावर्त्तं शङ्खकं च दन्तपातश्च तद्रुजः ॥
नक्तान्ध्यं पटलं शुक्रं चक्षुःपीडां व्यपोहति ।

हर्र, आमला, चिरायता, हल्दी, नीमकी छाल और गिलोय समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसमें गुड़ मिला कर सेवन करनेसे शिर-शूल, भ्रूशूल, शंखक शूल, कर्ण शूल, अर्धावभेद, सूर्यावर्त, शंखक, दन्तपात, दन्त पीड़ा, नक्तान्ध्य, पटल, शुक्र और चक्षुपीड़ाका नाश होता है ।

(७७४०) षडङ्गपानीयम् (१)

(भा. प्र. । म. खं. २ सन्निपाता.)

उशीरचन्दनोदीच्यद्राक्षामलकपर्पटैः ।
भृतं शीतं जलं दद्याद्दाहतृड्ज्वरशान्तये ॥

खस, लाल चन्दन, सुगन्धबाला, द्राक्षा (मुनक्का), आमला और पित्तपापड़ा समान भाग ले कर इनसे पानी सिद्ध करें ।

यह पानी दाह, पिपासा और ज्वरको शान्त करता है ।

(समस्त ओषधियां समान भाग मिश्रित १ तोला, पानी १ सेर, शेष आधा सेर । ठंडा होने पर काममें लावें ।)

षडङ्गपानीयम् (२)

(भै. र. । ज्वरा. ; च. द. । ज्वरा.)

प्र. सं. ५०७८ देखिये ।

(७७४१) षोडशाङ्गः

(र. र. । ज्वरा.)

त्र्यूषणं दशमूलं शठी भृङ्गी भार्गी छिन्नोद्भवः क्वाथः ।
पीतः शमयति सहसा ज्वरं चोग्रं सन्निपात-भवम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, कचूर, काकड़ासिंगी, भरंगी और गिलोय समान भाग ले कर काथ बनावें ।

यह काथ उग्र सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है ।

इति षकारादिकषायप्रकरणम्

अथ षकारादिचूर्णप्रकरणम्

(७७४२) षड्धरणयोगः (षट्चरणयोगः)

(भा. प्र. म. खं. २ ; वृ. नि. र. ; वृ. मा. । वातव्या. ; यो. चि. म. । अ. २ ; ग. नि. । वाता. १९ ; व. से. । वातव्या.)

चित्रकेन्द्रयवौ पाठा कटुकातिविषाऽभया ।
आमाशयोत्थवातघ्नं चूर्णं पेयं सुखाम्बुना ॥
योगेऽस्मिन्भिषजा ग्राह्याः षण्णां षड्धरणापृथक् ।
दिनेषु षट्सु दातव्यास्तेन षड्धरणः स्मृतः ॥

चीता, इन्द्रजौ, पाठा, कुटकी, अतीस और हर्र १-१ धरण (४-४ माशे) ले कर चूर्ण बनावें । इसमेंसे नित्य १ धरण चूर्ण मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे आमाशयगत वायुका नाश होता है ।

इस योगमें ६ ओषधियां हैं और प्रत्येक ओषधि १-१ धरण ली जाती है अर्थात् सम्पूर्ण योगका भार ६ धरण होता है और ६ दिन तक १-१ धरण चूर्ण सेवन किया जाता है इसी लिये इसे "षड्धरण" कहते हैं (इस योगमें ६ चरण अर्थात् अङ्ग हैं इससे इसे 'षट्चरण' भी कहते हैं ।)

(७७४३) षाडवं चूर्णम्(१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

पिप्पलीनां शतं चैकं द्वे शते मरिचस्य च ।
सिता पलचतुष्कं च नागरार्धपलं तथा ॥
धान्यसौवर्चलाजाजीत्वगेलाश्चार्धकार्षिकाः ।
कोलदाडिमवृक्षाम्लयवान्यश्चाम्लवेतसः ॥
कार्षिकांश्चूर्णयेत्सर्वान् हृद्यं त्वन्नमरोचकम् ।
प्लीहहृद्ग्रहणीदोषपञ्चकासनिबर्हणम् ॥

पीपल १०० नग, काली मिर्च २०० नग, मिश्री २० तोले, सोंठ २॥ तोले तथा धनिया, सञ्चल, जीरा, दालचीनी और इलायची आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) एवं बेर, अनारदाना, तिन्तड़ीक, अजवायन और अम्लबेत १।-१। तोला ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण हृद्य, रोचक तथा प्लीहा, ग्रहणी-दोष, और पांच प्रकारकी कासको नष्ट करने वाला है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(७७४४) षाडवं चूर्णम् (२)

(च. सं. । चि. अ. १६)

एका षोडशिका धान्याद्द्वे द्वेऽजाज्यजमोदयोः ।
ताभ्यां दाडिमवृक्षाम्लाद्द्विर्द्विः सौवर्चलात्पलम् ॥
शुण्ठ्याः कर्षं दधित्थस्य मध्यात्पञ्चपलानि च ।
तच्चूर्णं षोडशपले शर्करायाः विमिश्रयेत् ॥
षाडवोऽयं प्रदेयः स्यादन्नपानेषु पूर्ववत् ।
मन्दानले शकृद्भेदे यक्ष्मिणामग्निवर्द्धनः ॥

धनिया ५ तोले; जीरा और अजवायन १०-१० तोले, अनारदाना और तिन्तड़ीक ४०-४० तोले, काला नमक ५ तोले, सोंठ १। तोला और कैथका गूदा २५ तोले ले कर यथा

विधि चूर्ण बनावें । तदनन्तर उसमें ८० तोले खांड मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे अन्न पानादिमें प्रयुक्त करना चाहिये ।

यह चूर्ण यक्ष्मा रोगमें अग्निमांद्य और मलभेदकी दशामें उपयोगी है । यह, रोचक, बल्य और दीपन है तथा श्वास, कास और पार्श्वपीड़ाको नष्ट करता है ।

(७७४५) षोडशाङ्गचूर्णम् (१)

(यो. चि. म. । अ. २)

किरातं तिक्तकं तिक्ता गुडूची चाभया घनम् ।
धन्वयासकत्रायन्ती क्षुद्रा शृङ्गी महौषधी ॥
पर्पटं च प्रियङ्गू च पटोलं मगधी षटी ।
षोडशाङ्गमिति प्रोक्तं ज्वरशूलविनाशनम् ॥

चिरायता, नीमकी छाल, कुटकी, गिलोय, हर्र, नागरमोथा, धमासा, त्रायमाणा, कटेली, काकड़ासिंगी, सोंठ, पित्तपापड़ा, फूलप्रियंगु, पटोल, पीपल और कचूर समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे ज्वर और शूलका नाश होता है ।

(मात्रा—१॥–२ माशा ।)

(७७४६) षोडशाङ्गचूर्णम् (२)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

भूनिम्बपथ्याघनकण्टकारी
त्रायन्तिकानागरयासतिक्ता ।
वाट्यालकर्चूरकणापटोली
क्षुद्राजलग्रन्थिकपर्पटाश्च ॥
एषां ततो षोडशकाङ्गचूर्णं
ज्वरान् समस्तान्विषमाञ्जिहन्ति ॥

चिरायता, हर्र, नागरमोथा, कटेली, त्रायमाना, सोंठ, धमासा, कुटकी, खरैटी, कचूर, पीपल, पटोल, कटेली, सुगन्धबाला, पीपलामूल और पित्तपापड़ा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण समस्त विषम ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा—२–३ माशा ।)

इति षकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ षकारादिगुग्गुलु-प्रकरणम्

(७७४७) षडङ्गगुग्गुलुः (१)

(र. र. स. । उ. अ. २१)

रास्नामृतादेवदारुशुण्ठीवातारितुल्यकम् ।
गुग्गुलुं सर्वतुल्यांशं कुट्टयेद् घृतवासितम् ॥
कर्षांशं भक्षयेच्चानु क्याथः षडङ्गगुग्गुलुः ॥

रास्ना, गिलोय, देवदारु, सोंठ और अरण्डमूल; इनका चूर्ण १–१ भाग तथा शुद्ध गूगल ६ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर थोड़ा सा घी मिलाकर कूटें ।

मात्रा—१। तोला । (व्यवहारिक मात्रा–१ माशा) (इसके सेवनसे वातव्याधि नष्ट होती है ।)

(७७४८) षडङ्गगुग्गुलुः (२)

(षडङ्गघृतगुग्गुलुः)

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३; च. द. । नेत्र. ५८; भै. र. । नेत्ररोगा.)

विभीतकशिवाधात्री पटोलारिष्टवासकैः ।
क्वाथो गुग्गुलुना पेयः शोथाक्षिपाकशूलहा ॥
पिल्लं च सव्रणं शुक्रं रोगादींश्च विनाशयेत् ।
एतैरेव घृतं पक्वं रोगांस्तांस्ताञ्जयेद्भृशम् ॥

बहेड़ा, हर्र, आमला, पटोल, नीमकी छाल, और बासा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें गूगल मिलाकर पीनेसे आंखोंकी सूजन, अक्षिपाक, नेत्रशूल, पिल्ल और सव्रण शुक्रादि नेत्र रोगोंका नाश होता है ।

इन्हीं ओषधियोंसे सिद्ध घृत भी उपरोक्त रोगों को नष्ट करता है ।

(घी १ सेर । क्वाथ—समस्त ओषधियां समान भाग मिलित २ सेर, पानी १६ सेर, शेष ४ सेर । कल्क—शुद्ध गूगल १० तोले ।)

(७७४९) षडशीतिगुग्गुलुः

(यो. र. वातव्या.)

सैर्य्यासविषादारुव्याघ्रीशुकचविकाहृपम् ।
कृष्णाब्दोग्राघनाभीरुवाट्यालं मिशिवेल्लरी ॥
पथ्या शुण्ठी छिन्नरुहा शठ्यारग्वधगोक्षुरम् ।
विशाखा मोदकी तिक्ता ग्रन्थिभार्गी विदारिका ॥
अलम्बुषा हस्तिकर्णी वस्तगन्धा विषाणिका ।
शिवाक्षं मुशलीकौन्तीकाकोलीदीप्ययुग्मकम् ॥
त्रिवृद्दन्ती शिखी शृङ्गी कोकिलाक्षो दुरालभा ।
पञ्चमूलं महद्धीरतरुः कुष्ठं च जोङ्गकम् ॥
जातीपत्रीफलैलं च केशरं त्वकिरातकम् ।
कुङ्कुमं देवकुसुमं विशाला निशिसैन्धवम् ॥
मन्दारमूलं कृमिजिद्धेमदुग्धा रविप्रिया ।
गजपिप्पल्यपामार्गौ वानरी नक्तमालकः ॥
एते रास्ना समा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः ।
सूतं गन्धं हिङ्गुलं च टङ्कणं लोहमभ्रकम् ॥
शुल्वं वङ्गं सूतभस्म नागं ताप्यमयोरजः ।
मिलितं पुरपादं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
पचेच्चतुर्गुणे क्वाथे पुरं पट्कटुजे पुरा ।
तुर्यांशशेषिते क्वाथे पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥
चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना ।
यावद्घनतरं तावद्गुटिकाः कारयेत्ततः ॥
स्वर्णप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः ।
सप्तधातुगतान्वाताञ्छिरास्नाय्वस्थिसन्धिगान् ॥
सामान्निरामान्संसृष्टाञ्छ्लेष्मजान्घ्नन्ति केवलान् ।
यक्ष्माणमग्निमान्द्यं च ज्वरं धातुगतं तथा ॥
गुल्फजानूरुकट्यूरूदरहृत्कुक्षिकक्षगान् ।
अंसमन्याहनुश्रोत्रभ्रूललाटाक्षिशङ्खगान् ॥
प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च शूलमाध्मानमश्मरीम् ।
किं पुनर्मेदकान्वातान्प्रत्यङ्गस्थाञ्जयत्यलम् ॥
गुग्गुलुः षडशीतिर्वै नाम्ना भोजेन कीर्तितः ।
क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनः पुनः ॥
स एष राजयोगोऽयं न देयो यस्य कस्यचित् ।
वत्सरेणास्य योगेन षण्ढोऽपि प्रमदाप्रियः ॥
वाजीकरणमन्यच्च परं नास्माद्विशेषतः ।
गुणोऽस्य सेवनान्नित्यं यः स्यात्तस्याद्ब्रवीमि किम् ।
एष नो परिहार्यस्तु पानभोजनमैथुनैः ।

कटसरैया, जवासा, अतीस, देवदारु, छोटी बड़ी कटेली, चव, बासा, पीपल, नागरमोथा, बच,

धनिया, शतावर, खरैटी, सोया, काला विधारा, हर्र, सोंठ, गिलोय, कचूर, अमलतासके फलकी मज्जा, गोखरु, पुनर्नवामूल, मूर्वा, कुटकी, पीपलामूल, भरंगी, विदारीकन्द, मुण्डी, हस्तिकर्णी (कासालु), अजमोद, काकड़ासिंगी, रुद्राक्ष, मूसली, रेणुका, काकोली, जीरा, काला जीरा, निसोत, दन्तीमूल, चित्रकमूल, अतीस, तालमखाना, धमासा, बृहत्पंच-मूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरनी; इनकी जड़की छाल), अर्जुनछाल, कूठ, अगर, जावत्री, जायफल, इलायची, नागकेसर, दालचीनी, चिरायता, केसर, लौंग, इन्द्रायणकी जड़, सेंधानमक, हल्दी, सफेदआककी जड़, बायविडंग, सत्यानासी (स्वर्णक्षीरी)की जड़, हुलहुल, गजपीपल, अपा-मार्ग (चिरचिटा), कौंचके बीज और करञ्जमूल १-१ भाग, रास्ना इन सबके बराबर और कीकरकी फली दो गुनी तथा कीकरकी फली समेत सम्पूर्ण औषधियोंके बराबर शुद्ध गूगल एवं पारद, गन्धक, हिंगुल, सुहागेकी खील, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, वंग भस्म, पारद भस्म, सीसा भस्म और लोह भस्म; ये सब औषधें समान भाग मिलित गूगलसे चतु-र्थांश ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर गूगलको षट्कटु (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ तथा काली मिर्च) के ४ गुने (आठ गुने) काथमें पकावें । जब चतुर्थांश काथ शेष रह जाय तो उसे छान कर उसमें उपरोक्त सम्पूर्ण काष्ठादि औषधियोंका चूर्ण और भस्में मिला कर पुनः मन्दाग्नि पर पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो ।-। तोलेकी गोलियां बना लें ।

इन्हें शहद और घीके साथ मिला कर सेवन करनेसे समस्त धातुगत वायु, शिर, स्नायु, सन्धि और अस्थिगत वायु; आमवात, निराम वायु, कफ-युक्त वायु, क्षय, अग्निमांद्य, धातुगत ज्वर; गुल्फ, जानु, उरु, कटि, उदर, हृदय, कुक्षि, कक्षा, स्कन्ध, मन्या, हनु, श्रोत्र, भ्रू, ललाट, नेत्र और शंख प्रदेश (कनपटी), इनकी वायु; प्रमेह, मूत्र-कृच्छ्र, शूल, आध्मान, अश्मरी और मेद वायुका नाश होता है ।

दिनों दिन क्षीण होते हुवे एक शिष्यके बार बार प्रार्थना करने पर भोजराजने यह प्रयोग बतलाया था ।

इसे एक वर्ष तक सेवन करनेसे नपुंसक भी कामिनी-वल्लभ हो जाता है ।

इसके सेवन कालमें खान पान और मैथु-नादिमें विशेष परहेज की आवश्यकता नहीं है ।

(षट् कटु गूगलसे २ गुना ले कर उसे १६ गुने पानीमें पका कर चौथा भाग रहने पर छान कर उसमें गूगल मिला कर पकाना चाहिये । यदि शुद्ध गूगल डाला जाय तो पुनः छाननेकी आवश्यकता नहीं रहती । व्यवहारिक मात्रा—१ माशा ।)

(७७५०) षडूषणगुग्गुलुः

(यो. र. । मेद. ; वृ. यो. त. । त. १०७ ; वृ. नि. र. । वृद्धच.)

षडूषणं क्षौद्रसमं गुग्गुलुं गव्यसर्पिषा ।
प्रयुक्तं कुट्टय भुञ्जीत यथाग्नि दिवसानने ॥
कटुतिक्तकषायाशी मेदोवृद्धिप्रणाशनम् ।

षडूषण (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, और कालीमिर्च) का चूर्ण, शहद, शुद्ध गूगल और गायका घी समान भाग लेकर सबको एकत्र कूटकर रक्खें।

इसे प्रातःकाल यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे मेदी वृद्धि नष्ट होती है।

पथ्यमें कटु, तिक्त और कषाय रसयुक्त पदार्थ देने चाहियें।

(मात्रा—१-१॥ माशा)

इति षकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

अथ षकारादिघृतप्रकरणम्

(७७५१) षट्पलघृतम् (१)

(वृ. मा.; व. से.; वृ. नि. र.। विषमज्वरा; व. से.। उदरा.; ग. नि.। घृता. १; सु. सं.। चि. अ. १४ उदरा.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
ससैन्धवैश्च पलिकैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥
क्षीरं चतुर्गुणं दद्यात्तद् घृतं प्लीहनाशनम्।
विषमज्वरमन्दाग्निहरं रुचिकरं परम्॥

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और सेंधानमक; इनका चूर्ण ५-५ तोले लेकर सबको पानीसे पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर दूध मिलाकर दूध जलने तक पकावें और फिर छान लें।

यह घृत प्लीहा, विषमज्वर और अग्निमांद्यको नष्ट करता है तथा रोचक है।

(७७५२) षट्पलघृतम् (२)

(यो. र.। कुष्ठा.)

निम्बं पटोलदार्व्यौ दुरालभां तिक्तरोहिणीं त्रिफलाम्।
कुर्यादर्धपलांशान्पर्पटकं त्रायमाणां च॥
सलिलाढकसिद्धानां रसेऽष्टभागस्थिते पूते।
चन्दनकिराततिक्तकमागधिका त्रायमाणां च॥
मुस्तं वत्सकबीजं कल्कीकृत्यार्धकार्षिकान्भागान्।
नवसर्पिषश्च षट्पलमेतत्सिद्धं घृतं पेयम्॥
कुष्ठज्वरगुल्मार्शोग्रहणीपाण्ड्वामयान्हन्ति।
पामाविसर्पपिटिकाकण्डूगण्डव्रणान्सिद्धम्॥

क्वाथ—नीमकी छाल, पटोल पत्र, दारुहल्दी, धमासा, कुटकी, हर्र, बहेड़ा, आमला, पित्तपापड़ा, और त्रायमाणा २॥-२॥ तोले ले कर ८ सेर पानीमें पकावें और १ सेर रहने पर छान लें।

कल्क—सफेद चन्दन, चिरायता, पीपल, त्रायमाणा, नागरमोथा और इन्द्रजौ ७॥-७॥ माशे ले कर सबको पानीके साथ पीस लें।

६० तोले ताजे घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ (तथा २ सेर पानी) मिला कर पकावें। और जलांश शुष्क होने पर घीको छान लें।

इसे सेवन करनेसे कुष्ठ, ज्वर, गुल्म, अर्श, ग्रहणी, पाण्डु, पामा, विसर्प, पिडिका, कण्डू, गण्ड और व्रणोंका नाश होता है।

(७७५३) षडङ्गघृतम् (१)

(वृ. मा, । अतिसारा. ; व. से. । अतिसारा. ; वृ. यो. त. । त. ६४; च. द. । अतिसारा. ४)

वत्सकस्य च बीजानि दार्व्याश्च त्वच उत्तमाः।
पिप्पलीशृङ्गवेरं च लाक्षा कटुकरोहिणी ॥
षड्भिरेतैर्घृतं सिद्धं पेयामण्डावचारितम् ।
अतिसारं जयेच्छीघ्रं त्रिदोषमपि दारुणम् ॥

इन्द्रजौ, दारुहल्दीकी छाल, पीपल, सोंठ, लाख और कुटकी ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

३ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और १२ सेर पानी मिला कर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसे पेया या मण्डादिके साथ खिलानेसे दारुण त्रिदोषज अतिसार भी नष्ट हो जाता है ।

(७७५४) षडङ्गघृतम् (२)

(वृ. मा. । राजयक्ष्मा. ; व. से.)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।
सयावशूकैः सक्षीरैः स्रोतसां शोधनं घृतम् ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और जवाखार ५-५ तोले ले कर कल्क बनावें ।

३ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और १२ सेर दूध मिला कर पकावें । जब दूध जल जाय तो घीको छान लें ।

इसे राजयक्ष्मामें स्रोतोंको शुद्ध करनेके लिये देना चाहिये ।

(७७५५) षड्बिन्दुघृतम् (१)

(वृ. यो. त. । त. १३२ ; वै. र. । शिरो रोगा. ; व. से. । शिरो.)

मधुकमधूकविडङ्गैः सभृङ्गराजनागरैर्घृतं सिद्धम् ।
षड्बिन्दुनस्यदानादेतच्छीर्षामयं हन्ति ॥

मुलैठी, महुवेकी छाल, बायबिड़ंग, भंगरा और सोंठ समान भाग ले कर इनके कल्क और काथसे घृत सिद्ध करें ।

इसकी नित्य प्रति ६ बूंद नाकमें डालनेसे शिर शूलादि शिरोरोग नष्ट होते हैं ।

(**कल्कार्थ**—प्रत्येक ओषधि ४ तोले । **क्वाथार्थ**—प्रत्येक ओषधि ६४ तोले । पानी ३२ सेर । शेष ८ सेर । घी—२ सेर ।)

(७७५६) षड्बिन्दुघृतम् (२)

(यो. र. । पीनसा.)

भृङ्गं लवङ्गं मधुकं च कुष्ठं
सनागरं गोघृतमिश्रितं च ।
षड्बिन्दु नासास्थिगदं च पीनसं
शिरोगतं रोगशतं च हन्ति ॥

भंगरा, लौंग, मुलैठी, कूठ और सोंठ; इनका महीन चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको ४० भाग घीमें मिलावें ।

इसकी नस्य लेनेसे नासास्थिके रोग, पीनस और शिरके सैकड़ों रोग नष्ट हो जाते हैं ।

मात्रा—६ बूंद ।

इति षकारादिघृतप्रकरणम्

अथ षकारादितैलप्रकरणम्

(७७५७) षट्कट्वरतैलम् (महा)

(भै. र. । ज्वरा.)

शुक्तारनालैर्दधिमस्तुतक्रैः
फलाम्बुभागेन समं हि तैलम् ।
कृष्णादिकल्कैर्मृदुवह्निसिद्ध-
मभ्यञ्जनं वातकफज्वराणाम् ॥
ऐकाहिकद्वित्रिचतुर्थकानां
मासार्द्धमासद्वयमासिकानाम् ।
निवारणं तद्विषमज्वराणां
तैलन्तु षट्कट्वरकं महत्स्यात् ॥

कल्कः कृष्णादिगणो यथा-

कृष्णाचित्रकषड्ग्रन्था वासकं विकसा घनम् ।
ग्रन्थिकैले चातिविषा रेणुकश्च कटुत्रयम् ॥
यमानी गोस्तनी व्याघ्री भूनिम्बं बिल्वचन्दनम् ।
भार्गी श्यामा शिवा धात्री स्थिरा मूर्वा सजीरका ॥
सर्षपं हिङ्गु कटुकी विडङ्गं च समांशकम् ।
एष कृष्णादिको नाम गणो ज्वरविनाशनः ॥

द्रव पदार्थ—शुक्त ४ सेर, कांजी ४ सेर, दहीका पानी ४ सेर, तक्र ४ सेर और नीबूका रस ४ सेर ।

कल्क—पीपल, चीतामूल, बच, बासा (अडूसेकी जड़की छाल), मजीठ, नागरमोथा, पीपलामूल, इलायची, अतीस, रेणुका, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, मुनक्का, कटेली, चिरायता, बेल छाल, सफेद चन्दन, भरंगी, श्यामालता, हर्र, आमला, शालपर्णी, मूर्वा, जीरा, सरसों, हींग, कुटकी और बायबिड़ंग समान भाग मिलित आधा सेर ले कर कल्क बनावें ।

४ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर पकावें । जब द्रव पदार्थ, शुष्क हो जाएं तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे वात कफज ज्वर, इकतरा, तिजारी और चातुर्थिक तथा १५-१५ दिन, या १-१ अथवा २-२ महीने बाद आने वाला ज्वर नष्ट होता है ।

(७७५८) षड्गुणतक्रतैलम्

(षट्तक्रतैलम्; षट्कट्वरतैलम्)

(च. द. । ज्वरा. २ ; वृ. यो. त. । त. ५९ ; भा. प्र. म. खं. २ । विषम ज्वरा. ; धन्व. ; वृ. मा. ; वृ. नि. र. ; व. से. ; यो. र. ; वै. र. । ज्वरा. ; व. से. । ज्वरा. ; ग. नि. । तैला.)

सुवर्चिकानागरकुष्ठमूर्वा
लाक्षा निशा लोहितयष्टिकाभिः ।
तैलं ज्वरे षड्गुणतक्रसिद्ध-
मभ्यञ्जनाच्छीतविदाहनुत्स्यात् ॥

कल्क—सज्जी, सोंठ, कूठ, मूर्वा, लाख, हल्दी और मजीठ समान भाग मिलित आधा सेर । ×

४ सेर तेलमें यह कल्क तथा २४ सेर तक्र मिला कर पकावें । जब तक्र जल जाए तो तेलको छान लें ।

× कुछ ग्रन्थोमें चन्दन अधिक है । कुछमें कूठका अभाव है ।

इसकी मालिशसे दाह और शीतका नाश होता है।

(७७५९) षट्चरणतैलम्

(वृ. यो. त. । तं. ५९ ; यो. त. । त. २० ; यो. र. । ज्वरा. ; वृ. नि. र. । विषम ज्वरा. ; व. से. । ज्वरा.)

लाक्षामधुकमञ्जिष्ठा मूर्वाचन्दनसारिवाः ।
तैलं षट्चरणं नाम त्वभ्यङ्गाज्ज्वरनाशनम् ॥

कल्क—लाख, मुलैठी, मजीठ, मूर्वा, सफेद चन्दन और सारिवा समान भाग मिलित आधा सेर ले कर कल्क बनावें ।

४ सेर तेलमें यह कल्क और इन्हीं ओषधियोंका क्वाथ मिला कर पकावें । जब क्वाथ जल जाए तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे ज्वर नष्ट होता है ।

(**क्वाथार्थ**—सम्पूर्ण ओषधियां मिलित ८ सेर । पानी ६४ सेर । शेष १६ सेर ।)

(७७६०) षड्विन्दुतैलम् (१)

(हा सं. । स्थान ३ अ. ४३)

भृङ्गराजरसं चैकं द्विभागं काञ्जिकेन च ।
शोभाञ्जनं भागत्रयं रसं तत्र विनिक्षिपेत् ॥
सौवीरकरसं पञ्च षड्भागं तुम्बिकारसम् ।
शुण्ठी सैन्धवमम्लीका पटोलं वासकं शिवा ॥
अभया सुरसा चैव तैलं च चतुरंशकम् ।
पाचितं तत्तु नस्येन योजयेच्च षड्विन्दुकम् ॥
तथैव मस्तकाभ्यङ्गे हितं स्यात् कर्णपूरके ।
हितं वातादिजे रोगे शिरोऽर्तौ क्रिमिजे तथा ॥

द्रवपदार्थ—भंगरेका रस १ सेर, कांजी २ सेर, सहंजनेका रस ३ सेर, बेरवृक्षकी छालका क्वाथ ५ सेर और कड़वी तूंबीका रस ६ सेर ।

कल्क—सोंठ, सेंधा, इमली, पटोल, बासा, आमला, हर्र और तुलसी समान भाग मिलित ४० तोले लेकर कल्क बनावें ।

४ सेर तेलमें यह कल्क और उपरोक्त द्रव पदार्थ मिलाकर पकावें । जब द्रव पदार्थ जल जाएं तो तेलको छान लें ।

इसकी नस्यद्वारा ६ बूंद सूंघने तथा मस्तक पर मालिश करनेसे एवं कानमें डालनेसे वातविकार नष्ट होते हैं ।

यह तेल क्रिमिजन्य शिरोरोगमें विशेष उपयोगी है ।

(७७६१) षड्विन्दुतैलम् (२)

(भै. र. । कुष्ठा.)

सिन्दूरामृततालगैरिकहलाजाजीगदत्र्यूषणैः ।
हृत्पाषाणरसोनबाणदहनस्नुह्यर्कदुग्धैर्निशा ॥
राजीगन्धकहिङ्गुभिः परिमितैः शुक्त्या पचेत्सार्षपं ।
तैलं प्रस्थमितं घृतस्य कुडवं पात्रं तथार्कद्रसम् ॥
गोमूत्रञ्च तथा विलीय सकलं पूतं भृतं रोगिणे ।
दद्यात्कुष्ठविचर्चिकादिषु भिषङ् नाम्ना तु षड्विन्दुकम् ॥

कल्क—सिन्दूर, बछनाग, हरताल, गेरू, लांगली (कलिहारी), जीरा, कूट, सोंठ, मिर्च, पीपल, मनसिल, लहसन, सरफोंका, चीता, सेहुंड (थूहर)का

दूध, आकका दूध, हल्दी, राई, गन्धक और हींग २॥-२॥ तोले ले कर कल्क बनावें।

२ सेर तैल, आधासेर घी, ८ सेर आकके पत्तोंका रस, ८ सेर गोमूत्र और उपरोक्त कल्क एकत्र मिलाकर पकावें। जब द्रव पदार्थ जल जाएं तो तेलको छान लें।

यह तैल कुष्ठ, विचर्चिका आदिको नष्ट करता है।

(७७६२) **षड्बिन्दुतैलम् (३)**

(ग. नि. । तैला. २ ; र. र. ; वृ. भा. । शिरो. ; यो. चि. म. । अ. ६ ; वै. र. ; धन्व. । शिरो. ; वृ. यो. त. । त. १३२ ; यो. त. । त. ७३ ; च. द. । शिरो. ५९ ; भै. र. ; व. से. ; भा. प्र. म. खं. २ । शिरो रोगा.)

एरण्डमूलं तगरं शताह्वा
जीवन्ती रास्ना लवणोत्तमं च ।
भृङ्गं विडङ्गं मधुयष्टिका च
विश्वौषधं कृष्णतिलस्य तैलम् ॥
आजं पयस्तैलविमिश्रितं च
चतुर्गुणे भृङ्गरसे विपक्वम् ।
षड्बिन्दवो नासिकया प्रयुक्ता
निघ्नन्ति सर्वाञ्छिरसो विकारान् ॥
च्युतांश्च केशान्पतितांश्च दन्ता-
नाबद्धमूलांश्च दृढी करोति ।
सुपर्णदृष्टिप्रतिमं च चक्षु-
र्बाह्वोर्बलं चाभ्यधिकं करोति ॥

कल्क—अरण्डकी जड़, तगर, सोया, जीवन्ती, रास्ना, सेंधानमक, भंगरा, बायबिडंग, मुलैठी, और सोंठ समान भाग मिश्रित १ सेर लेकर कल्क बनावें।

काले तिलोंके ८ सेर तेलमें यह कल्क, ८ सेर बकरीका दूध और ३२ सेर भंगरेका रस मिलाकर पकावें। जब द्रव पदार्थ जल जाएं तो तेलको छान लें।

इसकी ६ बूंद नित्य प्रति नासिकामें डालनेसे समस्त शिरोरोग नष्ट होते हैं। बालोंका गिरना बन्द होकर उनकी जड़ें मज़बूत हो जाती हैं और दांत दृढ हो जाते हैं। दृष्टि तीव्र हो जाती है और बाहुवोंका बल बढ़ता है।

इति षकारादितैलप्रकरणम्

अथ षकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(७७६३) **षडङ्गी वर्तिः**

(ग. नि. । नेत्ररोगा. १)

चन्दनत्रिफलापूगपलाशतरुशोणितैः ।
जलपिष्टैः षडङ्गीति वर्तिस्तिमिरनाशिनी ॥

लाल चन्दन, हर्र, बहेड़ा, आमला, सुपारी और पलाश (ढाक) के वृक्षका गोंद; इनका बारीक चूर्ण समान भाग लेकर पानीमें पीसकर वर्ति बनावें ।

इसे आंखमें लगानेसे तिमिर नष्ट होता है ।

इति षकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

अथ षकारादिरसप्रकरणम्

(७७६४) **षडाननगुटिका**

(रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

विषोषणं टङ्कणपारदंश्च
सगन्धचूर्णश्च समांशयुक्तम् ।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुडाक्तं
सम्मर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥
विरेचनी सर्वविकारहन्त्री
लघ्वी हिता दीपनी पाचनीयम् ।
कुष्ठे हिता तीव्रतरे हि शूले
चामाशये चाश्मगते विकारे ॥
संशोधनी शीतजलेन सम्यक्
सङ्ग्राहिणी चोष्णजलेन युक्ता ।

शुद्ध बछनाग, कालीमिर्च, सुहागेकी खील, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक समान भाग और शुद्ध जमालगोटा २ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें एवं अन्तमें आवश्यकतानुसार पुराना गुड़ मिला कर घोटें और (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

ये गोलियां विरेचनी, लघ्वी, दीपनी और पाचनी हैं । इनके सेवनसे कुष्ठ, आमाशयका तीव्र शूल और अश्मरिका नाश होता है । इसे शीतल जलसे देनेसे विरेचन होता है और उष्ण जल देनेसे दस्त बन्द हो जाते हैं ।

(७७६५) **षडाननरसः (१)**

(र. चं. । अर्शो. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे. ; वृ. नि. र ; र. रा. सु. । अर्शो.)

वैक्रान्तताम्राभ्रकगन्धकानां
रसस्य कान्तस्य समानभागः ।
चूर्णं भवेत्तेन षडाननोऽयं
अर्शो विनाशाय च वल्लमात्रः ॥

वैक्रान्त भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध गंधक, कान्तलोह भस्म और शुद्ध पारद समान

भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह खरल करें।

मात्रा—३ रत्ती।

यह रस अर्शको नष्ट करता है।

(७७६६) षडाननरसः (२)

(भै. र. । ज्वरा. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं दरदं पिप्पली विषम्।
तुल्यांशं मर्दयेत् खल्ले यामश्च गुडूचीरसैः॥
गुञ्जामात्रं रसं देयं गुञ्जामात्रां लिहेत्सदा।
ज्वरे मन्दानले चैव वातपित्तज्वरेषु च॥
ज्वरे वैषम्यतरुणे ज्वरे जीर्णे विशेषतः।
मुद्गान्नं मुद्गयूषं वा तक्रभक्तश्च केवलम्॥
नारिकेलोदकं देयं मुद्गं पथ्यं विशेषतः।
षडाननो रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत्॥

पीतल भस्म, कांसी भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध हिंगुल, पीपल और शुद्ध बछनाग समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें और फिर १ पहर तक गिलोयके रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, वातपित्त ज्वर, विषम ज्वर, तरुण ज्वर और जीर्णज्वरका नाश होता है।

पथ्य—मूंग भात, मूंगका यूष, तक्रभात और नारियलका पानी। मूंग विशेष पथ्य है।

(७७६७) षण्मुखो रसः (१)

(वृ. यो. त. । त. १४७)

हराकौयोवङ्गाभ्रकबलिकलैकद्विजलधि
द्विपादास्त्रिंशद्भिर्विमिलितमनलेऽश्चैर्मृदि पुनः।
द्वयहं पक्वं कूप्यां भवति सिकतायन्त्रजुषित-
स्तलस्थः षण्ढत्वप्रलयकृदयं षण्मुखरसः॥

शुद्ध पारद १६ भाग, ताम्र भस्म १ भाग, लोह भस्म २ भाग, बंग भस्म ४ भाग, अभ्रक भस्म आधा भाग और शुद्ध गन्धक ३० भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको भली भांति खरल करके, कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर २ दिन बालुकायन्त्रमें पकावें और फिर उसके स्वांग शीतल होने पर शीशीकी तलीमें पड़े हुवे रसको निकाल लें।

इसके सेवनसे नपुंस्कता नष्ट होती है।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(७७६८) षण्मुखो रसः (२)

(र. र. । शूला.)

सूतं गन्धं समं शुद्धं सूतांशं मृतताम्रकम्।
सौवर्चलश्च सूतांशं जम्बीरैर्दिनसप्तकम्॥
मर्दयेदातपे तीक्ष्णे रुद्ध्वा लघुपुटैस्त्रयम्।
दत्त्वादाय तु तच्चूर्णं समं त्रिकटुकं पचेत्॥
षण्मुखोऽयं रसो नाम त्रिगुञ्जेनामशूलजित्।
एरण्डतैलषड्भागं लशुनस्य दशाष्टकम्॥
एकं हिङ्गु त्रिसिन्धूत्थं सर्वमेकत्र कारयेत्।
त्रिनिष्कं भक्षयेच्चानु आमशूलप्रशान्तये॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म और संचल (काला नमक) समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कजली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको सातदिन जम्बीरी

नीबूके रसमें तीक्ष्णधूपमें खरल करें और फिर शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें। इसी प्रकार (७-७ दिन नीबूके रसमें घोटकर) ३ पुट दें और फिर उसे पीसकर उसमें समान भाग त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती।

अनुपान—अण्डीका तेल ६ भाग, ल्हसन (पिसा हुवा) १८ भाग, हींग १ भाग और सेंधा नमक ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें। उपरोक्त रसमेंसे ३ रत्ती खानेके पश्चात् १२ रत्ती यह मिश्रण खाना चाहिये।

इसके सेवनसे आमशूल नष्ट होता है।

इति षकारादिरसप्रकरणम्

स

अथ सकारादिकषायप्रकरणम्

(७७६९) **सप्तच्छदादिक्वाथः** (१)

(भै. र.। ज्वरा.; ग. नि.। ज्वरा. १; व. से.। ज्वरा.)

सप्तच्छदं गुडूचीश्च निम्बं खर्जूरमेव च।
क्वाथयित्वा पिबेत्क्वाथं सक्षौद्रं कफजे ज्वरे॥

सतौनेकी छाल, गिलोय, नीमकी छाल और खजूर समान भाग मिश्रित ५ तोले ले कर ४० तोले पानीमें पकावें और १० तोले शेष रहने पर छान लें।

इसमें (२ तोले) शहद मिलाकर पीनेसे कफ ज्वर नष्ट होता है।

(७७७०) **सप्तच्छदादिक्वाथः** (२)

(वृ. नि. र.; ग. नि.। मुख. ५; यो. त.। त. ६९; भा. प्र.। म. खं. २ मुख.; व. से.। मुख.; वृ. यो. त.। त. १२८; वृ. मा.। मुखरोगा.; वा. भ.। उ. अ. २२)

सप्तच्छदोशीरपटोलमुस्त
हरीतकीतिक्तकरोहिणीभिः।
यष्ट्याह्वराजद्रुमचन्दनैश्च
क्वाथं पिबेत्पाकहरं मुखस्य॥

सतौनेकी छाल, खस, पटोल, नागरमोथा, हर्र, कुटकी, मुलैठी, अमलतास और लाल चन्दन। इनका क्वाथ मुखपाकको नष्ट करता है।

(७७७१) **सप्तच्छदादिक्वाथः (३)**

(व. से. । मूत्रकृच्छ्रा.)

सप्तच्छदारग्वधकेतकैलाः
निम्बः करञ्जः कुटजो गुडूची ।
साध्या जले तेन पचेद्यवागूं
सिद्धं कषायं मधुसंयुतं वा ॥

सतौनेकी छाल, अमलतास, केतकी, इलायची, नीमकी छाल, करञ्ज, कुटकी और गिलोय।

इनके क्वाथमें शहद मिलाकर सेवन करनेसे अश्मरि-जन्य मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

इन्हीं ओषधियोंके जलसे यवागू बनाकर खिलानेसे भी अश्मरि-जन्य मूत्रकृच्छ्रमें लाभ होता है।

(यवागू बनानेके लिये समस्त ओषधियां समान भाग मिलित १। तोला। पानी २ सेर। शेष १ सेर।)

(७७७२) **सप्तपर्णयोगः**

(रसे. चि. म. । अ. ९)

सप्तपर्णशिफाकल्कपानाद्वा लेपनात्तथा ।
मुषलीमूलपानात्तु तन्तुकाख्यो विनश्यति ॥

सतौनेकी जड़का कल्क पीने तथा उसीका लेप करनेसे या मूसलीको (पानीके साथ) पीस कर पीनेसे नहरुवा नष्ट हो जाता है।

(७७७३) **सप्तमुष्टिकयूषः**

(शा. सं. । खं. २ अ. २ ; व. से. ; यो. र. । ज्वरा. ; यो. त. । त. १८)

कुलित्थयवकोलैश्च मुद्गैर्मूलकशुण्ठिकैः ।
शुण्ठीधान्याकयुक्तैश्च यूषः श्लेष्माऽनिलापहः ॥
सप्तमुष्टिक इत्येष सन्निपातज्वरं जयेत् ।
आमवातहरः कण्ठहृद्वक्त्राणां विशोधनः ॥

कुलथी, जौ, बेर, मूंग, मूलीके टुकड़े, सोंठ और धनिया।

इनका क्वाथ कफ, वायु, सन्निपात ज्वर और आमवातको नष्ट तथा कण्ठ, हृदय और मुखको शुद्ध करता है।

(७७७४) **समङ्गादिकल्कः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

समङ्गा शाल्मलीपुष्पं चन्दनं ककुभत्वचम् ।
नीलोत्पलमजाक्षीरं पिष्ट्वा पानमसृग्गदान् ॥

लज्जालुकी जड़, सेंभलके फूल, लाल चन्दन, अर्जुनकी छाल और नीलोत्पल समान भाग मिश्रित (१ तोला) ले कर बकरीके दूधमें पीस कर पीनेसे रक्तप्रदर नष्ट होता है।

(७७७५) **समङ्गादिक्वाथः (१)**

(वृ. यो. त. । त. ६४ ; यो. र. । अतिसारा.)

समङ्गातिविषा मुस्ता विश्वह्रीबेरधातकी ।
कुटजत्वग्दलैर्बिल्वैः क्वाथः सर्वातिसारनुत् ॥

लज्जालुकी जड़, अतीस नागरमोथा, सोंठ, सुगन्धबाला, धायके फूल, कुड़ेकी छाल और बेलके पत्ते।

इनका क्वाथ समस्त प्रकारके अतिसारोंको नष्ट करता है।

(७७७६) **समङ्गादिक्वाथः (२)**

(वृ. यो. त. । त. ६४ ; वृ. नि. र. । अतिसा.)

समङ्गाधातकीबिल्वमाम्रास्थ्यम्भोजकेसरम् ।
बिल्वं मोचरसं लोध्रं कुटजस्य फलत्वचौ ॥
पिबेत्तण्डुलतोयेन कषायं कल्कमेव च ।
श्लेष्मपित्तातिसारघ्नं रक्तं वाथ नियच्छति ॥

लज्जालुकी जड़, धायके फूल, बेलगिरी, आम की गुठली, कमलकेसर, बेलगिरी, मोचरस, लोध, कुड़ेकी छाल और इन्द्रजौ ।

इन्हें चावलोंके धोवन (तण्डुलोदक) में पकाकर अथवा पीसकर कल्क बनाकर पीनेसे कफ-पित्तातिसार तथा रक्तातिसारका नाश होता है ।

(७७७७) **समङ्गादिक्वाथः (३)**

(यो. र. । बालातिसा. ; भा. प्र. म. खं. २ । बाला.; वृ. मा. । बालरो.)

समङ्गाधातकीलोध्रसारिवाभिः शृतं जलम् ।
दुर्धरेऽपि शिशोर्देयमतीसारे समाक्षिकम् ॥

लज्जालुकी जड़, धायके फूल, लोध और सारिवा इनके क्वाथमें शहद मिलाकर पिलानेसे बालकोंका भयंकर अतिसार भी नष्ट होता है ।

(७७७८) **समङ्गादिक्षीरम्**

(व. से. । अर्शो. ; भा. प्र. । म. खं. २ अर्शो. ; वृ. मा. । अर्शो.)

समङ्गोत्पलमोचाह्वतिरीटतिलचन्दनैः ।
छागीक्षीरे प्रयोक्तव्यं गुदजे शोणितापहम् ॥

लज्जालुकी जड़, नीलोत्पल, मोचरस, लोध, तिल और लाल चन्दन ।

इनसे बकरीका दूध सिद्ध करके पिलानेसे अर्शका रक्त बन्द होता है ।

(ओषधियां समान भाग मिलित २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी १ सेर । पानी जलने तक पकावें ।)

(७७७९) **समीरदावानलक्वाथः**

(यो. र. । वातव्या.)

भल्लातकानां शकलानि कृत्वा
त्रिकोलमानं परिगृह्य वैद्यः ।
चतुष्पलं तोयसमन्वितोऽयं
क्वाथश्चतुर्थांशक एष सम्यक् ॥
सिताघृतं गोपयमिश्रितेन
कालं पलार्धं पलमेकयुक्तम् ।
क्रमेण पीतः खलु हन्ति वातान्
समीरदावानलनामधेयः ॥

२२॥ माशे शुद्ध भिलावेके टुकड़ोंको ४० तोले पानीमें पकावें और १० तोले शेष रहने पर छान लें ।

इसमें १। तोला मिश्री, २॥ तोले घी और १० तोले गायका दूध मिला कर पीनेसे समस्त वातव्याधियां नष्ट होती हैं ।

(जिन्हें भिलावा अनुकूल न आता हो उन्हें यह क्वाथ न पीना चाहिये ।)

(७७८०) **सरलादिकल्कः**

(वृ. मा. । वृद्धय.)

सरलागुरुकुष्ठानि देवदारु महौषधम् ।
मूत्रारनालसम्पिष्टं शोफघ्नं कफवातजित् ॥

सरल वृक्ष (चीर) का काष्ठ, अगर, कूठ, देवदारु और सोंठ, समान भाग मिलित (१ तोला) ले कर गोमूत्र या कांजोमें पीस कर पीनेसे कफ-वातज शोथ नष्ट होता है ।

(७७८१) **सहचरादिक्वाथः** (१)

(भै. र. । स्त्री. ; ग. नि. । सूतिका. ; वृ. यो. त. । त. १४२; यो. र. । स्त्री.)

सहचरपुष्करवेतसमूलं
विकङ्कतदारुकुलत्थसमम् ।
जलमत्र ससैन्धवहिङ्गुयुतं
सद्यो ज्वरसूतिकाशूलहरम् ॥

झिण्टीमूल, पोखरमूल, अम्लबेतकी जड़, कण्टाई, देवदारु और कुलथी समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसमें सैंधा नमक और हींग मिला कर पीनेसे सूतिका ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(७७८२) **सहचरादिक्वाथः** (२)

(यो. र. । वातव्या. ; वृ. यो. त. । त. ९०)

सहचरामरदारुसनागरं
क्वथितमम्भसि तैलविमिश्रितम् ।
पवनपीडितदेहगतिः पिबन्
द्रुतविलम्बितगो भवतीच्छया ॥

झिण्टीमूल, देवदारु और सोंठ समान भाग ले कर काथ बनावें । इसमें तिलका तेल मिलाकर पीनेसे वातव्याधि नष्ट होती है ।

(७७८३) **सहचरादिक्वाथः** (३)

(वृ. यो. त. । त. १२८)

कोष्णं सहचरक्वाथं खदिरक्षौद्रसंयुतम् ।
धृत्वाऽऽस्येन मुहुर्हन्ति तद्व्यथाशोथविद्रधीन् ॥

झिण्टीमूलके मन्दोष्ण काथमें कत्था और शहद मिला कर वह काथ बार बार मुंहमें भरनेसे दन्तपीड़ा, मसूढ़ोंकी सूजन और दन्तविद्रधिका नाश होता है ।

(७७८४) **सहचरादिक्वाथः** (४)

(र. र. । स्त्रीरोगा. ; भै. र. । स्त्री.)

सहचरमुस्तगुडूचीभद्रो-
त्कटबिल्वबालकैः क्वथितम् ।
पेयमिदं मधुमिश्रं सद्यो
ज्वरशूलनुत्सत्यम् ॥

झिण्टीमूल, नागरमोथा, गिलोय, प्रसारिणी, बेलछाल और सुगन्धबाला समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे प्रसूताका ज्वर और शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(७७८५) **सहचरादिक्वाथः** (५)

(र. र. । स्त्री. ; भै. र.)

सहाचरकृतः क्वाथः पिप्पलीचूर्णमिश्रितः ।
दीपनो ज्वरदोषामसूतिकारोगनाशनः ॥

झिण्टीमूलके क्वाथमें (४ रत्ती) पीपलका चूर्ण मिला कर पिलानेसे प्रसूताकी अग्नि दीप्त होती तथा आम और ज्वरका नाश होता है ।

(७७८६) **सारिवादिक्वाथः** (१)

(ग. नि. । विसर्पा.)

सारिवामुस्तकोशीरधात्रीभिः परिसाधितम् ।
कषायं च पिबेदाशु सर्वत्रीसर्पनाशनम् ॥

सारिवा, नागरमोथा, खस और आमला; इनका काथ सर्व प्रकारके विसर्प रोगको शीघ्रही नष्ट कर देता है ।

(७७८७) **सारिवादिक्वाथः** (२)

(यो. र. । बाल रोगा. ; व. से. । बाल. ; भा. प्र. । म. खं. २ बाल.)

सारिवातिललोध्राणां कषायो मधुकस्य च ।
संस्राविणी मुखे शस्तो धावनार्थं शिशोःसदा॥

सारिवा, तिल, लोध और मुलैठी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

बच्चेके मुंहसे लार बहती हो तो इस काथसे उसका मुख धोना चाहिये ।

(७७८८) **सारिवादिक्वाथः** (३)

(वृ. नि. र. । बालरोगा.)

सारिवोत्पलकाश्मर्यच्छिन्नापद्मकपर्पटैः ।
क्वाथः पीतो निहन्त्याशु शिशूनां पैत्तिकं ज्वरम् ॥

सारिवा, कमल, खम्भारीकी छाल, गिलोय, पद्माक और पितपापड़ा समान भाग ले कर काथ बनावें ।

यह काथ बच्चोंके पित्त ज्वरको नष्ट करता है ।

(७७८९) **सारिवादिक्वाथः** (४)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

सारिवातिविषाकुष्ठसुराह्वैः सदुरालभैः ।
मुस्तया च कृतः क्वाथो हन्यात्कफकृतं ज्वरम् ॥

सारिवा, अतीस, कूठ, देवदारु, धमासा और नागरमोथा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कफ–ज्वरको नष्ट करता है ।

(७७९०) **सारिवादिक्वाथः** (५)

(ग. नि. । छर्दि. १४)

सारिवोशीरमधुकं कुस्तुम्बरुफलानि च ।
युक्त्या क्वाथ्य जलं पेयं मधुना छर्दिनाशनम् ॥

सारिवा, खस, मुलैठी और कुस्तुम्बरु समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर पिलानेसे छर्दि नष्ट होती है ।

(७७९१) **सारिवादिगणः** (१)

(वा. भ. । सू. अ. १५)

सारिवोशीरकाश्मर्यमधूकशिशिरद्वयम् ।
यष्टीपरूषकं हन्ति दाहपित्तास्रतृड्ज्वरान् ॥

सारिवा, खस, खम्भारी, महुवेकी छाल, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, मुलैठी और फालसा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ दाह, रक्तपित्त, पिपासा और ज्वरको नष्ट करता है ।

(७७९२) **सारिवादिगणः** (२)

(सु. सं. । सू. अ. ३८)

सारिवामधुकचन्दनकुचन्दनपद्मककाश्मरीफल-
मधूकपुष्पाण्युशीरञ्चेति ।
सारिवादिः पिपासाघ्नो रक्तपित्तहरो गणः ।
पित्तज्वरप्रशमनो विशेषाद्दाहनाशनः ॥

सारिवा, मुलैठी, लाल चन्दन, पतंग, पद्माख, खम्भारीके फल, महुवेके फूल और खस । इन ओषधियोंके समूहको सारिवादिगण कहते हैं ।

सारिवादि गण, पिपासा, रक्तपित्त, पितज्वर और विशेषतः दाहको नष्ट करता है ।

(७७९३) **सारिवादियोगः**

(यो. र. । दन्तरोगा.)

पिष्ट्वा च सारिवापर्णं दृढं दन्तेषु धारयेत् ।
पतन्ति दन्तकीटाश्च चाश्चल्यं हरति क्षणात् ॥

सारिवाके पत्तोंको बारीक पीस कर दांतके नीचे रखनेसे दन्तकृमि निकल कर दांत हिलना बन्द हो जाता है ।

(७७९४) **सालसारादिगणः**

(सु. सं. । सू. अ. ३८)

सालसाराजकर्णखदिरकदरकालस्कन्धक्रमुक-भूर्जमेषशृङ्गीतिनिशचन्दनकुचन्दनशिंशपाशि-रीषासनधवार्जुनतालशाकनक्तमालपूतीकाश्व-कर्णागुरूणि कालीयकञ्चेति ।

सालसारादिरित्येष
गणः कुष्ठविनाशनः ।
मेहपाण्ड्वामयहरः
कफमेदोविशोषणः ॥

सालसार (साल भेद), अजकर्ण (असन), खैर, कदर (खैर भेद), तेन्दु वृक्ष, सुपारी, भूर्ज, मेढासिंगी, तिनिश (तिरिच्छ वृक्ष), लाल चन्दन, पतंग, शीसम, सिरस, असन, धव, अर्जुन, ताड़, सागोन, करञ्ज, पूतिकरञ्ज, शाल, अगर और दारुहल्दी ।

यह सालसारादिगण कुष्ठ प्रमेह और पाण्डुको नष्ट करता है तथा कफ और मेदको सुखाता है ।

(७७९५) **सितादिक्वाथः**

(वृ नि. र. । ज्वरा.)

ससितो निशिपर्युषितः प्रातर्धान्याकतण्डुलक्वाथः
पीतः शमयत्यचिरादन्तर्दाहं ज्वरं पैत्तम् ॥

धनिये और चावलोंका काथ बना कर उसे मिट्टीके पात्रमें भर कर रात्रिको ढक कर रख दें । इसमें प्रातःकाल मिश्री मिला कर पीनेसे अन्तर्दाह और पित्तज्वर शीघ्र नष्ट होता है ।

(७७९६) **सिन्धुवारक्वाथः**

(भा. प्र. ; व. से. । ज्वरा. ; भै. र. । ज्वरा.)

सिन्धुवारदलक्वाथं कणाढ्यं×कफजे ज्वरे ।
जङ्घयोश्च बले क्षीणे कर्णे च पिहिते पिबेत् ॥

संभालुके पत्तोंके काथमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे कफ ज्वर नष्ट होता है । जंघाका बल क्षीण होने और कानोंके बन्द होनेमें यह काथ उपयोगी है ।

(७७९७) **सिंहास्यादिकषायः**

(व. से. । ज्वरा.)

सिंहास्य पर्पटारिष्टं यष्टिधान्यकनागरम् ।
दारुग्रगन्धेन्द्रयवाः श्वदंष्ट्रा ग्रन्थिकं तथा ॥
एषां कषायमहनि सन्निपातज्वरे पिबेत् ।
श्वासातिसारघ्नं शूलारुचिहरं परम् ॥

बासा (अडूसा), पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, मुलैठी, धनिया, सोंठ, देवदारु, बच, इन्द्रजौ, गोखरु और पीपलामूल समान भाग ले कर काथ बनावें ।

× सोषणमिति पाठान्तरम् (पाठान्तरके अनुसार पीपलके स्थानमें मिर्च है ।)

यह क्काथ सन्निपात ज्वर, श्वास, अतिसार, शूल और अरुचिको नष्ट करता है।

(७७९८) सिंहास्यादिक्वाथः (१)

(वृ. नि. र. । कासा. ; यो. र । कासा.)

सिंहास्यामृतसिंहीनां क्वाथं मधुयुतं पिबेत् ।
पिबेत्सपित्तकफजे कासे श्वासे ज्वरे क्षये ॥

बासा (अडूसा), गिलोय और कटेलीके क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे पित्तकफज ज्वर, खांसी, श्वास, ज्वर और क्षयका नाश होता है।

(७७९९) सिंहास्यादिक्वाथः (२)

(व. से. । शोथा ; भै. र. ; वृ. मा. । शोथा. वृ. मा. । अम्लपित्ता. ; वृ. नि. र. । शोथा.)

सिंहास्यामृतभण्टाकीक्वाथं कृत्वा समाक्षिकम् ।
पीत्वा शोथं जयेज्जन्तुः कासं श्वासं ज्वरं वमिम् ॥

बासे (अडूसे), गिलोय और कटेलीके क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे शोथ, कास, श्वास और ज्वरका नाश होता है।

(७८००) सिंहिकादिकषायः

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सिंहीयवानीछिन्नानां क्वाथश्चपलया युतः।
कफवातज्वरश्वासशूलपीनसकासजित् ॥

कटेली, अजवायन और गिलोयके क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे कफवातज ज्वर, श्वास, शूल, पीनस और कासका नाश होता है।

(७८०१) सिंहीकषायः

(वृ. नि. र. । कासा.)

अयि रत्नकले नीलनलिनच्छदनेक्षणे ।
सिंहीकषायः सकणः कासग्रासकरः क्षणात् ॥

कटेलीके क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे कासका नाश होता है।

(७८०२) सिंह्यादिकषायः

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सिंही व्याघ्री ताम्रमूली पटोली
शृङ्गी भार्ङ्गी पुष्करं रोहिणी च ।
सार्कं शठ्या शैलमलयाश्च बीजं
श्वासं हन्यात्सन्निपाते दशाङ्गः ॥

छोटी कटेली; बड़ी कटेली, लज्जालुकी जड़, पटोल, काकड़ासिंगी, भरंगी, पोखरमूल, कुटकी, कचूर और कुरैयाके बीज समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ सन्निपात ज्वरमें होने वाले श्वास को नष्ट करता है।

(७८०३) सिंह्यादिक्वाथः (१)

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

सिंहीनिशासिंहमुखीगुडूची
विश्वोपकुल्याभृगुजाघनानाम् ।
कृष्णामरीचैर्मिलितः कषायः
श्वासाटवीदाहपयोद एषः ॥

कटेली, हल्दी, बासा (अडूसा), गिलोय, सोंठ, दन्तीमूल, भरंगी और नागरमोथेके क्वाथमें पीपल और काली मिर्चका चूर्ण मिला कर पीनेसे श्वास नष्ट होता है।

यह क्वाथ श्वासरूपी दावानलके लिये मेघके समान है।

(७८०४) सिंह्यादिक्वाथः (२)

(वृ. नि. र. ; यो. र. । ज्वरा.)

सिंहीनागरपुष्करैः सकटुकै रास्नागुडूचीयुतै-
र्भार्गीकर्कटशृङ्गिकाशठिसमैर्दुःस्पर्शवासाघनैः ।
पीतं जिह्वकहारि वारि भवति ब्राह्मीवचामिश्रितैः
प्रोक्तं वैद्यवरेण वन्द्यमुनिभिर्भूनिम्बमिश्रं शृतम् ॥

कटेली, सोंठ, पोखरमूल, कुटकी, रास्ना, गिलोय, भरंगी, काकड़ासिंगी, कचूर, धमासा, बासा, नागरमोथा, ब्राह्मी, बच और चिरायता समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ जिह्वक सन्निपातको नष्ट करता है ।

(७८०५) सुदर्शनामूलयोगः

(रा. मा. ; स्त्रीरोगा. ३०)

स्त्रीणामजस्रं प्रदरामयस्य
प्रवृत्तिमेतच्छममेति सद्यः ।
सुश्लक्ष्णपिष्टेन पयोन्वितेन
पीतेन मूलेन सुदर्शनायाः ॥

सुदर्शनाकी जड़को दूधके साथ अत्यन्त बारीक पीस कर पीनेसे स्त्रियोंको प्रदर रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(७८०६) सुनिषण्णादिकषायः

(वै. म. र. । पटल १)

सुनिषण्णवेणुपत्रशुण्ठीमुस्ताशृतः क्वाथः ।
हन्याज्ज्वरमतिवेगं दोषसमूहोद्भवं त्रिदिनात् ॥

सुनिषण्णक, बांसके पत्ते, सोंठ और नागरमोथा; इनका क्वाथ अनेक दोषोंसे उत्पन्न तीव्र ज्वरको भी ३ दिनमें नष्ट कर देता है ।

(७८०७) सुरभ्यादिकषायः

(यो. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सुरभिसलिलयुक्तः सिंहिकाश्रीफलाभ्यां
प्रवरलवणयासाविश्वपाषाणभेदैः ।
पवनरिपुजटाभिः संयुतः क्वाथ एव
प्रतिदिनमपि पीतो हन्त्यभिन्यासशूलम् ॥

कटेली, बेलकी छाल, धमासा, सोंठ, अरण्डमूल और पाषाणभेद समान भाग मिलित ५ तोले लेकर ४० तोले गोमूत्रमें पकावें और १० तोले रहने पर छान लें ।

इसमेंसे ५ तोले क्वाथमें १ माशा सेंधानमक मिलाकर पीनेसे अभिन्यास सन्निपात और शूल नष्ट होता है ।

(७८०८) सुरसादिक्वाथः

(ग. नि. । ज्वरा. १)

सुरसादारुपिप्पल्यो धान्यकः सदुरालभः ।
पाक्यं सलवणस्नेहं सोष्णं वातज्वरापहम् ॥

तुलसी, देवदारु, पीपल, धनिया और धमासा; इनके मन्दोष्ण क्वाथमें सञ्चल (काला नमक), सेंधा और घृत मिला कर पीनेसे वातज्वर नष्ट होता है ।

(७८०९) सुरसादिगणः

(यो. र. । अपस्मारा. ; धन्व. । बाल.)

सुरसा श्वेतसुरसा पाठा फञ्जी फणिज्जकः ।
सौगन्धिकं भूस्तृणकं राजिका श्वेतबर्बरी ॥
कट्फलं खरपुष्पा च कासमर्दश्च शल्लकी ।
विडङ्गमथ निर्गुण्डी कर्णिकार उदुम्बरः ॥

बला च काकमाची च तथा च विषमुष्टिका ।
कफक्रिमिहरः ख्यातः सुरसादिरयं गणः ॥
अष्टमूत्रे विपक्वं च तैलमभ्यञ्जने हितम् ॥

तुलसी, सफेद तुलसी, पाठा, भरंगी, फणिज्जक [छोटे पत्तेवाली तुलसी], लाल कमल, रोहिष तृण, राई, सफेद तुलसी, कायफल, मरुवा, कसौंदी, शल्लकी, बायबिड़ंग, संभालु, कनेर, गूलर, खरैंटी, मकोय और बकायनकी छाल । इनका क्वाथ कफ और कृमिको नष्ट करता है ।

इन ओषधियोंके कल्क और आठों मूत्रोंके साथ तैल पका कर उसकी मालिश करना बच्चोंके लिये हितकारी है ।

(७८१०) सुषव्यादिस्वरसः

(वृ. मा. । मसूरिका. ; भा. प्र. म. खं. २ । मसूरिका.)

सुषवीपत्रनिर्यासं हरिद्राचूर्णसंयुतम् ।
रोमान्तीज्वरविस्फोटमसूरीशान्तये पिबेत् ॥

करेलीके पत्तोंके रसमें हल्दीका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे ज्वर, विस्फोटक और मसूरिका शान्त होती है ।

(७८११) सूतिकादशमूलम्

(भै र. । स्त्री.)

शालपर्णी पृश्निपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरम् ।
दासी प्रसारणी विश्वा गुडूची मुस्तकं तथा ॥
निहन्ति सूतिकारोगं ज्वरं दाहसमन्वितम् ॥

शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, झिण्टीमूल, प्रसारणी, सोंठ, गिलोय और नागरमोथा; इनका क्वाथ ज्वर और दाहयुक्त सूतिका रोगको नष्ट करता है ।

(७८१२) सूरणपुटपाकः

(शा. सं. । म. खं. अ. १)

सौरणं कन्दमादाय पुटपाकेन पाचयेत् ।
सतैललवणस्तस्य रसश्चार्शो विकारनुत् ॥

सूरणकन्द (जिमिकन्द) को पुटपाक विधिसे पका कर (उस पर आधा अंगुल मोटा मिट्टीका लेप करके सुखा कर अंगारोंमें पकावें और जब वह लाल हो जाय तो उसे निकाल कर उसके ऊपरकी मिट्टी छुड़ा कर) कूटकर उसका रस निकालें ।

इसमें तेल और लवण (सेंधा नमक) मिला कर पीनेसे अर्शका नाश होता है ।

(७८१३) सौभाञ्जनकषायः

(वृ. मा. । विद्रध्य. ; वृ. नि. र. । विद्रध्य.)

सौभाञ्जनकनिर्यूहो हिङ्गुसैन्धवसंयुतः ।
अचिराद्विद्रधिं हन्ति प्रातः प्रातर्निषेवितः ॥

सहंजनेकी छालके क्वाथमें हींग और सेंधानमक मिला कर प्रातःकाल सेवन करनेसे विद्रधि शीघ्रही नष्ट हो जाती है ।

(७८१४) सौभाञ्जनस्वरसयोगः

(वृ. मा. । कर्ण.)

सौभाञ्जनस्य निर्यासस्तिलतैलेन संयुतः ।
व्यक्तोष्णः पूरणः कर्णे कर्णशूलोपशान्तये ॥

सहंजनेके (पत्तों या छालके) स्वरसमें तिलका तेल मिला कर उष्ण करके कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होता है ।

(७८१५) सौराष्ट्रिकादिक्वाथः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

सौराष्ट्रिकासीसमहौषधानि
दुरालभाजाजिमवालकं च ।
दार्वी यवानी ककुभं समङ्गा
क्वाथःससर्पिर्यकृदाशु हन्ति ॥

सोरठी माटी, कसीस, सोंठ, धमासा, जीरा, जीवशाक, दारुहल्दी, अजवायन, अर्जुन और मजीठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें घी मिला कर पीनेसे यकृद् रोग शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(७८१६) स्तन्यजननो दशको महाकषायः

(च. सं. । सूत्र. १ अ. ४)

वीरणशालिषष्टिकेक्षुवालिकादर्भकुशकाशगुन्द्रेत्कटकत्तृणमूलानीति दशेमानि स्तन्यजननानि भवन्ति ।

खस, शालिधान, षष्टिक (साठी), इक्षु बालिका (इक्षुभेद), दाभ, कुश, काश, गिलोय, इत्कट और रोहिष तृण; इनकी जड़ । ये दश ओषधियां स्तन्यजनक हैं ।

(७८१७) स्तन्यशोधनो दशको महाकषायः

(च. सं. । सूत्र. १ अ. ४)

पाठामहौषधसुरदारुमुस्तमूर्वागुडूचीवत्सकफलकिराततिक्तकटुरोहिणीसारिवा इति दशेमानि स्तन्यशोधनानि भवन्ति ।

पाठा, सोंठ, देवदारु, नागरमोथा, मूर्वा, गिलोय, इन्द्रजौ, चिरायता, कुटकी और सारिवा; ये दस ओषधियां स्तन्यशोधक कषाय-द्रव्योंमें मुख्य हैं ।

(इनका क्वाथ पीनेसे बच्चेकी मांका दूध दोष-रहित हो जाता है ।)

(७८१८) स्थलपद्मकल्कः

(वृ. मा. । शोथा.)

स्थलपद्ममयं कल्कं पयसाऽऽलोड्य पाययेत् ।
प्लीहामयहरं चैव सर्वाङ्गैकाङ्गशोथजित् ॥

स्थलपद्मके कल्कको दूधमें मिलाकर पीनेसे प्लीहा और सर्वांग तथा एकांग शोथका नाश होता है ।

(७८१९) स्थिरादिक्वाथः

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

स्थिरासामलकादारुश्रीवेष्टकमहौषधैः ।
भृतं शीतं जलं दद्यात्सितामधुविमिश्रितम् ॥
चातुर्थिके ज्वरे तीव्रे मन्दे चैवाथ पावके ।

शालपर्णी, आमला, देवदारु, चीरका काष्ठ और सोंठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसे ठंडा करके उसमें मिश्री और शहद मिला कर पीनेसे तीव्र चातुर्थिक ज्वर और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

(७८२०) स्थौल्यहरयोगः

(वै. म. र. । पटल १२)

अतिस्थूलशरीरो यस्तिलतैलं प्रगे पिबेत् ।
पिबेदसनसारस्य क्वाथं वा मधुसंयुतम् ॥

प्रातःकाल तिलका तेल या असना वृक्षके सारका क्वाथ शहद मिला कर पीनेसे शरीरकी स्थूलता नष्ट हो जाती है ।

(७८२१) स्नेहोपगदशको महाकषायः

(च. सं. । सू. अ. ४)

मृद्वीकामधुकमधुपर्णीमेदा विदारीकाकोलीक्षीरकाकोलीजीवकजीवन्तीशालपर्ण्य इति दशेमानि स्नेहोपयोगानि भवन्ति ।

मुनक्का, मुलैठी, गिलोय, मेदा, विदारीकन्द, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, जीवन्ती और शालपर्णी; ये दश ओषधियां स्नेहोपयोगी हैं ।

स्वल्पभार्ग्यादिक्वाथः

(भै. र. । ज्वरा.)

प्र. सं. ४७९१ भार्ग्यादि क्वाथः (६) देखिये ।

(७८२२) स्वेदोपगदशको महाकषायः

(च. सं. । सूत्र १ अ. ४)

शोभाञ्जनकैरण्डार्कवृश्चीरपुनर्नवायवतिलकुलत्थमाषबदराणीति दशेमानि स्वेदोपगानि भवन्ति ।

सहंजना, अरण्ड, अर्क (आक), सफेद पुनर्नवा, पुनर्नवा, जौ, तिल, कुलथी, उड़द और बेर; ये दश ओषधियां स्नेहोपयोगी हैं ।

इति सकारादिकषायप्रकरणम्

अथ सकारादिचूर्णप्रकरणम्

(७८२३) सदाभद्रादिचूर्णम्

(यो. र. । मूत्राघाता.)

सदाभद्राश्मभिन्मूलं शतावर्यश्च चित्रकम् ।
रोहिणी कोकिलाक्षौ च क्रौञ्चस्थूलं त्रिकण्टकम् ॥
श्लक्ष्णपिष्टाः सुरापीता मूत्राघातप्रबन्धनाः ॥

खम्भारीकी छाल, पाषाणभेद, शतावर, चीतामूल, कुटकी, तालमखाना, कमलबीज (कमलगट्टा), ईखकी जड़ और गोखरु; ये सब ओषधियां समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे मद्यके साथ पीनेसे मूत्राघात नष्ट होता है ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

(७८२४) सप्तसमयोगः

(वृ. मा. । कुष्ठा.)

तिलाज्यत्रिफलाक्षौद्रव्योषभल्लातशर्कराः ।
वृष्यः सप्तसमो मेध्यः कुष्ठहा कामचारिणः ॥

तिल, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), शुद्ध भिलावा और खांड; ये पांचों ओषधियां १-१ भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर उसमें १-१ भाग शहद और घी मिला लें ।

यह योग वृष्य, मेध्य और कुष्ठनाशक है ।

(७८२५) **समङ्गादिचूर्णम्** (१)

(यो. र. । अतिसारा. ; वृ. नि. र. ; व. से. । पित्तातिसा.)

समङ्गा धातकीपुष्पं बिल्वं सौवर्चलं बिडम् ।
सक्षौद्रं दाडिमं चैव पीतं तण्डुलवारिणा ॥
चूर्णं पित्तातिसारघ्नं शूलं चाऽऽशु च निर्हरेत् ।

लज्जालुकी जड़, धायके फूल, बेलगिरी, संचल (काला नमक), बिड लवण और अनारदाना समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिला कर चावलोंके धोवनके साथ सेवन करनेसे पित्तातिसार और शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(**मात्रा**—२–३ माशे ।)

(७८२६) **समङ्गादिचूर्णम्** (२)

(व. से. । अतिसा.)

समङ्गा धातकीपुष्पं केशरं नीलमुत्पलम् ।
तण्डुलोदकसंयुक्तं ज्वरातीसारनाशनम् ॥

लज्जालुकी जड़, धायके फूल, नागकेसर और नीलोत्पल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे चावलोंके धोवनके साथ सेवन करनेसे ज्वरातिसार नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—२–३ माषे ।)

(७८२७) **समङ्गादियोगचतुष्टयम्**

(व. से. । अतिसारा. ; भा. प्र. । म. खं. २ अतिसा.)

समङ्गाधातकीपुष्पं मञ्जिष्ठा लोध्रमेव च ।
शाल्मलीवेष्टकं लोध्रवृक्षदाडिमयोस्त्वचौ ॥
आम्रास्थिमध्यं लोध्रश्च बिल्वमध्यं प्रियङ्गु च ।
मधुकं शृङ्गवेरश्च दीर्घवृन्तत्वगेव च ॥
चत्वार एते योगाः स्युः पित्तातीसारनाशनाः ।
उक्ता य उपयोज्यास्तु सक्षौद्रास्तण्डुलाम्बुना ॥

(१) लज्जालुकी जड़, धायके फूल, मजीठ और लोध समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

(२) मोचरस, लोध और अनारके वृक्षकी छाल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

(३) आमकी गुठलीकी मज्जा (गिरी), लोध, बेलगिरी और फूलप्रियंगु समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

(४) मुलैठी, सोंठ और पीला लोध समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

ये चारों चूर्ण पित्तातिसारको नष्ट करते हैं ।

इन्हें शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

अनुपान—चावलोंका धोवन ।

(**मात्रा**—२–३ माशे ।)

(७८२८) **समशर्करचूर्णम्** (१)

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

विश्वकणोषणनागदलैश्च
त्वक्त्रुटिभिर्विहितं क्रमवृद्धम् ।
चूर्णमिदं समखण्डमरोच-
श्वासगुदोद्भवगुल्मवमीषु ॥

सोंठ १ भाग, पीपल २ भाग, काली मिर्च ३ भाग, नागकेसर ४ भाग, तेजपात ५ भाग, दालचीनी ६ भाग और छोटी इलायची ७ भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर उसमें उसके बराबर खांड मिला लें ।

यह चूर्ण अरुचि, श्वास, अर्श, गुल्म और वमनको नष्ट करता है।

(मात्रा—१-४ माशे।)

समशर्करचूर्णम् (२)

(वृ. मा. । कासा. ; च. द. । कासा. ११)

प्र. सं. ६६४३ " वृहच्छर्करासमचूर्णम् " देखिये।

समशर्करचूर्णम् (३)

(भै. र. ; यो. र. । अर्शो. ; वृ. मा. । अर्शो. ; च. द. । अर्शो. ५ ; यो. त. । त. २३ ; भा. प्र. म. खं. २ । अजीर्णा., अर्शो.)

प्र. सं. ७२९७ "शर्करासमं चूर्णम्" देखिये।

(७८२९) समसप्तकं चूर्णम्

(र. र. । अम्लपित्ता.)

जुङ्गामृताश्वेतपुनर्नवानां
शक्राशनस्यापि च मार्कवस्य ।
चूर्णं सिता क्षौद्रयुतं घृतेन
लीढा पयः पेयमतन्द्रितेन ॥
सामञ्च वायुं ग्रहणीं प्रदुष्टां
कासावसादं ज्वरमम्लपित्तम् ।
शोथं तथा पाण्डुमरोचकञ्च
प्रमेहमुग्रं परिणामशूलम् ॥
स्निग्धान्नभोक्तुः पुरुषस्य शीघ्रं
निहन्ति सर्वं कफपित्तरोगम् ।
रसायनो [illegible]मदश्च
दुर्णामहन्ता समसप्तकोयम् ॥

विधारा, गिलोय, सफेद पुनर्नवाकी जड़, इन्द्रजौ, भंगरा और खांड समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर उसमें १ भाग शहद मिला लें।

इसे घीमें मिला कर चाटनेसे आमवात, ग्रहणी विकार, कास, अवसाद, ज्वर, अम्लपित्त, शोथ, पाण्डु, अरुचि, उग्र प्रमेह, परिणाम शूल और कफ पित्तज रोग नष्ट होते हैं। यह चूर्ण रसायन, अग्निदीपक, बलकारक और अर्श नाशक है।

अनुपान—दूध।

पथ्यमें—स्निग्धाहार देना चाहिये।

(**मात्रा**—२-३ माशे।)

(७८३०) समुद्रफेनचूर्णम्

(यो. र. । कर्ण. ; वृ. यो. त । त. १२९)

समुद्रफेनचूर्णं तु न्यस्तं श्रवणसंश्रये ।
पूयस्रावं व्रणं सान्द्रं हन्ति ध्वान्तमिवांशुमान् ॥

समुद्रफेनके बारीक चूर्णको कानमें डालनेसे पीप बहना और कानका घाव नष्ट हो जाता है।

(रुईकी बत्तीको शहदमें भिगो कर उसे समुद्रफेनके चूर्णमें आलोडित करके कानमें रखनेसे अत्यन्त लाभ होता है।)

सरस्वतीचूर्णम् (महा)

प्र. सं. ५१२४ "महा सरस्वतीचूर्णम्" देखिये।

(७८३१) सर्जत्वक्चूर्णम्

(वृ. मा. । कर्ण. ; व. से. ; वृ. नि. र. । कर्ण.)

सर्जत्वक्चूर्णसंयुक्तः कर्पासीफलजो रसः ।
मधुना संयुतः साधुः कर्णस्रावे प्रशस्यते ॥

कपासके बीज (बिनौले) के रस (क्वाथ) में शाल वृक्षकी छालका चूर्ण मिलावें और फिर उसमें शहद मिला लें।

इसे कानमें डालनेसे कर्णस्राव बन्द हो जाता है ।

(कपासके बीजोंका रस १ तोला, चूर्ण १॥ माशा, शहद १ तोला ।)

(७८३२) **सर्जरसचूर्णम्**

(भा. प्र. । म. खं. २ संग्रहण्य. ; वृ. यो. त. । त. ६७)

श्वेतो वा यदि वा रक्तः सुपक्वो ग्रहणीगदः ।
गुडेनाधिकसर्जेन भक्षितेनाशु नश्यति ॥

रालके चूर्णको गुड़में मिला कर सेवन करनेसे रक्त रहित और रक्त सहित पक्व ग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है ।

(रालका चूर्ण १ माशा । गुड़ ६ माशे ।)

(७८३३) **सर्वकुष्ठाङ्कुशचूर्णम्**

(र. र. स. । उ. अ. २०)

मुशली बाकुची बीजं निर्गुण्डीमूलतुल्यकम् ।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षमिदं स्यात्सर्वकुष्ठनुत् ॥

मूसली, बावची और संभालुकी जड़ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार शहद और घीमें मिला कर सेवन करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

सर्वेश्वरचूर्णम्

प्र. सं. १७२५ "चित्रकादिचूर्णम्" देखिये ।

(७८३४) **सर्षपादिचूर्णम्**

(वृ. यो. त. । त. १२० ; यो. र. । कुष्ठा. ; वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

सर्षपकरञ्जरजनीदारुनिशादारुमञ्जिष्ठाः ।
त्रिफलाशटीपटीरश्वेतामूर्वाप्रियङ्गुकाश्चापि ॥
त्रिकटुत्रिगन्धकेसरलाक्षाश्चैषां कृतं रजःश्लक्ष्णम् ।
उद्धूलनेन रक्तजपित्तज वातोत्थितं वाऽपि ॥
निस्तोदभेदपिटिकं कुष्ठं स्फुटनं विनाशयति ॥

सरसों, करञ्ज, हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, कचूर, खैरसार, श्वेत सारिवा, मूर्वा, फूलप्रियंगु, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर और लाख समान भाग ले कर अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण बनावें ।

इसे स्फुटित कुष्ठके व्रणोंपर छिड़कनेसे तोद भेदादि पीड़ाएं शान्त होती हैं ।

(७८३५) **सामुद्राद्यं चूर्णम्** (१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३ ; यो. र. । उदरा. ; च. द. । उदरा. ३६ ; वृ. यो. त. । त. १०५ ; भै. र. ; व. से. ; वृ. मा. ; र. र. । उदरा. ; यो. चि. म. । अ. २)

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानि
क्षारो यवानीमजमोदभागः ।
सपिप्पलीचित्रकशृङ्गवेरं
हिङ्गु विडङ्गं च समानि कुर्यात् ॥
एतानि चूर्णानि घृतप्लुतानि
भुञ्जीत पूर्वं कवलं प्रशस्तम् ।

वातोदरं गुल्ममजीर्णभुक्तं
वातप्रकोपं ग्रहणीं च दुष्टाम् ॥
अर्शांसि दुष्टानि च पाण्डुरोगं
भगन्दरं चापि निहन्ति सद्यः ॥

सामुद्र लवण, सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, जवाखार, अजवायन, अजमोद, पीपल, चीतामूल,[1] सोंठ, हींग और बायबिडंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घृतमें मिलाकर भोजनके समय प्रथम ग्रासमें खानेसे वातोदर, गुल्म, अजीर्ण, वात प्रकोप, ग्रहणीविकार, अर्श, पाण्डु और भगन्दरका नाश होता है ।

(**मात्रा**—२ माशे ।)

सामुद्राद्यं चूर्णम् (२)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(७८३६) सामुद्राद्ययोगः

(ग. नि. । राजयक्ष्मा. ९)

सामुद्रकं च सञ्चूर्ण्य भानुदुग्धेन भावितम् ।
पाययेद्गव्यदुग्धेन मले मलविशुद्धये ॥

सामुद्र लवणको आकके दूधकी भावना दे कर रक्खें ।

इसे राजयक्ष्मामें मल शुद्धिके लिये गोदुग्धके साथ खिलाना चाहिये ।

(७८३७) सारस्वतचूर्णम् (बृहत्)

(भा. प्र. । म. ख. २ उन्मादा. ; व. से. । उन्मादा. ; ग. नि. चूर्णा. ३ ; वृ. यो. त. । तं. ८८ ; यो. चि म. । अ. २)

कुष्ठाश्वगन्धे लवणाजमोदे
द्वे जीरके त्रीणि कटूनि पाठा ।
माङ्गल्यपुष्पी च समान्यमूनि
सर्वैः समानाश्च वचां विचूर्ण्य ॥
ब्राह्मीरसेनाखिलमेव भाव्यं
वारत्रयं शुष्कमिदं हि चूर्णम् ।
अक्षप्रमाणं मधुना घृतेन
लिह्यान्नरः सप्तदिनानि चूर्णम् ॥
सारस्वतमिदं चूर्णं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।
हिताय सर्वलोकानां दुर्मेधानाम् विचेतसाम् ॥
एतस्याभ्यासतः पुंसां बुद्धिर्मेधा धृतिः स्मृतिः ।
सम्पत्तिः कविताशक्तिः प्रवर्द्धेतोत्तरोत्तरम् ॥

कूठ, असगन्ध, सेंधा नमक, अजमोद, सफेद और काला जीरा, सोंठ मिर्च, पीपल, पाठा और शंखपुष्पी १—१ भाग तथा वच सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें और ब्राह्मीके रसकी ३ भावना दे कर सुखा लें ।

मात्रा—१। तोला । (**व्यवहारिक मात्रा**-३ माशे ।)

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करनेसे बुद्धि, मेधा, धृति, स्मृति और कविता शक्तिकी वृद्धि होती है ।

(७८३८) सिताञ्जनादिचूर्णम्

(वृ. मा. । अतिसारा.)

सिताञ्जनकणालाजमधुकं नीलमुत्पलम् ।
पित्तज्वरातिसारघ्नं मलीढं मधुना सह ॥

सफेद सुरमा, पीपल, धानकी खील, मुलैठी और नीलोत्पल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे पित्तज्वर और अतिसारका नाश होता है ।

(**मात्रा**—३ माशे ।)

[1] कुछ ग्रन्थोंमें चित्रकके स्थानपर हरीतकी है ।

(७८३९) **सितासितादिचूर्णम्**

(वै. म. र. । पटल ५)

सितासिताविश्वभवौ चूर्णौ पथ्यारजः समौ ।
गुडावलीढौ गुदजान् हतः श्लेष्ममरुद्भवान् ॥

बाबची, सोंठ और हर्र समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे गुड़में मिला कर सेवन करनेसे वातकफज अर्शका नाश होता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(७८४०) **सितोपलादिचूर्णम्**

(सितोपलादिलेहः)

(शा. सं. । खं २ अ. ६ ; ग. नि. । चूर्णा. ३; यो. र. । ज्वरा., क्षया. ; भै. र. ; वृ. मा. । राजयक्ष्मा. ; वृ. नि. र. । विषम ज्वरा. ; यो. त. । त. २० , २७ ; वृ. यो. त. । त. ५९, ६७ ; च. सं. चि. अ. ८)

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशरोचना ।
पिप्पली स्याच्चतुष्कर्षा स्यादेला च द्विकार्षिकी
एकः कर्षस्त्वचः कार्यश्चूर्णयेत्सर्वमेकतः ।
सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥
श्वासकासक्षयहरं हस्तपादाङ्गदाहजित् ।
मन्दाग्निं सुप्तजिह्वत्वं पार्श्वशूलमरोचकम् ॥
ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तं पित्तमाशु व्यपोहति ॥

मिश्री १६ भाग, बंसलोचन ८ भाग, पीपल ४ भाग, इलायची २ भाग और दालचीनी १ भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीमें मिला कर सेवन करनेसे श्वास, खांसी, क्षय, हाथ पैरों और शरीरकी दाह, अग्निमांद्य, जिह्वाकी सुप्तता, पार्श्व शूल, अरुचि, ज्वर और उर्ध्वगत रक्त पित्तका शीघ्र ही नाश होता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(७८४१) **सिन्ध्वादिचूर्णम्**

(यो. र. । प्लीहा. ; वृ. नि. र. । उदरा.)

सिन्धुमगधाग्निचूर्णं शिग्रुशालिजाजिकासमं निपीतम् ।
प्रबलमपि योगराजः प्लीहानं नाशयत्याशु ॥

सेंधा नमक, पीपल, चीतामूल, सहंजनेकी छाल, काला जीरा और सफेद जीरा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण प्रबल प्लीहा वृद्धिको भी शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(मात्रा–२–३ माशे । अनुपान–उष्ण जल)

(७८४२) **सिंहचूर्णम्** (१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

सौवर्चलं सैन्धवं च सामुद्रं मरिचं तथा ।
दाडिमसारकं चाम्लवेतसं समभागकम् ॥
नागरं त्रिगुणं चैव जीरकं च चतुर्गुणम् ।
सिंहणं चूर्णमेतच्च मन्दाग्निविनिवारणम् ॥

सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, सामुद्र लवण, काली मिर्च, अनारका सत और अम्लबेत १–१ भाग, सोंठ ३ भाग और जीरा ४ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अग्निमांद्यको नष्ट करता है ।

(मात्रा— २ माशे । अनुपान उष्ण जल ।)

(७८४३) **सिंहचूर्णम् (२)**

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

अर्धं हिङ्गुपलं पलं सुविमलं सौवर्चलं द्वे पले
प्रत्येकं मरिचाम्लदीप्यलवणाम्भोराशिजाता-
न् क्षिपेत् ।
शुण्ठ्याश्च त्रिपलं चतुष्पलमपि स्याद्दाडिमं
जीरकम् ।
श्रीमत्सिंहणभूमिपालकथितं सेव्यं सदेदं बुधैः ॥

हींग २॥ तोले, संचल (काला नमक) ५ तोले, तथा मिर्च, अम्लवेत, अजवायन और समुद्र लवण १०–१० तोले एवं सोंठ १५ तोले, अनारदाना २० तोले और जीरा २० तोले ले कर चूर्ण बनावें ।

श्रीमान् सिंहणराज–कथित यह चूर्ण अग्निमांद्यको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**-२ माशे । **अनुपान**–गर्म पानी)

(७८४४) **सिंहनपुरीचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

एकांशो रुचकादुभौ मरिचतः
शुण्ठ्यास्त्रयो जीरतश्चत्वारोर्द्धयुतः।
समुद्रलवणो भागस्तथा सैन्धवः
चूर्णं सिंहनभूभुजा हि कथितं ॥
तक्रेण संसेवितं गुल्मानाहविषूचि–
कागुदरुजः श्वासानिलान्नाशयेत् ।

काला नमक (संचल) १ भाग, मिर्च २ भाग सोंठ ३ भाग, जीरा ४॥ भाग तथा समुद्र लवण और सेंधा नमक १–१ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

श्री सिंहन राजा–कृत यह चूर्ण गुल्म, अफारा, विषूचिका, अर्श, श्वास और वायुको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—२ माशे ।) **अनुपान**–तक्र ।

(७८४५) **सिंहराजचूर्णम्**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ६ ; वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

एकः प्रदेयो रुचकस्य भागो
ह्यर्धोजमोदस्य च सैन्धवस्य ।
शुण्ठ्यास्त्रयो द्वौ मरिचस्य भागौ
चूर्णे चतुर्थं सितजीरकस्य ॥

तक्रेण पानात्कफवातरोगां–
स्तद्भोजनान्ते खलु दीपनाय ।
श्रीसिंहराज्ञा कथितं तु चूर्णं
प्लीहोदराजीर्णविसूचिकायाम् ॥

संचल (काला नमक) १ भाग, अजमोद आधा भाग, सेंधा नमक आधा भाग, सोंठ ३ भाग, काली मिर्च २ भाग तथा सफेद जीरा ४ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे भोजनके अन्तमें तक्रके साथ पीना चाहिये ।

श्री सिंहराज–कथित यह चूर्ण अग्निदीपक, तथा प्लीहा, उदर, अजीर्ण और विसूचिका नाशक है ।

(**मात्रा**—२–३ माशे ।)

(७८४६) सुदर्शनचूर्णम् (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. ६ ; यो. त. । त. २० ; यो. चि. म. । चूर्णा. २ ; वृ. नि. र. । ज्वरा. ; यो. र. । ज्वरा.)

त्रिफलारजनीयुग्मं कण्टकारियुगं सटी ।
त्रिकटु ग्रन्थिकं मूर्वा गुडूची धन्वयासकः ॥
कटुका पर्पटी मुस्तं त्रायमाणा च वालकम् ।
निम्बः पुष्करमूलं च मधुयष्टी च वत्सकम् ॥
यवानीन्द्रयवो भार्गी शिग्रुबीजं सुराष्ट्रजा ।
वचात्वक्पद्मकोशीरचन्दनातिविषाबलाः ॥
शालिपर्णी पृष्ठिपर्णी विडङ्गं तगरं तथा ।
चित्रको देवकाष्ठं च चव्यं पत्रं पटोलजम् ॥
जीवकर्षभकौ चैव लवङ्गं वंशलोचना ।
पुण्डरीकं च काकोली पत्रकं जातिपत्रकम् ॥
तालीसपत्रं च तथा समभागानि चूर्णयेत् ।
सर्वचूर्णस्य चार्धांशं कैरातं प्रक्षिपेत्सुधीः ॥
एतत्सुदर्शनं नाम चूर्णं दोषत्रयापहम् ।
ज्वरांश्च निखिलान् हन्यान्नात्र कार्या विचारणा॥
पृथक्द्वन्द्वागन्तुजांश्च धातुस्थान् विषमज्वरान् ।
सन्निपातोद्भवांश्चापि मानसानपि नाशयेत् ॥
शीतज्वरैकाहिकादीन् मोहं तन्द्रां भ्रमं तृषाम् ।
श्वासं कासं पाण्डुतां च हृद्रोगं हन्ति कामलाम् ॥
त्रिकपृष्ठकटीजानुपार्श्वशूलनिवारणम् ।
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वज्वरनिवृत्तये ॥
सुदर्शनं यथा चक्रं दानवानां विनाशनम् ।
तद्वज्ज्वराणां सर्वेषामिदं चूर्णं विनाशनम् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, दारुहल्दी, कटेली, बड़ी कटेली, कचूर, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, मूर्वा, गिलोय, धमासा, कुटकी, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, त्रायमाना, सुगन्धबाला, नीमकी छाल, पोखरमूल, मुलैठी, कुड़ेकी छाल, अजवायन, इन्द्रजौ, भरंगी, सहंजनेके बीज, सोरठी मिट्टी, बच, दालचीनी, पद्माक, खस, चन्दन, अतीस, खरैटीकी जड़, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, बायबिड़ंग, तगर, चीतामूल, देवदारु, चव, पटोलपत्र, जीवक, ऋषभक, लौंग, वंशलोचन, कमल, काकोली, तेजपात; चमेलीके पत्ते और तालीस पत्र १-१ भाग तथा चिरायता सबसे आधा ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण निस्सन्देह समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है। इसके सेवनसे एकदोषज, द्वन्द्वज, त्रिदोषज, आगन्तुज और विषम ज्वर एवं सन्निपात ज्वर, मानस ज्वर, एकाहिक आदि शीत ज्वर (मेलेरिया), मोह, तन्द्रा, भ्रम, तृषा, श्वास, कास, पाण्डु, कामला, हृद्रोग, त्रिकशूल, कटिशूल, पार्श्वशूल और जानु शूलादि रोग नष्ट होते हैं।

अनुपान—शीतल जल ।

(**मात्रा**—३-४ माशे ।)

जिस प्रकार सुदर्शन चक्र दैत्योंको नष्ट कर देता है उसी प्रकार यह चूर्ण समस्त ज्वरोंका विध्वंस करता है ।

(७८४७) सुदर्शनचूर्णम् (२)

(भै. र. । ज्वरा. ; र. र. । ज्वरा.)

कालीयकन्तु रजनी देवदारु वचा घनम् ।
अभया धन्वयासश्च भृङ्गी क्षुद्रा महौषधम् ॥
त्रायन्ती पर्पटं निम्बं ग्रन्थिकं वालकं शटी ।
पौष्करं मागधी मूर्वा कुटजं मधुयष्टिका ॥

शिग्रूद्भवं सेन्द्रयवं वरी दार्वी कुचन्दनम् ।
पद्मकं सरलोशीरं त्वचं सौराष्ट्रिका स्थिरा ॥
यमान्यतिविषा बिल्वं मरिचं गन्धपत्रकम् ।
धात्री गुडूची कटुकं सचित्रकपटोलकम् ॥
कलसी चैव सर्वाणि समभागानि कारयेत् ।
सर्वद्रव्यस्य चार्द्धन्तु कैरातं सम्यकल्पयेत् ॥
एतत् सुदर्शनं नाम ज्वरान् हन्ति न संशयः ।
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान् ॥
प्राकृतं वैकृतश्चापि सौम्यं तीक्ष्णमथापि वा ।
अन्तर्गतं बहिःस्थश्च निरामं साममेव च ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
नानादोषोद्भवश्चैव वारिदोषभवन्तथा ॥
विरुद्धभेषजभवं ज्वरमाशु व्यपोहति ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥
यथा सुदर्शनं चक्रं दानवानां निषूदनम् ।
तथा ज्वराणां सर्वेषामिदमेव निगद्यते ॥

दारुहल्दी, हल्दी, देवदारु, बच, नागरमोथा, हर्र, धमासा, काकड़ासिंगी, कटेली, सोंठ, त्रायमाणा, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, पीपलामूल, सुगन्धबाला, कचूर, पोखरमूल, पीपल, मूर्वा, कुड़ेकी छाल, मुलैठी, सहंजनेकी छाल, इन्द्रजौ, शतावर, दारुहल्दी, पतङ्ग, पद्माक, चीरका काष्ठ, खस, दालचीनी, सोरठी माटी, शालपर्णी, अजवायन, अतीस, बेलकी छाल, काली मिर्च, तेजपात, आमला, गिलोय, कुटकी, चीतामूल, पटोल और पृश्निपर्णी १-१ भाग तथा चिरायता सबसे आधा ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण पृथक् पृथक् तथा समस्त दोषोंसे उत्पन्न ज्वर, विषम ज्वर, प्राकृत् ज्वर, वैकृत् ज्वर, मृदु ज्वर, तीव्र ज्वर, अन्तर्गत ज्वर, बहिःस्थ ज्वर, निराम और साम ज्वर, नाना देशोंके जलवायुके विकारसे उत्पन्न ज्वर, विरुद्धभेषज जनित ज्वर, प्लीहा, यकृत् और गुल्मको नष्ट करता है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(७८४८) सुदर्शनचूर्णम् (३)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

तालीसत्रिफलात्रुटीत्रिकटुकं त्वक्त्रायमाणात्रिवृत्
मूर्वाग्रन्थिनिशायुगं शठिबलारुकण्टकारीयुगम् ।
मुस्तापर्पटनिम्बपुष्करजटाभार्गीयवानी हिमं
चव्यं चित्रकपुण्डरीकतगरं सेव्यं विडङ्गं वचा ॥
यासो वत्सककुण्डलीन्द्रयवकं देवद्रुमं वाळकं
बीजं शिग्रुभवं पटोलकटुकापद्माह्वपत्रं विषा ।
काकोलीमधुकुङ्कुमं च सतवक्षीरीलवङ्गं पृथक्
पर्णीशैलजशालिपर्णिसहितं शामन्तकीपुष्पकम् ॥

सर्वं समं चूर्णतदर्धभागं
कैरातकं श्रेष्ठतमं हि चूर्णम् ।
सुदर्शनं नाम मरुद्बलासा-
मयोद्भवान्हन्ति पृथक्कृतान्ज्वरान् ॥
संसर्गजान्सकलजान्विषमान्निहन्या-
द्धातूद्भवान्विषकृतानभिघातजांश्च ।
सामान्समानसकृतानतिदाहयुक्ता-
ञ्छीतांस्तृतीयकचतुर्थविपर्ययांश्च ॥
ऐकाहिकान्द्व्याहिकसन्निपाता-
न्नानाविधान्पाक्षिकमासजातान् ।
तृड्दाहमोहभ्रमदैन्यतन्द्रा-
सश्वासकासारुचिपाण्डुरोगान् ॥

हलीमकं कामलपार्श्वशूलं
पृष्ठोद्भवं जानुभवं तथैव ।
त्रिकग्रहं वातविकारजातं
विनाशयत्येव शिरोग्रहं च ॥
नानाप्रदेशोद्भववारिदोषान्
दूषी विषादिप्रभवान्विकारान् ।
स्त्रीणां रजोदोषसमुद्भवांश्च
विनाशयेदुष्णजलेन पीतम् ॥
शीताम्बुना पित्तभवान्विकारा-
न्नानामुनीन्द्रैर्गदितं जगद्धितम् ।
सुदर्शनं दानवनाशनं यथा
सुदर्शनं रोगविनाशनं तथा ॥

तालीस पत्र, हर्र, बहेड़ा, आमला, छोटी इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, त्रायमाणा, निसोत, मूर्वा, पीपलामूल, हल्दी, दारुहल्दी, कचूर, खरैटी, कूठ, छोटी और बड़ी कटेली, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, पोखरमूल, भरंगी, अजवायन, चन्दन, चव, चीतामूल, कमल, तगर, खस, वायबिड़ंग, बच, धमासा, कुड़ेकी छाल, गिलोय, इन्द्रजौ, देवदारु, सुगन्धबाला, संहजनेके बीज, पटोल, कुटकी, पद्माख, तेजपात, अतीस, काकोली, मुलहठी, केसर, बंसलोचन, लौंग, पृष्ठपर्णी, छारछरीला, शालपर्णी, शामन्तकी पुष्प (?) १-१ भाग तथा चिरायता सबसे आधा ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण वायु और कफके रोगोंको नष्ट करता है । एकदोषज; द्विदोषज और सन्निपातज-ज्वर, विषम ज्वर, धातुगत ज्वर, विषजनित ज्वर अभिघातज ज्वर, सामज्वर, मानसज्वर, दाहज्वर, शीतज्वर, तृतीयक, चातुर्थिक तथा इनके विपर्यय ज्वर, एकाहिक और द्व्याहिक ज्वर, सन्निपातज ज्वर, पाक्षिक और मासिक ज्वर, तृषा, दाह, मोह, भ्रम, दैन्य, तन्द्रा, श्वास, कास, अरुचि, पाण्डु, हलीमक, कामला, पार्श्वशूल, पृष्ठशूल, जानुशूल, त्रिकग्रह, वातव्याधि, शिरोग्रह, नाना देशोंके जलदोषसे उत्पन्न ज्वर, दूषी विषजनित ज्वर एवं रजोदोषसे उत्पन्न ज्वरादि रोग इसके सेवनसे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

अनुपान—उष्ण जल ।

इसे पित्तज रोगोंमें शीतल जलके साथ देना चाहिये ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

सुदर्शनचूर्णम् (४) (लघु)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

प्र. सं. ६२१७ "लघु सुदर्शनचूर्णम्" देखिये ।

(७८४९) सुरसादियोगः (१)

(व. से. । ज्वरा.)

सुरसार्जकनिर्यासः समधुत्र्योषसैन्धवः ।
महाश्लेष्मानिलोद्रेकसञ्ज्ञानाशविमोक्षणः ॥

तुलसी और बनतुलसीके रसमें शहद और त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल), तथा सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर सेवन करानेसे सन्निपात ज्वरकी बेहोशी तथा अत्यन्त कफवृद्धि और वायुके प्रकोपका नाश होता है ।

(७८५०) सुरसादियोगः (२)

(वै. म. र. । पट. ११)

तुषाम्भसा तालशिफां सशुण्ठीं
नाभौ कवोष्णां प्रदिहेत् कृमिघ्नाम् ।
प्रातः पिबेद्वा सुरसस्य मूलं
सनागरं कोष्णजलेन वापि ॥

तालकी जड़ और सोंठको कांजीमें पीस कर मन्दोष्ण करके नाभिपर लेप करनेसे कृमि नष्ट होते हैं। अथवा तुलसीकी जड़ और सोंठको मन्दोष्ण जलमें पीस कर प्रातःकाल पीनेसे भी कृमि नष्ट हो जाते हैं।

(७८५१) सुरसादियोगः (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५)

सुरसा सुरदारु मागधी
बिडकम्पिल्लविडङ्गदन्तिनी ।
त्रिवृता त्रिफला रसोनकं
कृमिहृद्धै सलिलेन सेवितम् ॥

तुलसीकी जड़, देवदारु, पीपल, बिड लवण, कमीला, बायबिडंग, दन्तीमूल, निसोत, हर्र, बहेड़ा, आमला और लहसन समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे पानीके साथ सेवन करनेसे कृमि रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(७८५२) सुरसाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

सुरसा चोरकं शृङ्गी सूक्ष्मैला पुष्करं सठी ।
पिप्पलीत्वग्बिडक्षारशुण्ठी हिङ्ग्वम्लवेतसम् ॥
भार्गीतामलकी जीवा वृक्षाम्लश्चेति चूर्णितम् ।
हिक्काश्वासविबन्धार्शःकासहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥

तुलसीकी जड़, चोरपुष्पी, काकड़ासिंगी, छोटी इलायची, पोखरमूल, कचूर, पीपल, दालचीनी, बिड लवण, जवाखार, सोंठ, हींग, अमलबेत, भरंगी, भुई आमला, जीवक और तिन्तड़ीक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे हिचकी, श्वास, विबन्ध, अर्श, कास और पार्श्व–शूलका नाश होता है।

(मात्रा—१॥–२ माशे। अनुपान शहद।)

(७८५३) सुवर्चलादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । अतिसारा.)

सुवर्चलं वचा हिङ्गु हैमज्योति विषा समम् ।
वातातीसारहृत्प्रोक्तं सकटुत्रयमम्भसा ॥

संचल (काला नमक), बच, हींग, चिरायता, चीतामूल, अतीस, सोंठ, मिर्च और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे जलके साथ सेवन करनेसे वातातिसार नष्ट होता है।

(मात्रा—१॥–२ माशा ।)

(७८५४) सुवर्चलादियोगः (१)

(ग. नि. । शूला. २३ ; वृ. नि. र. । शूला.)

सुवर्चलाजीरकमम्लवेतसं
समं त्रयं द्व्यंशमरीचचूर्णकम् ।
सुपक्वपूरस्य रसेन भावितं
जलेन पीतं खलु वातशूलहृत् ॥

काला नमक (संचल), जीरा और अम्लबेत १–१ भाग तथा काली मिर्चका चूर्ण २ भाग ले

कर चूर्ण बनावें और उसे पक्के जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके सुखा लें।

इसे जलके साथ पीनेसे वातज शूल नष्ट होता है।

(मात्रा—१॥-२ माशे।)

(७८५५) **सुवर्चलादियोगः** (२)

(ग. नि. । शूला. २३ ; वृ. नि. र. । शूला.)

सुवर्चलाभया हिङ्गुरजमोदा च सैन्धवम् ।
स्वर्जीयवोद्भवः क्षारः पयो भुक्तं च शूलहृत् ॥

संचल (काला नमक), हर्र, हींग, अजमोद, सेंधा नमक, सज्जीखार और जवाखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे पानीके साथ सेवन करनेसे शूल नष्ट होता है।

(मात्रा—१-१॥ माशा।)

(७८५६) **सुवर्चिकाद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । कृम्य. ६ ; यो. र. । कृम्य.)

सुवर्चिका रामठपत्रिकाह्वा
विडङ्गबाह्लीककणाग्निविश्वाः ।
यवानिका ग्रन्थिकभद्रमुस्ता-
स्तक्रेणचूर्णं कृमिकोटिहारि ॥

संचल (काला नमक), हींग, जावत्री, बायबिडंग, केसर, पीपल, चीता, सोंठ, अजवायन, पीपलामूल और नागरमोथा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे कृमि रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—१-१॥ माशा।)

(७८५७) **सुवर्णसमकं चूर्णम्**

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

पञ्चकोलं समरिचं द्वौ क्षारौ त्रिफला वचा ।
यवानी कुञ्चिका हिङ्गु तिन्तिडीकाम्लवेतसौ ॥
धान्याजगन्धा त्रायन्तीदाडिमं सयवाग्रजम् ।
कटुका कौटजं बीजं सैन्धवं च समान् पृथक् ॥
त्रिवृता सप्तला दन्ती कम्पिल्लो नीलिकाऽभया।
स्वर्णक्षीरी च द्विगुणा सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥
उष्ट्रमूत्रे तथा गव्ये सप्ताहं परिभावयेत् ।
द्विगुणां शर्करां चात्र दापयेत्तत्पिबेत्त्र्यहम् ॥
गोमूत्रत्रिफलाक्षाररसैर्मद्यैः सुखाम्बुना ।
सुवर्णसमकं चूर्णं सर्वरोगार्तिभेषजम् ॥
उदरप्लीहशमनं गुल्महृद्रोगनाशनम् ।
वाताष्ठीलामथानाहं श्वयथुं सर्वगात्रजम् ॥
हलीमकामलापाण्डुप्रमेहज्वरनाशनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, जवाखार, सज्जीखार, हर्र, बहेड़ा, आमला, बच, अजवायन, मेथी, हींग, तिन्तड़ीक, अम्लबेत, धनिया, अजमोद, त्रायमाना, अनारदाना, जवाखार, कुटकी, इन्द्रजौ और सेंधा नमक १-१ भाग तथा निसोत, सतला, दन्तीमूल, कमीला, नीलिका, हर्र और स्वर्णक्षीरी (सत्यानाशी) की जड़ २-२ भाग ले कर चूर्ण बनावें। तदनन्तर उसे सात सात दिन ऊंटनी और गायके मूत्रकी भावना दे कर सुखा लें। इसके पश्चात् उसमें उससे दो गुनी खांड मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे गोमूत्र, त्रिफलाके काथ, क्षारजल, मांसरस, मद्य अथवा उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे उदर रोग, प्लीहा, गुल्म, हृद्रोग, वाताष्ठीला, अफारा,

सर्व शरीरगत शोथ, हलीमक, कामला, पाण्डु, प्रमेह और ज्वरका नाश होता है।

(मात्रा—२ माशे ।)

(७८५८) सूक्ष्मैलादिचूर्णम् (१)

(वृ. नि. र. । हृद्रोगा.)

सूक्ष्मैला मागधीमूलं प्रलीढं सर्पिषा सह ।
नाशयेदाशु हृद्रोगं कफजं सपरिग्रहम् ॥

छोटी इलायची और पीपलामूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे कफज हृद्रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

सूक्ष्मैलादिचूर्णम् (२)

(वृ. मा. । अरोचका. ; ग. नि. । चूर्णा. ३; व. से. । अरोचका.)

प्र. सं. ५५९ "एलादि चूर्णम्" देखिये ।

पाठान्तरके अनुसार मुनक्काका अभाव तथा असगन्धके स्थानमें बनतुलसी और कौंचके स्थानमें कैथ होना चाहिये ।

(७८५९) सूरणादिक्षारः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

कृत्वा तु गर्भविवरं पृथुसूरणस्य
सस्नुक्पयोलशुनहिङ्गुकटुत्रिकाग्निः ।
सिन्धूद्भवादिलवणैः परिपूर्य दग्धं
खादन् दहत्युपचितानपि सर्वगुल्मान् ॥

सूरण (जिमीकन्द) की मोटीसी एक गांठ ले कर उसमें टांकी लगाकर अन्दर छेद करें और भीतरसे थोड़ासा गूदा निकाल कर उस खाली स्थानमें १-१ भाग सेहुंड (थूहर) का दूध, लहसन, हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, सेंधा नमक, काला नमक (संचल), विड लवण, सामुद्र लवण और उद्भिद लवणका चूर्ण भरके उसके मुखको उपरोक्त कटी हुई टांकीसे बन्द कर दें तथा (उसे हांडीमें बन्द करके) फूंक लें और स्वांगशीतल होने पर निकाल कर पीस लें ।

इसे सेवन करनेसे प्रवृद्ध गुल्म नष्ट होता है।

(मात्रा—६ माशे । अनुपान—उष्ण जल ।)

(७८६०) सूरणादिचूर्णम्

(रा. मा. । अर्शो. १८)

अर्शांसि नाशयति सूरणचूर्णमिश्रं
तक्रं नृणां कुटजवल्कयुतं निपीतम् ॥

सूरण (जिमीकन्द) और कुड़ेकी छाल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे तक्रमें मिला कर पीनेसे अर्शका नाश होता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(७८६१) सूरणादियोगः (१)

(र. र. रसा. । उप. ७)

सूरणं तुलसीमूलं ताम्बूलैः सह भक्षयेत् ।
न मुञ्चति नरो वीर्यं कर्षेकेन पृथक्पृथक् ॥

सूरण (जिमिकन्द) या तुलसीकी जड़का चूर्ण पानमें रख कर खानेसे वीर्यस्तम्भन होता है ।

मात्रा—१। तोला ।

(व्यवहारिक मात्रा—३ माशे ।)

(७८६२) सूरणादियोगः (२)

(वै. म. र. । पटल. ५)

मासमेकमनन्नाशी सूरणं भक्षयेत्सुखम् ।
तक्रानुपानमाश्वर्शो निर्मूलनोत्सुकः ॥

१ मास तक अन्न बन्द करके केवल तक्रके साथ सूरण (जिमिकन्द) खानेसे अर्श निर्मूल हो जाता है ।

(७८६३) सूरणादियोगः (३)

(शा. सं. । स्था. ३ अ. ११ ; ग. नि. । अर्शो. ४ ; वृ. मा. । अर्शो.)

सूरणकन्दकमर्कदलैस्तु
वेष्टितमेव हि कर्दमलिप्तम् ।
भ्रष्टमतोऽनलवर्णसमानं
तं च ससैन्धवतैलविमिश्रम् ॥
भक्षति चार्शविनाशनहेतो-
र्वातविकाररहितोऽपि नरस्तु ।

सूरणकन्द (जिमीकन्द) को आकके पत्तोंमें लपेट कर ऊपरसे मिट्टीका (१ अंगुल मोटा) लेप करके कण्डोंकी अग्निमें पकावें । जब ऊपरवाली मिट्टी आगके समान लाल हो जाय तो ठंडा करके सूरणको निकाल कर पीस लें ।

इसमें (स्वाद योग्य) सेंधा नमक मिलाकर तिलके तेलके साथ सेवन करनेसे अर्श और वात-विकारोंका नाश होता है ।

(मात्रा—६ माशेसे १ तोला तक ।)

(७८६४) सूरणाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । परि. चूर्णा. ३)

सूरणं दहनं क्षारो मरिचं नागरं क्रमात् ।
अर्धार्धिकमिदं चूर्णं क्षाराम्लार्द्रकभावितम् ॥
हन्यादर्शांसि शूलं च गुल्मप्लीहोदरकृमीन् ।
भुक्तं भुक्तं पचत्याशु शान्तमग्निं च दीपयेत् ॥

सोंठ १ भाग, काली मिर्च २ भाग, जवाखार ४ भाग, चीतामूल ८ भाग और सूरण (जिमीकन्द) १६ भाग ले कर चूर्ण बनावें । इसे जवाखारके पानी, नीबूके रस और अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर सुखा लें ।

इसके सेवनसे अर्श, शूल, गुल्म, प्लीहा और कृमि रोगका नाश होता एवं अग्नि दीप्त हो कर बार बार भूख लगती है ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

(७८६५) सैन्धवादिचूर्णम् (१)

(वै. म. र. । पटल ८)

सैन्धवं स्नुहिमध्यस्थं दग्धमङ्गारवह्निना ।
सलिलेन कवोष्णेन पिबेच्छूलनिपीडितः ॥

सेंधा नमकके चूर्णको स्नुही (सेंड) के डंडेके भीतर भर कर उस पर कपरमिट्टी करके अंगारोंकी अग्निमें जलावें और ठंडा हो जाने पर उसे (थूहर-सेंड समेत) पीस लें।

इसे मन्दोष्ण जलसे पीनेसे शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१-१॥ माषा ।)

(७८६६) सैन्धवादिचूर्णम् (२)

(वृ. मा. । बालरोगा.)

घृतेन सिन्धुविश्वैलाहिङ्गुभार्ङ्गीरजो लिहन् ।
आनाहं वातिकं शूलं जयेत्तोयेन वा शिशुः ॥

सेंधा नमक, सोंठ, इलायची, हींग और भरंगी समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घृतमें मिला कर बालकको चटानेसे अफारा और वातज शूल शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—४ रत्तीसे १ माशा तक ।)

(७८६७) **सैन्धवादिचूर्णम्** (३)

(च. सं. । चि. अ. १६ ; वा. भ. । चि. अ. ३)

पलिकं सैन्धवं शुण्ठी द्वे च सौवर्चलात्पले ।
कुडवांशानि वृक्षाम्लं दाडिमं पत्रसर्जकात् ॥
एकैकं मरिचाजाज्योर्धान्यकाद्वे चतुर्थिके ।
शर्करायाः पलान्यत्र दश द्वे च प्रदापयेत् ॥
कृत्वा चूर्णमतो मात्रामन्नपाने प्रयोजयेत् ।
रोचनं दीपनं बल्यं पार्श्वार्तिश्वासकासनुत् ॥

सेंधा नमक ५ तोले, सोंठ ५ तोले, संचल (काला नमक) १० तोले, तिन्तड़ीक २० तोले तथा अनारदाना, और असनावृक्षके पत्ते ५-५ तोले, मिर्च, जीरा और धनिया १०-१० तोले एवं खांड ६० तोले ले कर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण रोचक, दीपक, बल्य, एवं पसलीकी पीड़ा, श्वास और कास नाशक है।

इसे अन्नादिके साथ खिला सकते हैं ।

(मात्रा—६ माशे)

(७८६८) **सैन्धवादिचूर्णम्** (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

सिन्धूत्थहिङ्गुरुचकं यवानी
पथ्या यवक्षारसमं विचूर्णम् ।
देयं सुखोष्णेन निहन्तिशूलं
वातात्मकं चाप्यचिरेण शूलम् ॥

सेंधा नमक, हींग, संचल (काला नमक), अजवायन, हर्र और जवाखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे वातज शूल तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(७८६९) **सैन्धवादिचूर्णम्** (५)

(रा. मा. । अर्शो. १८)

यः सैन्धवं मागधिकां शिवां च
सञ्चूर्ण्य वह्निं च समानभागम् ।
प्रातः पिबत्युष्णजलेन तस्य
क्षुत्क्रोडमांसैरपि नैति शान्तिम् ॥

सेंधा नमक, पीपल, आमला और चीता समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे प्रातःकाल उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे जठराग्नि अत्यन्त तीक्ष्ण हो जाती है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

सैन्धवादिचूर्णम् (६)

(यो. र. । अजीर्णा. ; वृ. मा. । अजीर्णा. ; र. र. । अग्निमांद्या. ; ग. नि. । अजीर्णा. ५) प्र. सं. ६२१६ "लघु वैश्वानरचूर्णम्" देखिये ।

(७८७०) **सैन्धवादिप्रतिसारणम्**

(ग. नि. । अर्शो. ४)

प्रतिसारणेन सैन्धवनिशायुगाङ्गारधूमकासीसैः ।
श्रवणगलनाभिनासामेहनगुदजानि शातयति ॥

सेंधा नमक, हल्दी, दारुहल्दी, घरका धुआं और कसीस समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे मस्सों पर मलनेसे कान, गले, नाभि, नासा, लिंग और गुदाके मस्से नष्ट हो जाते हैं ।

(७८७१) सैन्धवादियोगः (१)

(वै. म. र. । पटल ८)

सैन्धवपादेन युतं नागरचूर्णं सहौदनं घृतं चापि ।
भुञ्जानः पञ्चदिनं प्रहरति गुल्मं क्षणे नैव ॥

४ भाग सेंधा नमक और १ भाग सोंठका चूर्ण एकत्र मिला कर रक्खें ।

इसे घृतयुक्त भातमें डाल कर सेवन करनेसे ५ दिनमें गुल्म नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—१॥–२ माशा ।)

(७८७२) सैन्धवादियोगः (२)

(ग. नि. । छर्दि. १४)

सैन्धवं सर्पिषा पीतं वातच्छर्दिविनाशनम् ।
किंवा यवानिका चूर्णं भक्षितं तां विनाशयेत् ॥

सेंधा नमकके चूर्णको घीके साथ पीनेसे या अजवायनका चूर्ण सेवन करनेसे वातज छर्दि नष्ट होती है ।

(मात्रा—१॥–२ माशे ।)

(७८७३) सैन्धवादियोगः (३)

(ग. नि. । विषा. ३)

सैन्धवं मरिचैस्तुल्यं निम्बबीजं तयोःसमम् ।
घृतमध्वायुतो हन्ति विषं स्थावरजङ्गमम् ॥

सेंधा नमक और काली मिर्चका चूर्ण १–१ भाग तथा नीमके बीज (निम्बौली) २ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घृत और शहदमें मिला कर खिलानेसे स्थावर और जङ्गम विष नष्ट होता है ।

(७८७४) सैन्धवाद्यं चूर्णम् (१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

सिन्धुसौवर्चलव्योषपथ्याजीरकचित्रकैः ।
विडङ्गयावशूकाह्पाक्यग्रन्थिकरोमकैः ॥
त्रिवृच्चव्ययुतैश्चूर्णं तक्रेणाम्लाम्बुना पिबेत् ।
कल्पितं वह्निदीप्त्यर्थं प्रातरुत्थाय मानवः ॥

सेंधा नमक, संचल (काला नमक), सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, जीरा, चीतामूल, बायबिडंग, जवाखार, पांशु लवण, पीपलामूल, रोमक लवण, निसोत और चव समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे तक्र या कांजीके साथ सेवन करनेसे अग्नि दीप्त होती है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(७८७५) सैन्धवाद्यं चूर्णम् (२)

(भै. र. । अग्निमां.)

सैन्धवं चित्रकं पथ्या लवङ्गं मरिचं कणा ।
टङ्कणं नागरं चव्यं यमानी मधुरी वचा ॥
द्रव्याणि द्वादशैतानि समभागानि चूर्णयेत् ।
भावयेन्निम्बुकद्रावैस्त्रिसप्ताहं प्रयत्नतः ॥
ततो माषद्वयं चूर्णं वारिणोष्णेन पाययेत् ।
ससैन्धवेन तक्रेण मस्तुना काञ्जिकेन वा ॥
सैन्धवाद्यमिदं चूर्णं सद्यो वह्निं प्रदीपयेत् ॥

सेंधा नमक, चीतामूल, हर्र, लौंग, मिर्च, पीपल, सुहागेकी खील, सोंठ, चव्य, अजवायन, सौंफ और बच समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । तदनन्तर उसे नीबूके रसकी २१ भावना दें और सुखाकर रख लें ।

मात्रा—२ माशे ।

अनुपान—उष्ण जल। सेंधा नमक मिला हुवा तक्र। मस्तु या कांजी।

इसके सेवनसे शीघ्रही अग्नि दीप्त हो जाती है।

(७८७६) सैन्धवाद्यं चूर्णम् (३)

(वा. भ.। चि. अ. १४)

सिन्धूत्थपथ्याकणदीप्यकानां
चूर्णानि तोयैः पिबतां कवोष्णैः।
प्रयाति नाशं कफवातजन्मा
नाराचनिर्भिन्न इवामयौघः॥

सेंधा नमक, हर्र, पीपल और अजवायन समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफ वातज रोग नष्ट होते हैं।

सैन्धवाद्यं चूर्णम् (४)

(ग. नि.। अर्शो. ४ ; वा. भ.। चि. अ. ८ ; व. से.। अर्शो.)

प्र. सं. ६२३२ " लवणोत्तमादि चूर्णम् " देखिये।

(७८७७) सोमराजी योगः

(ग. नि.। ओषधिकल्पा. २)

गोमूत्रे सप्तरात्रं शशिकलपलं वासितं मोचयित्वा
कुर्याच्छायाविशुष्कां पृथगिति च मापुनाटं सुपिष्टम्।
अंशस्ताभ्यां तथांशः कृमिरिपुदहनस्फोट कृद्भ्यः स पूर्णो
गोमूत्रेणोपयुक्तः प्रमितहितभुजः श्वित्रमाश्वेव हन्ति॥

५ तोले बावचीके बीजोंको सात दिन तक गोमूत्रमें भिगोए रक्खें और फिर छायामें सुखाकर चूर्ण कर लें। १ भाग यह चूर्ण, १ भाग पंवाड़के बीजोंका चूर्ण और १-१ भाग बायबिडंग, चीता और शुद्ध भिलावा ले कर चूर्ण बनावें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करने और हित तथा परिमित आहार करनेसे श्वेत कुष्ठ शीघ्रही नष्ट हो जाता है।

(७८७८) सोमराजी रसायनम्

(वृ. मा.। रसायना. ; ग. नि.। ओषधि कल्पा. २)

तीव्रेण कुष्ठेन परीतदेहो
यः सोमराजीं नियमेन खादेत्।
सम्वत्सरं कृष्णतिलद्वितीयां
ससोमराजीं वपुषाऽतिशेते॥

बावची और काले तिल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे १ वर्ष तक नियम पूर्वक सेवन करनेसे तीव्र कुष्ठ भी नष्ट हो जाता है।

(७८७९) सोमराज्याद्युद्वर्त्तनम्

(भा. प्र.। म. खं. २ कुष्ठा.)

सोमराजीभवं चूर्णं शृङ्गवेरसमन्वितम्।
उद्वर्तनमिदं हन्ति कुष्ठमुग्रं कृतास्पदम्॥

बावची और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे मर्दन करनेसे उग्र कुष्ठ भी नष्ट हो जाता है।

(७८८०) सौवर्चलादिचूर्णम् (१)

(ग. नि.। तृष्णा. १४)

सौवर्चलं विडङ्गानि सैन्धवं कटुकत्रयम्।
वातच्छर्दिहरं चूर्णमेतेषां मधुनाऽशितम्॥

संचल (काला नमक), बायबिड़ंग, सेंधा नमक, सोंठ, काली मिर्च और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे वातज छर्दि नष्ट होती है ।

(मात्रा—१ माशा। थोड़ी थोड़ी देर बाद चाटना चाहिये ।)

(७८८१) **सौवर्चलादिचूर्णम् (२)**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३ ; ग. नि. । अतिसारा. २)

सौवर्चलं प्रतिविषा हिङ्गु पथ्या कलिङ्गकः ।
शुण्ठी चामातिसारघ्नं शूलघ्नं ग्राहिपाचनम् ॥

संचल (काला नमक), अतीस, हींग, हर्र, इन्द्रजौ और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण आमातिसार नाशक, शूलघ्न, ग्राही और पाचक है ।

(७८८२) **सौवर्चलादिचूर्णम् (३)**

(ग. नि. । हृद्रोगा. २६)

सौवर्चलं शृङ्गवेरं दाडिमं साम्लवेतसम् ।
श्वासहृद्रोगशमनमिदं स्याद्धिङ्गुपञ्चमम् ॥

संचल (काला नमक), सोंठ, अनारदाना, अम्लबेत और हींग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे सेवन करनेसे श्वास और हृद्रोगका नाश होता है ।

(मात्रा—५-६ रत्ती । अनुपान—उष्ण जल ।)

नोट—ग. नि. वात रोगा. १९ में इसी चूर्णको अपतन्त्रक नाशक लिखा है ।

(७८८३) **सौवर्चलाद्यं चूर्णम् (१)**

(ग. नि. । परि. चूर्णा. ३)

सौवर्चलं कणा शुण्ठी रामठं जीरकद्वयम् ।
अजमोदा च मरिचमम्लवेतसमेव ॥
समभागमिदं चूर्णं मन्दाग्निविनिवारणम् ॥

संचल (काला नमक), पीपल, सोंठ, हींग, सफेद और काला जीरा, अजमोद, काली मिर्च और अम्लवेत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अग्निमांद्यको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(७८८४) **सौवर्चलाद्यं चूर्णम् (२)**

(वृ. नि. र. । शूला.)

सौवर्चलाम्लवेतस विडलवणयुतससैन्धवा-तिविषा ।
त्रिकटुकं बीजपूररसान्वितमशितं गुल्मशू-लहरम् ॥

संचल (काला नमक), अम्लबेत, बिडलवण, सेंधा नमक, अतीस, सोंठ, मिर्च और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे बिजौरेके रसमें मिलाकर सेवन करनेसे गुल्म और शूलका नाश होता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(७८८५) **स्तम्भकचूर्णम्**

(यो. त. । त. ८०)

खसतिलपलमेकं शुण्ठीकर्षं सितापलद्वन्द्वम् ।
एतच्चूर्णं पयसा पीतं रेतोरयं ध्रुवं धत्ते ॥

खसखास (पोस्त) ५ तोले, सोंठ १। तोला

और मिसरी १० तोला ले कर चूर्ण बनावें।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे वीर्यस्तम्भन होता है।

(७८८६) स्नुक्क्षारभावितपिप्पलिः

(व. से. । शोथा.)

स्नुक्क्षारभाविताः कृष्णाः पथ्या मूत्रेण वा युताः।
योजिताः शमयन्त्याशु शोथं श्लेष्मभवं नृणाम् ॥

पीपलको स्नुक (सेहुंड–थूहर) के क्षारके पानीकी कई भावना दे कर सुखा लें।

इनके सेवनसे कफजशोथ नष्ट होता है।

इसी प्रकार हर्रोंको गोमूत्रकी भावना दे कर सेवन करनेसे भी कफज शोथ नष्ट हो जाता है।

(७८८७) स्नुहीयोगः

(व. से. । उदरा.)

स्नुही पयो भावितानां पिप्पलीनां पयोशनः।
सहस्रमुपयुञ्जीत शक्तितो जठरामयी ॥

पीपलोंको स्नुही (सेंड–थूहर) के दूधकी भावना दे कर सुखा लें।

इनके साथ दूध पकाकर पीनेसे उदर रोग नष्ट होता है।

(नित्य प्रति २, ५, ७ या अधिक पीपलोंको दूधमें पका कर दूध पीना चाहिये और वे पीपल भी खा लेनी चाहियें। भूख प्यासमें केवल दूध ही पीना चाहिये। शक्ति अनुसार पीपलोंकी संख्या बढ़ाते जाना चाहिये। कुल मिलाकर १००० पीपल सेवन करनी चाहियें।)

(७८८८) स्वगुप्तादिचूर्णम्

(ग. नि. । वाजीकरणा.)

स्वगुप्ता क्षीरकाकोली विदारी जीरकद्वयम्।
तिलाः सुलुश्चिता भृष्टाः शर्कराज्यमधुप्लुतम् ॥
तच्चूर्णं प्रसृतिं लीढ्वा गच्छति प्रमदाशतम्।

कौंचके बीज, क्षीरकाकोली, बिदारीकन्द, सफेद जीरा, काला जीरा तथा छिलके रहित भुने हुवे तिल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसमें उसके बराबर खांड मिला लें।

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करनेसे सौ स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति आ जाती है।

मात्रा—२ पल।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ तोले।)

(७८८९) स्वयंगुप्तादिचूर्णम्

(वृ. मा. ; ग. नि. । वाजीकरणा. ; न. मृ. । त. ३ ; व. से. । वाजीकर. ; सु. सं. । चि. अ. २६)

स्वयंगुप्तेक्षुरकयोर्बीजचूर्णं सशर्करम्।
धारोष्णेन नरः पीत्वा पयसा न क्षयं व्रजेत् ॥

कौंचके बीज और तालमखाना १–१ भाग तथा खांड २ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे धारोष्ण दूधके साथ सेवन करनेसे शुक्र क्षीण नहीं होता।

(**मात्रा**—६ माशेसे १ तोला तक।)

पाठान्तरके अनुसार तालमखानेके स्थानपर पोस्तका डोढा है।

(७८९०) स्वर्जिकादिक्षारयोगः

(वृ. मा. । गुल्मा.)

स्वर्जिकाकुष्ठसहितः क्षारः केतकिजोऽपि वा।
तैलेन पीतः शमयेद् गुल्मं पवनसम्भवम् ॥

सज्जीक्षार, कूठ और केतकी वृक्षका क्षार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे तेलमें मिलाकर पीनेसे वातज गुल्म नष्ट होता है।

(मात्रा—१ माशा ।)

(७८९१) स्वर्जिक्षारादियोगः

(ग. नि. । उदरा. ३२)

सर्जिः सयवक्षारा नीली च त्रिकटु पञ्च लवणानि।
चित्रकसहितं चूर्णं सघृतं सर्वोदरं हन्ति ॥

सज्जीखार, जवाखार, नीलवृक्ष, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक, संचल (काला नमक), विड लवण, सामुद्र लवण, उद्भिद लवण और चीतामूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके उदर रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१॥-२ माशे ।)

(७८९२) स्वर्णगैरिकयोगः

(व. से. । बालरोगा.)

सुवर्णगैरिकस्यापि चूर्णानि मधुना सह।
लीढ्वा सुखमवाप्नोति क्षिप्रं हि छर्दितः शिशुः॥

सोनागेरुका चूर्ण शहदमें मिलाकर चटानेसे बालककी छर्दि (वमन) नष्ट हो जाती है।

स्वल्पनायिकाचूर्णम्

(रसे. चि. म. । अ. ९)

प्र. सं. ६३५९ " लाई चूर्णम् (५) लघु " देखिये।

स्वल्पलवङ्गाद्यं चूर्णम्

(भै. र. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. ६२२२ " लवङ्गादि चूर्णम् (२) " देखिये।

(७८९३) स्वेदशोषकचूर्णम्

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

स्वेदोद्गमे भ्रष्टकुलित्थचूर्णं
निर्यातनं शस्तमिति ब्रुवन्ति।
जीर्णं शकृद्गो लवणस्य भाजनं
सञ्चूर्णितं स्वेदहरं सुधूलनात् ॥

यदि सन्निपात ज्वरमें अधिक पसीना आने लगे तो भुनी हुई कुलथीको पीस कर शरीर पर उसकी मालिश करनी चाहिये। अथवा गायका सूखा हुवा गोबर और नमक रखनेका मिट्टीका पात्र समान भाग ले कर दोनोंको बारीक पीसकर एकत्र मिला कर शरीर पर उसकी मालिश करनी चाहिये।

इति सकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ सकारादिगुटिकाप्रकरणम्

सञ्जीवनी वटी

(शा. ध.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सन्धिवातारिगुटिका

(र. चं. । शूला.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७८९४) सप्तलाद्यो मोदकः

(ग. नि. । गुटिका. ४)

**सप्तला पिप्पलीमूलं श्यामा दन्ती पृथक् पृथक् ।
सर्वं दशपलैर्भागैर्दशमूली तुला समा ॥
हरीतक्यक्षधात्रीणां प्रस्थं प्रस्थं समावपेत् ।
जलद्रोणद्वये पक्वं पूतं पादावशेषितम् ॥
विडङ्गं मुस्तकं श्यामां शङ्खिनीं मालतीमपि ।
त्रिवृद्व्योषयुतं ह्येतत्कृत्वा चूर्णं रसे क्षिपेत् ॥
वटकानक्षमात्रांस्तु वातश्लेष्मकृते ज्वरे ।
शूले पक्वाशयस्थे च शुद्ध्यर्थं भक्षयेदिमान् ॥**

सप्तला, पीपलामूल, काली निसोत, और दन्तीमूल ५०-५० तोले तथा दशमूल ६। सेर और हर्र, बहेड़ा तथा आमला १-१ सेर ले कर सबको कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें बाय-विडंग, नागरमोथा, काली निसोत, शंखिनी, चमेलीके फूल, निसोत, सोंठ, मिर्च और पीपलका समान भाग मिलित (२ सेर) चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें और गाढ़ा हो जानेपर १।-१। तोलेके मोदक बना लें।

इनमेंसे १-१ मोदक (उष्ण जलके साथ) खानेसे विरेचन हो कर वातकफज ज्वर और पक्वाशयशूल नष्ट होता है।

सप्तशालिवटी

(भा. प्र. ; धन्व.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(७८९५) सप्तसमावटी

(वा. भ. । चि. अ. १९)

**त्रिकटुत्रिफला तिलारुष्कराज्य-
माक्षिक सितोपला विहिता ।
गुलिका रसायनं स्यात्कुष्ठ-
जिच्च वृष्या च सप्तसमा ॥**

त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), तिल, शुद्ध भिलावा और मिश्री समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसमें १-१ भाग घी तथा शहद मिला कर (६-६ माशेकी) गुटिका बना लें।

ये गोलियां रसायन, कुष्ठ-नाशक और वृष्य हैं।

सप्तामृतगुटी

(यो. चि. म. । अ. ३)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सप्तामृतावटी

(र. र. स.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सप्तोत्तरावटी

(र. र. स.)

रसप्रकरणमें देखिये

सम्प्रसारिणीगुटिका

(वै. र.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सर्वज्वरहरवटी

(भा. प्र. । म. ख. २)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सर्वज्वराङ्कुशवटी

(भै. र. ; र. रा. सु.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सर्वरोगान्तकवटी

(र. र. स. । उ. अ. १६ ; र. चं. । अजीर्णा.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७८९६) सर्वाङ्गसुन्दरी गुटिका

(यो. र. । कुष्ठा. ; वृ. यो. त. । त. १२०)

भल्लातकसहस्रैकं त्रिफलावारिणि क्षिपेत् ।
द्रोणमात्रे पचेत्तावद्यावत्पादावशेषितम् ॥
शर्कराया दशपलान्येकं वाकुचिका पलम् ।
तथैवात्रैव देयानि पलानि दश गुग्गुलोः ॥
खदिरारिष्टमञ्जिष्ठा बीजकं चेन्द्रवारुणी ।
चित्रकं द्वे हरिद्रे च देवदारु हरीतकी ॥
भार्गी वचेति सर्वेषां प्रत्येकं च पलार्धकम् ।
प्रक्षिप्य गुटिका कार्या नाम्ना सर्वाङ्गसुन्दरी॥
प्रत्यहं भक्षयेत्कुष्ठी त्वेतां बदरमात्रया ।
सर्वाण्येवोग्रकुष्ठानि शीघ्रमेव व्यपोहति ॥

१ हजार शुद्ध भिलावोंको त्रिफलाके १६ सेर काथमें पकावें । जब ४ सेर पानी रह जाय तो काथको छान कर उसमें ५० तोले खांड और ५ तोले बावचीका चूर्ण, ५० तोले शुद्ध गूगल एवं खैरसार, नीमकी छाल, मजीठ, असना वृक्षकी छाल, इन्द्रायणकी जड़, चीता, हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, हर्र, भरंगी और बच; इनका २॥-२॥ तोले चूर्ण मिला कर पुनः पकावें और गाढ़ा होने पर बेरके समान गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली नित्य प्रति प्रातःकाल सेवन करनेसे उग्र कुष्ठ भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(७८९७) सर्वातिसारहारिणीगुटिका

(वै. र. । अतिसारा.)

शृङ्गवेरप्रतिविषाबिल्वमोचरसेन च ।
भुजङ्गगुडसंयुक्ता सर्वातीसारनाशिनी ॥

सोंठ अतीस, बेलगिरी, मोचरस और पान; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिला कर (३-३ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं ।

(७८९८) सहकारगुटिका

(च. द. । मुखरोगा. ५५ ; र. र. । मुखरोगा.)

एलालतालवनिकाफलशीतकोष-
कोलद्रिकानि खदिरस्य कृते कषाये ।
तुल्यांशकानि दशभागमिते निधाय
भोद्भिन्नकेतकपुटे पुटवद्विपाच्य ॥

भागंशतुल्यशशिनाभितदेकसङ्गम्
पिष्ट्वा नवेन सहकाररसेन हस्तौ ।
लिप्त्वा यथाभिलषितां गुटिकां विदध्यात् ।
स्त्रीपुंसयोर्वदनसौरभबन्धुभूताम् ॥

छोटी इलायची, लताकस्तूरी, लवनिका (लौंग ?), जायफल, कपूर, जावत्री, कंकोल और अगर; इनका चूर्ण १-१ भाग ले कर ८० भाग खदिर छालके क्काथमें मिलावें और फिर उसे केतकी (केवड़े) की विकसित कुकड़ी (पुष्प) की पत्तियोंमें रख कर उसपर मिट्टीका लेप कर दें और उसे अंगारोंकी मृदु अग्निमें पकावें (स्वेदित करें)। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल लें और उसमें १-१ भाग कपूर तथा कस्तूरीका चूर्ण मिलावें। तत्पश्चात् हाथोंको आमकी नवीन कोंपलों (या बौर) का रस मलकर छोटी छोटी गोलियां बना लें।

इन्हें मुखमें रखनेसे मुख अत्यन्त सुगन्धित हो जाता है (और मुखपाकादि रोग नष्ट होते हैं।)

(७८९९) सहकारवटी

(भै. र. । मुखरोगा.)

सहकारस्य निम्बस्य खदिरस्याशनस्य च ।
तुलां पृथग् विनिःक्वाथ्य द्रोणमानेन चाम्बुना ॥
एकीकृत्य कषायांश्च पादशिष्टान् पुनःपचेद् ।
तत्र क्षिपेन्मलयजं वालकं रक्तचन्दनम् ॥
गैरिकं देवपुष्पञ्च धातकीं रजनीद्वयम् ।
लोध्रं जातीफलं श्यामां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥
वटप्ररोहमञ्जिष्ठामांसीरम्बुधरं विडम् ।
कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रसृत्यर्द्धप्रमाणतः ॥
ततः कलायसदृशीर्विदध्याद् गुटिका भिषक् ।
रोगान् कण्ठौष्ठरसनादन्तताळुसमुद्भवान् ॥
सहकारवटी हन्यादाश्वेव वदने धृता ।
जनयेन्मुखसौरभ्यं सुरुचिं स्थिरदन्तताम् ॥

आमकी छाल ६। सेर लेकर कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें। इसी प्रकार नीमकी छाल, खैरकी छाल, और असन वृक्षकी छालका क्काथ बनावें और फिर सबको एकत्र मिलाकर पुनः मन्दाग्नि पर पकावें। जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्नलिखित प्रक्षेप मिलाकर मटरके समान गोलियां बनालें।

प्रक्षेप—श्वेतचन्दन, सुगन्धबाला, लालचन्दन, गेरु, लौंग, धायके फूल, हल्दी, दारुहल्दी, लोध, जायफल, श्यामालता, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, हर्र, बहेड़ा, आमला, बड़के अंकुर, मजीठ, जटामांसी, नागरमोथा, विडनमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, लोहभस्म और कपूर ५-५ तोले लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

ये गोलियां कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दांत और तालु के रोगोंको नष्ट करती तथा मुखको सुगन्धित और दांतोंको दृढ़ करती हैं। इन्हें मुखमें रखना चाहिये।

सारिवादिवटी

(भै. र. । कर्ण.)

रसप्रकरणमें देखिये।

सावित्रवटकः

(व. से. । पाण्डु.)

रसप्रकरणमें देखिये।

सितमल्लगुटिका

(वृ. यो. त. । त. ८०)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७९००) सितादिगुटिका

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

सिताव्योषकपित्थानां चूर्णं क्षौद्रेण तद्वटी ।
सर्वारोचकशान्त्यर्थं धारयेद्वदनाम्बुजे ॥

मिश्री, सोंठ, मिर्च, पीपल और कैथका गूदा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। उसे शहदमें मिला कर गोलियां बना लें।

इन्हें मुखमें रखनेसे अरुचि नष्ट होती है ।

सिद्धवटी

(वृ. नि. र.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सिन्दूरादिवटी

(धन्व. । वाजी.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सुकुमारमोदकम्

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७९०१) सुधावटी

(वा. भ. । चि. अ. १० ग्रहण्य.)

चतुष्पलं सुधाकाण्डात्रिपलं लवणत्रयात् ।
वार्ताककुडवं चार्कादष्टौ द्वे चित्रकात्पले ॥
दग्ध्वा रसेन वार्ताकाद्गुटिका भोजनोत्तराः ।
भुक्तमन्नं पचन्त्याशु कासश्वासार्शसां हिताः ॥
विषूचिकाप्रतिश्यायहृद्रोगशमनाश्च ताः ॥

सेहुंड (सेंड थूहर) का काण्ड (डंडा) २० तोला, सेंधानमक ५ तोले, संचल (कालानमक) ५ तोले, विडनमक ५ तोले, कटेली २० तोले, अर्कमूल ४० तोले और चीतामूल १० तोले लेकर सबको हाण्डीमें बन्द करके जलावें और फिर बारीक चूर्ण करके उसे कटेलीके रसमें घोट कर गोलियां बना लें।

इन्हें भोजनके पश्चात् खानेसे आहार शीघ्र पच जाता है । इसके अतिरिक्त ये कास, श्वास, अर्श, विषूचिका, प्रतिश्याय और हृद्रोगको भी नष्ट करती हैं ।

(**मात्रा**—१ माशा)

सुरसुन्दरीगुटिका

(र. चं.; र. र.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सुरसुन्दरीगुटिका

(र. र. रसा. । उप. ३)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७९०२) सुवर्चलादिगुटिका

(च. द. । शूला. २६; वृ. नि. र. । शूला.; भै. र. । शूला.; वै. र.; ग. नि. । शूला. २३)

सौवर्चलाम्लिकाजाजीमरिचैर्द्विगुणोत्तरैः ।
मातुलुङ्गरसैः पिष्टा गुडिकानिलशूलनुत् ॥

संचल (काला नमक) १ भाग, इमली २ भाग, जीरा ४ भाग, और मिर्च ८ भाग लेकर चूर्ण योग्य चीजोंका चूर्ण बनावें और इमलीको पत्थर पर बारीक पीसकर उसमें वह चूर्ण मिलाकर सबको बिजौरे नीबूके रसमें खरल करके (१-१ माशेकी) गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे वातज शूल नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—१ से ३ गोली तक। **अनुपान**—उष्ण जल)

सूतादिगुटिका

(यो. र.; र. च.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सूतादिवटी (१)

(र. च. । उपदंशा.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सूतादिवटी (२)

(र. रा. सु.; वृ. नि. र. । अतिसारा.)

प्र. सं. १८९२ " चन्द्रप्रभावटी (३) " देखिये ।

पाठान्तरके अनुसार—

अभ्रकके स्थानपर ताम्र भस्म है ।

सूतादिवटी (३)

(र. रा. सु.; वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. ७०२१ "विजयवटी" देखिये । इसमें (सूतादिवटीमें) अभ्रकके स्थान पर तेजपात है तथा एक भाग जयपाल अधिक है । शेष प्रयोग विजयवटीके समान है ।

सूतिकातङ्कनाशिनीवटी

(र. चं.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७९०३) सूरणमोदकः (१)

(यो. र.; वृ. नि. र. । अर्शो.)

शुष्कात्सूरणकन्दतोऽर्धमिलितं व्योषं तथा चित्रकं
श्रेष्ठाजीरकरामठं समलवं दीप्याजमोदान्वितम् ।
सर्वस्याङ्घ्रिकसिन्धुजं परिभवेज्जिम्बुद्रवैर्वासरं
सिद्धः सूरणमोदको गदहरः श्रेष्ठो भवेत्प्राणिनाम् ॥
शूलं सङ्ग्रहणीगदं त्वतिसृतिं दुष्टां प्रवाहीं जयेद्
दीप्ताग्निं कुरुते बलं वितनुते गुल्मप्रणाशं तथा ।
अर्शांस्युद्धतमारुतामयहरो बाले च वृद्धे हितो
गर्भिण्यां च न शस्यते न निपुणैर्नो रक्तपित्ते ऽपि च ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, जीरा, हींग, अजवायन और अजमोद १–१ भाग एवं सूखा हुवा सूरण (जिमोकन्द) सबसे आधा लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसमें उससे (चूर्णसे) चतुर्थांश सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन जम्बीरी नींबूके रसमें घोट कर (३–३ माशेके) मोदक बनालें ।

ये मोदक शूल, संग्रहणी, अतिसार, दुष्ट प्रवाहिका, गुल्म, अर्श और प्रबल वातव्याधिको नष्ट और अग्निको दीप्त करते हैं । ये बलवर्द्धक एवं वृद्धों तथा बालकों तकके लिये हितकारी हैं परन्तु गर्भिणी स्त्री और रक्तपित्त रोगीको न देने चाहियें ।

(७९०४) सूरणमोदकः (२) (बृहद्)

(भै. र.; वै. र.; वृ. मा.; यो. र. । अर्शो.; ग. नि. । गुटिका ४; र. चि. म. । स्त. ९; च. द. । अर्शो. ५)

सूरण षोडशभागा वह्नेरष्टौ महौषधस्यातः ।
अर्द्धेन भागयुक्तिर्मरिचस्य ततोऽपि चार्द्धेन ॥
त्रिफला कणा समूला तालीशारुष्करक्रिमिघ्नानाम् ।
भागा महौषधसमा दहनांशा तालमूली च ॥
भागः शूरणतुल्यो दातव्यो वृद्धदारकस्यापि ।
भृङ्गेले मरिचांशे सर्वाण्येकत्र सञ्चूर्ण्य ॥

द्विगुणेन गुडेन युतः सेव्योऽयं मोदकःमकामधनैः
गुरुवृष्यभोज्यरहितेष्वितरेषूपद्रवं कुर्यात् ॥
भस्मकमनेन जनितं पूर्वमगस्त्यस्य प्रयोगराजेन।
भीमस्य मारुतेरपि येन तौ महाशनौ जातौ ॥
अग्निबलवृद्धिहेतुर्न केवलं शूरणो महावीर्यः।
प्रभवति शस्त्रक्षाराग्निभिर्विनाप्यर्शसामेषः॥
श्वयथुश्लीपदगरजिद् ग्रहणीश्च तथा हिक्काम-निलजाम्।
नाशयति वलीपलितं मेधां कुरुते वृषत्वञ्च ॥
हिक्कां श्वासं कासं सराजयक्ष्मप्रमेहांश्च।
प्लीहानञ्चाथोग्रं हन्तीति रसायनं पुंसाम् ॥

जिमीकन्द १६ भाग, चित्रक ८ भाग, शुण्ठी चूर्ण ४ भाग, कालीमिर्च २ भाग, त्रिफला, पिप्पली, पिप्पलीमूल, तालीशपत्र, भिलावा, वायबिडङ्ग; प्रत्येक ४ भाग, मूसली ८ भाग, विधारा बीज १६ भाग, दारचीनी २ भाग, छोटी इलायची २ भाग। इन्हें एकत्र मिश्रित करके चूर्ण बनावें और उससे दो गुने गुड़में मिलाकर मोदक बनावें। मात्रा—१ तोला। इसके सेवनकाल में गुरु तथा वृष्य भोजन का सेवन कराना चाहिये। यदि गुरु तथा वृष्य भोजनका सेवन न करावेंगे तो उपद्रव हो सकते हैं। यथा इसके प्रयोगसे अगस्त्य को भस्मक हो गया था। इसी प्रकार भीम तथा हनुमानको भी भस्मक होगया था जिससे कि वे महाशन (बहुत खाने वाले) हो गये थे। महावीर्य शूरण न केवल अग्निदीपक ही है अपितु, शस्त्र, क्षार तथा अग्नि के बिना भी अर्श का नाश करता है। यह मोदक शोथ, श्लीपद, गर (संयोगजविष), ग्रहणी, वातज हिक्का, वलीपलित, श्वास, कास, राजयक्ष्मा, प्रमेह तथा प्लीहा आदि रोगों को नष्ट करता है। यह बुद्धिवर्धक, वृष्य तथा रसायन है।

सूरणमोदकः (३) (लघु)

प्र. सं. ६२४५ "लघुसूरणमोदकः" (१) देखिये।

(७९०५) **सूरणवटकः** (१) (लघु)

(शा. सं. । खं. २ अ. ७)

शुष्क सूरणचूर्णस्य भागान् द्वात्रिंशदाहरेत्।
भागान् षोडश चित्रस्य शुण्ठ्या भागचतुष्टयम् ॥
द्वौ भागौ मरिचस्यापि सर्वाण्येकत्र कारयेत्।
गुडेन पिण्डिकां कुर्यादर्शसां नाशिनीं पराम् ॥

सूखे सूरण (जिमिकन्द) का चूर्ण ३२ भाग, चीतामूलका चूर्ण १६ भाग, सोंठका चूर्ण ४ भाग और काली मिर्चका चूर्ण २ भाग ले कर सबको एकत्र मिला लें और उसे सबके बराबर गुड़में मिला कर गुटिका बनावें।

इनके सेवनसे अर्श नष्ट होता है।

(मात्रा—१ तोला। अनुपान उष्ण जल।)

(७९०६) **सूरणवटकः** (२) (बृहद्)

(शा. सं. । खं. २ अ. ७)

सूरणो वृद्धदारुश्च भागैः षोडशभिः पृथक्।
मुसलीचित्रकौ ज्ञेयावष्टभागमितौ पृथक् ॥
शिवाबिभीतकौ धात्री विडङ्गं नागरं कणा।
भल्लातः पिप्पलीमूलं तालीसं च पृथक् पृथक् ॥
चतुर्भागप्रमाणानि त्वगेलामरिचं तथा।
द्विभागमात्राणि पृथक् ततस्त्वेकत्र चूर्णयेत् ॥
द्विगुणेन गुडेनाथ वटकान् कारयेद् बुधः।
प्रबलाग्निकरा एते तथार्शोनाशनाः परम् ॥

ग्रहणीं वातकफजां श्वासं कासं क्षयामयम् ।
प्लीहानं श्लीपदं शोफं हिक्कां मेहं भगन्दरम् ॥
निहन्युः पलितं वृष्यास्तथा मेध्या रसायनाः ॥

सूखा हुवा सूरण (जिमिकन्द) और विधारा-मूल १६-१६ भाग, मूसली और चीतामूल ८-८ भाग, हर्र, बहेड़ा, आमला; बायविड़ंग, सोंठ, पीपल, शुद्ध भिलावा, पीपलामूल और तालीस-पत्र ४-४ भाग एवं दालचीनी, इलायची और काली मिर्च २-२ भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे सबसे दो गुने गुड़में मिला कर (१-१ तो-लेके) मोदक बना लें ।

यह मोदक अत्यन्त अग्निवर्द्धक और उत्तम अर्शनाशक है । इसके सेवनसे वातकफज ग्रहणी, श्वास, कास, क्षय, प्लीहा, श्लीपद, शोथ, हिक्का, प्रमेह, भगन्दर और पलितका नाश होता है । यह वृष्य, मेधावर्द्धक और रसायन है ।

सूरणवटिका (लघु)

(ग. नि. । गुटिका. ८)

प्र. सं. ५१६३ " मरिचादिमोदकः " देखिये ।

सूर्यचन्द्रप्रभा गुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सूर्यप्रभा गुटिका

रसप्रकरणमें देखिये ।

सूर्यसन्निभा गुटी

(र. का. धे. । उदरा.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(७९०७) सैन्धवादिगुटिका

(वृ. मा. । अजीर्णा.; ग. नि. । अजीर्णा. ५)

सिन्धूत्थहिङ्गुत्रिफलायवानी-
व्योषैर्गुडांशैर्गुटिकां प्रकुर्यात् ।
तां भक्षयेत्तृप्तिमवाप्नुवन्सा
भुञ्जीत मन्दाग्निरपि प्रभूतम् ॥

सेंधा नमक, हींग, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजवायन, सोंठ, काली मिर्च और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे सबके बराबर गुड़में मिला कर (६-६ माशेकी) गुटिका बना लें ।

इनके सेवनसे पाचनशक्ति अत्यन्त प्रबल हो जाती है ।

(७९०८) सैन्धवादिगुटी

(वै. म. र. । पट. ८)

सैन्धवामलकरजोनवनीतगुटीर्जयेत् ।
पित्तगुल्मविकाराणां दोषाणां संहतिं भृशम् ॥

सेंधा नमक और आमला समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और नवनीत (मक्खन) में घोट कर गोली बना लें ।

इसके सेवनसे पित्तज गुल्म नष्ट होता है ।

(मात्रा—४ माशे ।)

सैन्धवादिवटी

(र. र. । अग्र.)

रसप्रकरणमें देखिये.

(७९०९) सोरगुटिका

(र. का. धे. । उदरा.)

लवङ्गमरिचैल्वालुटङ्कणं समसोरकम् ।
कन्यारसै सप्तपिष्टं गोमूत्रेण यकृद्गदे ॥

लौंग, काली मिर्च, एलवालुक और सुहागेकी खील १-१ भाग तथा सोरा सबके बराबर ले कर सबका चूर्ण बना कर घृतकुमारीके रसमें सात दिन खरल करके (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे यकृद् रोग नष्ट होता है ।

सौगतवटी
(सौरतगुटिका)

(वृ. यो. त. ; यो. त.)

रसप्रकरणमें देखिये ।

सौभाग्यशुण्ठिपाकः

(सौभाग्यशुण्ठीमोदकः)

रस तथा अवलेह प्रकरणमें देखिये.

(७९१०) स्तम्भनवटिका (१)

(न. मृ. । त. ५ ; वै. र. । वाजीकरणा. ; धन्व. । वाजीकरणा.)

भागैकं मृगनाभिं तथा काश्मीरसम्भवम् ।
जातीफलं लवङ्गं च प्रत्येकं भागयुग्मकम् ॥
चतुर्भागाहिफेनं च विजया भागयुग्मकम् ।
चणकाभा वटी कार्या वीर्यस्तम्भकरी मता ॥
भक्षयेन्मधुना सार्द्धं कामी नित्यं निशामुखे ।
ससितं सर्पिषा युक्तं दुग्धं चैव पिबेदनु ॥

कस्तूरी १ भाग, केसर १ भाग; जायफल और लौंगका चूर्ण २-२ भाग, अफीम ४ भाग और भांग २ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके (पानीके साथ घोट कर) चनेके समान गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १ गोली शहदके साथ मिलाकर रात्रिके प्रथम पहरमें खा कर ऊपर मिश्री और घी युक्त दूध पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे वीर्यस्तम्भन होता है ।

(७९११) स्तम्भनवटिका (२)

(वै. र. । वाजीकरणा. ; धन्व. । वाजीकरणा.)

समुद्रशोषबीजानि भागैकं धूर्तबीजकम् ।
भागत्रयं जातिपत्री भागमेकं च तत्फलम् ॥
यवानी म्लेच्छदेशस्था भागत्रयसमन्विता ।
भागार्धमहिफेनं च महिषीक्षीरशोधितम् ॥
विजयाखसफलक्वाथैर्दशवारं विभावयेत् ।
धत्तूरबीजतैलेन मर्दयेत्तदनन्तरम् ॥
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकाः सम्प्रकल्पयेत् ।
मदनान्दजननी वीर्यस्तम्भकरी परम् ॥
उन्मत्तानां नर्त्तकीनामतिगर्वहरा कलौ ॥

समुद्रशोषके बीज और धतूरेके बीज १-१ भाग, जावत्री ३ भाग, जायफल १ भाग, खुरासानी अजवायन ३ भाग और भैंसके दूधमें शुद्ध की हुई अफीम आधा भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके भांग और पोस्तके डोडेके क्वाथकी १०-१० भावना दें और फिर धतूरेके बीजोंके तेलमें घोट कर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें ।

इन्हें सेवन करनेसे वीर्यस्तम्भन होता है। इन्हें सेवन करने वाला पुरुष यौवनमद-मत्त तरुणियों और नर्तकियोंका गर्व चूर्ण कर देता है।

(रात्रिके प्रथम पहरमें १ गोली मिश्रीयुक्त दूधके साथ खानी चाहिये।)

(७९१२) स्तम्भनवटिका (३)

(धन्व. । वाजीकरणा.)

जातीफलं लवङ्गं च जातीपत्रं सकुङ्कुमम् ।
सूक्ष्मैला चाहिफेनं च त्वाकारकरभं तथा ॥
प्रत्येकं कर्षमात्राणि कर्पूरं शाणमात्रकम् ।
नागवल्लीदलरसैर्वटी चणकसन्निभा ॥
वीर्यस्तम्भनी ह्येषा बलवर्णाग्निदीपनी ॥

जायफल, लौंग, जावत्री, केसर, छोटी इलायची, अफीम और अकरकरा १।-१। तोला तथा कपूर ५ माशे ले कर सबको पानके रसमें घोटकर चनेके समान गोलियां बनावें।

ये गोलियां वीर्यस्तम्भनी तथा बल, वर्ण और अग्निको बढ़ानेवाली हैं।

(**मात्रा**—१ गोली। **अनुपान**—मिश्रीयुक्त दूध।)

स्पर्शवातान्तकृद्वटी

रसप्रकरणमें देखिये।

(७९१३) स्वयंगुप्तादिमोदकः

(ग. नि. । वाजीकरणा.)

जलाढके स्वयंगुप्तामूलं पञ्चपलं पचेत् ॥
पादशेषे तु सञ्चूर्ण्य कुडवांशान् पृथक् क्षिपेत् ।
स्वगुप्तामूलगोधूममाषेक्षुरकपिप्पलीः ॥
सपियालरसक्षौद्रा प्रस्थार्धं नवसर्पिषः ।
सितोपला तुलापादं कुर्यात्तन्मोदकांस्ततः ॥
मोदकं भक्षयित्वैकं षष्टिं व्रजति योषिताम् ।

कौंचकी २० तोले जड़को ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें २०-२० तोले कौंचकी जड़का चूर्ण, गेहूंका आटा, उड़दका आटा, तालमखानेका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, पियाल [चिरौंजीके फल] का रस, शहद एवं १ सेर घी तथा १२५ तोले खांड मिलाकर पुनः पकावें और गाढ़ा हो जानेपर (तोला तोला भरके) मोदक बना लें।

इनके सेवनसे साठ स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

स्वर्णादिगुटिका

रसप्रकरणमें देखिये।

(७९१४) स्वर्जिकावटी

(वृ. नि. र. । गुल्मा.)

स्वर्जिका शाणमाना स्यात्तावदेव गुडो भवेत् ।
उभयोर्वटिकां खादेद्गुल्मामयविनाशिनीम् ॥

५ माशे सज्जीको ५ माशे गुड़में मिलाकर गोली बनावें।

इसे खानेसे गुल्म नष्ट होता है।

(**मात्रा**—२ माशा।)

(७९१५) स्वल्पखदिरवटिका

(भै. र. । मुखरोगा. ; वृ. मा. ; व. से. ; च. द. ; र. र. । मुखरोगा.)

खदिरस्य तुलां सम्यक् जलद्रोणे विपाचयेत् ।
शेषेऽष्टभागे तत्रैव प्रतिवापं प्रदापयेत् ॥

जातीकर्पूरपूगानि कक्कोलकफलानि च ।
इत्येषा गुडिका कार्या मुखसौभाग्यवर्द्धिनी ॥
दन्तौष्ठमुखरोगेषु जिह्वाताल्वामयेषु च ॥

खैरकी ६। सेर छालको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी रहने पर छान लें। तदनन्तर उसे पुनः पकाकर गाढ़ा करें और फिर उसमें जावत्री, कपूर, सुपारी, कंकोल और जायफलका समान भाग मिलित चूर्ण ४० तोले मिलाकर गोलियां बना लें ।

इन्हें मुखमें रखनेसे दन्त, ओष्ठ, मुख, जिह्वा और तालुके रोग नष्ट होते तथा मुख सुगन्धित हो जाता है ।

स्वल्परसोनपिण्डः

(भै. र. । वातव्या.)

प्र. सं. ५८६० "रसोनसप्तकम्" देखिये ।

स्वल्पसूरणमोदकः

(शा. सं. । खं. २ । अ. ७ ; भै. र. । अर्शो. ; च. द. । अर्शो. ५ ; व. से. । अर्शो.)

प्र. सं. ५१६३ " मरिचादिमोदकः " देखिये ।

इति सकारादि-गुटिकाप्रकरणम्

अथ सकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(७९१६) सप्तचत्वारिंशतिका गुग्गुलुगुटिका

(ग. नि. । गुटिका.)

त्रिकटुत्रिफलामुस्तं कुटजं गजपिप्पलीम् ।
त्वगेलापत्रहपुषाग्रन्थिकं जीरकद्वयम् ॥
विडङ्गं चित्रकं पाठां त्रायमाणां दुरालभाम् ।
पटोलेन्द्रयवान् दारु पञ्चैव लवणानि च ॥
यवानीं वाष्पिकां भार्गीं हरिद्रे सारिवाद्वयम् ।
दाडिमं पौष्करं धान्यं वचां क्षारद्वयं तथा ॥
हरेणुकाजमोदं च तिन्तिडीकाम्लवेतसौ ।
सतुम्बरूणि सर्वाणि कार्षिकाण्युपकल्पयेत् ॥
गुग्गुलुश्च समो देयो हविषा सह योजयेत् ।
अक्षमात्रां तु गुटिकां भक्षयेन्मधुना सह ॥
कासं श्वासं तथा शोफमर्शांस्यथ भगन्दरम् ।
हृत्पृष्ठपार्श्वशूलं च हन्ति मन्दाग्नितामपि ॥
आमवातमुदावर्तमेदोवृद्धिगुदकृमीन् ।
आनाहं च तथोन्मादं कुष्ठपाण्डूदरामयान् ॥
नाडीदुष्टव्रणान् सर्वान्प्रमेहश्लीपदानपि ।

सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, कुड़ेकी छाल, गजपीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, हपुषा, पीपलामूल, सफेद जीरा, काला जीरा, बायबिड़ंग, चीतामूल, पाठा, त्रायमाणा, धमासा, पटोल, इन्द्रजौ, देवदारु, पांचो नमक, अजवायन, काला जीरा, भरंगी, हल्दी, दारुहल्दी, दो प्रकारकी सारिवा, अनारकी छाल, पोखरमूल, धनिया, बच, जवाखार, सज्जीखार,

रेणुका, अजमोद, तिन्तड़ीक, अम्लवेत और तुम्बरु १।-१। तोला तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर गूगलमें समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर आवश्यकतानुसार थोड़ा थोड़ा घी डालकर भली भांति कूटें। जब सब ओषधियां मिलकर एक जीव हो जाएं तो १।-१। तोलेके मोदक बना लें। (व्यवहारिक मात्रा—१॥-२ माशे।)

इन्हें शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे कास, श्वास, शोथ, अर्श, भगन्दर, हृदयशूल, पृष्ठशूल, पार्श्वशूल, अग्निमांद्य, आमवात, उदावर्त, मेदोवृद्धि, गुदकृमि, आनाह, उन्माद, कुष्ठ, पाण्डु, उदररोग, नाड़ीव्रण, प्रमेह और श्लीपदका नाश होता है।

(७९१७) **सप्तविंशतिको गुग्गुलुः** (१)

(भै. र. ; वृ. नि. र. ; यो. र. । भगन्दरा., वृ. नि. र. ; यो. र. । व्रणा. ; व. से. । अग्निदग्धव्रणा. ; वृ. यो. त. । त. ११२)

त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडङ्गामृतचित्रकम् ।
शट्येला[१]पिप्पलीमूलं हवुषा सुरदारु च ॥
तुम्बुरु पुष्करं चव्यं विशाला रजनीद्वयम् ।
बिडसौवर्चले क्षारौ सैन्धवं गजपिप्पली ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावद्द्विगुणगुग्गुलुः ।
कोलप्रमाणां गुडिकां भक्षयेन्मधुना सह ॥
कासं श्वासं तथा शोथमर्शांसि च भगन्दरम् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च कुक्षिवस्तिगुदे रुजम् ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च अन्त्रवृद्धिं तथा क्रिमीन् ।
चिरज्वरोपसृष्टानां क्षयोपहतचेतसाम् ॥
आनाहञ्च तथोन्मादं कुष्ठानि चोदराणि च ।
नाडीदुष्टव्रणान् सर्वान् प्रमेहं श्लीपदं तथा ।
सप्तविंशतिको हन्ति सर्वरोगनिसूदनः ॥

त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, बायबिड़ङ्ग, गिलोय, चित्रकमूल, कचूर, (पाठान्तरके अनुसार पटोल), छोटी इलायची, पिप्पलीमूल, हाउबेर, देवदारु, धनियां, पोहकरमूल, चव्य, इन्द्रायणकी जड़, हल्दी, दारुहल्दी, विड नमक, काला नमक, यवक्षार, सर्जिक्षार, सेन्धा नमक और गजपिप्पली; प्रत्येकका चूर्ण १ तोला, शुद्ध गुग्गुलु ५४ तोले। गुग्गुलुको किञ्चित् घृत संयुक्त कर चूर्णको मिश्रित करें और छोटे बेरके परिमाणकी गोली बनावें। अनुपान—मधु। इसे सेवन करनेसे कास, श्वास, शोथ, अर्श, भगन्दर, हृच्छूल, पार्श्वशूल, कुक्षिशूल, वस्तिशूल, गुदाशूल, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, अन्त्रवृद्धि, कृमिरोग, जीर्णज्वर, क्षय, आनाह, उन्माद, कुष्ठ, उदररोग, नाडीव्रण, दुष्टव्रण, प्रमेह और श्लीपद आदि रोग नष्ट होते हैं।

(७९१८) **सप्तविंशतिको गुग्गुलुः** (२)

(वृ. नि. र. । शूलरोगा.)

क्षारद्वयं त्रिकटुकं त्रिफला हरिद्रा
रुद्राक्षमुस्तलवणत्रयतुम्बरूणि ।
सग्रन्थिकाग्नित्रुटिचित्रकचव्य-
कुष्ठमाक्षीकपुष्करविडङ्गविषायुतानि ॥
यावन्त्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि
तावत्प्रमाणमिति गुग्गुलुसंयुतानि ।
कृत्वा घृतेन गुटिका मनुजैः प्रयोज्या
वार्तं च दुग्धजलकाञ्जिकमुद्गयूषैः ॥
हृत्पार्श्वपृष्ठकटिवंक्षणकुक्षिकक्षा-
शूलानि नाशयति कुष्ठकिलासरोगान् ।
पाण्ड्वामयं क्षयमपस्मृतिमूर्ध्ववात-
मुन्मादमामपवनं श्वयथुं प्रमेहम् ॥

जवाखार, सज्जीखार, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, रुद्राक्ष, नागरमोथा, सेंधा लवण, काला नमक, बिड नमक, तुम्बरु, पीपलामूल, शुद्ध भिलावा, छोटी इलायची, चीतामूल, चव्य, कूठ, सोनामक्खी भस्म, पोखरमूल, बायबिडंग, अतीस और गजपीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग और शुद्ध गूगल २६ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर थोड़ा घी डालकर कूटें और सबके एकजीव हो जाने पर (२-२ माशेकी) गोलियां बना लें।

अनुपान—दूध, जल, कांजी या मूंगका यूष।

यह गूगल हृच्छूल, पार्श्वशूल, कटिशूल, वंक्षणशूल, कुक्षिशूल, कक्षाशूल, कुष्ठ, किलास, पाण्डु, क्षय, अपस्मार, ऊर्ध्ववात, उन्माद, आमवात, शोथ और प्रमेहको नष्ट करता है।

(७९१९) **सप्ताङ्गगुग्गुलुः** (१)

(भै. र. ; वृ. मा. । नाडीव्रणा. ; यो. त. । त. ६० ; वै. र. । भग्न. ; भा. प्र. म. खं. २ । नाडीव्रणा. ; ग. नि. । नाडीव्रणा. ६)

गुग्गुलुत्रिफलाव्योषैः समांशैराज्ययोजितः ।
नाडीदुष्टव्रणशूलभगन्दरविनाशनः ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण तथा शुद्ध गूगल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर थोड़ा घी डालकर कूटें और एकजीव हो जाने पर (२-२ माशेकी) गोलियां बनावें।

इसके सेवनसे नाड़ीव्रण, शूल और भगन्दरका नाश होता है।

सप्ताङ्गगुग्गुलुः (२)

(भै. र. । व्रणशोथा.)

प्र. सं. ६६९० "विडङ्गादिवटिकागुग्गुलुः" देखिये।

(७९२०) **समशर्करागुग्गुलुः**

(भा. प्र. म. ख. २ । वातरक्ता.)

यावशूकसुरदारुसैन्धवं
मुस्तकत्रुटिवचायवानिकाः ।
व्योषदीप्यकनिशाफलत्रिकं
जीरकद्वयविडङ्गचित्रकम् ॥
कार्षिकं सुमसृणं सुयोजितं
संयुतं पुरपलैश्च पंचभिः ।
शर्करां पुरसमां सुपेषये-
च्चप्तसर्पिषि विनिक्षिपेत्ततः ॥
वातरक्तमुदरं भगन्दरं
प्लीहयक्ष्मविषमज्वरं गरम् ।
श्वित्रकुष्ठमखिलव्रणानयं
चित्तविभ्रममदांश्च दारुणान् ॥
गृध्रसीं च गुदजाग्निमन्दतां
हन्ति कोष्ठजनितं महागदम् ।
वज्रमिन्द्रमुकरादिवच्युतं
गुप्तशैलकुलमुत्तमं द्रुतम् ॥
अन्नपानपरिहारवर्जितं
सर्वकालसुखदं निरत्ययम् ।
सेव्यमानमिदमश्विनिर्मितं
गुग्गुलोर्हि वटिकारसायनम् ॥
चत्वारो माषका हीने मध्यमेऽष्टौ च माषकाः ।
श्रेष्ठा द्वादशकाः प्रोक्ताः कोष्ठं विज्ञाय पाययेत् ॥

जवाखार, देवदारु, सेंधा नमक, नागरमोथा, छोटी इलायची, बच, अजवायन, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, अजमोद, हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, सफेद और काला जीरा, बायबिड़ंग और चीतामूल; इनका चूर्ण १।-१। तोला, शुद्ध गूगल २५ तोले और खांड २५ तोले ले कर प्रथम गूगल और खांडको एकत्र मिला कर थोड़ा घी डालकर कूटें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह कूट कर सबको एकजीव कर लें।

इसके सेवनसे वातरक्त, उदररोग, भगन्दर, प्लीहा, क्षय, विषमज्वर, गरविष, श्वित्रकुष्ठ, व्रण, चित्तभ्रम, दारुण मद, गृध्रसी, अर्श, अग्निमांद्य और भयंकर उदर रोग नष्ट होते हैं।

यह गुग्गुलु रसायन है और सब ऋतुओंमें सेवन किया जा सकता है।

इसकी उत्तम मात्रा १२ माशे, मध्यम ८ माशे और हीन मात्रा (वर्तमान कालोचित) ४ माशे है।

(७९२१) सिंहनादगुग्गुलुः (१)

(यो. चि. म. । अ. ७)

फलत्रिकोशीरविडङ्गदन्ती-
पुनर्नवाम्भोधरवह्निविश्वा।
रास्नामृता भीरु सुराह्वदार्वी
सग्रन्थिकैलेभकणा पलांशैः ॥
द्रोणाम्भसा गुग्गुलुतुल्यभागै-
रर्द्धमृतैः सूक्ष्मपटान्तपूतैः।
भूय मृतैरङ्गुलिधेयरूपो
लेहः सुशीतो भुवि भाजनस्थम् ॥

सुचूर्णितैस्त्र्यूषणजन्तुहन्त्री
छिन्नोभवादार्व्यभयात्रिजातैः।
त्रिवृत्समैरक्षमितैर्विचूर्ण्य
निधाय गुप्तं यवधान्यपूते ॥
मासे स्थितं प्राश्य शुभेह्नि सिद्धः
प्रयान्निरोगं रुजतां मनुष्यः।
शोफोदरी प्लीहरुजां विकारा
नाडीव्रणार्शोग्रहणीप्रदोषैः ॥
सवातरक्तैः सकलैश्च कुष्ठै-
र्विमुच्यते पाण्डुगदैश्चघोरैः।
प्रभञ्जनो रोगमहातरूणां
विवर्धनो वर्णबलायुषां च ॥
नासाध्यमस्तीति विकारजातं
ख्यातस्तु एषो भुवि सिंहनादः ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, खस, बायबिड़ंग, दन्तीमूल, पुनर्नवा, नागरमोथा, चीतामूल, सोंठ, रास्ना, गिलोय, शतावर, देवदारु, दारुहल्दी, पीपलामूल, इलायची और गजपीपल ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और आधा शेष रहने पर छान कर उसमें १० तोले शुद्ध गूगल मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, गिलोय, दारुहल्दी, हर्र, दालचीनी, इलायची, तेजपात और निसोत; इनका १।-१। तोला चूर्ण मिला कर मिट्टीके पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें। और एक मास पश्चात् निकाल कर सेवन करें।

इसके सेवनसे शोथ, उदर, प्लीहा, नाडीव्रण, अर्श, ग्रहणीदोष, वातरक्त, कुष्ठ और पाण्डुका नाश तथा बल वर्ण और आयुकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—१॥-२ माशे ।)

(७९२२) **सिंहनादगुग्गुलुः (२)**

(वृ. यो. त. । त. ९३)

प्रत्येकं प्रस्थमेकं पुरत्रिफलमपां पाचयेत्सार्धराशौ
तुर्यांशे तत्र पूते पुनरमरवराव्योष-
मुस्ताग्निवेल्लैः ।
छिन्नोग्रामानकार्शोरिपुशबडित्रि-
वृत्सूतगन्धैः पलार्धैः
साहस्रैर्दन्तिबीजैः कटुजवसुपलैः
सिंहनादोऽनिलामे ॥

१॥ द्रोण (४८ सेर) पानीमें १ सेर त्रिफला और कपड़ेमें बंधा हुवा १ सेर शुद्ध गूगल डालकर पकावें। जब १२ सेर पानी शेष रह जाय तो क्वाथको छान लें। (यदि पोटलीमें गूगल रह गया हो तो उसे निकाल कर इस छने हुवे क्वाथमें मिला लेना चाहिये ।)

तदनन्तर उसे पुनः पका कर गाढ़ा करें और फिर उसमें देवदारु, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, नागरमोथा, चीतामूल, वायबिडंग, गिलोय, बच, मानकन्द, शूरण (जिमीकन्द), शबडि (?) और निसोत; इनका चूर्ण २॥-२॥ तोले, तथा २॥-२॥ तोले शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली, एवं १००० शुद्ध जमालगोटेके बीजोंका चूर्ण और ४० तोले कुटकीका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह मर्दन करके एक जीव करें।

यह गूगल आमवातको नष्ट करता है।

(७९२३) **सिंहनादगुग्गुलुः (३)**

(भै. र. । आमवाता. ; च. द. । आमवा. २५ ; र. र. ; वृ. नि. र. । आमवाता. ; भा. प्र. । म. खं. २ वातरक्ता.)

पलत्रयं कषायस्य त्रिफलायाः सुचूर्णितम् ।
सौगन्धिकपलश्चैकं कौशिकस्य पलन्तथा ॥
कुडवं चित्रतैलस्य सर्वमादाय यत्नतः ।
पाचयेत् पाकविद्वैद्यः पात्रे लोहमये दृढे ॥
हन्ति वातं तथा पित्तं श्लेष्माणं खञ्जपङ्गुताम् ।
श्वासं सुदुर्जयं हन्ति कासं पञ्चविधन्तथा ॥
कुष्ठानि वातरक्तानि गुल्मशूलोदराणि च ।
आमवातं जयेदेतदपि वैद्यविवर्जितम् ॥
एतदभ्यासयोगेन जरापलितनाशनम् ।
सर्पिस्तैलवसोपेतमश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ॥
सिंहनाद इति ख्यातो रोगवारणदर्पहा ।
वह्निवृद्धिकरः पुंसां भाषितो दण्डपाणिना ॥

लोह पात्रमें २० तोले अण्डीका तेल डालकर उसमें ५ तोले शुद्ध गूगल डालकर आगपर रक्खें। जब गूगल तेलमें मिल जाए तो उसमें त्रिफलाका १५ तोले क्वाथ मिला कर पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाए तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर ५ तोले शुद्ध गन्धकका चूर्ण मिला दें।

इसके सेवनसे वात, पित्त, कफ, खञ्जता, पङ्गुता, दुर्जय श्वास, ५ प्रकारका कास, कुष्ठ, वातरक्त,

गुल्म, उदरशूल और कष्टसाध्य आमवातका नाश होता है। इसे दीर्घकाल तक निरन्तर सेवन करनेसे जरा और पलितका नाश होता है। यह अग्नि वर्द्धक भी है।

पथ्य—घी, तैल और (मांसाहारियोंके लिये) वसा युक्त साठी तथा शाली चावलोंका भात।

(७९२४) सिंहनादगुग्गुलुः (४) (बृहद्)

(भै. र. ; धन्व. । आमवाता. ; र. र., बृ. नि. र. । आमवाता. ; यो. त. । त. ४२ ; भा. प्र. । वातरक्ता.)

पिष्टितां गुग्गुलोर्माणीं कटुतैलपलाष्टकम् ।
प्रत्येकं त्रिफलाप्रस्थौ सार्द्धद्रोणे जले पचेत् ॥
पादशेषश्च पूतश्च पुनरेतद्विमिश्रयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तविडङ्गामरदारुकम् ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्ती चवी शूरणमाणकम् ।
पारदं गन्धकश्चैव प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ॥
सहस्रं कानकफलं सिद्धे सञ्चूर्ण्य निक्षिपेत् ।
ततो रक्तिद्वयं जग्ध्वा पिबेत्तप्तजलादिकम् ॥
अग्निश्च कुरुते दीप्तं बडवानलसन्निभम् ।
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलं सुविपुलं तथा ॥
आमवातं शिरोवातं सन्धिवातं सुदारुणम् ।
जानुजङ्घाश्रितं वातं सकटीग्रहमेव च ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रञ्च भग्नञ्च तिमिरोदरे ।
अम्लपित्तं तथा कुष्ठं प्रमेहं गुदनिर्गमम् ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं क्षयञ्च विषमज्वरम् ।
प्लीहानं श्लीपदं गुल्मं पाण्डुरोगं सकामलम् ॥
शोथान्त्रवृद्धिशूलानि गुदजानि विनाशयेत् ।
मेदःकफामसङ्घातं व्याधिवारण दर्पहा ॥
सिंहनाद इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥

४० तोले शुद्ध गूगलको कपड़ेकी पोटलीमें बांध लें फिर एक कढ़ाईमें २-२ सेर हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण तथा ४८ सेर पानी डाल कर उसमें यह पोटली डाल दें और मन्दाग्निपर पकावें। जब १२ सेर पानी रह जाय तो उसे छान लें और पोटलीमें जो गुग्गुलु बचा हो उसे १ सेर सरसोंके तेलमें मिला कर घोट लें। तदनन्तर यह क्वाथ और तेलमें घुटा हुवा गूगल एकत्र मिलाकर पुनः मन्दाग्नि पर पकावें और गाढ़ा हो जाने पर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिड़ंग, देवदारु, (पाठान्तरके अनुसार आमला), गिलोय, चीतामूल, निसोत, दन्तीमूल, चव (पाठान्तरके अनुसार बच), सूरण (जिमीकन्द) और मानकन्द; इनका चूर्ण २॥-२॥ तोले तथा २॥-२॥ तोले शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली एवं १ हजार शुद्ध जमालगोटोंका चूर्ण (पाठान्तरके अनुसार २॥ तोले कस्तूरी भी) मिला कर सबको एकजीव करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती। **अनुपान**—उष्ण जलादि।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त तथा धातु, बल और आयुकी वृद्धि होती है। यह गूगल आमवात, शिरोगत वायु, दारुण सन्धिवात, जानु और जंघागत वायु, कटिग्रह, अश्मरि, मूत्रकृच्छ्र, भग्नरोग, तिमिर, उदर रोग, अम्लपित्त, कुष्ठ, प्रमेह, गुदभ्रंश (कांच निकलना), ५ प्रकारके कास, श्वास, क्षय, विषम-

ज्वर, प्लीहा, श्लीपद, गुल्म, पाण्डु, कामला, शोथ, अन्त्रवृद्धि, शूल, अर्श, मेदवृद्धि, कफवृद्धि और आमसंचयको नष्ट करता है।

(७९२५) स्वायम्भुवगुग्गुलुवटी

(व. से. । वातव्या.)

व्योषं सग्रन्थिकं पथ्यां चित्रकं जीरकद्वयम् ।
अजमोदा यवानी च वचा चव्यमवल्गुजम् ॥
लवणत्रितयं क्षारौ समभागानि कारयेत् ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्तं गुग्गुलुं शुभम् ॥
पादार्द्धसम्मितं चात्र योजयेदम्लवेतसम् ।
गुटिकैषा हिता वाते सामे सन्ध्यस्थिमज्जगे ॥
दृढी करोति भग्नञ्च जठरानलदीपनी ।
पूजिता देवदेवेन कालपाशेन शम्भुना ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, हर्र, चीता, सफेद और काला जीरा, अजमोद, अजवायन, बच, चव्य, बाबची, सेंधानमक, बिड नमक, संचल नमक, जवाखार और सज्जीखार १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल १८ भाग और अम्लवेतका चूर्ण ४॥ भाग ले कर सबको एकत्रमिलाकर (थोड़ा घी डाल कर) कूटें और सबके एकजीव हो जाने पर (३-३ माशेकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे आमवात, सन्धिगत वायु तथा अस्थि और मज्जागत वायुका नाश एवं भग्नस्थान दृढ़ होता और अग्नि दीप्त होती है।

(७९२६) स्वायम्भुवो गुग्गुलुः (१)

(ग. नि. । गुटिका. ४ ; भा. प्र. । कुष्ठा.)

शशिरेषा पञ्चपलं तावद्गिरिजश्च
गुग्गुलोर्दश च ।
ताप्यस्य पलत्रितयं द्वे लोहाच्च—
वणिकायाश्च ॥
त्रिफलकरञ्जपलवखदिरगुडूचीवचात्रिवृद्दन्ती ।
मुस्ताविडङ्गरजनीचतुरङ्गुलवह्निकुटजैश्च ॥
पलिकैश्चूर्णमेतन्मूत्रेण गवां पिबेन्नरः प्रातः ।
कुष्ठी घृतमधुमिश्रं जयत्यसृग्वातमचिरेण ॥
श्वित्राणि कुष्ठकोठौ विषगरगुल्मोदरप्रमेहांश्च ।
उन्मादभगन्दरमपस्मृतिश्लीपदकृमिश्वासान् ॥
जयति वलीपलितानि च योगः
स्वायम्भुवः प्रोक्तः ।

बाबची २५ तोले, शुद्ध शिलाजीत २५ तोले, शुद्ध गूगल ५० तोले, स्वर्णमाक्षिकभस्म १५ तोले, लोह भस्म १० तोले और गोरख मुण्डीका चूर्ण १० तोले एवं हर्र, बहेड़ा, आमला, करञ्जके पत्ते, खैरसार, गिलोय, बच (पाठान्तरके अनुसार नीमकी छाल), निसोत, दन्तीमूल, नागरमोथा, बायबिडंग, हल्दी, अमलतासकी छाल, चीता और कुड़ेकी छाल; इनका चूर्ण ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र मिलाकर भली भांति कूटें और सबके एकजीव हो जाने पर सुरक्षित रक्खें।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

इसे घी और शहदके साथ चाटकर ऊपरसे गोमूत्र पीना चाहिये।

इसके सेवनसे वातरक्त, श्वित्रकुष्ठ, कोठ, गरविष, गुल्म, प्रमेह, उन्माद, भगन्दर, अपस्मार, श्लीपद, कृमिरोग, श्वास और बलिपलितका नाश होता है।

(नोट—गोरखमुण्डीसे आगेकी ओषधियां अनुपान प्रतीत होती हैं, परन्तु पाठमें इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं है।)

(७९२७) स्वायम्भुवो गुग्गुलुः (२) (बृहद्)

(ग. नि. । गुटिका. ४ ; र. र. । वातरक्ता.)

अलम्बुषालोहचूर्णमनयोर्द्वे पले पले ।
पलत्रयं च ताप्युत्थाद्वाकुची पलपञ्चकम् ॥
शिलाजतु तयोस्तुल्यं पलानि दश गुग्गुलोः ।
सर्वाण्येकत्र सञ्चूर्ण्य गुटिकां कारयेद्बुधः ॥
शाणं कर्षार्धकर्षं वा ततः खादेत्प्रयत्नतः ।
वातरक्तं च कुष्ठानि श्वित्राणि विविधानि च ॥
भगन्दरान् क्षुद्ररोगानर्शांसि ग्रहणीगदान् ।
बस्तिजांश्छुक्रदोषांश्च पाण्डुतामुदराणि च ॥

गोरखमुण्डीका चूर्ण और लोहभस्म १०-१० तोले; स्वर्णमाक्षिक भस्म १५ तोले, बाबचीका चूर्ण २५ तोले और शुद्ध शिलाजीत ४० तोले एवं शुद्ध गगल ५० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर अच्छी तरह कूटें और सबके एकजीव होने पर ५-५ माशेकी गोलियां बना लें ।

मात्रा—५ माशे, ७॥ माशे या १। तोला ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—३-४ रत्ती ।)

इसके सेवनसे वातरक्त, कुष्ठ, श्वेत कुष्ठ, भगन्दर, क्षुद्र रोग, अर्श, ग्रहणी रोग, बस्तिके रोग, शुक्रदोष, पाण्डु और उदर रोगोंका नाश होता है ।

इति सकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

अथ सकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(७९२८) समङ्गाद्यवलेहः

(वृ. यो. त. । १४४ त.)

समङ्गोत्पलमञ्जिष्ठातिरीटतिलचन्दनम् ।
छागीक्षीरेण सक्षौद्रं रक्तातीसारनाशनम् ॥

लज्जालुकी जड़, नीलोत्पल, मजीठ, लोध, तिल और सफेद चन्दन; इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिला लें। तथा उसे शहदमें मिला कर अवलेह (चटनी) बना लें ।

इसे चाटकर ऊपरसे बकरीका दूध पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—६ माशे ।)

(७९२९) सप्तसमोऽवलेहः

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

त्रिफलाव्योषभल्लाततिलाज्यक्षौद्रशर्कराः ।
वृष्यः सप्तसमो मेध्यः कुष्ठहा कामचारिणः ॥

त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), शुद्ध भिलावा, और तिल; इनका चूर्ण तथा घी, शहद और खांड समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें ।

यह लेह वृष्य, मेध्य और कुष्ठनाशक है ।

(**मात्रा**—६ माशे ।)

(७९३०) सर्पिर्गुडः (१)

(सर्पिर्गुटिका)

(ग. नि. । परि. गुटिका. ४. ; व. से. । राजयक्ष्मा.)

त्वक्क्षीरी श्रावणीद्राक्षामूर्वर्षभकजीवकैः ।
वीरर्धिक्षीरकाकोलीबृहतीकपिकच्छुभिः ॥
खर्जूरफलमेदाभिः क्षीरपिष्टैः पलोन्मितैः ।
धात्रीविदारीक्षुरसप्रस्थैः प्रस्थं घृतात्पचेत् ॥
शर्कराऽष्टपलं शीते क्षौद्रार्धप्रस्थमेव च ।
दत्त्वा सर्पिर्गुडान् कासहिक्काज्वरापहान् ॥
यक्ष्माणं तमकं श्वासं रक्तपित्तं हलीमकम् ।
शुक्रनिद्राक्षयं तृष्णां हन्युः साश्मर्यं सकामलम् ॥

बंसलोचन, गोरखमुण्डी, द्राक्षा (मुनक्का), मूर्वा, ऋषभक, जीवक, शतावर, ऋद्धि, क्षीरकाकोली, कटेली, कौंचके बीज, खजूर के फल, और मेदा; इनका ५–५ तोले चूर्ण लेकर सबको दूध के साथ पीस लें। तदनन्तर आमले, विदारीकन्द और ईखके २–२ सेर रस तथा २ सेर घीको एकत्र मिला कर उसमें उपरोक्त पिसी हुई औषधें तथा ४० तोले खांड मिला कर पकावें और जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर, ठंडा करके उसमें १ सेर शहद मिला लें।

इसके सेवनसे कास, हिचकी, ज्वर, यक्ष्मा, तमकश्वास, रक्तपित्त, हलीमक, शुक्रक्षय, निद्राक्षय, तृषा, अश्मरी और कामलाका नाश होता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

(७९३१) सर्पिर्गुडः (२)

(सर्पिर्गुटिका)

(ग. नि । गुटिका. ४ ; च. सं. । चि. क्षतक्षीणा. ; वृ. मा. ; च. द. । राजयक्ष्मा. ; व. से. । क्षतक्षया.)

बला विदारी ह्रस्वा च पञ्चमूली पुनर्नवा ।
पञ्चानां क्षीरवृक्षाणां शुङ्गा मुष्टयंशका अपि ॥
एषां कषाये द्विक्षीरे विदार्याः स्वरसांशके ।
जीवनीयैः पचेत् कल्कैरक्षमात्रैर्घृताढकम् ॥
सितापलानि पूतेऽस्मिञ्छीते द्वात्रिंशदावपेत् ।
गोधूमपिप्पली वांशी चूर्णं शृङ्गाटकस्य च ॥
सक्षौद्रं कुडवं शीतं तत्सर्वं खजमूर्च्छितम् ।
स्त्यानं सर्पिर्गुडान् कृत्वा भूर्जपत्रेण वेष्टयेत् ॥
ताञ्जग्ध्वा पलिकान्क्षीरं मद्यं चानुपिबेत्कफे ।
शोषे कासे क्षतक्षीणे श्रमस्त्रीभारकर्शिते ॥
रक्तनिष्ठीवने तापे पीनसे चोरसि स्थिते ।
शस्ता पार्श्वशिरःशूले भेदे च हस्तपादयोः ॥

खरैटी, विदारीकन्द, पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, बड़ी कटेली, गोखरु), पुनर्नवा, बड़की कोंपल, पीपलवृक्षकी कोंपल, पिलखनकी कोंपल, गूलरकी कोंपल और सिरसकी कोंपल ५–५तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

८ सेर गोघृतमें यह क्वाथ, ८–८ सेर गाय और बकरी का दूध तथा ८ सेर विदारीकन्दका रस एवं १।–१। तोला जीवनीय गणकी औषधियों-

का कल्क मिला कर पकावें और जब जलांश शुष्क हो जाय तो घी को छान लें।

तत्पश्चात् उसमें २ सेर खांड तथा २०-२० तोले गेहूंका आटा (भुना हुवा), पीपलका चूर्ण, बंसलोचनका चूर्ण, सिंघाड़ेका चूर्ण और ४० तोले शहद मिलाकर मथनी से मथें। जब घी गाढ़ा हो जाय तो ५-५ तोलेके मोदक बनाकर उन्हें भोजपत्रमें लपेटकर रख दें।

अनुपान—दूध। यदि रोग कफप्रधान हो तो मद्य।

इनके सेवनसे शोष, कास, क्षतक्षीणता, श्रमजनित दुर्बलता तथा स्त्री सहवास और अधिक बोझ उठाने से उत्पन्न हुई क्षीणता, रक्तनिष्ठीवन, ताप, पीनस, उरःक्षत, पार्श्वशूल, शिरशूल और हाथ पैरोंका टूटना आदि विकार नष्ट होते हैं।

(**जीवनीय गण**—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मुलैठी और जीवन्ती।)

(७९३२) सारिवाद्यवलेहः

(भै. र. । उपदंश).

सारिवायाः पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ।
तस्मिन् पादावशेषे तु गुडूची शतमूलिका ॥
विदारी जीवनी त्रिवृन्मुण्डी च त्रिफला तथा ।
क्षुद्रैला चोपचीनी च प्रत्येकार्द्धपलं मतम् ॥
सुपिष्टं निक्षिपेत्तत्र शीते मधु पलाष्टकम् ।
क्षीरानुपानयोगेन पिबेत्तोलकसम्मितम् ॥
प्रमेहांश्चोपदंशांश्च मूत्रकृच्छ्रश्च पीडकाः ।
नश्यन्ति त्वपरे रोगा रक्तदुष्ट्या भवन्ति ये ॥
सूतोत्थविकृतिश्चापि सन्देहो नात्र कश्च न ।
मुक्तश्च सर्वरोगेभ्यो बलवर्णाग्निसंयुतः ॥
मानवः सिद्धकामोऽस्माच्छीघ्रं भवति निश्चितम् ॥

६। सेर सारिवाको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें गिलोय, शतावर, विदारीकन्द, जीवक, निसोत, मुण्डी, हर्र, बहेड़ा, आमला, छोटी इलायची और चोपचीनी; इनका २॥-२॥ तोले चूर्ण मिला कर पुनः मंदाग्नि पर पकावें और गाढ़ा हो जाने पर आगसे नीचे उतार कर, ठंडा होने पर उसमें १ सेर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ तोला। **अनुपान**—दूध।

इसके सेवनसे प्रमेह, उपदंश, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह-पिडिका, रक्तदोष जनित अन्य रोग और पारदके समस्त विकार शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। इससे समस्त (रक्तदोषज) रोग शीघ्र ही नष्ट हो कर बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती हैं। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

नोट—इसमें सारिवाके क्वाथको गाढ़ा करके प्रक्षेपद्रव्योंका चूर्ण मिलाना अच्छा है।

(७९३३) सितादिलेहः (१)

(वा. भ. । चि. अ. १९ कुष्ठ.)

सितातैलकृमिघ्नानि धात्र्यामलकपिप्पलीः ।
लिहानः सर्वकुष्ठानि जयत्यतिगुरूण्यपि ॥

मिश्री, तिलका तेल, बायबिडंगका चूर्ण और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा आमलेका चूर्ण २ भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें।

इसे सेवन करनेसे कष्टसाध्य कुष्ठ भी नष्ट हो जाते हैं।

(७९३४) **सितादिलेहः (२)**

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

सिताद्राक्षाकणाचूर्णं समांशं तैलपाचितम् ।
भक्षितं दारुणं श्वासं निवर्तयति वेगतः ॥

मिश्री, मुनक्का और पीपल का चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर तिलके तेलमें पका लें ।

इसे सेवन करने से भयंकर श्वास भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(७९३५) **सितादिलेहः (३)**

(वं. से. । छर्दि.)

सिताचन्दनमध्वाक्तं लिहेद्वा मक्षिकाशकृत् ।
सोपद्रवा पित्तभवा छर्दिरेतेन शाम्यति ॥

मिश्री और सफेद चन्दन या मक्खीकी विष्ठा शहदमें मिलाकर चाटनेसे उपद्रव युक्त पित्तज छर्दि नष्ट होती है ।

(७९३६) **सितादिवृष्ययोगः**

(न. मृ. । त. २)

शर्करायास्तुलैका स्यादेका गव्यस्य सर्पिषः ।
प्रस्थं विदार्याश्चूर्णस्य पिप्पल्या प्रस्थ एव च ॥
अर्धाढकं तुगाक्षीर्याः क्षौद्रस्याभिनवस्य च ।
तत्सर्वं मिश्रितं तिष्ठेन्मार्तिके घृतभाजने ॥
मात्रामग्निसमां तस्य प्रातःकाले प्रयोजयेत् ।
एष वृष्यः परो योगः कण्ठ्यो बृंहण एव च ॥

खांड ६। सेर, गोघृत ६। सेर, विदारीकन्दका चूर्ण १ सेर, पीपलका चूर्ण १ सेर, बंसलोचनका चूर्ण २ सेर और नवीन मधु ४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मिट्टीके चिकने पात्रमें भरकर रख दें ।

इसे प्रातःकाल यथोचित मात्रानुसार सेवन करना चाहिये ।

(**मात्रा**—१॥ तोलेसे २ तोले तक)

यह योग अत्यन्त वृष्य, बृंहण (बल वीर्य वर्द्धक तथा कामोत्तेजक और पौष्टिक) एवं कण्ठ शोधक है ।

(७९३७) **सिताद्यवलेहः**

(व. से. । पाण्डु. ; वृ. नि. र. । कामला.)

सितातिक्ताबलायष्टित्रिफलारजनीयुगैः ।
लेहं लिह्यात्समध्वाज्यं हलीमकप्रशान्तये ॥

मिश्री, कुटकी, खरैटीकी जड़, मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी और दारुहल्दी; इनका समान भाग चूर्ण एकत्र मिलाकर घी और शहदके साथ सेवन करनेसे हलीमक रोग नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—चूर्ण-२–३ माशे, घी ६ माशे, मधु २ तोले ।)

सितोपलाद्यवलेहः

(भा. प्र. म. खं. २ । क्षयरो.)

" सितोपलादिचूर्ण " देखिये ।

सुकुमारकुमारकावलेहः

"सुकुमारकुमारकघृतम्" देखिये ।

सुपारीपाकः

(वै. र. । वाजीकरणा.)

पकारादि अवलेह प्रकरणमें " पूगखण्डः " तथा " पूगपाकः " एवं रकारादि रस प्रकरणमें प्र. सं. ६०३९ "रतिवल्लभ–पूगपाकः" देखिये ।

(७९३८) सुवर्णगैरिकादिलेहः

(ग. नि. । हिक्का. १२)

सुवर्णगैरिकं भार्गी शालिर्लाजा निदिग्धिका ।
हिक्कानुदेष वै लेहो घृतमाक्षिकसंयुतः ॥

सोनागेरु, भरंगी, शालीधानकी खील और कटेली; इनका समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिला कर घी और शहदके साथ सेवन करनेसे हिक्का (हिचकी) का नाश होता है ।

(चूर्ण ६ माशे, घी १ तोला, शहद २ तोले । सबको मिला कर थोड़ा थोड़ा बार बार चटावें ।)

(७९३९) सैन्धवाद्यवलेहः (१)

(व. से. । अर्शो.)

सैन्धवं नागरं पाठा दाडिमस्य रसं गुडम् ।
सतक्रलवणं दद्याद्वातवर्चोनुलोमनम् ॥

सेंधा नमक, सोंठ और पाठा; इनका चूर्ण, अनारका रस और गुड़ समान भाग ले कर एकत्र मिलावें ।

इसे लवण (सेंधा नमक) युक्त तक्रके साथ सेवन करनेसे वायु और मल स्वमार्गगामी हो जाते हैं ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(७९४०) सैन्धवाद्यवलेहः (२)

(भा. प्र. म. खं. २ । बालरोगा. ; ग. नि. । बालरोगा. ११)

घृतेन सिन्धुविश्वैलाहिङ्गुभार्ङ्गीरजो लिहन् ।
आनाहं वातिकं शूलं हन्यात्तोयेन वा शिशुः॥

सेंधा नमक, सोंठ, इलायची, हींग और भरंगी; इनका चूर्ण समान भाग ले कर घीमें मिला कर चटानेसे या गरम पानीके साथ देनेसे बालकका अफारा और वातज शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(७९४१) सौभाग्यशुण्ठीपाकः (१)

(नागरखण्डः)

(यो. र. । सूतिका. ; वृ. यो. त. । त. १४२ ; भा. प्र. म. खं. २ । सूतिका.)

आज्यस्याञ्जलियुग्ममत्र पयसः प्रस्थद्वयं खण्डत पञ्चाशत्पलमत्र चूर्णितमथ प्रक्षिप्यते नागरम् । प्रस्थार्धं गुडवद्विपाच्य विधिना मुष्टित्रयं धान्य-कान्
मिस्याः पञ्चपलं पलं कृमिरिपोः साजाजिजी-रादपि ॥
व्योषाम्भोदद्लोरगेन्द्रसुमनः सद्राविडीनां पलं पक्वं नागरखण्डसञ्ज्ञकमिदं सौभाग्यदं योषिताम् तृट्छर्दिज्वरदाहशोषशमनं सश्वासकासापहं प्लीहव्याधिविनाशनं कृमिहरं मन्दाग्निसन्दी-पनम् ॥

घी १ सेर, दूध ४ सेर, खांड ३ सेर १० तोले और सोंठका चूर्ण ४० तोले ले कर प्रथम

सोंठको घीमें मन्दाग्नि पर भूनें और फिर उसमें दूध और खांड मिला कर पकावें। जब अवलेह तैयार होनेके निकट आ जाए तो उसमें निम्नलिखित प्रक्षेप मिला दें और पाक बन जाने पर आगसे नीचे उतार कर ठंडा कर लें।

प्रक्षेप—धनिया १५ तोले, सौंफ २५ तोले तथा बायबिडंग, सफेद और काला जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, तेजपात, नागकेसर और छोटी इलायची ५-५ तोले। इनका बारीक चूर्ण बना लें।

यह पाक स्त्रियोंके लिये अत्यन्त हितकारी है। तृषा, छर्दि, ज्वर, दाह, शोष, श्वास, कास, प्लीहा और कृमि रोगको नष्ट करता है। इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती है।

(**मात्रा**—१ तोलेसे २ तोले तक।)

रसरत्नसमुच्चयमें "**सूतिकामृत**" नामसे एक प्रयोग दिया है जो लगभग इसीके समान है। उसमें घीके स्थानमें पानी तथा नागरमोथा, नागकेसर और तेजपातके स्थानमें कटेली, दालचीनी, लौंग और बोल है। दूध ८ सेर है।)

(७९४२) सौभाग्यशुण्ठी (२)

(भै. र. । स्त्री.)

त्रिकटुत्रिफलाजाजी चातुर्जातकमुस्तकम् ।
जातीकोषफलं धान्यं लवङ्गं शतपुष्पिका ॥
नलिका मादनफलं यमानीद्वयधातकी ।
शतावरी तालमूली लोध्रं वारणपिप्पली ॥
पियालबीजममृता कर्पूरं चन्दनद्वयम् ।
कर्षप्रमाणान्येतेषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥
नागरस्य च चूर्णस्य प्रस्थद्वयमितं क्षिपेत् ।
दृढे च मृण्मये पात्रे पाचयेन्मृदुनाग्निना ॥
यत्नतः पाकविद्वैद्यो गुडिकां कारयेत्ततः ।
घृतमष्टपलं दद्यात् क्षीरप्रस्थं द्वयं तथा ॥
सार्द्धप्रस्थद्वयं चात्र शर्करायास्ततः क्षिपेत् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय अजाक्षीरं पिबेदनु ॥
आमवातं निहन्त्याशु कासं श्वासं सपीनसम् ।
ग्रहणीमम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं क्षतक्षयम् ॥
स्त्रीरोगं विंशतिं चैव तत्क्षणादेव नाशयेत् ।
अहन्यहनि च स्त्रीणां स्तनदार्ढ्यकरं परम् ॥
सौभाग्यजननं स्त्रीणां पुष्टिदं धातुवर्धनम् ॥

सोंठके २ सेर बारीक चूर्णको १ सेर घीमें भूनें और जब उसका रंग लाल होने लगे तो उसे ४ सेर दूधमें मिला कर उसमें २॥ सेर खांड मिलावें और मिट्टीके दृढ़ पात्रमें मन्दाग्निपर पकावें। जब पाक तैयार होनेके निकट आ जाय तो उसमें निम्नलिखित प्रक्षेप मिला दें और खूब गाढ़ा हो जाने पर अग्निसे नीचे उतारकर ठंडा कर लें।

प्रक्षेप—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, जीरा, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, नागकेसर, नागरमोथा, जावत्री, जायफल, धनिया, लौंग, सोया, नलिका, मैनफल, अजवायन, अजमोद, धायके फूल, शतावर, तालमूली, लोध, गजपीपल, चिरौंजी, गिलोय, कपूर, सफेद चन्दन और लाल चन्दन १।-१। तोला ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

(कपूरको थोड़े घीके साथ घोटकर मिलाना चाहिये ।)

(मात्रा—१ से २ तोले तक ।)

अनुपान—बकरीका दूध ।

यह पाक आमवात, कास, श्वास, पीनस, ग्रहणी रोग, अम्लपित्त, रक्तपित्त, क्षतक्षय और स्त्री रोगोंको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है। इसके सेवनसे स्त्रियोंके स्तन दृढ़ होते तथा सौभाग्यकी वृद्धि होती है। यह पाक पौष्टिक और धातुवर्द्धक है।

(७९४३) सौभाग्यशुण्ठी (३) (बृहत्)

(भै. र. । स्त्रीरो.)

महौषधं समादाय चूर्णयित्वा विधानतः ।
पलषोडशिकां नीत्वा क्षीरे दशगुणे पचेत् ॥
क्रमेण पाकशुद्धिः स्याद् घृतप्रस्थे च भर्जयेत् ।
लघुपाकः प्रकर्त्तव्यो न खरो मोदकेष्वपि ॥
शतावरी विदारी च मूषली गोक्षुरो बला ।
छिन्नासत्त्वं शताह्वा च जीरकौ व्योषचित्रकौ ॥
त्रिसुगन्धि यमानी च तालीशं कारवी मिशिः ।
रास्ना पुष्करमूलं च वांशी दारु शताह्वयम् ॥
शटी मांसी वचा मोचत्वक् पत्रं नागकेशरम् ।
जीवन्ती मेथिका यष्टी चन्दनं रक्तचन्दनम् ॥
क्रिमिघ्नं तोयसिंहास्यधन्याकं कट्फलं घनम् ।
कर्षद्वयमितं भागं प्रत्येकं पट्टघर्षितम् ॥
सर्वचूर्णाद् द्विगुणिता प्रदेया सितशर्करा ।
युक्त्या पाकविधानज्ञो मोदकं परिकल्पयेत् ॥
शुद्धे भाण्डे निधायाथ खादेन्नित्यं यथाबलम् ।
वीक्ष्याग्निबलकोष्ठञ्च नारीणाञ्च विशेषतः ॥
क्षौद्रानुपानतः प्रातः गुरुदेवान् समाचरेत् ।
तद्वर्ण्यं बल्यमायुष्यं वलीपलितनाशनम् ॥
वयसः स्थापनं प्रोक्तमग्निदीप्तिकरं परम् ।
वृष्याणामतिवृष्यञ्च रसायनमिदं शुभम् ॥
विशेषात् स्त्रीगदे प्रोक्तं प्रसूतानां यथामृतम् ।
विंशतिर्व्यापदो योनेः प्रदरं पञ्चधाऽपि च ॥
योनिदोषहरं स्त्रीणां रजोदोषहरन्तथा ।
पापसंसर्गजं दोषं नाशयेन्नात्र संशयः ॥
आमवातहरञ्चैव शिरःशूलनिवारणम् ।
सर्वशूलहरञ्चैव विशेषात् कटिशूलनुत् ॥
वीर्यवृद्धिकरं पुंसां सूतिकातङ्कनाशनम् ।
वातपित्तकफोद्भूतान् द्वन्द्वजान् सन्निपातजान् ॥
हन्ति सर्वगदानेषा शुण्ठी सौभाग्यदायिनी ।
सौभाग्यदायिनी स्त्रीणामतः सौभाग्यशुण्ठिका ॥

१ सेर शुण्ठी चूर्णको २० सेर दूधमें पकावें। जब खोयेकी तरह गाढ़ा हो जाय तो उसे २ सेर घीमें भून लें। पश्चात् २१५ तोले खांडकी चाशनीमें पकावें। जब पाक हो जाय तब शतावर, विदारीकन्द, मूसली, गोखरू, बला, गिलोयका सत, सोया, श्वेत जीरा, काला जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रक, दारचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र, अजवाइन, तालीशपत्र, कारवी (अजमोदा), सौंफ, रास्ना, पुष्करमूल, वंशलोचन, देवदारु, सोया, कचूर, जटामांसी, वच, मोचरस, दारचीनी, तेजपत्र, नागकेसर, जीवन्ती, मेथीबीज, मुलहठी, श्वेतचन्दन, लाल चन्दन, बायबिडङ्ग, सुगन्धबाला,

अडूसाछाल, धनिया, कट्फल और मोथा; प्रत्येकका चूर्ण २॥ तोले; इनका प्रक्षेप दें और अच्छी प्रकार मिला नीचे उतार लें। इसमें पाक मृदु करना चाहिये। मोदक आदिके पाकमें खरपाक निषिद्ध है। पाक करनेके पश्चात् मोदक बना लें और शुद्ध पात्रमें रक्खें। (**मात्रा**-आधे तोलेसे २ तोले तक।) गुरु और देवताओंकी पूजा करके उपर्युक्त मात्रामें शहदके साथ इसे सेवन करावें। यह वर्ण्य, बल्य, आयुष्कर, वृष्य, वयःस्थापक तथा अग्निप्रदीपक है। यह विशेषतः सूतिका रोगमें अत्यन्त हितकर है। इसके सेवनसे योनिरोग, प्रदर, योनिदोष, आर्तवदोष, आमवात, शिरोवेदना, सम्पूर्णशूल, कटिशूल (कमर दर्द) प्रभृति रोग नष्ट होते हैं। सम्पूर्ण वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज तथा सन्निपातज रोगोंको शान्त करता है। यह बृहत्सौभाग्यशुण्ठी स्त्रियोंके सौभाग्यको बढ़ाती है।

सौभाग्यशुण्ठी (४)

(वृ. नि. र. ; वै. र. । आमवाता.)

प्र. सं. ३४६६ नागराद्यवलेहः देखिये।

सौभाग्यशुण्ठ्यवलेहः

रसप्रकरणमें देखिये।

(७९४४) सौवर्चलाद्यवलेहः

(वृ. मा. । छर्दि.)

सौवर्चलमजाजी च शर्करा मरिचानि च।
युक्तोऽयं मधुना लेहः श्रेष्ठश्छर्दिनिबर्हणः॥

संचल (काला नमक), जीरा, खांड और काली मिर्च; इनका समान भाग मिलित चूर्ण शहदके साथ चाटनेसे छर्दि नष्ट हो जाती है। यह एक उत्तम योग है।

(**मात्रा**—३ माशे।)

(७९४५) स्तम्भनावलेहः

(र. र. । वाजीकरणा. , धन्व. । वाजीकरणा.)

आफिङ्गजातीफलयोः प्रत्येकं रक्तिका त्रयम्।
कर्पूरस्य च रक्त्येका सप्तच्छदसुमस्य च॥
पञ्चरक्ति प्रमाणन्तु ग्राह्यमिन्द्राशनस्य च।
मासकश्च चतुर्ग्राह्यं मधुना लेह उत्तमः॥
धार्यं कदापि नो वीर्यं रमेत्स्त्रीणां शतानि च॥

अफीम और जायफल ३-३ रत्ती, कपूर १ रत्ती, सतौनेके फूल ५ रत्ती और भांग ४ माशे ले कर सबको एकत्र खरल करें और शहदमें मिला लें।

इसे खानेसे वीर्य-स्तम्भन होता है और सौ स्त्रियोंके साथ रमण करने पर भी वीर्यपात नहीं होता।

(यह एक मात्रा है।)

इति सकाराद्यवलेहप्रकरणम्

अथ सकारादिघृतप्रकरणम्

(७९४६) **सप्तप्रस्थघृतम्**

(च. द. । रक्तपित्ता. ९)

शतावरी पयो द्राक्षाविदारीक्ष्वामलै रसैः ।
सर्पिषा सह संयुक्तैः सप्तप्रस्थं पचेद्धृतम् ॥
शर्करापादसंयुक्तं रक्तपित्तहरं पिबेत् ।
उरःक्षते पित्तशूले योनिवातेऽप्यसृग्दरे ॥
बल्यमूर्जस्करं वृष्यं क्षुधाहृद्रोगनाशनम् ॥

१ सेर घी और १-१ सेर शतावरका रस, दूध, मुनक्काका क्वाथ (या अंगूरका रस), बिदारीकन्दका रस, ईखका रस और आमलेका रस लेकर सबको एकत्र मिला कर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाए तो उसे छान लें; और फिर उसमें पाव सेर (२० तोले) खांड मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

यह घृत रक्तपित्त, उरःक्षत, पित्तशूल, योनिगत वायु, रक्तप्रदर और हृद्रोगको नष्ट करता तथा बल वीर्य और ओज एवं क्षुधाकी वृद्धि करता है ।

(**मात्रा**—१ तोला ।)

(७९४७) **सप्ताङ्गघृतम्**

(ग. नि. । घृता. १)

शङ्खपुष्पीगुडूच्युग्राशतावर्यर्कवल्लिकाः ।
मलपूं ब्रह्मसोमां च कल्कीकृत्य घृतं पचेत् ॥
दुग्धं चतुर्गुणं दत्त्वा वातश्लेष्महरं च तत् ।
मेधाकरं तथायुष्यं सप्ताङ्गमिति कीर्तितम् ॥

कल्क—शंखपुष्पी, गिलोय, बच, शतावर, हुलहुल, कठूमरकी छाल और ब्राह्मी । सब समान भाग मिलित ४० तोले ले कर बारीक पीस लें ।

४ सेर घीमें यह कल्क और १६ सेर दूध मिला कर पकावें । जब दूध जल जाए तो घृतको छान लें ।

यह घृत वातकफ-नाशक, बुद्धिवर्द्धक और आयुवर्द्धक है ।

(७९४८) **समङ्गादिघृतम्**

(ग. नि. । बालरो. ११ ; वा. भ. । उ. अ. २)

समङ्गाधातकीरोध्रकुटन्नटबलाह्वयैः ।
महासहाक्षुद्रसहामुद्गबिल्वशलाटुभिः ॥
सकार्पासीफलैस्तोये साधितैः साधितं घृतम् ।
क्षीरमस्तुयुतं हन्ति शीघ्रदन्तोद्भवान् गदान् ॥
विविधानामयानेतान्वृद्धकाश्यपनिर्मितम् ॥

कल्क—लज्जालुकी जड़ (या मजीठ), धायके फूल, लोध, नागरमोथा, खरैटीकी जड़, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मूंग और बेलगिरी समान भाग मिलित ४० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

क्वाथ—लाल कपासके फल ८ सेर ले कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर रहने पर छान लें ।

४ सेर घीमें उपरोक्त कल्क, क्वाथ तथा ४-४ सेर दूध और मस्तु मिला कर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाए तो घृतको छान लें ।

यह घृत बच्चोंके दांत निकलनेके समय होने वाले समस्त रोगोंको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—१॥ से ३ माशे तक ।)

(७९४९) सर्जादिघृतम्

(यो. र. । नासा. ; व. से. । नासा. ; वृ. यो. त. । त. १३०)

सर्जार्जुनोदुम्बरवत्सकानां
त्वचा कषायैः परिधावनेन ।
कषायकल्कैरपि चैभिरेव
सिद्धं घृतं घ्राणविपाकनाशि ॥

शालकी छाल, अर्जुन वृक्षकी छाल, गूलरकी छाल और कुड़ेकी छाल समान भाग ले कर सबको एकत्र कूट कर आठ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

इस क्वाथसे धोनेसे या इन्हीं औषधियोंके कल्क और क्वाथसे सिद्ध घृत लगानेसे नासापाकको आराम होता है।

(उपरोक्त क्वाथ ४ सेर, घी १ सेर, उपरोक्त ओषधियोंका कल्क १० तोले ।)

(७९५०) सहाचरघृतम्

(भै. र. । क्षुद्ररोगा.)

सहाचरतुलाक्वाथे क्वाथे च दशमूलजे ।
शिरीषस्य कषाये च घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
कल्कान् दत्वा पञ्चकोलं कृमिघ्नं पटुपञ्चकम् ।
क्षारत्रयं वृश्चिकालीं सिन्दूरमपि गैरिकम् ॥
हन्यादेतद् घृतं न्यच्छं नीलिकां तिलकालकम् ।
अङ्गुलीवेष्टकं पाददारीश्च मुखदूषिकाम् ॥

क्वाथ—(१) ६। सेर पियाबांसेको कूट कर ५० सेर पानीमें पकावें और १२॥ सेर रहने पर छान लें। (२) इसी प्रकार बना हुवा दशमूलका क्वाथ १२॥ सेर (३) इसी प्रकार बना हुवा सिरसकी छालका क्वाथ १२॥ सेर।

कल्क—पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ), बायबिडंग, पांचों नमक, जवाखार, सज्जी, सुहागा, बिछाटीकी जड़, सिन्दूर और गेरु; सबका समान भाग मिलित चूर्ण २० तोले।

२ सेर घीमें उपरोक्त तीनों क्वाथ तथा कल्क मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो घृतको छान लें।

इसे मलनेसे न्यच्छ, नीलिका, तिल, कालक, अंगुलीवेष्ट और पाददारी (बिवाई) तथा मुख दूषिका (मुहासों) का नाश होता है।

(७९५१) सारस्वतघृतम् (१)

(व. से. । उन्मादा. ; वृ. नि. र. । उन्मादा.)

त्रिफला लक्ष्मणाऽनन्ता समङ्गा शारिवाऽमृता ।
ब्राह्मी पाठा द्विबृहती द्विस्थिरा द्विपुनर्नवा ॥
सहदेवी सूर्यवल्ली वयस्था गिरिकर्णिका ।
तोयकुम्भे पचेदेतत्पलांशं पादशेषिते ॥
नतं कौन्ती वचा कुष्ठं कृष्णसर्षपसैन्धवैः ।
निरुक्तसवर्णवत्सायाः संसिद्धं पयसा च गोः ॥
पुष्ययोगे घृतप्रस्थं सुहेमकलशे स्थितम् ।
पानाभ्यञ्जनतो मेधास्मृत्यायुःपुष्टिवर्धनम् ॥
रक्षोघ्नञ्च विषघ्नञ्च सारस्वतमिदं घृतम् ।

क्वाथ—हर्र, बहेड़ा, आमला, लक्ष्मणा, अनन्तमूल, लज्जालुकी जड़, सारिवा, गिलोय, ब्राह्मी, पाठा, छोटी और बड़ी कटेली, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, सफेद और लाल पुनर्नवा, सहदेवी, क्षीरकाकोली, काकोली और कोयल ५-५ तोले लेकर

सबको एकत्र कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर रहने पर छान लें।

कल्क—तगर, रेणुका, बच, कूठ, काली सरसों और सेंधा नमक; इनका समान भाग मिलित चूर्ण २० तोले ले कर पानीके साथ पीस लें।

अपनेही समान वर्णके बछड़े वाली स्वस्थ गायके २ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और २ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें और स्वर्ण कलशमें भर कर रख दें।

इसे पीने और इसकी मालिश करनेसे मेधा, स्मृति, आयु और पुष्टिकी वृद्धि होती है। यह घृत राक्षसों और विषको भी नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ तोला। **अनुपान**—दूध)

(७९५२) सारस्वतघृतम् (२)

(व. से. । रसायना. ; वा. भ. । उत्तर. अ. १)

आजं पयः शृङ्गवेरं वचा शिग्रुहरीतकी ।
पिप्पल्यो मरिचं पाठा सैन्धवं दशमं घृतम् ॥
शृङ्गवेरादयो भागा लवणान्ताः पलाष्टकम् ।
चतुर्गुणेन पयसा घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
एतत् प्राशितमात्रेण किन्नरैः सह गीयते ।
जडगद्गदमूकत्वं पानादेव प्रशाम्यति ॥
नष्टश्च स्मरते ग्रन्थं श्रुतिश्चाप्युपजायते ।
एतत्सारस्वतं नाम स्मृतिमेधाविवर्द्धनम् ॥

कल्क—अदरक; बच, सहंजनेकी छाल, हर्र, पीपल, काली मिर्च, पाठा और सेंधा नमक; इनका ५-५ तोले चूर्ण ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर गोघृतमें उपरोक्त कल्क और ८ सेर बकरीका दूध मिला कर पकावें। जब दूध जल जाए तो घीको छान लें।

इसे सेवन करनेसे स्वर किन्नरोंके समान मधुर हो जाता है। यह घृत जड़ता, गद्‌गद स्वर (हकलाना) और मूकता (गूंगेपन) को नष्ट करता है। इसके सेवनसे भूले हुवे ग्रन्थ याद हो जाते हैं और बुद्धि बढ़ती है तथा श्रुतियोंका ज्ञान हो जाता है।

(**मात्रा**—१ तोला। **अनुपान**-दूध।)

(७९५३) सारस्वतघृतम् (३)

(व. से. । वातव्या. ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

प्रस्थं घृतस्य पलिकैः शिग्रुवचाधातकीलोध्र-
लवणैः ।
आजे पयसि सपाठैः सिद्धं सारस्वतं नाम्ना ॥
विधिवदुपयुज्यमानं जडगद्गदमूकतां क्षणाज्जि-
त्वा ।
स्मृतिमतिमेधाप्रतिभाः कुर्य्यात् सम्यगिष्टवा-
ग्भवति ॥

कल्क—सहंजनेकी छाल, बच, धायके फूल, लोध, सेंधा नमक और पाठा ५-५ तोले।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर बकरीका दूध मिला कर पकावें। जब दूध जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे जड़ता गद्गद् शब्द (हकलाना) और मूकता (गूंगेपन) का नाश हो कर स्मृति, मति मेधा और प्रतिभाकी वृद्धि होती है।

(**मात्रा**—१ तोला । **अनुपान**-दूध ।)

सारस्वतघृतम् (४)

(व. से. । रसायना. ; भै. र. । स्वरभेदा.)

प्र. सं. ४६७७ "ब्राह्मीघृतम्" (४) देखिये।

उक्त ग्रन्थोंके अनुसार "मालती" के स्थानमें "आमला" होना चाहिये।

(७९५४) सारिवादिघृतम्

(वा. भ. । उ. अ. २)

सारिवासुरभीब्राह्मीशङ्खिनीकृष्णसर्षपैः ।
वचाश्वगन्धासुरसायुक्तैः सर्पिर्विपाचयेत् ॥
तन्नाशयेद्ग्रहान्सर्वान्पानेनाभ्यञ्जनेन च ॥

कल्क—सारिवा, गूगल, ब्राह्मी, शंखाहोली, काली सरसों, बच, असगन्ध और तुलसी समान भाग मिलित ४० तोले।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां समान भाग मिलित ८ सेर ले कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर रहने पर छान लें।

४ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसे पिलाने और इसकी मालिश करनेसे समस्त ग्रह विकार दूर होते हैं।

(७९५५) सितादिघृतम्

(व. से. । मुखरोगा.)

सितातमालपत्राभ्यां मरिचं द्विगुणं न्यसेत् ।
तेन सर्पिर्विपक्वन्तु नस्याद्धन्याद्गलग्रहान् ॥

मिश्री और तेजपात १-१ भाग तथा काली मिर्च २ भाग ले कर सबको पानीके साथ पीस लें। तदनन्तर इस कल्कमें इससे ४ गुना घी और घीसे ४ गुना इन्हीं ओषधियोंका क्वाथ मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे गलग्रह नष्ट होता है।

(७९५६) सिंहामृतघृतम्

(व. से. । कासा.)

सर्पिर्गुडूचीवृषकण्टकारी
क्वाथेन कल्केन च सिद्धमेतत् ।
पेयं पुराणज्वरकासशूल-
श्वासाग्निमान्द्यं ग्रहणीगदे च ॥

कल्क—गिलोय, बासेकी जड़की छाल और कटेली समान भाग मिलित २० तोले ले कर बारीक पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां समान भाग मिलित ४ सेर ले कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसे पीनेसे जीर्ण ज्वर, कास, शूल, श्वास, अग्निमांद्य और ग्रहणी रोगका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ तोला ।)

(७९५७) सिंहामृतघृतम् (सिंहयमृतघृतम्)

(यो. र. ; व. से । प्रमेहा. ; न. मृ. । त. ७ ; वृ. नि. र. । प्रमेहा. ; वृ. यो. त. । त. १०३ ; भा. प्र. म. खं. २ । प्रमेहा. ; च. द. । प्रमेहा.)

कण्टकार्या गुडूच्याश्च संहरेच्च शतं शतम् ।
सङ्कुटयोलूखले विद्वांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥
तेन पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
त्रिकटु त्रिफला रास्ना विडङ्गान्यथ चित्रकम् ॥
काश्मर्याणां च मूलानि पूतिकस्य त्वचस्य च ।
कलिङ्ग इति सर्वाणि सूक्ष्मपिष्टानि कारयेत् ॥
अस्य मात्रां पिबेत्प्रातः शालिभिः पयसा हितैः।
प्रमेहं मधुमेहं च मूत्रकृच्छ्रं भगन्दरम् ॥
आलस्यं चान्त्रवृद्धिं च कुष्ठरोगं विशेषतः ।
क्षयं चापि निहन्त्येतन्नाम सिंहामृतं घृतम् ॥

क्वाथ——१००-१०० पल (६।-६। सेर) कटेली और गिलोयको एकत्र कूटकर १२८ सेर पानीमें पकावें । जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, रास्ना[1], बायबिडंग, चीतामूल, खम्भारीकी जड़की छाल, पूतिक करञ्जकी छाल, दालचीनी और इन्द्रजौ समान भाग मिश्रित २० तोले । सबको बारीक पीस लें ।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

[1] चक्रदत्तमें रास्नाका अभाव है ।

इसे शालि चावलोंके भात या दूधादिके साथ प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे प्रमेह, मधुमेह, मूत्रकृच्छ्र, भगन्दर, आलस्य, अन्त्रवृद्धि, कुष्ठ और क्षयका नाश होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

(७९५८) सुकुमारकुमारकघृतम् (१) (सुकुमारकुमारकावलेहः)

(भा. प्र. । मूत्रकृच्छ्रा. म. खं. २ ; र. र., च. द. । मूत्रकृच्छ्रा.)

पुनर्नवामूलतुलां दर्भमूलं शतावरीम् ।
ब ग तुरङ्गगन्धा च तृणमूलं त्रिकण्टकम् ॥
[illegible] दारि कन्दनागाह्व गुडूच्यातिबलास्तथा ।
पृ[illegible]ग्दशपलान्भागानपां द्रोणे विपाचयेत् ॥
ते[illegible] पादावशेषेण घृतस्यार्द्धाढकं पचेत् ।
मधुकं शृङ्गवेरञ्च द्राक्षां सैन्धवपिप्पलीम् ॥
द्विपलांशान्पृथग्दत्त्वा यवान्याः कुडवं तथा ।
त्रिंशद्गुडपलान्यत्र तैलस्यैरण्डजस्य च ॥
प्रस्थं दत्त्वा समालोड्य सम्यङ्मृद्वग्निना पचेत् ।
एतदीश्वरपुत्राणां प्राग्भोजनमनिन्दितम् ॥
राज्ञां राजसमानानां बहुस्त्रीपतयश्च ये ।
मूत्रकृच्छ्रे कटिस्रस्ते तथा गाढपुरीषिणाम् ॥
मेढ्रवंक्षणशूले च योनिशूले च शस्यते ।
यथोक्तानाञ्च गुल्मानां वातशोणितनिश्चये ॥
वल्यं रसायनं श्रीदं सुकुमारकुमारकम् ॥

क्वाथ——(१) ६। सेर पुनर्नवामूलको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

(२) दाभकी जड़, शतावर, खरैटीकी जड़, असगन्ध, सुगन्धतृणकी जड़ (मिरचियागन्ध), गोखरु, विदारीकन्द, नागकेसर, गिलोय और अतिबला (कंघी) की जड़ ५०-५० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

४ सेर घीमें उपरोक्त दोनों क्वाथ, २ सेर अण्डीका तेल और निम्नलिखित कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

कल्क—मुलैठी, अदरक, मुनक्का, सेंधा नमक और पीपल; इनका चूर्ण १०-१० तोले तथा अजवायनका चूर्ण २० तोले और गुड़ १५० तोले।

यह घृत धनिकोंके योग्य है। इसे भोजनके पहिले खिलाना चाहिये।

इसके सेवनसे मूत्रकृच्छ्र, कमरकी शिथिलता, मलका कड़ा होना, लिंगकी पीड़ा, वंक्षणशूल, योनिशूल, गुल्म और वातरक्तका नाश होता है। यह बल्य और रसायन है।

(७९५९) सुकुमारकुमारकघृतम् (२)

(वा. भ. । चि. अ. १३)

पचेत्पुनर्नवतुलां तथा दशपलाः पृथक् ।
दशमूलपयस्याश्च गन्धैरण्डशतावरीः ॥
द्विदर्भशरकाशेक्षु मूलपोटगलान्विताः ।
वहेपामष्टभागस्थे तत्र त्रिंशत्पलं गुडात् ॥

प्रस्थमेरण्डतैलस्य द्वौ घृतात्पयसस्तथा ।
आवपेद्द्विपलांशं च कृष्णा तन्मूलसैन्धवम् ॥
यष्टीमधुकमृद्वीकायवानी नागराणि च ।
तत्सिद्धं सुकुमाराख्यं सुकुमारं रसायनम् ॥
वातातपाध्वयानादिपरिहार्येष्वयन्त्रणम् ।
प्रयोज्यं सुकुमाराणामीश्वराणां सुखात्मनाम् ॥
नृणां स्त्रीवृन्दभर्तृणामलक्ष्मीकलिनाशनम् ।
सर्वकालोपयोगेन कान्तिलावण्यपुष्टिदम् ॥
वर्ध्मविद्रधिगुल्मार्शोयोनिमेढ्रानिलार्तिषु ।
शोफोदरखुडप्लीहविड्विबन्धेषु चोत्तमम् ॥

क्वाथ—पुनर्नवामूल ६। सेर तथा दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, क्षीरकाकोली, अगर, अरण्डमूल, शतावर, दो प्रकारकी दाभ, शर, कासकी जड़, ईखकी जड़, और नलकी जड़ ५०-५० तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर १२८ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर रहने पर छान लें।

कल्क—पीपल, पीपलामूल, सेंधा नमक, मुलैठी, मुनक्का, अजवायन और सोंठ १०-१० तोले लेकर बारीक चूर्ण बनावें। गुड़ १५० तोले।

४ सेर घीमें २ सेर अण्डीका तेल, ४ सेर दूध और उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिलाकर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें।

यह घृत धनवानों, सुकुमारों और सुखशील व्यक्तियोंके योग्य है। इसके सेवन कालमें वातातप, मुसाफरी आदि किसी बातका परहेज करनेकी आवश्यक्ता नहीं है।

इसे निरन्तर दीर्घकाल तक सेवन करनेसे कान्ति, लावण्य और पुष्टिकी वृद्धि होती है।

यह घृत वर्ध्म, विद्रधि, गुल्म, अर्श, योनि और लिंगकी वातज पीड़ा, शोथ, उदररोग, वातरक्त, प्लीहा और मलबन्धको नष्ट करता है।

(७९६०) सुनिषण्णकचाङ्गेरीघृतम्

(भै. र. ; च. द. । अर्शो.)

अवाक्पुष्पी बला दार्वी पृश्निपर्णी त्रिकण्टकम् ।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थशुङ्गाश्च द्विपलोन्मिताः ॥
कषाय एष पेष्यास्तु जीवन्ती कटुरोहिणी ।
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं देवदारु च ॥
कलिङ्गं शाल्मलीपुष्पं वीरा चन्दनमञ्जनम् ।
कट्फलं चित्रकं मुस्तं प्रियङ्ग्वतिविषे स्थिरा ॥
पद्मोत्पलानां किञ्जल्कः समङ्गा सनिदिग्धिका ।
बिल्वं मोचरसं पाठा भागाः स्युः कार्षिकाःपृथक् ॥
चतुः प्रस्थशृतं प्रस्थं कषायमवतारयेत् ।
त्रिंशत्पलानि तु प्रस्थो विज्ञेयो द्विपलाधिकः ॥
सुनिषण्णकचाङ्गेर्याः प्रस्थौ द्वौ स्वरसस्य च ।
सर्वैरेतैर्यथोद्दिष्टैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
एतदर्शःस्वतीसारे त्रिदोषे रुधिरस्रुतौ ।
प्रवाहणे गुदभ्रंशे पिच्छासु त्रिविधासु च ॥
उत्थाने चापि बहुशः शोथशूलगुदामये ।
अन्त्रग्रहे मूढवाते मन्दाग्नावरुचावपि ॥
प्रयोज्यं विधिवत्सर्पिर्बलवर्णाग्निवर्धनम् ।
विविधेष्वन्नपानेषु केवलं वा निरत्ययम् ॥

क्वाथ—सोया, खरैटी, दारुहल्दी, पृष्ठपर्णी, गोखरु, बड़ (बरगद) के अंकुर (कोंपल), गूलरकी कोंपल, और पीपलकी कोंपल १०-१० तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर रहने पर छान लें।

कल्क—जीवन्ती, कुटकी, पीपल, पीपलामूल, काली मिर्च, देवदारु, इन्द्रजौ, सेंभलके फूल, क्षीरकाकोली, सफेदचन्दन, रसौत, कायफल, चीतामूल, नागरमोथा, फूलप्रियंगु, अतीस, शालपर्णी, कमलकेसर, नीलोत्पलकी केसर, मजीठ, कटेली, सोंठ[1] मोचरस और पाठा १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घी में उपरोक्त क्वाथ, कल्क तथा ४-४ सेर चांगेरी (चौपतिया) और सुनिषण्णक (अम्ललोनी) का रस मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत अर्श, त्रिदोषज अतिसार, रक्तस्राव, प्रवाहिका, गुदभ्रंश, पिच्छल दस्त आना, शोथ, शूल, अर्श, अन्त्रग्रह, मूढवात, अग्निमांद्य और अरुचि को नष्ट करता तथा बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है।

इसे विविध प्रकारके अन्नपानोंके साथ या अकेला ही खिलाना चाहिये।

(मात्रा—१ तोला।)

(७९६१) सूर्योदयघृतम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २१)

रास्नामागधिकामूलं दशमूलं शतावरी ।
शणत्रिवृत्तथैरण्डो भागान् द्विपलिकान् क्षिपेत् ॥
तथाविदारी मधुकं मेदे द्वे सपुनर्नवा ।
काकोल्यौ द्वे शिवा चैव भागा त्रिपलिकानि च ॥

१-सोंठके स्थान पर बिल्व है।

खर्जूरी भीरु मृद्वीका गोक्षुरश्च सशर्करः ।
एषां चतुःपली मात्रा दुग्धं प्रस्थं विनिक्षिपेत् ॥
प्रस्थार्धं नवनीतं च घृतप्रस्थार्धकं क्षिपेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावत्सिद्धं यावत्प्रदर्श्यते ॥
परिस्रुतं शुभे भाण्डे शीतस्थाने तु धारयेत् ।
सर्वदा भोजनाभ्यंगे नस्ये बस्तौ प्रदापयेत् ॥
हन्त्यपस्मारकं घोरमुन्मादं च नियच्छति ।
तमकं भ्रमकं शोषं सदाघं च सपीनसम् ॥
क्षयं च राजयक्ष्माणं छर्दिं जयति दारुणाम् ।
हन्ति विसर्पं विषं घोरं व्रणशोषहरं परम् ॥
लूताभूतपिशाचानां पामाकुष्ठविनाशनम् ।
त्रासनं सर्वदोषाणां प्राशनं वै घृतस्य च ॥
मन्दाग्निविषमाग्नीनां साम्यं प्रकुरुते भृशम् ।
हन्ति रोगं तमस्तोमं शीघ्रं सूर्योदयो यथा ॥

कल्क—रास्ना, पीपलामूल, दशमूल, शतावर, सनकी जड़, निसोत और अरण्डमूल, १०–१० तोले; विदारीकन्द, मुलैठी, मेदा, महामेदा, पुनर्नवा, काकोली, क्षीरकाकोली और हर्र १५–१५ तोले; खजूर, छोटी शतावर, मुनक्का, गोखरु और खांड २०–२० तोले। लेकर सबको एकत्र पीस लें।

१ सेर नवनीत (मक्खन) और १ सेर घी को एकत्र मिलाकर उसमें उपरोक्त कल्क और २ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी और दूध जल जाए तो घीको छान लें। इसे शीतल स्थानमें रखना चाहिये।

इसे भोजनमें खिलाना तथा अभ्यंग, नस्य और बस्तिद्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

इसके सेवनसे अपस्मार, घोर उन्माद, तमकश्वास, भ्रम, शोष, दाह, पीनस, क्षय, राजयक्ष्मा, दारुणछर्दि, विसर्प, विष, व्रणजनित शोष (उरःक्षत जनित क्षय), मकड़ीका विष, भूत और पिशाचबाधा, पामा और कुष्ठका नाश होता है।

यह घृत मन्दाग्नि और विषमाग्निको सम कर देता है।

(इस घृतमें २ सेर घी में ३॥ सेर से अधिक कल्क है, जो साधारण नियमसे बहुत अधिक है अतः पाकके समय १। मनके लगभग पानी भी मिलाना चाहिये नहीं तो पाक ठीक न होगा।)

(७९६२) सैन्धवघृतम्

(यो. र. । अपस्मारा)

घृतं सैन्धवहिङ्गुभ्यां कणाभिस्तच्चतुर्गुणैः ।
मूत्रैः सिद्धमपस्मारहृद्ग्रहग्रामनाशनम् ॥

कल्क—सेंधा नमक, हींग और पीपल समान भाग मिलित १० तोले लेकर एकत्र पीस लें।

१ सेर घीमें यह कल्क और ४ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत अपस्मार और ग्रहविकारोंको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ तोला।)

(७९६३) सोमघृतम् (१)

(भै. र. । स्त्रीरोगा ; व. से. । बालरोगा. ; वृ. यो. त. । त. १४४ ; च. द. । स्त्रीरोगा.)

सिद्धार्थकं वचा ब्राह्मी शङ्खपुष्पी पुनर्नवा ।
पयस्यामययष्ट्याह्वं कटुका च फलत्रयम् ॥

शारिवे रजनी पाठाभृङ्गदारुसुवर्चला: ।
मञ्जिष्ठा त्रिफला श्यामा वृषपुष्पं सगैरिकम् ॥
धीमान् पक्त्वा घृतमस्थं सम्यङ्मन्त्राभिम-
न्त्रितम् ।
द्विमासगर्भिणी नारी षण्मासानुपयोजयेत् ॥
सर्वज्ञं जनयेत्पुत्रं सर्वामयविवर्जितम् ।
अस्य प्रयोगात् कुक्षिस्थः स्फुटवाग्व्याहरत्यपि ॥
योनिदुष्टाश्च या नार्यो रेतोदुष्टाश्च ये नराः ।
स्त्रीणां पुंसां दोषहरं घृतमेतदनुत्तमम् ॥
वन्ध्यापि लभते पुत्रं शूरं पण्डितमानिनम् ।
जडगद्गदमूकत्वं पानादेवापकर्षति ॥
सप्तरात्रप्रयोगेण नरः श्रुतिधरो भवेत् ।
नाग्निर्दहति तद्वेश्म न वज्रमुपहन्ति च ॥
न तत्र म्रियते बालो यत्रास्ते सोमसंज्ञितम् ॥

कल्क—सफेद सरसों, बच, ब्राह्मी, शंखाहोली (शंखपुष्पी), पुनर्नवा (साठीकी जड़) क्षीरकाकोली, कूठ, मुलैठी, कुटकी, त्रिफला (मुनक्का, खम्भारीके फल, फालसा), दो प्रकारकी शारिवा, हल्दी, पाठा, भंगरा, देवदारु, हुलहुल, मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, फूलप्रियंगु, अडूसे (बासे) के फूल और गेरु ; इनका चूर्ण समान भाग मिलित २० तोले ।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें एवं उसे गायत्री मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे गर्भके दो महीने पूरे होनेके पश्चात्से गर्भिणी स्त्रीको सेवन कराना चाहिये और ६ मास निरन्तर खिलाना चाहिये ।

इस प्रकार इसे सेवन करानेसे बुद्धिमान, रोगरहित और स्पष्ट उच्चारण करने वाला पुत्र उत्पन्न होता है ।

यह घृत योनिदोषों और वीर्यदोषोंको नष्ट करनेके लिये एक उत्तम औषध है । इसके सेवन से बन्ध्या स्त्रीको भी शूर और विद्वान पुत्र प्राप्त होता है ।

यह घृत जड़ता, गद्गद् शब्द (हकलाना) और मूकता (गूंगेपन) को नष्ट करता है ।

इसे केवल सात दिन (थोड़े दिनों ही) सेवन करनेसे मनुष्य श्रुतिधर हो जाता है ।

जिस घरमें यह घृत रहता है वह घर विघ्नों से सुरक्षित रहता है और उसमें बालकोंकी मृत्यु नहीं होती ।

(**मात्रा**—६ माशे से १ तोले तक)

(७९६४) सोमघृतम् (२)

(वृ. मा. । स्त्रीरोगा.)

सिद्धार्थकं वचां ब्राह्मीं शङ्खपुष्पीं विषाणिकाम् ।
पयस्यां मधुकं कुष्ठं तथा कटुकरोहिणीम् ॥
सारिवां त्रिफलां चैव चोरकं सुमनो लताम् ।
वृषपुष्पं समञ्जिष्ठं देवदारु महौषधम् ॥
पिप्पल्यौ भृंगराजं च निशां श्यामां सुवर्चलाम् ।
दशमूलमपामार्गमश्वगन्धां शतावरीम् ॥
जलद्रोणे पचेदेतान्भागैर्द्विपलिकैः पृथक् ।
तत्कषायं परिस्राव्य घृतस्याधाढकं पचेत् ॥
युक्त्या प्रदापयेदेतद्गायत्र्या चाभिमन्त्रितम् ।
द्विमासगर्भिणी नारी ह्यष्टमासान्प्रयोजयेत् ॥
सर्वज्ञं जनयेत्पुत्रं सर्वामयविवर्जितम् ।

**अस्य प्रयोगात्कुक्षिस्थः स्फुटवाग्व्याहरत्यपि ॥
योनिदुष्टाश्च या नार्यः शुक्रदुष्टाश्च ये नराः ।
वन्ध्या च लभते पुत्रं शूरं पण्डितमानिनम् ॥
जडगद्गदमूकं च पानादेव प्रशाम्यति ।
सप्तरात्रप्रयोगेण सुस्वरं कुरुते नरम् ॥
मासत्रयोपयोगेन कुर्याच्छ्रुतिधरं नरम् ।
नाग्निर्दहति तद्वेश्म न वज्रमुपहन्ति च ॥
न तत्र म्रियते बालो यत्रास्ते सोमसञ्ज्ञितम् ॥**

क्वाथ—सफेद सरसों, बच, ब्राह्मी, शंखपुष्पी (शंखाहोली), काकोली, क्षीरकाकोली, मुलैठी कूठ, कुटकी, कृष्ण सारिवा, हर्र, बहेड़ा, आमला, चोरक, चमेली के फूल, श्वेतसारिवा, बासे (अडूसे) के फूल, मजीठ, देवदारु, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, भंगरा, हल्दी, फूलप्रियंगु, हुलहुल, दशमूलकी, प्रत्येक ओषधि, अपमार्ग (चिरचिटा), असगन्ध और शतावर, १०-१० तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

चार सेर घीमें यह क्वाथ (तथा ८ सेर पानी) मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो धीको छान लें और गायत्री मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके रक्खें।

इसे २ मासका गर्भ होनेके पश्चात् से आठवें मास तक गर्भिणीको खिलाना चाहिये।

इसे सेवन करानेसे बुद्धिमान और नीरोग तथा स्पष्ट उच्चारण करने वाला पुत्र उत्पन्न होता है। यह घृत योनिदोषों और शुक्रविकारोंको नष्ट करता है। इसके सेवनसे वन्ध्या स्त्रीको भी शूर और विद्वान पुत्र प्राप्त हो जाता है।

इसे पीनेसे जड़ता, गद्गद् शब्द और मूकता (गूंगेपन) का नाश होता है।

इसे सात दिन सेवन करनेसे मनुष्यका स्वर मधुर हो जाता है और ३ मास तक सेवन करनेसे वह श्रुतिधर हो जाता है।

जिस घरमें यह घृत होगा वह विघ्नोंसे सुरक्षित रहेगा और उसमें बालमृत्यु न होगी।

(मात्रा—६ माशेसे १ तोले तक ।)

(७९६५) सोमराजीघृतम्

(भै. र. ; व. से. ; भा. प्र. म. खं. २ । कुष्ठा.)

**खदिरस्य पलान्यष्टौ सोमराज्याः पलद्वयम् ।
जलाढकद्वये साध्यं यावत्पादावशेषितम् ॥
क्वाथ्यमानश्च मृद्वग्नौ घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
चतुष्पलं सोमराज्याः खदिरस्य पलं भिषक् ॥
पटोलमूलं त्रिफला त्रायमाणा दुरालभा ।
कल्कार्थं कटुकश्चापि कार्षिकान् सूक्ष्मपेषितान् ॥
पलद्वयं कौशिकस्य शुद्धस्यात्र प्रदापयेत् ।
सिद्धं सर्पिरिदं श्वित्रं हन्यादम्भ इवानलम् ॥
अष्टादशानां कुष्ठानां परमश्चैतदौषधम् ।
सोमराजीघृतं नाम निर्मितं ब्रह्मणा पुरा ॥
लोकानामुपकाराय श्वित्रकुष्ठादिरोगिणाम् ॥**

क्वाथ—खैरसार ४० तोले और बावची १० तोले ले कर दोनोंको कूट कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर रहने पर छान लें।

कल्क—बाबची २० तोले, खैरसार ५ तोले तथा पटोलकी जड़, हर्र, बहेड़ा, आमला, त्रायमाना, धमासा और सोंठ, मिर्च तथा पीपल १।-१। तोला । सबको बारीक पीस लें । शुद्ध गूगल १० तोले ।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क (और ४ सेर पानी) मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

यह घृत श्वेत कुष्ठको तो इस प्रकार नष्ट कर देता है जिस प्रकार अग्निको जल । इसके अतिरिक्त यह अन्य प्रकारके कुष्ठोंकी भी परमौषध है ।

(**मात्रा**—२ तोले ।)

(७९६६) सोमराजीयोगः

(ग. नि. । ओषधिकल्पा. २)

ये सोमराज्या वितुषीकृताया-
श्चूर्णीकृतायाः पयसि भृतायाः ।
उद्धृत्य सारं मधुना लिहन्ति-
तक्रं तथैवानु पिबन्ति चान्ते ॥
कुष्ठिनः शीर्यमाणाङ्गास्ते जाताङ्गुलिनासिकाः ।
भान्ति वृक्षा इव पुनः प्ररूढनवपल्लवाः ॥

१ सेर छिलके रहित बाबचीके बारीक चूर्णको १६ सेर दूधमें मिलावें और उसमें ६४ सेर पानी मिला कर पकावें । जब पानी जल जाए तो दूधको छानकर उसका दही बनावें और घी निकाल लें ।

इसे शहदमें मिला कर चाटनेसे गलित कुष्ठ नष्ट हो कर नवीन उंगलियां और नासादि अंग निकल आते हैं और ऐसा प्रतीत होता है मानो सूखे हुवे वृक्षोंमें नव पल्लव निकल आए हों ।

अनुपान—तक्र ।

(७९६७) सौरेश्वरघृतम्

(भै. र. ; र. र. ; वृ. मा. ; व. से. ; यो. र. । श्लीपदा. ; वृ. यो. त. । त. १०९)

सुरसा देवकाष्ठश्च त्रिकटुत्रिफले तथा[1] ।
लवणान्यथ सर्वाणि विडङ्गान्यथ चित्रकम् ॥
चविका पिप्पलीमूलं गुग्गुलुर्हवुषा वचा ।
यवाग्रजश्च पाठा च शट्येला वृद्धदारकम् ॥
कल्कैश्च कार्षिकैरेभिर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
दशमूलकषायेण धान्ययूषद्रवेण च ॥
दधिमस्तुसमायुक्तं प्रस्थं प्रस्थं पृथक् पृथक् ।
पक्वं स्यादुद्धृतं कल्कात् पिबेत्तोलार्द्धकं हविः॥
श्लीपदं कफवातोत्थं मांसरक्ताश्रितश्च यत् ।
मेदः श्रितश्च वातोत्थं हन्यादेव न संशयः ॥
अपचीं गण्डमालाञ्च अन्त्रवृद्धिं तथार्बुदम् ।
नाशयेद् ग्रहणीदोषं श्वयथुं गुदजानि च ॥
परमाग्निकरं हृद्यं कोष्ठकृमिविनाशनम् ॥

कल्क—तुलसी, देवदारु, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पांचो नमक, बायबिडंग, चीतामूल, चव, पीपलामूल, हपुषा, बच, जवाखार, पाठा, कचूर, इलायची और विधारा; इनका बारीक चूर्ण तथा शुद्ध गूगल १।-१। तोला ।

क्वाथ—१ सेर दशमूलको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर रहने पर छान लें ।

---

१ "गजा" इति पाठान्तरम् ।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क, काथ, तथा २-२ सेर कांजी, (पानी) और दधिमस्तु (दहीका पानी) मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो घीको छान लें।

मात्रा—६ माशे।

यह घृत कफ वातज एवं वातज, रक्त मांस तथा मेदमें स्थित श्लीपद्को अवश्य नष्ट करता है। तथा अपची, गण्डमाला, अन्त्रवृद्धि, अर्बुद, ग्रहणी-दोष, शोथ, अर्श और उदर कृमियोंको नष्ट करता है। यह अत्यन्त अग्निवर्द्धक और हृद्य है।

नोट—पाठान्तरके अनुसार चव, चीता और गूगलका अभाव है।

(७९६८) सौवर्चलादिघृतम् (१)

(ग. नि. ; व. से. । हिक्काश्वासा.)

सौवर्चलयवक्षारकटुकाव्योषचित्रकैः।
वचाविडङ्गैश्च घृतं साधितं श्वासशान्तये ॥

कल्क—संचल (काला नमक), जवाखार, कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, बच और बायबिड़ंग; इनका समान भाग मिश्रित चूर्ण १० तोले।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां २ सेर ले कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर रहने पर छान लें।

१ सेर घीमें उपरोक्त काथ और कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत श्वासको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ तोला।)

(७९६९) सौवर्चलादिघृतम् (२)

(र. र. । शोथा.)

सौवर्चलं यवक्षारं यवानी पञ्चकोलकम्।
मरिचं दाडिमं पाठा धन्याकमम्लवेतसम् ॥
वारिबिल्वञ्च कर्षांशं क्वाथयेत्सलिलाढके।
तत्क्वाथेन घृतप्रस्थं पाच्यं घृतावशेषकम् ॥
शोथार्शोगुल्ममेहार्तौ घृतं सेव्यं प्रशान्तये ॥

क्वाथ—संचल (काला नमक), जवाखार, अजवायन, पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, अनारकी छाल, पाठा, धनिया, अम्लबेत, सुगन्धबाला और बेलकी छाल १।-१। तोला ले कर सबको कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर रहने पर छान लें।

इस काथमें २ सेर घी मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत शोथ, अर्श, गुल्म और प्रमेहको नष्ट करता है।

(७९७०) स्थलपद्मकघृतम्

(च. द. । शोथा. ३८ ; व. से. । शोथा.)

स्थलपद्मपलान्यष्टौ त्र्यूषणस्य चतुष्पलम्।
घृतप्रस्थं पचेदेभिः क्षीरं दत्वा चतुर्गुणम् ॥
पञ्च कासान्हरेच्छीघ्रं शोथं चैव सुदुस्तरम् ॥

कल्क—स्थलपद्म ४० तोले और त्रिकुटा (समान भाग मिलित सोंठ, मिर्च, पीपल) २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और ८ सेर दूध मिला कर पकावें। जब दूध जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत पांच प्रकारकी खांसी और दारुण शोथको नष्ट करता है।

(७९७१) स्थिराद्यघृतम् (१)

(च. सं. । चि. अ. कासा.)

स्थिरासितापृश्निपर्णीश्रावणीबृहतीयुगैः ।
जीवकर्षभकाकोलीतामलक्यृद्धिजीरकैः ॥
शृतं पयः पिबेत्कासी ज्वरी दाही क्षतक्षयी ।
तज्जं वा साधयेत्सर्पिः सक्षीरेक्षुरसं भिषक् ॥

शालपर्णी, मिश्री, पृष्ठपर्णी, गोरखमुण्डी, छोटी और बड़ी कटेली, जीवक, ऋषभक, काकोली भुई आमला, ऋद्धि और जीरा समान भाग मिलित १० तोले। दूध २ सेर। पानी १६ सेर। सबको एकत्र मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो दूधको छान लें।

यह दूध उचित मात्रानुसार पीनेसे कास, ज्वर दाह और क्षतक्षयमें लाभ होता है।

अथवा इस दूधका दही बनाकर घी निकालें। और फिर यह घी १० तोले। दूध १० तोले और ईखका रस ३० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घी भी कासादि उक्त रोगोंमें हितकारी है।

(७९७२) स्थिराद्यघृतम् (२)

(व. से. । उदावर्ता. ; च. द. ; वृ. नि. र. ; र. र. । आनाह.)

स्थिरादिवर्गस्य पुनर्नवायाः
शम्पाकपूतीककरञ्जयोश्च ।
सिद्धः कषाये द्विपलांशिकानां
प्रस्थो घृतात्स्यात्प्रतिबद्धवाते ॥

शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, पुनर्नवा, अमलतास और पूतिकरञ्ज (करञ्जवा) १०-१० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें २ सेर घी मिलाकर पकावें और पानी जल जानेपर छान लें।

यह घृत आनाहको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१ तोला।)

(७९७३) स्थिराद्यघृतम् (३)

(व. से. । हृद्रोगा.)

स्थिरादिकल्कवत्सर्पिः क्षीरेणेक्षुरसेन वा ।
द्राक्षारसेन पक्वं वा पित्तरोगविनाशनम् ॥

कल्क—शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला और गोखरु ८-८ तोले ले कर सबको बारीक पीस लें।

४ सेर घीमें यह कल्क और १६ सेर दूध या १६ सेर ईखका रस अथवा १६ सेर द्राक्षा (अंगूर) का रस मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत पित्तज हृद्रोगको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—आधा तोला।)

(७९७४) स्नुक्क्षीरयोगः

(वै. म. र. । पटल ९)

दुग्धे स्नुक्क्षीरपक्वे दधिजनि-
तमहोरात्रतस्तन्मथित्वा

सारं हृत्वा पिबेत्तनमथित-
मुदररोगी विरेकाय मर्त्यः।
तत्सर्पिर्दुग्धमूत्रच्छगण-
रसदधिस्वर्णदुग्धैश्च युक्तं
पक्त्वा पाके सुजाते गलित-
मुदरशान्त्यै पिबेदल्पमल्पम् ॥

(४ सेर) गोदुग्धमें (१ सेर) थूहर (सेंड-स्नुही) का दूध मिला कर पका कर दही जमावें और उसे मथकर घी निकाल लें।

यह घी पिला कर उदर रोगीको विरेचन कराना चाहिये।

१ भाग इस घीमें १-१ भाग दूध, गोमूत्र, गायके गोबरका रस, दही और स्वर्णक्षीरी (सत्यानाशी) का दूध मिला कर पकावें। जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें।

यह घी उदर रोगको नष्ट करता है।

(**मात्रा**--३ माशे।)

(७९७५) स्नुहिक्षीराद्यं घृतम् (१)

(च. सं. । चि. अ. १८ उदरा.)

क्षीरद्रोणं सुधाक्षीरं प्रस्थार्धसहितं दधि।
जातं विमथ्य तद्युक्त्या त्रिवृत्सिद्धं पिबेद् घृतम् ॥
तथा सिद्धं घृतप्रस्थं पयस्यष्टगुणे पिबेत्।
स्नुक्क्षीरपलकल्केन त्रिवृता षट् पलेन च ॥
गुल्मानां गरदोषाणामुदराणां च शान्तये।

३२ सेर दूध और १ सेर सेंड (स्नुही-थूहर) के दूधको एकत्र मिला कर जमाकर दही बनावें और फिर उसका घी निकाल लें।

यह घी २ सेर, निसोतका कल्क २० तोले और पानी १६ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत, गुल्म, गरविष और उदर रोगोंको नष्ट करता है।

उपरोक्त घृत १ सेर; गोदुग्ध ८ सेर, स्नुही (सेंड-थूहर) का दूध ५ तोले और निसोतका कल्क ३० तोले ले कर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें।

यह घृत भी गुल्म, गरदोष और उदररोगोंको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—आधा तोला।)

(७९७६) स्नुहिक्षीराद्यं घृतम् (२)

(वृ. नि. र. । गुल्मा.)

स्नुहिक्षीरं पले द्वे तु प्रस्थार्धं चैव सर्पिषः।
कम्पिल्लं पलमेकं तु पलार्धं सैन्धवस्य च ॥
त्रिवृतायाः पलं चैकं धात्र्याः कुडवमेव च।
तोयप्रस्थेन विपचेच्चैवं मृद्वग्निना भिषक् ॥
कर्षप्रमाणं दातव्यं जठरप्लीहगुल्मिने।
तथा कच्छपरोगेषु युञ्जीत मतिमान् भिषक् ॥
एतद्गुल्मान् ससमीरान् निहन्ति सपरिग्रहान्।
निहन्त्येष प्रयोगो हि वायुर्जलधरानिव ॥
पञ्चगुल्मवधोपायं सर्पिरेतत्प्रकीर्तितम्।
सर्वासुरवधार्थाय यथा वज्रं स्वयम्भुवा ॥

स्नुही (सेंड-थूहर) का दूध २० तोले, घी १ सेर, कमीला ५ तोले, सेंधानमक २॥ तोले,

निसोत ५ तोले, आमला २० तोले और पानी २ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें।

मात्रा—१। तोला।

इसके सेवनसे उदर रोग, प्लीहा, गुल्म, कच्छपरोग आदिका नाश होता है।

यह उपद्रवयुक्त वातज गुल्मको इस प्रकार नष्ट कर देता है, जिस प्रकार वायु मेघोंको।

स्वल्पचैतसघृतम्

(र. र. । उन्मादा.)

प्र. सं. १७८३ "चैतसघृतम्" देखिये।

स्वल्पधात्रीघृतम्

(भै. र. । बहुमूत्रा.)

प्र. सं. ३२९१ "धात्रीघृतम् (स्वल्प)" देखिये।

स्वल्पनीलीघृतम्

(वृ. यो. त. । त. १२०)

प्र. सं. ३४९४ "नीलीघृतम्" देखिये।

स्वल्पपञ्चगव्यं घृतम्

प्र. सं. ४०४८ "पञ्चगव्यं घृतम् (स्वल्प)" देखिये।

इति सकारादिघृतप्रकरणम्

अथ सकारादितैलप्रकरणम्

(७९७७) सप्तच्छदादितैलम्

(भै. र. । क्षुद्ररोगा.)

सप्तच्छदस्य वासायाः पिचुमर्दस्य चाम्भसा।
तैलप्रस्थं पचेत्कल्कैर्निशादार्वीफलत्रिकैः॥
व्योषेन्द्रयवमञ्जिष्ठा खदिरक्षारसैन्धवैः।
गोमूत्रस्याढकं दत्त्वा शनैश्च मृदुनाग्निना॥
पद्मिनीकण्टकं चिप्पं कदरं व्यङ्गनीलिके।
जालगर्दभकश्चैतत्त्वग्गदांश्च विनाशयेत्॥

द्रवपदार्थ—सप्तपर्ण (सतौने) की छालका क्वाथ दो सेर। बासेका स्वरस दो सेर। नीमके पत्तों या छालका रस २ सेर। गोमूत्र ८ सेर।

कल्क—हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, इन्द्रजौ, मजीठ, खैरसार, जवाखार और सेंधा नमक; इनका समान भाग मिलित चूर्ण २० तोले।

२ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल पद्मिनी कण्टक, चिप्प, कदर (ठेठ), व्यङ्ग (झाईं), नीलिका और जालगर्दभ आदि रोगोंको नष्ट करता है।

(७९७८) सप्ताह्वादितैलम्

(व. से. । नेत्ररोगा.)

सप्ताह्वाशारिवानन्ता कालीयागरुचन्दनैः ।
शतपुष्पाश्वगन्धानां चूर्णैस्तैलं विपाचयेत् ॥
पयस्यष्टगुणे नस्यमेतदश्रुहरं परम् ॥

कल्क—सप्तपर्ण, सारिवा, अनन्तमूल, काला अगर, सफेद चन्दन, सोया और असगन्ध; इनका समान भाग-मिश्रित चूर्ण आधा सेर ।

४ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ३२ सेर दूध मिला कर मंदाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी नस्य लेनेसे आंसुवोंका बहना बन्द हो जाता है ।

(७९७९) समुद्रशोषणतैलम्

(भै. र. । शोथा.)

निर्गुण्डी दशमूली च धुस्तूरककरञ्जकौ ।
शुष्कमूलजयाविश्वरास्ना दारुपुनर्नवा ॥
एषाञ्च प्रकृते काथे काथे शाखोटजे तथा ।
कटुतैलं पचेत्प्रस्थं सैन्धवं कल्कपादिकम् ॥
सन्निपातोद्भवा शोथा ये चान्ये श्लेष्मपित्तजाः ।
शिरःकर्णगता ये च श्लीपदानि तथैव च ॥
गलगण्डं ब्रध्नवृद्धिं शोथं सर्वाङ्गसम्भवम् ।
कर्णशोथं दन्तशोथं हनुमूलाक्षिसम्भवम् ॥
एतान् सर्वान्निहन्त्याशु वाडवाग्निरिवाम्बुदम् ।
समुद्रशोषणं नाम तैलं परमशोभनम् ॥

द्रवपदार्थ—(१) संभालू, दशमूल, धतूरा, करञ्ज, सूखी मूली, जयन्तीपत्र, सोंठ, रास्ना, देवदारु और पुनर्नवा समान भाग मिश्रित ४ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें ।

(२) शाखोटक (सिहोरे) की छाल ४ सेर । पाकार्थ जल ३२ सेर, शेष काथ ८ सेर ।

सरसोंके २ सेर तेलमें २० तोला सेंधानमक और उपरोक्त दोनों काथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इस तेलकी मालिशसे सन्निपातज और कफपित्तज शोथ तथा सिरकी सूजन, कर्णशोथ, स्लीपद, गलगण्ड, ब्रध्न, अन्त्रवृद्धि, सर्वांगगत शोथ, मसूढोंकी सूजन एवं हनुमूल और नेत्रोंकी सूजनका नाश होता है ।

(७९८०) सर्जरसाद्यं तैलम्

(रा. मा. । ज्वरा. २०)

सकाञ्जिकं सर्जरसेन युक्तं
तैलं विपक्वं मृदितं जलेन ।
अभ्यञ्जनान्मारुतरक्तदाह-
ज्वरार्तिसन्तापमपोहति द्राक् ॥

४ सेर कांजी, १ सेर तेल और १० तोले रालका चूर्ण एकत्र मिला कर पकावें । जब कांजी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसमें थोड़ा पानी मिला कर हाथसे अच्छी तरह मथ कर मालिश करनेसे वातरक्त, दाह, ज्वर और सन्तापका शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

(७९८१) सहचरतैलम् (१)

(ग. नि. । तैला. २)

समूलपत्रशाखस्य शतं सहचरस्य च ॥
क्षोदयित्वा जलद्रोणे क्वाथं पादावशेषितम् ।
शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं वचा ॥
चन्दनं तगरं कुष्ठमेलां चांशुमतीं तथा ।
एतैः कर्षसमैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
पयस्तद्द्विगुणं दत्त्वा पलान्यष्टौ च शर्करा ।
अथ तैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥
ये च कोष्ठगता वाता ये च वाताः शिरोगताः ।
अस्थिमज्जगताश्चैव कर्णमध्यगताश्च ये ॥
मूकानां मिन्मिणानां च पीठकटयूरुसर्पिणाम् ।
स्वभावेन च ये भग्ना अस्थिभग्नाश्च ये नराः ॥
तेषां च संप्रयोक्तव्यं हितमेतदनूपमम् ।

क्वाथ—मूल, पत्र और शाखायुक्त ६। सेर कटसरैयाको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

कल्क—सोया, देवदारु, जटामांसी, भूरिछरीला, बच, सफेद चन्दन, तगर, कूठ, इलायची और शालपर्णी; इनका चूर्ण १।-१। तोला। खांड ४० तोले।

२ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और ४ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल कोष्ठगत वायु, शिरोगत वायु, अस्थि और मज्जागत वायु तथा कर्णगत वायु, मूकता (गूंगापन), मिन्मिनाना, पीठ, कमर और उरुके सहारे चलना और अस्थिभग्नादि रोगोंको नष्ट करता है।

(७९८२) सहचरतैलम् (२)

(भै. र. । मुखरोगा. ; व. से. ; र. र. ; वृ. नि. र. ; वृ. मा. ; यो. र. । मुखरोगा. ; वृ. यो. त. । त. १२८)

तुलां धृतां नीलसहाचरस्य
द्रोणेऽम्भसः संश्रपयेद्यथावत् ।
पूते चतुर्भागरसे तु तैलं
पचेच्छनैरर्द्धपलप्रमाणैः ॥
कल्कैरनन्ताखदिरारिमेद-
जम्ब्वाम्रयष्टीमधुकोत्पलानाम् ।
तत्तैलमाश्वेव धृतं मुखेन
स्थैर्यं द्विजानां विदधाति सद्यः ॥

६। सेर काली कटसरैयाको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें तदनन्तर उसमें २ सेर तेल और निम्न लिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—अनन्तमूल, खैरसार, अरिमेद (दुर्गन्धित खैर), जामनकी छाल, मुलैठी और नीलोत्पल; इनका चूर्ण २॥-२॥ तोले।

इस तेलको मुखमें धारण करनेसे दांत शीघ्र ही दृढ़ हो जाते हैं।

(७९८३) सहचरतैलम् (३) (बृहद्)

(ग. नि. । परि. तैला. २)

क्वाथे साहचरे शतावरियुते क्षुद्रामृतैरण्डजे
श्योनाकारणिबिल्वगोक्षुरयुते-

सिंहाग्निमन्थोद्भवे ।
रास्नोशीरविशालदारुतगरैस्त्वक्पत्रमेदानखैः
स्पृकाशैलघनैलवालुसरलैः कङ्कोलकुष्ठोत्पलैः ॥
कौन्तीकेशीबलाद्विसारिवानिशाश्यामाशताह्वा-
नतैर्मञ्जिष्ठापुरसिह्लचन्दनवरैश्चण्डाह्वस्थौणेयकैः।
श्रीवेष्टागरुरोध्रकुङ्कुमवरैः कल्कैः समांसैरिभै-
स्तैलं क्षीरसमं विपाच्य विधिना बस्तौ
च नस्ये ध्रुवम् ॥
पानाभ्यङ्गविधौ नियोजितमिदं वातादिसर्वा-
मयान् गुल्माष्ठीलशिरोर्तिशूलमुदरं श्वासाम-
कासज्वरम् ।
शोफं प्लीहगुदामयं च जठरं धातुक्षयाध्मानकं
अर्शःकुष्ठभगन्दरं च शमयेत्सर्वान् व्रणान्
हन्ति च ॥
जयति पवनरोगान् कामलां विड्विबन्धं
दिननिशितिमिरान्ध्यं गृध्रसीं मूर्ध्निवातम् ।
सहचरमिति नाम्ना तैलमेतत्प्रसिद्धं
धनपतिनृपयोग्यं भाषितं शम्भुनैव ॥

पियाबांसा, शतावर, कटेली, गिलोय, अरण्ड-मूल, श्योनाक (अरलु) की छाल, अरनी, बेलकी छाल, गोखरु, बड़ी कटेली और बड़ी अरनी सब समान भाग मिलित ६। सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान कर उसमें २ सेर तेल, २ सेर दूध और निम्नलिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

कल्क—रास्ना, खस, विशाल (वृक्ष विशेष), देवदारु, तगर, दालचीनी, तेजपात, मेदा, नख, स्पृका (ब्राह्मी), भूरिछरीला, नागरमोथा; एलवालुक, सरलवृक्ष (चीर) का काष्ठ, कंकोल, कूठ, नीलोत्पल, रेणुका, जटामांसी, खरैटी, २ प्रकारकी सारिवा, हल्दी, काली निसोत, सोया, तगर, मजीठ, गूगल, शिलारस, सफेद चन्दन, चोरक, थुनेर, श्रीवेष्ट (धूपसरल), अगर, लोध और केसर इनका चूर्ण समान भाग मिलित २० तोले ।

इस तेलको बस्ति, नस्य और अभ्यंग द्वारा प्रयुक्त करने तथा पीनेसे वातव्याधि, गुल्म, अष्ठीला, शिरपीड़ा, शूल, उदररोग, श्वास, आमविकार, कास, ज्वर, शोथ, प्लीहा, अर्श, धातुक्षय, आध्मान, कुष्ठ, भगन्दर, व्रण, कामला, मलावरोध, दिनान्ध्य, रतौंधा, तिमिर, गृध्रसी और शिरोगत वायुका नाश होता है ।

(७९८४) सहचरतैलम् (४)

(ग. नि. । तैला. २)

समूलशाखस्य सहाचरस्य
तुलां समेतां दशमूलतश्च ।
पलानि पञ्चाशदभीरुतश्च
पादावशेषं विपचेद्वहेऽपाम् ॥
तत्र सेव्यनखकुष्ठहिमैला-
स्पृक्प्रियङ्गुनलिकाम्बुशिलाजैः ।
लोहितानलदलोहमुराह्वैः
कोपनामिशितुरुष्कनखैश्च ॥
तुल्यक्षीरे पालिकैस्तैलपात्रं
सिद्धं कृच्छ्रान् शीलितं हन्ति वातान्।
कम्पाक्षेपस्तम्भशोषादियुक्तान्
गुल्मोन्मादान् पीनसं योनिरोगान् ॥

कटसरैयाका पंचांग ६। सेर, दशमूल ६। सेर और शतावर ३ सेर १० तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ८ द्रोण पानी में पकावें और २ द्रोण (६४ सेर) शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ८ सेर तेल और निम्नलिखित कल्क एवं ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—खस, नख, कूठ, पद्माख, इलायची, स्पृक्का (ब्राह्मी), प्रियङ्गु, नलिका (नाडी), सुगन्धबाला, भूरिछरीला, लाल चन्दन, नलद (खसभेद) अगर, मुरामांसी, रक्तकरवीर, सौंफ, शिलारस और नख इनका चूर्ण ५—५ तोले।

यह तेल कष्टसाध्य वातव्याधि, कम्प, आक्षेप, स्तम्भ, गुल्म, उन्माद, पीनस, योनिरोग और शोष आदिका नाश करता है।

(७९८५) सहचराद्यतैलम् (१) (महा)

(व. से. । वातव्या.)

कृत्स्नां सहचरादेकां कृत्वा जर्जरितां तुलाम्।
काश्मरी पाटला बिल्वं तुलात्रिभिरथापरम् ॥
अश्वगन्धां बलां तद्वन्मूलं शतावरं वचाम् ।
चतुर्द्रोणे विपक्तव्यं चतुर्भागावशेषितम् ॥
शताह्वाहिङ्ग्वयष्ट्याह्व देवदारुसचित्रकम् ।
त्वगेला क्रिमिहन्ता च रास्नातगरसैन्धवाः ॥
महासहचरं तैलं वातश्लेष्महरं परम् ।
पाने नस्ये तथाभ्यङ्गे बस्तिकर्मणि शस्यते ॥
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव पानादेवापकर्षति ॥

कटसरैयाका पंचाङ्ग ६। सेर एवं खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल, बेलकी छाल, असगन्ध, खरैटीकी जड़, शतावर और बच समान भाग मिलित १८॥। सेर लेकर सबको एकत्र कूटकर ८ द्रोण पानीमें पकावें और २ द्रोण (६४ सेर) शेष रहने पर छान लें।

८ सेर तेलमें यह क्वाथ और निम्नलिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—सोया, हींग, मुलैठी, देवदारु, चीता, दालचीनी, इलायची, बायबिड़ंग, रास्ना, तगर और सेंधा नमक इनका समान भाग मिलित चूर्ण १ सेर।

यह तेल वात, कफ नाशक है, इसके पीनेसे ८० प्रकार के वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज. रोग और २० प्रकारके कफज रोग नष्ट होते हैं।

इसे नस्य, अभ्यंग और बस्ति द्वारा भी प्रयुक्त करना चाहिये।

(७९८६) सहचराद्यतैलम् (२)

(व. से. । वातव्या.)

साधयित्वा जलद्रोणे तुला सहचरस्य च ।
पादशेषे पचेत्तैलं दत्वा क्षीरं चतुर्गुणम् ॥
चन्दनाऽगुरु यष्टयाह्व शठीदेवद्रुमं घनम् ।
सैन्धवश्चाजमोदा च काकोल्यौ जीरकावुभौ ॥
कुष्ठं सौवर्चलं व्योषं रास्ना भार्ङ्गीत्रिकण्टकम् ।
एतैरक्षसमैर्भागैः शर्करायाः पलाष्टकम् ॥
पक्वं प्रयोजयेत्पानादभ्यङ्गे नावनेऽपि वा ।
ऊर्ध्ववाते ह्यधोवाते पक्षाघातेऽपबाहुके ॥

**कर्णवाते शिरःकम्पे शिरोरोगे तथार्दिते ।
सर्ववातकृते दोषे कफमेदः कृतेऽनिले ॥**

६। सेर कटसरैयाको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें २ सेर तेल, ८ सेर दूध और निम्न लिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छानलें।

कल्क--सफेद चन्दन, अगर, मुलैठी, कचूर, देवदारु, नागरमोथा, सेंधा नमक, अजमोद, काकोली, क्षीरकाकोली, सफेद और काला जीरा, कूठ, संचल (काला नमक) सोंठ, मिर्च, पीपल, रास्ना, भरंगी और गोखरु; इनका चूर्ण १।-१। तोला एवं खांड ४० तोले।

इस तेलको पीने तथा इसकी मालिश करने और नस्य लेनेसे ऊर्ध्ववात, अधोवात, पक्षाघात, अपबाहुक, कर्णगत वायु, शिरःकम्पन, शिरोरोग और अर्दित आदि समस्त वातज रोग एवं कफ और मेदयुक्त वायुके रोग नष्ट होते हैं।

सहस्रपाकबलातैलम्

(च. सं. । चि. अ. २९)

प्र. सं. ७३९८ "शतपाकबलातैलम्" देखिये।

(७९८७) सारिवाद्यं तैलम्

(ग. नि. । परि. तैला. २; वृ. नि. र. । शिरोरोगा.)

**सारिवोग्रामृतायष्टीत्रिफलानीलमुत्पलम् ।
नीलीभृङ्गारकासीसमहानिम्बफलानि च ॥
कटुतैलं पचेदेभिः सार्धं यवरसेन तु ।
कण्डूं दारुणकं हन्ति शिरोरोगे च शस्यते ॥**

कल्क--सारिवा, बच, गिलोय, मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीलोत्पल, नीलका पंचांग, भंगरा, कसीस और बकायनके फल समान भाग मिलित २० तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्काथ--४ सेर जौ को ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

सरसोंके २ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और काथ मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल कण्डू (खाज) और दारुणक (शिर की छोटी छोटी फुंसियों) को नष्ट करता है तथा शिरोरोगोंमें उपयोगी है।

(७९८८) सिद्धार्थकतैलम् (१)

(ग. नि. । परि. तैला. २)

**करवीरवचातुम्बरुरसाञ्जनकरञ्जभृङ्गलाक्षाभिः ।
सारुष्करसिद्धार्थकमूलकबीजाग्निगण्डीरैः ॥
रजनीद्वयमञ्जिष्ठारग्वधविडङ्गमाक्षीकैः ।
सैन्धवकटुकालाम्बुपिचुमर्दस्फोटमालतीभिश्च
सर्षपतैलं कारञ्जं वा गवां मूत्रेण वै सिद्धम् ।
द्विगुणेन साधितमचिरादभ्यङ्गाद्धन्ति कुष्ठानि ॥
अष्टादशापि सिद्धं तैलं सिद्धार्थकं नाम ॥**

कल्क--करवीर (कनेर), बच, तुम्बरु (नेपाली धनिया), रसौत, करंज (करंजुवेकी छाल) भंगरा, लाख, भिलावा, सरसो, मूलीके बीज, चीता, सेंड (स्नुही), हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, अमलतासकी छाल, बायबिड़ंग, सामुद्रलवण, सेंधा नमक, कड़वी तूंबी, नीमकी छाल, कचनारकी छाल

और मालती (चमेली) के फूल समान भाग मिलित २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

सरसों या करञ्जके २ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और ४ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गोमूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलकी मालिशसे १८ प्रकारके कुष्ठ शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(७९८९) सिद्धार्थकतैलम् (२)

(भै. र. धन्व. । वातव्या.)

शतावरीस्तु निष्पीड्य रसं प्रस्थद्वयं हरेत् ।
तिलतैलं पचेत् प्रस्थं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥
शतपुष्पा देवदारु मांसी शैलेयकं बला ।
चन्दनं तगरं कुष्ठमेला चांशुमती तथा ॥
रास्ना तुरगगन्धा च समङ्गा शारिवाद्वयम् ।
पृश्निपर्णी वचा चैव तथा गन्धर्वहस्तकम् ॥
सिन्धूद्भवं समं दद्याद्भिषभेषजमेव च ।
एभिस्तैलं पचेद्धीमान दत्त्वार्द्रकरसं समम् ॥
कुब्जाश्च वामना ये च पङ्गुपादाश्च ये नराः ।
महावातेन ये रुग्णाः अङ्गसङ्कुचिताश्च ये ॥
तेषां हितमिदं तैलं सन्धिवाते च शस्यते ।
येषां शुष्यति चैकाङ्गं गतिर्येषाञ्च विह्वला ॥
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा जरया जर्जरीकृताः ।
अमेधसश्च बधिरास्तेषामपि परं हितम् ॥
मासमेकं पिबेद्यस्तु यौवनस्थः पुनर्भवेत् ।
सिद्धार्थकमिति ख्यातं नरनारीहिताय वै ॥

कल्क—सोया, देवदारु, जटामांसी, भूरिछरीला, खरैटी, सफेद चन्दन, तगर, कूठ, इलायची, शालपर्णी, रास्ना, असगन्ध, मजीठ, दो प्रकारकी सारिवा, पृष्ठपर्णी, बच, अरण्डमूल, सेंधानमक और सोंठ; इनका समान भाग मिलित चूर्ण २० तोले।

२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क और ४ सेर शतावरका रस, ८ सेर दूध तथा २ सेर अद्रकका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल कुबड़ेपन, वामनता, पङ्गुता (लंगड़ेपन) में हितकारी है। जो मनुष्य महावातसे पीड़ित हों अथवा जिनके अंग सिकुड़गये हों उनके लिये यह तेल उत्तम है।

इसकी मालिशसे सन्धिवात और एकांगशोषका नाश होता है। जिन व्यक्तियोंके चलते समय पैर कांपते हों, जिनकी इन्द्रियां क्षीण हो गई हों, शुक्र नष्ट हो गया हो और जो वृद्धावस्थासे जर्जरित हो गये हों एवं जिनकी बुद्धि मन्द हो उनके लिये यह तैल अत्यन्त हितकारी है। यह बधिरताको भी नष्ट करता है। इसे १ मास तक सेवन करनेसे वृद्ध पुरुष भी युवा हो जाता है।

सिन्दूराद्यतैलम् (१)

(भै. र. । कुष्ठ. ; ग. नि. । कुष्ठ. ३६; यो. चि. म. । अ. ६; वृ. मा. । कुष्ठ. ; च. द. । कुष्ठ. ४९)

प्र. सं. २०५७ “ जीरकतैलम् ” देखिये।

(७९९०) **सिन्दूराद्यतैलम्** (२) (**महा**)

(भै. र. । कुष्ठा. ; ग. नि. । कुष्ठा. ३६; व. से. ; वृ. मा. ; च. द. ; वृ. नि. र. । कुष्ठ. ; यो. चि. म. । अ. ६ ; यो. त. । त. ६३ ; वृ. यो. त. । त. १२० ; र. का. धे. । कुष्ठा.)

सिन्दूरं चन्दनं मांसीं विडङ्गं रजनीद्वयम् ।
प्रियङ्गुं पद्मकं कुष्ठं मञ्जिष्ठां खदिरं वचाम् ॥
जात्यर्कं त्रिवृता निम्बकरञ्जं विषमेव च ।
कृष्णवेत्रकलोध्रञ्च प्रपुन्नाडञ्च संहरेत् ॥
श्लक्ष्णपिष्टानि सर्वाणि योजयेत्तैलमात्रया ।
अभ्यङ्गेन प्रयुञ्जीत सर्वकुष्ठविनाशनम् ॥
पामाविचर्चिकाकण्डूविसर्पादिहितं मतम् ।
रक्तपित्तोत्थितान् हन्ति रोगानेवं विधान् बहून् ॥
सिन्दूराद्यमिदं तैलमश्विभ्यां निर्मितं पुरा ॥

कल्क—सिन्दूर, सफेद चन्दन, जटामांसी, बायबिड़ंग, हल्दी, दारुहल्दी, फूलप्रियङ्गु, पद्माक, कूठ, मजीठ, खैरसार, बच, जावत्री, आककी जड़, निसोत, नीमकी छाल, करञ्ज, बछनाग, कालाबेत,[१] लोध और पंवाड़ समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इस तेलकी मालिशसे साधारणतः समस्त कुष्ठ और विशेषतः पामा, विचर्चिका (खुजली), खाज, विसर्प और रक्तपित्त जनित इसी प्रकारके अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

१ पाठान्तरके अनुसार काला चीता.

(७९९१) **सिन्दूराद्यतैलम्** (३)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६ ; व. से. ; वृ. मा. ; यो. र. । कुष्ठा. ; रा. मा. । कुष्ठा. ८ ; यो. त. । त. ६३ ; वृ. यो. त. । त. १२० ; वा. भ. । चि. अ. १९)

सिन्दूरगुग्गुलुरसाञ्जनसिक्थतुत्थैः
कल्कीकृतैश्च कटुतैलमिदं विपक्वम् ।
कच्छूस्रवत्पिटकिकामथवापि शुष्का-
मभ्यञ्जनेन सकृदुद्धरति प्रसह्य ॥

२ सेर सरसोंके तेलमें ४-४ तोले सिन्दूर, गूगल, रसौत और नीलेथोथेका कल्क तथा ८ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें; और फिर उसमें ४ तोले मोम मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इस तेलकी मालिश से कच्छू और विचर्चिका (खुजली) का शीघ्र नाश हो जाता है ।

(७९९२) **सिन्दूराद्यतैलम्** (४)

(भै. र. । गलगण्डा.; र. र.)

चक्रमर्दकमूलस्य कल्कं कृत्वा विपाचयेत् ।
केशराजरसे तैलं कटुकं मृदुनाग्निना ॥
पाकशेषे विनिक्षिप्य सिन्दूरमवतारयेत् ।
एतत्तैलं निहन्त्याशु गण्डमालां सुदारुणाम् ॥

सरसों के २ सेर तेलमें २० तोले पमाड़की जड़का कल्क और ८ सेर भंगरेका रस मिलाकर मन्दाग्नि

पर पकावें । जब पानी जल जाय तो उसमें २० तोले सिन्दूर मिला दें और ठण्डा होने पर छानलें ।

इसकी मालिश से कष्टसाध्य गण्डमाला भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(७९९३) सिन्दूराद्यं सूर्यपाकतैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

सिन्दूरशङ्खचूर्णकहरितालमनःशिलायवक्षारैः ।
कासीसकच्छसम्भवगन्धाह्वयसंयुतैस्तैलम् ॥
दिनकरतप्तं पामाविचर्चिकादद्रुकुष्ठकिटभादीन् ।
नाशयति लेपमात्राद्भूयो भूयः कपालकुष्ठमपि ॥

सरसोंके २ सेर तेलमें २॥-२॥ तोले सिन्दूर, शंख, पत्थरका चूना, हरताल, मनसिल, जवाखार, कच्छ देशका कासीस और गन्धकका बारीक चूर्ण मिलाकर तेज धूपमें रखदें । (एक या दो सप्ताह पश्चात् तेलको छानकर बोतलोंमें भर लें ।)

इसकी मालिशसे पामा, विचर्चिका, दाद, कपालकुष्ठ और किटभादि कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(७९९४) सुकुमारतैलम् ।

(च. स. । चि. वातव्या. ; ग. नि. । तैला. २)

मधुकस्य शतं दद्यात्काश्मर्याश्च तथाऽऽढकम् ।
परूषकाणां द्राक्षायाः खर्जूरौदनपाक्ययोः ।
मधूकपुष्पस्य तथा तथा मौञ्जातमाढकम् ॥
द्विद्रोणेऽपां विपक्तव्यं चतुर्भागावशेषितम् ।
तस्मिन् कषाये पूते च पुनरग्नावधिश्रयेत् ॥
आर्द्रामलककाश्मर्यविदारीक्षुरसाढकम् ।
तैलाढकं च संयोज्य पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ॥
तस्मिंस्तथा पच्यमाने कल्कांश्चेमान् समावपेत् ।
पिप्पलीं शृङ्गबेरं च कदलीं च शतावरीम् ॥
बलां तालं करम्बं च सूक्ष्मैलां पद्मबीजकम् ।
शृङ्गाटकं कसेरुं च जीवनीयानि यानि च ॥
द्विपालिकान् पृथग्दत्त्वा विपचेन्मृदुनाऽग्निना ।
तत्सिद्धं स्रावयित्वाशु शीतं क्षौद्रेण संसृजेत् ॥
नस्ये चाभ्यञ्जने पाने प्रशस्तं बस्तिकर्मणि ।
वातव्याधिषु सर्वेषु क्षतक्षीणे शिरोग्रहे ॥
पार्श्वशूले प्रमेहे च गुल्मे चार्शोभगन्दरे ।
वातभग्नाङ्गहीनानां कासे श्वासे च हृद्ग्रहे ॥
ज्वरातिसारे ह्यरुचौ कर्णनादे स्वरक्षये ।
सुकुमारमिदं तैलं बालवृद्धसुखावहम् ॥
एतद्धि वृष्यं बल्यं च रक्तमांसविवर्धनम् ।
स्वरवर्णकरं चैव शोषिणाममृतोपमम् ॥
प्रपाकस्यास्य तैलस्य सम्यक्सिद्धस्य यो भवेत् ।
उदश्विदि विमध्यार्थ (?) सोऽपि कृत्यकरो भवेत् ॥
एकादश च षट् चैव शोषिणां य उपद्रवाः ।
सुकुमारं प्रशमयेन्मेघोऽग्निमिव वृष्टिमान् ॥

मुलैठी ६। सेर, खम्भारीकी छाल ४ सेर, फालसे ४ सेर, मुनक्का ४ सेर, खजूर ४ सेर, कटसरैया ४ सेर, महुवेके फूल ४ सेर तथा मुञ्जातफल ४ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ६४ सेर[1] पानीमें पकावें और १६ सेर पानी शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें अद्रक,[2]

पाठान्तर—

१ जल १२८ सेर है ।

२ अदरकके रसका अभाव है ।

आमले, खम्भारीके फल, विदारीकन्द और ईख; इनका ८-८ सेर रस, ८ सेर तेल और ३२ सेर दूध[3] तथा निम्नलिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें और ठण्डा होने पर उसमें २ सेर शहद मिला दें।

कल्क—पीपल, अद्रक, केलेकी जड़,[4] शतावर, खरैटी, तालकी जड़, कदम्बकी जड़, छोटी इलायची, कमलके बीज (कमलगट्टे), सिंघाड़ा, कसेरु, जीवन्ती, काकोली, क्षीर काकोली, मेदा, महामेदा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवक, ऋषभक और मुलैठी; इनका चूर्ण १०-१० तोले[5]।

इसे नस्य, अभ्यंग, पान और बस्ति द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

यह तेल समस्त वातव्याधियोंको नष्ट करता है। क्षतक्षीण, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, प्रमेह, गुल्म, अर्श, भगन्दर, वातभग्न, अङ्गहीनता, कास, श्वास, हृद्ग्रह, ज्वरातिसार, अरुचि, कर्णनाद और स्वरक्षय आदि रोग इसके सेवनसे नष्ट हो जाते हैं।

यह तैल बालक और वृद्धोंके लिये सुखदायक तथा वृष्य, बल्य, रक्तमांस वर्द्धक एवं स्वर और वर्णको सुधारने वाला है। यह तैल शोष-रोगियोंके लिये तो अमृतके समान गुणकारी है। इसके सेवनसे शोष रोगके समस्त उपद्रव इस प्रकार शान्त हो जाते हैं जिस प्रकार वर्षासे अग्नि।

३ दूध चार द्रोण (१२८ सेर है)

४ केला, शतावर, बला, ताल और छोटी इलायचीके स्थानमें आमला, अखरोट, सेंधा नमक और मिसरी हैं।

५ कल्क द्रव्य १-१ पल (५-५ तोले) हैं।

(७१९५) सुगन्धितैलम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ९० ; यो. र. । वातव्या.)

तगरागुरुकुङ्कुमकुन्दरुभिः
सलवङ्गवराङ्कुरङ्गमदैः।
सरलामरदारुदलद्रविडी-
नखकेसररुङ्नलिनीनलदैः॥
सतुरुष्कहरेणुबलाक्वथनै-
रिति तैलमिदं पयसा विपचेत्।
नृपतिप्रमदाशिशुभिः स्थविरै-
रुपयोज्यमिदं पवनामयजित्॥

कल्क—तगर, अगर, केसर, कुन्दरु, लौंग, दालचीनी, कस्तूरी, सरल काष्ठ (चीर), देवदारु, तेजपात, छोटी इलायची, नख, नागकेसर, कूठ, कमलिनीके पुष्प, नलद (खसभेद), शिलारस, रेणुका और खरैटीकी जड़; सबका समान भाग मिश्रित चूर्ण २० तोले।

क्वाथ—कस्तूरी आदि जो चीजें क्वाथ योग्य नहीं हैं उन्हें छोड़ कर शेष सब चीजें समान भाग मिश्रित ४ सेर ले कर, कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

२ सेर तिलके तेलमें यह क्वाथ, कल्क और ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल राजाओं, स्त्रियों, बच्चों और वृद्धोंके लिये उपयोगी है। इसके सेवनसे वातव्याधि नष्ट होती है।

सुगन्धितैलम् (२) (महा)

प्र. सं. ५३०६ और ५३०७ " महा सुगन्धि तैलम् " देखिये।

(७९९६) सुमुखाद्यं तैलम्

(ग. नि. । अर्शो. ४)

पक्वं सुमुखगण्डीरबाकुचीव्योषधान्यकैः।
चव्यक्षारयवक्षारवह्निक्षारैस्तु साधितम् ॥
घ्राणजानि हरेत्तैलमर्शांसि क्षणाद्ध्रुवम् ॥

राईका पंचांग, सेहुण्ड (थूहरका डंडा), बाबची, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, चवका क्षार, जवाखार और चित्रकका क्षार, इनका चूर्ण समान भाग मिलित २० तोले ले कर २ सेर तेलमें मिलावें और उसमें ८ सेर पानी डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलकी मालिशसे नाकके मस्से नष्ट होते हैं।

(७९९७) सुरसादितैलम्

(ग. नि. । नासा. ४)

सुरसव्योषकुष्ठैस्तु लाक्षाकट्फलयोजितैः।
सविडङ्गैः पचेत्तैलं सार्षपं पूतिनाशनम् ॥

कल्क—तुलसी, सोंठ, मिर्च, पीपल, कूठ, लाख, कायफल और बायबिडंग समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर पानीके साथ पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त औषधियां समान भाग मिलित ४ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी रह जाय तो छान लें।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे पूतिनासा रोग नष्ट होता है।

(७९९८) सूततैलम्

(र. र. स. । उ. अ. २१)

रसगन्धशिलातालं सर्वं कुर्यात्समांशकम्।
चूर्णयित्वा ततः श्लक्ष्णमारनालेन मर्दयेत् ॥
लेपयित्वा तु कल्केन सूक्ष्मवस्त्रं ततः परम्।
तैलाक्तां कारयेद्वर्तिमूर्ध्वभागे प्रदीपयेत् ॥
वर्त्यधःस्थापिते पात्रे तैलं पतति शोभनम्।
लेपयेत्तेन गात्राणि भक्षयेदातुरस्तथा ॥
नाशयेत्सूततैलं तद्वातरोगाननेकशः।
बाहुकम्पं शिरःकम्पं जङ्घाकम्पं ततः परम् ॥
एकाङ्गं च तथा वातं हन्ति रोगाननेकधा।
रोगशान्त्यै सदा देयं सूततैलमिदं शुभम् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, हरताल और मनसिल, समान-भाग मिला कर कज्जली बनावें और फिर उसे कांजीमें खरल करके बारीक कपड़े पर लेप कर दें। जब वह सूख जाय तो बत्ती बनाकर

उसे तेलमें भिगो दें और उसके एक सिरेको चिमटे आदिसे पकड़ कर दूसरे सिरेको दियासलाई-से जला दें एवं उसके नीचे कांच या चीनी आदि-का पात्र रख दें। इस पात्रमें जो तैल एकत्रित हो उसे सुरक्षित रक्खें।

इस तैलकी मालिशसे और इसे खानेसे बाहुकम्प, शिरःकम्प, जंघाकम्प, एकांगवात तथा और भी अन्य अनेक वातज रोग नष्ट होते हैं।

(७९९९) **सैन्धवाद्यं तैलम्** (१)

(रा. मा. । कर्णरोगा. २)

सिन्धूत्थहिङ्गुसुरदारुवचाः सकुष्ठ-
विश्वौषधाः समधृता विनिधाय पक्वम् ।
तैलं सगोमयरसं श्रुतिपूरणेन
हन्ति प्रसह्य सकलानपि कर्णरोगान् ॥

कल्क—सेंधा नमक, हींग, देवदारु, बच, कूठ और सोंठ, इनका समान भाग मिश्रित चूर्ण २० तोले।

२ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर गायके गोबरका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे कानमें डालनेसे समस्त कर्णरोग नष्ट होते हैं।

(८०००) **सैन्धवाद्यं तैलम्** (२)

(धन्व. ; र. र. । भगन्दरा)

सैन्धवं चित्रकं दन्ती पलाशश्चेन्द्रवारुणी ।
गोमूत्रेऽष्टगुणे पक्त्वा ग्राह्यमष्टावशेषितम् ॥
क्वाथपादं पचेत्तैलं कल्कं कृष्णायसामृतम् ।
पचेत्तैलावशेषं च तेन लेप्यं भगन्दरम् ॥
असाध्यं साधयत्याशु पक्वं कृमिकुलान्वितम् ॥

क्वाथ—सेंधा नमक, चीता, दन्तीमूल, पलाश (ढाक)की छाल और इन्द्रायणकी जड़ १–१ सेर ले कर ८० सेर गोमूत्रमें पकावें और १० सेर शेष रहने पर छान लें।

२॥ सेर तेलमें यह क्वाथ और १२॥–१२॥ तोले कृष्ण लोह और शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला-कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे लगानेसे असाध्य और कृमियोंसे भरा हुवा भगन्दर भी नष्ट हो जाता है।

(८००१) **सैन्धवाद्यं तैलम्** (३)

(भै. र. । ऊरुस्तम्भा. ; ग. नि. । तैला. २ ; च. द. । वातव्या. २२ ; वृ. मा. । वाता. ; भा. प्र. म. खं. २ । ऊरुस्त.)

द्वे पले सैन्धवात्पञ्च शुण्ठ्या ग्रन्थिकचित्रकात् ।
द्वे द्वे भल्लातकास्थीनि विंशतिर्द्वे तथाऽऽढकम् ॥
आरनालं पचेत्प्रस्थं तैलस्यैरण्डजस्य च ।
गृध्रस्यूरुग्रहार्शोर्तिसर्ववातविकारनुत् ॥

कल्क—सेंधा नमक १० तोले, सोंठ २५ तोले, पीपलामूल और चीतामूल १०–१० तोले एवं शुद्ध भिलावेके ४० दाने ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर अरण्डीके तेलमें यह कल्क और ८ सेर कांजी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल गृध्रसी, ऊरुग्रह, अर्श और समस्त वातज रोगोंको नष्ट करता है ।

(८००२) **सैन्धवाद्यं तैलम्** (४) (**बृहत्**)

(वृ. मा. ; च. द. ; वृ. नि. र. । वृद्धच. ; धन्व. ; ग. नि. । वृद्धच. ३५ ; व. से. । ब्रध्ना. ; र. र. । ब्रध्न वृद्धच. ; यो. र. । वृद्धच.)

सैन्धवं मदनं कुष्ठं शताह्वां निचुलं वचाम्[१] ।
ह्रीवेरं मधुकं भार्ङ्गीं देवदारु सनागरम् ॥
कट्फलं पौष्करं मेदां[२] चविकं चित्रकं सठीम् ।
विडङ्गातिविषे श्यामां रेणुकां नीलिनीं स्थिराम् ॥
बिल्वाजमोदा रास्ना च दन्ती कृष्णा च तैः समैः ।
साध्यमेरण्डजं तैलं तैलं वा कफवातनुत् ॥
वर्ध्मोदावर्तगुल्मार्शःप्लीहमेहाढ्यमारुतात् ।
आनाहमश्मरीं चैव हरेत्तदनुवासनात् ॥

कल्क—सेंधा नमक, मैनफल, कूट, सोया, हिज्जल वृक्षके फल, बच (पाठान्तरके अनुसार खरैंटी), सुगन्धबाला, मुलैठी, भरंगी, देवदारु, सोंठ, कायफल, पोखरमूल, मेदा (पाठान्तरके अनुसार हल्दी), चव, चीतामूल, कचूर, बायबिडंग, अतीस, काली निसोत, रेणुका, नीलका पंचांग, शालपर्णी, बेलकी छाल, अजमोद, रास्ना, दन्तीमूल और पीपल, सबका समान भाग मिलित चूर्ण २० तोले ।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां समान भाग मिलित ४ सेर ले कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें ।

अरण्डी या तिलके २ सेर तेलमें यह क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल वर्ध्म, उदावर्त, गुल्म, अर्श, प्लीहा, प्रमेह, वातरक्त, आनाह, अश्मरी और कफवातज रोगोंको नष्ट करता है ।

इसे अनुवासन बस्ति द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये ।

(८००३) **सैन्धवाद्यं तैलम्** (५)

(भै. र. ; व. से. ; भा. प्र. म. खं. २ । नाडीव्रणा.)

सैन्धवार्कमरिचज्वलनाख्यै-
र्मार्कवेण रजनीद्वयसिद्धम् ।
तैलमेतदचिरेण निहन्याद्
दूरगामपि कफानिलनाडीम् ॥

सेंधा नमक, आककी जड़, काली मिर्च, चीतामूल, भंगरा, हल्दी और दारुहल्दी । इनके क्वाथ और कल्कसे सरसोंका तेल सिद्ध करें ।

यह तेल दूर तक पहुंचे हुवे कफ वातज नाडीव्रण (नासूर) को भी शीघ्रही नष्ट कर देता है ।

(कल्कार्थ—सब चीजें समान-भाग मिलित २० तोले । क्वाथार्थ—सब चीजें समान भाग मिलित ४ सेर; पाकार्थ जल—३२ सेर । शेष क्वाथ ८ सेर । सरसोंका तेल २ सेर ।)

१ बलामिति पाठान्तरम्.
२ भद्रामिति पाठान्तरम्.

(८००४) **सैन्धवाद्यं तैलम् (६) (महा)**

(भै. र. । आमवाता. , भा. प्र. म. खं. २ । ऊरुस्तंभा.)

सिन्धुरुग्विश्वजा सोग्रा भार्गी यष्टिस्थिराफलैः ।
दारुविश्वशटीधान्यकृष्णाकट्फलपौष्करैः ॥
दीप्यकातिविषैरण्डनीलीनीलाम्बुजैः पचेत् ।
तैलं सकाञ्जिकं हन्ति पानाभ्यञ्जननावनैः ॥
आमवातं क्रिमीन् गुल्मान् प्लीहोदरशिरोरुजः।
मन्दाग्निं पक्षसन्ध्यण्डवातस्तम्भगदानपि ॥

कल्क—सेंधा नमक, कूठ, सोंठ, बच, भरंगी, मुलैठी, शालपर्णी, जायफल, देवदारु, सोंठ, कचूर, धनिया, पीपल, कायफल, पोखरमूल, अजवायन, अतीस, एरण्डमूल, नीलका पंचांग और नीलकमल समान भाग मिलित २० तोले ।

२ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर कांजी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसे पीने एवं इसकी मालिश करने और नस्य लेनेसे आमवात, कृमि, गुल्म, प्लीहोदर, शिरपीड़ा, अग्निमान्द्य, पक्षाघात, सन्धिवात, अण्डगत वायु और उरूस्तम्भादि रोगोंका नाश होता है ।

(८००५) **सैन्धवाद्यं तैलम् (७) (बृहत्)**

(भै. र. ; धन्व. ; भा. प्र. म. खं. २ ; र. र. । आमवाता. ; वृ. यो. त. । त. ९३)

सैन्धवं श्रेयसी रास्ना शतपुष्पा यमानिका ।
सर्जिका मरिचं कुष्ठं शुण्ठी सौवर्चलं विडम् ॥
वचाजमोदा मधुकं जीरकं पौष्करं कणा ।
एतान्यर्द्धपलांशानि श्लक्ष्णपिष्टानि कारयेत् ॥
प्रस्थमेरण्डतैलस्य प्रस्थाम्बु शतपुष्पजम् ।
काञ्जिकं द्विगुणं दत्त्वा तथा मस्तु शनैः पचेत् ॥
सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरं परम् ।
पानाभ्यञ्जनवस्तौ च कुरुतेऽग्निबलं शुभम् ॥
वातार्त्तरक्षणे शस्तं कटीजानूरुसन्धिजे ।
शूलेहृत्पार्श्वपृष्ठेषु कृच्छ्राश्मरिनिपीडिते ॥
बाह्यायामार्दितानाहे अन्त्रवृद्धिनिपीडिते ।
अन्यांश्चानिलजान् रोगान् नाशयत्याशु देहिनाम् ॥

कल्क--सेंधा नमक, गजपीपल, रास्ना, सोया, अजवायन, सज्जी, काली मिर्च, कूठ, सोंठ, संचल (काला नमक), विड लवण, बच, अजमोद, मुलैठी, जीरा, पोखरमूल और पीपल इनका चूर्ण २॥-२॥ तोले ।

क्वाथ—१ सेर सोयेको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें ।

२ सेर अरण्डीके तेलमें उपरोक्त कल्क, क्वाथ तथा ४ सेर कांजी और ४ सेर मस्तु (दहीका पानी) मिला कर मन्दाग्निपर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसे पान, अभ्यंग और बस्ति द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये । इसके सेवनसे आमवात, कटि जानु उरु और सन्धिकी पीड़ा, हृच्छूल, पार्श्वशूल, पृष्ठशूल, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, बाह्यायाम, अर्दित, आनाह और अन्त्रवृद्धि आदि वातज रोग शीघ्र नष्ट होते तथा अग्निकी वृद्धि होती है ।

(८००६) सैन्धवाद्यं तैलम् (८)

(भै. र. । आमवाता.)

सैन्धवं देवकाष्ठञ्च वचा शुण्ठी च कट्फलम् ।
शताह्वा मुस्तकं चव्यं मेदे मलहरं त्रिवृत् ॥
हिज्जलस्य त्वचं बालं चित्रकं ब्रह्मयष्टिका ।
शटीविडङ्गमधुकं रेणुकातिविषा रुबु ॥
अम्बष्ठा नीलिनी दन्तीमूलं मरिचमेव च ।
अजमोदा पिप्पली च कुष्ठं रास्ना च ग्रन्थिकम् ॥
एषां कर्षमितैः कल्कैः शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
प्रस्थञ्च कटुतैलस्य मूर्छितस्य यथाविधि ॥
एतत्तैलवरं श्रेष्ठमभ्यङ्गात् सर्ववातनुत् ।
विशेषेणामवातेषु कटीजानूरुसन्धिषु ॥
हृत्पार्श्वसर्वगात्रेषु शूलञ्चैव विनाशयेत् ।
वातश्लेष्मणि बाह्यायामान्त्रवृद्धौ भगन्दरे ॥
शस्तं नाडीव्रणान् सर्वान् नाशयत्यथ देहिनाम् ।
अन्यांश्च विविधान् रोगान् वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
सैन्धवाद्यमिदं तैलं सर्वामयनिषूदनम् ॥

कल्क—सेंधा नमक, देवदारु, वच, सोंठ, कायफल, सोया, नागरमोथा, चव्य, मेदा, महामेदा, जमालगोटेकी जड़, निसोत, हिज्जल वृक्षकी छाल, सुगन्धबाला, चीता, भरंगी, कचूर, वायबिडंग, मुलैठी, रेणुका, अतीस, अरण्डमूल, पाठा, नीलकी जड़, दन्तीमूल, काली मिर्च, अजमोद, पीपल, कूठ, रास्ना और पीपलामूल; इनका चूर्ण १।-१। तोला।

२ सेर सरसोंके यथाविधि मूर्छित तैलमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलकी मालिशसे समस्त वातज रोग, और विशेषतः आमवातका नाश होता है।

इस तेलसे कटि जानु, उरु और सन्धिगत वायु, हृच्छूल, पार्श्वशूल और सर्व शरीरगत शूलका नाश होता है। इसके अतिरिक्त यह वातकफज रोगोंमें तथा बाह्यायाम, अन्त्रवृद्धि, भगन्दर और नाड़ीव्रणमें भी उपयोगी है।

(८००७) सोमराजीतैलम् (१)

(भै. र.; व. से.; धन्व.; च. द. । कुष्ठा.)

सोमराजी हरिद्रे द्वे सर्षपाः कुष्ठमेव च ।
करञ्जैडगजाबीजं पत्राण्यारग्वधस्य च ॥
विपचेत्सार्षपं तैलं नाडीदुष्टव्रणापहम् ।
अनेनाशु प्रशाम्यन्ति कुष्ठान्यष्टादशैव तु ॥
नीलिका पिडका व्यङ्गो गम्भीरं वातशोणितम् ।
कण्डुकच्छुप्रशमनं दद्रुपामानिवारणम् ॥

कल्क—बाबची, हल्दी, दारुहल्दी, सरसों, कूठ, करञ्जबीज, पंवाड़के बीज और अमलतासके पत्ते १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

१ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ४ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसके लगानेसे दुष्ट नाड़ीव्रण, १८ प्रकारके कुष्ठ, नीलिका, पिडिकायें, व्यंग, गम्भीर वातरक्त,

कण्डू, कच्छू, दद्रू और पामाका शीघ्रही नाश हो जाता है।

(८००८) सोमराजीतैलम् (२) (बृहद्)

(भै. र. ; र. र. । कुष्ठ.)

सोमराजीतुलाक्वाथे तथा द्रद्रुहनस्य च ।
गोमूत्रस्य तथा पात्रे कल्कं दत्त्वा विचक्षणः ॥
विपचेत्कार्षिकैर्भागैः कटुतैलाढकं भिषक् ।
चित्रकं लाङ्गलाख्या च नागरं कुष्ठमेव च ॥
हरिद्रा नक्तमालश्च हरितालं मनःशिला ।
आस्फोतार्ककरवीरं सप्तपर्णश्च गोमयम् ॥
खदिरो निम्बपत्रश्च मरिचं कासमर्दकम् ।
एतानि श्लक्ष्णपिष्टानि कल्कं दत्त्वा विचक्षणः ॥
हन्ति सर्वाणि कुष्ठानि क्रिमिदुष्टव्रणानि च ।
किटिभं दद्रुजातश्च गात्रवैवर्ण्यमेव च ॥
विशीर्णचर्ममांसादि दृढीकरणमुत्तमम् ।
पाण्डुरोगं तथा कण्डूं वीसर्पं हन्ति दारुणम् ॥
ये चान्ये त्वग्गतारोगास्तांस्तु शीघ्रं व्यपोहति॥

क्वाथ—६। सेर बावचीको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

(२) ६। सेर पंवाड़के बीजोंको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

८ सेर सरसोंके तेलमें ये दोनों क्वाथ, ८ सेर गोमूत्र और निम्न लिखित कल्क मिला कर मंदाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—चीतामूल, लांगलीकी जड़, सोंठ, कूठ, हल्दी, करंजबीज, हरताल, मनसिल, आस्फोता, आककी जड़, कनेरकी जड़, सतौनेकी छाल, गायका गोबर, खैरसार, नीमके पत्ते, काली मिर्च और कसौंदी इनका चूर्ण १।-१। तोला।

इस तेलकी मालिशसे समस्त प्रकारके कुष्ठ कृमि, दुष्ट व्रण, किटिभ कुष्ठ, दाद, शरीरकी विवर्णता, पाण्डु, कण्डू और कष्टसाध्य विसर्प रोगका नाश होता है।

यह तेल कमजोर चर्म और मांसादिको दृढ़ करता है। त्वचाके अन्य रोगोंमें भी उपयोगी है।

(८००९) स्नुही तैलम्

(वै. म. र. । पटल १९)

स्नुक्क्षीरपलसंसिद्धतैलसैन्धवलेपनात् ।
रोहेत् सहस्रधा भिन्नमपि पादतलं क्षणात् ॥

५ तोले स्नुही (सेहुण्ड-थूहर) के दूध और २० तोले सरसोंके तेलको एकत्र मिला कर पकावें। जब दूध जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलमें सेंधा नमक मिला कर लगानेसे पैरोंकी बिवाई नष्ट होती हैं। यदि बिवाइयोंसे पैर हजारों जगहसे फट गया हो तब भी इसे लगानेसे शीघ्र ही आराम हो जाता है।

(८०१०) स्नुह्याद्यं तैलम् (१)

(र. र. स. । उ. अ. २०)

स्नुह्याः कुडवं पयसः प्रस्थं दुग्धस्य नारिकेरस्य
गन्धकविषयोः कर्षं पारदकर्षं च साधुसंयोज्यम् ॥

खरतरकिरणातापात्पक्वं विलेपितं प्राज्ञैः ।
कुष्ठकिटिभेऽपहन्ति प्रबलं च समीरणं हन्यात् ॥

स्नुही (सेंड—थूहर) का दूध ४० तोले, नारियलका दूध २ सेर, शुद्ध गन्धक और बछनागका चूर्ण १।-१। तोला एवं शुद्ध पारद १। तोला और तेल ४० तोले ले कर पारे, गन्धक और बछनागको एकत्र घोट कर कज्जली बनावें और फिर सब चीजोंको एकत्र मिला कर तेज धूपमें रख दें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल कुष्ठ, किटिभ और प्रबल वायुको नष्ट करता है।

(८०११) स्नुह्याद्यं तैलम् (२)

(व. से. । कुष्ठा.)

स्नुहीक्षीरं विडङ्गानि अर्कक्षीरं च लाङ्गली ।
बलापलाशबीजानि कोशातक्योऽथ पिप्पली॥
सिद्धं तैलन्तु गोमूत्रं कुष्ठानां नाशनं परम् ।
पामापहरणं प्रोक्तं पूयघ्नं व्रणरोपणम् ॥

कल्क—सेंड (थूहर) का दूध, बायबिडंगका चूर्ण, आकका दूध, कलिहारीकी जड़का चूर्ण तथा खरैटीकी जड़, पलाश (ढाक) के बीज, कड़वी-तोरी और पीपल; इनका चूर्ण १।-१। तोला ले कर सबको पानीके साथ एकत्र पीस लें।

१ सेर तेलमें यह कल्क और ४ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल कुष्ठ, पामा, पीप और व्रणको नष्ट करता है।

(८०१२) स्नुह्याद्यं तैलम् (३)

(स्नुहीदुग्धादि तैलम्)

(वृ. मा. ; च. द. । क्षुद्ररोगा. ; र. र. ; व. से. ; भै. र. । क्षुद्ररोगा. ; भा. प्र.म. खं. २)

स्नुहीपयः पयोऽर्कस्य मार्कवो लाङ्गलीविषम् ।
मूत्रमाजं सगोमूत्रं रक्तिकासेन्द्रवारुणी ॥
सिद्धार्थं तीक्ष्णतैलं च गर्भं दत्वा विपाचयेत् ।
वह्निना मृदुना पक्वं तैलं खालित्यनाशनम् ॥
कूर्मपृष्ठसमानाऽपि रुज्या या रोमतस्करी ।
दिग्धा सानेन जायेत ऋक्षशारीरलोमशा ॥

कल्क—थूहर (सेंड) का दूध, आकका दूध, भंगरा, कलिहारीकी जड़, शुद्ध बछनाग, चौंटली, इन्द्रायणकी जड़ और सरसों १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ पीस लें।

सरसोंके १ सेर तेलमें यह कल्क और २-२ सेर बकरीका मूत्र और गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे खालित्य (गंजका) नाश होता है। कछुवेकी पीठके समान निर्लोम स्थान पर भी इसकी मालिशसे रीछके समान घने बाल निकल आते हैं।

(८०१३) स्यन्दनतैलम्

(वृ. नि. र. । भगन्दरा.)

चित्रकार्कत्रिवृत्पाठा मलपुहयमारकौ ।
सुधां वचां लाङ्गलिकीं हरितालं सुवर्चिकाम् ॥

ज्योतिष्मतीं च संहृत्य तैलं धीरो विपाचयेत् ।
एतद्धि स्यन्दनं नामतैलं दद्याद्भगन्दरे ॥
शोधनं रोपणं चैव सवर्णकरणं तथा ॥

कल्क—चीतामूल, आककी जड़, निसोत, पाठा, कठूमर, कनेरकी छाल, थूहर (सेंड)का कांड, बच, कलिहारीकी जड़, हरताल, सज्जी और मालकंगनी १-१ तोला ले कर सबका बारीक पीस लें।

९६ तोला तेल में यह कल्क और ४ गुना पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल भगन्दरके घावको शुद्ध करके भर देता है और फिर उस स्थानकी त्वचाके वर्णको भी ठीक कर देता है।

(८०१४) स्योनाकतैलम्

(यो. र. ; वृ. नि. र. । कर्ण. ; शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

तैलं स्योनाकमूलेन मन्देऽग्नौ विधिना भृतम् ।
हरेदाशु त्रिदोषोत्थं कर्णशूलं प्रपूरणात् ॥

अरलुकी जड़की छालके कल्क और उसीके क्राथ से सिद्ध तेल कानमें डालने से त्रिदोषज कर्णशूल तुरन्त नष्ट हो जाता है।

(कल्क—२० तोले । क्वाथ-८ सेर । तेल—२ सेर ।)

(८०१५) स्वर्जिकाद्यं तैलम् (१)

(भै. र. । कर्णरोगा. ; च द. । कर्णा. ५६ ; वै. र. ; धन्व. । कर्णरो. ; यो. त. । त. ७० ; शा. सं. । खं. ३ अ. ११, र. र. । कर्णरोगा.)

स्वर्जिका मूलकं शुष्कं हिङ्गु कृष्णा महौषधम् ।
शतपुष्पा च तैस्तैलं पक्वं शुक्तचतुर्गुणम् ॥
प्रणादशूलबाधिर्यं स्रावश्चाशु व्यपोहति ॥

कल्क—सज्जी, सूखी मूली, हींग, पीपल, सोंठ और सोया; इनका समान भाग मिलित चूर्ण २० तोले।

२ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर शुक्त× मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसे कानमें डालने से कर्णनाद, कर्णशूल, बधिरता और कर्णस्रावका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

(८०१६) स्वर्जिकाद्यं तैलम् (२)

(भै. र. । नाडीव्रणा. ; च. द. । नाडीव्रणा. ४५; व. से.; वृ. मा.; भा. प्र. म. खं. २. । नाडीव्रणा.)

स्वर्जिकासिन्धुदन्त्यग्निर्यूथिनलनीलिका ।
खरमञ्जरिबीजेषु तैलं गोमूत्रपाचितम् ॥
दुष्टव्रणप्रशमनं कफनाडीव्रणापहम् ॥

× **शुक्त** बनाने की विधि भा. भै. र. प्रथम भाग के परिशिष्ट में देखिये।

कल्क—सज्जीखार, सेंधा, दन्तीमूल, चीतामूल, यूथिका (जूही) के फूल, नलकी जड़, नीलकी जड़ और अपामार्ग (चिरचिटे) के बीज; इनका चूर्ण १।–१। तोला ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ पीस लें।

१ सेर तेलमें यह कल्क और ४ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाए तो तेल को छान लें।

यह तेल दुष्ट व्रण और कफज नाड़ीव्रण को नष्ट करता है।

(८०१७) स्वर्जिकाद्यं तैलम् (२)

(व. से.। नाडीव्रणा.; भा. प्र. म. खं. २। नाडीव्रणा.)

स्वर्जिकासैन्धवं दन्ती नीलीमूलं फलं तथा।
मूत्रे चतुर्गुणे सिद्धं तैलं नाडीव्रणापहम्॥

कल्क—सज्जी, सेंधा, दन्तीमूल, नीलकी जड़ और नीलके फल २–२ तोले ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानी के साथ पीस लें।

१ सेर तेल में यह कल्क और ४ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल नाड़ीव्रणको नष्ट करता है।

(८०१८) स्वर्जिकाद्यं तैलम् (४)

(व. से.। ज्वरा.)

स्वर्जिकाकुष्ठमञ्जिष्ठालाक्षामूर्वामहौषधैः।
सक्षीरैः साधितं तैलमभ्यङ्गाद्दाहशीतनुत्॥

कल्क—सज्जी, कूठ, मजीठ, लाख, मूर्वा और सोंठ; इनका समान भाग मिलित चूर्ण १० तोले लेकर सबको एकत्र मिला कर पानी के साथ पीस लें।

१ सेर तेलमें यह कल्क और ४ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे ज्वरके दाह और शीतका नाश होता है।

इति सकारादितैलप्रकरणम्

अथ सकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(८०१९) सारस्वतारिष्टः

(भै. र.)

समूलपत्रशाखाया ब्राह्मया ब्राह्ममुहूर्तके।
गृहीत्वा विंशतिपलं पुष्ययोगे शतावरीः॥
विदारिकाभयोशीराण्यार्द्रकञ्च तथा मिसिः।
पञ्च पञ्च पलान्येषां जलद्रोणे पचेद् भिषक्॥
पादावशेषे विस्राव्य रसं वस्त्रेण गालयेत्।
माक्षिकस्य दशपलं सितायाः पञ्चविंशतिः॥

धातकी पञ्चपलिका रेणुका त्रिवृता कणा ।
देवपुष्पं वचा कुष्ठं वाजिगन्धा विभीतकी ॥
अमृतैला विडङ्गत्वक् प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
क्वाथे तस्मिन् समस्तानि समाक्षिप्य प्रयत्नतः॥
स्वर्णकुम्भे निदध्याद् भाजने मृण्मयेऽपि वा ।
स्वर्णमतनुपत्रञ्च क्षिप्त्वास्मिन् कर्षसम्मितम् ॥
मासाज्जातरसं दृष्ट्वा हेमपत्रे लयं गते ।
वाससा च परिस्राव्य स्थापयेद् घृतभाजने ॥
सारस्वताभिधोऽरिष्टः एषोऽमृतसमः पुरा ।
शिष्याणामुपकारार्थं धन्वन्तरिविनिर्मितः ॥
आयुर्वीर्यं धृतिं मेधां बलकान्तिविवर्धयेत् ।
वाग्विशुद्धि करो हृद्यो रसायनवरः स्मृतः ॥
बालकानाञ्च यूनाञ्च वृद्धानाञ्च हितः सदा ।
नरनारीहितो नित्यं परमाजस्करो मतः ॥
वारयेत्स्वरकार्कश्यं तथा चास्पष्टभाषणम् ।
स्वरं परभृतस्येव जनयेत्सेवनात् सदा ॥
रजोदोषेण दुष्टानां योषितां शुक्रदोषिणाम् ।
पुन्साञ्चापि शुभकरः सर्वदोषहरो मतः ॥
अत्यध्ययनगीतादिक्षीणस्मृतिबला नराः ।
लभन्ते चित्तसन्तोषं स्मृतिश्चास्य निषेवणात् ॥
पयसा सह पातव्योऽरिष्टोऽयं शाणमानतः ।
मासाभ्यां रोगहृच्चायं शरदा सर्व सिद्धिदः ॥
अकालमृत्योर्हरणे यदीच्छा-
नारीप्रियत्वं यदि वाञ्छितं स्यात् ।
वाकशुद्धिधैर्यस्मृतिलब्धिरिष्टा
निषेव्यतां तद्यमृतं भवद्भि ॥

ब्राह्म मुहूर्तमें उखाड़ी हुई मूल, पत्र, शाखा युक्त ब्राह्मी १। सेर, पुष्य नक्षत्रमें उखाड़ी हुई शतावर, विदारीकन्द, हर्र, खस, अदरक और सौंफ २५-२५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें तदनन्तर उसमें १। सेर शहद, १२५ तोले खांड तथा २५ तोले धायके फूल और १।-१। तोला रेणुका, निसोत, पीपल, लौंग, बच, कूठ, असगन्ध, बहेड़ा, गिलोय, इलायची, बायबिड़ंग और दालचीनी; इनका चूर्ण मिलाकर सबको स्वर्णकलश या मिट्टीके पात्रमें भर कर उसमें १। तोला सोनेके अत्यन्त सूक्ष्म पत्र मिलाकर उसका मुख बन्द कर दें। तदनन्तर १ मास पश्चात् खोलकर देखें यदि स्वर्णपत्र विलीन हो गये हों तो कपड़ेसे छानकर बोतलों में भरकर सुरक्षित रक्खें।

यह अरिष्ट अमृतके समान गुणकारी है। प्राचीन कालमें श्री धन्वन्तरि भगवान ने अपने शिष्योंके उपकारार्थ इसकी रचना की थी।

इसके सेवनसे आयु, वीर्य, धृति, मेधा, बल और कान्ति की वृद्धि होती है और वाणी शुद्ध हो जाती है। यह हृद्य, श्रेष्ठ रसायन और बालक, युवा तथा वृद्ध स्त्री, पुरुषों के लिये हितकारी एवं अत्यन्त ओजवर्द्धक है। इसके सेवनसे स्वरकी कर्कशता और वाणीकी अस्पष्टता नष्ट होकर वाणी कोकिल सदृश मधुर हो जाती है। यह आसव रजोदोष और शुक्रदोषोंको नष्ट करता है। अत्यधिक अध्ययन और गीत आदिसे जिनकी स्मृति और शक्ति क्षीण हो गई है उन्हें इसके सेवनसे लाभ पहुंचता है। चित्तको शान्ति प्राप्त होती और स्मरणशक्ति बढ़ती है। इसे १ मास तक सेवन करनेसे अकाल मृत्यु नष्ट होती और मनुष्य कामिनीवल्लभ हो जाता है।

मात्रा—५ माशे।

अनुपान—दूध (व्यवहारिक मात्रा–१ तोला)

नोट—आसवमें स्वर्णपत्र डालनेसे वह उसमें विलीन नहीं होते अतएव निम्नलिखित विधिसे स्वर्ण-लवण बना कर डालना चाहिये—

एक पक्की (आतशी) शीशीमें ३ तोले स्वर्ण डालकर उसे स्प्रिट लैम्प पर गरम करें और पौना-पौना तोला नमक व शोरेका तेज़ाब एकत्र मिलाकर उसमेंसे ज़रा ज़रासा शीशीमें छोड़ते रहें, जब तक कि स्वर्ण पिघल न जाय। तत्पश्चात् उसमें ४ तोले सेंधा नमकका चूर्ण मिला दें और फिर जब जल सूख जाय और स्वर्णका रंग नारंगी हो जाय तो शीशीको ठण्डा करके उसमेंसे स्वर्ण लवणको निकाल लें।

सारिवाद्यासवः

(भै. र. । प्रमेहा.)

प्र. सं. ७४३८ "शारिवाद्यासवः" देखिये।

(८०२०) सूक्ष्मैलाद्यरिष्टः

(भै. र. । शूला.)

सूक्ष्मैलाया द्वे पले जातिकोषं
स्थूलैला च दीपनी देवपुष्पम्।
त्वक् कुङ्कुमं क्षीरकाकोलिका च
प्रत्येकशः कोलमानं प्रकुट्य ॥
सञ्जीविन्याः कौडवं तोयमर्द्धं
स्निग्धे भाण्डे सर्वमेतन्निधाय।
सप्ताहैकं स्थापयेत् माद्दतास्ये
उद्धृत्यैनं वस्त्रपूतं प्रयुञ्ज्यात् ॥
बिन्दुत्रिंशकतश्चादौ षष्टिबिन्दुमितां पराम्।
अस्य मात्रां प्रयुञ्जीत शूलरोगापनुत्तये ॥

छोटी इलायची १० तोले तथा जावित्री, बड़ी इलायची, अजवायन, लौंग, दालचीनी, केसर और क्षीरकाकोली ७॥-७॥ माशे ले कर सबका बारीक चूर्ण करें और फिर ३० तोले संजीवनीसुरा तथा २० तोले पानीको एकत्र मिला कर उसमें यह चूर्ण मिलाकर काच या चीनीके पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें एवं ७ दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

मात्रा—३० से ६० बूंद तक।

इसके सेवनसे शूलरोग नष्ट होता है।

स्वल्पचुक्रसन्धानम्

(वृ. मा । अजीर्णा. , च. द. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. १८१६ "चुक्रसन्धानम्" (स्वल्प) देखिये।

इति सकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

अथ सकारादिलेपप्रकरणम्

(८०२१) सप्तदलादिलेपः

(वृ. मा. ; यो. र. । व्रणशोथा. ; च. द. । व्रणशोथा. ४३)

सप्तदलदुग्धकल्कः शमयति दुष्टव्रणं प्रलेपेन ॥

सप्तपर्ण (सतौना वृक्ष) का दूध लगानेसे दुष्ट व्रण नष्ट होता है।

(८०२२) सप्तामृतालेपः

(र. र. । कुष्ठा.)

शतमूलीरसश्चैव कृष्णमूल्यामृताकुची ।
चक्रं चैडगजा वज्रीसमभागेन लेपयेत् ॥
वातरक्तं निहन्त्याशु कुष्ठमन्यं विनाशनम्
सप्तामृतो भवेल्लेपो गदापन्ने निशाकरः ॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो विश्वसम्पदि ॥

शतावरका रस, काली सारिवा, बाबची, गिलोय, अमलतासके पत्ते, तगर, पंवाड़के बीज और थूहरका दूध समान भाग ले कर चूर्ण योग्य चीजोंका चूर्ण बनावें और फिर सब चीजोंको एकत्र मिला कर लेप बना लें।

इसे लगानेसे वातरक्त और अन्य प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(८०२३) समुद्रफेनजशोथप्रलेप

(रा. मा. । ग्रन्थ्यर्बुदा. २६)

अम्भोधिफेनकषणाकुपितासृगुत्थं
यन्मण्डलं भवति तच्छिशिराम्बु पिष्टैः ।
बीजैः प्रणश्यति पलाशतरोः प्रलिप्तं
सान्ध्यं यथा तिमिरमिन्दुकरोपगूढम् ॥

समुद्रफेनकी रगड़ लगनेसे रक्त दुष्ट हो कर जो मण्डल (चकते) उत्पन्न हो जाते हैं वे ढाक (पलाश) के बीजोंको ठण्डे पानीमें पीस कर लेप करनेसे नष्ट हो जाते हैं।

(८०२४) सरलादिलेपः (१)

(ग. नि. । शिरो. १)

सरलामरदार्व्यम्बुकुष्ठगन्धतृणैः समैः ।
सक्षारलवणैः पिष्टैर्लेपः कफशिरोर्तिहा ॥

सरलकाष्ठ, देवदारु, सुगन्धबाला, कूठ, सुगन्धतृण (मिर्चियागन्ध), जवाखार और सेंधानमक बराबर बराबर ले कर सबको पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे कफज शिरपीड़ा नष्ट होती है।

(८०२५) सरलादिलेपः (२)

(व. से. । शिरो.)

सरलागुरुशार्ङ्गेष्टादेवकाष्ठैः सरोहिषैः ।
क्षीरपिष्टैः सलवणैः सुखोष्णैर्लेपयेच्छिरः ॥

धूपसरल, अगर, करञ्ज, देवदारु, रोहिषतृण (मिर्चियागन्ध) और सेंधा नमक समान भाग ले कर सबको दूधमें पीस कर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे कफज शिरोरोग नष्ट होता है।

(८०२६) सर्जरसादिलेपः (१)

(वै. म. र. । पटल ११)

शिग्रुपत्ररसे सर्जरसं पिष्ट्वा मसूरिकाम् ।
उत्पन्नमात्रामालिम्पेत् सा तदैव विनश्यति ॥

मसूरिकाके उत्पन्न होते ही उस पर रालको संहजनेके पत्तोंके रसमें पीस कर लेप करनेसे वह तुरन्त नष्ट हो जाती है।

(८०२७) सर्जरसादिलेपः (२)

(व. से. । मुखरोगा.)

तैलं घृतं सर्जरसं ससिक्थं
रास्नागुडं सैन्धवगैरिकञ्च ।
पक्वं समांशं दशनच्छदानां
त्वग्भेदहन्तृ प्रवदन्ति लेपम् ॥

तेल, घी, राल, मोम, रास्नाका चूर्ण, गुड़, सेंधा नमक और गेरु समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब सब मिल कर एकजीव हो जाय तो उतार लें ।

इसके लगानेसे मसूढ़ोंकी त्वचाका फटना नष्ट होता है ।

(८०२८) सर्जादिलेपः

(वृ. नि. र. । क्षुद्ररोगा.)

सर्जाम्बुकुष्ठसैन्धवसितसिद्धार्थैः प्रकल्पितो योगः
उद्वर्तनेन नियतं शमयति वृषणकण्डूतिः ॥

राल, सुगन्धबाला, कूठ, सेंधा नमक और सफेद सरसों समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पीस कर इसकी मालिश करनेसे अण्डकोषोंकी खुजली नष्ट होती है ।

(८०२९) सर्जिकादिलेपः (१)

(यो. र. । व्रणशोथा. ; शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

सर्जिकायावशूकाद्याः क्षारा लेपेन दारणाः ।
हेमकान्त्यास्तथा लेपो व्रणे परमदारणः ॥

सज्जी और जवाखारादि किसी क्षारको पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे अथवा दारुहल्दीका लेप करनेसे व्रणशोथ फट जाता है ।

(८०३०) सर्जिकादिलेपः (२)

(वृ. नि. र. । उपदंशा.)

सर्जिकातुत्थकासीसशैलेयं सरसाञ्जनम् ।
मनःशिलासमश्चूर्णं व्रणवीसर्पनाशनम् ॥

सज्जी, नीलाथोथा, कसीस, शिलाजीत, रसौत और मनसिल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे पानीमें मिला कर लेप करनेसे व्रण और विसर्पका नाश हो जाता है ।

(८०३१) सर्जिकाद्यलेपः

(व. से. । उपदंशा.)

स्वर्जिका तुत्थशैलेयं सरलं सरसाञ्जनम् ।
मनःशिलाले च समे चूर्णो मांसाङ्कुरापहः ॥

सज्जी, नीलाथोथा, शिलाजीत, सरल वृक्षके काष्ठका चूर्ण, रसौत, मनसिल और हरताल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे पानीमें मिला कर लेप करनेसे मांसाङ्कुर नष्ट होते हैं ।

(८०३२) सर्षपकल्कलेपः

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

स्वण्डे महावृक्षभवे निलीनः
स्विन्नः कुकूले पुटपाकयुक्त्या ।
विचर्चिकां सर्षपकल्कपिण्डो
निहन्ति लज्जामिव रागवेगः ॥

सरसोंको पीस कर थूहरके डण्डेके भीतर भर दें और उस पर कपरमिट्टी करके पुटपाक विधिसे अंगारों पर पकावें ।

तदनन्तर उसके ठण्डा हो जाने पर उसमेंसे सरसोंको निकाल लें।

इसका लेप करनेसे विचर्चिका (खुजली) अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाती है।

(८०३३) सर्षपादिलेपः (१)

(वृ. मा. । गलगण्डा. ; शा. सं. । खं. ३ अ. ११ ; ग. नि. । ग्रन्थ्याद्य. ; यो. र. । गण्डमाला.)

सर्षपाः शिग्रुबीजानि शणबीजातसी यवान् ।
मूलकस्य च बीजानि तक्रेणाम्लेन पेषयेत् ॥
गण्डानि ग्रन्थयश्चैव गण्डमालाः समुत्थिताः ।
प्रलेपात्तेन शाम्यन्ति विलयं यान्ति वाऽचिरात्॥

सरसों, संहजनेके बीज, सनके बीज, अलसी, जौ और मूलीके बीज समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खट्टे मट्ठेमें पीस कर लेप करनेसे गण्ड और गण्डमालाकी ग्रन्थियां शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं।

(८०३४) सर्षपादिलेपः (२)

(वृ. मा. । गलगण्डा. ; शा. सं । खं. ३ अ. ११ ; यो. र. । गण्डमाला.)

सर्षपारिष्टपत्राणि दन्त्या भल्लातकैः सह ।
छागमूत्रेण सम्पिष्टमपचीघ्नं प्रलेपनम् ॥

सरसों, नीमके पत्ते, दन्तीमूल और भिलावा समान भाग ले कर सबको बकरेके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अपची (गण्डमाला भेद) का नाश होता है।

(८०३५) सवर्णकर्त्तालेपः

(यो. त. । त. ६२)

कुडवो वल्गुजबीजाद्धरितालचतुर्थसम्मिश्रः ।
मूत्रेण गवां पिष्टः सवर्णकरणः परः श्वित्रे ॥

बावचीके बीज ४ भाग और हरताल १ भाग ले कर दोनोंका बारीक चूर्ण करके गोमूत्रमें पीस कर लेप करनेसे श्वेत कुष्ठका रंग स्वभाविक त्वचाके समान हो जाता है।

(८०३६) सहस्रधौतसर्पिलेपः

(वृ. नि. र. । दाह.)

सहस्रधौतेन घृतेन दिग्धदेहस्य दाहकृशतां विभर्तिः ।
अन्याङ्गनासङ्गमसादरस्य स्वीयेषु दारेषु यथाभिलाषः ॥

हज़ार बार धोये हुवे घृतका लेप (मर्दन) करनेसे दाहका नाश होता है।

(८०३७) सारिवादिलेपः (१)

(व. से. । बालरोगा.)

सारिवोत्पलकह्लारभद्रश्रीमुस्तचन्दनैः ।
प्रपौण्डरीकमञ्जिष्ठायष्टीमधुकसर्षपैः ॥
कुमाराणां प्रशस्तोऽयं लेपो विसर्पनाशनः ॥

सारिवा, नीलोत्पल, कह्लार (कमलभेद), सफेद चन्दन, नागरमोथा, लाल चन्दन, पुण्डरिया, मजीठ, मुलैठी और सरसों समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे बच्चोंका विसर्प रोग नष्ट हो जाता है।

(८०३८) सारिवादिलेपः (२)

(व. से. । व्रणा.)

एकं वा सारिवामूलं सर्वव्रणविशोधनम्।

केवल सारिवाकी जड़को पानीमें पीस कर लेप करनेसे ही समस्त प्रकारके व्रण शुद्ध हो जाते हैं।

(८०३९) सिक्थकघृतम् (लेपः)

(वृ. यो. त. । त. ११६)

सिक्थकं तथा शङ्खजीरकं
शीर्षतैलकं सर्जखादिरौ।
गोघृतं व्रणे साधितं त्विदं
सिद्धिदं भवेत्क्षतरोगनाशनम् ॥

शंखजीरा (संगजराहत) का चूर्ण, अगरका तेल, रालका चूर्ण, कत्थेका चूर्ण और गोघृत तथा मोम १-१ भाग ले कर प्रथम घीको गरम करके उसमें मोम मिलावें और फिर अन्य ओषधियां मिलाकर खरल कर लें।

इसे लगानेसे घाव नष्ट होता है।

(८०४०) सिक्थकादिघृतम् (लेपः)

(भा. प्र. म. खं. २ । व्रणशोथा.)

सिक्थककर्दमजीरकमधुपथ्या सर्वमिश्रितं लेपात्।
गव्यं घृतमपहरति विपाकजनितं व्रणं सद्यः ॥

मोम, कमलकी जड़के नीचेकी कीचड़, जीरा, शहद और हर्र एक एक भाग तथा गायका घी ४ भाग ले कर प्रथम घीको गरम करके उसमें मोम मिलावें और फिर शहद तथा अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला लें।

इसे लगानेसे घाव नष्ट होते हैं।

(८०४१) सिद्धार्थादिलेपः (१)

(यो. त. । त. २०)

सिद्धार्थसैन्धववचागृहधूमविश्वैः
पिष्टैर्जलेन निशया सहितं च सूक्ष्मम् ।
लेपो हितो रुधिरनाशकरः प्रतीतः
शोफव्रणस्य शमनः सरुजस्य कर्णे ॥

सफेद सरसो, सेंधा नमक, बच, घरका धुंवा, सोंठ, और हल्दी इनका समान भाग मिलित चूर्ण ले कर सबको पानीके साथ अत्यन्त बारीक पीस कर लेप करनेसे सन्निपातमें उत्पन्न होने वाले कर्णमूलकी सूजन और पीड़ाका नाश होता है। यह उस स्थानमें संचित रक्तको विलीन कर देता है।

(८०४२) सिद्धार्थादिलेपः (२)

(यो. त. । त. २०)

सिद्धार्थको वचा हिङ्गु करञ्जः सुरदारु च ।
मञ्जिष्ठा त्रिफला श्वेता कटभीत्वक्कटुत्रयम् ॥
प्रियङ्गुश्च शिरीषं च निशा दार्वी समांशतः।
अजामूत्रेण सम्पिष्टो गोमूत्रैर्वाथ चूर्णितः ॥
सर्वज्वरं निहन्त्याशु सिद्धार्थादिः प्रलेपतः ॥

सफेद सरसो, वच, हींग, करंजकी छाल, देवदारु, मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, फिटकरी, कटभी (कंटकशिरीष) की छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, फूलप्रियङ्गु, सिरसकी छाल, हल्दी और

दारुहल्दी समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें। इसे बकरीके मूत्र या गोमूत्रमें पीस कर शरीर पर लेप करनेसे हर प्रकारका ज्वर शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(८०४३) सिद्धार्थादिलेपः (३)

(शा. सं. । ख. ३ अ. ११)

सिद्धार्थरजनीकुष्ठप्रपुन्नाटतिलैः सह ।
कटुतैलेन सम्मिश्रं दद्रुघ्नं च प्रलेपनम् ॥

सफेद सरसो, हल्दी, कूठ, पंवाड़के बीज और तिल समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे सरसोंके तेलमें मिला कर लेप करनेसे दाद नष्ट हो जाते हैं।

(८०४४) सिद्धार्थादिलेपः (४)

(वृ. मा. । क्षुद्ररो.)

सिद्धार्थकवचालोध्रसैन्धवैश्च प्रलेपनम् ।
वमनं च निहन्त्याशु पिटकान्यौवनोद्भवान् ॥

सफेद सरसों, बच, लोध और सेंधा नमक समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे पानीमें पीस कर पेट पर लेप करनेसे वमन रुक जाती है और मुख पर लेप करनेसे मुहासे (यौवन पिडिका) नष्ट हो जाते हैं।

(८०४५) सिध्महरलेपः (१)

(रसे. सा. सं. । कुष्ठा.)

कृष्णधुस्तूरजं मूलं गन्धतुल्यं विचूर्णयेत् ।
मर्द्यं जम्बीरनीरेण लेपनं सिध्मनाशनम् ॥

काले धतूरेकी जड़ और शुद्ध आमलासार गन्धक समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर लेप करनेसे सिध्म (छीप) का नाश होता है।

(८०४६) सिध्महरलेपः (२)

(रसे. सा. सं. । कुष्ठा.)

गन्धकं मूलकक्षारमार्द्रकस्य रसैर्दिनम् ।
मर्दितं हन्ति लेपेन सिध्मन्तु दिनमेकतः ॥

शुद्ध आमलासार गन्धक और मूलीका क्षार बराबर बराबर ले कर एक दिन अदरकके रसमें खरल करें।

इसका लेप करनेसे सिध्म (छीप) एक दिनमें ही नष्ट हो जाता है।

(८०४७) सिध्महरलेपः (३)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

कासमर्दकबीजानि मूलकानां तथैव च ।
गन्धपाषाणमिश्राणि सिध्मानां परमौषधम् ॥

कसौंदी और मूलीके बीजोंका चूर्ण तथा आमलासार गन्धक बराबर बराबर ले कर तीनोंको एकत्र खरल करें।

इसे पानीमें मिलाकर लेप करनेसे सिध्म शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

यह सिध्म (छीप) की श्रेष्ठ औषध है।

(८०४८) सिध्महरलेपः (४)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

गन्धपाषाणमिश्रेण यवक्षारेण लेपतः ।
सिध्मनाशमुपैत्याशु कटुतैलयुतेन च ॥

१–१ भाग गन्धक और जवाखारको सरसों-के तेलमें घोट कर लेप करनेसे सिध्म (छीप) का नाश होता है ।

(८०४९) **सिन्दूरादिलेपः**

(र. र. रसा. खं. । उप. ५)

सिन्दूरस्य समं चूर्णं साबुणं च तयोः समम् ।
तज्जले पेषितं लेप्यं तत्क्षणात्कचरञ्जनम् ॥

सिन्दूर और पत्थरका चूना १–१ भाग तथा साबुन २ भाग ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे सफेद बाल तुरन्त ही काले हो जाते हैं ।

(८०५०) **सिन्दूराद्यो लेपः**

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६ ; रा. मा. । कुष्ठा. ८)

सिन्दूरमरिचक्षोदयुक्तेनाभ्यङ्गयोगतः ।
माहिषेणाचिरात्पामा नवनीतेन नश्यति ॥

सिन्दूर और काली मिरचके १–१ भाग चूर्णको भैंसके मक्खनमें मिला कर लेप करनेसे पामा (खुजली) अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाती है ।

(८०५१) **सिंहास्यादिलेपः**

(यो. र. । विपादिका. ; वृ. यो. त. । त. १२०)

कोमलसिंहास्यदलं सनिशं सुरभीजलेन सम्पिष्टम् ।
दिवसत्रयेण नियतं शमयति कच्छुं विलेपनतः॥

बासे (अडूसे) की कोंपल और हल्दीका चूर्ण समान भाग ले कर गोमूत्रमें पीस कर लेप करनेसे कच्छूका तीन दिनमें ही अवश्य नाश हो जाता है ।

(८०५२) **सुदर्शनामूलयोगः**

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

सौदर्शनीं शिफां पिष्ट्वा लेपं कुर्यात्सजीरकाम् ।
काञ्जिकेन जयेद्दद्रूं श्वित्रघ्नी कांस्यसंस्थिता ॥

सुदर्शनाकी जड़ और जीरेका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे दाद नष्ट हो जाता है ।

इस लेपको २४ घंटे कांसीके पात्रमें रक्खा रहनेके पश्चात् लगानेसे श्वित्र नष्ट हो जाता है ।

(८०५३) **सुधादिलेपः**

(वृ. नि. र. । अग्निदग्धव्रणा.)

सुधां पुरातनीं दधित्वारिणा परिपेषिताम् ।
लेपनं तैलदग्धस्य विस्फोटव्याधिनाशनम् ॥

बहुत दिनोंके पुराने पत्थरके चूनेको दहीके पानीमें पीस कर लेप करनेसे अग्निदग्ध व्रण नष्ट होते हैं ।

(८०५४) **स्वर्चिकाद्यो लेपः**

(ग. नि. । अर्शो.)

सुवर्चिका बिडं दन्ती भल्लातकमथो वचा ।
चित्रकोऽर्कस्त्रिकटुकं स्नुहीक्षीरेण पेषयेत् ॥
एतदालेपनं श्रेष्ठमर्शसां क्षारसम्मितम् ।
दह्यते सप्तरात्रेण पुंसत्वं च न विनश्यति ॥

सज्जी, बिड लवण, दन्तीमूल, भिलावा, बच, चीता, आककी जड़, सोंठ, मिर्च, पीपल और जवाखार समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें और उसे थूहरके दूधमें घोट कर लेप बना लें । इसे लगानेसे सात दिनमें अर्शके मस्से नष्ट हो जाते हैं और पुंसत्वको हानि नहीं पहुंचती ।

(८०५५) सुवर्णपुष्प्यादिलेपः

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

सुवर्णपुष्पी कासीसं विडङ्गानि मनःशिला ।
रोचना सैन्धवं चैव लेपनाच्छ्वित्रनाशनम् ॥

अमलतासके पत्ते, कसीस, बायबिडंग, मनसिल, गोरोचन और सेंधानमक समान भाग ले कर बारीक पीस लें।

यह लेप लगानेसे श्वित्र कुष्ठ नष्ट होता है।

(८०५६) सुवर्णादिलेपः

(र. चं. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सुवर्णमुक्तारजतप्रवालं
कस्तूरिकाकुङ्कुमरोचनं च ।
वराट-रुद्राक्ष-मधूक-बिल्वं
कुष्ठं च खर्जूरपुनर्नवे च ॥
द्राक्षा कणा नागरपुत्रजीवी
सारङ्गशृङ्गं कतकस्य बीजम् ।
एरण्डमूलं शरशीर्षकं च
मयूरिका श्वेतपुनर्नवा च ॥
स्तन्येन पिष्टा कुरु सन्निपाते
लेपः सदा सर्वगदान्निहन्ति ॥

सोना, मोती, चांदी, प्रवाल, कस्तूरी, केसर, गोरोचन, कौड़ी, रुद्राक्ष, महुवेके फूल, बेलकी छाल, कूठ, खजूर, पुनर्नवा, द्राक्षा (मुनक्का), पीपल, सोंठ, पुत्रजीव, हरिणका सींग, निर्मलीके बीज, अरण्डमूल, शर (सरकण्डेकी जड़), अगर, पाठा और सफेद पुनर्नवा; इनका अत्यन्त बारीक चूर्ण बराबर बराबर ले कर सबको एकत्र मिलाकर स्त्रीके दूधमें मिलाकर घोट लें।

सन्निपातमें इसका लेप करनेसे समस्त उपद्रव नष्ट हो जाते हैं।

(८०५७) सूतादिलेपः

(यो. र. । कुष्ठा.)

सूतगन्धकयोः पिष्ट्वा कज्जलिकां विधाय च ।
म्रक्षणेन विमर्द्याथ करित्वग्लेपने हितम् ॥

(समान भाग) पारे और गन्धककी अत्यन्त महीन कज्जलीको मक्खनमें मिलाकर लेप करनेसे करित्वक् (गजचर्म) रोग नष्ट होता है।

(८०५८) सूरणादिलेपः (१)

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

सूरणं रजनी वह्निटङ्कणं गुडमिश्रितम् ।
पिष्टारनालकैर्लेपो हन्त्यर्शांसि महान्त्यपि ॥

जिमीकन्द, हल्दी, चीतामूल, सुहागा और गुड़ समान भाग ले कर कांजीके साथ अत्यन्त बारीक पीस कर लेप करनेसे प्रवृद्ध अर्शके मस्सेभी नष्ट हो जाते हैं।

(८०५९) सूरणादिलेपः (२)

(वै. म. र. । पटल १६)

परिणतसूरणकन्दं सनागरं तोयसम्पिष्टम् ।
मेदोग्रन्थिहरार्थं लिम्पेद्बहुशश्च सप्ताहम् ॥

पक्व जिमिकन्द और सोंठ समान भाग ले कर दोनोंको पानीके साथ बारीक पीस कर बार बार लेप करनेसे १ सप्ताहमें मेदकी गांठ नष्ट हो जाती है।

(८०६०) सूर्यावर्तादिलेपः

(ग. नि. । ग्रन्थ्य. १ ; वृ. नि. र. । गलगण्डा.)

सूर्यावर्तरसोनाभ्यां गलगण्डोपनाहनम् ।
स्फोटास्रावैः शमयति गलगण्डं न संशयः ॥

हुलहुलके पत्ते और ल्हसन समान भाग ले कर दोनोंको अत्यन्त बारीक पीस कर गलगण्ड पर लेप करें । इससे छाला पड़ कर वह फूट जायगा और मवाद निकल कर गलगण्ड नष्ट हो जायगा ।

(८०६१) सैन्धवादिलेपः (१)

(सु. सं. । चि. अ. ९)

सिन्धूद्भूतं चक्रमर्दस्य बीज–
मिक्षुद्भूतं केशरं तार्क्ष्यशैलम् ।
पिष्टो लेपोऽयङ्कपित्थाद्ररसे
दद्रूस्तूर्णं नाशयत्येष योगः ॥

सेंधा नमक, पंवाड़के बीज, खांड, केसर और रसौत समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें । इसे कैथके रसमें पीस कर लेप करने से दाद शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(८०६२) सैन्धवादिलेपः (२)

(वृ. नि. र. । अर्श. ; वृ. यो. त. । तं. ६९)

सिन्धूत्थदेवदाल्याश्च बीजं काञ्जिकपेषितम् ।
गुदाङ्कुरान्प्रलेपेन पातयेत्पर्वतानपि ॥

सेंधानमक और बिंडाल डोढेके बीज समान भाग ले कर दोनोंको काञ्जीके साथ बारीक पीस कर लेप करने से अर्शके मस्से नष्ट हो जाते हैं ।

(८०६३) सैन्धवादिलेपः (३)

(वृ यो. त. । त. १२०)

सैन्धवं चक्रमर्दं च सर्षपं पिप्पलीं तथा ।
सेचयेदारनालेन पामाकण्डूविनाशनम् ॥

सेंधा नमक, पंवाड़के बीज, सरसो और पीपल इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको कांजीके साथ पीसकर लेप करने से पामा और कण्डू (खुजली) का नाश होता है ।

(८०६४) सैन्धवादिलेपः (४)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

सैन्धवदारुहरिद्रागैरिकपथ्यारसाञ्जनैः पिष्टैः ।
दत्तो बहिः प्रलेपो भवत्यशेषाक्षिरोगहरः ॥

सेंधा नमक, दारुहल्दी, गेरू, हर्र और रसौत समान भाग ले कर सबको पानीके साथ बारीक पीसकर आंखों के बाहर लेप करनेसे समस्त नेत्ररोग नष्ट होते हैं ।

(८०६५) सैन्धवादिलेपः (५)

(यो. त. । त. ६२)

सैन्धवं मदनं रालं मधु सर्पिः पुरो गुडम् ।
गैरिकं स्फुटितौ पादौ लिप्तौ पङ्कजसन्निभौ ॥

सेंधा नमक, मोम, राल, शहद, घी, गूगल, गुड़ और गेरु समान भाग ले कर प्रथम घीमें गूगल मिलाकर गरम करें जब ये दोनों मिल जाएं तो उसमें मोम और शहद मिलालें तदनन्तर गुड़ और अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें ।

इसका लेप करनेसे पैरों की बिवाई नष्ट होकर पैर कमल सदृश कोमल हो जाते हैं ।

(८०६६) **सोमवल्कादिलेपः**

(च. द. ; वृ. मा. । विषा.)

सोमवल्कोऽश्वकर्णश्च गोजिह्वा हंसपाद्यपि।
रजन्यौ गैरिकं लेपो नखदन्तविषापहः॥

श्वेत खदिर, शालवृक्षका सार, गोजिह्वा (गोजिया घास), हंसपादी, हल्दी, दारुहल्दी और गेरु समान भाग ले कर पानीके साथ पीस लें।

इसका लेप करनेसे नख और दांतोंका विष नष्ट होता है।

(८०६७) **सौभाञ्जनादिलेपः**

(यो. त. । त. ५७ ; वृ. मा. । गलगण्डा.)

सौभाञ्जनं देवदारु काञ्जिकेन प्रयोजितम्।
कोष्णप्रलेपतो हन्यादपचीं दुस्तरामपि॥

संहजनेकी छाल और देवदारुके समान भाग मिलित बारीक चूर्णको कांजीके साथ पीसकर गरम करके लेप करने से दुःसाध्य अपची (गण्डमाला भेद)का भी नाश होता है।

(८०६८) **स्तम्भकलेपः**

(यो. त. । त. ८०)

कर्पूरं टङ्कणं सूतं तुल्यं मुनिरसं मधु।
सम्मर्द्य लेपयेल्लिङ्गं स्थित्वा यामं तथैव च॥
ततः प्रक्षाल्य रमयेद्वनितानां शतं सुखम्।
वीर्यस्तम्भकरं पुंसां सम्यङ्नागार्जुनोदितम्॥

कपूर, सुहागा और शुद्ध पारा समान भाग ले कर तीनोंको अच्छी तरह खरल करें और फिर उसमें १-१ भाग शहद और अगस्तिके पत्तोंका रस मिला कर लिङ्ग पर लेप करें और एक पहर पश्चात् धो कर स्त्रीसमागम करें। यह इतना स्तम्भक है कि मनुष्य एक समयमें सौ स्त्रियों से सुख पूर्वक रमण कर सकता है।

(८०६९) **स्थूलीकरणलेपाः**

(धन्व. । वाजीकरणा.)

(१)

सकुष्ठमातङ्गबलाबलानां
वचाश्वगन्धा गजपिप्पलीनाम्।
तुरङ्गशत्रोर्नवनीतयोगा-
ल्लेपेन लिङ्गं मुशलत्वमेति॥

× × ×

(२)

बृहतीसितसिद्धार्थकवचातुरगगन्धकासहितैः।
एभिः प्रलेपितं स्यात्पुरुषवराङ्गं हयस्येव॥

× × ×

(३)

घृतमधुयुक्तं तैलं बृहतीफलमात्मगुप्ता च।
एभिर्वराङ्गवृद्धिः सप्तदिनं ताम्रभाण्डपर्युषितैः॥

× × ×

(४)

अश्वगन्धापामार्गबृहतीसारिवातिलान्।
कुटजस्य च बीजानि तथा वै राजसर्षपान्॥
समभागानि कृत्वा तान् क्षीरेणाज्येन पेषयेत्।
तं समुद्वर्त्तितं लिङ्गं तेनाति स्थूलतां व्रजेत्॥

× × ×

(५)

साज्यकुष्ठसमायुक्तं बृहतीफलमिश्रितम्।
शतावरीमूलयुतमश्वगन्धासमन्वितम्॥

तिलतैलं च यत्नेन सम्यक् मृद्वग्निना पचेत् ।
तेन लिङ्गं समाभ्यक्तं यावदिच्छां प्रवर्तते ॥

× × ×

(६)

महिषी नवनीतं च मुसलीचूर्णमिश्रितम् ।
धान्यराशिस्थितं भाण्डे सप्ताहाच्च समुद्धरेत् ॥
तेन प्रलेपयेल्लिङ्गं यामैकाद्वर्त्तते ध्रुवम् ।

× × ×

(७)

निर्मलं लिङ्गमालिप्य गोमयेन पुनः पुनः ।
सिक्तं जलेन शीतेन वर्द्धते यावदिच्छति ॥

× × ×

(८)

तैलेन सार्षपैः साधमालिम्पेद्दाडिमत्वचम् ।
लिङ्गकर्णस्तनानां च वृद्धिहेतुरिदं किल ॥

× × ×

(९)

गोरोचनाभ्रकमदसमांशं मधुना सह ।
पेषयित्वा समं लिम्पेल्लिङ्गं मुसलवद्भवेत् ॥

(१)

कूठ, नागवलाकी जड़, बला (खरैटी)की जड़, बच, असगन्ध, गजपीपल और कनेरकी जड़, इनका बारीक चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको नवनीत (मक्खन) में मिलाकर लेप करनेसे लिंग मूसल के समान स्थूल हो जाता है।

× × ×

(२)

कटेलीका फल या जड़, सफेद सरसों, बच और असगन्ध; इनका समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानीमें पीसकर लेप करनेसे मनुष्यका लिंग घोड़ेके लिंगके समान स्थूल हो जाता है।

× ×

(३)

बड़ी कटेलीके फलका चूर्ण, कौंचका चूर्ण, घी, शहद और तेल १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर ताम्रपात्रमें भरकर रख दें।

सात दिन तक इसका लेप करने से लिंग वृद्धि होती है।

× × ×

(४)

असगन्ध (चिरचिटे) के बीज, कटेलीके फल, सारिवा, तिल, इन्द्रजौ और सरसों इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको दूधके साथ पीसें और फिर उसमें १ भाग घी मिला लें।

इसकी मालिशसे लिंग अत्यन्त स्थूल हो जाता है।

× × ×

(५)

कूठ, बड़ी कटेलीका फल, शतावर और असगन्ध इनका चूर्ण तथा घी १-१ भाग, तिलका तेल सबसे चार गुना और पानी तेलसे ४ गुना ले कर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे लिंग यथेच्छ प्रवृद्ध हो जाता है।

(६)

मूसलीके बारीक चूर्णको भैंसके मक्खनमें मिलाकर किसी पात्रमें बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और ७ दिन पश्चात् निकाल लें।

इसका लेप करने से लिंग १ पहरमें ही अवश्य बढ़ जाता है।

× × ×

(७)

लिंगको स्वच्छ करके बार बार गायके गोबर का लेप करें और शीतल जलसे धोते रहें। इससे लिंग इच्छानुसार बढ़ जाता है।

× × ×

(८)

अनारकी छालके बारीक चूर्णको सरसोंके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे लिंग, कर्ण और स्तनोंकी वृद्धि होती है।

× × ×

(९)

गोरोचन, अभ्रकका चूर्ण और कस्तूरी समान भाग लेकर सबको शहदके साथ पीसकर लेप करनेसे लिंग मूसलके समान स्थूल हो जाता है।

× × ×

(८०७०) **स्थौणेयकादिलेपः**

(ग. नि. ; वृ. मा. । कुष्ठा.)

स्थौणेयकनिशादूर्वाः स्वल्पतालाः प्रलेपतः।
धत्तूररसपिष्टाश्च कण्डूकुष्ठविनाशनाः॥

स्थौणेयक (थुनेर), हल्दी, दूर्वा (दूब घास) १–१ भाग और ज़रा सी हरताल ले कर सबको एकत्र मिलाकर धतूरेके पत्तोंके रसमें घोट कर लेप करने से कण्डू (खुजली) और कुष्ठका नाश होता है।

(८०७१) **स्नुकलेपः**

(व. से. । कुष्ठा.)

स्नुगर्कजातीपूतीकसुवर्णहरिपल्लवाः।
मूत्रपिष्टाः प्रलेपेन श्वित्रदद्रूव्रणच्छिदः॥

स्नुही (सेण्ड), आक, चमेली, करञ्ज और धतूरा इनके हरे पत्ते समान भाग ले कर सबको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे श्वित्र कुष्ठ, दाद और व्रणका नाश होता है।

(८०७२) **स्नुहीक्षीरलेपः**

(वृ. नि. र. । अर्शो.)

स्नुहीक्षीरनिशालेपस्तथा गोमूत्र कल्कितः।
योजितो गोभवक्षीरवह्निमूलावचूर्णितम्॥
पिबंस्तदेव तेनैव भुञ्जानो गुदजाङ्कुरान्॥

थूहरका दूध और हल्दीका चूर्ण समान भाग ले कर दानोंको एकत्र मिला कर गोमूत्रके साथ पीस कर लेप करने तथा गायके दूधमें चित्रक-मूलका चूर्ण मिला कर पीने और उसीके साथ पथ्य भोजन करनेसे अर्शका नाश होता हैं।

(८०७३) **स्नुह्यर्कादिलेपः**

(व. से. । क्षुद्र.)

स्नुह्यर्कदुग्धधत्तूरपत्रं मूत्रविमिश्रितम्।
लेपनं तैलसंयुक्तं हितं कण्डूशिरोव्रणे॥

स्नुही (सेण्ड) का दूध, आकका दूध और धतूरेके पत्ते १–१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर गोमूत्रके साथ बारीक पीस लें। इसे तेलमें मिला . प करनेसे कण्डू (खाज) और शिरके व्रण नष्ट होते हैं।

(८०७४) **स्नुह्यादिलेपः**

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

स्नुह्यग्निलाङ्गलीदन्तीमूलैर्लेपोऽर्शसां हितः ॥

स्नुही (सेण्ड), चीतामूल, कलिहारीकी जड़ और दन्तीमूल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अत्यन्त बारीक पीस कर लेप करनेसे अर्शके मस्से नष्ट होते हैं ।

(८०७५) **स्वर्जिकादिघृतम् (लेपः)**

(यो. र. । व्रणशोथा. ; वृ. यो. त. । त. १११ ; यो. त. । त. ६०)

स्वर्जिका च यवक्षारः कम्पिल्लं च हरेणुका ।
टङ्कणं श्वेतखदिरं तुत्थं चूर्णं च गोघृतैः ॥
सर्वं समांशं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत्प्रहरं दृढम् ।
स्वर्जिकाद्यमिदं सर्पिः सर्वव्रणहरं परम् ॥
रोपणं कृमिकण्डूघ्नं सवर्णकरणं परम् ॥

सज्जी, जवाखार, कमीला, रेणुकाका चूर्ण, सुहागेकी खील, सफेद कत्था, नीलाथोथा और पत्थरका चूना समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें और इसे गोघृतमें मिला कर एक पहर तक अच्छी तरह खरल करें ।

इसे लगानेसे हर प्रकारके व्रण नष्ट हो जाते हैं । यह व्रणकी खाज और कृमियोंको नष्ट करके उसे शुद्ध करता और भरता है तथा त्वचाके रंगको भी ठीक कर देता है ।

(८०७६) **स्वर्जिकादिलेपः**

(व. से. । ग्रन्थ्य.)

स्वर्जिकामूलकक्षारः शङ्खचूर्णसमन्वितः ।
प्रलेपो विहितः श्लक्ष्णो हन्ति ग्रन्थ्यर्बुदादिकान् ॥

सज्जी, मूलीका खार और शंखका चूर्ण समान भाग ले कर सबको पानीके साथ अत्यन्त बारीक पीस कर लेप करनेसे ग्रन्थि (गांठ) और अर्बुद (रसौली) आदिका नाश होता है ।

इति सकारादिलेपप्रकरणम्

अथ सकारादिधूपप्रकरणम्

(८०७७) **सक्तुधूपः**

(वृ. मा. । शूला.)

कम्बलावृतगात्रस्य प्राणायामं प्रकुर्वतः ।
कटुतैलाक्तसक्तूनां धूपः शूलापहः परः ॥

रोगीको कम्बल उढ़ाकर लिटा दें और उससे कह दें कि सांसको रोके पड़ा रहे । तदनन्तर सरसोंके तेलमें जौका सत्तू मिला कर उसे (रोगीको) उसको धूनी दें ।

(८०७८) **सर्पत्वगादिधूपः (१)**

(व. से. । बालरोगा.)

सर्पत्वक्सर्षपारिष्टपल्लवं तेजनी वचा ।
रसोनहिङ्गुगजालोमभृङ्गीमरिचमाक्षिकैः ॥
धूपः सर्वग्रहघ्नोऽयं कुमाराणां ज्वरापहम् ॥

सांपकी कांचली, सरसों, नीमके पत्ते, मालकंगनी, बच, लहसन, हींग, बकरीके बाल, काकड़ासिंगी और काली मिर्च समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर कूट लें और फिर उसमें १ भाग शहद मिला लें।

इसकी धूप देनेसे बच्चोंके समस्त ग्रह और ज्वरोंका नाश होता है।

(८०७९) सर्पत्वगादिधूपः (२)

(ग. नि. । ज्वरा. १ ; वृ. नि. र. । विषमज्वरा.)

सर्पत्वचासर्षपहिङ्गुनिम्ब-
पत्राण्यमीषां समचूर्णधूपः ।
विनिग्रहं राक्षसडाकिनीनां
करोति रक्षां विषमज्वरे सः ॥

सांपकी कांचली, सरसो, हींग और नीमके पत्ते समान भाग ले कर बारीक कूट लें।

इसकी धूप देनेसे विषम ज्वरका रोगी ग्रहों और राक्षस डाकिनी आदिके उपद्रवोंसे सुरक्षित रहता है।

(८०८०) सर्षपादिधूपः

(ग. नि. । बालग्रहा. १२ ; वा. भ. । उ. अ. ३)

सर्षपा निम्बपत्राकंमूलमश्वखुरा यवाः ।
भूर्जपत्रं घृतं धूपः सर्वग्रहनिवारणः ॥

सरसो, नीमके पत्ते, आककी जड़, घोड़ेके खुर, भोजपत्र और जौ समान भाग ले कर एकत्र कूट लें और उसमें १ भाग घी मिला लें।

इसकी धूप देनेसे बच्चोंके समस्त ग्रहविकार नष्ट होते हैं।

(८०८१) सहदेव्यादिधूपः

(वृ. नि. र. । विषम ज्वरा.)

सहदेवीवचाभद्रानाकुलीभिः प्रधूपनम् ।
प्रदेहोद्वर्तनं कुर्यादेभिर्वा ज्वरशान्तये ॥

सहदेवी, बच, हल्दी और रास्ना समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। इसकी धूप देने अथवा इसका लेप और उद्वर्तन करनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है।

इति सकारादिधूपप्रकरणम्

अथ सकारादिधूम्रप्रकरणम्

(८०८२) सम्प्रसारणीगुटिका

(वै. र. । फिरंगरोगा.)

चणमाषं हिङ्गुलं चैव टङ्कणं दशमाषकम् ।
आकारकरभं सिक्थं दशमाषं पृथक्पृथक् ॥
प्रोक्ता सिक्थेन वटिका बदरी बीज सन्निभा ।
धूम्रपानाय देयैका प्रातर्बब्बूलजाग्निना ॥
गोघृताक्ता यवस्यैव रोटिकाऽलवणाऽशने ।
फिराङ्गणे प्रदातव्याऽनिशं ताम्बूलवीटकम् ॥

**यस्तु वायुफिरङ्गार्त्तः सनरः सुखभाग्भवेत् ।
चतुर्दशदिनैरेव नात्र सन्देह ईरितः ॥**

शुद्ध हिंगुल ६ माशे, सुहागा १० माशे और अकरकरे का चूर्ण १० माशे लेकर सबको अच्छी तरह खरल करें और फिर १० माशे मोमको पिघलाकर उसमें यह चूर्ण मिलाकर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें।

प्रातःकाल इनमेंसे एक गोली चिलममें रखकर उस पर बबूलके कोयलोंकी अग्नि रखकर रोगीको धूम्रपान करावें और फिर पानका बीड़ा चबानेको दें।

पथ्य में घृतयुक्त जौकी रोटी दें। लवण न खाने दें।

इसी प्रकार १४ दिन उपचार करनेसे फिरङ्ग रोग (आतशक) का अवश्य नाश हो जाता है।

इति सकारादिधूम्रप्रकरणम्

अथ सकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(८०८३) सञ्ज्ञाप्रबोधनरसः
(र. स. क. । उल्ला. ५)

**फिट्करी तुत्थनेपालं मरिचं निम्बबीजकम् ।
पुत्रजीवकमज्जा च निम्बुकेनार्कभाजने ॥
भावना सप्त दातव्या गुटी गुञ्जामिताञ्जनात् ।
सन्निपातमपस्मारं विषं सर्पस्य नाशयेत् ॥**

फिटकरी, नीलाथोथा, जमालगोटा, काली मिर्च, नीमके बीज और पुत्रजीव (पितोजिया) की मज्जा, समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर ताम्रपात्रमें डालकर नीबूके रसकी सात भावना दें और १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे (पानीमें घिस कर) अञ्जन लगानेसे सन्निपात, अपस्मार और सर्पविष नष्ट होता है।

(८०८४) सन्निपाताञ्जनरसः
(र. र. स. । उ. अ. १२ ; र. प्र. सु. । अ. ८)

**निस्त्वङ्नेपालकं बीजं दशनिष्कं प्रचूर्णयेत् ।
मरिचं पिप्पली सूतं प्रतिनिष्कं विमिश्रयेत् ॥
भाव्यं जम्बीरजैर्द्रावैः सप्ताहं तत्प्रयत्नतः ।
सन्निपातं निहन्त्याशु अञ्जनेऽयं शिवः स्मृतः॥**

जमालगोटेकी गिरी १० भाग और काली मिर्च तथा पीपलका चूर्ण एवं पारद १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें। जब कज्जलके समान हो जाय तो उसे सात दिन जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके सुखा लें और अत्यन्त बारीक पीसकर सुरक्षित रक्खें।

इसे आंखमें लगाने से सन्निपात ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(र. प्र. सुधाकरमें जमालगोटा ८ भाग है तथा पीपलके स्थान में पीपलामूल है।)

(८०८५) सर्पविषहराञ्जनम्
(शा. सं. । खं. ३ अ. १३)

**जयपालभवां मज्जां भावयेन्निम्बुक द्रवैः ।
एकविंशतिवेलं ततो वर्ति प्रकल्पयेत् ॥**

मनुष्यलालया घृष्ट्वा ततो नेत्रे तयाऽञ्जयेत् ।
सर्पदष्टविषं जित्वा सञ्जीवयति मानवम् ॥

जमालगोटेकी गिरीको नींबूके रसकी २१ भावना दे कर बत्तियां बना लें ।

इसे मनुष्यके थूकमें घिसकर आंखोंमें आंजनेसे सर्प विष नष्ट हो जाता है ।

(८०८६) सर्वज्वरहराञ्जनम्

(र. का. धे. । ज्वरा.)

एकैकं पारदं गन्धं मरिचं नवटङ्कणम् ।
कारवल्लीरसेनैव रसो भाव्यस्त्रिसप्तधा ॥
अञ्जनं च ज्वरार्तस्य सर्वज्वरहरं मतम् ।

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और काली मिर्चका चूर्ण १-१ भाग और सुहागेकी खील ९ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और फिर उसे करेलेके रसकी २१ भावना दे कर बारीक चूर्ण कर लें ।

इसे आंखमें आंजनेसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

(८०८७) सर्वतोभद्रा वर्तिः

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

हरिद्रामलकीकृष्णाकतकश्वेतसर्षपैः ।
व्योषवारियुता वर्तिः सर्वनेत्रमयापहा ॥

हल्दी, आमला पीपल, निर्मलीके फल और सफेद सरसो इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर त्रिकुटेके काथमें खरलकरके वर्तियां बना लें ।

इसे आंखमें लगानेसे समस्त नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

(८०८८) सारिवादिवर्तिः

(यो. र. । नेत्ररोगा. ; व. से. ; वृ. नि. र. । नेत्ररोगा.)

सारिवात्रिफलोशीर[1]मुक्ताचन्दनपद्मकैः ।
पिष्टं वर्तीकृतं हन्ति पित्तोत्थं तिमिरं नृणाम् ॥

सारिवा, हर्र, बहेड़ा, आमला, खस, मोती, लाल चंदन और पद्माक; सबका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ खरल करके वर्तियां बना लें ।

इसे आंखमें लगानेसे पित्तज तिमिर रोग नष्ट होता है ।

(८०८९) सिताद्यञ्जनम्

(वा. भ. । उ. अ. ११)

सिता मनःशिलालेयलवणोत्तमनागरम् ।
अर्द्धकर्षान्वितं तार्क्ष्यं पलार्द्धं च मधुप्लुतम् ॥
अञ्जनं श्लेष्मतिमिरपिल्लशुक्लार्मशोषजित् ॥

मिश्री, मनसिल, पद्माख, सेंधानमक और सोंठ इनका चूर्ण ७॥-७॥ माशे एवं शुद्ध रसौत २॥ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर अच्छी तरह खरल करें ।

इसे शहदमें मिलाकर आंखमें लगानेसे कफज तिमिर, पिल्ल, शुक्ल, अर्म और अक्षिशोषका नाश होता है ।

(८०९०) सुखाञ्जनम्

(र. चि. म. । स्त. ९)

हविषा पातयेत्सौम्यं कज्जलं निर्मलं शुभम् ।
गन्धकं तुत्थकं दद्यात्कर्पूरं तत्र कज्जले ॥

[1] " सावरोशीर " इति पाठान्तरम्

मर्दयेन्नवनीतेन सुघृतं कज्जलं नयेत् ।
अञ्जनेनैव नेत्राणि बहुपीडाकराणि च ।
तत्कालं शममायान्ति प्रणश्यन्ति तदा गदाः ।
सतताञ्जनयोगेन सदा नैर्मल्यमाप्नुयुः ॥
नेत्रप्रसादनं नृणां नेत्ररोगनिवारणम् ।
पुष्पादिकांश्च हन्याद्धि व्याधीन्सुखाञ्जनं त्विदम् ॥

घृतका दीपक जला कर स्वच्छ कज्जल एकत्रित करें और फिर १ भाग यह कज्जल तथा १-१ भाग शुद्ध गन्धक, नीलाथोथा और कपूर ले कर सबको एकत्र मिला कर मक्खनके साथ घोटें।

इसे आंखमें लगानेसे अत्यन्त पीड़ायुक्त अक्षिपाकको भी तुरन्त आराम हो जाता है। इसे रोज़ आंखोंमें लगानेसे आंखका फूला और काच आदि अनेक नेत्ररोग नष्ट होते और नेत्र निर्मल रहते हैं।

(८०९१) सुखावतीवर्त्तिः

(भै. र. । नेत्र. ; च. सं. । चि. अ. २६ ; व. से. । नेत्ररोगा. ; वृ. मा. ; र. का. धे. ; ग. नि. । नेत्ररोगा.)

कतकस्य फलं शङ्खं त्र्यूषणं सैन्धवं सिता ।
फेनो रसाञ्जनं क्षौद्रं विडङ्गानि मनःशिला ॥
कुक्कुटाण्डकपालानि वर्त्तिरेषा व्यपोहति ।
तिमिरं पटलं काचमर्म शुक्रं तथैव च ॥
कण्डूक्लेदार्बुदं हन्ति मलञ्चाशु सुखावती ॥

निर्मलीके फल, शंख, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधा नमक, मिश्री, समुद्रफेन, रसौत, बायबिड़ंग, मनसिल और मुरगीके अण्डेके छिल्के; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर शहदके साथ खरल करें और वर्तियां बना लें।

इसे आंखमें लगानेसे तिमिर, पटल, काच अर्म, नेत्रशुक्र, नेत्रकण्डू, क्लेद, नेत्रार्बुद और नेत्रमलका नाश होता है।

(८०९२) सुदर्शना वर्तिः (१)

(ग. नि. । नेत्र रो.)

उदधिजलजः फेनः शङ्खः सचन्दनपद्मक-
प्रवरमरिचं पिप्पल्यो यत्तथाऽऽलमनःशिले ।
धरणसमितानष्टौ भागान् सकुङ्कुमनागरा-
न्मधुसमयुतां वर्तिं कृत्वा द्विरंशरसाञ्जनाम् ॥
मलतिमिरहा कण्डूघ्न्येषा तथाऽर्बुदनाशिनी
स्रवति च भृशं येषां नेत्रं तदप्युपशाम्यति ।
यदपि सरुजं सास्रावं यच्छिरानुगतं भवे-
त्तदपि निरुजं नेत्रं सद्यः सुदर्शनयाऽञ्जितम्

समुद्रफेन, शंख, लाल चन्दन, पद्माख, काली मिर्च, पीपल, हरताल, मनसिल, केसर और सोंठ इनका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध रसौत २ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर शहदमें मिला कर वर्तियां बना लें।

इसे आंखमें लगानेसे नेत्रमल, तिमिर, नेत्रकण्डू और नेत्रार्बुदका नाश होता है। यदि आंखोंसे अत्यधिक स्राव होता हो या पीड़ायुक्त स्राव होता हो तो वह इसके व्यवहारसे शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(८०९३) सुदर्शना वर्तिः (२)

(ग. नि. । नेत्ररो.)

त्रिकटुकविडङ्गसैन्धवमधुकशिलातुत्थरोचनारोध्रैः।
त्रिफलातगररसाञ्जनकुसुमाञ्जनपाटलाकुसुमैः ॥
गैरिकसमुद्रफेनप्रपौण्डरीकप्रियङ्गुलाक्षाभिः ।
कतकफलसिन्धुवारकसितमरिचपलाशनिर्यासैः॥

नलदहरिद्राशङ्ककनीलोत्पलयुगलकेसरोशीरैः।
कुङ्कुमसुमनःकोरकमञ्जिष्ठाभिश्च तुल्यांशम् ॥
पिष्टं कटङ्कटेरीजटाघनकषायफाणितोपेतम् ।
अञ्जनमेलापत्रककर्पूरवराङ्गसम्मिश्रम् ॥
पिहितमनातपशुष्कं वर्तीकृतमञ्जयेद्नेनाक्षि ।
सलिलनिघृष्टेन सदा न भवति
नयनामयी पुरुषः ॥
पृथक्पृथगनिलशोणितकफपित्तसमुद्भवा-
रुजः सबलाः ।
नश्यन्ति सुदर्शनया षट्सप्ततिभेदनामानः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिडंग, सेंधा नमक, मुलैठी, मनसिल, नीलाथोथा, गोरोचन, लोध, हर्र, बहेड़ा, आमला, तगर रसौत, कुसुमाञ्जन, पाटलाके फूल, गेरु, समुद्रफेन, पुण्डरिया, फूल-प्रियङ्गु, लाख, निर्मलीके फल, संभालूकी जड़, सहंजनेके बीज, पलाश (ढाक) का गोंद, नलद (खसभेद), हल्दी, शंख, दो प्रकारका नीलोत्पल, नागकेसर, खस, केसर, चमेलीकी कलियां, मजीठ, इलायची, तेजपात, कपूर और दालचीनी १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर दारुहल्दीकी जड़ और नागरमोथेके गाढ़ा किये हुवे काथमें खरल करके वर्तियां बना लें और छायामें सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे पानीमें घिस कर रोज आंखोंमें लगानेसे नेत्र रोग नहीं होते । यह वर्ति वायु, रक्त, कफ और पित्तके समस्त नेत्र रोगोंको नष्ट करती है ।

(८०९४) सुपर्णीवर्तिः

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

पिप्पलीं सतगरोत्पलपत्रां
वर्तयेत्समधुकां सहरिद्राम् ।
एतया सततमञ्जयितव्यं
यः सुपर्णसमपिच्छति चक्षुः ॥

पीपल, तगर, नीलोत्पलके पत्ते, मुलैठी और हल्दी; इनका समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ खरल करके वर्तियां बना लें ।

इसे आंखोंमें लगानेसे नेत्रज्योति अत्यन्त तीव्र हो जाती है ।

(८०९५) सुप्रचेतनागुटिका (सुखचेतना गुटिका)

(र. सं. क. । उल्ला. ५ ; र. का. धे. । ज्वरा.)

व्योषं वरा वरं हिङ्गु तिक्तोग्रा नक्तमालकः ।
गौरी कटु त्वजामूत्रैश्छायाशुष्का गुटी कृता ॥
अपस्मारं स्मृतिभ्रंशमुन्मादं शिरसो रुजम् ।
नक्तान्ध्यं तिमिरं हन्ति दोषं भूतादिकं भ्रमम्॥
एकद्वित्रिचतुर्थाख्यमञ्जनाज्ज्वरमेव च ।
सन्निपातं त्वचैतन्यं नाशयेत्सुप्रचेतना ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सेंधा नमक, हींग, कुटकी बच, करञ्जबीज (करञ्जवेकी गिरी), हल्दी और सफेद सरसों; इनका चूर्ण समान-भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर बकरीके मूत्रमें घोट कर गोलियां बना लें और उन्हें छायामें सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे आंखमें लगानेसे अपस्मार, स्मृतिनाश, उन्माद, शिरपीड़ा, नक्तान्ध्य, (रतौंधा), तिमिर, भूतबाधा, भ्रम, इकतरा, द्वयाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर तथा सन्निपातकी मूर्च्छाका नाश होता है ।

नोट—र. का. धे. में. कुटकीका अभाव है ।

(८०९६) सूतकाद्यञ्जनम्

(व. से. । नेत्ररोगा.)

**सूतकं गन्धकोपेतं चाङ्गेरीरससमूर्च्छितम् ।
अञ्जनं दृष्टिदं नृणां नेत्रामयविनाशनम् ॥**

शुद्ध पारा और गन्धक समान भाग ले कर कज्जली बनावें और फिर उसे चांगेरी (चूके) के रसमें खरल करके सुखा लें।

इसे आंखोंमें लगानेसे नेत्रोंकी ज्योति तीव्र होती और समस्त नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(८०९७) सूर्यप्रभावर्ती

(र. र. स. । उ. अ. २९)

**रक्तचन्दनमञ्जिष्ठा तिन्तिणीफलसक्तुकैः ।
अभयालोध्रकतकनिशाशङ्खकणोषणैः ॥
मनःशिलाकरञ्जाक्षबीजोग्राफेनसैन्धवैः ।
अजाक्षीरैः समविषैर्वर्तयो विहिता हिताः ॥
शुक्लार्ममांसपिल्लेषु ग्रन्थिगण्डार्बुदेषु च ॥**

लाल चन्दन, मजीठ, तिन्तड़ीक (इमली) के फल, सक्तुक विष, हर्र, लोध, निर्मलीके फल, हल्दी, शंख, पीपल, काली मिर्च, मनसिल, करञ्ज-बीज (करञ्जुवेकी गिरी), बहेड़ेके बीज (गुठलीकी गिरी), बच, समुद्रफेन, सेंधानमक और बछनाग इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर बकरीके दूधमें खरल करके वर्तियां बना लें।

इन्हें आंखमें लगानेसे शुक्ल, अर्म, नेत्रमांस, पिल्ल, नेत्रग्रन्थि, गण्ड और नेत्रार्बुदका नाश होता है।

(८०९८) सैन्धवादिवर्तिः (१)

(व. से. । नेत्र., वृ. मा.)

**सैन्धवं त्रिफला कृष्णा कटुका शङ्खनाभयः ।
सताम्ररजसो वर्तिः शुद्धशुक्रविनाशिनी ॥**

सेंधा नमक, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल, कुटकी, शंखनाभि, और ताम्र; इनका बारीक चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ खरल करके वर्तियां बना लें।

इसे आंखमें लगानेसे व्रणरहित शुक्रका नाश होता है।

(८०९९) सैन्धवादिवर्तिः (२)

(वा. भ. । उ. अ. १६ ; वं. से. । नेत्ररोगा. (

**सैन्धवं त्रिफला व्योषं शङ्खनाभिः समुद्रजः ।
फेनः शैलेयकं सर्जो वर्तिः श्लेष्माक्षिरोगनुत् ॥**

सेंधा नमक, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पोपल, शंखनाभि, समुद्रफेन, भूरिछरीला और राल; इनका समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ खरल करके वर्तियां बना लें।

इन्हें आंखमें लगानेसे कफज नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

(८१००) सैन्धवाद्यञ्जनम् (१)

(वै. म. र. । पटल १६)

**पटुकुनटीवरटीगृहमागधिकाजातिकुसुमरजनि-रजः ।
पिल्लं हरेन्निघृष्टं क्षौद्रयुतं कांस्यताम्राभ्याम् ॥**

सेंधा नमक, मनसिल, ततैनका घर, पीपल, चमेलीके फूल और हल्दी इनका समान भाग चूर्ण ले कर कांसीके पात्रमें डालें और उसमें थोड़ासा शहद मिला कर उसे तांबेकी मूसलीसे खरल करें।

इसे आंखमें लगानेसे पिल्ल रोगका नाश होता है।

(८१०१) सैन्धवाद्यञ्जनम् (२)

(यो. र. । नेत्ररोगा. ; शा. सं. । खं. ३ अ. १३)

दग्ध्वा ससैन्धवं लोध्रं मधूच्छिष्टयुते घृते ।
पिष्टमञ्जनलेपाभ्यां सद्यो नेत्ररुजापहम् ॥

१-१ भाग सेंधानमक और लोधको शराव-सम्पुटमें बन्द करके भस्म करें और फिर दोनोंको पीस लें। तदनन्तर ४ भाग घीको गरम करके उसमें १ भाग मोम मिलावें; इस घीमें उपरोक्त भस्म मिलाकर रगड़ा बना लें।

इसे आंखमें लगाने और आंखके बाहर लेप करनेसे नेत्रपीड़ा शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(८१०२) सैन्धवाद्यञ्जनम् (३)

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

आयसे ताम्रपात्रे वा सैन्धवं दधिमर्दितम् ।
कांस्यघृष्टे निशाकृष्णे त्वञ्जनं चाक्षिशूलहृत् ॥

सेंधा नमकको लोह या ताम्रके पात्रमें दहीके साथ खरल करें।

इसे आंखमें लगानेसे नेत्रपीड़ा नष्ट होती है।

हल्दी और पीपलके समान भाग मिश्रित चूर्णको लोहे या तांबेके पात्रमें डालकर पानीके साथ कांसीकी मूसलीसे घोटें।

इसे भी आंखमें लगानेसे नेत्रपीड़ा नष्ट होती है।

(८१०३) सैन्धवाद्यञ्जनम् (४)

(ग. नि. । नेत्र.)

लवणं सैन्धवं तक्रं मरिचं कांस्यभाजने ।
निघृष्य नेत्रयोर्दत्तं हन्ति रोगं कफोद्भवम् ॥
स्त्रीपयो यावको हिङ्गुस्त्रयं नेत्रभृतं द्रुतम् ।
दहत्यक्ष्णोः स्थितं दुःखं शुष्कं दारु यथाऽनलः ॥

सेंधा नमक और काली मिर्चके समान भाग मिश्रित चूर्णको कांसीके पात्रमें डालकर तक्रके साथ घोटें।

इसे आंखमें लगानेसे कफज नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

कुलथी और हींगके समान भाग मिश्रित चूर्णको स्त्रीके दूधमें खरल करें।

इसे आंखमें लगानेसे नेत्र पीड़ा शीघ्र नष्ट हो जाती है।

(८१०४) सैन्धवाद्यञ्जनम् (५)

(वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

अञ्जनं सम्यगाख्यं मधुसिन्धुशिलोषणैः ।
प्रमोहद्रोहिभवति भाषितं भिषजां वरैः ॥

सेंधा नमक, मनसिल और काली मिर्च; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहदमें खरल करें।

इसे आंखमें लगानेसे सन्निपातकी मूर्च्छा नष्ट होती है।

(८१०५) **सैन्धवाद्यञ्जनम्** (६)

(ग. नि. । ज्वरा. १ ; वृ. नि. र. । विषमज्वरा.)

सैन्धवं पिप्पलीनां च तन्दुलाः समनःशिलाः ।
नेत्राञ्जनं तैलपिष्टं शस्यते विषमज्वरे ॥

सेंधा नमक, पीपलके चावल और शुद्ध मनसिलके समान भाग मिश्रित चूर्णको तेलमें पीसकर आंखोंमें लगानेसे विषम ज्वर नष्ट होता है ।

(८१०६) **सैन्धवाद्यञ्जनम्** (७)

(यो. र. । नेत्ररोगा.)

आर्द्रकस्वरसैर्घृष्टं सिन्धुकासीससम्मितम् ।
छायाशुष्कां वर्टीं कुर्यात्पूयाख्ये हितमञ्जनम् ॥

सेंधा नमक और कसीसके समान भाग-मिश्रित चूर्णको अदरकके स्वरसमें खरलकरके गोलियां बनावें और उन्हें छायामें सुखा लें ।

इसे (पानीमें घिस कर) आंखमें लगानेसे पूयालस नामक नेत्ररोग नष्ट होता है ।

(८१०७) **सौगताञ्जनम्**

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३ ; यो. त. । त. ७१)

निशाद्वयाभयाकृष्णामांसीकुष्ठं विचूर्णितम् ।
सर्वनेत्रामयान् हन्यादेतत्सौगतमञ्जनम् ॥

हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, पीपल, जटामांसी और कूठ; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे आंखमें लगानेसे समस्त नेत्ररोग नष्ट होते हैं ।

(८१०८) **सौवीराञ्जनम्** (१)

(वा. भ. । उ. अ. १३.)

सौवीराञ्जनतुत्थकशृङ्गीधात्रीफलस्फटिकर्पूरम् ।
पञ्चांशं पञ्चांशं त्र्यंशमथैकांशमञ्जनं तिमिरघ्नम् ॥

सौवीरांजन (सुरमा) ५ भाग, शुद्ध नीलाथोथा ५ भाग, काकड़ासिंगी ३ भाग तथा आमला, फिटकरी और कपूर १-१ भाग । सबके बारीक चूर्णको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे आंखमें लगानेसे तिमिर रोग नष्ट होता है ।

(८१०९) **सौवीराञ्जनम्** (२)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

सौवीरमञ्जनं तुत्थं ताप्यं धात्री मनःशिला ।
चतुर्हरेणुमधुकं लोहं शुक्रघ्नमञ्जनम् ॥

सौवीरांजन (सुरमा), शुद्ध नीलाथोथा, स्वर्ण माक्षिक भस्म, आमला, शुद्ध मनसिल, मुलैठी और लोहभस्म; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे आंखमें लगानेसे नेत्रशुक्र (फूला) नष्ट होता है ।

(८११०) **सौवीराञ्जनयोगः**

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

भृङ्गोद्भवस्वरसभावितमाजदुग्धे
मूत्रे गवां पयसि त्रिफलाकषाये ।
द्राक्षारसे च परिशुद्धमिति क्रमेण
सौवीरकाञ्जनमिदं तिमिरामयघ्नम् ॥

सौवीरांजन (सुरमे) को क्रमशः भंगरेके रस, बकरीके दूध, गो मूत्र, गो दुग्ध, त्रिफलाके काथ और द्राक्षा (अंगूर) के रसकी भावनाएं दे कर सुखा लें।

इसे आंखमें लगानेसे तिमिर रोग नष्ट होता है।

(८१११) स्नेहनीवटिका

(भा. प्र. । म. खं. २ ; नेत्ररोगा.)

पथ्याक्षधात्रीबीजानि एकद्वित्रिगुणानि च ।
पिष्ट्वाम्बुना वटीं कुर्यादञ्जनं द्विहरेणुकम् ॥
नेत्रस्रावं हरत्याशु वातरक्तरुजं तथा ॥

हर्रकी गुठलीकी गिरी १ भाग, बहेड़ेकी गुठलीकी गिरी २ भाग और आमलेकी गुठलीकी गिरी ३ भाग ले कर सबको पानीके साथ खरल करके वटी बनावें।

इसे आंखमें लगानेसे नेत्रस्राव और वातज तथा रक्तज नेत्रपीड़ाका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

(८११२) स्फटिकादिवर्तिः

(व. से. । नेत्ररोगा.)

स्फटिकोषणयष्टयाह्वशङ्खगोदन्तसैन्धवैः ।
पिष्टैः सचन्दनैर्वर्तिः शुक्रघ्नी शिग्रुवारिणा ॥

फिटकरी, काली मिरच, मुलैठी, शंख, गायका दांत, सेंधा नमक और लाल चन्दन; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सहंजनेके पत्तोंके रसमें खरल करके वर्ति बना लें।

इसे आंखमें लगानेसे शुक्र (फूला) नष्ट होता है।

(८११३) स्रोतोञ्जनाद्यावर्तिः

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३. ; वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

स्रोतोजं विद्रुमं फेनं सागरस्य मनःशिला ।
मरिचानि च वा वर्तीः कारयेत्पूर्ववद्भिषक् ॥

शुद्ध सुरमा, प्रवाल, समुद्रफेन, मनसिल और काली मिर्च; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर बकरीके दूधके साथ खरल करें और ताम्रपात्रमें भर कर रख दें। सात दिन पश्चात् उसकी वर्तियां बना लें।

इन्हें आंखमें आंजनेसे नेत्र स्वच्छ होते हैं। यह अंजन आंखें दुखनेके पश्चात नेत्रोंकी मलिनताको दूर करनेके लिये उपयोगी है।

(८११४) स्वर्णमाक्षिकाद्यञ्जनयोगाः

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३ ; यो. र. । नेत्ररोगा.)

तार्प्यं मधूकसारो वा बीजं चाक्षस्य सैन्धवम् ।
मधुनाऽञ्जनयोगाः स्युश्चत्वारः शुक्रशान्तये ॥

सोनामक्खी भस्म, महुवेका सार, बहेड़ेकी गुठलीकी गिरी और सेंधा नमकमेंसे किसी एकके चूर्णको शहदमें मिला कर आंखमें लगानेसे शुक्र (फूला) नष्ट होता है।

इति सकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

अथ सकारादिनस्यप्रकरणम्

(८११५) सर्वज्वरहरनस्यम्

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

शुद्धतुत्थं पलैकं च भावयेज्जालिनीरसैः ।
शतविंशतिवारं च निम्बुनीरैस्तथैव च ॥
शुष्कं नस्यं प्रदातव्यं सर्वज्वरविनाशनम् ।
यस्मिन्नासापुटे दत्तं तदर्धाङ्गज्वरापहम् ॥

शुद्ध नीलेथोथेके चूर्णको बिंडालडोढेके रस और नींबूके रसकी पृथक् पृथक् १२० भावना दें । और सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इसकी नस्य देनेसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं। जिस ओरके नासा–विवरमें इसकी नस्य दी जाती है उसी ओरके आधे शरीरका ज्वर उतर जाता है।

(८११६) सितोपलादिनस्यम्

(यो. त. । त. ७३ ; यो. र. । शिरो.)

सितोपलायुतं घृष्टं मदनं गोपयोन्वितम् ।
नस्यतोऽनुदिने सूर्ये निहन्त्येवार्द्धभेदकम् ॥

मैनफल और मिश्रीको गोदुग्धमें पीस कर प्रातःकाल नस्य देनेसे अर्द्धावभेद (आधे शिरकी पीड़ा) का नाश होता है ।

(८११७) सिन्दुवारादिनस्यम्

(वा. भ. । उ. अ. ३८)

सिन्दुवारस्य मूलानि बिडालास्थिविषं नतम् ।
जलपिष्टोऽगदो हन्ति नस्याद्यैराखुजं विषम् ॥

संभालूकी जड़, बिल्लीकी हड्डी, बछनाग और तगर; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको पानीमें पीस कर नस्यादि द्वारा प्रयुक्त करनेसे चूहेका विष नष्ट होता है ।

(८११८) सैन्धवादिनस्यम् (१)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

नीरेण सिन्धुत्थरजोतिसूक्ष्मं
नस्येतिनूनं विनिहन्ति हिक्काम् ।
शुण्ठीहठाद्वा सितया समेता
धूमोथवाहिङ्गुसमुद्भवश्च ॥

सेंधा नमकको पानीके साथ अत्यन्त बारीक पीस कर नस्य देनेसे हिचकी अवश्य नष्ट हो जाती है ।

अथवा सोंठ और मिश्रीको पीस कर उसकी नस्य देनेसे या हींगका धूम्रपान करनेसे हिचकी अवश्य नष्ट होती है ।

(८११९) सैन्धवादिनस्यम् (२)

(भै. र. । ज्वरा. ; वृ. नि. र. ; वै. र. ; भा. प्र. म. खं. २ । ज्वरा. ; वृ. यो. त. । त. ५९)

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपं कुष्ठमेव च ।
बस्तमूत्रेण सम्पिष्य नस्यं तन्द्रानिवारणम् ॥

सेंधा नमक, सहंजनेके बीज, सरसों और कूठ इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको बकरीके मूत्रके साथ पीस कर नस्य देनेसे तन्द्रा नष्ट हो जाती है ।

इति सकारादिनस्यप्रकरणम्

अथ सकारादिरस-प्रकरणम्

(८१२०) सङ्कोचगोलरसः

(रसेन्द्र मं. । कुष्ठा.)

अमृतविषपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,
त्रिफलखदिरसारं व्याधिघातश्च तुत्थम् ।
रसपलघनमेकं गुग्गुलोर्भागयुक्तं,
जयति विषविसर्पं कुष्ठराशिं जवेन ॥

शुद्ध बछनाग २ भाग, पटोल, नीमका पञ्चाङ्ग, हर्र, बहेड़ा, आमला, खैरसार, अमलतासकी जड़की छाल, शुद्ध नीलाथोथा, रससिन्दूर, जटामांसी, अभ्रक भस्म और शुद्ध गूगल १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अच्छी तरह खरल करें ।

इसके सेवनसे विष, विसर्प और कुष्ठका नाश होता है ।

(८१२१) सङ्कोचपिष्टिकारसः

(रसेन्द्र मं. । वाता.)

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धताम्रपलद्वयम् ।
खल्वे सङ्घृष्य यत्नेन कारयेत्पिष्टिकां बुधः ॥

गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतैलेन पाचयेत् ।
तन्मध्ये पिष्टिकां पाच्या भिषजा यत्नपूर्वकम् ॥

तत उद्धृत्य यत्नेन यथा नोड्डीयते रसः ।
ततो योज्यानि वैद्येन भैषज्यानि शुभानि वै ॥

कटुत्रयं वचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विषम् ।
समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विषात् ॥

मधुना मर्दयित्वा तु गुटिकाः कारयेद्भिषक् ।
गुञ्जा गुञ्जार्धमात्रा वा एकैकां भक्षयेद्बुधः ॥

ज्ञात्वा बलाबलं सर्व्वं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः ।
गुटिका सप्तपर्यन्तं यथायोगेन दीयते ॥

सङ्कोचपिष्टिका ह्येषा प्रसूतौ वातनाशिनी ।
अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुष्ठांश्च व्यपोहति ॥

शुद्ध पारद ४० तोले और शुद्ध ताम्रका बारीक चूर्ण १० तोले ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल करें; यहां तक कि दोनों अच्छी तरह मिल कर पिष्टी हो जाय । तदनन्तर १० तोले शुद्ध गन्धकको १० तोले सरसोंके तेलमें मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब गन्धक पिघल जाय तो उसमें उपरोक्त पिष्टी मिला दें और इतनी धीमी आग पर पकाते रहें कि जिससे पारद उड़ न जाए । जब गन्धक समाप्त हो जाए तो अग्निसे नीचे उतार लें और सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, नागरमोथा, बायबिड़ंग, चीता और शुद्ध बछनाग; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा हर्रका चूर्ण ३ भाग ले कर सबको एकत्र मिला लें और उपरोक्त तैयार औषधमें यह चूर्ण उसके बराबर मिला कर, शहदके साथ खरल करके आधी या एक एक रत्तीकी गोलियां बना लें ।

मात्रा—एक गोलीसे सात गोली तक ।

(व्यवहारिक मात्रा-१ से २ गोली तक ।)

इसके सेवनसे प्रसूत-वात तथा अन्य समस्त वातज रोग और समस्त कुष्ठोंका नाश होता है ।

(८१२२) सङ्कोचरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतश्चतुर्गुणम् ।
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्ले गोलकं कारयेत्ततः ॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रे क्षणं पचेत् ।
तन्मध्ये गोलकं पाच्यं यावज्जीर्णन्तु गन्धकम् ॥
एतन्मृद्वग्निना तावत्समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
गुग्गुलुर्निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफला चामृता विषम् ॥
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम् ।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥
रसः सङ्कोचनामायं कुष्ठे परमदुर्लभः ॥

ताम्र भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग और शुद्ध पारद ८ भाग ले कर तीनोंको एकत्र खरल करें । जब सब चीजें अच्छी तरह मिल जाएं तो सबका एक गोला बना लें । तदनन्तर १० भाग शुद्ध गंधकको कढ़ाईमें पिघला कर उसमें वह गोला रख दें और मन्दाग्नि पर पकावें (गन्धकमें आग न लग जाय इस बातका ध्यान रक्खें) । जब सम्पूर्ण गन्धक जीर्ण हो जाए तो कढ़ाईको अग्निसे नीचे उतार कर ठंडा कर लें और औषधको खरल करके बारीक करें । तत्पश्चात् उसमें गूगल, नीमका पंचाङ्ग, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, शुद्ध बछनाग, पटोल, खैरसार और अमलतासकी छाल; इनका एक एक भाग चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करके रक्खें ।

मात्रा—४ माशे । (व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

इसे शहदमें मिला कर सेवन करनेसे उदुम्बर कुष्ठ नष्ट होता है ।

सङ्ग्रहणीकपाटरसः

प्र. सं. १५९८ " ग्रहणीकपाटरसः (वृहद्) " देखिये ।

(८१२३) सङ्ग्रहणीरसः

(र. का. धे. । सङ्ग्रहणी.)

रसं गन्धकं नीलकं ताम्रमभ्रं
शिलामाक्षिकं हिङ्गुलं भस्मलोहम् ।
विषं सर्वमेतत्समांशं निदध्यात्
क्षिपेद्भस्म शाङ्खं कला भागिकं च ॥
दृढं मर्दयेत्कज्जलाभं समस्तं
ददीतास्य वल्लं जयाजीरकाभ्याम् ।
जयाजातिजातीफलाभ्यां प्रयुक्तो
जयेत्तक्रयोगात्पयः पानयोगात् ॥
ग्रहण्यग्निमान्द्यं क्षयं गुल्मशूला-
न्यभिन्यासमुख्यान् महावायुरोगान् ।
स्वकीयानुपानैर्जयेत्सर्वरोगां-
श्छिवात्रीक्षणं दैत्यवृन्दं यथाऽशु ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कान्तलोह भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध मनसिल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हिङ्गुल, लोह भस्म और शुद्ध बछनाग १-१ भाग तथा शंख भस्म १६ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके अत्यन्त बारीक करें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे भांग और जीरेके चूर्णके साथ, या भांग, जावत्री और जायफलके चूर्णके साथ सेवन कराने

और रोगीको तक्र या दूध पर रखनेसे संग्रहणी, अग्निमांद्य, क्षय, गुल्म, शूल, अभिन्यास और वात–व्याधि आदि रोगोंका नाश होता है । रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे यह रस उपरोक्त समस्त रोगोंको शीघ्रही नष्ट कर देता है ।

(८१२४) सञ्जीवनाभ्रम्

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

वज्राभ्रं मारितं कृत्वा कर्षमानं सुचूर्णितम् ।
जीरकं कानकं बीजं कर्षं वासारसेन च ॥
कण्टकारिरसेनैव धात्रीमुस्तारसेन च ।
गुडूची स्वरसेनैव पलांशेन पृथक् पृथक् ॥
मर्दयित्वा वटी कार्य्या गुञ्जामात्रा नियोजिता ।
विषमाख्यान् ज्वरान्सर्वान् प्लीहानं यकृतं वमिम् ॥
रक्तपित्तं वातरक्तं ग्रहणीं श्वासकासकौ ।
अरुचिं शूलहृल्लासावर्शांसि च विनाशयेत् ॥
जीवनानन्दमेवेदमभ्रं वृष्यं बलप्रदम् ।
रसायनवरं श्रेष्ठं धातुसम्वर्द्धनं परम् ॥

वज्राभ्रक भस्म १। तोला, जीरेका चूर्ण १। तोला और धतूरेके बीजोंका चूर्ण १। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर बासा (अडूसा), कटेली, आमला, नागरमोथा और गिलोयके ५–५ तोले स्वरसमें पृथक् पृथक् खरल करें और १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

यह वटी समस्त प्रकारके विषम ज्वरोंको नष्ट करती है तथा इसके सेवनसे प्लीहा, यकृत्, वमन, रक्तपित्त, वातरक्त, संग्रहणी, श्वास, कास, अरुचि, शूल, हृल्लास और अर्शका भी नाश होता है । यह रस वृष्य, बलदायक, रसायन और अत्यन्त धातुवर्द्धक है ।

(८१२५) सञ्जीवनीवटी

(यो. त. । त. २४ ; वृ. यो. त. । त. ७१; वै. र. । अग्निमांद्या. ; शा. सं. । खं. २ अ. ७; यो. र. । अजीर्णा. ; यो. चि. म. । अ. ३)

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलविभीतकम् ।
वचा गुडूची भल्लातं सविषं चात्र योजयेत् ॥
एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत् ।
गुञ्जाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः ॥
एकामजीर्णगुल्मेषु द्वे विषूच्यां प्रदापयेत् ।
तिस्रश्च सर्पदष्टे तु चतस्रः सान्निपातिके ॥
वटी सञ्जीवनी नाम्ना सञ्जीवयति मानवम् ॥

बायबिडंग, सोंठ, पीपल, हर्र, आमला, बहेड़ा, वच, गिलोय, भिलावा और शुद्ध बछनाग; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको गोमूत्रके साथ एकत्र खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे अजीर्ण और गुल्ममें १ गोली, विसूचिकामें २ गोली, सर्प दंशमें ३ गोली और सन्निपातमें ४ गोली देनी चाहियें ।

अनुपान—अदरकका रस ।

ये गोलियां उक्त रोगोंसे मृतप्रायः रोगीको भी जिला देती हैं ।

नोट—प्रथम भिलावेको गोमूत्रमें घोट कर कणरहित कर लेना चाहिये और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलानी चाहियें ।

(८१२६) सञ्जीवनो रसः (१)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य
रसप्रमाणानि भवन्त्यमूनि ।
शिलानलव्योषविषाभ्रकाणि
भृङ्गं विषं माक्षिकतन्दुलीयाः ॥
कुम्भीभमुण्डीमृततालकश्च
सताम्रशाकोयमरालपादः ।
कङ्कुष्ठकं चेति दिनत्रयं तदा
ह्यार्द्राम्बुना सर्वमथो विमर्द्यः ॥
निवेश्य कूप्यां रसमत्र देयो
जम्बीरनिर्गुण्डिजयाभिधानां ।
नवप्रमाणानि रसः पलानि
चाङ्गेरिकायाः स्वरसः पलैकम् ॥
ततः सुबध्वा सिकताख्ययन्त्रे
चर्तुदशाहानि पचेत्सुशीते ।
तद्भावयेदार्द्रकजेन सूतो
मृताख्य सञ्जीवन इत्यपूर्वः ॥
वल्लोस्य सर्वान् जयति प्रयुक्तो
गदान् सदार्द्रद्रवयुक्प्रभावान् ।
प्राणेशवत्सर्वमिह प्रयोज्यं
ह्ययं त्रिदोषे सविशेष वीर्यः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध मनसिल, चीतामूलका चूर्ण, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण, शुद्ध बछनागका चूर्ण, अभ्रक भस्म, दालचीनी, शुद्ध संखिया, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, चौलाईकी जड़, शुद्ध जमालगोटा, नागकेसर, गोरखमुण्डी, हरताल भस्म, ताम्र भस्म, सागोनका फल, लोह भस्म, हंसपादी और कंकुष्ठ १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सब को ३ दिन अदरकके रसमें खरल करें और फिर कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसमें ४५ तोले जम्बीरी नीबूका रस, संभालुका रस और जयन्तीका रस (हरेकका रस १५ तोले) एवं ५ तोले चूकेका रस भर कर उसके मुखको बन्द कर दें और उसे बालुका यन्त्रमें रख कर १४ दिन पाक करें ।

तदनन्तर शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे अदरकके रसमें खरल करके सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

अनुपान—अदरकका रस ।

यह रस सन्निपात ज्वरमें विशेष उपयोगी है ।

इस पर पथ्यादि "**प्राणेश रस**" के समान देना चाहिये ।

(८१२७) सञ्जीवनो रसः (२)

(र. रा. सु. । प्रमेहा.; र. र.स. । उ. अ. १७)

पलमात्रं रसं शुद्धं वरनागसमन्वितम् ।
निक्षिप्य पातनायन्त्रे त्रिंशद्वाराणि पातयेत् ॥
समाहरेद्रसं सम्यक् पातनायन्त्रके मृतम् ।
मृतं रसं क्षिपेत्तुल्यं भूपालावर्त्तभस्मकम् ॥
निरुत्थं त्रपुभस्मापि निक्षिपेदष्टमांशतः ।
ततो निम्बदलद्रावैस्त्रिंशद्वारं हि भावयेत् ॥

ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिपेद्गरकरण्डके ।
सञ्जीवनोयं खलु वल्लमानो निशाकुलीचूर्णयुतः सतक्रः ॥
निहन्ति सर्वानपि मेहरोगान्
नृणां नितान्तं कुरुते क्षुधां च ॥

५ तोले शुद्ध सीसेको पिघला कर उसमें ५ तोले पारद मिलावें और फिर उसे ऊर्ध्वपातन यन्त्रमें ३० बार पातन करें। तदनन्तर उसकी भस्म बनावें। फिर उसमें उसके बराबर राजावर्त भस्म और उसका आठवां भाग सीसेकी निरुत्थ भस्म मिला कर नीमके पत्तोंके रसकी ३० भावना दें और अन्तमें सुखा कर चूर्ण करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे हल्दी और चवके चूर्णके साथ मिलाकर तक्रके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रमेह रोग नष्ट होते और अत्यन्त क्षुधावृद्धि होती है।

सञ्ज्ञाप्रबोधनरसः

(र. सं. क. । उल्ला. ५)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये।

(८१२८) सन्धिकारिरसः

(सन्धिगारिरसः)

(वृ. नि. र. ; र. रा. सु. । सन्निपाता. ; र. का. धे. । ज्वरा.)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मारितं चाभ्रकं समम् ।
त्रिक्षारं जीरकं व्योषं त्रिफला लवणैः समम्॥
चित्रकस्य कषायेण दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ।
पञ्चगुञ्जमिदं खादेत्सन्धिकारिरसः स्मृतः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग,[1] अभ्रक भस्म १ भाग तथा जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, जीरा, सेंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और पांचों नमक; इनका चूर्ण १-१ भाग ले कर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको १ दिन चीतामूलके काथमें खरल करके ५-५ रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह रस सन्धिक सन्निपातको नष्ट करता है।

(८१२९) सन्धिवातारिगुटिका

(र. चं. । शूला.)

दुग्धेन वटिका कार्या बोलहिङ्गुलगुग्गुलैः ।
हरेद्वातव्यथां सर्वां सन्धिवातं च दुःसहम् ॥

बोल, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध गूगल समान भाग ले कर सबको दूधके साथ खरल करके (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे समस्त वातव्याधियों और कष्टसाध्य सन्धिवातका नाश होता है।

(८१३०) सन्निपातकुठाररसः

(र. र. स. । उ. अ. १२ ; र. चं. । ज्वरा.)

वङ्गं नागं च सूतं च नेपालं गन्धकं तथा ।
शुल्बं विषं समांशेन रसेनार्द्रेण मर्दयेत् ॥
पुनमर्द्यंत निर्गुण्ड्याश्चाङ्गेर्या रसमर्दितः ।
एकवल्लप्रयोगेण रसोऽयं सन्निपातनुत् ॥

---

१ पाठान्तरके अनुसार गन्धक समान भाग है।

बंग भस्म, सीसा भस्म, शुद्ध पारद, ताम्र-भस्म, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म और शुद्ध बछनागका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको क्रमशः अदरक, संभालु और चांगेरीके रसकी १-१ भावना दे कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

ये गोलियां सन्निपात ज्वरको नष्ट करती हैं।

(८१३१) सन्निपातकुष्ठहररसः

(र. र. स. । उ. अ. २०)

तीक्ष्णाभ्रहेमसङ्कोचस्तैलगन्धकपाचितः ।
तालताप्यविशालाग्निबोलपाठाजटाविषैः ॥
शृङ्गीटङ्कणयष्ट्याह्वसिन्दुवारैः समन्वितः ।
रसेन शृङ्गवेरस्य बद्धो बदरसन्निभः ॥
छायाविशोषितः कुष्ठं निहन्यात्सन्निपातजम् ॥

तीक्ष्ण लोह भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, केसर, कड़वे तेलमें पकाकर शुद्ध किया हुवा गन्धक, हरताल भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, इन्द्रायणकी जड़का चूर्ण, चीतामूलका चूर्ण, बोलका चूर्ण, पाठामूलका चूर्ण, शुद्ध बछनाग, काकड़ासिंगीका चूर्ण, सुहागेकी खील तथा मुलैठी और संभालुकी जड़का चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अदरकके रसमें खरल करके छोटे बेरके समान गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इनके सेवनसे सन्निपातज कुष्ठ नष्ट होता है।

(८१३२) सन्निपातगजाङ्कुशः

(र. रा. सु. । ज्वरा. ; र. र. ; र. का. धे. । सन्निपाता.)

मृतं सूतं मृतं चाभ्रं शुद्धतालकमाक्षिके ।
हिङ्गुलं तुल्यतुल्यं स्यात्मर्दयेत्खल्वके द्रवैः ॥
वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैः ।
धत्तूरलाङ्गलीपाठाभृङ्गीजम्बीरजैर्द्रवैः ॥
त्रिदिनं मर्दयेदेभिश्चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् ।
त्रिक्षारं सैन्धवं व्योषं विषं मधूकसारकम् ॥
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याथ पूर्वोक्तं च रसं समम् ।
एकीकृत्य भवेत्सिद्धं सन्निपातगजाङ्कुशम् ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु माषमात्रं प्रयोजयेत् ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध हरताल, स्वर्ण—माक्षिक भस्म और शुद्ध हिंगुल १-१ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके बांझककोड़ा, पटोल, संभालु, तुलसी, नीम, चीतामूल, धतूरा, कलियारी, पाठा, भंगरा और जम्बीरी नीबू; इनके स्वरस या काथमें ३-३ दिन खरल करें। तदनन्तर जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध बछनाग और महुवेके वृक्षका सार समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें और उपरोक्त रसमें यह चूर्ण उसके बराबर मिला कर अच्छी तरह खरल करें।*

* पाठान्तर.

र. का. धे. में हिंगुलकी जगह हींग है और त्रिकुटेका अभाव है।

र. र. में माक्षिकके स्थानमें ताम्र, हिंगुलके स्थानमें हींग और "सुगन्धानिम्बचित्रकैः" के स्थानमें "शुण्ठिगन्धालिचित्रकैः" एवं त्रिकुटेके स्थानमें 'बोल' है।

मात्रा—१ माशा। (व्यवहारिक मात्रा-२ रत्ती ।)

यह रस सन्निपातको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

(८१३३) सन्निपातगजाङ्कुशरसः

(र. र. स. । उ. अ. १२)

रसगन्धकताम्राभ्रं लाङ्गली वह्निरामठम् ।
वन्ध्यापटोलनिर्गुण्डी सुगन्धा निम्बपल्लवाः ॥
पाठाक्षारत्रयं क्ष्वेडबोलधत्तूरतन्दुलैः।
शृङ्गी मधुकसारं च जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥
कुर्याद्धि निष्कमानेन वटिका सा नियच्छति।
सस्वेददाहाभिन्यासं सन्निपातगजाङ्कुशः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कलियारीकी जड़, चीतामूल, हींग, बांझ-ककोड़ेकी जड़, पटोल, संभालुकी जड़, तुलसी, नीमके पत्ते, पाठा, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, शुद्ध बछनाग, हीराबोल, धतूरा, चौलाईकी जड़, काकड़ासिंगी और महुवेके वृक्षका सार (या मुलैठीका सत) समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करें और ४-४ माशेकी गोलियां बना लें।

यह रस अत्यधिक स्वेद और दाहयुक्त अभिन्यास सन्निपातको नष्ट करता है।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा ।)

सन्निपाततूलानलरसः

(र. रा. सु. ; र. चं. । ज्वरा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

" सन्निपातोन्मूलनरसः " देखिये ।

पाठान्तरके अनुसार सेंधा नमकका अभाव है।

(८१३४) सन्निपातभैरवो रसः (१)

(भै. र. , र. रा. सु. । ज्वरा.)

हिङ्गुलस्य विशुद्धस्य सार्द्धतोलचतुष्टयम् ।
गन्धकस्य विषस्यापि प्रत्येकं तोलकद्वयम् ॥
समाषकद्वयश्चैव कनकात्तोलकत्रयम् ।
माषैकाधिकतोलैकं टङ्कणस्य तथैव च ॥
सम्मर्द्य जम्बीररसैर्बटीश्छायाविशोषिताः ।
गुञ्जैकपरिमाणास्तु कारयेत् कुशलो भिषक् ॥
एकान्तु भक्षयेत्तस्य गोलयित्वार्द्रकद्रवैः ।
घोरे त्रिदोषे दातव्यः सन्निपातज्वरापहः ॥

शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) ४॥ तोले, शुद्ध गन्धक २ तोले, शुद्ध बछनाग २ तोले, धतूरेके शुद्ध बीज ३ तोले २ माशे और सुहागेकी खील १ तोला १ माशा ले कर सबको एकत्र मिलाकर जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें और छायामें सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसमें मिलाकर देनेसे घोर सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

(८१३५) सन्निपातभैरवो रसः (२)

(र. रा. सु. ; भै. र. । ज्वरा.)

पारदं गन्धकं तालं वत्सनाभं त्रिभिः समम् ।
दारुमूषश्च गरलं सर्वैश्च समहिङ्गुलम् ॥
सर्षपाभाश्च वटिकां कारयेत् कुशलो भिषक् ।
सन्निपाते वटीमेकामार्द्रद्रावैः प्रदापयेत् ॥
रसो महाप्रभावोऽयं सन्निपातस्य भैरवः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और शुद्ध हरताल १-१ भाग, शुद्ध बछनाग ३ भाग; संखिया ३ भाग, कृष्ण सर्पका विष ३ भाग और शुद्ध हिंगुल १२ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ खरल करके सरसोंके समान गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसके साथ देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है । सन्निपात ज्वरके लिये यह रस महा प्रभावशाली है ।

(८१३६) सन्निपातभैरवो रसः (३)

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

रसं विषं गन्धकञ्च हरितालं फलत्रयम् ।
जयपालं त्रिवृत्स्वर्णं ताम्रसीसाभ्रलौहकम् ॥
अर्कक्षीरं लाङ्गली च स्वर्णमाक्षिकमेव च ।
समं कृत्वा रसेनैषां त्रिंशद्वारञ्च मर्दयेत् ॥
अर्कश्वेतालम्बुषा च सूर्यकान्तश्च कारवी ।
काकजङ्घा शोणकश्च कुष्ठं व्योषं विकङ्कतम् ॥
सूर्यमणिश्चन्द्रकान्तो निर्गुण्डीशजटापि च ।
धुस्तूरं दन्ती पिप्पल्यो दशाष्टाङ्गमिदं शुभम् ॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं दत्त्वा तोयं चतुर्गुणम् ।
शिष्टैकगुणतोयेन भावनाविधिरिष्यते ॥
भावनायां भावनायां शोषणं मुहुरिष्यते ।
ततश्च वटिकां कृत्वा भैरवाय बलिं ददेत् ॥
रसोऽयं श्रीसन्निपातभैरवो ज्वरनाशनः ।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥
सन्निपातज्वरं हन्ति जीर्णञ्च विषमं तथा ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थकमपि ध्रुवम् ॥
ज्वरञ्च जलदोषोत्थं सर्वदोषसमाकुलम् ।
भैरवस्य प्रसादेन जगदानन्दकन्थडो ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक शुद्ध हरताल, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध जमालगोटा, निसोत, स्वर्ण-भस्म, ताम्र-भस्म, सीसा-भस्म, अभ्रक-भस्म, लोह-भस्म, आकका दूध, लांगली (कलियारी) की जड़ और स्वर्णमाक्षिक-भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें। तदनन्तर आककी जड़, अतीस, गोरखमुण्डी, सूरजमुखी, काला जीरा, काकजंघा, अरलुकी छाल, कूठ, सोंठ, मिर्च, पीपल, कण्टाई, सूर्यमणि, चन्दन, संभालुकी जड़, धतूरा, दन्तीमूल और पीपल; ये अठारह ओषधियां समान भाग ले कर सबको एकत्र कूट लें और फिर यह चूर्ण उपरोक्त पारदादिके मिश्रणके बराबर ले कर आठ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें। तत्पश्चात् उपरोक्त पारदादिके मिश्रणमें यह क्वाथ मिला कर अच्छी तरह खरल करें और धूपमें सुखा लें। इसी प्रकार इन अठारह ओषधियोंके क्वाथकी ३० भावना दें। हर बार नवीन

क्वाथ बनाना और धूपमें सुखाना चाहिये । ३० भावना देनेके पश्चात् (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना कर सुरक्षित रक्खें ।

इन्हें सेवन करनेसे पूर्व भैरवको बलि देनी चाहिये ।

इनके सेवनसे सर्व उपद्रव-युक्त सन्निपात ज्वर, जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर, एकाहिक ज्वर, द्वयाहिक ज्वर, चातुर्थिक ज्वर ,और जलदोषज ज्वर आदि समस्त ज्वरोंका नाश होता है ।

(८१३७) **सन्निपातभैरवो रसः** (४)

(रं. चं. । ज्वरा.)

विषं गन्धं ताम्रभस्म सोमलं च समांशकम् ।
पारदं सर्वतुल्यं स्यात्कृत्वा खल्वे तु कज्जलीम् ॥
निर्गुण्डीसुरसाद्रावैर्भावयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः ।
तिलमात्रा वटी देया सन्निपातादिरोगजित् ॥

शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म और शुद्ध संखिया १-१ भाग तथा शुद्ध पारद ४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके संभालु, तुलसी और अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर तिलके समान छोटी छोटी गोलियां बना लें ।

(मात्रा—१ गोली ।)

यह रस सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है ।

(८१३८) **सन्निपातभैरवो रसः** (५)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सूतं गन्धं लोहकिट्टं विमर्द्य
सर्वैस्तुल्यं वत्सनाभं नियुञ्ज्यात् ।
आर्द्रं भृङ्गं बीजपूरं जयन्त्या
निर्गुण्डीकाभृङ्गराजद्रवैश्च ॥
युक्त्या वैद्यैर्भावयित्वा विधेयः
शाणार्धार्धं सन्निपातस्य नूनम् ।
शीतैर्वा तैर्निर्मलं स्नानपानं
पथ्यं दुग्धं शर्कराभिर्युतं च ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और मण्डूर-भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध बछनाग ३ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें मण्डूर तथा बछनागका चूर्ण मिला कर सबको अदरकके रस, दालचीनीके क्वाथ तथा बिजौरे, जयन्ती, संभालु और भंगरेके रसकी एक एक भावना दे कर १-१ माशेकी गोलियां बना लें ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती ।)

इनके सेवनसे सन्निपात ज्वर अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(इसे खानेके पश्चात् यदि अधिक दाह हो तो) रोगीको शीतल पवन करनी चाहिये तथा शीतल जलसे स्नान कराना चाहिये ।

पथ्य—दूध और मिश्री युक्त योग्य आहार देना चाहिये ।

(८१३९) **सन्निपातभैरवो रसः** (६)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२, यो. र. ; र. का. धे. । ज्वरा. ; र. प्र. सु. । अ. ८)

रसो गन्धस्त्रिकर्षः स्यात् कुर्यात्कज्जलिकां तयोः ।
ताराभ्र[१]ताम्रवङ्गाहिसाराश्चैकैककार्षिकाः ॥

१ "तारास्ताम्र" इति पाठान्तरम्

शिग्रुज्वालामुखीशुण्ठीबिल्वेभ्यस्तण्डुलीयकात् ।
प्रत्येकं स्वरसैः कुर्याद्यामैकैकं विमर्दनम् ॥
कृत्वा गोलं वृतं वस्त्रे लवणापूरिते न्यसेत् ।
काचभाण्डे ततः स्थाल्यां काचकूपीं निवेशयेत् ॥
वालुकाभिः प्रपूर्याथ वह्निर्यामद्वयं भवेत् ।
तत उद्धृत्य तं गोलं चूर्णयित्वा विमिश्रयेत् ॥
प्रवालचूर्णकर्षेण शाणमात्रविषेण च ।
कृष्णसर्पस्य गरलैर्द्विवेलं भावयेत्तथा ॥
तगरं मुशली मांसी हेमाह्वा वेतसः कणा ।
नीलिनी पत्रकं चैला चित्रकश्च कुठेरकः ॥
शतपुष्पा देवदाली धत्तूरागस्त्यमुण्डिकाः ।
मधूकजातीमदनरसैरेषां विमर्दयेत् ॥
प्रत्येकमेकवेलं च ततः संशोष्य धारयेत् ।
बीजपूरार्द्रकद्रावैर्मरिचैः षोडशोन्मितैः ॥
रसो द्विगुञ्जाप्रमितः सन्निपातेषु दीयते ।
प्रसिद्धोऽयं रसो नाम्ना सन्निपातस्य भैरवः ॥

शुद्ध पारद और गंधक ३।।-३।। तोले तथा चांदी-भस्म, अभ्रक-भस्म, ताम्र-भस्म, बंग-भस्म, नाग--भस्म और लोह-भस्म १।-१। तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको सहंजना, हुलहुल, सोंठ, बेलछाल और चौलाई; इनके स्वरस (अभावमें क्वाथ) में १-१ प्रहर खरल करें। तदनन्तर सबका एक गोला बनाकर उसे कपड़े में लपेट लें और कांचकी आतशी शीशीमें सेंधा नमक का चूर्ण डालकर उसमें वह गोला डाल दें तथा ऊपरसे भी सेंधा नमक का चूर्ण डालकर गोलेको नमकसे ढकदें। तदनन्तर इस शीशीको बालुकायन्त्रमें रखकर २ पहर पाक करें और फिर शीशीके ठण्डा होने पर उसमें से औषधको निकाल कर चूर्ण कर लें और उसमें १। तोला मूंगेकी भस्म तथा ५ माशे शुद्ध बछनागका चूर्ण मिलाकर काले सांपके विषकी २ भावना दें। तत्पश्चात् तगर, मूसली, जटामांसी, चोक, अम्लबेत, पीपल, नीलका पञ्चाङ्ग, तेजपात, इलायची, चीता, बनतुलसी, सोया, देवदाली (बिंडाल), धतूरा, अगथिया, गोरखमुण्डी, महुवा, चमेली और मैनफल; इनके स्वरस या क्वाथ की १-१ भावना देकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा–२ रत्ती। (व्यवहारिक मात्रा आधी रत्ती)

अनुपान–अदरक और बिजोरेका (१-१ तोला) रस तथा १६ काली मिर्चोका चूर्ण एकत्र मिलाकर उसमें उपरोक्त रस मिलाकर पीना चाहिये।

यह रस सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है। यह सन्निपातकी एक प्रसिद्ध औषध है।

(८१४०) सन्निपातवडवानलरसः

(र. चं. । ज्वरा. ; रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

रसाष्टकोऽमृतं सप्त स्यात् षट् षट् गन्धतालयोः ।
दन्तीबीजानि षड्भागाः पञ्चभागं तु टङ्कणम् ॥
चत्वारि धूर्तबीजस्य व्योषस्य त्रितयं भवेत् ।
एतानि वह्निमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुञ्जाद्वयं हितम् ।
वडवानलसञ्ज्ञोऽयं सन्निपातहरः परः ॥

शुद्ध पारद आठ भाग, शुद्ध बछनाग सात भाग, शुद्ध गंधक और हरताल ६-६ भाग, शुद्ध

जमालगोटा ६ भाग, सुहागे की खील ५ भाग, धतूरेके शुद्ध बीज ४ भाग और सोंठ, मिर्च तथा पीपलका चूर्ण ३-३ भाग लेकर प्रथम पारे-गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको चीतामूलके काथमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें अदरकके रसके साथ देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

(८१४१) सन्निपातविध्वंसकः

(र. रा. सु. । सन्निपाता.; र. र.; र. का. धे.। सन्निपाता.)

सूतं गन्धं समं शुद्धं तालकं माक्षिकं तथा ।
मृतं ताम्राभ्रकं बोलं विषं धत्तूरबीजकम् ॥
क्षारत्रयं वचा हिङ्गु पाठा भृङ्गी पटोलकम् ।
वन्ध्यानिम्बत्रयं शुण्ठी कन्दलाङ्गलीजं समम् ॥
सिन्धुवारद्रवैर्मर्द्यं सर्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ।
दिनैकं वटिका कार्या चणकाभां च भक्षयेत् ॥
अत्युग्रं सन्निपातन्तु सर्वोपद्रवसंयुतम् ।
निहन्यादनुपानेन दशमूलार्कजेन वा ॥
कषायेण न सन्देह पथ्यं दध्योदनं हितम् ।
रसो विध्वंसको नाम सन्निपातस्य निश्चितम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, स्वर्ण माक्षिक-भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, ×बोल, शुद्ध बछनाग, धतूरेके शुद्ध बीज, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, [1]बच, हींग, पाठा, काकड़ासिंगी, पटोल, बांझककोड़ेकी जड़, तीन प्रकारका नीम (कड़वा नीम, बकायन, मीठा नीम; इनकी छाल), सोंठ और कलिहारीकी जड़ समान भाग ले कर प्रथम पारे, गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको १-१ दिन संभालु और जम्बीरीके रसमें खरल करके चनेके समान गोलियां बना लें।

इन्हें खिलानेसे उपद्रव युक्त अत्युग्र सन्निपात भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

अनुपान—दशमूलका काथ या आककी जड़का काथ।

पथ्य—दही भात।

(८१४२) सन्निपातसूर्यो रसः

(र. रा. सु.; भै. र. । सन्निपाता.)

हिङ्गुलं गन्धकं ताम्रं मरिचं पिप्पली विषम् ।
शुण्ठीकनकबीजं च श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥
विजयापत्रतोयेन त्रिदिनं भावयेत्सुधीः ।
द्विगुञ्जं पर्णखण्डेन अर्कक्वाथं पिबेदनु ॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान् घोरान् सुदारुणान् ।
वातिकं पैत्तिकं चैव श्लैष्मिकं च विशेषतः ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, काली मिर्चका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, शुद्ध बछनाग, सोंठका

× र. का. धे. में " बोल " की जगह कमीला और पाठा की जगह कचूर है।

[1] पाठान्तरके अनुसार बच और काकड़ासिंगीके स्थानमें अर्कपत्र तथा निम्बत्रयके स्थानमें भृङ्गराजका रस है।

चूर्ण और धतूरेके बीजोंका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके ३ दिन भांगके पत्तोंके रसमें खरल करके सुखा लें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे पानमें रख कर खिलाना और ऊपरसे आककी जड़का क्वाथ पिलाना चाहिये।

यह सन्निपात और उससे उत्पन्न होने वाले वातज, पित्तज तथा विशेषतः कफज विकारोंको नष्ट करता है।

(८१४३) सन्निपातहररसः

(रसे. सा. सं. । सन्निपाता.)

शुद्धं सूतं टङ्कणं वै मरीचं
व्योषं तद्वद्धस्तिनः पिप्पली च।
सर्वं तुल्यं धूर्तनीरैः प्रपेष्य
व्योषक्षोदैरर्कनीरैर्द्विगुञ्जम् ॥

शुद्ध पारा (रससिन्दूर), सुहागेकी खील, काली मिर्चका चूर्ण, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और गजपीपलका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर धतूरेके रसमें खरल करके सुखा लें।

इसे त्रिकुटेके (१ माशा) चूर्ण और आककी जड़के क्वाथके साथ सेवन करानेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

मात्रा—२ रत्ती।

सन्निपाताञ्जनरसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

अञ्जनप्रकरणमें देखिये।

(८१४४) सन्निपातान्तकरसः (१)

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

मृतं सूतं समं गन्धं दरदं शुद्धखर्परम्।
रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राम्लवेतसौ ॥
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्मर्द्यं भूधरे पाचयेल्लघु।
हिङ्गुत्रिकटुकर्पूरं पञ्चैतानि समं समम् ॥
पूर्वस्यैतत्समं चूर्णमार्द्रकस्य द्रवैः सह।
महाराष्ट्री च निर्गुण्डी जयन्ती पिप्पली द्वयम् ॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं प्रत्येकं भावना पृथक्।
दातव्यं तच्चतुर्गुञ्जमार्द्रकस्य द्रवैः सह ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातान्तको रसः ॥

पारद भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध खपरिया १-१ भाग तथा ताम्र भस्म और अम्लवेतका चूर्ण २-२ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके भूधर-पुटमें हल्की आंच दे कर पकावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर उसमें से औषधको निकाल-कर खरल करलें और फिर हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल और कपूर; इनके समान भाग चूर्णको एकत्र मिलालें और यह मिश्रण उपरोक्त तैयार रसके बराबर लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर अदरक, महाराष्ट्री (जलपीपल), संभालु, जयन्ती, पीपल, गजपीपल और भंगरे के रसकी पृथक् पृथक् १-१ भावना दें।

मात्रा—४ रत्ती।

इसे अदरकके रसके साथ देने से सन्निपातका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

(८१४५) सन्निपातान्तकरसः (२)

(र. का. धे. । सन्निपाता.)

मृतकान्ताभ्रवैक्रान्तं ताप्यं तालं समं समम् ।
मूर्छितश्च रसो मर्द्योऽभयवानरमूत्रतः ॥
राजवृक्षफलव्योषकुष्माण्डरसपिण्डितः ।
अभिन्यासज्वरं हन्यात्क्षौद्रैर्माषैकभक्षणात् ॥
कान्ताभावे मृतं तीक्ष्णं सन्निपातान्तको रसः ॥

कान्तलोह भस्म, अभ्रक भस्म, वैक्रान्त-भस्म, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, शुद्ध हरताल और मूर्च्छित पारद (रससिन्दूर) समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खसके काथ, बन्दरके मूत्र, अमलतासके फलके गूदेके पानी, त्रिकुटेके काथ और पेठे (भूरे कुम्हड़े) के रसकी पृथक् पृथक् १-१ भावना देकर १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

(**व्यवहारिक मात्रा**-१ रत्ती ।)

इसे शहदके साथ देनेसे अभिन्यास सन्निपात नष्ट होता है।

नोट-यदि कान्तलोह-भस्म न हो तो तीक्ष्ण-लोहभस्म डालनी चाहिये।

सन्निपातानलरसः

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

सन्निपातान्तक रस प्र. सं. ८१४४ देखिये। उससे इसमें इतना अन्तर है।—

(१) खपरिया और हिंगुल २-२ भाग तथा अम्लवेत १ भाग है।

(२) जयन्ती, पीपल, गजपीपल और भंगरेके स्थानमें केवल करवीरकी भावना है।

(३) भावनाओंकी संख्या सात सात है।

(८१४६) सन्निपातारि रसः

(वृ. यो. त. । त. ५९)

भागौ पारदगन्धयोरमलयोर्देयौ त्र्यूषणा-
देकश्चोज्ज्वलटङ्कणाद्दहनतस्तीव्रोत्तमाभृङ्गतः ।
नागार्द्धे चरणोऽहिफेनत इदं सञ्चूर्ण्य भृङ्गद्रवे
स्थाप्यं सप्त दिनान्यथैकमखिलं जेपालनीरेऽपि च
रुद्रेण ज्वरमर्दितं जगदिदं दृष्ट्वा रसो निर्मितः
सेव्यो वल्लमितः क्षणादिह नृणामुग्रां ज्वरार्तिं जयेत् ।
सन्तापे शिशिरो विधिः समुदितः पथ्ये च शाल्योदनम्
दध्ना शर्करयाऽथ दोषवशतो देशर्तुसात्म्येन च ॥

शुद्ध पारद और गन्धक २-२ भाग, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण १-१ भाग, सुहागेकी खील १ भाग, तथा चीतामूलका चूर्ण, तीक्ष्ण लोह भस्म, शुद्ध मनसिल और भंगरेका चूर्ण १-१ भाग एवं सीसा-भस्म और अफीम चौथाई चौथाई भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको भंगरेके रसमें डाल दें और सात दिन तक भीगा रक्खें तदनन्तर सुखा कर एक दिन जमाल-गोटेके पानी (दन्तीमूलके काथ) की भावना दें और २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

भगवान रुद्रने संसारको ज्वराक्रान्त देख कर इस रसकी रचना की थी।

इसके प्रभावसे तीव्र ज्वर भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

यदि इसे खानेके पश्चात् अधिक सन्ताप हो तो शीतल क्रिया करनी चाहिये (नाभि पर कांस्य पात्र रख कर उसमें शीतल जल छोड़ना, चन्दनका लेप करना, हवा करनी, शिर पर बरफ रखना आदि ।)

पथ्य—शालि चावल, दही, खांड अथवा दोष और ऋतुके अनुसार अन्य उचित पथ्य दें ।

सन्निपातोन्मूलनरसः

(सन्निपाततूलानलरसः)

(र. का. धे. । ज्वरा. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. रा. सु. ; र. चं. । ज्वरा.)

" वीरभद्राख्यो रसः " प्र. सं. ७०९२ देखिये । उसमें उपदानोंकी मात्रा भिन्न भिन्न है और इसमें सब पदार्थ समान भाग हैं ।

(८१४७) ससशालिवटी

(भा. प्र. म. खं. २ ; धन्व. । उपदंश.)

पारदष्टङ्कमानः स्यात्खदिरष्टङ्कसम्मितः ।
आकारकरभश्चापि ग्राह्यष्टङ्कद्वयोन्मितः ॥
टङ्कत्रयोन्मितं क्षौद्रं खल्वे सर्वं विनिक्षिपेत् ।
सम्मर्द्य तस्य सर्वस्य कुर्यात्ससवटीर्भिषक् ॥
स रोगी भक्षयेत्प्रातरेकैकामम्बुना वटीम् ।
वर्जयेदम्ललवणं फिरङ्गस्तस्य नश्यति ॥

पारद १ टंक (३॥। माशे), कत्था १ टंक, अकरकरेका चूर्ण २ टंक और शहद ३ टंक ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और सबकी सात गोलियां बना लें ।

इनमेंसे नित्य प्रति प्रातःकाल १-१ गोली पानीके साथ खानेसे फिरङ्ग रोग (आतशक) का नाश होता है ।

इसके सेवन कालमें खटाई और नमकसे परहेज करना चाहिये ।

(इस योगमें पारदके स्थानमें शुद्ध रसकपूर डालना चाहिये । परन्तु उपरोक्त परिमाणके अनुसार एक मात्रामें ४ रत्तीके लगभग रसकपूर आ जायगा जो बहुत अधिक (भयानक) है । अतः यह योग किसी योग्य चिकित्सक के परामर्शसे मात्रा आदिका निर्णय करके सेवन करना चाहिये ।)

(८१४८) ससाम्रतरसः

(भै. र. ; र. र. । मुखरोगा.)

मृतसूताभ्रकं तुल्यं मृतलौहं शिलाजतु ।
गुग्गुलुश्च शिला ताप्यं समांशं मधुना लिहेत् ॥
अर्धगुञ्जप्रमाणेन मुखरोगं विनाशयेत् ॥

पारद-भस्म, अभ्रक-भस्म, लोह भस्म, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध गूगल, शुद्ध मनसिल और स्वर्ण माक्षिक-भस्म समान भाग ले कर प्रथम शिलाजीत और गूगलको शहदमें खरल करें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर अच्छी तरह कूटें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसके सेवनसे (मुखपाकादि) मुख-रोग नष्ट होते हैं ।

(८१४९) सप्तामृतलौहम् (१)

(सर्वचूर्णसमं लौहम्, सप्तामृत गुटी)

(र. चं. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; च. द. । शूला. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे. । नेत्ररोगा. ; भै. र. । शूला. , नेत्ररोगा. ; यो. र. । नेत्ररोगा. ; वृ. नि. र. । नेत्ररोगा. ; यो. चि. म. । अ. ३)

त्रिफलारज आयसचूर्ण
सह यष्टीमधुकं समांशयुक्तम् ।
मधुना सर्पिषा दिनान्ते
पुरुषो निष्परिहारमाददीत ॥
तिमिरक्षतरक्तराजिकण्डू
क्षणदान्ध्यार्बुदतोददाहशूलान् ।
पटलं सह काचपिल्लकं
शमयत्येव निषेवितः प्रयोगः ॥
न च केवलमेव लोचनानां
विहितो रोगनिबर्हणाय पुंसाम् ।
दशनश्रवणोर्ध्वकण्ठजानां
प्रशमे हेतुरयं महागदानाम् ॥
पलितानि विनाशयेत्तथाग्निं
चिरनष्टं कुरुते रविप्रचण्डम् ।
दयिताभुजपञ्जरोपगूढः
स्फुटचन्द्रभरणासु यामिनीषु ।
सुरतानि चिरं निषेवतेऽसौ
पुरुषो योगवरं निषेवमाणः ॥
सुखेन नीलोत्पलचारुगन्धिना
शिरोरुहैरञ्जनमेचकप्रभैः ।
भवेच्च गृध्रस्य समानलोचनः
सुखैर्नरो वर्षशतञ्च जीवति ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला और मुलैठी; इनका चूर्ण तथा लोहभस्म और शहद एवं घी १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सायंकालके समय सेवन करनेसे तिमिर, क्षत (नेत्रका घाव), लाल रेखाएं, नेत्रोंकी खाज, रात्र्यान्ध्य (रतौंधा), नेत्रार्बुद, नेत्रतोद, नेत्र-दाह, नेत्रशूल, पटल, काच और पिल्लादि नेत्ररोगोंका नाश होता है ।

यह प्रयोग केवल नेत्ररोगोंको ही नष्ट नहीं करता बल्कि दन्त, कर्ण और गलेसे ऊपर उत्पन्न होने वाले रोगोंमें भी श्रेष्ठ है । यह पलित रोगको नष्ट करता है और बहुत समयकी पुरानी मन्दाग्निको अत्यन्त तीक्ष्ण कर देता है ।

इसे सेवन करनेसे कामशक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है ; मुखकान्ति शोभायमान हो जाती है; बाल अत्यन्त काले हो जाते हैं और दृष्टि गृध्रके समान तीक्ष्ण हो जाती है । इसे सेवन करने वालेको १०० वर्षकी सुखपूर्ण आयु प्राप्त होती है ।

(मात्रा—१ माशा)

(८१५०) सप्तामृतलौहम् (२)

(वृ. यो. त. । त. ७६)

मधुताप्यविडङ्गाश्मजतुलोहघृताभयाः ।
घ्नन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमाना हिताशिना ॥

शहद, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, बायबिडंगका चूर्ण, शुद्ध शिलाजीत, लोह-भस्म, घी और कूठका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर सेवन करने और पथ्य पूर्वक रहनेसे अत्युग्र यक्ष्मा रोग भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा— १ माशा ।)

समाम्रुतावटी (सप्तोत्तरावटी)

(र. र. स. । उ. अ. १३ ; र. चं. । श्वासा. ; र. रा. सु. । श्वासा.)

प्रयोग सं. ४७३३ " बब्बूलादिगुटिका " देखिये ।

(८१५१) समशर्करलौहम् (१)

(भै. र. । कासा.)

लवङ्गं कट्फलं कुष्ठं यमानी त्र्यूषणं तथा ।
चित्रकं पिप्पलीमूलं वासकं कण्टकारिका ॥
चव्यं कर्कटशृङ्गी च चातुर्जातं हरीतकी ।
शटी कक्कोलकं मुस्तं लौहमभ्रं यवाग्रजम् ॥
सर्वं प्रति समं चूर्णं तावच्छर्करयान्वितम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं स्थापयेत्स्निग्धभाजने ॥
निहन्ति सर्वजं कासं वातश्लेष्मसमुद्भवम् ।
क्षयकासं रक्तपित्तं श्वासमाशु विनाशयेत् ॥
क्षीणस्य पुष्टिजननं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥

लौंग, कायफल, कूठ, अजवायन, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, पीपलामूल, बासा (अडूसा), कटेली, चव्य, काकड़ासिंगी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, हर्र, कचूर, कंकोल और नागरमोथा; इनका चूर्ण तथा लोह भस्म, अभ्रक भस्म और जवाखार १–१ भाग एवं खांड सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसके सेवनसे वातज, कफज तथा त्रिदोषज कास, क्षयकी खांसी, रक्तपित्त और श्वासका शीघ्रही नाश हो जाता है । यह क्षीण व्यक्तियोंको पुष्ट करता है तथा बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है ।

(**मात्रा**—१-१॥ माशा । मधुके साथ मिला कर चाटें ।)

(८१५२) समशर्करलौहम् (२)

(रसे. सा. सं. ; भै. र. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । रक्तपित्ता.)

लोहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम् ।
चूर्णं पादन्तु वैडङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥
ताम्रपात्रे दृढे पक्त्वा स्थापयेद् घृतभाजने ।
माषकादि क्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम् ।
रक्तपित्तं जयेत्तीव्रमम्लपित्तं क्षतक्षयम् ॥
प्रहृष्ट कान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥

लोह भस्म ४ तोले, गोदुग्ध १६ तोले, गोघृत ८ तोले, बायबिड़ंगका चूर्ण १ तोला, मधु ४ तोले और मिश्री ४ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर ताम्रके (क़लई किये हुवे) पात्रमें पकावें और दूध जल जाने पर (खूब गाढ़ा हो जाने पर) उतार कर ठण्डा कर लें और स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ माशेसे आरम्भ करें और रोगीकी शक्तिके अनुसार बढ़ाते रहें ।

अनुपान—नारियलका पानी आदि ।

इसके सेवनसे तीव्र रक्तपित्त, अम्लपित्त और क्षतक्षयका नाश हो कर कान्ति और आयुकी वृद्धि होती है ।

(८१५३) **समीरगजकेसरीरसः**

(र. रा. सु. ; वै. र. ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

नवाहिफेनं कुचिलं नवानि मरिचानि च ।
समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च ॥
देयानि प्रातरेतानि पुनस्ताम्बूलचर्वणम् ।
कुब्जे च खञ्जवाते च सर्वजे गृध्रसी गदे ॥
अपबाहौ प्रयोक्तव्यः शोषे कम्पेऽपतानके ।
विसूच्यामरुचौ देयोऽपस्मारे च विशेषतः ॥

नवीन अफीम, शुद्ध नवीन कुचलेका चूर्ण, और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे नित्य प्रति प्रातःकाल १ गोली खा कर बादको पान खाना चाहिये ।

इनके सेवनसे कुब्जता (कुबड़ापन), खञ्जवात, सर्वदोषज गृध्रसी, अपबाहुक, शोष, कम्प, अपतानक, विसूचिका, अरुचि और विशेषतः अपस्मारका नाश होता है ।

(८१५४) **समीरपन्नगरसः (१)**

(र. चं. । वातरो.)

पारदं गन्धकं मल्लं हरितालं तथैव च ।
एतच्चतुष्टयं सर्वं तुलसीरसमर्दितम् ॥
वटीं कृत्वाऽभ्रकेणैव वेष्टयेद् गोलकन्तु तत् ।
शरावयुगुले क्षिप्त्वा वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥
दीपिकाप्रमितं वह्निं दत्वा यामचतुष्टयम् ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य नाम्नाऽसौ वातपन्नगः ॥
सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिबन्धे कफामये ।
नागवल्ल्या दलेनैव भक्षयेद् गुञ्जिकाद्वयम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध संखिया और शुद्ध हरताल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे तुलसीके रसमें खरल करके सबका एक गोला बना लें तथा उसे सफेद अभ्रकके पत्रोंमें लपेट कर शराव-सम्पुटमें बन्द करें और उस पर ३-४ कपरमिट्टी करके सुखा लें । तदनन्तर उसे बालुका यन्त्रमें रख कर अत्यन्त मृदु अग्नि पर ४ पहर पाक करें । तत्पश्चात् यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती । पानमें रखकर खिलावें ।

यह रस सन्निपात, उन्माद, सन्धियोंके जकड़ जाने और कफ रोगोंको नष्ट करता है ।

(८१५५) **समीरपन्नगरसः (२)**

(वृ. नि. र. ; यो. र. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; वै. र. । वातव्या.)

अभ्रगन्धविषव्योषरसटङ्कान्समांशकान् ।
भावयेत्सप्तधा भृङ्गरसेन स्यात्समीरहा ॥
आर्द्रद्रवेण वल्लो वा खण्डव्योषेण योजितः ।
महावाताञ्जयत्याशु नासाध्मातः सुसञ्ज्ञकृत् ॥

अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध पारद और सुहागेकी खील समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको भंगरेके रसकी सात भावना दें और सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे अदरकके रसके साथ अथवा सोंठ, मिर्च, पीपल और मिश्रीके चूर्णके साथ खिलानेसे कष्ट-साध्य वातव्याधियां नष्ट हो जाती हैं ।

इसकी नस्य देनेसे मूर्च्छा जाती रहती है ।

मात्रा—२-३ रत्ती ।

समीरपन्नगरसः (३)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

प्र. सं. ६९८२ "वातगजाङ्कुशरसः (२)" देखिये ।

इसमें उसकी अपेक्षा तुलसी अधिक है तथा भावना द्रव्योंमें संभालुके स्थानमें तुलसी है ।

(८१५६) समीरशूलेभहरिः

(यो. र. ; र. का. धे. । शूला.)

क्षारं कपर्दी विषसैन्धवौ च
व्योषं च सम्मर्द्य भुजङ्गवल्ल्याः ।
रसेन गुञ्जाप्रमितः प्रदिष्टः
समीरशूलेभहरिः प्रचण्डः ॥

जवाखार, कौड़ी भस्म, शुद्ध बछनाग, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च और पीपल; सबके समान भाग चूर्णको एकत्र मिला कर पानके रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे वातजशूल नष्ट होता है ।

(८१५७) समुद्रफेनशोधनम्

(आ. वे. प्र. । अ. १० ; यो. र.)

अब्धिफेनोऽब्धिसारः स्यादब्धिजश्च समुद्रजः।
समुद्रफेनश्चक्षुष्यो लेखनः शीतलः सरः ॥
कर्णस्रावरुजागूत्थहरः पाचनदीपनः ।
अशुद्धः स करोत्यङ्गभङ्गं तस्माद्विशोधयेत् ॥
समुद्रफेनः सम्पिष्टो निम्बुतोयेन शुध्यति ॥

समुद्रफेनको अब्धिफेन, अब्धिसार, अब्धिज और समुद्रज भी कहते हैं ।

समुद्रफेन आंखोंके लिये हितकारी, लेखन, शीतल, सारक (रेचक), पाचन और दीपन है । यह कर्णस्राव, कर्णपीड़ा और कर्णमलको नष्ट करता है ।

अशुद्ध समुद्रफेन अङ्ग भङ्ग करता है अतः उसे शुद्ध करके काममें लाना चाहिये ।

समुद्रफेनको नीबूके रसमें घोटनेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

(८१५८) सम्मोहलौहम्

(र. चं. । पाण्डु. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । पाण्डु.)

त्रिकटु त्रिफला वह्निर्विडङ्गं लोहमभ्रकम् ।
एतानि समभागानि घृतेन वटिका कुरु ॥
कामलां पाण्डुरोगं च हृद्रोगं शोथमेव च ।
भगन्दरं कोष्ठक्रिमिं मन्दानलमरोचकम् ॥
तान् सर्वान्नाशयेदाशु बलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
सम्मोहलोह नामाऽयं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीतामूल और बायबिड़ंग; इनका चूर्ण तथा लोह-भस्म और अभ्रक-भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर थोड़े घीके साथ खरल करें और (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे कामला, पाण्डु, हृद्रोग, शोथ, भगन्दर, कोष्ठकृमि, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश हो कर बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है। यह रस पाण्डु रोगमें विशेष उपयोगी है।

(८१५९) सर्ज्जीक्षारादियोगः

(वृ. नि. र. । संग्रहण्य.)

सर्जिका यावशूकं वा विजयातिविषा समम्।
दीप्यकं पारदं गन्धं निम्बुनीरेण भावयेत्॥
माषार्धं मधुना देयं सितया वा घृतान्वितम्।
अनुदयात् ग्रहण्यार्तिज्वरातिसारशान्तये॥
सशूलशोथसहितां ग्रहण्यार्तिं प्रणाशयेत्।

सज्जीखार या जवाखार, भांग, अतीस और अजवायन इनका चूर्ण तथा शुद्ध पारद और गन्धक समान भाग ले कर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर नीबूके रसमें खरल करके सुखा लें।

मात्रा—आधा माशा।

इसे शहदमें मिला कर अथवा घी और मिश्रीके साथ देना चाहिये।

इसके सेवनसे संग्रहणी, ज्वरातिसार और शूल तथा शोथयुक्त संग्रहणीका नाश होता है।

सर्वचूर्णसमं लौहम्

(र. र. नेत्ररोगा.)

सप्तामृतलोहम् (१) प्र. सं. ८१४९ देखिये।

(८१६०) सर्वज्वरहरो रसः (१)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसबलिटङ्कणनागरकणानां च पञ्चपञ्चभिर्भागैः।
नयपालाद्विंशत्या लौहे लौहेन मर्दयेत्सुदृढम्॥
तत्पञ्चयाममलैर्निम्बूकस्याथ तद्गुञ्जा।
पथ्येन षष्टिघृततः सर्वज्वरहृद्रसो भवति॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, सोंठ और पीपल; इनका चूर्ण ५-५ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा २० भाग ले कर प्रथम पारे-गन्धककी लोहखरलमें कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर पांच पहर नीबूके रसमें खरल करें और १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं।

पथ्य—घृत युक्त साठी चावलका भात।

(**अनुपान**—शीतल जल। यह रस रेचक है।)

(८१६१) सर्वज्वरहरो रसः (२)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसदरददिनेशं फेनगन्धेन युक्तं
मुनिदिनमिति खल्वे विश्वतोयेन घृष्टम्।
ज्वरहरमिह सूतं वल्लमात्रप्रमाणं
प्रथमजनितदाहे दापयेदार्द्रकेण॥

शुद्ध हिंगुल, ताम्र-भस्म, समुद्रफेन और शुद्ध गंधक समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें और सात दिन सोंठके क्वाथ (या अदरकके रस) में खरल करके ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

(**व्यवहारिक मात्रा**—१-२ रत्ती।)

इसे अदरकके रसके साथ देनेसे ज्वर नष्ट होता है।

(८१६२) सर्वज्वरहरो रसः (३)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रङ्गं विषं टङ्कणं च द्वौ क्षारौ मरिचानि च ।
भावयेन्निम्बुक द्रावैः सर्वज्वरहरो रसः ॥

बंग भस्म, शुद्ध बछनाग, सुहागेकी खील, जवाखार, सज्जीखार और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर नीबूके रसमें खरल करके (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे समस्त ज्वर नष्ट होते हैं ।

(८१६३) सर्वज्वरहरलौहम् (१)

(र. चं. ; भै. र. ; धन्व. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

चित्रकं त्रिफलाव्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥
किराततिक्तकं पाठा[१] कटुकी कण्टकारिका ।
शोभाञ्जनस्य बीजानि मधुकं वत्सकं समम् ॥
लोहतुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
सर्वज्वरहरं लौहं सर्वरोगहरं तथा ॥
वातिकं पैत्तिकं चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
द्वन्द्वजं विषमाख्यं च धातुस्थं च ज्वरं जयेत् ॥
शीतं कम्पं तृषां दाहं घर्मस्रुतिवमिभ्रमान् ।
रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममामवातं सुदारुणम् ।
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छां पाण्डुं हलीमकम् ॥
अजीर्णं ग्रहणीं चैव यक्ष्माणं शोथमेव च ।
बल्यं वृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिषूदनम् ॥
सर्वज्वरहरं लौहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥

चीतामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, नागरमोथा, गजपीपल, पीपलामूल, खस, देवदारु, चिरायता, पाठा, कुटकी, कटेली, सहंजनेके बीज, मुलैठी और इन्द्रजौ; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह-भस्म सबके बराबर ले कर सबको (पानीके साथ) खरल करके (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज, सान्निपातिक, विषम और धातुगत आदि समस्त ज्वरोंका नाश होता है । यह रस शीत, कम्प, तृषा, दाह, प्रस्वेद, वमन, भ्रम, रक्तपित्त, अतिसार, अग्निमांद्य, कास, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, कष्टसाध्य आमवात, अर्श, घोर उदर रोग, मूर्च्छा, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, संग्रहणी, यक्ष्मा और शोथको नष्ट करता है तथा वृष्य, बल्य और पौष्टिक है।

(८१६४) सर्वज्वरहरलौहम् (२)(बृहत्)

(भै. र. ; र. रा. सु. ; धन्व. । ज्वरा.)

द्विपलं जारितं लौहं रसं गन्धं द्वितोलकम् ।
तोलकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ॥
श्रेयसी पिप्पलीमूलं हरिद्रे द्वे च चित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
गुञ्जाद्वयवटीं कृत्वा भक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
सर्वज्वरहरो लौहः सर्वज्वरविनाशनः ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥

१. बालमिति पाठान्तरम् ।

मासजं पक्षजश्चैव तथा सम्वत्सरोत्थितम् ।
सर्वान् ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

लोह भस्म १० तोले, शुद्ध पारा और गन्धक २॥-२॥ तोले, तथा हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, नागरमोथा, गजपीपल, पीपलामूल, हल्दी, दारुहल्दी और चीतामूल १।-१। तोला ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला कर अदरकके रसमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज, सान्निपातिक, विषम, भूतोत्थ और महीने महीने भर बाद या १५-१५ दिन बाद अथवा प्रति वर्ष नियमसे आने वाले तथा अन्य समस्त प्रकारके ज्वरों और प्लीहाका नाश होता है।

(८१६५) सर्वज्वरहरलौहम् (३)(बृहत्)

(भै. र. ; रसे. सा. स. ; र. रा. सु. ; धन्व. ; ज्वरा.)

पारदं गन्धकं शुद्धं ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥
मृतकान्तं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥
कारवेल्लरसेनापि दशमूलरसेन च ।
पर्पटस्य कषायेण क्काथेन त्रैफलेन च ॥
गुडूच्याः स्वरसेनापि नागवल्लीरसेन च ।
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ॥
पुनर्नवार्द्रकाम्भोभिर्भावनां परिकल्प्य च ।
रक्तिकादिक्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
पिप्पलीगुडसंयुक्ता वटिका वीर्यवर्द्धिनी ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति चिरकालसमुद्भवम् ॥
विविधं वारिदोषोत्थं नानादोषोद्भवं तथा ।
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि च ॥
क्षयोद्भवश्च धातुस्थं कामशोकभवं तथा ।
भूतावेशज्वरश्चैव ऋक्षदोषभवं तथा ॥
अभिघातज्वरश्चैवमभिचारसमुद्भवम् ।
अभिन्यासं महाघोरं विषमञ्च त्रिदोषजम् ॥
शीतपूर्वं दाहपूर्वं विषमं शीतलं ज्वरम् ।
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ॥
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थकविपर्ययम् ।
पाण्डुरोगगणान सर्वान् अग्निमान्द्यं महागदम् ॥
एतान् सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्द्धेन नात्र संशयः।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेद्द्विजसंयुतम् ॥
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं विशेषतः।
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्न बलवान् भवेत् ॥
सर्वज्वरहरं श्रेष्ठमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, ताम्र-भस्म, अभ्रक-भस्म, स्वर्ण माक्षिक-भस्म, स्वर्ण-भस्म, चांदी-भस्म और शुद्ध हरताल १।-१। तोला तथा लोह-भस्म ५ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर निम्नलिखित ओषधियोंके स्वरस या काथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

भावना द्रव्य—करेला, दशमूल, पित्तपापड़ा, त्रिफला, गिलोय, पान, मकोय, संभालु, पुनर्नवा

और अदरक। इनमेंसे जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरस और शेषके क्वाथ लेने चाहियें।

इनमेंसे १-१ गोली पीपलके चूर्ण और गुड़के साथ देनेसे वीर्य वृद्धि होती है। यह रस बहुत पुराने आठ प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है। जलदोष-जनित, विविध दोषोंसे उत्पन्न सतत इत्यादि कष्टसाध्य ज्वर और क्षयका ज्वर, धातुगत ज्वर, काम शोक और भयसे उत्पन्न ज्वर, भूतावेश ज्वर, अभिघातज और अभिचार-जन्य ज्वर, अभिन्यास ज्वर, त्रिदोषज विषम ज्वर, शीत और दाह पूर्व ज्वर, शीत ज्वर, प्रलेपक ज्वर, आधे शरीरका ज्वर, प्लीह-ज्वर और चातुर्थिक विपर्यय ज्वर आदि समस्त ज्वर एवं कास, पाण्डु और अग्निमांद्य आदि रोग इसके सेवनसे १ सप्ताहमें अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

पथ्य—शालि चावलोंका भात और तक्र।

अपथ्य—कुष्माण्डादि ककारादि वर्गके शाक। जब तक रोगी बलवान न हो जाय मैथुनसे परहेज़ करना चाहिये।

सर्वज्वरहरवटी

(भा. प्र. । म. खं. २)

प्र. सं. २१२२ "**जीर्णज्वरारि रसः** (१)" देखिये।

(८१६६) सर्वज्वराङ्कुशवटी

(भै. र.; र. रा. सु. । ज्वरा.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं मरिचं नागरं कणा।
त्वचं जैपालकं कुष्ठं भूनिम्बं मुस्तकं पृथक्॥
चूर्णयित्वा समांशन्तु कज्जलया सह मेलयेत्।
निर्गुण्ड्या स्वरसे चापि आर्द्रकस्य रसे तथा॥
भावनां कारयित्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
वटिकां भक्षयित्वा तु वस्त्रवेष्टञ्च कारयेत्॥
एषा ज्वराङ्कुशवटी सर्वज्वरविनाशिनी।
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान्॥
प्राकृतं वैकृतं वापि वातश्लेष्मकृतञ्च यत्।
अन्तर्गतं बहिःस्थञ्च निरामं साममेव वा॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, सोंठ, पीपल, दालचीनी, शुद्ध जमालगोटा, कूठ, चिरायता और नागरमोथा समान भाग ले कर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर संभालु तथा अदरकके रसकी एक एक भावना दे कर (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक गोली खिला कर रोगीको कपड़ा उढ़ा देना चाहिये।

इसके सेवनसे पृथक् पृथक् दोषोंसे उत्पन्न, सान्निपातिक, विषम, प्राकृत, वैकृत, वातकफज, अन्तर्गत, बहिस्थ, निराम और साम आदि समस्त ज्वरोंका नाश होता है।

(८१६७) सर्वज्वरारिरसः (१)

(र. र. स. । उ. अ. १२)

तालं ताम्रमयोरजश्च चपला तुत्थाभ्रकं कान्तकम्।
नागं स्याच्च समांशकं सुमृदितं मूलं च पौनर्नवम्॥

भृङ्गीकासहरीपुनर्नवमहामन्दारपत्रोद्भवैः ।
कल्कं वालुकायन्त्रपाचितमिदं सर्वज्वरस्या-
न्तकृत् ॥

शुद्ध हरताल, ताम्र-भस्म, लोह-भस्म, पीपलका चूर्ण, नीले थोथेकी भस्म, अभ्रक-भस्म, कान्तलोह-भस्म, सीसा-भस्म और पुनर्नवा-मूलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको भंगरा, कसौंदी, पुनर्नवा और बकायन; इनके पत्तोंके रसकी १-१ भावना दे कर शराव-सम्पुटमें बन्द करके बालुकायन्त्रमें पाक करें ।

इसे सेवन करनेसे समस्त ज्वर नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**—१ रत्ती ।)

(८१६८) सर्वज्वरारिरसः (२)

(वृ. यो. त. । त. ५९ ; यो. त. । त. २०)

एकभागो रसो भागद्वयं शुद्धं च गन्धकम् ।
विषस्य च त्रयो भागा निम्बुद्रवविमर्दिताः ॥
जेपालजाः पञ्चभागा निम्बुद्रवविमर्दिताः ।
कृमिघ्नप्रमिता वट्यः कार्याः सर्वज्वरच्छिदाः॥
शृङ्गवेरेण दातव्या वटिकैका दिनानने ।
जीर्णज्वरे तथाऽजीर्णे सामे वा विषमे तथा ॥
सर्वज्वरं निहन्त्याशु दावो वनमिवानलः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, नीबूके रसमें घुटा हुवा शुद्ध बछनाग ३ भाग, और नीबूके रसमें घुटा हुवा शुद्ध जमालगोटा ५ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको नीबूके रसमें खरल करके बायबिडंगके समान गोलियां बना लें ।

इनमेंसे एक एक गोली प्रातः काल अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे जीर्ण ज्वर, अजीर्ण, आम-ज्वर और विषम ज्वरका नाश होता है ।

(८१६९) सर्वतोभद्ररसः (१)

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम् ।
तोलकं तोलकार्द्धश्च हिंगुलोत्थरसन्तथा ॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजपत्रं लवङ्गकम् ।
जातीकोषफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥
कुष्ठं तालीशपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम् ।
हरीतकी मरीचञ्च शृङ्गवेरं विभीतकम् ॥
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम् ।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्य्याद्द्विगुञ्जिकाम् ॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयापि वा ।
रोगं ज्ञात्वानुपानं च प्रातःकुर्य्याद्विचक्षणः ॥
हन्ति मन्दानलान्सर्वानामदोषं विसूचिकाम् ।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवन्तथा ॥
आनाहं मूत्रकृच्छ्रं च संग्रहग्रहणीं वमिम् ।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम् ।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन कथितः पुरा ।
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥

अभ्रक-भस्म २॥ तोले, शुद्ध गन्धक १। तोला, हिंगुलोत्थ पारद ७॥ माशे तथा कपूर, केसर, जटामांसी, तेजपात, लौंग, जावत्री, जाय-फल, छोटी इलायची, गजपीपल, कूठ, तालीस-पत्र, धायके फूल, दालचीनी, नागरमोथा, हर्र,

काली मिर्च, सोंठ, बहेड़ा, पीपल और आमला; इनका चूर्ण ३॥।-३॥। माशे ले कर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर सबको पानीके साथ खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक एक गोली पानके साथ अथवा शहद या मिसरी आदि रोगोचित अनुपानके साथ प्रातःकाल सेवन करनेसे अग्निमांद्य, आमदोष, विसूचिका, पित्तकफज रोग, वातकफज रोग, अफारा, मूत्रकृच्छ्र, संग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तज जीर्णज्वर, धातुगत विषम ज्वर, पांच प्रकारकी कास, कामला और पाण्डुका नाश होता है।

(८१७०) सर्वतोभद्ररसः (२)

(भै. र. । मसूरिका.)

सिन्दूरमभ्रं रजतञ्च हेम
समेन भागेन मनःशिलाञ्च ।
द्विशस्तु वांशी निखिलेन तुल्यं
सम्मर्दयेद् गुग्गुलुकं प्रयत्नात् ॥
ततस्तु गुञ्जाप्रमितां विधाय
वटीं प्रयुञ्जीत यथानुपानम् ।
यं सर्वतोभद्ररसो न हन्ति
न सोऽस्ति रोगः खलु देहिदेहे ॥

रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, चांदी भस्म, स्वर्ण-भस्म और शुद्ध मनसिल १-१ भाग, बंसलोचनका चूर्ण २ भाग तथा शुद्ध गूगल सात भाग ले कर प्रथम गूगलमें थोड़ा घी मिला कर उसे पतला करें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको अच्छी तरह मर्दन करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे यह रस समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

(८१७१) सर्वतोभद्ररसः (३)

(रसे. सा. स. ; र. रा. सु. । प्लीहा.)

सूतं गन्धं तपनगगनं कान्तलौहस्य चूर्णम् ।
कृत्वैकस्मिन् दृषदि पेषितं भृङ्गवेरस्य वारा ॥
युञ्ज्याद्रोगे यकृति गुदजे प्लीह्नि सर्वज्वरेषु ।
शोथे पाण्डौ कृमिकृतगदे सर्वतः कामलायाम् ॥
कासे श्वासे च मेहे जठरजलगदे सर्वदोषप्रभूते ।
ख्यातो योगः सुरमणिकृतः सर्वरोगैकहन्ता ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म और कान्त लोह-भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें और कज्जली हो जाने पर अदरकके रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे यकृत्, अर्श, प्लीहा, सर्व प्रकारके ज्वर, शोथ, पाण्डु, कृमि रोग, कामला, कास, श्वास, प्रमेह और जलोदरका नाश होता है।

(८१७२) सर्वतोभद्ररसः (४)

(र. र. ; र. च. ; धन्व. । रसायना.)

सूतं कान्तं उपलगगनं ताप्यकं शुद्धतालम् ।
राजावर्तं सुरभि मधुकं मानसी चेति तुल्यम् ॥
सर्वैस्तुल्यं दृशदिदलितं भृङ्गतोयेन सर्वम् ।
गोलीभूतं भवति विमलः सर्वभद्राभिधानः ॥

शूलं गुल्मं जठरजरुजां वातजान सर्वरोगान् ।
वह्नेर्मान्द्यं कफकृतगदं पीनसं च ज्वरार्तिम् ॥
प्लीहं पाण्डुं क्षयकृतरुजः कुष्ठरोगानशेषान् ।
मूर्धारोगानरुचिनिचयं हन्ति रोगांस्तथाऽन्यान् ॥

शुद्ध पारद, कान्त लोह-भस्म, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, राजावर्त-भस्म, स्वर्ण-भस्म, मुलैठी और दुर्गगुप्पी समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको भंगरेके रसमें खरल करके (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

यह रस शूल, गुल्म, जठरपीड़ा, समस्त वातज रोग, अग्निमांद्य, कफज रोग, पीनस, ज्वर, प्लीहा, पाण्डु, क्षय, कुष्ठ, शिरो रोग और अरुचिका नाश करता है।

(८१७३) सर्वतोभद्रलोहः (१)

(भै. र. । अम्लपि.)

लौहचूर्णं मृतं ताम्रमभ्रकञ्च पलं पलम् ।
शुद्धसूतस्य कर्षैकं गन्धकार्द्धपलं तथा ॥
माक्षिकस्य विशुद्धस्य कर्षं शुद्धशिलापरा ।
सार्द्धकर्षं विशुद्धञ्च शिलाजतु तथापरम् ॥
गुग्गुलोश्चापि कर्षैकं शाणमानं परस्य च ।
चूर्णं विडभल्लातवह्निश्वेतार्कमूलजम् ॥
करिकर्णपलाशञ्च तालमूली पुनर्णवा ।
घनामृता नागबला चक्रमर्दकमुण्डिरी ॥
भृङ्गकेशशतावर्यौ वृद्धदारं फलत्रयम् ।
त्रिकटुश्चापि सर्वेषां प्रत्येकञ्च नयेद्भिषक् ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य घृतेन मधुना सह ।
स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य ततः कुर्याद्भिषग्वित् ॥
द्विगुञ्जादिक्रमेणैव लौहं सर्वरसायनम् ।
अम्लपित्तं जयेच्छीघ्रं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥
तद्वदर्शांसि सर्वाणि सर्वमेव भगन्दरम् ।
पक्तिशूलञ्च शूलञ्च तथामं कुक्षिसम्भवम् ॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
आमवातं तथा शोथमग्निमान्द्यं सुदुस्तरम् ॥
कामलां वातगुल्मञ्च पिडकागरगृध्रसी ।
कासश्वासारुचिहरं वृष्यमेतद्विशेषतः ॥
सर्वव्याधिहरं प्रोक्तं यथेष्टाहारसेविनः ।
यक्ष्माणं रक्तपित्तञ्च वातरोगं विनाशयेत् ॥
संज्ञया सर्वतोभद्रलौहो रसवरः स्मृतः ॥

लोह-भस्म, ताम्र भस्म और अभ्रक भस्म ५-५ तोले, शुद्ध पारद १। तोला, शुद्ध गन्धक २॥ तोले, स्वर्णमाक्षिक-भस्म १। तोला, शुद्ध मनसिल १। तोला, शुद्ध शिलाजीत २२॥ माशे, शुद्ध गूगल १। तोला तथा वायविडंग, शुद्ध भिलावा, चीतामूल, सफेद आकको जड़की छाल, हस्तिकर्ण पलाशकी छाल, तालमूली (मूसली), पुनर्नवाकी जड़, नागरमोथा, गिलोय, नागबला (गंगेरन), पंवाड़के बीज, गोरखमुण्डी, भंगरा, सुगन्धबाला, शतावर, विधारा, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण ३॥-३॥ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको भली भांति खरल करें और सबके एकजीव हो जाने पर थोड़ा थोड़ा शहद और

घी मिला कर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे २ रत्तीकी मात्रासे खिलाना आरम्भ करें और रोगीकी शक्तिके अनुसार थोड़ी थोड़ी मात्रा बढ़ाते रहें ।

इसके सेवनसे सर्वोपद्रवयुक्त अम्लपित्त, अर्श, भगन्दर, पक्तिशूल, शूल, पेटकी आम, वातरक्त, कुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, आमवात, शोथ, कष्टसाध्य, अग्निमांद्य, कामला, वातज गुल्म, पिडिकाएं, गरविष, गृध्रसी, कास, श्वास, अरुचि, यक्ष्मा, रक्तपित्त और वातज रोगोंका नाश होता है । यह अत्यन्त वृष्य है ।

(८१७४) सर्वतोभद्रलोहः (२)

(व. से. । रसायना.)

गव्येन नवनीतेन स्वर्णमाक्षिकरुद्रचिकौ ।
निक्षिप्य लेपयेल्लोहं कान्तपाण्ड्यादि सम्भवम् ॥
ध्मापयेत्कर्म्मकाराग्नौ सिक्त्वा सिक्त्वा पुनः पुनः ।
त्रिफला क्वाथतोयेन ततो निर्वापयेत्सुधीः ॥
पश्चात्सम्पिष्यते लोहं दाहयेत्पुटवह्निना ।
अम्लेराकृष्य विधिना जलधौतं प्रयत्नतः ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कृत्वा बहु घृष्टन्तु कारयेत् ।
पलं चतुष्टयं तस्य मधुकस्यापि तत्समम् ॥
पथ्या धात्री विभीतक्या रसश्च त्रिकटोस्तथा ।
वचावह्निविडङ्गानि कृष्णजीरकजीरके ॥
दन्ती पुनर्नवामूली प्रत्येकं पलसङ्ख्यया ।
एलायाः कर्षेकं दद्यात्कार्षिकं कटुरोहिणी ॥
एलार्धं गन्धकं देयं पलार्द्धं गुग्गुलु त्वचम् ।
चूर्णयित्वा विधानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
घृतमष्टपलं दत्वा क्षीरं चतुः शरावकम् ।
चतुर्विंशपलक्वाथे त्रिफलाशेषवारिणा ॥
वस्त्रपूतेन विधिवत्पाचयेत्ताम्रभाजने ।
दार्वीं लोहमयीं गृह्य पाकं कुर्याद्विपाकवित् ॥
शीतलश्च ततः कुर्यात्स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।
रक्तिकादि क्रमेणैव घृतेन मधुना सह ॥
सम्मर्द्य लोहदण्डेन लोहपात्रे च भक्षयेत् ।
क्षीरानुपानं दातव्यं पित्तदुष्टाय रोगिणे ॥
तथामकोष्ठिने दद्याद्यवक्षारस्य वारिणा ।
मूर्च्छाछर्दितृषारक्तपित्तशूलादिसम्भवे ॥
क्षीरं शर्करया मिश्रमनुपानं प्रयोजयेत् ।
चतुर्धा ग्रहणीरोगे वातपित्तकफोद्भवे ॥
ज्ञात्वा कुक्षौ मनाक्छूलमामगन्धं सलोहितम् ।
कुक्षौ दक्षिणतः शूलं नाभिमण्डलतोपरि ॥
वातपित्तनिदानं हि लक्षयित्वा प्रदीयते ।
नारिकेलश्च समधुपानश्च हितमिच्छता ॥
रक्तच्छर्द्यां विगन्धत्वमीषत्पानन्तु दापयेत् ।
कटिशूले त्रिकशूले कुक्षिशूले अरोचके ॥
आमवातनिदाने च मुखस्रावे प्रकीर्तितम् ।
पार्श्वशूले त्रिकशूले नाभिमण्डलतोपरि ॥
ज्वरे सशूले सामे च वायुमामं निवर्त्तयेत् ।
क्वचिन्नाभेरधः शूले वामपार्श्वे कचिद्भवेत् ॥
शूले वा परिणामे च भ्रमे पृष्ठे कचित्क्वचित् ।
शीतलेन यवक्षारमनुपानश्च वारिणा ॥

स्वर्णमाक्षिकचूर्ण और पुनर्नवामूलका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको गायके मक्खनमें खरल करें और फिर कान्तलोह या किसी अन्य

प्रकारके लोहके पत्रोंपर उसका लेप करके उन्हें भट्टीमें रख कर धौंकनीसे धमावें और लोहपत्रोंके अग्निके समान लाल हो जाने पर उन्हें त्रिफला काथमें बुझा दें। इसी प्रकार बार बार उक्त मिश्रणका लेप करके धमावें और त्रिफला क्वाथमें बुझाते रहें। जब लोहका चूर्ण हो जाए तो उसे नीबू आदिके रसमें खरल करके टिकियां बनावें और शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। इसी प्रकार बहुतसी पुटें दे कर वारितर भस्म बनावें। इस भस्मको पानीसे धो कर अम्लता दूर करें और फिर अच्छी तरह खरल करके अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण बना लें।

यह भस्म २० तोले, मुलैठीका चूर्ण २० तोले, तथा हर्र, आमला, बहेड़ा, शुद्ध पारा, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, चीतामूल, बायबिडंग, काला जीरा, सफेद जीरा, दन्तीमूल और पुनर्नवामूल; इनका चूर्ण ५–५ तोले एवं इलायची और कुटकीका चूर्ण १।–१। तोला तथा शुद्ध गन्धक ७॥ माशे, शुद्ध गूगल २॥ तोले और दालचीनीका चूर्ण २॥ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करें। तत्पश्चात् (कलई की हुई) तांबेकी कढ़ाईमें यह चूर्ण और १ सेर घी, ४ सेर दूध तथा ३ सेर त्रिफलेका वस्त्रपूत काथ डालकर सबको लोहेकी करछीसे चलाते हुवे मन्दाग्निपर पकावें। जब पाक तैयार हो जाय तो उसे शीतल करके स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे १ रत्तीसे आरम्भ करके रोगीकी शक्त्यनुसार मात्रा बढ़ाते हुवे खिलाना चाहिये। औषधको लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे थोड़े घी और शहदके साथ थोड़ी देर खरल करके खाना चाहिये।

अनुपान—पित्तदुष्टिमें दूध। पेटमें आम हो तो जवाखारका पानी। मूर्च्छा, छर्दि, तृषा, रक्तपित्त और शूलादिमें खांडयुक्त दूध। चार प्रकारको ग्रहणी, कुक्षिशूल, आमगन्ध वाली रक्तवमन, दहिनी कुक्षिके शूल, नाभिशूल और वातज तथा पित्तज रोगोंमें मधुयुक्त नारियलका पानी।

यह रस रक्तवमन, कटिशूल, त्रिकशूल, कुक्षिशूल, आमवात, मुखस्राव, पार्श्वशूल, नाभिसे ऊपर होने वाले शूल और शूलयुक्त आमज्वर तथा आमवातको भी नष्ट करता है।

जो शूल कभी नाभिके नीचे और कभी बाईं पसलीमें होता हो उसमें तथा परिणाम शूल, भ्रम और पृष्ठशूलमें यह रस खिला कर ऊपरसे ठण्डे पानीमें जवाखार मिला कर पिलाना चाहिये।

सर्वरोगहरबालरसः

प्र सं. ४७४३ " बालरसः " देखिये।

(८१७५) सर्वरोगान्तकवटी

(र. र. स. । उ. अ. १६ ; र. चं. । अजीर्णा.)

शुद्धसूतं विषं गन्धमजमोदं फलत्रयम्।
सर्जीक्षारं यवक्षारं वह्निसैन्धवजीरकम्॥
सौवर्चलं विडङ्गानि सामुद्रं त्र्यूषणं समम्।
विषमुष्टिः सर्वतुल्या जम्बीराम्लेन मर्दितम्॥

मरिचाभां वटीं खादेद्वह्निमान्द्यप्रशान्तये ।
पथ्या शुण्ठा गुडं चानु पलार्धं भक्षयेत्सदा ॥
अग्निमान्द्ये वटी ख्याता सर्वरोगकुलान्तका ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक तथा अजमोद, हर्र, बहेड़ा, आमला, सज्जीखार, यवक्षार, चीतामूल, सेंधा नमक, जीरा, सञ्चल (काला नमक), बायबिड़ंग, सामुद्र लवण, सेंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग एवं शुद्ध कुचलेका चूर्ण सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके काली मिर्चके समान गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे अग्निमांद्यका नाश होता है ।

इनमेंसे एक गोली खा कर हर्र, सोंठ और गुड़का समान भाग मिलित २॥ तोले (व्य. मा. ३ माशे) चूर्ण खाना चाहिये ।

(८१७६) सर्वलोकाश्रयरसः

(र. र. स. । उ. अ. १५ ; र. रा. सु. । अर्शो.)

शुद्धं सूतं पलं गन्धं गन्धार्धं तालताप्यकम् ।
अमृतं रसकं चैव तालकार्धविभागिकम् ॥
एतेषां कज्जलीं कुर्याद्दृढं सम्मर्द्य वासरम् ।
त्रिदिनं मर्दयेच्चाथ दत्वा निम्बुजलं खलु ॥
वटीकृत्य विशोष्याथ काचकूप्यां निधापयेत् ।
निष्कतुल्याऽर्कपत्रेण पिधायास्यं प्रयत्नतः ॥
सार्धाङ्गुष्ठमितोत्सेधं मृत्स्नया तां विलिप्य च ।
ततो भाण्डतृतीयांशे सिकतापरिपूरिते ॥
निधाय सिकता मूर्ध्नि सिकताभिः प्रपूरयेत् ।
रुध्वास्यं तदधो वह्निं ज्वालयेत्सार्धवासरम् ॥
स्वाङ्गशीतलितं काचकूप्या आकृष्य तं रसम् ।
पटचूर्णं विधायाथ ताम्रभस्मं पलद्वयम् ॥
पलार्धममृतं चैव मरिचं च चतुष्पलम् ।
एकीकृत्य क्षिपेत्सर्वं नारिकेरकरण्डके ॥
साज्यो गुञ्जाद्विमानो हरति रसवरः ॥
सर्वलोकाश्रयोऽयं वातश्लेष्मोत्थरोगान्गुदज-
नितगदं शोषपाण्ड्वामयं च ।
यक्ष्माणं वातशूलं ज्वरमपि निखिलं
वह्निमान्द्यं च गुल्मं ॥
तत्तद्रोगघ्नयोगैःसकलगदचयं दीपनं तत्क्षणेन ॥

शुद्ध पारद और गन्धक ५-५ तोले; शुद्ध हरताल और स्वर्णमाक्षिक-भस्म २॥-२॥ तोले तथा शुद्ध बछनाग और खपरिया १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें। तदनन्तर उसे नीबूके रसमें ३ दिन खरल करके छोटी छोटी गोलियां बना लें और उन्हें सुखाकर कपड़-मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें डाल कर उसके मुखको ताम्र पत्रसे बन्द करके उसके ऊपर १॥ अंगुल मोटा मिट्टीका लेप करके सुखा लें । तत्पश्चात कपड़मिट्टी की हुई एक मिट्टीकी हांडीका तीसरा भाग रेतीसे भर कर उसके ऊपर वह शीशी रक्खें और हांडीको रेतसे भर दें । हांडी इतनी बड़ी होनी चाहिये कि शीशीका मुंह उससे बाहर न निकले । इसके बाद हांडीके मुख पर शराव ढक कर उस पर कपड़मिट्टी करके सुखा लें और हांडीको भट्टी पर चढ़ा कर उसके नीचे १॥ दिन

(३६ घंटे) आग जलावें और फिर हांडीके स्वांगशीतल होने पर शीशीसे औषध निकाल कर बारीक चूर्ण बनावें तथा उसमें ५-५ तोले अभ्रक भस्म और ताम्र-भस्म, २॥ तोले शुद्ध बछनागका चूर्ण और २० तोले काली मिर्चका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करके शीशीमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

अनुपान—घीमें मिला कर सेवन करें ।

इसके सेवनसे वातकफज रोग, अर्श, शोष, पाण्डु, राजयक्ष्मा, वातज शूल, ज्वर, अग्निमांद्य और गुल्मका नाश होता है ।

(८१७७) सर्वसुन्दररसः (१)

(र. प्र. सु. । अ. ८)

सूतगन्धविषमेव कारये-
द्भागवृद्धमथ मर्दयेत्ततः ।
आर्द्रवह्निजरसेन यत्नतः
पाचितो हि लवणाख्ययन्त्रके ॥
भक्षितो हि किल वल्लमात्रया
क्षौद्रकेण सह पिप्पलीयुतः ।
पूर्णचन्द्रवदयं हि सेवितो
यक्ष्म हा भवति वातरोग हा ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध बछनाग ३ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और फिर अदरक तथा चीतेके रसकी एक एक भावना दे कर शरावसम्पुटमें बन्द करके बालुकायन्त्रमें पकावें । जब स्वांग-शीतल हो जाय तो औषधको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३ रत्ती । (**व्यवहारिक मात्रा**-१ रत्ती ।)

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा और वातजरोगोंका नाश होता है ।

इसमें पथ्यादिकी व्यवस्था "पूर्ण चन्द्र रस" के समान करनी चाहिये ।

(८१७८) सर्वसुन्दररसः (२)

(र. चि. म. । स्त. ७)

गद्याणैकं सुकर्पूरं कनकं कङ्गुणी पुरम् ।
समं समं गृह्य सर्वमेकत्र परिमर्दयेत् ॥
हैमाह्वा सर्पगरलं भावना कार्यते ततः ।
अहिफेनरसस्यापि शृङ्गीविषस्य भावनाः ॥
वृक्षादन्या भवेदेका शोषयित्वा पुनः पुनः ।
योग्यमात्रा वटी कार्या पश्चादेकाऽथ दीयते ॥
गलग्रहे ग्रहण्यां तमतिसारे प्रयोजयेत् ।
अयमर्शःसु देयः स्याद्वातजेषु पुनः पुनः ॥
कफजेषु तथा द्वन्द्वसमुद्भूतेषु दीयते ।
रोगयोग्यानुपानेन दातव्यः सर्वसुन्दरः ॥
नारङ्गं शर्करा द्राक्षा दधि रम्भाफलं तथा ।
घृतभृतं प्रयुञ्जीत भक्तं नक्तं प्रशस्यते ॥
तत्रोपयोगिकं यच्च प्रयोज्यं तद्भिषग्वरैः ।
शीतलं सलिलं दद्यात्सुवासकुसुमानि च ॥
अतितापो भवेदङ्गे घृताक्तं शीतवारिणा ।
स्नापयेद्रोगिणं पश्चात्तदासौ लभते सुखम् ॥

कपूर, स्वर्ण-भस्म, मालकंगनी और शुद्ध गूगल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल

करके सत्यानाशीमूल (चोक) के क्वाथ, सांपके विष, अफीमके पानी, बछनागके क्वाथ और बिदारीकन्दके रसकी १-१ भावना दे कर (मूंगके बराबर) गोलियां बना लें।

हर बार भावना देनेके पश्चात् औषधको सुखा लेना चाहिये।

इसे रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे गलग्रह, ग्रहणी, अतिसार, वातार्श, कफार्श और द्वन्द्वजार्शका नाश होता है।

पथ्य—नारङ्गी, खांड, मुनक्का, दही, केला और घृत डालकर पकाया हुवा भात। भोजन रातके समय कराना चाहिये।

यदि अधिक गरमी हो तो शीतल जल पिलाना, सुगन्धित फूलोंकी माला पहिनाना और शरीर पर घीकी मालिश कराके शीतल जलसे स्नान कराना चाहिये।

(८१७९) सर्वाङ्गकम्पारिरसः

(र. र. । वातव्या.)

मृतं सूतं ताम्रं मर्दयेत्कटुकद्रवैः ।
एकविंशतिवारं च शोष्यं पेष्यं पुनः पुनः ॥
चणमात्रा वटी भक्ष्या रसः सर्वाङ्गकम्पजित् ॥

पारद भस्म और ताम्र भस्म समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) के क्वाथकी २१ भावना दें। हरेक भावनाके पश्चात् औषधको सुखा लेना चाहिये। २१ भावना पूरी होनेके पश्चात् चनेके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे सर्वाङ्गकम्प (समस्त शरीरका कांपना) रोगका नाश होता है।

(८१८०) सर्वाङ्गसुन्दरचिन्तामणिरसः

(र. र. स. । अ. १२)

अभ्रकं गन्धकं सूतं तोलैकैकं पृथक्पृथक् ।
गृहीत्वा विषतोलार्धं तोलार्धं तिन्तिडीफलम् ॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा मर्दयेत्खल्वमध्यतः ।
श्लक्ष्णतां याति तद्यावत्तावत्सम्मर्दयेच्छनैः ॥
विस्तारे परिणाहे च गर्तां कृत्वा षडङ्गुलाम् ।
फणिवल्लीदलान्यन्तर्गर्तायां प्रक्षिपेन्नरः ॥
पर्णेषु सूतकल्कं तं गर्तायां स्थापयेद्दृढम् ।
कल्कादुपरि तत्पर्णैर्गर्तावक्त्रं प्रपूरयेत् ॥
गर्तोपरि पुटं देयं तत आरण्यकोत्पलैः ।
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा समाकर्षेत्ततः परम् ॥
सूतलिप्तदलैः सार्धं कल्कं खल्वे विमर्दयेत् ।
तोलार्धममृतं क्षिप्त्वा तोलार्धं तिन्तिडीफलम् ॥
स्थापयेत्खल्वितं कल्कं योजयेद्गुञ्जमात्रया ।
शृङ्गवेराम्भसा युक्तं तीक्ष्णचित्रकसैन्धवैः ॥
सन्निपाते तथा वाते त्रिदोषे विषमज्वरे ।
अग्निमान्द्ये ग्रहण्यां च तथा देयोऽतिसारिणि ॥
भोजनं दधिभक्तं च रसेऽस्मिन्संप्रयोजयेत् ।
व्याध्यादिकं यथा कुर्यादुदकं ढालयेत्ततः ॥
एष योगवरः श्रीमान्प्राणिनां प्राणदायकः ।
चिन्तामणिरिति ख्यातो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥

अभ्रक-भस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारा १-१ तोला तथा शुद्ध बछनाग और तिन्तड़ी फल (इमलीके फल) आधा आधा तोला ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें

अन्य ओषधियां मिला कर इतना खरल करें कि सब चीजें अत्यन्त बारीक हो जाएं। तदनन्तर ६ अंगुल लम्बा, छः अंगुल चौड़ा और ६ अंगुल गहरा गढ़ा खोद कर उसमें आधी दूर तक पान बिछा दें और उनके ऊपर उपरोक्त औषध रखकर गढ़ेको मुंह तक पानोंसे भर दें एवं उसके ऊपर अरने उपले (कण्डे) रख कर पुट लगा दें। पुटके स्वांग शीतल होने पर राखको अलग करके गढ़ेके भीतरसे औषध और पानोंको निकाल कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें और उसमें आधा आधा तोला शुद्ध बछनागका चूर्ण तथा इमलीके फल (बीजरहित) मिला कर अच्छी तरह खरल करके बारीक करें।

मात्रा—१ रत्ती।

औषधको काली मिर्च, चीतामूल और सेंधानमकके समान भाग मिश्रित (१ माशा) चूर्णमें मिला कर अदरकके रसके साथ सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे सन्निपात, वातव्याधि, त्रिदोषज विषम ज्वर, अग्निमांद्य संग्रहणी और अतिसारका नाश होता है।

पथ्य—दही भात।

यदि इसके सेवनसे अधिक बेचैनी हो तो शरीर पर शीतल जल डालना चाहिये।

(८१८१) सर्वाङ्गसुन्दररसः (१)

(र. का. धे. । अर्शो.)

हेमाभ्रगन्धरसटङ्कणताप्यताम्रं
चन्द्राग्निबाणरसयुग्मगुणाब्धिमानम् ।
चूर्णीकृतं सविषमौक्तिकविद्रुमांशं
जम्बीरनीरफलसत्वपुटेन पक्वम् ॥
सिद्धो भवेद्रससिताहविनालीढः
सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो गदारिः ।
जीर्णज्वरारुचिबलक्षयमेह–
हृद्रुग्भयभ्रमगुदोदररोगहन्ता ॥

स्वर्ण–भस्म १ भाग, अभ्रक–भस्म ३ भाग, शुद्धगन्धक ५ भाग, शुद्ध पारद ६ भाग, सुहागा २ भाग, स्वर्णमाक्षिकभस्म ३ भाग, ताम्र–भस्म ४ भाग तथा शुद्ध बछनाग, मोती और प्रबाल (मूंगा) १–१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको जम्बीरी नीबूके रस और त्रिफलाके क्वाथकी एक एक भावना देकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें। तदनन्तर पुटके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे मिश्री और घीके साथ सेवन करनेसे जीर्णज्वर, अरुचि, बलक्षय, प्रमेह, हृदय–पीड़ा, भ्रम, गुदरोग और उदररोगोंका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ रत्ती)

(८१८२) सर्वाङ्गसुन्दररसः (२)

(रसे. सा. सं. । रेचना; र. चं.)

शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च विषञ्च जयपालकम् ।
कटुत्रयञ्च त्रिफला टङ्कणञ्च समांशकम् ॥
अस्य मात्रा प्रयोक्तव्या गुञ्जात्रयसमा ततः ।
सर्वेषु ज्वररोगेषु सामवाते विशेषतः ॥
नाशयेच्छ्वासकासञ्च अग्निमान्द्यं विशेषतः ।
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, शुद्ध जमालगोटा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और सुहागेकी खील समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर अच्छी तरह खरल करके (पानीकी सहायता से) ३-३ रत्तीकी गोलियां बनालें।

इनके सेवनसे (विरेचन होकर) ज्वर, आमवात, श्वास, कास और अग्निमांद्यका नाश होता है।

(८१८३) सर्वाङ्गसुन्दररसः (३)

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

गगनं शोधितं ग्राह्यं पलैकमिष्टकासमम् ।
टङ्कणं स्याच्चतुर्थांशं शाणार्द्धं त्रिसुगन्धिकम् ॥
कर्पूरं नलदश्चैव जातीकोषं जलं घनम् ।
नागेश्वरलवङ्गश्च कुष्ठं सत्रिफलं तथा ॥
जलेन वटिका कार्या छायया शोषयेत्तु ताम् ।
प्रदरं नाशयेत्सर्वं साङ्गमर्दं सवेदनम् ॥
अशीतिर्वातजान् रोगान् मन्दाग्निमतिदारुणम् ।
सज्वरग्रहणीं चैव रक्तपित्तमरोचकम् ॥
कासान् पञ्च प्रतिश्यायं श्वासं हृद्रोगमेव च ॥

ईंटके समान रंगवाली अभ्रकभस्म ५ तोले, सुहागेकी खील १। तोला; दालचीनी, इलायची, तेजपात, कपूर, खस, जावत्री, सुगन्धबाला, नागरमोथा, नागकेसर (अथवा सीसाभस्म), लौंग, कूठ, हर्र, बहेड़ा और आमला; इनका चूर्ण २॥-२॥ माशे लेकर सबको एकत्र खरल करके पानीकी सहायतासे (३-३ रत्तीकी) गोलियां बनाकर छायामें सुखालें।

इनके सेवनसे अङ्गमर्द और पीड़ायुक्त समस्त प्रकारके प्रदर, ८० प्रकारके वातज रोग, कष्टसाध्य अग्निमांद्य, ज्वरयुक्त संग्रहणी, रक्तपित्त, अरुचि, पांच प्रकारकी कास, प्रतिश्याय, श्वास और हृद्रोगोंका नाश होता है।

(८१८४) सर्वाङ्गसुन्दररसः (४)

(भै. र. । राजय.)

रसं गन्धश्च तुल्यांशं द्वौ भागौ टङ्कणस्य च ।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम् ॥
हेमभस्मार्द्धभागश्च सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
निम्बूद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत्ततः ॥
पश्चाल्लघुपुटं दत्त्वा सुशीतश्च समुद्धरेत् ।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम् ॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे ॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥
अर्शसि ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ।
निहन्ति वातजान् रोगान् श्लैष्मिकांश्च विशेषतः॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा ।
भक्षयेत् पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक १ भाग, सुहागा २ भाग, मोतीकी भस्म १ भाग, प्रवाल (मूंगा)-भस्म १ भाग, शंख-भस्म १ भाग, और स्वर्ण-भस्म आधा भाग लेकर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य

औषधें मिलाकर नीबूके रसमें खरल करके सबका एक गोला बनावें और उसे शराव–सम्पुट में बन्द करके लघुपुटमें पकावें। तत्पश्चात् पुटके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर उसमें आधा भाग तीक्ष्णलोह–भस्म और चौथाई भाग शुद्ध हिंगुल मिलाकर अच्छी तरह खरल करें।

इसके सेवनसे राजयक्ष्मा, वातपित्तज्वर, भयंकर सन्निपात, अर्श, संग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, और वातज तथा कफज रोगोंका नाश होता है।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ, या घीके साथ, पानके साथ, या मिश्रीके साथ अथवा अदरकके रसके साथ खाना चाहिये।

(मात्रा–२ रत्ती।)

(८१८५) सर्वाङ्गसुन्दररसः (५)

(वृ. नि. र.; र. र.। शूला.)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम्।
चूर्णयेल्लवणं पञ्च एतद्दशकतुल्यकम्॥
मृतं स्वर्णं च निक्षिप्य सूतान्तर्दशमांशकम्।
सूततुल्यं वत्सनाभं चूर्णं भाव्यं दिनावधि॥
विषमुष्टया जया वासा विजया रक्तशाकिनी।
वर्वरी च महाराष्ट्रीद्रवैर्धस्तूरजैस्तथा॥
रुध्वा तुषपुटे पाच्यं समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम रसो गुञ्जा चतुष्टयम्॥
भक्षयेद्घृतशुण्ठीभ्यां हन्ति गुल्मं सशूलकम्॥

पारद–भस्म, ताम्र–भस्म, शुद्ध मनसिल, स्वर्णमाक्षिक–भस्म, शुद्ध हरताल, सेंधा नमक, काला नमक, बिड लवण, काच लवण, और सामुद्र लवण १–१ भाग एवं स्वर्ण भस्म दसवां भाग और शुद्ध बछनाग १ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर कुचला, जया, बासा (अडूसा), भांग, रक्तशाकिनी, तुलसी, महाराष्ट्री (जलपीपल) और धतूरा; इनके स्वरस या क्वाथमें पृथक् पृथक् १–१ दिन खरल करके गोला बनावें और उसे सुखाकर शराव–सम्पुटमें बन्द करके तुषोंकी अग्निमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर पीसलें।

मात्रा–४ रत्ती।

इसे सोंठके चूर्ण और घीके साथ सेवन करने से गुल्म तथा शूलका नाश होता है।

(८१८६) सर्वाङ्गसुन्दररसः (६)

(र. का. धे.। प्रमेहा.)

रसालनागशैलानि तुत्थं गन्धकसोमलम्।
सहदेवीनिम्बबिम्बीरसैः सप्त च सप्त च॥
दिनानि सम्मर्द्य दृढं कूप्यां द्वात्रिंशयामकम्।
वह्निसीवो मेहहरो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः॥

शुद्ध पारद, शुद्ध हरताल, सीसा भस्म शुद्ध मनसिल, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध सोमल (संखिया) समान भाग लेकर प्रथम पारे–गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधं मिलाकर सहदेवीके रस या क्वाथ, नीमकी छालके क्वाथ और कन्दूरीके रसकी

पृथक् पृथक् सात सात भावना देकर कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरकर ३२ पहर (बालुकायन्त्रमें) पकावें। तदनन्तर यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस लें।

इसके सेवनसे प्रमेह नष्ट होता है।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(८१८७) सर्वाङ्गसुन्दररसः (७)

(रसे. सा. सं. । अपस्मारा.; धन्व.; र. रा. सु. । अपस्मारा.)

शुद्धसूताभ्रताम्राथो हिङ्गुलं कार्षिकं समम्।
गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥
सप्तपर्णार्कस्नुक् क्षीरवासावातारिवारिणा।
विषमुष्टिसमं सर्वं पेष्यन्तद्गोलकी कृतम् ॥
विपचेद्वालुकायन्त्रे द्वियामान्ते समुद्धरेत्।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥
सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलनिषूदनः।

शुद्ध पारद, अभ्रक भस्म, ताम्र–भस्म, लोह भस्म, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध गन्धक १–१ भाग एवं शुद्ध कुचलेका चूर्ण सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और उसमें अन्य औषधें मिलाकर सप्तपर्ण (सातविन), स्नुही (सेंड–थूहर) और आक के दूध तथा बासा (अडूसा) के स्वरस और अरण्डमूलके क्वाथकी १–१ भावना देकर सबका एक गोला बनावें और उसे सुखाकर शराव–सम्पुटमें बन्द करके २ पहर बालुकायन्त्रमें पकावें। तदनन्तर जब वह स्वांगशीतल हो जाए तो औषधको निकालकर उसमें १–१ भाग पीपल और शुद्ध बछनागका चूर्ण मिलाकर खरल कर लें।

यह समस्त वातविकारों और समस्त प्रकारके शूलोंको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ रत्ती)

(८१८८) सर्वाङ्गसुन्दररसः (८)

(पीतभस्म)

(रसे. सा. सं.; र. चि. म. । स्त. २; र. का. धे.)

मर्दयेद्रसगन्धौ च हस्तिशुण्डीद्रवैर्दृढम्।
भूधात्रिकारसैर्वापि पर्य्यन्तं दिनसप्ततः ॥
विघृष्य वालुकायन्त्रे मूषायां सन्निवेशयेत्।
दिनमेकं ददेदग्निं मन्दं मन्दं निशावधि ॥
एवं निष्पद्यते पीतः शीतः सूतस्तु गृह्यते।
पर्णखण्डेन तद्गुञ्जां भक्षयेच्छ्रूयतां मम ॥
क्षुद्बोधं कुरुते पूर्वमुदराणि विनाशयेत्।
ज्वराणां नाशनः श्रेष्ठस्तद्वच्छ्रीसुखकारकः ॥
हृदयोत्साहजननः स्वरूपतनयप्रदः।
बलप्रदः सदा देहे जरानाशनतत्परः ॥
अङ्गभङ्गादिकं दोषं सर्वं नाशयति क्षणात्।
एतस्मान्नापरः सूतो रसात्सर्वाङ्गसुन्दरात् ॥

समान भाग शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे हाथीसूंडी या भुइंआमलेके रसमें सात दिन खरल करके मूषामें बन्द करें और बालुकायन्त्रमें १ दिन मन्दाग्नि पर पकावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल लें। इसका रंग पीला होगा।

मात्रा—१ रत्ती। पानमें रख कर खाना चाहिये।

इसके सेवनसे उदर रोगोंका नाश होता और क्षुधाकी वृद्धि होती है। यह रस ज्वरनाशक श्रेष्ठ औषध है। इसे सेवन करनेसे कान्ति, सुख, उत्साह और बलकी वृद्धि होती तथा जरा और अङ्गभङ्गादिका नाश होता एवं स्वरूपवान पुत्रकी प्राप्ति होती है।

(८१८९) सर्वाङ्गसुन्दररसः (९)

(धन्व.; र. चं.; रसे. सा. स.; र. रा. सु.। शूला)

शुद्धसूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम्।
रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लौहमभ्रं सनागरम्॥
चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वन्तु तुल्यकम्।
गन्धकं मिश्रयेत्सर्वं रसैरेषां विभावयेत्॥
शुण्ठी जयन्ती विजया महाराष्ट्रिकधूर्तजैः।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोयं विष्णुनिर्म्मितः॥
खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां माषमात्रं दिने दिने।
कफवातामयं हन्ति चानुपानं वदाम्यहम्॥
व्योषं सौवर्चलं हिङ्गु करञ्जबीजसंयुतम्।
पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वशूलनिकृन्तनम्॥

शुद्ध पारद, ताम्रभस्म, शुद्ध मनसिल, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, शुद्ध हरताल, चांदी-भस्म, स्वर्ण-भस्म, बंग-भस्म, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, सोंठ का चूर्ण, पांचों नमक और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सोंठके क्वाथ, जयन्ती (जैत) के पत्तोंके रस, भांगके रस (या क्वाथ); जलपीपलके रस और धतूरेके पत्तोंके रसकी १-१ भावना देकर सुखा लें।

मात्रा—१ माशा। (**व्यवहारिक मात्रा**—१-२ रत्ती।)

इसके सेवनसे कफवातज रोग और समस्त प्रकारके शूलोंका नाश होता है।

इसे सोंठ और अरण्डमूलके चूर्णके साथ मिलाकर खाना चाहिये और ऊपर से सोंठ, मिर्च, पीपल, संचल (काला नमक), हींग और करञ्ज बीजका समान भाग मिश्रित चूर्ण (१ माशा) गर्म पानीके साथ पीना चाहिये।

(८१९०) सर्वाङ्गसुन्दररसः (१०)

(रसे. सा. सं.; र. चं.। राजयक्ष्मा.; र. रा. सु.; र. र.; धन्व; भै. र.। राजयक्ष्मा.)

रसं गन्धञ्च तुल्यांशं द्वौ भागौ टङ्कणस्य च।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम्॥
हेमभस्मार्द्धभागञ्च सर्वं खल्ले विमर्दयेत्।
निम्बुद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत्ततः॥
पश्चाद्गजपुटं दत्त्वा सुशीतञ्च समुद्धरेत्।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम्॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मनिकृन्तनः।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे॥
अर्शःसु ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे।
निहन्ति वातजान्रोगाञ्छ्लैष्मिकांश्च विशेषतः॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा॥

शुद्ध पारद और गन्धक १-१ भाग, सुहागा २ भाग, मोती, प्रवाल-भस्म और शंख-भस्म

१-१ भाग एवं स्वर्ण-भस्म आधा भाग लेकर पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर नीबूके रसमें खरल करके सबका एक गोला बना लें और उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर उसमें आधा भाग तीक्ष्ण लोह-भस्म और चौथाई भाग शुद्ध हिंगुल मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लें।

इसके सेवन से घोर वातपित्तज ज्वर, भयंकर सन्निपात, अर्श, संग्रहणी, प्रमेह, भगन्दर, गुल्म, वातज रोगों और विशेषतः कफज रोगोंका नाश होता है।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ, अथवा घीके साथ, या पानके साथ अथवा मिसरीके साथ या अदरकके रसके साथ सेवन करना चाहिये।

मात्रा—१ रत्ती।

सर्वाङ्गसुन्दररसः (११)

(र. च. । अतिसा.)

प्र. सं. ५५३९ "**महा गन्धक**" को यदि पकाया न जाए और सब चीजोंको एकत्र मिलाकर खरल कर लिया जाय तो उसीका नाम "**सर्वाङ्गसुन्दर**" हो जाता है।

सर्वाङ्गसुन्दररसः (१२)

प्र. सं. ४४८१ "प्राणेश्वरो रसः" देखिये।

(८१९१) सर्वारोग्यरसः (सर्वारोग्यवटी)

(र. र. स. । उ. अ. १६)

रसं पलमितं तुल्यं शुद्धनागेन संयुतम्।
द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे सतैले निक्षिपेत्क्षितौ॥
ततो द्रुते विनिक्षिप्य गन्धके तद्विलोड्य च।
पुनरायसपात्रे तत्क्षिप्त्वा प्रद्राव्य निक्षिपेत्॥
तत्तुल्यं जारयेत्तालं पुनः सञ्चूर्ण्य पूर्ववत्।
तत्तुल्यां जारयेत्सम्यक् कुनटीं परिशोधिताम्॥
तत्तुल्यं चूर्णितं तस्मिन्क्षिपेन्नागं निरुत्थकम्।
तावदेव मृतं तार्क्ष्यं सर्वमन्यच्च तत्समम्॥
तीक्ष्णायःखर्परं व्योम हिङ्गुलं च शिलाजतु।
पृथक्कर्षांशमानेन पट्कोलं कट्फलं मिशी॥
दीप्यकं च चतुर्जातं रेणुकोशीरवेल्लकम्।
तुम्बरु भार्ङ्गिकां रास्नां कङ्कोलं चोरपुष्करम्॥
रिङ्गिणीं चिरतिक्तं च बीजान्युन्मत्तकस्य च।
पलद्वयं च लाङ्गल्याः सर्वेषां द्वादशांकम्॥
वत्सनाभं सितं भूरि विनिक्षिप्य ततः परम्।
त्रिफलानां दशाङ्गीणां कषायेण ततः परम्॥
जयन्त्यार्द्रकवासानां मार्कवस्य रसैस्तथा।
भावयित्वा च कर्तव्या वटकाश्चणकोपमाः॥
एकैका वटिका सेव्या कुर्यात्तीव्रतरां क्षुधाम्।
विषूचीमरतिं हिक्कां सेव्यं स्वादु च शीतलम्॥
सामां च ग्रहणीं सदाङ्गतुदनं शोषोत्कटं पाण्डुता-
मार्तिं वातकफत्रिदोपजनितां शूलं च गुल्मामयम्॥
हिक्काध्मानविषूचिकां च कसनं श्वासार्शसां विद्रधिं
सर्वारोग्यवटी क्षणाद्विजयते रोगांस्तथान्यानपि॥

५ तोले शुद्ध पारेमें ५ ताले शुद्ध सीसेके पत्र मिलाकर खरल करें और दानोंके मिल जाने

पर लोहे की कढ़ाईमें थोड़े तेलके साथ पिघलावें और पिघल जाने पर स्वच्छ भूमि पर डाल दें। तदनन्तर कढ़ाईमें ५ तोले गन्धकको पिघलाकर उसमें उपरोक्त मिश्रण डालकर अच्छी तरह आलोडित करें और उसमें १० तोले शुद्ध हरतालका चूर्ण जरा जरासा डालकर जारित करें। तदनन्तर उसे अग्निसे नीचे उतारकर ठंडा करके चूर्ण करलें और पुनः कढ़ाईमें चढ़ाकर उसमें उपरोक्त विधिसे १० तोले शुद्ध मनसिलका चूर्ण जारित करें। तत्पश्चात् उसे अग्निसे नीचे उतारकर ठण्डा कर लें और १०-१० तोले निरुत्थ नागभस्म, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, तीक्ष्ण लोह-भस्म, शुद्ध खपरिया, अभ्रक भस्म, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध शिलाजीत तथा १।-१। तोला पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, कायफल, सौंफ, अजवायन, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, रेणुका, खस, बायबिडंग, तुम्बरु, भरंगी, रास्ना, कङ्कोल, चोरपुष्पी, पोखरमूल, कटेली, चिरायता, और धतूरेके बीज; इनका चूर्ण तथा १० तोले लांगलीकी जड़का चूर्ण और सबका बारहवां भाग शुद्ध सफेद बछनागका चूर्ण मिलाकर खरल करें एवं त्रिफला और दशमूलके क्राथ तथा जयन्ती (जैत), अदरक, बासे और भंगरे के स्वरसकी १-१ भावना देकर चनेके समान गोलियां बनालें।

मात्रा-१ गोली

इसके सेवनसे क्षुधा अत्यन्त तीव्र हो जाती है।

यह रस विषूचिका, बेचैनी, हिचकी, आमयुक्त संग्रहणी, अंगतोद, शोष, पाण्डु, वातज कफज और त्रिदोषज शूल, गुल्म, अफारा, खांसी, श्वास, अर्श और विद्रधि आदि अनेक रोगोंको नष्ट करता है।

इसके सेवन कालमें मधुर और शीतल पदार्थ खिलाने चाहियें।

(८१९२) सर्वेश्वरचूर्णम् (१)

(र. र. । शूला.)

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं चूर्णं शम्बूकजाननम्।
यवक्षारं तथा रक्तकठिनी कामरूपिणी ॥
शक्रचूर्णं समधुकं क्षारं दावदलोद्भवम्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणन्ततः ॥
मण्डूरं द्विगुणं कार्यं गोमूत्रैः सप्तचैव हि।
कलम्बी स्वरसैः शुद्धं शोधयेत्सुविचक्षणः ॥
एकीकृत्य प्रयत्नेन चूर्णं सर्वेश्वराह्वयम्।
प्राङ्मध्यान्तक्रमेणैव भोजनस्य प्रयोजयेत् ॥
मात्रया चानुपानञ्च शुष्कपत्रजले पयः।
गव्यमर्द्धशृतं कृत्वा शूलाच्च सर्वशः ॥
मुच्यते मानवो यादृग्विष्णोरोराधने भवात्।
प्लीहगुल्मोदरादींश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
कासं पञ्चविधं चापि उरुस्तम्भामवातकान्।
इत्यादेव प्रयोगोऽयमश्विभ्यां निर्मितः पुरा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, घोंघों (क्षुद्र शंख) के मुख, जवाखार, शुद्ध हिंगुल, खड़िया मिट्टी, असगन्ध, इन्द्रजौ, मुलैठी और चीतेके पत्तोंका क्षार १-१ भाग तथा तपा तपा कर सात बार गोमूत्रमें और सात बार कलम्बी (पोई शाक) के रसमें बुझाया हुवा मंडूर

सबसे दो गुना ले कर सबको एकत्र मिला कर अच्छी तरह खरल करें।

इसे भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें सेवन करना चाहिये।

अनुपान—शुष्क पट्टशाक (पटुवाशाक) का चूर्ण, जल, अथवा पकाते पकाते आधा रहा हुवा गोदुग्ध।

इसके सेवनसे हर प्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अग्निमांद्य, अरुचि, पांच प्रकारकी कास, उरुस्तम्भ और आमवातका नाश होता है।

(८१९३) सर्वेश्वरचूर्णम् (२)

(र. र. । रसायना.)

चित्रकं माणकश्चैव शूरणं घण्टकर्णकम्।
ग्रन्थिकं त्रिफलाव्योषं कट्फलं सपुनर्नवम् ॥
दण्डोत्पलं वृश्चिकाली रुदन्ती काकमाचिका।
सूर्यावर्त्तत्रिवृद्दन्ती क्रिमिघ्नं कुष्ठमुस्तकम् ॥
शतपुष्पा वचा चव्यं पत्रं रास्ना च तोलकम्।
माक्षिकाणाञ्च ताम्राणां पलं गन्धकसूतयोः ॥
अभ्रकं द्विपलं ग्राह्यं पात्रे कृत्वा दृढोपमे।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य द्विगुणं मृतमायसम् ॥
चूर्णं सर्वेश्वरो नाम सर्वामयनिबर्हणम् ॥

चीतामूल, मानकन्द, सूरण (जिमीकन्द), घण्टकर्ण, पीपलामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, कायफल, पुनर्नवामूल, दण्डोत्पल, वृश्चिकाली (बर्हण्टा), रुदन्ती (रुद्रवन्ती), मकोय, सूर्यावर्त (हुल हुल), निसोत, दन्तीमूल, बायबिड़ंग, कूठ, नागरमोथा, सोया, बच, चव्य, तेजपात और रास्ना; इनका चूर्ण १।-१। तोला, स्वर्णमाक्षिक-भस्म १। तोला, ताम्र-भस्म १। तोला, शुद्ध पारद ५ तोले, शुद्ध गन्धक ५ तोले और अभ्रक भस्म १० तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करें। तदनन्तर उसमें सबसे दो गुनी लोह-भस्म मिला कर पुनः खरल करें।

इसके सेवनसे शरीर रोगरहित हो जाता है।

(८१९४) सर्वेश्वरपर्पटीरसः

(र. र. स. । उ. अ. १८)

रसो रसलोहानि कार्षिकाणि पृथक् पृथक्।
तेषु लोहानि सर्वाणि पाषाणाः कठिनास्तथा ॥
घनसत्वं च तत्सर्वं भस्मीकृत्य प्रयोजयेत्।
रत्नानि वल्लतुल्यानि भस्मीकृत्य च सर्वशः ॥
एभिश्चतुर्गुणः सूतो गन्धस्तस्माच्चतुर्गुणः।
कृत्वा कज्जलिकां ताभ्यां क्षिपेल्लोहस्य भाजने ॥
प्रद्राव्य बदराङ्गारे निक्षिपेत्तदनन्तरम्।
रसोपरसलोहानां रत्नानामपि सर्वशः ॥
चूर्णं भस्म च निक्षिप्य काष्ठेनाऽऽलोड्य मेलयेत्।
ततश्च षोडशांशेन मिश्रयित्वाऽरुणं विषम् ॥
गोमयोपरि निक्षिप्त निक्षिपेत्कदलीदले।
पत्रेणान्येन रम्भायाः समाच्छाद्य प्रयत्नतः ॥
कराभ्यां चिपटीकृत्य क्षिपेदुपरि गोमयम्।
ततः शीतं समाहृत्य चूर्णयित्वा च पर्पटीम् ॥

विनिक्षिपेत्करण्डान्तः सम्पूज्य रसभैरवम् ।
सर्वेश्वराभिधानेयं पर्पटी परिकीर्तिता ॥
सर्वलोकहितार्थाय नन्दिनेयं विनिर्मिता ।
रक्तियुक्तप्रमाणेयं मरिचार्द्रसमन्विता ॥
विद्रधौ षट्प्रकारायां देया वर्ध्मसु सप्तसु ।
क्षयरोगेषु सर्वेषु पाण्डुरोगे विशेषतः ॥
ग्रहणीरोगभेदेषु गुल्मेष्वष्टविधेषु च ।
मूलरोगेष्वशेषेषु प्लीहायां यकृदामये ॥
प्रमेहे सोमरोगे च प्रदरे जठरार्तिषु ।
विशेषेण च मन्दाग्नौ सर्वेष्वावर्तकेषु च ॥
अनुक्तेष्वपि रोगेषु तत्तदौचित्ययोगतः ।
रसोऽयं खलु दातव्यः शिवतुल्यपराक्रमः ॥
यद्यद्द्रव्यमसात्म्यं हि जनानामुपजायते ।
तत्सर्वं सात्म्यमायाति रसस्यास्य निषेवणात् ॥
दुःसाध्यो विद्रधिर्मासाच्छान्तिमायाति निश्चितम्

अभ्रक सत्व-भस्म, वैक्रान्त भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, रौप्यमाक्षिक भस्म, शुद्ध शिलाजीत, तुत्थ भस्म, चपल भस्म, शुद्ध खर्पर भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध गेरु, कसीस भस्म, फिटकरीकी खील, शुद्ध हरताल (अथवा हरताल भस्म), शुद्ध मनसिल, शुद्ध सुरमा, कंकुष्ठ, लोहभस्म, स्वर्णभस्म, रौप्य भस्म, ताम्र भस्म, नाग भस्म, वंग भस्म, कांस्य भस्म और पित्तल भस्म १।-१। तोला तथा वैक्रान्त भस्म, सूर्यकान्त भस्म, हीरा भस्म, मोती भस्म, माणिक्य भस्म, चन्द्रकान्तमणि-भस्म, राजावर्त भस्म, पन्ना भस्म, पुखराज भस्म, महा नीलमणि भस्म, पद्मराग भस्म, प्रवाल भस्म, वैडूर्य भस्म और नीलम भस्म ३-३ रत्ती तथा शुद्ध पारद सबसे चार गुना और शुद्ध गन्धक पारदसे चार गुना ले कर पारे गन्धककी कज्जली बनावें और उसे घृतलिप्त लोहपात्रमें डाल कर बेरीके कोयलोंकी अग्निपर पिघलावें तत्पश्चात् उसमें उपरोक्त समस्त औषधें डाल कर लकड़ीसे चला कर सबको अच्छी तरह मिला दें। तदनन्तर सबका १६ वां भाग लाल बछनागका चूर्ण मिलावें और फिर भूमि पर गायका गोबर बिछा कर उस पर केलेका पत्ता बिछावें और उसपर उपरोक्त औषध डालकर उसके ऊपर अन्य कदली पत्र ढक कर दोनों हाथोंसे जल्दीसे दबा दें कि जिससे औषधकी बारीक पर्पटी (पपड़ी) बन जाए। तत्पश्चात् ऊपर वाले केलेके पत्ते पर गायका गोबर बिछा दें। औषधके शीतल हो जाने पर उसे निकाल कर पीस लें और सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

अनुपान—अदरकका रस और काली मिर्चका चूर्ण।

इसके सेवनसे ६ प्रकारकी विद्रधि, ७ प्रकारका वर्ध्म रोग, क्षय, पाण्डु, संग्रहणी, गुल्म, अर्श, प्लीहा, यकृद्रोग, प्रमेह, सोम रोग, प्रदर, जठर रोग, अग्निमान्द्य, उदावर्त, तथा और भी अनेक रोग नष्ट होते हैं।

यह शिवके समान पराक्रमी, अत्यन्त प्रभावशाली रस है।

मनुष्योंको हानिकर पदार्थ भी इसके सेवनसे सात्म्य हो जाते हैं। यह रस १ मासमें दुस्साध्य विद्रधिको भी अवश्य नष्ट कर देता है।

(८१९५) सर्वेश्वररसः (१)

(र. रा. सु. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

रसाद् द्विगुणितो गन्धश्चतुर्भागस्तु टङ्कणम् ।
तथाष्टभागो जैपालस्त्र्यहं सम्मर्दयेद्दृढम् ॥
वल्लो नवज्वरं हन्ति रसः सर्वेश्वराभिधः ।
वल्लद्वयं हरीतक्या युक्तो वातज्वरं तथा ॥
द्विवल्लो मल्लखण्डेन पीतः क्षौद्रयुतं कफम् ।
गुञ्जा जीर्णज्वरं घोरं प्रतिलङ्घितवांस्तथा ॥
वल्लस्तु सूतिकारोगे पिप्पलीमधुसंयुतः ।
पञ्चवर्षस्य बालस्य यवमात्रो ज्वरं जयेत् ॥
गुञ्जाभिवृद्ध्या विषमान् यावच्चातुर्थकावधि ।
मल्लखण्डेन संयुक्तो हन्याद्दोषत्रयं तथा ॥
यवानीकृमिशत्रुभ्यां वल्लो हन्यात्कृमीनपि ।
एवं सर्वगदान्हन्ति रसो भैरवभाषितः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, सुहागेकी खील ४ भाग और शुद्ध जमालगोटा ८ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको ३ दिन तक खरल करें ।

इसमेंसे ३ रत्ती रस उचित अनुपानके साथ देनेसे नवीन ज्वर नष्ट होता है । इसे वात ज्वरमें ६ रत्ती मात्रानुसार हर्रके चूर्णके साथ, कफज्वरमें ६ रत्तीकी मात्रासे गुड़की शक्कर और शहदके साथ तथा जीर्णज्वरमें १ रत्ती उचित अनुपानके साथ देना चाहिये । जीर्णज्वरमें रोगीको यथाशक्ति लंघन भी कराना चाहिये । सूतिकारोगमें ३ रत्ती यह रस पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देना चाहिये ।

पांच वर्षके बालकोंको यह रस १ जौके बराबर देनेसे उनका ज्वर नष्ट होता है । १ रत्तीसे ४ रत्ती तक, गुड़की शक्करके साथ देनेसे यह रस समस्त विषमज्वरों और सन्निपातज्वरोंको नष्ट करता है । अजवायन और बायबिडंगके चूर्णके साथ ३ रत्ती यह रस देनेसे कृमि रोग नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१–२ रत्ती ।)

(८१९६) सर्वेश्वररसः (२)

(रसे. सा. सं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । कासा.)

रसगन्धकयोश्चूर्णमेकीकृत्याभ्रकन्तथा ।
हेमभिश्च समं कृत्वा मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥
ऊषणानि लवङ्गैला टङ्कणं हेमतुल्यकम् ।
कण्टकार्या रसैर्भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥
शिग्रुबीजार्द्रकरसैः सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विभीतकफलत्वचम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक–भस्म, स्वर्ण पत्र (या भस्म), तथा सोंठ, काली मिर्च, पीपल, लौंग, छोटी इलायची और सुहागेकी खील; इनका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर अभ्रक तथा स्वर्ण मिला कर दो पहर खरल करें । तत्पश्चात् उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर कटेलीके रस या काथकी २१ भावना तथा सहंजनेके बीजोंके क्वाथ और अदरकके रसकी ७–७ भावना दे कर (३–३ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे कास, श्वास और क्षयका नाश होता है ।

अनुपान—बहेड़ेके फलका क्वाथ ।

(८१९७) **सर्वेश्वररसः** (३)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । गुल्मा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

ताम्रं दशगुणं स्वर्णात्स्वर्णपादं कटुत्रिकम् ।
त्रिकटुत्रिफला तुल्या त्रिफलार्द्धमयोरजः ॥
अयसोर्द्धं विषश्चैव सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
सर्वेश्वररसो नाम रौधिरगुल्मनाशनः ॥

स्वर्ण-भस्म १ तोला, ताम्र-भस्म १० तोले तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला; इनका समान-भाग मिलित चूर्ण ६ माशे; लोह-भस्म १।। माशा और शुद्ध बछनागका चूर्ण ६ रत्ती ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसके सेवनसे रक्तगुल्म नष्ट होता है।

(**मात्रा**—१ रत्ती ।)

(८१९८) **सर्वेश्वररसः** (४)

(र. र. स. । उ. अ. २०)

पालिकं ताम्रगन्धाभ्रं कर्षांशं लोहपारदम् ।
स्नुह्यर्कक्षीरवातारिजम्बीरोशीरवारिभिः ॥
मर्दितं वालुकायन्त्रे स्वेदयेद्दिवसत्रयम् ।
कर्षं कणाया निष्कं च विषस्यास्मिन्विनिक्षिपेत् ॥
एष सर्वेश्वरः सद्यो गुञ्जामात्रः प्रसुप्तिजित् ॥

ताम्र-भस्म ५ तोले, शुद्ध गन्धक ५ तोले, अभ्रक-भस्म ५ तोले, लोह-भस्म १। तोला और शुद्ध पारद १। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर कज्जली बनावें और उसे सेंड (स्नुही-थूहर) के दूध, आकके दूध, अरण्डमूलके क्वाथ, जम्बीरी नीबूके रस तथा खसके क्वाथकी १-१ भावना दे कर शराव-सम्पुटमें बन्द करके ३ दिन तक बालुका-यन्त्रमें स्वेदित करें और फिर औषधको पीस कर उसमें १। तोला पीपलका चूर्ण तथा ३।।। माशे शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर खरल करें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसके सेवनसे सुप्तवातका नाश होता है ।

(नोट--बृ. नि. र. में वातरक्ताधिकारमें सर्वेश्वर रसका एक पाठ लगभग इसके समान ही है । उसमें अभ्रकके स्थानमें १। तोला हिंगुल है तथा भावना द्रव्योंमें अरण्ड और खसके स्थानमें विषमुष्टि, धतूरा और करवीर है। भावनाओंकी संख्या सात सात है । अनुपानमें धतूरेका रस लिखा है ।)

र. र. स. अ. २१ में स्पर्शवातनाशक "सर्वेश्वर रस"का एक अन्य पाठ है जिसमें १। तोला हिंगुल तथा ५-५ तोले सोंठ, मिर्च, पीपल और चांदी भस्म अधिक है एवं गन्धक १० तोले है, भावना द्रव्य बृ. नि. र. के उपरोक्त पाठके अनुसार हैं । शेष प्रयोग नं. ८१९८ के समान है । पाठ कोंकी जानकारीके लिये र. र. स. का पाठ पृथक भी दिया है । प्र. सं. ८१९९ देखिये ।

(८१९९) **सर्वेश्वररसः** (५)

(र. र. स. । उ. अ. २१)

कर्षमात्रं रसस्य स्याल्लोहहिङ्गुलयोरपि ।
भास्वद्गगनयोश्चापि गन्धकस्य पलं मतम् ॥
व्योषगन्धकताराणां प्रत्येकं तु पलं पलम् ।
निम्बुद्रावेण सम्मर्द्य भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥

हेमार्कस्नुक्पयोवासाहयारिविषमुष्टिभिः ।
पिण्डितं वालुकायन्त्रे स्वेदयेद्दिवसत्रयम् ॥
कर्षमात्रं तु पिप्पल्या निष्कमात्रं विषस्य च ।
सञ्चूर्ण्य दापयेदत्र रसे सर्वेश्वराभिधे ॥
गुञ्जामात्रं ददीतास्य स्पर्शवातापनुत्तये ॥

शुद्ध पारद १। तोला, लोह–भस्म १। तोला, शुद्ध हिंगुल १। तोला, ताम्र–भस्म ५ तोले, अभ्रक–भस्म ५ तोले, शुद्ध गंधक ५ तोले, तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध गन्धक और चांदी भस्म ५–५ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर नीबूके रस, धतूरेके रस, आकके दूध, स्नुही (सेंड–थूहर) के दूध, बासाके रस, कनेरकी जड़के रस या क्वाथ और कुचलेके क्वाथकी सात सात भावना दे कर सबका एक गोला बनावें और उसे शराव–सम्पुटमें बन्द करके ३ दिन तक बालुका-यन्त्रमें स्वेदित करें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर उसमें १। तोला पीपलका चूर्ण और ३॥। माशे शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर खरल करें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसके सेवनसे स्पर्शवातका नाश होता है।

(८२००) सर्वेश्वररसः (६)

(भै. र.। प्रमेहा.)

स्वर्णं रौप्यं मौक्तिकञ्च विशुद्धञ्च शिलाजतु ।
लौहमभ्रं तथा ताप्यं मधुयष्टी च पिप्पली ॥
मरिचं विश्वकञ्चेति सर्वमेकत्र कारयेत् ।
विमर्द्य प्रहरं यत्नात्कज्जलाकृतिसन्निभम् ॥
केशराजभृङ्गराजशक्राशनरसे पृथक् ।
प्रमेहं विविधं हन्ति मधुमेहं सुदुस्तरम् ॥
वातपित्तसमुद्भूतं तथा कफसमुद्भवम् ।
सर्वेश्वरो रसो नाम्ना प्रमेहकुलनाशकः ॥

स्वर्ण–भस्म, चांदी–भस्म, मोती–भस्म, शुद्ध शिलाजीत, लोह–भस्म, अभ्रक–भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, मुलैठीका चूर्ण, पीपलका चूर्ण, काली मिर्चका चूर्ण, और सोंठका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर एक पहर तक इतना खरल करें कि कज्जलके समान हो जाय। तदनन्तर उसे सफेद और काले भंगरे तथा भांगके रसकी एक एक भावना देकर सुखा लें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसके सेवनसे वातज, पित्तज और कफज प्रमेह तथा कष्ट–साध्य मधुमेहका नाश होता है।

(८२०१) सर्वेश्वररसः (७)

(र. का. धे.। ज्वरा.)

कर्पूराद्द्विगुणं बीजं बीजाद्द्विगुणगन्धकम् ।
प्रतप्तवालुकान्तस्थं शुक्तियन्त्रेण तापयेत् ॥
ततोऽवतार्य तच्छीतं काचकुप्यां च रक्षयेत् ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा विषमज्वरनाशनम् ॥
दद्याद्रोगानुपानेन तत्तद्रोगनिवृत्तये ।
अयं सर्वेश्वरो नाम रसो जगति दुर्लभः ॥

कपूर १ भाग, शुद्ध पारा २ भाग और शुद्ध गन्धक ४ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें। जब कज्जली हो जाए तो उसे सीपके सम्पुटमें बन्द करके उस पर ३–४ कपरमिट्टी

करके तप्त रेतमें दबा दें और रेतके ठण्डा हो जाने पर औषधको निकाल कर पीस लें।

मात्रा—१ या २ रत्ती।

इसे उचित अनुपानके साथ देनेसे समस्त विषम ज्वरों का नाश होता है।

(८२०२) सर्वेश्वररसः (८)

(र. र. सं. । उ. अ. २० ; शा. सं. । खं. २ अ. १२; वृ. यो. त. । त. ९१ ; र. प्र. सु. । अ. ८ ; यो. त. । त. ४१ ; र. का. धे. । कुष्ठा., वातरक्ता.; भै. र. । कुष्ठ)

शुद्धसूतं चतुर्गन्धं पलं यामं विचूर्णयेत् ।
मृतताम्राभ्रलोहानां दरदं च पलं पलम् ॥
सुवर्णं रजतं चैव प्रत्येकं दशनिष्ककम् ।
माषैकं मृतवज्रं च तालसत्त्वं पलद्वयम् ॥
जम्बीरोन्मत्तवासाभिः स्नुह्यर्कविषमुष्टिभिः ।
मर्द्यं हयारिजैर्द्रावैः प्रत्येकेन दिनं दिनम् ॥
एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्गोलं वस्त्रवेष्टितम् ।
वालुकायन्त्रगं स्वेद्यं त्रिदिनं लघुना वह्निना ॥
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं पलैकं योजयेद्विषम् ।
द्विपलं पिप्पलीचूर्णं मिश्रं सर्वेश्वरो रसः ॥
द्विगुञ्जो लिह्यते क्षौद्रैः सुप्तमण्डलकुष्ठनुत् ।
बाकुची देवकाष्ठं च कर्षमात्रं सुचूर्णयेत् ॥
लिहेदेरण्डतैलाक्तमनुपानं सुखावहम् ॥

शुद्ध पारद २० तोले, और गन्धक ५ तोले लेकर दोनोंको १ पहर एकत्र खरल करके कज्जली बनावें। तत्पश्चात् उसमें ५-५ तोले ताम्र-भस्म, अभ्रक-भस्म, लोहभस्म और शुद्ध हिंगुल तथा ३ तोले ७॥ माशे स्वर्ण भस्म और ३ तोले ७॥ माशे चांदी-भस्म, १। माशा हीराभस्म और १० तोले हरताल का सत्व मिलाकर १-१ दिन जम्बीरी नीबूके रस, धतूरेके रस, बासा (अडूसा) के रस, स्नुही (थूहर) के दूध, आकके दूध, कुचलेके काथ या रस और कनेरकी जड़के काथमें खरल करके सबका एक गोला बनावें और उसे सुखाकर, कपड़ेमें लपेट कर (शरावसम्पुटमें बन्द करके) ३ दिन तक मृदु अग्नि पर बालुकायन्त्रमें स्वेदित करें। तदनन्तर यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस लें और उसमें ५ तोले शुद्ध बछनागका चूर्ण तथा १० तोले पीपलका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करें। *

मात्रा—२ रत्ती।

इसे सेवन करनेसे सुप्तिकुष्ठ और मण्डलकुष्ठका नाश होता है।

अनुपान—बाबची और देवदारुका समान-भाग मिश्रित १। तोला (व्यवहारिक मात्रा ३ माशा) चूर्ण अरण्डीके तेलमें मिला कर औषध खानेके पश्चात् चाटना चाहिये।

---

* र. प्र. सु. में स्वर्णमाक्षिक अधिक है तथा रस तैयार होने के पश्चात् जो औषधें मिलाई जाती हैं उनमें विषके स्थानमें सीसा भस्म है।

भै. र. कुष्ठा., तथा र. का. धे. वातरक्ता. में "शुद्ध सूतं........दरदं च पलं पलं" इन दो पंक्तियों का अभाव है।

र. का. धे. के कुष्ठाधिकार वाले पाठमें "सुवर्ण ....पलद्वयं" इन दो पंक्तियोंका अभाव है।

(८२०३) सर्वेश्वररसः (९)

(र. चि. म. । स्त. ८)

चतुरो हेमगद्याणा गालयित्वा रसं चरेत् ।
पत्राणि कारयेत्तस्य विध्यन्ते कण्टकैर्यथा ॥
जलवत्कोमलान्येव स्वच्छान्येकाङ्गुलानि च ।
शुद्धसूतस्य गद्याणा अष्टौ तानि दलानि च ॥
मिश्रं द्वादशगद्याणं खल्वे पिष्ट्वा दिनत्रयम् ।
ग्रन्थिं वस्त्रेण बध्नीयात्क्षिप्त्वात्र हेमपिष्टिकाम् ॥
मृन्मय्यां मूषिकायां तद्धार्यमतियत्नतः ।
स्थालिका वालुकापूर्णा मूषां तत्रान्तरे क्षिपेत् ॥
स्थालीं चुल्ल्यां समारोप्य मृद्वग्निं ज्वालयेदधः ।
शुद्धगन्धकगद्याणा विंशद् ग्राह्यास्ततःपरम् ॥
गोस्तनाकारमूषायां पूर्वं प्रक्षिप्य गालयेत् ।
गन्धके गलितेऽतीव जाते तैलस्य सन्निभे ॥
प्रक्षिपेद्धेमजां पिष्टिं ग्रन्थिबद्धां च गन्धके ।
क्षिपेद् गन्धकगद्याणा मुहुर्दग्धे च गन्धके ॥
एवं दिनाष्टकं स्वेद्या पिष्टी यत्नेन हेमजा ।
स्वाङ्गशीतां क्षिपेत् खल्वे दग्धां गन्धकसंयुताम् ॥
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मर्दयेच्च तम् ।
काञ्चनारतरोर्मूलत्वचा श्रीखण्डमर्दितम् ॥
वज्रीक्षीरेण चैकाहमर्कदुग्धेन वासरम् ।
एवं चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यो वर्तुलगोलकः ॥
शरावसम्पुटे क्षिप्त्वा चतुर्भिश्छाणकैः पुटः ।
दह्यते गन्धको यावत्तावद्देयो मुहुर्मुहुः ॥
मृतश्वेताभ्रकं चूर्णं चूर्णं स्यान्मृतताम्रकम् ।
चूर्णं पीतकपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम् ॥
षड् गद्याणाश्च प्रत्येकं क्षिपेत्पिष्टे च हेमजे ।
खल्वे पिष्ट्वा कृतं पिष्टं वज्रीक्षीरेण वासरम् ॥
एकाहमर्कदुग्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ।
गोलं कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटे च ताम् ॥
वस्त्रमृत्तिकया लिप्त्वा देयो गर्तान्तरे पुटः ।
स्वाङ्गशीतं नयेद्गोलं खल्वे सञ्चूर्णयेद्दृढम् ॥
तच्चूर्णं कूप्यके क्षेप्यं जातः सर्वेश्वरो रसः ।
साज्यं वल्लत्रयं ग्राह्यं द्वात्रिंशन्मरिचैः समम् ॥
अष्टादशप्रमेहेषु गुल्मयोर्वातपित्तयोः ।
बद्धकोष्ठेषु मन्दाग्नौ देयः शूलादिरोगिषु ॥
कामहीने बलक्षीणे श्लेष्मवातादिरोगेषु ।
मरिचाद्यैरजीर्णेषु ज्वरेषूष्णोदकेन च ॥
तैलक्षारादिवर्ज्यं हि भोजनं मधुरं भवेत् ॥
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते मासैकानन्तरं ध्रुवम् ।
अर्शांसि नाशमायान्ति साध्यासाध्यानि सत्वरम् ।
गुदकीला निवर्तन्ते बाहुशालगुडं भजेत् ॥
दारुणा गुदपीडा च निवर्ततास्य सेवनात् ॥

२॥ तोले शुद्ध स्वर्णके कण्टकवेधी पत्र और ५ तोले शुद्ध पारदको एकत्र मिलाकर ३ दिन तक अच्छी तरह खरल करें और फिर उस पिष्टीको वस्त्रमें बांध कर पोटली बनावें । तदनन्तर कपर-मिट्टी की हुई एक हाण्डीको चूल्हेपर चढ़ा कर उसमें गले तक रेत भर दें और उसके बीचमें गोस्तनाकार मूषा रख कर उसमें १२॥ तोले गंधक डाल दें और चूल्हेमें अग्नि जला दें । जब गन्धक पिघलकर तेलके समान हो जाए तो उसमें उपरोक्त पोटली डाल दें । जब गन्धक जल जाय तो पुनः १२॥ तोले गंधक डाल दें । इसी प्रकार आठ दिन तक बार बार गंधक डाल कर मन्दाग्नि पर जारण करते रहें । तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर जले हुवे गंधक समेत स्वर्ण और पारदकी

उपरोक्त पिट्टीको निकाल लें और उसे १-१ दिन भंगरेके रस, चन्दनके क्वाथमें पीस कर निकाले हुवे कचनारकी जड़के रस, स्नुही (थूहर-सेंड) के दूध और आकके दूधमें एक एक दिन खरल करके सबका एक गोला बनावें और उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करके चार कण्डोंकी अग्निमें फूंक दें। जब तक सम्पूर्ण गन्धक न जल जाए इसी प्रकार उक्त चारों चीजोंमें घोट घोट कर पुट देते रहें।

तत्पश्चात् उसमें ३॥-३॥ तोले सफेद अभ्रककी भस्म, ताम्र-भस्म, पीली कौड़ीकी भस्म और शंख-भस्म मिला कर १-१ दिन स्नुही (थूहर-सेंड) के दूध और आकके दूधमें खरल करके सबका एक गोला बनावें और उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करके पुट में फूंक दें तथा स्वांग-शीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

इसे ३२ काली मिरचोंके चूर्ण और घीके साथ सेवन करना चाहिये।

मात्रा—९ रत्ती (**व्यवहारिक मात्रा**—१ रत्ती।)

यह रस प्रमेह, वातज गुल्म, पित्तज गुल्म, मलावरोध, अग्निमांद्य, शूल, कामशक्तिकी कमी, बलहानि, श्लेमरोग, वातरोग, अजीर्ण और ज्वरको नष्ट करता है।

इसे अजीर्णमें काली मिरचोंके चूर्ण आदिके साथ और ज्वरमें उष्ण जलके साथ देना चाहिये।

पथ्यापथ्य—तैल क्षारादि रहित मधुर रस-युक्त भोजन हितकारी है।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे साध्यासाध्य हर प्रकारके अर्शका नाश हो जाता है और दारुण गुदपीड़ा इसके सेवनसे शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

इसे अर्श रोगमें "**बाहुशाल गुड़**" के साथ सेवन करना चाहिये।

(८२०४) सर्वेश्वररसः (१०)

(र. रा. सु. ; वृ. यो. त. । त. १०३)

तार्प्यटङ्कणहेमताररसकं गन्धं यथाभागिकं
ताम्रं विद्रुमशुक्तिजं शिखरिजं द्विघ्नं तथा भागतः।
वङ्गायोहिरसेन्द्रभूतिगगनं वैक्रान्तकान्तं त्रिशः
तत्सम्मर्द्य विभावयेत्त्रिदिवसं यष्टीत्रिजाताम्बुभिः॥
मुस्तोशीरवराटृषामृतसठीकन्याविदारीवरी-
नीरैर्गोपयसेक्षुरैश्च मुसलीगोलं पचेद्यामकम्।
मन्दाग्नौ च मृगाङ्कवत्पुनरसौ भाव्यस्ततो भावने
द्वे कस्तूरिमृगाङ्कयोर्मधुकणायुक्तोऽस्य वल्लो जयेत् ॥
मेहार्शोग्रहणीज्वरोदरपरुद्व्याधिं रुजं कामलां
पाण्डुकुष्ठभगन्दरं ज्वरगणं कृच्छ्रं च शुक्रक्षयम्॥

स्वर्णमाक्षिक-भस्म, सुहागा, स्वर्ण-भस्म, चांदी भस्म, खपरिया और शुद्ध गन्धक १-१ भाग; ताम्र-भस्म, प्रवाल-भस्म, मोती-भस्म और अपामार्गका क्षार २-२ भाग एवं बंग-भस्म, लोह-भस्म, नाग-भस्म, पारद-भस्म, अभ्रक-भस्म, वैक्रान्त-भस्म और कान्तलोह-भस्म ३-३ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर मुलैठीके क्वाथ, त्रिजात (दालचीनी, इलायची और तेजपात) के क्वाथ, नागरमोथेके क्वाथ,

खसके क्वाथ, त्रिफलाके क्वाथ, बासे (अडूसे) के स्वरस, शुद्ध बछनागके क्वाथ, कचूरके क्वाथ, घृतकुमारीके रस, विदारीकन्दके रस, शतावरके रस, गोदुग्ध, ईखके रस और मूसलीके क्वाथमें ३-३ दिन घोट कर गोला बनावें और उसे कपड़ेमें लपेट कर शराव-सम्पुटमें बन्द करके लवण-यन्त्रमें रख कर उसके मुखको शरावसे बन्द करके १ पहर मन्दाग्नि पर पकावें। जिस प्रकार कि "**मृगाङ्क रस**" पकाया जाता है। तत्पश्चात् स्वांगशीतल होने पर निकाल कर उसे कस्तूरी और कपूरके पानीकी २-२ भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

(व्यवहारिक मात्रा—१-२ रत्ती।)

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे प्रमेह, अर्श, संग्रहणी, ज्वर, उदररोग, वातव्याधि, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, भगन्दर, मूत्रकृच्छ्र और शुक्रक्षयका नाश होता है।

(८२०५) सर्वेश्वरलौहम्

(भै. र.। प्लीहा.)

शुद्धसूतं पलं गन्धं द्विपलन्तु मृताभ्रकम्।
त्रिपलं मृतताम्रश्च पलार्द्धं स्वर्णमाक्षिकम्॥
जैपालं चित्रकं मानं शूरणं घण्टकर्णकम्।
ग्रन्थिकं त्रिफला व्योषं त्रिवृता खरमञ्जरी॥
दण्डोत्पला वृश्चिकाली कुलिशं नागदन्तिका।
सूर्यावर्त्तश्च सञ्चूर्ण्य कर्षमात्रं विमर्दयेत्॥
आर्द्रकस्य रसैरेव चूर्णयित्वा पुनः क्षिपेत्।
त्रिपलं लौहचूर्णस्य ततः खादेच्छुभेऽहनि॥
सम्पूज्य भास्करं विष्णुं गणनाथं द्विजोत्तमम्।
गुञ्जाद्वयञ्च मधुना कृत्वा शीतजलं पिबेत्॥
चूर्णं सर्व्वेश्वरं नाम सर्वरोगहरं भवेत्।
कठोरप्लीहनाशाय गुल्मोदरहरं तथा॥
कामलां पाण्डुमानाहं यकृत्क्रिमिकृतामयान्।
विचर्चिमम्लपित्तञ्च कण्डूं कुष्ठं विनाशयेत्॥
प्लीहानमस्रपित्तञ्चाप्यग्निमान्द्यं सुदुस्तरम्।
श्रीकरं कान्तिजननं शुक्रायुर्बलवर्द्धनम्॥

शुद्ध पारद ५ तोले, शुद्ध गंधक ५ तोले, अभ्रक भस्म १० तोले, ताम्र भस्म १५ तोले, स्वर्ण माक्षिक-भस्म २॥ तोले, तथा शुद्ध जमालगोटा, चीतामूल, मानकन्द, सूरण (जिमीकन्द), घण्टकर्ण, पीपलामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, निसोत, अपामार्ग-मूल, दण्डोत्पला, वृश्चिकाली (बिछाटी), कुलिश (अस्थि-संहार), नागदन्ती (वृहद्दन्तीमूल अथवा हाथीसुंडी) और सूर्यावर्त (हुलहुल); इनका १।-१। तोला चूर्ण ले कर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर अदरकके रसमें खरल करें। तत्पश्चात् सुखा कर उसमें १५ तोले लोह-भस्म मिलावें और खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे शहदके साथ खा कर थोड़ा शीतल जल पीना चाहिये।

इसके सेवनसे कठोर प्लीहा, गुल्म, कामला, पाण्डु, अफारा, यकृत, कृमिजनित रोग, विचर्चिका, अम्लपित्त, कण्डू, कुष्ठ, रक्तपित्त और कष्ट-

साध्य अग्निमांद्यका नाश होता तथा कान्ति, शुक्र और आयुकी वृद्धि होती है ।

(८२०६) सर्षपाद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

सर्षपाः पृष्ठिपर्णी च तगरं पद्मकेसरम् ।
हरितालं विडङ्गानि रोध्रद्राक्षाप्रियङ्गवः ॥
चन्दनं वालकं मांसी विशाला समनःशिला ।
श्रीवासकनिशादार्वीपद्मकं ध्याममेव च ॥
सुरसप्रसवाः स्पृका रोचना गन्धनाकुली ।
अम्लकं कुङ्कुमं दारु स्थौणेयं गिरिकर्णिका ॥
जात्याः पुष्पं प्रवालं च पिप्पली मरिचानि च ।
सूक्ष्मैला सिन्दुवारं च यष्ट्याह्वं रोध्रमेव च ॥
एतान्यङ्गानि षट्त्रिंशत्पुष्येण परिपेषिताम् ।
गुटिकां कोलमात्रां च छायाशुष्कां हि कारयेत् ॥
नस्यपानाञ्जने चैषा सम्यग्लेपे च पूजिता ।
पुंसां सर्वविषार्तानां राजद्वारे रणे तथा ॥
वणिजां लाभकामानां विवादे च सदा हिता ।
सरीसृपा न तिष्ठन्ति यत्र तिष्ठति वेश्मनि ॥
अनया संप्रलिप्तस्य चौरवह्निभयं कुतः ।
सर्पदष्टभयं चापि जलराशिभयं न च ॥

सरसों, पृष्ठपर्णी, तगर, कमलकेसर, शुद्ध हरताल (या हरताल-भस्म), बायबिडंग, लोध, मुनक्का, फूलप्रियंगु, सफेद चन्दन, सुगन्धबाला, जटामांसी, इन्द्रायणकी जड़, शुद्ध मनसिल, श्रीवास धूप, हल्दी, दारुहल्दी, पद्माख, सुगन्धतृण, तुलसीकी मंजरी, स्पृका (ब्राह्मी), गोरोचन, गन्धनाकुली (गन्धरास्ना), लकुच (बढल) का फल, केसर, देवदारु, थुनेर, कोयल, चमेलीके फूल, प्रवाल-भस्म, पीपल, काली मिर्च, छोटी इलायची, संभालु, मुलैठी और लोध । पुष्य नक्षत्रमें इन सब चीजोंका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर (पानीके साथ) खरल करें और ५-५ माशे की गोलियां बना कर छाया में सुखा लें ।

इन्हें नस्य, पान, आलेपन और अञ्जन द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये ।

इनके प्रभावसे समस्त विष नष्ट होते हैं तथा राजदरबारमें, रणमें, व्यापारमें और विवादमें लाभ होता है । जिस घरमें ये गोलियां होंगी वहां सर्पादिका भय न रहेगा । शरीर पर इनका लेप करने से चोर, अग्नि, सर्प और जलका भय नहीं रहता (?)

(देखना पाठक ! लेप करके कहीं आगमें या कुवेमें न कूद पड़ना ।)

(८२०६ अ) सामज्वरहररसः

(र. का. धे. । ज्वरा.)

शुद्धं रसं समं गन्धं सूतत्रिगुणटङ्कणम् ।
चतुर्गुणं वराचूर्णं त्रिगुणं यवशूकजम् ॥
दरदं द्विगुणं सूर्यभागं जेपालमुत्तमम् ।
सप्तभागं त्रिकटुकं त्रिभागं चोरसंज्ञकम् ॥
नालिकायास्त्रयो भागास्त्रिवृतश्च तथैव च ।
एतत्सर्वं राजवृक्षमूलक्वाथेन मर्दयेत् ॥
सप्तधा मतिमान्घर्मे वज्रीक्षीरेण भावयेत् ।
शृङ्गवेरजयावह्निभृङ्गोत्थैर्भावयेद्रसैः ॥
नागवल्लीदलान्तस्थं स्वेदयेद्भूधरे शनैः ।
नागवल्लीदलयुतं श्लक्ष्णं खल्वे विमर्दयेत् ॥

वल्लद्वयमितां मात्रां दद्यीतार्द्रकनीरतः ।
सामज्वरे प्रयुक्तोऽयं रेचयेत्क्षणमात्रतः ॥
गोतक्रसहितं पथ्यं दद्याद्यामद्वयादनु ।
वरात्रिश्वगुडूचिभिः पाचनं प्राक्प्रदापयेत् ॥
चणकक्काथसहितं दद्याद्वा शालिभक्तकम् ॥

शुद्ध पारद और गन्धक १-१ भाग, सुहागेकी खील ३ भाग, त्रिफलेका चूर्ण ४ भाग, जवाखार ३ भाग, शुद्ध हिंगुल २ भाग, शुद्ध जमालगोटा १२ भाग, त्रिकुटेका चूर्ण ७ भाग, चोरक ३ भाग नलिका ३ भाग और निसोत ३ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अमलतासकी जड़के काथकी धूपमें ७ भावना दें और फिर इसी प्रकार थूहर (स्नुही-सेंड) के दूध, अद्रकके रस, जयाके रस, चीतामूलके काथ और भंगरेके रस की ७-७ भावना दें। तदनन्तर उसका १ गोला बनाकर उसे पानोंमें लपेटकर भूधरपुटमें स्वेदित करें और फिर उसके स्वांगशीतल होने पर निकाल कर पानों समेत पीस लें।

मात्रा—६ रत्ती

अनुपान—अदरकका रस. (व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती)

इसे सेवन करने से शीघ्र ही विरेचन हो कर सामज्वर नष्ट हो जाता है। इसे सेवन करनेसे पहिले ज्वरपाचनके लिये त्रिफला, सोंठ और गिलोयका क्वाथ पिलाना चाहिये।

पथ्य—औषध खानेके दो पहर पश्चात् गायके तक्रके साथ या चनेके काथके साथ शाली चावलोंका भात खिलाना चाहिये।

(८२०७) सामुद्रशुक्तिक्षारादियोगः

(ग. नि. । उदरा. ३२)

सामुद्रशुक्तिकाक्षारो यवक्षारः ससैन्धवः ।
गोदध्ना सम्प्रयुज्येत सर्वोदरविनाशनः ॥

मोतीकी सीपकी भस्म, जवाखार और सेंधा नमक का चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसे गायके दहीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके उदर रोग नष्ट होते हैं।

(**मात्रा**—४-६ रत्ती।)

(८२०८) सामुद्राद्यं चूर्णम्

(वृ. मा. ; र. र. ; व. से. । परिणामशूला. ; भै. र. ; र. का. धे. ; यो. र. । शूला. ; च. द. । परि. शूला. २७ ; ग. नि. । चूर्णा. ३ ; वृ. यो. त. । तं. ९५)

सामुद्रं सैन्धवं क्षारो रुचकं रोमकं विडम् ।
दन्ती लोहरजः किट्टं त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥
दधिगोमूत्रपयसा मन्दपावकपाचितम् ।
तद्यथाग्निबलं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥
जीर्णे जीर्णे च भुञ्जीत माषादिघृतभोजनम् ।
नाभिशूलं हरेन्नूनं गुल्मप्लीहकृतं च यत् ॥
विद्रध्यष्ठीलिकं हन्ति कफवातोद्भवं तथा ।
शूलानामपि सर्वेषामौषधं नास्त्यतः परम् ॥
परिणामसमुत्थस्य विशेषेणान्तकं मतम् ॥

समुद्र लवण, सेंधा नमक, जवाखार, संचल (काला नमक), रोमक लवण, विड लवण, दन्तीमूल, लोह-भस्म, मण्डूर-भस्म, निसोत और

जिमिकन्द--इनका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला लें और इस मिश्रणसे चार चार गुना दही, गोमूत्र और गोदुग्ध एकत्र मिला कर उसमें यह चूर्ण डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो पीस कर बारीक कर लें ।

इसे उचित मात्रानुसार उष्ण जलके साथ सेवन करना चाहिये और औषध पच जाने पर उड़दसे बने हुवे घृतयुक्त पथ्य पदार्थ खाने चाहियें ।

इसके सेवनसे नाभिशूल अवश्य नष्ट हो जाता है । साधारणतः समस्त शूलोंके लिये और विशेषतः परिणामशूलके लिये तो इससे श्रेष्ठ अन्य औषध नहीं है ।

यह चूर्ण गुल्म, प्लीहा तथा कफवातज विद्रधि और अष्ठीलाको भी नष्ट करता है ।

(मात्रा—१॥-२ माशे ।)

(८२०९) सारकल्पः

(व. सं. । ग्रहण्य.)

आलिप्य तापी करवीरकाभ्यां
वैश्वानरे प्रज्वलिते निधाय ।
तप्तं सुतप्तं विनियोज्य तक्रे
निर्वाप्य वारान्बहुशः सुलोहम् ॥
एभिः प्रकारैः सुमृताश्च लोहा-
श्चूर्णीकृताश्चापि पलानि चाष्टौ ।
सर्पिष्पलं तैलपले पलानि
चत्वारि चादाय वरारसस्य ॥
तक्रस्य चाम्लस्य चतुष्पलानि
कर्षञ्च कर्षं पृथगौषधानाम् ।
व्योषाजमोदाचविकानलानां
मूलं प्रदद्याद्दशपिप्पलीनाम् ॥
सिन्धुप्रभूतं सविडङ्गचूर्णं
तक्रेण हन्याद् ग्रहणीं समस्ताम् ।
अर्शांसि शोथं परिणामसञ्ज्ञं
शूलञ्च दीप्तिं प्रकरोति वह्नेः ॥

१-१ भाग सोनामक्खी और मनसिलके चूर्णको एकत्र मिला कर (पानी या नीबूके रसमें घोट कर) बारीक लोह पत्रोंपर लेप करें और उन्हें अग्निमें तपा कर तक्रमें बुझा दें । इसी प्रकार बार बार उक्त चीज़ोंका लेप करके तपा तपा कर तक्रमें बुझानेसे लोहेकी भस्म हो जायगी; उसे खरल करके बारीक कर लें ।

यह लोह भस्म ४० तोले, घी १० तोले, तिलका तेल २० तोले, त्रिफलेका काथ ४० तोले तथा अम्ल तक्र ४० तोले और सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, चव तथा चीता; इनका चूर्ण १।-१। तोला एवं पीपलामूल, सेंधा नमक और बायबिड़ंगका चूर्ण १२॥-१२॥ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर (मन्दाग्नि पर पका कर, जलांश शुष्क होने पर) अच्छी तरह खरल करके रक्खें ।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे समस्त ग्रहणी-विकारोंका तथा अर्श, शोथ और परिणाम-शूलका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है ।

(८२१०) सारणसुन्दररसः

(र. सं. क. । उल्ला. ४ ; र. का. धे. । उदरा.)

सूतं गन्धं समं शुद्धं सप्तधा भावयेत् क्रमात् ।
स्नुह्यर्कदुग्धैः श्रीखण्डद्वयश्यामाभयारसैः ॥
समं नेपालजं चूर्णं देयमेकत्र मर्दयेत् ।
उष्णाम्बुना वल्लयुग्मं देयमष्टगुणे गुडे ॥
मलाः पूर्वं जलं पश्चात्ततश्चामः शनैः शनैः ।
उदराच्च विनाऽन्त्राणि सर्वं निर्याति किल्बिषम्॥
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं दध्योदनं हितम् ।
जयेज्ज्वरादिकान् रोगान् रसः सारणसुन्दरः॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक समान-भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे स्नुही (थूहर-सेंड) के दूध, आकके दूध, सफेद चन्दनके क्वाथ, लाल चन्दनके क्वाथ, हर्रके क्वाथ और निसोतके क्वाथकी सात भावना दें । तदनन्तर उसमें उसके बराबर शुद्ध जमालगोटा मिला कर अच्छी तरह खरल करें और ६-६ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ रत्ती ।)

एक गोली आठ गुने गुड़में मिला कर उष्ण जलके साथ खानेसे विरेचन हो कर ज्वरादि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

इससे पहिले तो मल निकलता है, फिर पानी और अन्तमें आम निकल कर पेट साफ हो जाता है ।

(८२११) सारस्वतरसः

(र. का. धे. । स्वरभेदा.)

रसगन्धौ वचा शङ्खपुष्प्यास्त्रित्रिदिनं पुटेत् ।
चतुर्विंशतियामांस्तु वह्निं दद्यान्मृदुं भिषक् ॥
माषोऽस्य दुग्धभक्तानुपानेन स्वरभङ्गजित् ।
अयं सारस्वतो नाम रसो जाड्यापहारकः ॥

समान भाग शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बना कर उसे बच और शंखपुष्पीके रसमें ३-३ दिन खरल करके सुखा लें और आतशी शीशीमें डाल कर २४ पहर बालुकायन्त्रमें मन्दाग्नि-पर पकावें । तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—१ माशा (**व्यवहारिक मात्रा**—१ रत्ती ।)

पथ्य—दूध भात ।

इसके सेवनसे स्वर भंग और जड़ताका नाश होता है ।

(८२१२) सारिवादिवटी

(भै. र. । कर्णरो.)

सारिवां मधुकं कुष्ठं चातुर्जातं प्रियङ्गुकम् ।
नीलोत्पलं गुडूचीञ्च देवपुष्पं फलत्रिकम् ॥
अभ्रं सर्वसमञ्चाभ्रसमं लोहं विभावयेत् ।
केशराजाम्बुना पार्थक्वाथेन यवजाम्भसा ॥
काकमाचीरसेनापि गुञ्जामूलद्रवेण च ।
त्रिगुञ्जाप्रमिताः पश्चाद् विदध्याद् वटिका भिषक् ॥
धारोष्णेनापि पयसा शतमूलीरसेन वा ।
एकैकां योजयेत् प्रातः श्रीखण्डसलिलेन वा॥
निखिलान् कर्णजान् रोगान् प्रमेहानपि विंशतिम् ।
रक्तपित्तं क्षयं श्वासं क्लैब्यं जीर्णज्वरं तथा ॥
अपस्मारमदार्शांसि हृद्रोगञ्च मदात्ययम् ।
सारिवादिवटी हन्यात् स्त्रीगदानखिलानपि ॥

सारिवा, मुलैठी, कूठ, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, नागकेसर, फूलप्रियंगु, नीलोत्पल, गिलोय, लौंग, हर्र, बहेड़ा और आमला; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा अभ्रक-भस्म और लोह-भस्म १४-१४ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर भंगरेके रस, अर्जुनके काथ, जवाखारके पानी, मकोयके रस और गुञ्जा (चौंटली) की जड़के क्वाथकी १-१ भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

मात्रा—१ गोली। **समय**—प्रातःकाल।

अनुपान—धारोष्ण दूध या शतावरका रस अथवा लाल चन्दनका क्वाथ।

इन्हें सेवन करनेसे समस्त कर्ण रोग, २० प्रकारके प्रमेह, रक्तपित्त, क्षय, श्वास, क्लीवता, जीर्णज्वर, अपस्मार, मद, अर्श, हृद्रोग और मदात्यय तथा समस्त स्त्रीरोग नष्ट होते हैं।

(८२१३) सार्वभौमरसः

(रसे. सा. सं. । कासा. ; धन्व. । कासा.)

जीर्णे सुवर्णे लौहं वा यत्रत्रैव प्रदीयते।
तदायं सर्वरोगाणां सार्वभौमो न संशयः॥

यदि शृङ्गाराभ्र प्रयोग सं. ७६६९ में १ भाग स्वर्ण-भस्म या लोह-भस्म सम्मिलित कर ली जाय तो उसका नाम "**सार्वभौमरस**" हो जाता है।

(८२१४) सावित्रवटकः

(व. से. । पाण्डु.)

पलङ्कषापले द्वे तु कृष्णायसपलद्वयम्।
पथ्यामृताक्षधात्रीणां पृथगेकैकशः पलम्॥
पूतीकचव्यव्योषाग्नि कारवी कृमिनाशनैः।
चूर्णितैरर्धपलिकैस्तिलतैलं पलद्वयम्॥
त्रिफलाया रसप्रस्थे खण्डं प्रस्थयुगं पचेत्।
दार्वीप्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातकसंयुतम्॥
सावित्रवटका ह्येते यथाग्निबलभक्षिताः।
कृमिकोष्ठाग्निदौर्बल्यशोथगुल्मोदरव्रणान्॥
कामलापाण्डुरोगार्शोभगन्दरगदज्वरान्।
निहन्युर्वा तु सन्नद्धाः वयः स्थैर्यबलप्रदाः॥
वातप्रमेहशमनाश्चक्षुष्याः पुष्टिवर्द्धनाः।
भवन्त्यतिस्निग्धभुजां वातातपनिषेविणाम्॥

कृष्ण लोह-भस्म १० तोले तथा हर्र, गिलोय, बहेड़ा और आमला; इनका चूर्ण ५-५ तोले एवं करञ्जबीज, चव्य, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, कलौंजी, बायबिड़ंग, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र मिला लें। तदनन्तर त्रिफलाके २ सेर काथमें २ सेर खांड, १० तोले शुद्ध गूगल और २० तोले तिलका तेल मिला कर पकावें। जब पाक तैयार होनेके निकट हो (करछीको लगने लगे) तो उसमें उपरोक्त चूर्ण मिला कर अग्निसे नीचे उतार लें।

इसके सेवनसे कृमिरोग, अग्निमांद्य, शोथ, गुल्म, उदररोग, व्रण, कामला, पाण्डु, अर्श, भगन्दर, ज्वर और वातज-प्रमेहका नाश होता है। यह रस आयु, बल और पुष्टिवर्द्धक तथा नेत्रोंके लिये हितकारी है।

(**मात्रा**—२-३ माशे।)

(८२१५) सितमल्लगुटिका

(वृ. यो. त. । त. ८०)

सितमल्लवली कटुकीखदिरौ
हिमरश्मिदृशौ नयनाक्षिमितौ ।
गुटितं च खले त्रिदिनं सकलं
स्वरसैः किल चाऽऽर्द्रकसञ्जनितैः ॥
श्वसने कसने शूले ज्वरेऽजीर्णे तथोदरे ।
सर्पिषा रक्तिकामात्रं चोत्तारो नागवल्लिका ॥

शुद्ध सोमल (संखिया) १ भाग तथा शुद्ध गन्धक, कुटकीका चूर्ण और कत्था २-२ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर अदरकके रसमें ३ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनमें से १-१ गोली घीके साथ देनेसे श्वास, कास, शूल, ज्वर, अजीर्ण और उदररोगोंका नाश होता है।

यदि इससे वमन हो तो पान खिलाना चाहिये। (यह विषैला प्रयोग है अतः योग्य चिकित्सकके परामर्शके बिना सेवन न करना चाहिये। मात्रा—आधी रत्ती ठीक है। एक दिन में २ मात्रासे अधिक न दें।)

(८२१६) सितामण्डूरम्

(भै. र. । अम्लपि.)

धमनविधिविशुद्धं गोजले सप्तवारान्,
तरणिकिरणशुष्कं श्लक्ष्णमण्डूरचूर्णम् ।
विमलकपलमेकं पञ्चसङ्ख्यं सिताया,
अनवघृतपलाष्टौ द्व्यष्टकं गव्यदुग्धम् ॥
मृदुदहनशिखाभिर्मन्दमन्दं कटाहे,
विगतसलिलशेषं पाचयेत्पाकविज्ञः ।
वितरति गुडपाके किञ्चिदुष्णेऽवतीर्णे,
दृशदि दृढमभीक्ष्णचूर्णितं देयमाशु ॥
त्रिकटुकमधुकैलायासवैडङ्गसारं,
त्रिफलगदलवङ्गं कर्षमेकैकशश्च ।
तदनु शिशिरकाले द्वे पले माक्षिकस्य,
प्रतनुपटनिघृष्टं गालितं सम्प्रदद्यात् ॥
शुभतिथिदिवसादौ भोजनादौ निषेव्यं,
प्रथमदिवसमेनं सार्द्धमाषं तदूर्ध्वम् ।
अहरहरनुवृद्ध्या शाणमानं प्रयोज्यं,
हिमकररुचिशीतं गव्यदुग्धञ्च पेयम् ॥
नियतमयमसाध्यानम्लपित्तोत्थशूलान्,
वमिनिवहसदाहानाहमोहप्रमेहान् ।
त्रिविधरुधिररोगान् पित्तयुक्तानशेषा-
नपहरति सिताख्यो दिव्यमण्डूरयोगः ॥

उत्तम मण्डूरको अग्निमें तपा तपाकर सातबार गोमूत्रमें बुझावें और फिर तेज़ धूपमें सुखा कर बारीक चूर्ण कर लें। यह मण्डूर चूर्ण ५ तोले, मिश्री २५ तोले, पुराना घी ८० तोले और गोदुग्ध ८० तोले ले कर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार लें और उसके कुछ उष्ण रहते ही उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, मुलैठी, इलायची, धमासा, बायबिडंगकी गिरी, हर्र, बहेड़ा, आमला, कूठ और लौंग,—इनका १।—१। तोला चूर्ण मिला दें। तदनन्तर जब वह ठंडा हो जाय तो कपड़े से छना हुवा २० तोले शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे १॥ माशेकी मात्रा से आरम्भ करके प्रतिदिन थोड़ीथोड़ी मात्रा बढ़ाते हुवे १ शाण (३॥ माशे) की मात्रा कर देनी चाहिये ।

अनुपान—शीतल गोदुग्ध ।

सेवनकाल—भोजनके आदि में सेवन करना चाहिये ।

इसे सेवन करने से असाध्य अम्लपित्त और उससे उत्पन्न होने वाला शूल अवश्य नष्ट हो जाता है । यह वमन, दाह, आनाह, मोह, प्रमेह और पित्तजन्य अनेक रुधिरविकारोंको नष्ट करता है ।

(८२१७) सिद्धतालकेश्वरः

(रसे. चि. म. । अ. ९)

तालसत्वं चतुर्थांशं सूतं कृत्वा च कज्जलीम् ।
सोमराजीकषायेण मर्दयित्वा पुनः पुनः ॥
अधो भूधरमं पाच्यं काचकूप्यां दिनत्रयम् ।
तालेन सदृशं किञ्चिदौषधं कुष्ठरोगिणाम् ॥
नास्ति वातविकारघ्नं ग्रन्थिशोथनिवारणम् ॥

१ भाग शुद्ध पारद और ४ भाग हरताल-सत्वको एकत्र मिला कर खरल करें और कज्जली हो जाने पर उसे बावचीके क्वाथकी कई भावनाएं देकर सुखा लें । तदनन्तर उसे आतशी शीशीमें भरकर ३ दिन भूधरयन्त्रमें पकावें और उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

कुष्ठ, वातव्याधि, ग्रन्थि और शोथके लिये हरतालसे श्रेष्ठ अन्य कोई औषध नहीं है ।

(**मात्रा**—आधी रत्ती ।)

(८२१८) सिद्धतालेश्वररसः

(र. चि. म. । स्त. २)

भल्लातकं तालकतुल्यभागं
तद्धण्डिकायन्त्रवरे च दत्तम् ।
दत्त्वा ततश्चपर्पणिकां तदूर्ध्वं
सषष्ठिकांस्तान्विकिरन्ति मध्ये ॥
यदा च सर्वे स्फुटिता भवेयुः
सिद्धो रसः स्यात्खलु तालकेशः ।
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति मासा-
ज्जरामयं रूपमपास्य सर्वम् ॥
भवेदपूर्वं सकलं शरीरं
निरामयं कान्तिबलाद्युपेतम् ॥
मासमात्रममुं दद्याद्देहंकुर्यान्निरामयम् ।
विजित्य सकलान् रोगान्कुर्यादानन्दसंयुतम् ॥
दीर्घायुर्जायते भूमौ सज्जदेहो निराकुलः ।
साधनैः सकलैर्युक्तः सर्वसौभाग्यभाजनः ॥

शुद्ध भिलावे और शुद्ध हरताल समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह कूटें और फिर कपरमिट्टी की हुई हांडीमें भरकर उसके मुखको शरावसे अच्छी तरह बन्द करदें तथा उसके ऊपर (शराव पर) थोड़ेसे धान डालकर हांडीको आग पर चढ़ा दें । जब सब धान खिल जाएं तो आग देनी बन्द करदें और हाण्डीके ठण्डी होने पर उसमें से औषधको निकाल कर पीस लें ।

इसे सेवन करने से १ मासमें कुष्ठ नष्ट होकर कान्ति और बलयुक्त नीरोग शरीर प्राप्त होता है ।

(**मात्रा**—आधीसे १ रत्ती तक ।)

(८२१९) **सिद्धपञ्चाननरसः**

(र. प्र. सु. । अ. ८)

सूतं गन्धं टङ्कणं चेत्समांशं
व्योषं मुस्तं वत्सनाभं वरा च ।
सर्वेभ्यो वै निष्कमात्रं गुडेन
खादेद्गुञ्जायुग्मं मात्रां वटीं हि ॥
कुष्ठान् मेहान् शोफशूलादिदोषान्
हन्तीत्येवं सिद्धपञ्चाननोऽयम् ।

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, शुद्ध बछनाग, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे गुड़में मिलाकर गोली बनाकर खानेसे कुष्ठ, प्रमेह, शोथ और शूलादि का नाश होता है।

(८२२०) **सिद्धप्राणेश्वरो रसः**

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. । ज्वरातिसारा.; रसे. चि. म. । अ. ९)

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम् ।
स्वर्जिटङ्कयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥
वराव्योपेन्द्रबीजानि द्विजीराग्नियमानिका ।
सहिङ्गु बीजसारश्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥
सिद्धः प्राणेश्वरः सूतः प्राणिनां प्राणदायकः ।
वल्लैकं भक्षयेदस्य नागवल्लीदलैर्युतम् ॥
उष्णोदकानुपानश्च दद्यात्तत्र पलत्रयम् ।
ज्वरातिसारेऽतिसृतौ केवले वा ज्वरेऽपि च ॥
घोरे त्रिदोषजे रोगे ग्रहण्यामसृगामये ।
वातरोगे च शूले च शूले च परिणामजे ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद और अभ्रक भस्म ४–४ भाग तथा सज्जी, सुहागेकी खील, जवाखार, पांचों नमक (सेंधा, काला नमक, बिड–लवण, काच लवण, सामुद्र लवण), हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, इन्द्रजौ, सफेद जीरा, काला जीरा, चीतामूल, अजवायन, हींग, बायबिडंग और सोया; इनका चूर्ण १–१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करें।

इसके सेवनसे घोर त्रिदोषज ज्वरातिसार, अतिसार, ज्वर, संग्रहणी, रक्तविकार, वातव्याधि, शूल और परिणामशूलका नाश होता है।

इसे पानके साथ खा कर १५ तोले उष्ण जल पीना चाहिये।

मात्रा—३ रत्ती।

सिद्धमण्डूरम्

(र. र. ; वृ. नि. र. ; र. का. धे. । पाण्डु.)

प्र. सं. ४४२१ "पुनर्नवा मण्डूर (२)" देखिये।

उसकी अपेक्षा इसमें (सिद्ध मण्डूर में) यह विशेषता है—

(१) मण्डूर ८ पल (४० तोले) और अन्य ओषधियां १।–१। तो. हैं।

(२) १। तोला विष (शुद्ध बछनाग) अधिक है।

(८२२१) सिद्धयोगेश्वरः

(रसे. चि. म. । अ. ८)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्वे घृष्ट्वा तु कज्जलीम् ।
तयो रसं कान्तलोहमभावे तस्य तीक्ष्णकम् ॥
वेडितं देवदेवेशि मर्दितं कन्यकाद्रवैः ।
यामद्वयं ततः पश्चात् तद्गोलं ताम्रसम्पुटे ॥
आच्छाद्यैरण्डपत्रैस्तु धान्यराशौ निधापयेत् ।
त्रिदिनान्ते समुद्धृत्य पिष्टं वारितरं भवेत् ॥
कुमारी भृङ्गकोरण्टौ काकमाची पुनर्नवा ।
नीली मुण्डी च निर्गुण्डी सहदेवी शतावरी ॥
अम्लपर्णी गोक्षुरकं कच्छुमूलं वटाङ्कुरम् ।
एतेषां भावयेद्द्रावैः सप्तवारान् पृथक् पृथक् ॥
त्र्यूषणत्रिफलासोमराजीनां च कषायकैः ।
शुद्धेऽस्मिन् तोलितं चूर्णं सममेकादशाभिधम् ॥
वराव्योषाग्निविश्वैलाजातीफललवङ्गकम् ।
संयोज्य मधुनालोड्य विमर्द्येदं भजेत्सदा ॥
रात्रौ पिबेद्गवां क्षीरं कृष्णानां च विशेषतः ।
सम्वत्सराज्जरामृत्युरोगजालं निवारयेत् ॥
वीर्यवृद्धिकरं श्रेष्ठं रामाशतसुखप्रदम् ।
तावन्न च्यवते वीर्यं यावदम्लं न सेवते ॥
दीपनं कान्तिदं पुष्टितुष्टिकृत्सेविनां सदा ।
सुगुप्तः कथितः सूतः सिद्धयोगेश्वराभिधः ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धकको एकत्र मिला कर कज्जली बनावें । तदनन्तर उसमें ३ भाग कान्तलोह-भस्म और यह न मिले तो तीक्ष्ण लोह-भस्म मिला कर २ पहर घृतकुमारीके रसमें खरल करें और फिर उसका एक गोला बना कर उसे ताम्रसम्पुटमें बन्द करके अरण्डके पत्तोंसे लपेट दें तथा अनाजके ढेरमें दबा दें । ३ दिन पश्चात् गोलेको निकाल कर खरल कर लें, वह वारितर हो जायगा । तत्पश्चात् उसे घीकुमार, भंगरा, पियाबांसा; मकोय, पुनर्नवा, नील, गोरखमुण्डी, संभालु, सहदेवी, शतावर, अम्लपर्णी, गोखरु, कौंचकी जड़ और बड़के अंकुर-इनके स्वरस तथा त्रिकुटा, त्रिफला और बावची-इनके काथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दें । तत्पश्चात् उसमें उसके बराबर निम्नलिखित चूर्ण मिला कर शहदके साथ खरल कर लें ।

चूर्ण—हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, सोंठ, छोटी इलायची, जायफल और लौंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे रात्रिके समय खा कर ऊपरसे गोदुग्ध पीना चाहिये । यदि दूध काली गायका हो तो और भी उत्तम है ।

इसे एक वर्ष तक सेवन करनेसे वृद्धावस्था और अकाल मृत्यु नहीं आती । यह अत्यन्त वीर्यवर्द्धक और स्तम्भक है । इसे सेवन करने वाला पुरुष जब तक अम्ल पदार्थ न खाएगा मैथुनके समय उसका वीर्यपात न होगा चाहे वह १०० बार भी स्त्रीसमागम क्यों न करे ।

यह अग्निदीपक, कान्तिवर्द्धक और पौष्टिक है ।

(८२२२) सिद्धवटी

(वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं काकाण्डं सैन्धवं समम् ।
सद्यो बालस्य विष्ठां च द्रवैर्ब्राह्म्या विमर्दयेत् ॥

गुटिका बदराकारा भक्षिता रोगनाशिनी ।
इयं सिद्धवटी नाम सन्निपातं नियच्छति ॥
पूर्वोक्तेनानुपानेन सन्निपातं नियच्छति ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, बकायनकी छाल, सेंधा नमक और नवजात बालककी विष्ठा समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह खरल करें और ब्राह्मीके रसमें घोट कर बेरके समान गोलियां बनावें ।

इन्हें पूर्वोक्त* अनुपानके साथ सेवन करनेसे सन्निपात नष्ट होता है ।

(८२२३) सिद्धशाल्मलीकल्पः

(भै. र. । वाजिकरणा.)

भूकूष्माण्डं तालमूली धात्री चैव पुनर्नवा ।
समभागं समाहृत्य भागार्द्धं गन्धकं तथा ॥
तदर्द्धं पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत् ।
श्वेतशाल्मलीतोयेन सप्तधा भावयेत्पुनः ॥
माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भावयेत् पुनः ।
शुष्कं तच्चूर्णयेद् यत्नाल्लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
अनेनाशीतिवर्षोऽपि शतधा रमते स्त्रियाः ।
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत् कामदेव इव स्वयम् ॥
ज्वरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।
माषमेकन्तु कर्त्तव्यं, दुग्धमत्रानुपानकम् ॥

विदारीकन्द, मूसली, आमला और पुनर्नवा-मूल इनका चूर्ण ४-४ भाग तथा शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध पारद १ भाग लें कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सफेद सेंभलकी जड़के रसमें तथा भैंसके दूधमें पृथक् पृथक् सात सात दिन खरल करके सुखा लें ।

इसे शहद तथा घीके साथ सेवन करनेसे कामशक्ति इतनी बढ़ जाती है कि ८० वर्षका वृद्ध भी एकही समयमें १०० बार स्त्री समागम कर सकता है । इसे सेवन करने वालेका लिंग कभी शिथिल नहीं होता और वह ज्वरादि रोगोंसे मुक्त हो कर सांसारिक सुखोंका उपभोग करता है । इसे १ मास तक सेवन करना आवश्यक है ।

अनुपान —दूध ।

(**मात्रा**—६ रत्ती ।)

(८२२४) सिद्धसावरयोगः

(र. का. धे. । अर्शो.)

मृताभ्रं विंशतिपलं मृतलोहस्य पञ्चकम् ।
गन्धकस्य पलपञ्च त्रिभिर्द्विगुणमाक्षिकम् ॥
पथ्या शतपलं योज्यं धात्री पलशतद्वयम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य जम्बीरैर्भावयेद्दिनम् ॥
भृङ्गीपुनर्नवाद्रावैः पातालगरुडांशकैः ।
भल्लातवह्निकोरण्टं हस्तिशुण्डा च लाङ्गली ॥

---

*मालूम नहीं कि "पूर्वोक्त" शब्दसे किस रसकी ओर संकेत किया गया है । हमने यह प्रयोग रसराजसुन्दरसे लिया है, उसमें इससे पूर्व विश्वमूर्ति रस है, जिसका अनुपान इस प्रकार लिखा है:—

"अदरकके रसमें औषध खिला कर ऊपरसे आककी जड़के क्वाथमें काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर पिलाना चाहिये ।"

क्षीरिणी जलतुम्बी च प्रत्येकं प्रत्यहं द्रवैः ।
भावयेन्मर्दयेदित्थं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत् ॥
स्निग्धभाण्डे स्थितं खादेन्नित्यं निष्कद्वयं द्वयम् ।
सिद्धसारयोगोऽयं त्रिदोषार्शः प्रशान्तये ॥

अभ्रक-भस्म १०० तोले, लोह-भस्म २५ तोले, शुद्ध गन्धक २५ तोले, स्वर्णमाक्षिक-भस्म १०० तोले, हर्रका चूर्ण ६। सेर, और आमलेका चूर्ण १२॥ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर जम्बीरी नीबू, भंगरा, पुनर्नवा, पाताल-गरुडी, भिलावा, चीतामूल, पियाबांसा, हाथीसुंडी, कलिहारी, दुद्धी और जलतुम्बी-इनके स्वरस या क्वाथकी १-१ भावना दे कर शहद और घीमें मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—७॥ माशे ।

इसके सेवनसे त्रिदोषज अर्शका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा-३ से ६ रत्ती तक ।)

(८२२५) सिद्धसूतः

(भै. र. । वाजीकरणा. ; र. मृ. । सं. ५)

मुक्ताफलं शुद्धसूतं सुवर्णं रूप्यमेव च ।
यवक्षारश्च तत्सर्वं तोलकैकं प्रकल्पयेत् ॥
रक्तोत्पलपत्रतोयैर्मर्दयेत्पत्तलीकृतम् ।
मर्दयेच्च पुनर्दत्वा गन्धकं तदनन्तरम् ॥
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये सन्निरुध्य त्रियामकम् ।
सिकताख्ये पचेच्छीते सिद्धसूतन्तु भक्षयेत् ॥
रक्तिकैकप्रमाणेन मुशलीशर्करान्वितम् ।
शुक्रवृद्धिं करोत्येष ध्वजभङ्गञ्च नाशयेत् ॥
दुर्बलं वपुरत्यर्थं बलयुक्तं करोत्यसौ ।
मुद्गगर्भं घृतं क्षीरं शालयो माहिषं हितम् ॥

मोती, शुद्ध पारद, स्वर्ण-पत्र, रौप्यपत्र और जवाखार १-१ तोला ले कर प्रथम पारदमें स्वर्ण और रौप्य-पत्र मिला कर खरल करें । जब तीनों चीज़ें मिल जाएं तो उसमें मोती और जवाखार मिला कर पुनः खरल करें और फिर उसे लाल कमलकी पत्तियों (पंखड़ियों) के रसमें १ दिन खरल करके १ तोला शुद्ध गन्धक मिला कर पुनः खरल करें । जब कज्जली हो जाय तो उसे कपर-मिट्टी की हुई आतशीशीशीमें भर कर उसका मुख बन्द करके ३ पहर बालुका-यन्त्रमें पकावें । तदनन्तर शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे मूसलीके चूर्ण और खांडके साथ खिलाना चाहिये ।

इसके सेवनसे शुक्रवृद्धि होती और ध्वजभङ्ग-का नाश हो कर निर्बल शरीर अत्यन्त बलवान हो जाता है ।

पथ्य—घृतयुक्त मूंगकी दाल, भैंसका घी, भैंसका दूध और शाली चावलका भात ।

सिद्धाभ्रकरसः

(र. चं. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. ६३४५ "लघु सिद्धाभ्रक रसः" देखिये ।

सिद्धेश्वररसः

प्र. सं. ५५८३ महा सिद्धेश्वर रसः देखिये ।

(८२२६) सिन्दूरभूषणरसः

(र. चं. ; र. रा. सु. ; र. र. ; र. र. स. । उ. अ १०)

शुद्धसूतं च सिन्दूरं पलैकैकं विमर्दयेत् ।
वासारसेन यामैकं तेन कुर्याच्च चक्रिकाम् ॥
सुपक्वां कारयेन्मूषामुत्तानां द्वादशाङ्गुलाम् ।
तन्मध्ये गन्धकं शुद्धं क्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥
पूर्वोक्तां चक्रिकां तत्र क्षिप्त्वाऽथ प्रपुटेल्लघु ।
जीर्णे गन्धे समुद्धृत्य चक्रिकां तां विचूर्णयेत् ॥
चूर्णाद्दशगुणं योज्यं मृतं लोहं च मर्दयेत् ।
लशुनेन दशांशेन चणमात्रां वटिं कुरु ॥
वातपाण्डुहरः सिद्धो रसः सिन्दूरभूषणः ।
पिबेच्चानु ह्यपामार्गस्यैरण्डस्य च मूलिकाम् ॥
तक्रैः पिष्टाऽथ कर्षैकं हन्ति पाण्डुं सकामलम् ॥

शुद्ध पारा और रससिन्दूर ५-५ तोले ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल करें और फिर उसे १ पहर वासा (अडूसा) के रसमें खरल करके टिकिया बनावें और फिर १२ अङ्गुल गहरी पक्की मूषामें २० तोले शुद्ध गन्धकका चूर्ण डाल-कर उसके बीचमें उपरोक्त टिकियाको रख कर उसके मुखको अच्छी तरह बन्द कर दें और उस पर कपड़मिट्टी करके लघुपुटमें पकावें। जब गन्धक जीर्ण हो जाय तो मूषाके स्वांगशीतल होने पर टिकियाको निकाल लें और उसको पीस कर उससे १० गुनी लोह भस्म तथा दसवां भाग ल्हसनका कल्क मिला कर अच्छी तरह खरल करें और चनेके समान गोलियां बना कर सुर-क्षित रक्खें।

इसके सेवनसे वातज पाण्डु और कामलाका नाश होता है।

अनुपान--१। तोला अपामार्ग और अरण्डकी जड़को तक्रमें पीस कर पियें।

(८२२७) सिन्दूररसः—

(वृ. यो. त. । त. ११८)

चतुष्पलं तु गन्धस्य पारदं च चतुष्पलम् ।
पलैकं हरितालं च तालकार्धं मनःशिला ॥
तालार्धं टङ्कणं शुद्धं नवसारं तदर्धकम् ।
सर्वं निक्षिप्य खल्वे च मर्दयेत्कज्जलीकृतम् ॥
शाकवृक्षस्य पत्राणां रक्तवर्णं द्रवं हरेत् ।
तद्द्रवैर्मर्दयेत्सम्यक्काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ॥
खटिकया मुखमाच्छाद्य वज्रमृत्तिकया तथा ।
कूपिकां लेपयेत्सप्त शोषयेदातपे खरे ॥
वालुकायन्त्रमध्ये तु कूपिकां तां विनिक्षिपेत् ।
चुल्लिकायां विनिक्षिप्य वह्निं प्रज्वालयेत्ततः ॥
यामं षोडशमात्रं तु दीप्तमध्यखराग्निना ।
स्वाङ्गशीतलमादाय खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥
तत्सिन्दूरसमं द्रव्यं षोडशांशं विनिक्षिपेत् ।
मर्दयेत्पूर्ववद्द्रव्यं काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ॥
एवं सप्तविधं कृत्वा क्षिप्त्वा कूप्यां विपाचयेत् ।
स्वाङ्गशीतलमादाय उदयार्कसमो रसः ॥
सिन्दूरं सूक्ष्मलं चूर्णं नागदन्तकरण्डके ।
तत्सिन्दूरं निषेवेत गुञ्जामात्रप्रमाणतः ॥
शर्करामधुपिप्पल्या प्रातरुत्थाय सेवयेत् ।
क्षयानेकादश हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
आमवातं च शूलं च नाशयेन्नात्र संशयः ।
पाण्डुं पञ्चविधं चैव कामलात्रयनाशनम् ॥

महोदरानष्ट पञ्चगुल्मानामपि पञ्च च ।
अरोचकं पञ्चकासं पञ्चश्वासं जडं हरेत् ॥
स्थिरायुः कार्यसिद्धिश्च
मेध्यं चाऽऽशु शुभप्रदम् ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगनिवारणम् ॥
इति धन्वन्तरिप्रोक्तं सिन्दूरं लोकपूजितम् ॥

शुद्ध गन्धक २० तोले, शुद्ध पारद २० तोले, शुद्ध हरताल ५ तोले, शुद्ध मनसिल २॥ तोले, सुहागा २॥ तोले और नौसादर १। तोला लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें । जब कज्जली हो जाय तो उसे शाकवृक्षके पत्तोंसे निकाले हुवे लालरंग के रसमें अच्छी तरह खरल करें और फिर आतशी शीशीमें भरकर उसके मुख को खिड़ियाकी डाटसे बन्द कर दें और शीशीके ऊपर वज्रमृत्तिकाके सात लेप करके तेज धूपमें सुखावें । तदनन्तर उसे बालुकायन्त्रमें रख कर १६ पहर मृदु, मध्यम और तीव्राग्नि पर पकावें । इसके पश्चात् शीशीके स्वाङ्गशीतल होने पर उसमें से रसको निकालकर पीस लें और उसमें उसका सोलहवां भाग उपरोक्त पारद गन्धक आदि द्रव्योंका ऊपर लिखित परिमाणसे बनाया हुवा मिश्रण मिला कर शाकवृक्षके पत्तोंके रसमें खरल करें और फिर उपरोक्त विधिसे पाक करें । इसी प्रकार ७ बार पाक करें । हर बार तैयार रसका सोलहवां भाग पारद गन्धक आदिका मिश्रण मिलाना चाहिये । अन्तमें रसको पीस कर हाथीदांतकी शीशीमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे खांड, शहद और पीपलके चूर्णके साथ मिलाकर प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे ११ प्रकारका क्षय, १३ प्रकारका सन्निपात, आमवात, शूल, पाण्डु, कामला, ८ प्रकारके उदररोग, ५ प्रकारके गुल्म, अरुचि, कास, श्वास और जड़ताका नाश होकर आयु स्थिर होती है । यह रस मेध्य है और अनुपान भेदसे समस्त रोगोंको नष्ट करता है ।

(८२२८) सिन्दूरशोधनम्

(आयु. वे. प्र. । अ. १२)

सिन्दूरं रक्तरेणुश्च नागगर्भं च सीसकम् ।
सीसोपधातुः सिन्दूरं गुणैस्तत्सीसवन्मतम् ॥
संयोगजप्रभावेण तस्याप्यन्ये गुणाः स्मृताः ।
सिन्दूरमुष्णं वीसर्पकुष्ठकण्डुविषापहम् ॥
भग्नसन्धानजननं व्रणशोधनरोपणम् ।
सुरङ्गोऽग्निसहः स्निग्धः सूक्ष्मः स्वच्छो गुरुर्मृदुः॥
सुवर्णाकरजः शुद्धः सिन्दूरो मङ्गलप्रदः ।
दुग्धाम्लयोगतस्तस्य विशुद्धिर्गदिता बुधैः ॥

मतान्तरम्—

सिन्दूरं निम्बुकद्रावैः पिष्ट्वा घर्मे विशोषयेत् ।
ततस्तण्डुलतोयेन तथाभूतं विशुद्ध्यति ॥

रक्तरेणु, नागगर्भ, सीसक, सीसोपधातु और सिन्दूर; ये सब एक ही पदार्थके नाम हैं ।

सिन्दूरमें सीसेके समान ही गुण होते हैं और अन्य पदार्थोंका योग होनेसे उसके गुणोंमें भी अन्तर आ जाता है ।

सिन्दूर उष्ण है तथा विसर्प, कुष्ठ, कण्डू और विषको नष्ट करता है। भग्न अस्थिको जोड़ देता है और व्रणोंको शुद्ध करके भर देता है।

जो सिन्दूर रंगमें सुन्दर हो; अग्नि सहन कर सकता हो; स्निग्ध, सूक्ष्म, स्वच्छ, भारी और कोमल हो तथा सोनेकी खानसे निकला हो; वह श्रेष्ठ होता है।

सिन्दूरको दूध और जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर सुखा लेनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

अथवा सिन्दूरको नीबूके रस और चावलोंके पानीमें पृथक् पृथक् १-१ दिन घोट घोट कर धूपमें सुखा लेनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८२२९) सिन्दूरादिलेहः

(र. र. । बालरोगा.)

सिन्दूरानलकुष्ठमुस्तमरिचैः भृङ्गीवटस्याग्रजैः ।
पाठागन्धककाचटङ्कणविषाविश्वौषधीकट्फलैः ॥
कुची सर्ज्जककोलबीजकुनटीबिल्वेन्द्रलोध्रैस्तथा ।
लाजाऽजाजीयुगैः सचन्दनयुतैः सश्रेयसी-
चूर्णितैः ॥
लेहः क्षौद्रविनिर्मितो हरति वै पश्चाद्रुजं
दुस्तरम् ॥

रससिन्दूर, चीतामूल, कूठ, नागरमोथा, काली मिर्च, काकड़ासिंगी, बड़के अंकुर, पाठा, शुद्ध गन्धक, काच लवण, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, सोंठ, कायफल, बाबची, राल, बेरकी गिरी, शुद्ध मनसिल, बेलगिरी, इन्द्रजौ, लोध, धानकी खील, स्याह और सफेद जीरा, सफेद चन्दन और चव-इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे शहदमें मिला कर सेवन करनेसे बच्चोंका पश्चाद्रुज[1] नामक रोग नष्ट होता है।

मात्रा—१ रत्ती।

(८२३०) सिन्दूरादिवटी

(धन्व. । वाजीकरणा.)

सिन्दूरं कनकबीजं विजयाक्षुरबीजकैः ।
जातीफलं जातिपत्री कटुशिग्रुमफेनकम् ॥
समुद्रशोषसंयुक्तं लवङ्गं च तथैव च ।
भावयेद् विजयाक्वाथैश्छायाशुष्कां वटीं कृताम् ॥
खादेच रक्तिकां नित्यं शुक्रस्तम्भः प्रजायते ॥

रससिन्दूर, धतूरेके शुद्ध बीज, भांग, तालमखाना, जायफल, जावित्री, सोंठ, मिर्च, पीपल, सहंजनेके बीज, अफीम, समुद्रशोष और लौंग; सबका समान भाग चूर्ण ले कर एकत्र मिला कर भांगके काथमें खरल करें और १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें।

इन्हें खानेसे वीर्यस्तम्भन होता है।

(**मात्रा**—१ गोली। स्त्री समागमसे १ घंटा पहले दूधके साथ खावें।)

---

१ बच्चोंके मलमार्गमें होने वाले लाल रंगके एक विशेष प्रकारके व्रणको "पश्चाद्रुज" कहते हैं। इसमें बच्चेको हरे, पीले दस्त आने लगते हैं और वह सूखने लगता है। यह रोग स्तन्यविकारसे होता है।

(८२३१) सिंहनादरसः

(रसे. सा. सं. ; र. का. धे. ; र. र. । ज्वरा.)

लोहपात्रगते गन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
शुद्धसूतं समं चाभ्रं भार्गीद्रावं तयोः समम् ॥
निर्गुण्ड्याः पल्लवोत्थश्च तुल्यं तुल्यं प्रदापयेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावद्यावच्छुष्कं द्रवं द्वयम् ॥
विषपादयुतः सोऽयं सिंहनादरसोत्तमः ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यः सन्निपातज्वरान्तकः ॥
अनुपानं पिबेत्क्वाथं कण्टकार्याः सपुष्करम् ।
गुडूचीनागरैर्युक्तमरुचिश्वासकासजित् ॥

लोह-पात्रमें १ भाग शुद्ध गन्धकको पिघला कर उसमें १-१ भाग शुद्ध पारद और अभ्रक-भस्म तथा २ भाग भरंगीका क्वाथ और २ भाग संभालूके पत्तोंका रस डाल कर उसे (मूसलीसे रगड़ते हुवे) मन्दाग्निपर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार लें और फिर उसमें उसका चौथाई भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करें ।*

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे (शहदके साथ) खा कर ऊपरसे कटेली, पोखरमूल, गिलाय और सोंठका क्वाथ पीनेसे सन्नि-पात ज्वर, अरुचि, श्वास और कासका नाश होता है ।

* पाठान्तरके अनुसार—
(१) अभ्रकका अभाव है ।
(२) भरंगीके क्वाथके स्थानमें कटेलीका क्वाथ है ।
(३) करञ्जका रस अधिक है ।

(८२३२) सुकुमारमोदकम्

(भै. र. । अग्निमान्द्या.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं नागरं मरिचं शिवा ।
धात्री चित्रकमभ्रञ्च गुडूची कटुरोहिणी ॥
प्रत्येकमेषां कर्षांशं चूर्णं दन्त्याश्चिकार्षिकम् ।
द्विपलं त्रिवृताचूर्णं शर्करायाः पलत्रयम् ॥
मधुना मोदकं कार्यं सुकुमारकसञ्ज्ञकम् ।
वाताजीर्णप्रशमनं विष्टम्भे परमौषधम् ॥
उदावर्त्तानाहहरं सर्वाजीर्णविनाशनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, सोंठ, काली मिर्च, हर्र, आमला, चीतामूल, गिलोय और कुटकी; इनका चूर्ण १।-१। तोला, अभ्रक-भस्म १। तोला, दन्तीमूलका चूर्ण ३॥। तोले, निसोतका चूर्ण १० तोले तथा खांड १५ तोले ले कर सबको एकत्र मिलावें और आवश्यकतानुसार शहद मिला कर मोदक बना लें । इनके सेवनसे वातज अजीर्ण उदावर्त और आनाहका नाश होता है । विष्टम्भ (मलावरोध) की यह परमौषध है ।

मात्रा—६ माशेसे १ तोला तक ।

अनुपान—उष्ण जल ।

(८२३३) सुखभैरवरसः

(रसे. चि. म. । अ. ९)

गन्धालमाक्षिकमयःसुरसाविषाणि,
सूतेन्द्रटङ्कणकटुत्रयमग्निमन्थम् ।
भृङ्गीं शिवां दृढतरं सुरसेभशुण्ड्योः
क्षीरेण घृष्टमनिलामयहारि बद्धम् ।
रास्नामृतादेवदारुशुण्ठीमुस्तभृतं पयः ।
सगुग्गुलुं पिबेत् कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, लोह-भस्म, तुलसीदलका चूर्ण, शुद्ध बछनाग, शुद्ध पारद, सुहागेकी खील तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, अरनीकी जड़, काकड़ासिंगी और हर्र; इनका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर तुलसी और हाथी-सुंडीके रस तथा दूधमें १-१ दिन खरल करके (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे वातव्याधिका नाश होता है।

अनुपान—रास्ना, गिलोय, देवदारु, सोंठ और नागरमोथा; इनसे यथाविधि सिद्ध दूधमें शुद्ध गूगल मिला कर मन्दोष्ण करके पियें।

(८२३४) सुदर्शनरसः (१)

(र. का. धे. । ग्रहण्य.)

मूर्छितं मर्दयेत्सूतं दध्ना घर्मे दिनावधि ।
तत्तु शुष्कं त्रिकटुकं सिन्दूरं निष्कमात्रकम् ॥
यवक्षारस्य निष्कैकम्लपर्णीनिशाद्रवैः ।
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे लेह्यं मध्वाज्यसंयुतम् ॥
रसः सुदर्शनः ख्यातो ग्रहणीरोग शान्तिकृत् ॥

१ भाग मूर्छित पारद (कज्जली) को १ दिन दहीके साथ धूपमें खरल करें और फिर सुखा कर उसमें १-१ भाग सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण, रससिन्दूर तथा यवक्षार मिला कर ३-३ दिन अम्लपर्णी और हल्दीके रसमें खरल करें।

इसे शहद और घीके साथ मिला कर सेवन करनेसे ग्रहणी रोगका नाश होता है।

मात्रा—६ रत्ती।

(८२३५) सुदर्शनरसः (२)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसस्य भाग एकः स्याद् गन्धकस्य चतुर्दश ।
मर्दयेन्मासमेकं तु सहदेव्या रसैर्द्वयम् ॥
विषात् त्र्यंशेषु गोजिह्वारसैः षोडश भावना ।
तालकांशौ द्विशः कूष्माण्डोत्थैः पञ्चदशापि च ॥
भागमेकैकं सोममलं पञ्चाशद्भृङ्गजैः रसैः ।
टङ्कणस्य त्रयो भागा लिङ्ग्याः षड्रसभावनाः ॥
हिडिम्ब्यास्त्रिर्नीलकण्ठीरसैर्द्वादशभावनाः ।
जैपालात्सप्तभागाश्च शिवनेत्रत्रिभावनाः ॥
आकल्लकवचाभार्ङ्गीकणामरिचनागरम् ।
जीरके च लवङ्गानि एकैकांशानि सर्वतः ॥
धूर्तच्छदरसैर्भाव्यं सप्तविंशतिभावितम् ।
छायाशुष्कां च गुटिकां गुञ्जामात्रां च कारयेत् ॥
अयं सुदर्शनो नाम रसः सर्वगदापहः ।
तत्तद्रोगानुपानेन विशेषाज्ज्वरहृत्परः ॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध गन्धक १४ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसे १ मास तक सहदेवीके रसमें खरल करें। तदनन्तर ३ भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर गोजिह्वा (गोजिया घास) के रसकी १६ भावना दें और फिर २ भाग शुद्ध हरताल मिला कर भूरे कुम्हड़े (पेठे) के रसकी १५ भावना दें। तत्पश्चात् उसमें १ भाग शुद्ध संखिया मिला कर भंगरेके रसकी ५० भावना दें। फिर ३ भाग सुहागेकी खील मिला कर शिवलिंगीके रसकी ६ भावना दें। फिर ३ भाग हिडिम्बा (शुद्ध मनसिल ?) मिला कर नीलकण्ठीके रसकी १२ भावना दें। तत्पश्चात्

७ भाग शुद्ध जमालगोटा मिला कर रुद्राक्षके क्वाथकी ३ भावना दें और फिर उसमें १-१ भाग अकरकरा, बच, भरंगी, पीपल, मिर्च, सोंठ, सफेद जीरा, काला जीरा और लौंग--इनका चूर्ण मिला कर धतूरेके पत्तोंके रसको २७ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें और छायामें सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे साधारणतः समस्त रोग और विशेषतः समस्त प्रकारके ज्वरोंका नाश होता है।

(८२३६) सुधानिधिरसः (१)

(भै. र. । रक्तपित्ता.)

**सूतं गन्धं माक्षिकं लौहचूर्णं
सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन।
मूषामध्ये भूधरे तत्पुटित्वा
दद्याद्गुञ्जां त्रैफलेनोदकेन॥
लौहे पात्रे गोपयः पाचयित्वा
रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै॥**

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण माक्षिक-भस्म और लोह-भस्म समान भाग ले कर कज्जली बनावें और फिर उसे त्रिफलाके क्वाथमें खरल करके, मूषामें बन्द करके भूधरपुटमें पकावें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे त्रिफलेके क्वाथके साथ सेवन करनेसे रक्तपित्त शान्त होता है।

इस पर रात्रिके समय लोहपात्रमें गोदुग्ध पका कर पीना चाहिये।

(८२३७) सुधानिधिरसः (२)

(रसे. सा. सं.; र. रा. सु.; र. चं.; धन्व.। अरोचका.)

**रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्वाथेन भावयेत्।
जम्बीरस्य रसेनैव आर्द्रकस्य रसेन च॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जरसेन च।
पश्चाद्विशोष्यान्सर्वांस्तानटङ्कणश्चोपचारयेत्॥
देवपुष्पं वाणमितं रसपादं मृतामृतम्।
माषमात्रश्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा॥
सर्वारोचकशूलार्त्तिसामवातं सुदारुणम्।
विसूचीश्चाग्निमान्द्यश्च भक्तद्वेषश्च दारुणम्॥
रसोयं वारयत्याशु केशरी करिणं यथा॥**

शुद्ध पारद और गन्धक १-१ भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे दन्तीमूलके क्वाथ, जम्बीरी नीबूके रस, अदरकके रस, बिजौरे नीबूके रस और बिजौरे नीबूकी मज्जाके रस को १-१ भावना देकर उसमें ५-५ भाग सुहागेकी खील और लौंगका चूर्ण तथा पारदसे चौथाई मृत-बछनाग* मिलाकर खरल करें।

मात्रा—१ माशा।

इसे सोंठके चूर्णके साथ या गुड़के साथ सेवन करनेसे सब प्रकारकी अरुचि, शूल, कष्टसाध्य आमवात, विसूचिका, अग्निमांद्य और भक्तद्वेष (भोजन पर अश्रद्धा) आदि रोगोंका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

---

* वकारादि रस-प्रकरणमें '**विषमारणम्**' देखिये।

(८२३८) सुधानिधिरसः (३)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । मूर्च्छा.)

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा शीतलं भजेत् ॥
सुधानिधिरसो नाम मदमूर्च्छाविनाशनः ॥

पारदभस्म (या रससिन्दूर) को पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे मूर्च्छाका नाश होता है।

मूर्च्छा और मद रोगमें शरीर पर शीतल जल की धार डालना, शीतल जलमें घुसकर स्नान करना आदि शीतल उपचार करने चाहियें।

(पारदभस्म १ रत्ती, पीपलका चूर्ण १ माशा, शहद १ तोला।)

(८२३९) सुधानिधिरसः (४)

(भै. र. । शोथा.)

धान्यकं बालकं मुस्तं विश्वं सिन्धुं समांशकम् ।
मण्डूरं द्विगुणं दत्त्वा भावयेत्तु चतुर्दश ॥
गोमूत्रं केशराजश्च शोथघ्नी भृङ्गराजकः ।
निर्गुण्डी भेकपर्णी च रसैरेषां विभाव्य च ॥
द्विगुञ्जं प्रयुञ्जीत तक्रेण सह बुद्धिमान् ।
केशराजरसैर्वापि भोजनं लवणं विना ॥
तक्रेण भोजयेदन्नं पाने तक्रञ्च दापयेत् ।
कामलाज्वरशोथघ्नो वह्निसन्दीपनः परः ॥
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नः सर्वव्याधिविनाशनः ॥

धनिया, सुगन्धबाला, नागरमोथा, सोंठ और सेंधा नमक-इनका चूर्ण १-१ भाग एवं मण्डूर भस्म सबसे दो गुनी (१० भाग) ले कर सबको एकत्र मिलाकर गोमूत्र, भंगरेके रस, पुनर्नवामूलके रस, काले भंगरेके रस, संभालूके रस और मण्डूकपर्णीके रसकी पृथक् पृथक् १४-१४ भावना दे कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—तक्र या भंगरेका रस ।

इसके सेवन कालमें तक्रके साथ भात खाना और प्यासमें पानीके स्थानमें तक्र पीना चाहिये। लवणसे परहेज़ करना चाहिये।

इसके सेवन से कामला, ज्वर, शोथ, ग्रहणीविकार और पाण्डु का नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

(८२४०) सुधानिधिरसः (५)

(यो. र. ; र. का. धे. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व., र. चं. ; बृ. नि. र. । रक्तपित्ता. ; र. चि. म. । स्त. ११ ; रसे. चि. म. । अ. ९)

गन्धं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं
सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।
लौहे पात्रे गोपयःस्थं च कृत्वा ×
रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै ॥

× " लौहे पात्रे गोमयैः पाचयित्वा " इति पाठभेदः

(नोट—इस प्रयोगके उपादान प्र. सं. ८२३६ के समान हैं परन्तु निर्माणविधि और सेवन विधिमें बहुत अन्तर है इसीसे पृथक् लिखा गया है।)

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, स्वर्णमाक्षिक और लोहभस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर त्रिफलेके क्वाथमें खरल करें।

इसे रातको लोह-पात्रमें गोदुग्धमें भिगोदें और प्रातःकाल सेवन करें। इसके सेवनसे रक्त-पित्तका नाश होता है।

(मात्रा—२ रत्ती)

सुधानिधिरसः (६)

(लवणभेदी सुधानिधि रसः)

प्र. सं. ६०५३ अ " रसकर्पूरविधि (५)" देखिये।

(८२४१) सुधापञ्चकरसः

(र. र. स । उ. अ. १९)

कंसेन पिष्टः शिलया सहितः पाचितो रसः।
हताभ्यां तीक्ष्णताम्राभ्यां युतो हन्ति हलीमकम्॥

कांस्य-भस्म, शुद्ध मनसिल, पारद-भस्म (या रससिन्दूर), तीक्ष्णलोह-भस्म और ताम्र-भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

यह रस हलीमकको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(८२४२) सुधासाररसः

(र. र. स. । उ. अ. १६ ; र. रा. सु. । उदावर्त्त.)

पृथक्पलिकगन्धाश्ममृतसञ्जातकज्जलीम्।
प्रद्राव्य क्षिपेद्व्योम पलैकं गतचन्द्रिकम्॥
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं क्षिपेत्कुटजपत्रके।
पुनः सञ्चूर्ण्य यत्नेन भावयेत्तदनन्तरम्॥
बालतिन्दुफलद्रावैः क्षीरैरौदुम्बरैस्तथा।
अरलुत्वग्रसैश्चापि दुग्धिनीस्वरसैस्तथा॥
पुटपक्वस्य बालस्य दाडिमस्य रसैः शुभैः।
कृष्णकाम्बोजिकामूलरसैः कुटजवल्कजैः॥
तुल्यांशविश्वगान्धारीचूर्णं त्रिपलिकं क्षिपेत्।
मुस्तावत्सकदीप्याग्निमोचसारं सजीरकम्॥
वत्सनाभं च कर्षांशं प्रत्येकं तत्र निक्षिपेत्।
विचूर्ण्य भावयेद्भूयः शुण्ठीकाथेन सप्तधा॥
इत्थं सिद्धो रसः पिष्टः करण्डे विनिवेशयेत्।
सुधासार इति ख्यातः सुधारससमो गुणैः॥
दीपनः पाचनो ग्राही हृद्यो रुचिकरस्तथा।
दोषत्रयातिसारं च दुर्जयं भेषजान्तरैः॥
आमं चैवामरक्तं च ज्वरातीसारमेव च।
सातिसारां विषूचीं च प्रतिबध्नाति तत्क्षणात्॥
मान्यमानव्यतिक्रान्तिरिव पुण्यफलोदयम्।
पिष्टविश्वाब्दकल्केन विधाय खलु चक्रिकाम्॥
निक्षिपेत्स्वेदनीयन्त्रे पक्त्वार्धघटिकावधि।
आकृष्य तज्जलैरेवं सम्प्रमर्द्याऽऽहरेद्रसम्॥
सुधासाररसं तत्र क्षिप्त्वा धान्यकसम्मितम्।
पूर्वोदितेषु रोगेषु प्रददीत भिषग्वरः॥
गोतक्रेणाथ दध्ना वा पथ्यं देयं हितं मितम्।
बालरम्भाफलं गुर्वीफलं बिल्वफलं तथा॥
आम्रपेशी च मधुकं वृन्ताकं च प्रशस्यते॥
सर्वातिसारं ग्रहणीं च हिक्कां
मन्दाग्निमानाहमरोचकं च।
निहन्ति सद्यो विहितामपाके
द्वित्रिप्रयोगेण रसोत्तमोऽयम्॥

साम्बुस्थालीमुखाबद्धे वस्त्रे पाक्यं निधाय च ।
पिधाय पच्यते यत्र स्वेदनीयन्त्रमुच्यते ॥

५–५ तोले शुद्ध पारद और गन्धकको एकत्र मिला कर कज्जली बनावें और उसे घृत लिप्त लोह–पात्रमें डाल कर मन्दाग्नि पर पिघलावें और फिर उसमें ५ तोले निश्चन्द्र अभ्रक–भस्म मिला कर लकड़ीसे अच्छी तरह चलावें और सबके मिल जाने पर कुड़ेके पत्तों पर डाल दें। तदनन्तर ठण्डा होजाने पर उसे पीस कर तेंदुके कच्चे फलोंके रस, गूलरके दूध, अरलुकी छालके रस (या क्वाथ), दूधीके रस, कच्चे दाड़िम (अनार) को पुटपाक विधिसे पकाकर निकाले हुवे रस, कृष्ण कम्बोजिकाकी जड़ के रस और कुड़ेकी छालके रस की १–१ भावना दें और फिर उसमें ५–५ तोले सोंठ और धमासेका चूर्ण तथा १।–१। तोला नागरमोथा, इन्द्रजौ, अजवायन, चीतामूल, मोचरस, जीरा और शुद्ध बछनाग—इनका चूर्ण मिलाकर सोंठके क्वाथकी सात भावना दें और सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

यह रस दीपन, पाचन, ग्राही, हृद्य और रोचक है। अन्य औषधोंसे आराम न होने वाला त्रिदोषज अतिसार इससे नष्ट हो जाता है।

इसके सेवनसे आम, आमरक्त, ज्वरातिसार और अतिसार युक्त विषूचिकाका तुरन्त नाश होता है। यह रस अतिसार, संग्रहणी, हिचकी, अग्निमांद्य, आनाह और अरुचि को २–३ मात्रामें ही नष्ट कर देता है।

सेवन विधि—समान भाग मिलित सोंठ और नागरमोथेके चूर्णको एकत्र मिलाकर, पानीके साथ पीस कर टिकिया बनावें। तदनन्तर एक मिट्टीके पात्रमें पानी भरकर उसके मुखपर कपड़ा बांध दें और उस पर उपरोक्त टिकिया रखकर उसे कटोरी आदिसे ढक दें एवं हाण्डीको अग्नि पर चढ़ाकर आधी घड़ी तक पकावें तत्पश्चात् धनियेके दानेके बराबर सुधासार रसको थोड़ेसे उपरोक्त हाण्डीके पानीके साथ खरल करके रोगीको पिला दें।

पथ्य—गायका दही, गोतक्र, केलेकी कच्ची फली, सुपारीका फल, बेलगिरी, आम, मुलैठी और बैंगन।

(८२४३) सुरसादियोगः

(रा. मा. । विषा. २८)

बहुशः सुरसाभाविततालक
कुवलयमनःशिलाचूर्णैः ।
मूषकविषमपि घोरं
नश्यति पीतैर्न सन्देहः ॥

तुलसीके रसकी अनेक भावना दी हुई हरताल, कमलपुष्प (या मोती) और शुद्ध मनसिल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें।

इसे सेवन करनेसे घोर मूषकविष भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

(८२४४) सुरसुन्दरीगुटिका

(र. चं. । वाजीकरणा. ; र. र ; । धन्व. । रसायना.)

अभ्रकं माक्षिकं वज्रं कान्तं हेम समं समम् ।
सर्वाणि समभागानि सूतयुक्तानि कारयेत् ॥

गोलकं ततः कृत्वा पक्वं निचुलवारिणा ।
ततस्तं पुटपाकेन स्तम्भयित्वा प्रयत्नतः ॥
वाह्ये चास्यापि लिप्त्वा च वक्त्रस्था
गुटिकोत्तमा ।
स्तम्भयेच्छस्त्रसङ्घातं विषरोगांश्च नाशयेत् ॥
अब्देनैकेन वक्त्रस्था वयःस्तम्भं करोति च ।
वलीपलितहन्त्रीयं गुटिका सुरसुन्दरी ॥

अभ्रक, स्वर्ण माक्षिक, हीरा, कान्त लोह, स्वर्ण और शुद्ध पारद समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें । जब सब चीजें मिल कर एकजीव हो जाएं तो उसकी गोली बना कर हिज्जल (या जलबेत) के रसमें पकावें और फिर उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करके पका कर दृढ़ कर लें ।

इसके ऊपर (घृतादि) किसी योग्य वस्तुका लेप करके मुखमें रखनेसे शस्त्रसंघात रुक जाता है और विष नष्ट हो जाते हैं ।

यदि इसे १ वर्ष तक मुखमें धारण किया जाय तो आयु स्थिर हो जाती है तथा वलीपलितका नाश होता है ।

(८२४५) सुरसुन्दरीवटिका

(र. र. रसा. खं. । उप. ३)

स्वर्णमेकं कान्तमेकं पञ्चतारं द्वि पारदम् ।
त्रिभागं व्योमसत्त्वं स्यात् षड्भागं शुल्वचूर्णकम् ॥
सर्वमेतत्कृतं सूक्ष्मं तप्तखल्वे दिनत्रयम् ।
मर्दयेदम्लवर्गेण दोलायन्त्रे सकाञ्जिके ॥
तद्गोलं त्रिदिनं पच्याद्गुटिका सुरसुन्दरी ।
जायते धारिता वक्त्रे वर्षान्मृत्युजरापहा ॥
भूतारवटमूलं च कर्षं क्षीरैः पिबेदनु ॥

स्वर्ण १ भाग, कान्तलोह १ भाग, चांदी ५ भाग, शुद्ध पारद २ भाग, अभ्रक-सत्व ३ भाग और ताम्र ६ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें और सबके मिल जाने पर तप्त खरलमें ३ दिन तक अम्लवर्गके साथ खरल करें । तदनन्तर उसकी गोली बना कर कपड़ेमें बांध कर दोलायन्त्रविधिसे ३ दिन कांजीमें स्वेदित करें ।

इसे १ वर्ष तक मुखमें धारण करनेसे जरा और अकाल-मृत्यु नहीं आती ।

इसके प्रयोग कालमें नित्य प्रति १। तोला भूतारवट मूल (?) को दूधमें पीस कर पीना चाहिये ।

(८२४६) सुरूपो रसः

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसं गन्धकं त्र्यूषणं नागपुष्पं
वरायुक्तमादौ वराजीवनेन ।
सुमर्द्यं नागैर्भावितं भृङ्गतोयैर्वटी
मुद्गमाना विधेया भिषग्भिः ॥
जयेदग्निमान्द्यं कुरङ्गाङ्कतापं
कफं वातमुन्मत्तभावं क्षणेन ।
समस्तेन्दुरुग्वृन्दमक्षिप्रवाहं
स उक्तो रसाब्धौ सुरूपेति नामा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेसर, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर त्रिफले के क्वाथ, पानके रस और भंगरेके रसकी भावना दे कर मूंगके बराबर गोलियां बना लें।

(मात्रा—७-८ गोली।)

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, कफ वातज ज्वर, उन्मत्तता, क्षय और नेत्रस्रावका नाश होता है।

सुरेचनकररसः

(र. र. स. । उ. अ. १९)

" नाराच रसः (३) " प्र. स. ३६४३ देखिये।

(८२४७) सुरेन्द्राभ्रवटी

(भै. र. । क्लोमा.)*

अभ्रं सहस्रशो दग्धं रसं दरदसम्भवम्।
केशराजाम्भसा शुद्धं गन्धकं हीरकन्तथा॥
विद्रुमं मौक्तिकं हेम रौप्यं माक्षिकमेव च।
कान्तलोहश्च सम्मर्द्य विधिना वह्निवारिणा॥
वल्लमात्रां वटीं कृत्वा छायायां परिशोषयेत्।
एकैकां योजयेत्प्राज्ञो यथादोषानुपानतः॥
क्लोमरोगविनाशाय वह्नेः सन्धुक्षणाय च।
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यमियं न विनाशयेत्॥
यो यः समाश्रयेद्व्याधिः क्लोमितं तमवेक्ष्य च।
क्रियां संसाधयेद्वैद्यो यथादोषं यथाबलम्॥
अनुग्राण्यन्नपानानि क्लोमामयनिपीडितः।
सेवेतोग्राणि सर्वाणि यत्नतः परिवर्जयेत्॥

सहस्रपुटी अभ्रक भस्म, हिंगुलोत्थ पारद, भंगरेके रसमें शुद्ध गन्धक, हीरा-भस्म, प्रवालभस्म, मुक्ता-भस्म, स्वर्ण-भस्म, चांदी-भस्म, स्वर्णमाक्षिक-भस्म और कान्तलोह-भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर चीतामूलके क्वाथमें खरल करें और ३-३ रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इसे यथोचित अनुपानके साथ देनेसे क्लोम रोगका नाश और अग्नि दीप्त होती है।

संसारमें ऐसा कोई रोग नहीं जिसे यह रस नष्ट न करता हो।

क्लोम रोगमें उग्र अन्न पानादिका त्याग करके अनुग्र आहारादि देना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती।)

(८२४८) सुलोचनाभ्रम्

(रसे. सा. सं. । अरोचका. ; र. रा. सु. ; धन्व. अरोचका.)

पलं सुजीर्णं गगनन्तु वज्रकं
तेजोवती कोलमुशीरदाडिमम्।
धात्र्यम्ललोणी रुचकं पृथग्दिशा-
पलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम्॥

*संस्कृत पुस्तकालय लाहौर द्वारा प्रकाशित भैषज्य रत्नावलीमें यह प्रयोग नहीं है।

अरोचकं वातकफत्रिदोषजं
पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम् ।
कासं स्वराघातमुरोग्रहं रुजं
श्वासं बलासञ्च यकृद्भगन्दरम् ॥
प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं
मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमीन् ।
शूलाम्लपित्तं क्षयरोगमुद्धतं
सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम् ॥
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं
बलप्रदं वृष्यतमं रसायनम् ॥

वज्राभ्रक-भस्म ५ तोले तथा, चव, बेरकी गुठलीकी मज्जा, खस, अनारदाना, आमला, अम्ललोणी और काला नमक; इनका चूर्ण ५०-५० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

इसे सेवन करने से वातज, कफज और त्रिदोषज तथा अप्रिय गन्धजनित अरुचि; कास, स्वरक्षय, उरोग्रह, श्वास, कफ, यकृत्, भगन्दर, प्लीहा, अग्निमांद्य, शोथ, वायु, प्रमेह, कुष्ट, प्रदर, कृमिरोग, शूल, अम्लपित्त, प्रबल क्षय, रक्तपित्त, वमन, दाह, अश्मरि और अर्शका नाश होता है। यह बलप्रद, वृष्य और रसायन है ।

(मात्रा — ३ माशा ।)

(८२४९) सुवर्चलाद्यलोहम्

(भै. र. ; रसे. सा. सं. । शोथा. ; धन्व. ; र. रा. सु. । शोथा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

सुवर्चला व्याघ्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ।
चव्यश्च देवकाष्ठश्च दीप्यकं लोहमेव च ॥
शोथं पाण्डुं तथा कासमुदराणि निहन्ति च ॥

संचल, व्याघ्रनख, चीतामूल, कुटकी, चव्य, देवदारु, अजवायन और लोह-भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

(मात्रा — १ माशा ।)

इसे सेवन करनेसे शोथ, पाण्डु, कास और उदर-रोगों का नाश होता है ।

सुवर्णराज वङ्गेश्वरः

प्र. सं. ५५२७ "मस्कमृगाङ्को रसः" देखिये ।

सुवर्ण वसन्तमालती रसः

प्र. सं. ६९७१ "वसन्तमालती रसः" देखिये ।

(८२५०) सूचिकाभरणरसः (१) (लघु)

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; शा. सं. । खं. २ अ. १२ ; र. सं. क. । उल्ला. ४ ; भै. र. ; वृ. यो. त. । त. ६० ; यो. चि. म. । अ. ७ ; र. प्र. सु. । अ. ८ ; वृ नि. र. ; र. का. धे. ; र. रा. सु. ; धन्व. । ज्वरा.)

विषं पलमितं सूतः शाणिकश्चूर्णयेद् द्वयम ।
तच्चूर्णं सम्पुटे क्षिप्त्वा काचलिप्तशरावयोः ॥
मुद्रां दत्वा च संशोष्य ततश्चूल्यां निवेशयेत् ।
वह्निं शनैः शनै कुर्यात्प्रहरद्वयसङ्ख्यया ॥
तत उद्घाटयेन्मुद्रामुपरिस्थशरावकात् ।
संलग्नो यो भवेत्सूतस्तं गृह्णीयाच्छनै शनैः ॥
वायुस्पर्शो यथा न स्यात्तथा कूप्यां निवेशयेत् ।
यावत्सूच्या मुखे लग्नं कुप्या निर्याति भेषजम् ॥
तावन्मात्रो रसो देयो मूर्छिते सन्निपातिनि ।
क्षुरेण प्रच्छिते मूर्ध्नि तत्राङ्गुल्या च घर्षयेत् ॥

रक्तभैषजसम्पर्कान्मूर्छितोऽपि हि जीवति ।
तथैव सर्पदष्टस्तु मृतावस्थोऽपि जीवति ॥
यदा तापो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥

शुद्ध बछनाग ५ तोले और शुद्ध पारद ३॥ माशे ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल करें । तदनन्तर दो ऐसे शराव लें कि जिनके भीतर काच चढ़ाया हुवा हो और उनमें उपरोक्त औषध बन्द करके ३-४ कपरमिट्टी कर दें और उसे सुखा कर चूल्हे पर चढ़ा कर उसके नीचे २ पहर तक मन्दाग्नि जलावें । तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर शरावोंको आहिस्तासे खोल कर ऊपरके प्यालेमें लगे हुवे रसको सावधानीसे छुड़ा लें । इसे ऐसी शीशीमें रखना चाहिये कि औषधको हवा न लगे ।

जब रोगी सन्निपात या सर्पविषसे मूर्च्छित हो तो उसके शिर पर (तालु पर) छुरेसे त्वचाको ज़रा खुरच दें और सुईकी नोकसे शीशीमेंसे औषध निकाल कर उस स्थान पर मल दें । सुईकी नोक पर जितनी औषध लगजाए उतनी ही पर्याप्त होती है ।

रक्तके साथ औषधका सम्पर्क होते ही मूर्छित रोगी भी सचेत हो जाता है । इसके प्रभावसे सर्पदष्ट मृतप्रायः रोगी भी जीवित हो जाता है ।

यदि औषध अधिक गरमी करे तो मधुर पदार्थ खिलाना चाहियें ।

(८२५१) सूचिकाभरणरसः (२)

(र. चि. म. । स्त. ८)

येन केनाप्युपायेन भस्मीभूतो भवेद्रसः ।
तच्चूर्णं वस्त्रगलितं तेनैव मिश्रयेत्सुधीः ॥
शुल्वं विषं तथा चाभ्रं खल्वे मर्द्यं मुहुर्मुहुः ।
सेवनाच्च विलीयन्ते सन्निपातास्त्रयोदश ॥
सूचिकाभरणो नाम नैव देयो ह्यमूर्छिते ।
अस्योपयोगमात्रेण सन्निपाती भयङ्करः ॥
स्वस्थः स्यादचिरेणैव संशयावसरो न हि ॥

किसी भी विधिसे बनाई हुई पारद-भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग, शुद्ध बछनाग १ भाग और अभ्रक भस्म १ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर कई दिन तक खरल करें ।

यह रस १३ प्रकारके सन्निपातोंको नष्ट करता है । इसे देनेसे भयंकरसे भयंकर सन्निपात भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है । इसे केवल मूर्छितावस्थामें ही देना चाहिये । रोगी मूछित न हो तो यह रस न देना चाहिये ।

(८२५२) सूचिकाभरणरसः (३)

(वृ. यो. त. । त. ५९ ; र. का. धे. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

खण्डं कृत्वा विषं कृष्णं सार्कदुग्धेऽल्पभाण्डके ।
सकाञ्जिके सगरले क्षिप्त्वा चुल्ल्यां निधापयेत् ॥
सप्ताहतः समुद्धृत्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं च तत् ।
सूचिकाभरणो नाम रसो गुप्ततमो भुवि ॥
सञ्ज्ञानाशे विचेष्टे च वल्लः काञ्जिकपेषितः ।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यो महामोहप्रणाशनः ॥

काले बछनागके टुकड़े करके उसे एक छोटी हाण्डीमें डालें और उसमें (उससे चार गुना) आकका दूध और उतनी ही कांजी तथा बछनागके बराबर सर्प विष मिला कर मुख बन्द कर दें और उस पर कपरमिट्टी करके चूल्हेमें गढ़ा खोदकर दबा दें कि

जिससे रोज उसके ऊपर आग जलती रहे। सात दिन पश्चात् हाण्डीको निकाल कर औषधको निकाल लें और बारीक चूर्ण करके रक्खें।

जब रोगी सन्निपात आदिसे मूर्छित हो तो उसके सिर पर (ब्रह्मरन्ध्रमें) छुरेसे त्वचाको जरा खुरच कर ३ रत्ती यह रस कांजीमें पीसकर मल दें। इससे भयंकरसे भयंकर मूर्च्छा तुरन्त नष्ट हो जाती है।

(८२५३) **सूचिकाभरणरसः** (४)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

हृद्धात्री दरदं तुल्यं गरलेन सुमर्दितम् ।
मुद्गप्रमाणा वटिका नाभिहृत्तालुदेशके ॥
कुशेन चर्मनिर्भिद्यविघृष्याद्रकवारिणा ।
रसप्रभावमात्रेण नेत्रमुद्घाटयेत्क्षणात् ॥
सावधानो भवत्येव निश्चैतन्यं प्रवर्त्तते ।
ततस्त्वेकां सुवटिकां दद्यादार्द्रकवारिणा ॥
सर्वथासुखमाप्नोति भोजयेद्दधिभक्तकम् ।
सूचिकाभरणो नामरसः परमदुर्लभः ॥

हृद्धात्री (हियावली) और शुद्ध हिंगुल समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर सर्पविषसे खरल करें और मूंगके बराबर गोलियां बना लें।

जब रोगी मूर्च्छित हो तो उसकी नाभि, हृदय या तालु (खोपरी) पर कुशसे चर्ममें छेद करके उस स्थान पर इस रसकी १ गोली अदरकके रसमें घिसकर मल दें।

इसका प्रभाव होते ही रोगी तुरन्त चेतमें आकर आंखें खोल देता है। उस समय १ गोली अदरकके रसमें मिलाकर उसे खिला भी देनी चाहिये जिससे वह पूर्णतः निरोग हो जायगा।

पथ्य—दही भात।

(८२५४) **सूतभस्मयोगः** (१)

(र. का. धे. । मूत्राघाता.)

लवणक्षारसंयुक्तं सूतकं यः पिबेन्नरः ।
तस्य नश्यन्ति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥

सेंधा नमक और जवाखार (१-१ माशा) तथा पारद भस्म १ रत्ती लेकर तीनोंको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे १३ प्रकारके मूत्रकृच्छ्र शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(८२५५) **सूतभस्मयोगः** (२)

(र. का. धे. । मूत्रकृच्छ्रा.)

रसवल्लं यवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि लभन्ते नाशतां जवात् ॥

तक्रमें मिश्री और (१ माशा) यवक्षार तथा २ रत्ती पारद-भस्म मिलाकर सेवन करनेसे समस्त प्रकार के मूत्रकृच्छ्र शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(८२५६) **सूतभस्मयोगः** (३)

(र. चं. । विसर्पा.)

गुडूचीनिम्बजक्वाथैः खदिरेन्द्रयवाम्बुना ।
कर्पूरत्रिसुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं द्विवल्लकम् ॥
विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव ॥

६ रत्ती (व्य. मात्रा १-२ रत्ती) पारद भस्मको कपूर, दालचीनी, इलायची और तेजपातके चूर्णके साथ मिलाकर गिलोय, नीमकी छाल, खैरसार और इन्द्रजौके काथके साथ सेवन करनेसे विस्फोटकका शीघ्र ही नाश होता है।

(८२५७) **सूतभस्मयोगः** (४)

(र. चं. । शीतपित्ता.)

यमानीगुडसम्मिश्रं सूतभस्म द्विवल्लकम् ।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलविलेपनम् ॥

अजवायन के चूर्ण और गुड़के साथ ६ रत्ती पारद-भस्म मिलाकर सेवन करने से शीतपित्त (पित्ती) का शीघ्र नाश होता है । शीतपित्त में कड़वे तेलका लेप भी करना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा—१-२ रत्ती ।

(८२५८) **सूतभस्मयोगः** (५)

(र. च. ; र. रा. सु. । वातरोगा.)

शङ्खपुष्पी वचा ब्राह्मी कुष्ठमेलारसैः सह ।
सूतभस्म प्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः ॥
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः ॥

शंखपुष्पी, बच, ब्राह्मी, कूठ और इलायची समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इस काथके साथ २ रत्ती पारद भस्म सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अपस्मार नष्ट होते हैं ।

(८२५९) **सूतभस्मयोगः** (६)

(रसे. सा. सं. । अरोचका.)

ससूतमरुचिघ्नं स्यात्तिन्तिडीकगुडोषणम् ।
मृद्वीका जीरकं कृष्णा मातुलुङ्गाम्लवेतसम् ॥

तिन्तड़ीक (इमली), गुड़, काली मिर्चका चूर्ण, मुनक्का, जीरेका चूर्ण और पीपलका चूर्ण तथा अम्लवेतका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर बारीक पीसें और फिर उसमें १ भाग पारद-भस्म (या रससिन्दूर) मिलाकर अच्छी तरह खरल करें ।

इसे बिजौरे नीबूके रसमें मिलाकर सेवन करने से अरुचिका नाश होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(८२६०) **सूतराजः**

(र. रा. सु. ; र. चं. । ग्रहण्य.)

रसगन्धाभ्रकाणां च भागानेकद्विकाष्टकान् ।
सञ्चूर्ण्य सर्वरोगेषु युञ्ज्याद्वल्लचतुष्टयम् ॥
ग्रहणीक्षयगुल्मार्शोमेहधातुगतज्वरान् ।
निहन्ति सूतराजोऽयं मण्डलस्य च सेवनात् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग और अभ्रक-भस्म ८ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

मात्रा—१॥ माशा (व्यवहारिक मात्रा १ रत्ती ।)

इसके सेवनसे संग्रहणी, क्षय, गुल्म, अर्श, प्रमेह, और धातुगतज्वरका ४० दिनमें नाश हो जाता है ।

(८२६१) **सूतशेखररसः** (१)

(र. च. ; वृ. नि. र. ; यो. र. । अम्लपित्ता.)

शुद्धं सूतं मृतं स्वर्णं टङ्कणं वत्सनागकम् ।
व्योषमुन्मत्तबीजं च गन्धकं ताम्रभस्मकम् ॥
चातुर्जातं शङ्खभस्म बिल्वमज्जा कचोरकम् ।
सर्वं समं क्षिपेत्खल्वे मर्द्यं भृङ्गरसैर्दिनम् ॥

गुञ्जामात्रां वटिं कृत्वा द्विगुञ्जे मधुसर्पिषा ।
भक्षयेदम्लपित्तघ्नो वान्तिशूलामयापहः ॥
पञ्चगुल्मान्पञ्चकासान् ग्रहण्यामयनाशनः ।
त्रिदोषोत्थातिसारघ्नः श्वासमन्दाग्निनाशनः ॥
उग्रहिक्कामुदावर्तं देहयाप्यगदापहः ।
मण्डलान्नात्र सन्देहः सर्वरोगहरः परः ॥
राजयक्ष्महरः साक्षाद्रसोऽयं सूतशेखरः ॥

शुद्ध पारद, स्वर्ण–भस्म, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, अभ्रक–भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, धतूरेके शुद्ध बीज, शुद्ध गंधक, ताम्र–भस्म, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, शंख-भस्म, बेलकी गिरी और कचूर समान भाग ले कर प्रथम पारे–गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका बारीक चूर्ण मिलाकर, १ दिन भंगरेके रसमें खरल करके २–२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १–१ गोली शहद और घीके साथ ४० दिन तक खानेसे अम्लपित्त, वमन, शूल, ५ प्रकारके गुल्म, ५ प्रकारकी खांसी, संग्रहणी, त्रिदोषज अतिसार, श्वास, अग्निमांद्य, उग्र हिक्का (हिचकी), उदावर्त और राजयक्ष्माका अवश्य नाश हो जाता है ।

सूतशेखररसः (२)

प्र. सं. ६०३३ "रक्तसूतशेखररसः" देखिये ।

सूतशेखररसः (३)
(सूर्यशेखररसः)

(वृ. नि. र. । कफपित्तज्वरा. ; र. चि. । स्त. ११)

प्र. सं. ७६३८ "शीतारि रसः (१)" देखिये ।

(८२६२) सूतादिगुटिका

(यो. र. ; र. चं. ; र. रा. सु. । अरोचका. ; वृ. यो. त. । त. ८२)

सूतगन्धाभ्र मगधाम्लिका मरिचसैन्धवैः ।
गुटिकाऽरोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिकृत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक–भस्म, पीपलका चूर्ण, इमलीके फल, मिर्चका चूर्ण और सेंधा नमकका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण तथा पानीके साथ पत्थर पर पीसी हुई इमली मिलाकर अच्छी तरह खरल करें और (३–३ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे अरुचि नष्ट होती तथा जिह्वा और मुख शुद्ध होता है ।

(सुबह शाम १–१ गोली मुंहमें रखकर रस चूसना चाहिये ।

(८२६३) सूतादियोगः (१)

(र. रा. सु. । मदात्यया.)

पूरकं हिङ्गुरुचकं सचव्यविश्वदीप्यकम् ।
चूर्णं ससूतं मद्येन पीतं पानात्ययं जयेत् ॥

बिजौरे नीबूकी मज्जा, हींग, काला नमक, चव्य, सोंठ, और अजवायन इनका चूर्ण तथा रससिन्दूर १–१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे मद्यके साथ सेवन करनेसे पानात्ययका नाश होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(८२६४) सूतादिवटी

(र. चं. ; वृ. नि. र. । उपदंश.)

शुद्धसूतं च भल्लातं पिप्पलीमूलपिप्पली ।
आकल्लकं जातिपत्री सुरकं देवपुष्पकम् ॥
मर्दयेत्समभागेन पुराणगुडमिश्रितम् ।
उपदंशेषु सर्वेषु प्रमाणं रक्तिका वटी ॥

शुद्ध पारद, भिलावा, पीपलामूल, पीपल, अकरकरा, जावत्री, वंग-भस्म (या तालमखाना) और लौंग-इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके पुराने गुड़में मिलाकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके उपदंश नष्ट होते हैं ।

(८२६५) सूतिकाघ्नो रसः

(भै. र. ; र. रा. सु. ; र. चं. ; रसे. सा. सं. । सूतिका. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसगन्धकलोहाभ्रं जातीकोषं सुवर्चलम्[1] ।
समांशं मर्दयेत्खल्वे छागीदुग्धेन पेषयेत् ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन सूतिकातङ्कनाशनः ।
ज्वरातिसाररोगघ्नः कासश्वासातिसारनुत् ॥
सूतिकाघ्नो रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्तितः ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, लोह-भस्म, अभ्रक-भस्म, जावत्रीका चूर्ण और काले नमकका चूर्ण (पाठान्तरके अनुसार स्वर्ण-भस्म) समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर बकरीके दूधमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे सूतिका रोग, ज्वरातिसार, कास श्वास और अतिसारका नाश होता है ।

(८२६६) सूतिकान्तकरसः

(रसे. सा. सं. । सूतिका. ; र. रा. सु. । सूतिका. ; भै. र. । स्त्रीरोगा.)

रसाभ्रगन्धकव्योषं सुवर्णमाक्षिकं विषम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥
सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्द्यञ्च नाशयेत् ।
अतिसारञ्च शमयेदपि वैद्यविवर्जितम् ॥
कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥

शुद्ध पारद, अभ्रक-भस्म, शुद्ध गंधक, सोंठ, मिर्च, पीपल, स्वर्ण-माक्षिक-भस्म और शुद्ध बछनाग समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करें ।

मात्रा—४ रत्ती ।

इनके सेवनसे सूतिका रोग, संग्रहणी, अग्निमांद्य, भयंकर अतिसार, कास और श्वासका नाश होता है । यह रस उत्तम वाजीकरण भी है ।

(८२६७) सूतिकाभरणरसः

(र. चं. ; यो. र. । वाता. ; भै. र. । स्त्री.)

सुवर्णं रजतं ताम्रं प्रवालं पारदं समम् ।
गन्धकं चाभ्रकं तालं शिला त्रिकटु रोहिणी ॥
एतानि समभागानि रविक्षीरेण मर्दयेत् ।
चित्रमूलकषायेण पुनर्नवरसेन च ॥

[1] " सुवर्णकमिति " पाठान्तरम्

दिनं गजपुटे पाच्यं मूषायां धारयेत्पृथक् ।
अनुपानविशेषेण देयं गुञ्जार्धकं तु तत् ॥
सूतिकारोगमतुलं धनुर्वातं विशेषतः ।
त्रिदोषोत्थान्हरेद्‌व्याधीनिच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥
सूतिकाभरणं नाम सर्वरोगहरं च तत् ॥

स्वर्ण-भस्म, चांदी-भस्म, ताम्र-भस्म, प्रवाल-भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक-भस्म, शुद्ध हरताल, मनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल और कुटकी समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर १-१ दिन आकके दूध, चीतामूलके काथ और पुनर्नवाके रसमें खरल करके सबका एक गोला बनावें और उसे सुखा कर मूषामें बन्द करके गजपुटमें पकावें।

मात्रा—आधी रत्ती।

इसे यथोचित अनुपानके साथ देनेसे प्रवृद्ध सूतिका रोग, विशेषतः धनुर्वात और अन्य सन्निपातज रोगोंका नाश होता है।

इस पर किसी विशेष परहेज़की आवश्यकता नहीं है।

(८२६८) सूतिकारिरसः (१)

(सूतिकातङ्कनाशिनी वटी)

(र. चं. । सूतिका. ; रसे. चि म. । अ. ९ ; भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. र. । स्त्रीरोगा. ; धन्व. । सूतिका.)

रसगन्धककृष्णाभ्रं तदर्धं मृतताम्रकम्× ।

× भै. र. में. निम्नलिखित पाठ है—
" रसं गन्धं मृताभ्रं च मृतताम्रञ्च तुल्यकम् "

चूर्णितं मर्दयेद्यत्नाद् भेकपर्णी रसेन च ॥
छायाशुष्का वटी कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
क्षीरत्रिकटुना युक्ता सूतिकातङ्कनाशिनी ॥
ज्वरं तृष्णारुचिं शोथं हन्त्यसाध्यं न संशयः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक और अभ्रक भस्म १-१ भाग तथा ताम्र भस्म १॥ भाग (पाठान्तरके अनुसार १ भाग) ले कर सबको एकत्र मिला कर मण्डूकपर्णीके रसमें १ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इनके सेवनसे कष्ट साध्य सूतिका रोग, ज्वर, तृष्णा, अरुचि और शोथका नाश होता है।

अनुपान—सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण मिला हुवा दूध।

(८२६९) सूतिकारिरसः (२)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । स्त्रीरोगा.)

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं गन्धकं हेम तारकम् ।
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गैला च धातकी ॥
वत्सकेन्द्रयवः पाठा भृङ्गी विश्वाजमोदिका ।
प्रसारणीरसैः कार्या गुडी गुञ्जाद्वयोन्मिता ॥
भक्षयेत्तद्रसैः प्रातः सूतिकातङ्कशान्तये ।
जीर्णज्वरं हन्ति शोथं ग्रहणीप्लीहकासनुत् ॥

सुहागेकी खील, मूर्च्छित पारद (रस सिंदूर), शुद्ध गंधक, स्वर्ण-भस्म, चांदी-भस्म, जायफल, जावत्री, लौंग, इलायची, धायके फूल, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, पाठा, काकड़ासिंगी, सोंठ और अजमोद समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला

कर प्रसारणीके रसमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इन्हें प्रसारणीके रसके साथ प्रातः काल सेवन करनेसे सूतिका रोग, जीर्णज्वर, शोथ, संग्रहणी, प्लीहा और कासका नाश होता है।

(८२७०) सूतिकारोगनाशनरसः

(र. चं. । सूतिका. ; र. र. स. । उ. अ. २२)

स्वर्णतारघनभानुतीक्ष्णकं
तेषु चैकमतिमात्रमारितम् ।
सूतिकासकलरोगनाशनं
रोगहारि विहितानुपानतः ॥

स्वर्ण-भस्म, चांदी-भस्म, अभ्रक-भस्म, ताम्र-भस्म और तीक्ष्ण लोह-भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसके सेवनसे सूतिका रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—१ रत्ती ।)

(८२७१) सूतिकावल्लभो रसः (बृहद्)

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

सूतं गन्धं माक्षिकञ्च व्योमेन्दुं हेमतालकम् ।
रजतं फणिफेनञ्च जातीकोषफले तथा ॥
मुस्तकस्य बलायाश्च शाल्मल्याः स्वरसेन च ।
भावयित्वा वटीः कुर्याद् द्विगुञ्जापरिमाणतः ॥
सूतिकावल्लभो नाम प्रयुक्तोऽयं महान् रसः ।
निहन्यात् सूतिकारोगान् दुर्वारं ग्रहणीगदम् ॥
अतीसारं सुघोरञ्च दौर्बल्यं वह्निमन्दताम् ।
जनयेदाशु पुष्टिञ्च कान्ति मेधां धृतिं तथा ॥

शुद्ध पारद, गंधक, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, अभ्रक-भस्म, कपूर, स्वर्ण-भस्म, शुद्ध हरताल, चांदी-भस्म, शुद्ध अफीम, जावत्री और जायफल समान भाग ले कर प्रथम पारे-गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर नागरमोथे, खरैटी और सेंभलकी छालके रसमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे सूतिका रोग, कष्ट साध्य ग्रहणी रोग, प्रबल अतिसार, दुर्बलता और अग्निमांद्यका नाश हो कर पुष्टि, कान्ति, मेधा और धृतिकी वृद्धि होती है।

(८२७२) सूतिकाविनोदरसः(१) (बृहद)

(भै. र. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. ; र. र. । स्त्रीरोगा.)

शुण्ठ्या भागो भवेदेको द्वौ भागौ मरिचस्य च ।
पिप्पल्याश्च त्रिभागाः स्युरर्द्धभागश्च व्योमकम् ॥
जातीकोषस्य भागौ द्वौ द्वौ भागौ तुत्थकस्य च ।
सिन्धुवारजलेनैव मर्दयेदेकयामतः ॥
मधुना सह भोक्तव्यः सूतिकातङ्कनाशनः ॥

सोंठ १ भाग, काली मिर्च २ भाग, पीपल ३ भाग, अभ्रक भस्म आधा भाग, जावत्री २ भाग और शुद्ध तूतिया २ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर १ पहर संभालूके रसमें घोट कर सुखा लें।

इसे शहदमें मिला कर सेवन करनेसे सूतिका-रोगका नाश होता है।

(मात्रा—२ रत्ती ।)

सूतिकाविनोदरसः (२)

(रसे. सा. सं. । सूतिका. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. रा. सु.)

प्र. सं. १५५९ " गर्भ विलास रस: " देखिये ।

(८२७३) सूतिकाहरो रसः (१)

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

हिङ्गुलं हरितालञ्च शङ्खभस्मायसो रजः ।
खर्परं धूर्त्तबीजञ्च यवक्षारञ्च टङ्कणम् ॥
विभीतककषायेण भावयित्वा विधानतः ।
मर्दयित्वा विदध्याच्च गुञ्जैकप्रमिता वटीः ॥
यथादोषानुपानेन प्रयुक्तोऽयं रसोत्तमः ।
निहन्यात् सूतिकातङ्कान् वह्निस्तृणगणानिव ॥

शुद्ध हिंगुल, हरताल, शंख--भस्म, लोह--भस्म, खपरिया, धतूरेके बीज, जवाखार और सुहागेकी खील समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर बहेड़ेके काथमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इसे यथोचित अनुपानके साथ देनेसे सूतिका रोग इस प्रकार नष्ट हो जाता है जिस प्रकार अग्निसे तृणसमूह ।

(८२७४) सूतिकाहरो रसः (२)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. र. । सूतिका. ; भै. र. । स्त्री. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

लवङ्गं रसगन्धौ च यवक्षारं तथाभ्रकम् ।
लौहं ताम्रं सीसकञ्च पलमानं समाहरेत् ॥
जातीफलं केशराजं वरा भृङ्गैला मुस्तकम् ।
धातकीन्द्रयवं पाठा शृङ्गी बिल्वं च बालकम् ॥
कर्षप्रमाणं सञ्चूर्ण्य सर्वमेकत्र कारयेत् ।
रक्तिकैकप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
गन्धालिकापत्ररसैरनुपानं प्रदापयेत् ।
सर्वातिसारशमनः सर्वशूलनिवारणः ॥
सूतिकाहरनामायं सूतिका नाशयेद्ध्रुवम् ॥

लौंग, शुद्ध पारा, गंधक, जवाखार, अभ्रक-भस्म, लोह-भस्म, ताम्र-भस्म और सीसा-भस्म ५-५ तोले तथा जावत्री, भंगरा, हर्र, बहेड़ा, आमला,काला भंगरा, इलायची, नागरमोथा, धायके फूल, इन्द्रजौ, पाठा, काकड़ासिंगी, बेलगिरी और सुगन्धबाला-इनका चूर्ण १।-१। तोला लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर प्रसारणी (या जायफल) के काथमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इसे प्रसारणी या जायफलके काथके साथ देनेसे समस्त प्रकारके अतिसार, समस्त शूल और सूतिकारोगका नाश होता है ।

(८२७५) सूतेन्द्ररसः

(र. चं. । वाजीकरणा. ; र. र. स. । वाजीकरणा.)

मुक्ताफलं प्रवालं च सुवर्णं रौप्यमेव च ।
रसोगन्धश्च तत्सर्वं तोलैकैकं प्रकल्पयेत् ॥
रक्तोत्पलैः पत्ररसैर्मर्दयेत्पत्तलीकृते ।
मर्दयेत्तत्पुनर्दत्वा गन्धं माषचतुष्टयम् ॥
तन्मध्ये गन्धकं दत्वा मर्दयेत्तदनन्तरम् ।
क्षिप्त्वा काचघटीमध्ये सन्निरुध्य मुखं ततः ॥

वालुकायन्त्रमध्यस्थां कृत्वा काचघटीं ततः ।
पाकस्तत्र तथा कार्यो भवेद्यामत्रयं यथा ॥
काचपात्रे समाकर्षेत् सिद्धं सूतं ततः परम् ।
भक्षयेद्रक्तिकाः पञ्च रोगैराक्रान्तमानवः ॥
पथ्यादि पूर्वरोगोक्तं यत्नतः कारयेद्भिषक् ।
दुर्बलं वपुरत्यर्थं बलयुक्तं करोत्यसौ ॥
शुक्रवृद्धिं करोत्येष ध्वजभङ्गं च नाशयेत् ।
मासेनैकेन सूतेन्द्रो रोगनाशाय कल्पते ॥
शालयो मुद्गयुक्ताश्च गोधूमा भोजने हिताः ।
घृतं गव्यं तथा क्षीरं स्निग्धं पथ्यं प्रयोजयेत् ॥

मोती-भस्म, प्रवाल, सुवर्ण-भस्म, चांदी-भस्म, शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक १-१ तोला ले कर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर लाल कमलके पत्तों (पंखड़ियों) के रसमें खरल करके सुखा लें और फिर उसमें पुनः ४ माशे गन्धक मिलाकर अच्छी तरह खरल करें । तदनन्तर उसे कपडमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसका मुख बन्द करके ३ पहर बालुका-यन्त्रमें पकावें । तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर कांचकी शीशीमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—५ रत्ती । (**व्यवहारिक मात्रा**-१ रत्ती ।)

इसके सेवनसे दुर्बल रोगी अत्यन्त बलवान हो जाता है । यह रस ध्वजभंगको नष्ट और वीर्यवृद्धि करता है । इसे १ मास तक सेवन करना चाहिये ।

पथ्य—शालि चावलका भात, मूंगकी दाल, गेहूं, गोदुग्ध, गोघृत और अन्य स्निग्ध पदार्थ ।

(८२७६) सूर्यकान्तरसः

(र. र. । कुष्ठा.)

तार्क्ष्यं गन्धं शुद्धं सूतं शिलाजत्वम्लवेतसम् ।
मृतताम्राभ्रकं तुल्यं मध्वाज्यगुडमिश्रितम् ॥
माषैकं जिह्मगं हन्ति सूर्यकान्तो महारसः ।
मुण्डीपञ्चाङ्गचूर्णं च वाकुचीतुल्यचूर्णकम् ॥
मध्वाज्यसंयुतं कर्षं लेहयेदनुपानकम् ॥

स्वर्णमाक्षिक-भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, शिलाजीत, अम्लवेतका चूर्ण, ताम्र-भस्म और अभ्रक-भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर खरल करें ।

इसे गुड़में मिलाकर घी और शहदके साथ सेवन करनेसे जिह्मग (ऋष्यजिह्वक) कुष्ठ नष्ट होता है ।

मात्रा—१ माशा ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ रत्ती ।)

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् मुण्डीके पंचांग और बावचीके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहद और घीमें मिला कर चाटना चाहिये ।

मात्रा—१ तोला । (व्य. मा.—३ माशा ।)

(८२७७) सूर्यचन्द्रप्रभागुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

त्रिकत्रयं हरिद्रे द्वे तिक्ता तिक्तं शठी वचा ।
वेल्लचित्रकतालीसभार्गीपद्मकजीरकम् ॥

द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं पटूनि त्रीणि तुम्बरु ।
देवदारु वचा चव्यं धान्यकं गजपिप्पली ।
वत्सकातिविषादन्तीश्यामापुष्करकामृताः ॥
भागोऽमीषां सूक्ष्मचूर्णीकृतानां
भागश्चार्धस्तापितीरोद्भवस्य ।
तद्वद्वांश्या, भागवृद्ध्या परे स्यु-
रभ्रं लोहं शैलजं कौशिकश्च ॥
सम्मर्द्य गुटिका कार्या सूर्यचन्द्रप्रभाभिधा ।
पूर्वाह्णे तां प्रयुञ्जीत माक्षिकेण परिप्लुताम् ॥
अनुपाने प्रयुञ्जीत तक्रं मधु रसोत्तमम् ।
क्षीरं बदरतोयं वा शर्करामिश्रितं जलम् ॥
घृतं मूत्रं तथा चाम्लस्वादुदाडिमजं रसम् ।
कासं श्वासं तथा शोषमरुचिं पार्श्ववेदनाम् ॥
अर्शांसि कामलां मेहं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
हृद्रोगं मूत्रकृच्छ्रं च श्वयथुं ग्रहणीगदम् ॥
यकृत्प्लीहाभिवृद्धिं च कृमिं ग्रन्थिं भगन्दरम् ।
श्लीपदं गण्डमालां च व्रणान्नाडीव्रणानपि ॥
अतिस्थौल्यातिकार्श्यं च विद्रधीन्पिडिकामपि ।
नासानेत्राश्रितान्रोगान् शिरोरोगान्
सुदारुणान् ॥
मुखरोगानशेषांश्च रक्तपित्तं स्वरक्षयम् ।
ज्वरं च सन्निपातोत्थं विषमं चापि पैत्तिकम् ॥
विंशतिं श्लेष्मिकांश्चैव संसृष्टान् सान्निपातिकान् ।
निजानृतुभवांश्चैव ये चान्ये नात्र कीर्तिताः ।
तान् तान् प्रशमयत्येषा वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्व-
मायुःप्रकर्षं पवनानुलोम्यम् ।
स्त्रीषु प्रहर्षं बलमिन्द्रियाणा-
मग्नेश्च कुर्याद्विधिनोपयुक्ता ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, तेजपात, इलायची, हल्दी, दारुहल्दी, कुटकी, चिरायता, कचूर, बच, बायबिड़ंग, चीता-मूल, तालीस पत्र, भरंगी, पद्माक, जीरा, जवाखार, सज्जीखार, पीपलामूल, सेंधा नमक, सञ्चल (काला नमक), सामुद्र लवण, तुम्बरु, देवदारु, बच, चव्य, धनिया, गजपीपल, कुड़ेकी छाल, अतीस, दन्तीमूल, काली निसोत, पोखरमूल और गिलोय-इनका चूर्ण २-२ तोले; स्वर्णमाक्षिक-भस्म और बंसलोचनका चूर्ण १-१ तोला; अभ्रक भस्म २ तोले, लोह-भस्म ४ तोले, शिलाजीत ६ तोले और शुद्ध गूगल ८ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर कूट कर (२-२ माशे) की गोलियां बना लें।

(गूगलमें थोड़ा घी मिला कर उसे पतला करके उसमें समस्त चूर्ण मिला कर कूटना चाहिये।)

इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल शहदमें मिला कर खानी चाहिये।

अनुपान—तक्र, शहद, दूध, बेरका रस, खांडका पानी (शरबत), घी, गोमूत्र और खट्टे मीठे अनारका रस—इनमेंसे कोई एक पदार्थ।

इसके सेवनसे श्वास, कास, शोष, अरुचि, पार्श्वपीड़ा, अर्श, कामला, प्रमेह, पाण्डु, हलीमक, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, शोथ, संग्रहणी, यकृत्, प्लीहा, कृमिरोग, ग्रन्थि, भगन्दर, श्लीपद, गण्डमाला, व्रण, नाडीव्रण, अति स्थूलता, अति कृशता, विद्रधि, पिडका, नासारोग, नेत्ररोग, शिरोरोग, समस्त

मुख रोग, रक्तपित्त, स्वरक्षय, सन्निपात ज्वर, विषम ज्वर, पैत्तिक ज्वर, द्वन्द्वज ज्वर, २० प्रकारके कफ रोग, एवं दोषज और ऋतुके प्रभावसे उत्पन्न होने वाले अन्य रोग शीघ्रही नष्ट हो जाते हैं।

यह रस मेधा, स्मृति, कान्ति, आरोग्य, आयु, कामशक्ति, इन्द्रियबल और अग्निकी वृद्धि तथा वायुको अनुलोम करता है।

सूर्यचन्द्रात्मकरसः

(र. चं. ; र. रा. सु. । पाण्डु.)

प्र. सं. १८९८ " चन्द्रसूर्यात्मको रसः " देखिये।

(८२७८) सूर्यपाकताम्रम्

(र. का. धे.। अम्लपित्ता. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

विचूर्ण्य गन्धाश्म पलं विशुद्धं
रसद्विकर्षेण समं च खल्वे ।
रसार्धसौवर्चलचूर्णयुक्तं
तत्खल्वितं खल्वशिलासु यत्नात् ॥
सूर्यावर्तककर्णमोरट-
रसैराप्लाव्य तत्कज्जलीं ।
नेपालोद्भवताम्रकं पलमितं
तत्कण्टवेधायितम् ॥
तेनालिप्य च कज्जलेन
सुचिरं जम्बीरनीरस्थितं ।
खल्लाश्मार्पितमेतदातप-
धृतं पिण्डीकृतं घट्टनैः ॥
सम्पिष्याशु शुभं सुपर्णे निहितं
रक्तित्रयं योजयेत् ।
तत्कालोचित वक्त्र शुद्धिरुचिता
चूर्णं विना प्रत्यहम् ॥
हन्त्येतद्वमनाम्लपित्तज-
गदान्पाण्डवाग्निमान्द्यज्वरान् ।
रक्तीवर्धित माष एव नियतो
लोहोक्त सेवाविधिः ॥

शुद्ध गंधक ५ तोले और शुद्ध पारद २॥ तोले ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर उसमें १। तोला संचल (काले नमक) का चूर्ण मिला कर सूर्यावर्त (हुलहुल) और कर्णमोरटके रसमें खरल करें एवं ५ तोले शुद्ध नेपाली ताम्रके कण्टकवेधी पत्रोंपर उसका लेप कर दें और उन्हें पत्थरके खरलमें डाल कर उसमें जम्बीरी नीबूका रस डाल कर धूपमें रख दें। जब ताम्रपत्र भस्मीभूत हो जाएं तो उन्हें खरल करके धूपमें सुखा लें।

मात्रा—३ रत्ती। (**व्यवहारिक मात्रा**—१ रत्ती।)

इसे बिना चूनेके पानमें रख कर खानेसे वमन, अम्लपित्त, पाण्डु, अग्निमांद्य और ज्वरका नाश होता है।

इसकी मात्रा थोड़ी थोड़ी बढ़ाते हुवे १ माषा कर देनी चाहिये और इस पर पथ्यादिकी व्यवस्था लोह सेवनके समान करनी चाहिये।

(१ माषा मात्रा अधिक है, योग्य चिकित्सककी सम्मतिसे सेवन करना चाहिये।)

सूर्यप्रभरसः

प्र. सं. ५५८४ "महासूर्यप्रभरसः"देखिये।

(८२७९) सूर्यप्रभागुटिका (१)

(र. र. स. । उ. अ. १९)

भार्ङ्गीवह्निजयायुगाभ्र-
कदलीपाठावचारोचना-
श्चव्यं पत्रकचित्रकं त्रि-
कटुकं क्षारद्वयं गन्धकम् ।
त्रायन्ती हरबीज केसरि
विषद्वन्द्वं लवङ्गं कणा
कुष्ठं शल्यफलं फलत्रय-
युतं फेनः समुद्रादपि ॥
ब्रह्मबीजं लताबीजं
बालबिल्वं विरूढकम् ।
लवणानि तथा पञ्च
जात्यादि कुसुमाष्टकम् ॥
वातारितैले नैतेषां
कल्पिता भिषजां वरैः ।
एषा सूर्यप्रभा नाम
गुटिकाऽग्निप्रदीपनी ॥

भरंगी, चीतामूल, जैत, हर्र, अभ्रक-भस्म, कदलीकन्द, पाठा, बच, गोरोचन, चव्य, तेजपात, चीतामूल सोंठ, काली मिर्च, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, शुद्ध गंधक, त्रायमाणा, शुद्ध पारद, महा बला, दो प्रकारका बछनाग, लौंग, पीपल, कूठ, मैनफल, हर्र, बहेड़ा, आमला, समुद्रफेन, पलाश (ढाक) के बीज, मालकंगनीके बीज, कच्ची बेलगिरी, अंकुरित धान्य, पांचो नमक, और चमेली आदि आठ प्रकारके पुष्प (चमेली, जूही, मालती, चम्पा, सेवती, मौलसिरी, मोगरा और कदम्ब) समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर अण्डीके तेलमें खरल करके (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्नि दीप्त होती है।

(८२८०) सूर्यप्रभागुटिका (२)

(यो. र. । क्षय. ; वृ. यो. त. । त. ७६.)

दार्वी व्योषविडङ्गचित्रकवचापीताकरञ्जामृता-
देवाह्वातिविषा त्रिवृत्सकटुका कुस्तुम्बरुःकारवी।
द्वौ क्षारौ लवणत्रयं गजकणा चव्यं तथा पुष्करं
तालीसं कणमूलपुष्करजटाभूनिम्बसंज्ञैर्युतम् ॥
भार्गी पद्मकजीरकोशकुटजो दन्ती वचा भद्रकं
सर्वं कर्षसमांशकं सुभिषजा सूक्ष्मं च संचूर्णितम् ।
तद्वत्पञ्चपलं वरं गिरिजतु स्यात्पञ्चमुष्टिः पुरो-
र्लोहस्य द्विपलं पलद्वयमथोताप्यस्य संमिश्रितम्॥
क्षिप्त्वा पञ्च पलानि शुभ्रसिकता वांशीपलं
योजितमेकैकं त्रिसुगन्धिवस्तु पलिकं
क्षौद्रैर्घृतैर्लेहवत् ।
एकीकृत्य समांशमेव गुटिका कार्या सुवर्णो-
न्मिता सा च ब्रह्ममुखाम्बुजप्रकटिता
सूर्यप्रभा नामतः ॥
शोषं कासमुरःक्षतं सतमकं पाण्ड्वामयं कामलाम्
गुल्मं विद्रधिपार्श्वशूलमुदरं स्त्रीषु क्षयं च क्रिमीन्।
कुष्ठार्शोविषमज्वरग्रहणिकामूत्रग्रहं नाशयेत्
भुक्त्वैकां गुटिकां प्रहृष्टमनसा योऽज्यं
यथेष्टाशनम् ॥

नास्त्येतत्समऔषधं त्रिजगतीचक्रे हितं प्राणिना-
मुद्दामप्रमदामदद्विपदराट्सिंही तु सूर्यप्रभा ॥

दारुहल्दी, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिडंग, चीतामूल, बच, हल्दी, करञ्जबीज, गिलोय, देवदारु, अतीस, निसोत, कुटकी, कुस्तुम्बरु, काला जीरा, जवाखार, सज्जीखार, सेंधानमक, काला नमक, सामुद्र लवण, गजपीपल, चव, पोखरमूल, तालीस पत्र, पीपलामूल, पोखरमूल, चिरायता, भरंगी, पद्माक, सफेद जीरा, जावत्री, कुड़ेकी छाल, दन्तीमूल, बच और नागरमोथा; इनका चूर्ण १।-१। तोला तथा शुद्ध शिलाजीत २५ तोले, शुद्ध गूगल २५ तोले, लोह-भस्म १० तोले, स्वर्ण माक्षिक-भस्म १० तोले, सफेद खांड २५ तोले, बंसलोचनका चूर्ण ५ तोले, तथा दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर घी और शहदकी सहायतासे १।-१। तोलेकी गोलियां बना लें।

(प्रथम गूगल और शिलाजीतको थोड़े घीमें मिला कर कूट कर पतला करें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर आवश्यकतानुसार शहद डाल कर गोलियां बना लें।

(व्यवहारिक मात्रा—१॥ माशा।)

इसके सेवनसे शोष, कास, उरःक्षत, तमकश्वास, पाण्डु, कामला, गुल्म, विद्रधि, पार्श्वशूल, उदर रोग, स्त्री समागमसे उत्पन्न क्षीणता, कृमिरोग, कुष्ठ, अर्श, विषम ज्वर, ग्रहणी रोग और मूत्राघातका नाश होता है। यह गुटिका अत्यन्त वाजीकरण है।

इसके ऊपर यथेष्ट आहारादि किया जा सकता है। किसी विशेष प्रकारके परहेजकी आवश्यकता नहीं है।

(८२८१) सूर्यप्रभागुटिका (३)

(वृ. नि. र. ; र. रा. सु. । वातव्या. ; व. से. । वातरक्ता.)

चित्रकं त्रिफला निम्बं पटोलं मधुयष्टिका।
वराङ्गं केशरश्चैव यवानी[1] चाम्लवेतसम् ॥
भूनिम्बकश्च दार्व्येला मुस्तापर्पटकन्तथा।
तुत्थकं कटुका भार्ङ्गी चव्यपद्मकदीप्यकाः ॥
पिप्पली मरिचं दन्ती शटी शुण्ठी च पुष्करम्।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥
[2]पत्रकं कुटजं[3] रास्ना दुरालम्भामृतां त्रिवृत्।
लतारुष्कर[4]तालीसं वृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥
धान्यकश्चाजमोदा च कारवी धातुमाक्षिकम्।
जातीफलं तुगाक्षीरो वाजिगन्धा च दाडिमम् ॥
कङ्कोलकमुशीरञ्च द्विक्षारं रेणुका[5] तथा।
प्रत्येकं पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैव गुग्गुलोः।
प्रस्थमेकं सितायाश्च घृतस्य कुडवन्तथा ॥
गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थार्द्धं माक्षिकस्य च।
सर्वमेकत्र सम्मिश्र्य स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥
ऊरुस्तम्भं वातरोगं हन्त्यर्दितञ्च गृध्रसीम्।
विद्रधीं श्लीपदं गुल्मं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
कासं पञ्चविधं घोरं मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम्।
आनाहमश्मरीं वर्ध्मं ग्रहणीमपबाहुकम् ॥

पाठान्तर—१ जीवन्ती । २ पद्मकं । ३ कटुकं । ४ तुरुष्क । ५ मरिचं ।

अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सभगन्दरम् ।
हृद्रोगं शूलमुत्कम्पविषमज्वरनाशनम् ॥
उरःक्षतभवे दोषे मुखरोगे च दारुणे ।
महौषधवरादस्माद्ग्राह्यं पाणितलोन्मितम् ॥
विविधान्नानि भुञ्जीत यथेष्टञ्च यथासुखम् ।
गुटिका भास्करी नाम्ना सृष्टा देवेन शम्भुना ॥
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च वातरक्तं सकामलम् ।
अग्निसन्दीपनं हृद्यं दीर्घायुःपुष्टिदा भवेत् ॥
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः ।
कफरोगाश्च ये केचिद्द्वन्द्वजाः सान्निपातिकाः॥
ते सर्वे प्रशमं यान्ति भास्करेण तमो यथा ।
रोगविद्राविणी कार्या गुटिका सूर्यवत्प्रभा ॥

चीतामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, पटोल, मुलैठी, दालचीनी, नागकेसर, अजवायन, अम्लबेत, चिरायता, दारुहल्दी, इलायची, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, शुद्ध नीलाथोथा, कुटकी, भरंगी, चव्य, पद्माक, अजवायन, पीपल, काली मिर्च, दन्तीमूल, कचूर, सोंठ, पोखरमूल, बायबिड़ंग, पीपलामूल, जीरा, देवदारु, तेजपात, कुड़ेकी छाल, रास्ना, धमासा, गिलोय, निसोत, लता कस्तूरी, शुद्ध भिलावा, तालीसपत्र, तिन्तड़ीक, सेंधानमक, संचल (काला नमक), सामुद्र लवण, धनिया, अजमोद, काला जीरा, स्वर्ण माक्षिक-भस्म, जायफल, बंसलोचन, असगन्ध, अनारदाना, कंकोल, खस, जवाखार, सज्जीखार और रेणुका-इनका चूर्ण ५-५ तोले, शुद्ध शिलाजीत ४० तोले, शुद्ध गूगल १० तोले, मिश्री ८० तोले, घी ४० तोले, लोह-भस्म ४० तोले और शहद ४० तोले ले कर प्रथम घीमें शिलाजीत और गूगलको मिला कर घोटें और फिर उसमें समस्त औषधोंका चूर्ण तथा मधु मिला कर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे ऊरुस्तम्भ, अर्दित, गृध्रसी, विद्रधि, श्लीपद, गुल्म, पाण्डु, हलीमक, ५ प्रकारकी भयंकर खांसी, मूत्र-कृच्छ्र, गलग्रह, आनाह, अश्मरी, वर्ध्म, ग्रहणी रोग, अपबाहुक, अरुचि, पार्श्वशूल, उदर रोग, भगन्दर, हृद्रोग, शूल, कम्प, विषमज्वर, उरःक्षत और दारुण मुख रोग नष्ट होते हैं।

यह गुटिका प्रमेह, रक्तपित्त, वातरक्त, कामला और वातज, पित्तज, कफज, द्वन्द्वज तथा सान्निपातिक अन्य अनेक रोगोंमें भी गुणकारी है। यह अग्निदीपक, हृद्य, पौष्टिक और आयुवर्द्धक है।

इस पर किसी विशेष परहेजकी आवश्यकता नहीं है।

मात्रा—१। तोला। (**व्यवहारिक मात्रा**--२ माशे।)

(८२८२) सूर्यप्रभावटी

(र. सं. क. । उल्ला. ५ ; यो. र. । शूला. ; यो. त. । त. ४३ ; वृ. यो. त. । त. ९४)

व्योषग्रन्थिवचाग्नि हिङ्गुजरणद्वन्द्वं विषं
निम्बुकद्रावैरार्द्रकजे रसैर्विमृदितं तुल्यं
मरीचोपमा ।
कर्तव्या वटिकाऽथ सा दिनमुखे कवोष्णाम्बुना
शूलं त्वष्टविधं निहन्ति सहसा सूर्यप्रभा नामतः॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, बच, चीतामूल, हींग, जीरा, काला जीरा और शुद्ध बछनाग-

इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर नीबू और अदरकके रसकी एक एक भावना दे कर काली मिर्चके समान गोलियां बना लें।

इन्हें प्रातःकाल मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे आठ प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

(८२८३) **सूर्यरसः** (१)

(र. र. स. । उ. अ. १३)

रसगन्धक ताम्राभ्रं कणाशुण्ठयूषणं समम्।
भूतमेकं विषं चैकं सूर्यः कासादिनाशनः॥

शुद्ध पारद, गंधक, ताम्र–भस्म, अभ्रक–भस्म; पीपल, सोंठ, काली मिर्च, नागरमोथा और शुद्ध बछनाग–इनका चूर्ण १–१ भाग ले कर प्रथम पारे–गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर खरल करें।

यह रस कासादिको नष्ट करता है।

(**मात्रा**––१ रत्ती।)

(८२८४) **सूर्यरसः** (२)

(र. का. धे. । हिक्का. ; र. रा. सु. ; वृ. नि. र. । कासा.)

रसमेकं द्विधा गन्धं त्रितार्प्यं पञ्च तालकम्।
सर्वं शुद्धं विचूर्ण्याथ चतुर्भागं मृताभ्रकम्॥
वचा कुष्ठं हरिद्राग्निटङ्कणं सैन्धवं विषम्।
सपाठं लाङ्गली व्योषमक्षं प्रत्येकभागकम्॥
भावितं भृङ्गसारेण दिनैकं तं च भक्षयेत्।
माषं सूर्यरसो नाम हिध्मा वै श्वासकासजित्॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, स्वर्ण माक्षिक–भस्म ३ भाग, शुद्ध हरताल ५ भाग, अभ्रक–भस्म ४ भाग तथा बच, कूठ, हल्दी, चीतामूल, सुहागेकी खील, सेंधा नमक, शुद्ध बछनाग, पाठा; कलियारीकी जड़, सोंठ, मिर्च, पीपल और बहेड़ा–इनका चूर्ण १–१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर १ दिन भंगरेके रसमें घोट कर १–१ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे हिक्का (हिचकी), श्वास और कासका नाश होता है।

(**व्यवहारिक मात्रा**––२ रत्ती।)

(८२८५) **सूर्यरसः** (३)

(र. चं. । ज्वरा. ; र. प्र सु. । अ. ८)

एकं भागं वत्सनाभं च कुर्याद्–
द्वौ भागौ चेट्टङ्कणं दन्तिबीजम्॥
त्रिण्येवेते हिङ्गुलस्याऽपि तुर्यः
सद्यो जूर्तिं नाशयत्येष सूर्यः॥

शुद्ध बछनाग १ भाग, सुहागेकी खील २ भाग, शुद्ध जमालगोटा ३ भाग और शुद्ध हिंगुल १॥ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसके सेवनसे ज्वर शीघ्रही नष्ट हो जाता है।

(**मात्रा**––१–२ रत्ती।)

(८२८६) सूर्यशेखररसः (१)

(र. चि. म. । स्त. ४ ; र. का. धे. । सन्नि-पाता. ; र. च. । वातरो.)

रसो द्वादशगद्याणो गन्धकश्चात्र षोडश ।
शुद्धहिङ्गुल चत्वारो घृष्ट्वा काचघटे क्षिपेत् ॥
द्वात्रिंशदमृतं दद्यात्तस्मिन्सूते विशोधिते ।
मृदा प्रलिप्य तं कूपं शोषयित्वा खरातपे ॥
धृत्वाऽथ वालुकायन्त्रे वह्निं षट् प्रहरावधिम् ।
दत्त्वोत्तार्य स्वयं शीतं सूतं माणिक्यसन्निभम् ॥
सन्निपाते च दातव्यस्त्रिदोषोत्थे च सूतकः ।
एकैव गुञ्जिका मात्रा चोत्तमा सन्निपातके ॥
रोगोद्रेकं समीक्ष्याऽथ वर्धयेद्वा विचक्षणः ।
यदि दाहो भवेदेनं स्नापयेद्वोचितं चरेत् ॥
भोजनं वोचितं कुर्यान्मधुरप्रायमेव च ॥

शुद्ध पारद १२ गद्याण (७॥ तोले), गन्धक १६ गद्याण (१० तोले), शुद्ध हिंगुल ४ गद्याण (२॥ तोले) और शुद्ध बछनागका चूर्ण ३२ गद्याण (२० तोले) ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और उसे कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर ६ पहर बालुकायन्त्रमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें। यह देखनेमें माणिक्यके समान होगी।

इसके सेवनसे सन्निपात, ज्वर नष्ट होता है।

मात्रा—१ रत्ती। यदि रोगका वेग प्रबल हो तो मात्रा बढ़ा भी सकते हैं।

यदि इससे दाह हो तो रोगीको स्नान कराना तथा अन्य उचित उपचार करने चाहियें।

पथ्यमें मधुर रस युक्त हितकारी पदार्थ देने चाहियें।

सूर्यशेखररसः (२)

(भा. प्र. म. खं. २ । ज्वरा.)

प्र. सं. ७६३८ "शीतारि रसः (१)" देखिये।

(८२८७) सूर्यसिद्धरसः

(रस. चि. म. । स्त. २)

गुडूची भृङ्गराजश्च कुमारी कण्टकारिका ।
त्रिफला काकमाची च कदली वाजिगन्धिका ॥
वर्गस्यास्य रसैश्चापि मुसल्याश्च पुनर्नवैः ।
प्रत्येकं मर्दयेदेतैः पारदं प्रतिवासरम् ॥
तोलेन शेरमात्रेण गाढं गाढं निरन्तरम् ।
अनन्तरं सैन्धवेन शेरद्वयमितेन च ॥
एकैकं गैरिकं शेरं खटिकं पिष्टरूपिणम् ।
कन्यकारससंयुक्तं सरसं मर्दयेच्च तत् ॥
दिनत्रयमतिश्लक्ष्णं नष्टपिष्टं च खल्वके ।
तापिकायन्त्रमारोप्य मुद्रयेच्च मुखं ततः ॥
त्रयोदशदिनं यावद्वह्निं कुर्यान्निरन्तरम् ।
यन्त्रादादाय सूतेन्द्रं कर्तव्यं तस्य पूजनम् ॥
गुरूणां महतां पश्चाद्योगिनां क्रोधवर्जितः ।
मदमात्सर्यमुत्सृज्य मानं चाहङ्कृतिं तथा ॥
ब्रह्मचर्यं च कर्तव्यमम्लं द्रव्यं विवर्जयेत् ।
दानं शक्त्या प्रकर्तव्यं वैद्यतोषणमेव च ॥
अर्धगुञ्जां रसं दद्यात्सतत क्रमवर्धितम् ।
रक्तिकां नवपर्यन्तं दद्य द्वैद्यो विचक्षणः ॥
भक्तदुग्धं च भुञ्जीत मुद्गदुग्धं घृतं घृतम् ।
शर्करा मधुखण्डानि पथ्यार्थं तत्र योजयेत् ॥
एकविंशदिनस्यान्ते नखानि निपतन्ति च ।

चत्वारिंशद्दिनेऽतीते तत्केशाः प्रक्षरन्ति च ।
एवं षष्ठिदिने क्रान्ते मला नाशं व्रजन्ति च ॥
अशीतिदिवसस्यान्ते तस्य दन्ताः पतन्ति वै ।
एवं स्वयं प्राश्यमानं रसायनं रसेश्वरम् ॥
मासत्रये समायान्ति नूत्नाः केशा न संशयः ।
दृढा दन्ताश्च जायन्ते नवीनाश्च पुनर्नवाः ॥
पुनर्नववपुर्भूत्वा द्वितीयो मीनकेतनः ।
सिद्धमण्डलसिद्धाङ्गो ब्रह्मायुः कालपारगः ॥
दृढाङ्गो बलवान्सौम्यो हरिवेगो दृढेन्द्रियः ।
निरामयो महोत्साहो महाशी च मनोहरः ॥
वनितानां शतं गच्छेत्पुत्राणां शतमाप्नुयात् ।
कालभ्रमरसङ्काशाः केशाः स्युर्गुच्छरूपिणः ॥
विशालबाहुशोभी स्याद्दृढोरःस्थलशोभनः ।
कपाटप्रतिमं प्रौढं हृदयं स्त्रीमनोहरम् ॥
अत्युन्नतवपुर्यष्टिर्विशालनयनाम्बुजः ।
निर्गुण्डिकापत्ररसं त्रिकालं वानु पाययेत् ॥
औषधस्य क्षणं स्थित्वा काले ताम्बूलचर्वणम् ।
कर्पूरकुसुमामोदे निर्मले विनिवेशयेत् ॥
अनल्पे सुखदे तल्पे निर्मलास्तरणैर्युते ।
गीतसङ्गीतशास्त्रीयं रामायणपरायणः ॥
नाटकं हाटकं चापि शृणोति च निरीक्षते ।
महासुगन्धसंयुक्तं हारं कुसुमसंयुतम् ॥
मनोऽभिरामा रामाश्च निर्विकाराः सदोत्सुकाः।
ताभिः सह सुखं सेव्यः कामोऽनाकुलचेतसा ॥
अनल्पस्यास्य कल्पस्य सेवनं कुरुतेऽनिशम् ।
अपथ्यं न च कर्तव्यं पथ्ये स्थेयं सदा बुधैः ॥
अनिष्टां देहिनां शास्त्रे दौर्मनस्यं सुकर्मणि ।
दृष्ट्वा बुधैरयं प्रोक्तो योगो विश्वासहेतवे ॥
कर्तव्योऽवश्यकर्तव्यो निश्चित्य मनसि ध्रुवम् ।
मोहमुत्सृज्य तेन स्यादीप्सितं सफलं सदा ॥
सूर्यसिद्धो रसो ह्येष कुर्यान्नॄन्देवसन्निभान् ॥

१ सेर शुद्ध पारदको एक एक दिन गिलोय, भंगरे, घृतकुमारी, कटेली, त्रिफला, मकोय, केला, असगन्ध, मूसली और पुनर्नवाके रसमें खरल करें और फिर उसमें १-१ सेर गेरु और खिड़िया मिट्टी तथा २ सेर सेंधा नमकका चूर्ण मिला कर घी कुमारके रसमें इतना खरल करें कि पारद अदृश्य हो जाए । कमसे कम ३ दिन तक खरल करना चाहिये । तत्पश्चात् उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें और उसे १३ दिन (बालुकायन्त्रमें) पकावें । इसके पश्चात् जब यन्त्र स्वांगशीतल हो जाय तो रसको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे सेवन करनेसे पूर्व रस (पारद) और गुरु जनोंका पूजन करना चाहिये। इसके सेवन कालमें क्रोध, मद, मात्सर्य, मान और अहङ्कारका त्याग कर देना चाहिये । अम्ल पदार्थोंसे परहेज करना चाहिये। ब्रह्मचर्य पालन करना आवश्यक है तथा यथा शक्ति दान देना और वैद्यको सन्तुष्ट रखना चाहिये ।

मात्रा—आधी रत्तीसे प्रारम्भ करके थोड़ी थोड़ी मात्रा बढ़ाते हुवे ९ रत्ती तक कर देनी चाहिये ।

पथ्य—दूध भात, मूंग, पका हुवा दूध, घी, खांड, शहदकी खांड ।

इसे सेवन करनेसे २१ दिन पश्चात् नख गिर जाते हैं; ४० दिन पश्चात् बाल गिरने लगते

हैं; ६० दिनमें शरीरके समस्त मल नष्ट हो जाते हैं और ८० दिन बीत जाने पर दांत भी गिर जाते हैं। इस प्रकार पुरातन नखादि नष्ट हो कर ३ मासमें नवीन केश और दृढ़ दांत निकल आते हैं।

शरीर नवीन हो जाता है। रूप कामदेवके समान सुन्दर; शरीरावयव दृढ़ और बलवान तथा गति घोड़ेके समान तीव्र हो जाती है। भूख अत्यधिक बढ़ जाती है। कामशक्ति इतनी तीव्र हो जाती है कि मनुष्य १००-१०० स्त्रियोंसे समागम कर सकता है। बाल भौंरेके समान काले और घुंघराले हो जाते हैं। बाहु विशाल और छाती दृढ़ तथा शोभायमान हो जाती है। शरीर उन्नत और नेत्र विशाल हो जाते हैं।

औषध खानेके पश्चात् संभालुके पत्तोंका रस पीना चाहिये। इस प्रकार दिनमें ३ बार यह औषध खानी चाहिये। औषध भक्षणके थोड़ी देर बाद पान खाना चाहिये।

इसके सेवन कालमें सुगन्धियोंसे भरपूर, निर्मल और सुखद विस्तृत शैया पर आराम करना चाहिये। गीत, संगीत और रामायण सुनना तथा नाटकादि देखना चाहिये। सुगन्धयुक्त पुष्पोंकी माला पहिरनी चाहिये। सुन्दर रमणियोंके साथ प्रसन्नता पूर्वक दिन व्यतीत करना चाहिये परन्तु मनमें विकार न आने देना चाहिये।

इस पर अपथ्य कदापि न सेवन करना चाहिये। लोगोंकी शास्त्रोंमें अनिष्ठा और सुकर्ममें दौर्मनस्य देख कर विश्वास दिलानेके लिये इस योगकी रचना की गई है।

यह रस मनुष्यको देवसदृश बना देता है।

(८२८८) सूर्यावर्तरसः (१)

(शा. सं। खं. २ अ. १२ ; र. र. ; र. का. धे. ; धन्व. ; रसे. सा. सं.। हिक्का श्वासा. ; र. प्र. सु.। अ. ८ ; र. र. स.। उ. अ. १३ ; र. चं.। श्वासा; रसे. चि. म.। अ. ९ ; र. रा. सु. ; वृ. नि. र. ; वै. र.। श्वासा.)

सूतार्धो गन्धको मर्द्यो यामैकं कन्यकाद्रवैः।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं पूर्वकल्केन लेपयेत् ॥
दिनैकं स्थालिकायन्त्रे पक्वमादाय चूर्णयेत्।
सूर्यावर्तो रसो ह्येष द्विगुञ्जः श्वासजिद्भवेत् ॥

शुद्ध पारद २ भाग और शुद्ध गन्धक १ भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे १ पहर घृतकुमारीके रसमें खरल करके ३ भाग शुद्ध ताम्रके पत्रों पर* लेप कर दें। इन्हें हांडीमें बन्द करके एक दिन पाक करें और स्वांगशीतल होने पर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

यह रस श्वासको नष्ट करता है।

(यदि ताम्र कच्चा रह जाए तो पुनः इसी प्रकार पकाना चाहिये।)

सूर्यावर्तरसः (२)

(र. का. धे.। कुष्ठा. ; र. रा. सु.। कुष्ठा.)

"सूर्यकान्त रसः" प्र. सं. ८२७६ देखिये।

*र. र. स. में शुद्ध ताम्रके स्थानमें ताम्र भस्म लिखी है।

सूर्येश्वररसः

(र. का. धे. । सन्निपाता.)

प्र. सं. ३२९ " अर्केश्वरो रसः " देखिये ।
र. का. धे. में तालका अभाव है ।

(८२८९) सूर्योदयरसः

(र. र. । शिरोरोगा.)

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं गन्धं ताम्रं मृतं समम् ।
स्नुही क्षीरैर्दिनं मर्द्यं भक्षयेन्माषमात्रकम् ॥
मधुना मर्दितं भक्षेल्लोहपात्रे दिने दिने ।
सप्ताहात्सूर्यावर्तादीञ्छिरोरोगान्निवर्त्तयेत् ॥
सूर्योदय रसो नाम्ना सर्वमूर्द्धगदापहः ॥

पारद-भस्म, अभ्रक भस्म, तीक्ष्ण लोह-भस्म, शुद्ध गन्धक और ताम्र-भस्म १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर १ दिन स्नुही (सेंड-थूहर) के दूधमें खरल करें और सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा-१ माशा । (व्यवहारिक मात्रा-१-२ रत्ती)

इसे लोहपात्रमें शहदके साथ मर्दन करके सेवन करनेसे १ सप्ताहमें सूर्यावर्तादि समस्त शिरो रोग नष्ट हो जाते हैं ।

सेतु रसः

प्र. सं. ५५८५ " महासेतु रसः (मेहसेतु-रसः) " देखिये ।

सेवन्ती पाकः

प्र. सं. ७५६५ "शतपत्रिका पाकः" देखिये ।

(८२९०) सैन्धवादिवटी

(र. र. । ब्रध्नवृद्ध्य.)

ससैन्धवकुष्ठकरेण्वजाजी
सत्रैफलारुष्करवालकञ्च ।
विडङ्गविश्वौषधचित्रकामृता
भार्गीवचातस्करदेवदारुकम् ॥
सनीलिनी सातिविषाजमोदा
यवानिका पिप्पलीमूलमुस्तकम् ।
चव्यं सकृष्णा शठि चन्दनद्वयं
सकट्फलावल्गुज बिल्वजं स्थिरम् ॥
दन्ती शताह्वा कटुकाजगन्धा
सवाजिगन्धागजपिप्पलीनाम् ।
मरीचत्रिजातलवङ्गगन्धं
जातीफलं शैलजजातिपत्री ॥
कर्षैकमात्रं क्रमशःलक्ष्णचूर्णं
पलाष्टकं गुग्गुलुनामधेयम् ।
पलद्वयं लौहरजस्तथैव
शिलाजतुश्चैव पलं चतुष्कम् ॥
सर्वैः समश्चैव सिता च योज्या
विमर्द्य कृत्वा वटिकाक्षमात्रम् ।
प्रत्येकशो भक्ष्यमथो विधेयं
मद्यं तथोष्णं पयसा च क्षीरम् ॥
निहन्ति ब्रध्नानुदरं सकृच्छ्रं
पाण्ड्वामयं कामलाराजरोगम् ।
प्लीहोदरं कुष्ठविकारजञ्च
मूत्रामवातं श्वयथून्प्रकल्पम् ॥
अत्यग्निकारि ज्वरनाशनं परं
बलं सुपुष्टिं कुरुते नराणाम् ।

प्रमेहं विंशं कफरोगविंशं
चत्वारिंशत्पित्तगदं निहन्यात् ॥
अशीतिवातामयजान्विकारान्
नश्यन्ति ते सर्वमिदं नराणाम् ॥

सेंधा नमक, कूठ, रेणुका, जीरा, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध भिलावा, सुगन्धबाला, बायबिडंग, सोंठ, चीतामूल, गिलोय, भरंगी, बच, चोरक, देवदारु, नीलका पंचांग, अतीस, अजमोद, अजवायन, पीपलामूल, नागरमोथा, चव्य, पीपल, कपूर, सफेदचन्दन, लालचन्दन, कायफल, बाबची, बेलगिरी, धव, दन्तीमूल, सोया, कुटकी, बनतुलसी, असगन्ध, गजपीपल, कालीमिर्च, दालचीनी, इलायची, तेजपात, लौंग, काला अगर, जायफल, भूरिछरीला और जावत्री—इनका चूर्ण १।-१। तोला; शुद्ध गूगल ४० तोले, लोह-भस्म १० तोले शुद्ध शिलाजीत २० तोले और खांड सबके बराबर ले कर १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें।

(प्रथम गूगलको थोड़े घीके साथ कूटकर पतला करें और फिर उसमें शिलाजीत मिलाकर कूटें, तदनन्तर अन्य औषधें मिलाकर अच्छी तरह कूट लें। (व्यवहारिक मात्रा—२-३ माशे।)

अनुपान—मद्य या उष्ण जल, अथवा दूध।

इसके सेवनसे ब्रध्न, उदर रोग, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, कामला, राजयक्ष्मा, प्लीहोदर, कुष्ठ, आमवात, शोथ, ज्वर, प्रमेह, वातरोग, कफरोग और पित्त-रोगों का नाश होता तथा अग्नि, बल और पुष्टिकी वृद्धि होती है।

(८२९१) सोमनाथरसः (१)

(भै. र.; रसे. सा. सं.; र. चं.; र. रा. सु.। बहुमूत्रा.; रसे. चि. म.। अ. ९)

कर्षं जारितलौहश्च तदर्द्धं रसगन्धकम्।
एलापत्रं निशायुग्मं जम्बुवीरणगोक्षुरम् ॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्री दाडिमटङ्कणम्।
चन्दनं गुग्गुलुलोध्रशालाऽर्जुनरसाञ्जनम् ॥
छागीदुग्धेन वटिकां कारयेद्दशरक्तिकाम्।
निर्म्मितो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥
सोमरोगं बहुविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम्।
योनिशूलं मेढ्रशूलं सर्वजं चिरकालजम्।
बहुमूत्रं विशेषेण दुर्जयं हन्त्यसंशयः ॥

लोह-भस्म १। तोला तथा शुद्ध पारद और गन्धक एवं इलायची, तेजपात, हल्दी, दारुहल्दी, जामन की छाल, खस, गोखरु, बायबिडंग, जीरा, पाठा, आमला, अनारकी छाल, सुहागेकी खील, सफेदचन्दन, शुद्ध गूगल, लोध, शालवृक्षकी छाल (या सार), अर्जुनकी छाल और रसौत; इनकाचूर्ण ७।।-७।। माशे लेकर प्रथम पारे-गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर बकरीके दूधमें खरल करके १०-१० रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह रस अनेक प्रकारके सोम रोग, कष्टसाध्य प्रदर, सर्वदोषज और पुराने योनिशूल तथा लिङ्ग-शूलको नष्ट करता है। विशेषतः कष्टसाध्य बहु-मूत्रको तो अवश्य ही नष्ट कर देता है।

(गूगलको पृथक् बकरीके दूधमें पीसकर मिलाना चाहिये।)

(८२९२) सोमनाथरसः (बृहद्) (२)

(रसे. सा. सं.; र. रा. सु.; धन्व. । सोमरोगा. रसे. चि. म. । अ. ९)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं पालिधारसमर्दितम् ।
रण्डाशोधितगन्धश्च तेनैव कज्जलीकृतम् ॥
तद्द्वयोर्द्विगुणं लौहं कन्यारसविमर्दितम् ।
अभ्रकं वङ्गकं रौप्यं खर्परं माक्षिकन्तथा ॥
सुवर्णश्च समं सर्वं प्रत्येकश्च रसार्द्धकम् ।
तत्सर्वं कन्यकाद्रावैर्मर्दयेद्भावयेत्ततः ॥
भेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवटीं ततः ।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम् ।
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम् ॥
बहुदोषं बहुविधं प्रमेहं मधुसञ्ज्ञकम् ।
हस्तिमेहमिक्षुमेहं लालामेहं विनाशयेत् ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सोमसञ्ज्ञकम् ।
नाशयेद्बहुमूत्रञ्च प्रमेहमविकल्पतः ॥

पारिभद्र (फरहद) के रसमें (कई दिनतक) खरल किया हुवा पारद और मूषाकर्णीके रस द्वारा शुद्ध* गन्धक १-१ भाग लेकर कज्जली बनावें और फिर घृतकुमारीके रसमें खरल की हुई लोह-भस्म ४ भाग तथा अभ्रक-भस्म, बंग-भस्म, रौप्य-भस्म, खपरिया, स्वर्णमाक्षिक-भस्मं और स्वर्ण-भस्म आधा आधा भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर १-१ दिन घृतकुमारी और मण्डूकपर्णीके रसमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे सोमरोग, २० प्रकारके प्रमेह, बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अनेक प्रकारका मधुमेह, हस्तिमेह, इक्षुमेह, लाला-मेह और वातिक पैत्तिक तथा कफज बहुमूत्र का अवश्य नाश हो जाता है।

* गन्धकको घृतलिप्त कढ़ाईमें पिघलाकर मूषाकर्णीके रसमें डाल दें। इसी प्रकार ३ बार या सात बार बुझावें।

सोमनाथी ताम्रम्

(र. रा. सु.; वै. र. । कासा.; यो. र.)

प्र. सं. २५८७ ताम्रभस्मविधिः (सोमनाथी) ( ) देखिये।

(८२९३) सोमपाणि रसः

(र. रा. सु. । सन्निपाता.; र. चि. म. । स्त. ११)

सूतनिष्कं गन्धनिष्कं मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ।
माषैकं मृततीक्ष्णस्य मृतशुल्वं च माक्षिकम् ॥
माषैकं च विमिश्रेत पूर्वसूतेऽथ मर्दयेत् ।
धत्तूरत्रिफलाकन्याब्रह्मदार्वार्द्रकद्रवैः ॥
केशभद्रस्य माण्डुक्या निर्गुण्ड्या भृङ्गिचित्रकैः ।
वायसीनिम्बवातारिशक्राशनद्रवैरपि ॥
प्रतिद्रावपलैकैकं दत्वा खल्वे विमर्दयेत् ।
रसांशं त्र्यूषणं क्षिप्त्वा चणकाभा वटिं कुरु ॥
चतस्रः सन्निपातार्ते दापयेज्जीरकद्रवैः ।
कषायं पञ्चमूलोत्थमनुपानं प्रशस्यते ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषार्तौ शीतलं जलम् ॥

शुद्ध पारद ३॥। माशे और शुद्ध गंधक ३॥। माशे ले कर कज्जली बनावें और उसे १ दिन चीतामूलके क्वाथमें खरल करें तदनन्तर उसमें

१।-१। माशा तीक्ष्णलोह-भस्म, ताम्र-भस्म और स्वर्णमाक्षिक-भस्म मिलाकर उसमें धतूरा, त्रिफला, घृतकुमारी, विधारा, अदरक, सुगन्धबाला, नागरमोथा, मण्डूकपर्णी, संभालु, भंगरा, चीता, मकोय, नीम, अरण्डमूल और भांग इनका ५-५ तोले स्वरस या क्वाथ मिलाकर खरल करें तदनन्तर उसमें ३॥। माशे त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोटकर चनेके समान गोलियां बना लें।

इनमें से ४-४ गोली जीरेके पानीके साथ मिलाकर देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

अनुपान—पञ्चमूल (बेल, श्योनाक, खम्भारी, पाढल और अरणी) का क्वाथ।

प्यास लगे तो शीतल जल देना चाहिये।

पथ्य—दही भात।

(८२९४) सोमलशोधनम्

(यो. र.। प्रथम भा.)

गौरी पाषाणकः प्रोक्तो द्विविधः श्वेतरक्तकः।
श्वेतः शङ्खसदृश रक्तो दाडिमाभः प्रकीर्तितः॥
श्वेतः कृत्रिमकः प्रोक्तो रक्तः पर्वतसम्भवः।
विषरूपधरौ तौ हि रसकर्मणि पूजितौ॥
रसबन्धकरः स्निग्धो दोषघ्नो रसवीर्यकृद्॥
घननादरसान्विते च मल्लः
परिपाच्यः किल दोलकाह्वयन्त्रे।
शुभवह्निरथो दिनं च मन्दः
परिदेयः परिजायते स शुद्धः॥
मल्लीपाषाणसंशुद्धिर्वक्ष्यते शास्त्रसम्मता।
चूर्णीकृतं पटे बद्ध्वा शिलाक्षारोदकेन च॥
दोलायन्त्रे दिनैकं तु पाचितः शुद्धिमाप्नुयात्॥

गौरीपाषाण (सोमल—संखिया) दो प्रकारका होता है, एक श्वेत और दूसरा रक्त।

श्वेत सोमल शंखके समान होता है और लाल अनारके दानेके समान।

श्वेत सोमल कृत्रिम होता है और लाल पर्वतसे निकलता है।

दोनों प्रकारके सोमल विष हैं और पारदकर्ममें काम आते हैं।

सोमल पारेको बांधने वाला, स्निग्ध, सर्व दोषनाशक (अथवा पारदके दोष दूर करने वाला) और पारदकी शक्तिको बढ़ाने वाला है।

सोमलको कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर दोलायन्त्र विधिसे, एक दिन, चौलाईके क्वाथमें मन्दाग्नि पर पकानेसे वह शुद्ध हो जाता है।*

सोमलको पीस कर कपड़ेकी पोटलीमें बांध कर दोलायन्त्र विधिसे एक दिन चूनेके पानीमें पकानेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८२९५) सोमानलरसः

(र. का. धे.। कुष्ठा.)

गोमूत्रैर्वाकुची बीजं त्रिसप्ताहं विभावयेत्।
त्वग्वर्ज्यं शोषितं चूर्णं तुल्यांशा चाभया तथा॥
ततः खदिरबीजोत्थकषाये मर्दयेत्क्षणम्।
कङ्कुष्ठं मृतलोहं च तुल्यांशं मधुमिश्रितम्॥
कर्षैकं सर्वकुष्ठार्तः खादेत्सोमानलो ह्ययम्॥

*दो घड़ी तक कांजी या गोदुग्धमें पकानेसे भी सोमल शुद्ध हो जाता है।

इसका सत्व हरताल सत्वकी विधिसे निकाला जाता है। सोमल वातज और कफज रोगोंमें तथा शीतमें दिया जाता है।

बावचीके बीजोंको २१ दिन तक गोमूत्रमें भिगोए रक्खें। (हर रोज़ नया गोमूत्र बदलना चाहिये।) तदनन्तर उनके छिलके अलग करके सुखा लें और चूर्ण कर लें। फिर १ भाग यह चूर्ण और १ भाग हर्रका चूर्ण एकत्र मिला कर उसे खैरके बीजोंके क्वाथमें खरल करें। तत्पश्चात् उसमें १–१ भाग कंकुष्ठ और लोहभस्म मिलाकर खरल करें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(शास्त्रीय) मात्रा—१। तोला.

(८२९६) सोमेश्वरो रसः (१)

(भै. र. । प्रमेहा. ; धन्व. । प्रमेहा., सोमरोगा. ; र. रा. सु. । सोमरोगा.; रसे. सा. सं. । सोमरो. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

शालार्जुनकलोध्रञ्च कदम्बागुरुचन्दनम् ।
अग्निमन्थनिशाद्वन्द्वधात्री दाडिमगोक्षुरम् ॥
जम्बू वीरणमूलञ्च भागमेषां पलार्द्धकम् ।
रसगन्धकधान्याब्दमेलापत्रञ्च पञ्चकम् ॥
लौहं रसाञ्जनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम् ।
प्रत्येकं शाणकं [1]ग्राह्यं पलार्द्धं गुग्गुलोरपि ॥
घृतेन वटिकां कृत्वा खादेच्छोडशरक्तिकाम् ।
गहनानन्दनाथेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥
सोमेश्वरो महातेजो वातमेहान्निहन्त्यलम् ।
एकजं द्वन्द्वजं चोग्रं सन्निपातसमुद्भवम् ॥

१ पलिकमिति पाठान्तरम्.

उपद्रवसमायुक्तं चिरकालसमुद्भवम् ।
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं कामलाञ्च हलीमकम् ॥
भगन्दरोपदंशौ च विविधान् पिडकाव्रणान् ।
विस्फोटार्बुदकण्डूश्च वातपित्ताम्लपित्तके ॥
यकृत्प्लीहोदरं गुल्मं शूलार्शः कासवृद्धीः ।
सोमरोगं निहन्त्याशु चिरकालानुबन्धिनम् ॥
बलवर्णाग्निजननो ग्रहवैगुण्यनाशनः ।
छागीदुग्धानुपानेन नारिकेलोदकेन वा ॥
शीतेन पाकतैलेन यवयूषादियोगतः ।
युक्त्या प्रयोज्यो भिषजा रसो दोषविदा सदा ॥

शाल वृक्षकी छाल, अर्जुन छाल, लोध, कदम्ब वृक्षकी छाल, अगर, लाल चन्दन, अरणी, हल्दी, दारुहल्दी, आमला, अनारदाना, गोखरु, जामनकी गुठली और खस; इनका चूर्ण २॥–२॥ तोले; शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, धनिया, नागरमोथा, इलायची, तेजपात, पत्रज, लोहभस्म, रसौत, पाठा, बायबिडंग, सुहागा और जीरा ५–५ माशे (पाठान्तरके अनुसार ५–५ तोले) तथा शुद्ध गूगल २॥ तोले ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर गूगलमें थोड़ा घी डालकर उसे पतला करें। तदनन्तर उसमें उपरोक्त समस्त औषधें मिला कर १६–१६ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे वातज प्रमेह; एक दोषज, द्विदोषज और सन्निपातज उपद्रवयुक्त पुराना मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला; हलीमक, भगन्दर, उपदंश, अनेक प्रकारकी पिडिकाएं और व्रण, विस्फोटक, अर्बुद, कण्डू, वातपित्त, अम्लपित्त, यकृत्,

प्लीहा, गुल्म, शूल, अर्श, कास, विद्रधि और पुराने सोमरोगका शीघ्र ही नाश होता तथा बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है ।

अनुपान—बकरीका दूध, नारियलका पानी, शीत वीर्य पक्व तैल तथा जौका यूष इत्यादि।

यह रस ग्रहविकारको भी नष्ट करता है।

(८२९७) **सोमेश्वरो रसः** (२)

(र. सा. सु. ; र. का. धे. । कुष्ठा.)

शुद्धं सूतं मृतश्चाभ्रं गन्धकं मर्दयेत्समम् ।
दिनं निर्गुण्डीका द्रावे रुद्ध्वाहो भूधरे पचेत् ॥
उद्धृत्य वाकुचीतैले वाकुच्या वा कषायतः ।
दिनैकं भावयेद्धर्मे निष्कमात्रं च भक्षयेत् ॥
वाकुची काकमाची च त्रिफला चूर्णयेत्समम् ।
मध्वाज्यैः कर्षमात्रश्च अनुपानमिदं लिहेत् ॥
कपालविषमं कुष्ठं हन्ति सोमेश्वरो रसः ॥

शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ दिन संभालुके रसमें खरल करके गोला बना कर सुखा लें तथा उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके १ दिन भूधरयन्त्रमें पकावें। तत्पश्चात् उसके स्वांगशीतल होने पर गोलेको निकाल कर १ दिन बाबचीके तेल या क्वाथमें धूपमें खरल करें ।

मात्रा—१ निष्क (३॥ माशे)

अनुपान—बावची, मकोय और त्रिफला समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसमेंसे १।—१। तोला चूर्ण शहदमें मिलाकर उपरोक्त रस खाने के पश्चात् चाटें ।

इसके सेवनसे कपाल कुष्ठ नष्ट होता है ।

(८२९८) **सौगतवटी** (सौरतगुटिका)

(वृ. यो. त. । त. १४७ ; यो. त. । त. ८०)

पारदगन्धकचम्पककेसरसुरकुसुमकरहाटाः ।
अजमोदाम्बुधिशोषौ जातीपत्रं च जातिफलम् ॥
प्रत्येकं भागैकं भागद्वितयं च शुद्धमहिफेनम् ।
वनबदरसदृशगुटिकाः
कार्या मधुनाऽथ भक्षयेदेकाम् ॥
यामेऽतीते ललनासविधे
स्थित्वा जवानिका कर्षम् ।
तैलार्द्रं भुञ्जीयादनुपानं चेत्तदेतस्य ॥
लिङ्गं कठिनतरं स्याद्वीर्यस्तम्भं भवेद्यामम् ।
एषा सौगतगुटिका सत्यं सत्यं च शुक्ररोधकरी ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, चम्पाके फूलकी केसर, लौंग, अकरकरा, अजमोद, समुद्रशोष, जावित्री और जायफल १-१ भाग तथा शुद्ध अफीम २ भाग ले कर प्रथम पारे, गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य सब चीजोंका चूर्ण मिला कर पानीके साथ खरल करके जंगली बेरके समान गोलियां बना लें ।

रात्रिके समय शहद के साथ १ गोली खा कर १ पहर पश्चात् तेलमें भुनी अजवायन १। तो. (व्यवहारिक मात्रा-३ माशे) खावें । यही इसका अनुपान है ।

इस वटीके प्रभावसे लिंग अत्यन्त कठिन हो जाता है और १ प्रहर तक वीर्यस्तम्भन होता है। यह बात बिल्कुल सत्य है ।

(८२९९) **सौभाग्यवटी** (१) (लघु)

(सौभाग्यचिन्तामणिरसः)

(र. चं. ; रसे. सा. सं. । ज्वरा., भै. र. ; र. रा. सु.; धन्व. । ज्वरा.)

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवणव्योषाभयाक्षामला¹-
निश्चन्द्राभ्रक शुद्ध गन्धक-
रसानेकीकृतान्भावयेत् ।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गराजकवृषा-
पामार्गपत्रोल्लसत्प्रत्येकं
स्वरसेन सिद्धवटिका घ्नन्ति त्रिदोषोदयम् ॥
येषां शीतमतीव देहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतं
निद्रा घोरतरा समस्त करणव्यामोहमूढं मनः ।
शूलं श्वासबलाशकाससहितं मूर्च्छारुचि तृड्
ज्वरं तेषां वै परिहृत्य
जीवितमसौ गृह्णाति मृत्योर्मुखात् ॥

सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, ज़ीरा, पांचों नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला¹, अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद समान भाग ले कर प्रथम पारे, गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर दोनों प्रकारकी निर्गुण्डी (संभालू) के पत्तोंके रस, भंगरेके पत्तोंके रस बासापत्रके रस और अपामार्गके पत्तोंके रसकी १–१ भावना दे कर ४–४ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इसके सेवनसे सन्निपातका नाश होता है । यदि रोगीका शरीर अत्यन्त शीतल हो गया हो पसीने आते हों या घोर निद्रामें पड़ा हो तथा समस्त इन्द्रियां निष्क्रिय हो गई हों और रोगी शूल, श्वास, कफ, कास, मूर्च्छा, तृषा और अरुचि-से पीड़ित हो तो इस रसके देनेसे यह समस्त उपद्रव नष्ट हो कर रोगी मृत्युके मुखमेंसे निकल आता है ।

(८३००) **सौभाग्यवटी** (२) (बृहद्)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

सौभाग्यं विषहिङ्गु वह्नि-
त्रिफलाव्योषं च जीरद्वयम् ।
एलाकुष्ठलवङ्गगन्धकरसान्
जातिफलं चाभ्रकम् ॥
द्वौ क्षारौ चायसं मुस्तं कट्फलं लवणत्रयम् ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णं चूर्णं तु कारयेत् ॥
अपामार्गस्य निर्गुण्ड्या भृङ्गराजस्य च द्रवैः ।
आर्द्रकस्य रसेनापि नागवल्ली रसेन च ॥
भावयेद्भावना सप्त लोहदण्डेन मर्दयेत् ।
माषद्वयानुमानेन वटिकां कारयेद्बुधः ॥
आर्द्रकस्य रसेनापि भक्षयेत्प्रातरेव हि ।
ज्वरं चाष्टविधं हन्ति सशीतं सन्निपातकम् ॥

सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, हींग, चीता, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, सफेद जीरा, काला जीरा, इलायची, कूठ, लौंग, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, जायफल, अभ्रक भस्म, जवा-खार, सज्जीखार, लोह भस्म, नागरमोथा, कायफल, सैंधानमक, काला नमक और विड नमक समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर,

१ पाठान्तरके अनुसार 'चीता' ।

सबको लोह खरलमें डाल कर अपामार्ग (चिरचिटा), संभालु, भंगरा, अदरक और पानके रसमें लोहेकी मूसलीसे ७-७ बार खरल करें (७-७ भावना दें) तत्पश्चात् २-२ माशेकी गोलियां बना कर सुरक्षित रक्खें।

इनमेंसे १-१ गोली अद्रकके रसके साथ प्रांतःकाल सेवन करनेसे ८ प्रकारके ज्वर और शीतांगसन्निपातका नाश होता है।

व्यवहारिक मात्रा—५ से ८ रत्ती तक।

(८३०१) सौभाग्यशुण्ठी

(भै. र. । स्त्री. ; धन्व. । सूतिका)

कशेरुशृङ्गाटवराटमुस्तं
द्विजीरकं जातिफलं सकोषम् ।
लवङ्गशैलेयसनागपुष्पं
पत्रं वराङ्गं शटिधातकी च ॥
एला शताह्वा धनिकेभपिप्पली
सपिप्पली सोषणका शतावरी ।
प्रत्येकमेषामिह कर्षयुग्मं
लौहं तथाभ्रं पलभागयुक्तम् ॥
महौषधाच्चूर्णपलानि चाष्टौ
पलानि त्रिंशत्सितशर्करायाः ।
पलानि चाष्टावपि सर्पिषश्च
प्रस्थद्वयं क्षीरमिह प्रयुक्तम् ॥
पचेद्विधिज्ञः परमादरेण
खादेदिदं शाणमथापिकोलम् ।
कर्षोन्मितं वापि समीक्ष्य शस्तं
सौभाग्यशुण्ठी कथिता भिषग्भिः ॥
अग्निप्रदा सूतिगदापहा च
सर्वातिसारग्रहणीहरा च ॥

कसेरु, सिंघाड़ा, कमलगट्टा, नागरमोथा, सफेद जीरा, काला जीरा, जायफल, जावित्री, लौंग, शिलाजीत, नागकेसर, तेजपात, दालचीनी, कचूर, धायकेफूल, इलायची, सोया, धनिया, गजपीपल, पीपल, काली मिर्च और शतावर २॥-२॥ तो.; लोह भस्म और अभ्रक भस्म ५-५ तोले; सोंठका चूर्ण ४० तोले; सफेद खांड १५० तोले और घी ८ पल (४० तोले) तथा दूध ४ सेर ले कर प्रथम घीमें सोंठको भूनें और फिर उसमें दूध तथा खांड मिलाकर पकावें। जब चाशनी तैयार हो जाय तो उसमें उपरोक्त सब चीज़ोंका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—४-६ माशे से १। तोला तक।

इसके सेवनसे सूतिका रोग, समस्त प्रकारके अतिसार और ग्रहणी-रोगका नाश होकर अग्नि दीप्त होती है।

(८३०२) सौभाग्यशुण्ठीपाकः

(वृ. यो. त. । त. १४७; यो. र. । सूतिका)

नागरं कणशः कृत्वा प्रस्थमात्रं भिषग्वरः ।
अजादुग्धाढकद्वन्द्वे विपचेन्मन्दवह्निना ॥
घनीभूते तु पयसि तस्माच्छुण्ठीं समुद्धरेत् ।
अतिसूक्ष्मं विनिष्पिष्य शोषयेदातपे खरे ॥
घृतमानीं समावाप्य तद्दुग्धं तु पुनः पचेत् ।
यावत्पिण्डत्वमायाति ततस्तत्र विनिक्षिपेत् ॥
चातुर्जातं तुगावेल्लं धान्यकं जीरकद्वयम् ।
मिशिमाकल्कं शुण्ठीं लवङ्गं च शतावरीम् ॥
तालमूलीत्रिकटुकं कपिकच्छुं च षट्कटु ।
जातीफलं जातिपत्रीं शृङ्गाटं वृद्धदारुकम् ॥

त्रिवृतां पञ्चबीजं च त्रिफलां च बलात्रयम् ।
जलं सेव्यं वाजिगन्धाचन्दनागरुकारवीः ॥
कक्कोलमजगन्धां च द्राक्षामाक्षोटवारिजे ।
अजमोदं च बादामं नारीकेलगतं तथा ॥
कर्पूरमभ्रकं लोहं वङ्गं ताम्रं शिलाजतु ।
स्वर्णमाक्षिकमप्येतत्प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ॥
चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र पाणिभ्यां मर्दयेद् दृढम् ।
ततः खण्डतुलां पक्त्वा तथा तच्च क्रियां चरेत् ॥
खण्डनागरकं नाम्ना भैषज्यमिदमुत्तमम् ।
यथाबलमिदं खादेत्प्रातः सायं च भेषजम् ॥
स्त्रीणामतिहितं नात्र पथ्यापथ्यविचारणा ।
क्षये पाण्डौ ज्वरे कासे श्वासे मन्दानले तथा ॥
संङ्ग्रहण्यां रक्तगुल्मे प्रदरे सोमरोगके ।
दुग्धक्षये मूत्रकृच्छ्रे कामलायां गलग्रहे ॥
पित्तरोगेषु सर्वेषु वातपित्तगदेषु च ।
सूतिकापवनव्याधौ शस्तमेतन्न संशयः ॥
अश्विभ्यां पूर्वमुदितः सेव्यो योगोऽयमुत्तमः ।
एषा सौभाग्यदा शुण्ठी स्त्रीणां पुत्रप्रदा शुभा ॥

१ सेर सोंठके बारीक टुकडे करके १६ सेर बकरीके दूधमें मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध गाढा होने लगे तो उसमें से सोंठको निकालकर पत्थर पर बारीक पीसलें और तेज़ धूपमें सुखावें तदनन्तर इस शुण्ठी चूर्णको ४० तोले घीमें भूनें और फिर उसमें उपरोक्त गाढा दूध मिलाकर पुनः पकावें और जब उसका खोवा हो जाय तो उसमें निम्नलिखित चूर्ण मिलावें—

दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, बंसलोचन, बायबिडंग, धनिया, सफेद जीरा, काला जीरा, सौंफ, अकरकरा, सोंठ, लौंग, शतावर, तालमूली (मूसली), त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), कौंचके बीज, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, काली मिर्च, जायफल, जावित्री, सिंघाड़ा, विधारा, निसोत, कमलगट्टा, हर्र, बहेड़ा, आमला, खरैटी, कंघी, गंगेरन, सुगन्धबाला, खस, असगन्ध, सफेद चन्दन, अगर, काला जीरा, कंकोल, अजमोद, किशमिश, अखरोटकी गिरी, कमलपुष्प, अजमोद, बदाम, खोपरा, कपूर, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, वंग भस्म, ताम्र भस्म, शिलाजीत और स्वर्णमाक्षिक भस्म १।-१। तोला ।

इन वस्तुओं के चूर्णको उपरोक्त खोवेमें मिलाकर दोनों हाथोंसे अच्छी तरह मिला दें । तदनन्तर ६। सेर खांडकी चाशनी बना कर उसमें इस सब मसालेको मिला दें ।

यह स्त्रियोंके लिये अत्यन्त हितकारी है । इस पर किसी विशेष पथ्यकी आवश्यकता नहीं है ।

इसके सेवनसे क्षय, पाण्डु, ज्वर, कास, श्वास, अग्निमांद्य, संग्रहणी, रक्तगुल्म, प्रदर, सोमरोग, दुग्ध-क्षय (दूध कम उतरना), मूत्रकृच्छ्र, कामला, गलग्रह, पित्तरोग, वातपित्तजरोग, सूतिकाके वातज रोग इत्यादि का नाश होता है । यह स्त्रियोंके लिये पुत्र देने वाली है ।

(८३०३) सौभाग्यशुण्ठीमोदकः

(भै. र. ; धन्व. । अम्लपित्ता.)

त्रिकटु त्रिफला भृङ्गजीरकद्वयधान्यकम् ।
कुष्ठाजमोदा लौहाभ्रं शृङ्गी कट्फलमुस्तकम् ॥

एला जातीफलं मांसी पत्रं तालीशकेशरम् ।
गन्धमात्रा शटी यष्टी लवङ्गं रक्तचन्दनम् ॥
एतानि समभागानि शुण्ठीचूर्णन्तु तत्समम् ।
सिता द्विगुणिता तत्र गव्यक्षीरं चतुर्गुणम् ॥
तोलप्रमाणं दातव्यं दुग्धेनापि जलेन वा ।
अम्लपित्तं निहन्त्येतदरोचकनिसूदनम् ॥
शूलहृद्रोगवमनं कण्ठदाहं नियच्छति ।
हृद्दाहश्च शिरःशूलं मन्दाग्निश्च विनाशयेत् ॥
हृच्छूलं पार्श्वकुक्षिस्थवस्तिशूलं गुदे रुजम् ।
बलपुष्टिकरश्चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥
विशेषादम्लपित्तश्च मूत्रकृच्छ्रं ज्वरं भ्रमम् ।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, भंगरा, सफ़ेद जीरा, काला जीरा, धनिया, कूठ, अजमोद, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, काकड़ासिंगी, कायफल, नागरमोथा, इलायची, जायफल, जटामांसी, तेजपात, तालीसपत्र, नागकेसर, गन्धमात्रा, कचूर, मुलैठी, लौंग और लाल चन्दन १-१ भाग; सोंठका चूर्ण सबके बराबर (२८ भाग) और खांड ११२ भाग लेकर प्रथम समस्त चूर्णसे चार गुने (८ गुने) दूधमें खांड मिलाकर चाशनी बनावें और फिर उसमें उपरोक्त समस्त औषधोंका चूर्ण मिलाकर १-१ तोलेके मोदक बना लें।

१-१ मोदक दूध या पानीके साथ सेवन करनेसे अम्लपित्त, अरुचि, शूल, हृद्रोग, वमन, कण्ठदाह, हृदाह, शिरशूल, अग्निमांद्य, हृदयशूल, पार्श्वशूल, कुक्षिशूल, वस्तिशूल और गुदपीड़ा का नाश होता तथा बलवृद्धि होती है।

यह मोदक उत्तम पौष्टिक और विशेषतः अम्लपित्त, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और भ्रमको नाश करने वाला है। यह इन रोगोंको इस प्रकार नष्ट कर देता है जिस प्रकार सूर्य अंधकारको इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

(८३०४) सौभाग्यशुण्ठ्यवलेहः (मध्यम)

(यो. त. । त. ७५ ; यो. र. । सूतिका रोगा. ; वृ. यो. त. । त. १४२)

नागरस्य पलान्यष्टौ घृतस्य च चतुष्पलम्[१] ।
क्षीरादकेन संयुक्तं खण्डस्यार्धतुलां पचेत् ॥
शताह्वाजीरकव्योषत्रिसुगन्धिजवानिका ।
कारवी मिशि चव्याग्नि मुस्तानां च पलं पलम् ॥
शुद्धाभ्रकाय संयोज्यं त्रिपलं च पृथक्पृथक् ।
स्वर्णं तारं ततो योज्यं यथा चाग्निबलं भवेत् ॥
लेहीभूतमिदं सिद्धं घृतभाण्डे निधापयेत् ।
तद्यथाग्निबलं खादेत्सूतिका तु विशेषतः ॥
बल्यं वर्ण्यं तथा पुष्टं वलीपलित नाशनम् ।
वयसः स्थापनं हृद्यं मन्दाग्नेर्दीपनं परम् ॥
आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ।
सकलशूलशमनं सूतिकारोगनाशनम् ॥

४० तोले सोंठके चूर्णको ४० तोले[१] घीमें भूनें और फिर उसे ८ सेर दूधमें मिलाकर उसीमें ३ सेर १० तोले खांड मिलाकर पकावें। जब पाक तैयार हो जाय तो उसमें निम्नलिखित चीज़ों का चूर्ण मिला दें—

१ यो. र. ; यो. त. में घृत २० पल है (जो अधिक प्रतीत होता है) तथा भस्मोंका अभाव है।

सोया, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, अजवायन, काला जीरा, सौंफ, चव्य, चीता तथा नागरमोथा ५-५ तोले[१]; अभ्रक भस्म, लोह भस्म, स्वर्णभस्म और चांदी भस्म १५-१५ तोले।

इसके सेवनसे सूतिका रोगका नाश होता है। यह लेह बल्य, वर्ण संस्कारक, पौष्टिक, वलीपलित नाशक, आयुको स्थिर करने वाला, हृदयके लिये हितकारी, अग्निदीपक, आमवातनाशक और सकल-शूलको नष्ट करने वाला है।

(मात्रा—१ माशा)

सौभाग्यशुण्ठिके अन्य पाठ अवलेहप्रकरणमें देखिये।

(८३०५) सौभाग्यसुन्दरटङ्कणरसः

(र. का. धे. । स्वरभेदा.)

टङ्कणं मर्दयेद् द्रावे निशालशुन सौरणे।
मानकन्दे त्रित्रिदिनं मानकन्दान्तरे न्यसेत् ॥
विमुद्रय सूरणेनैव लिप्ता मृत्तिकया पुनः।
पुटेद्गजपुटेनैव वह्निर्द्वादशयामकम् ॥
तत्पञ्चमांशं तालं च तृतीयांशं च सूतकम्।
विमिश्र्य सूर्यक्षीरेण मर्दयेत्सप्त सप्त च ॥
एरण्डस्य च तैलेन कुर्यां द्वादशयामकम्।
निक्षिप्य दत्त्वा वह्निं च पीतवर्णं भवेदिति ॥
सौभाग्यसुन्दरं नाम सौभाग्यं सर्वरोगजित् ॥

सुहागेको हल्दी, लहसन, सूरण (जिमिकन्द) और मानकन्दके स्वरसमें ३-३ दिन खरल करें। तदनन्तर उसे मानकन्दके भीतर भरें और उसके मुंहको सूरणके टुकडेसे बन्द करके उस पर (मानकन्द पर) सब ओर मिट्टीका लेप करदें और उसे सुखाकर गजपुटमें रखकर १२ पहर तक पकावें। तत्पश्चात् जब अग्नि सर्वथा शीतल हो जाय तो गोलेको निकालकर उसकी मिट्टी दूर करके पीस लें और उसमें उसका पांचवां भाग शुद्ध हरताल तथा तीसरा भाग शुद्ध पारद मिलाकर आकके दूधकी सात भावना दें और फिर ७ दिन अरण्डीके तेलमें घोटकर आतशी शीशीमें डालकर १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। इसके बाद जब शीशी स्वांगशीतल हो जाय तो उसमें से तैयार रसको निकाल लें। इसका रंग पीला होगा।

यह रस समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

(८३०६) सौराष्ट्रीशोधनमारणम्

सौराष्ट्री तुवरी काङ्क्षी मृत्तालकसुराष्ट्रजे।
आढकी सापि च ख्याता मृत्स्ना च सुरमृत्तिका ॥

स्फटिकाया गुणाः सर्वे सौराष्ट्र्यामपि कीर्तिताः।
तस्मात्परस्पराभावे प्रयोज्याऽन्यतरा बुधैः ॥

आ. वे. प्र. । अ. १०.

धान्याम्ले तुवरी क्षिप्ता शुद्धयति त्रिदिनेन वै।
क्षारैरम्लैश्च मृदिता ध्माता सत्वं विमुञ्चति ॥
तत्सत्वं धातुवादार्थे, चौषधे नोपपद्यते ॥

सौराष्ट्रीको तुवरी, कांक्षी, मृत्तालक *, सुराष्ट्रजा, आढकी, मृत्स्ना और सुरमृत्तिका कहते हैं।

---

१ यो त. में पीपलामूल, काला जीरा, मुलैठी, बायबिडंग, लौंग, धनिया, जटामांसी, तालीसपत्र और नागकेसर अधिक हैं।

सौराष्ट्री और फिटकरीमें समान ही गुण होते हैं इसलिये इनमेंसे किसी एकके अभावमें दूसरी वस्तु काममें ला सकते हैं।

सौराष्ट्रीको ३ दिन तक कांजीमें रखनेसे वह शुद्ध हो जाती है।

सौराष्ट्रीको क्षार और अम्ल पदार्थोंके साथ खरल करके धमानेसे उसका सत्व निकल आता है। यह सत्व धातुवादमें ही काममें आता है, औषधोंमें व्यवहृत नहीं होता।

(८३०७) सौवीराञ्जनादिशोधनम्

(रसे. सा. सं.)

सौवीरं टङ्कणं शङ्खं कङ्कुष्ठं गैरिकन्तथा।
एते वराटवच्छोध्या भवेयुर्दोषवर्जिताः॥

सौवीराञ्जन, सुहागा, शंख, कंकुष्ठ और गेरुको वराट (कौड़ी) की भांति शुद्ध करनेसे वे दोष-रहित हो जाते हैं।

(८३०८) स्थूलराजगजकेसरी रसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

रसेन्द्रं रजतं ताप्यं गगनं ताम्रलोहकम्।
स्वर्णं च क्रमवृद्धानि मर्दयेत्पूरवारिणा॥
अन्येन चाम्लवर्गेण मर्दयेत्सप्तवासरान्।
काचकूप्यां निधायाथ पचेद्यामाष्टकद्वयम्॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा गृह्णीयात्तं च मर्दयेत्।
आर्द्रकस्वरसेनैव द्रोणपुष्पी रसेन च॥
बृहत्याः पत्रतोयेन बीजतोयेन वा पुनः।
प्रत्येकं दिनमेकं हि भावनां दापयेत्क्रमात्॥
पिप्पली मधुना सार्धं चैतद्गुञ्जाद्वयं भजेत्।
स्थूलदुर्दिनविनाशने मरुत्
स्थूलपर्वतविनाशने हरिः।
स्थूलदोषरसशोषणक्षमः
स्थूलराजगजकेसरीरसः॥

रस सिन्दूर १ भाग, चांदी भस्म २ भाग, स्वर्ण माक्षिक भस्म ३ भाग, अभ्रक भस्म ४ भाग, ताम्र भस्म ५ भाग, लोह भस्म ६ भाग और स्वर्ण भस्म ७ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके प्रथम बिजौर नीबूके रसमें खरल करें और फिर सात दिन तक अन्य अम्ल वर्गके[1] रसमें खरल करें। तदनन्तर उसे आतशी शीशीमें भर कर १६ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। इसके पश्चात् शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर अदरकके स्वरस, गूमाके स्वरस और बड़ी कटेलीके पत्तोंके स्वरस तथा बड़ी कटेलीके बीजोंके रसमें १-१ दिन खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे स्थूलताका नाश होता है।

(८३०९) स्थौल्यापकर्षणो रसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

सूतबोलमृततालताम्रकं
चार्कदुग्धरसकेनमर्दितम्।

[1] चांगेरी, लकुच, अम्लवेत, जम्बीरी, नारंगी, अनार, कैथ इत्यादि।

क्षौद्रयुक्तमपि वल्लमात्रकं
भक्षितं च हरति दृंहितं जयेत् ॥
तोयमेकपलमत्र मात्रया
पानतोऽप्यखिल मेहहारकम् ॥

रस सिन्दूर, बीजाबोल, हरताल भस्म और ताम्र भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर आकके दूधमें अथवा उसके पत्तोंके रसमें खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती (व्यवहारिक मात्रा-१ रत्ती)

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे स्थूलता और समस्त प्रमेहोंका नाश होता है।

अनुपान—५ तोले पानी।

स्पर्शगजसिंहरसः

(स्पर्शवातारि रसः)

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

प्र. सं. ६१०५ " रसादि गुटी (२) " देखिये।

र. का. धे. में आठ भाग पारद भस्म और ३ भाग शुद्ध पारद है तथा कुचला १२ भाग है एवं चीते और भिलावेके स्थानमें १–१ भाग तेजपात और इन्द्रायणकी जड़ है।

(८३१०) स्पर्शवातघ्नरसः

(र. र. स. । उ. अ. २१)

तालं रसेनाष्टगुणं जयांशं
विमर्द्य यत्नाद्गुलिकां गुडेन।
निबद्ध्य तां सेव्य मासयुग्मं
दिनोदये स्पर्शविकारशान्त्यै ॥

शुद्ध हरताल ८ भाग, रससिन्दूर १ भाग और भांगका चूर्ण १ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें और फिर सबके बराबर गुड़में मिला कर गोलियां बना लें।

इन्हें प्रातःकाल सेवन करना चाहिये।

इनके सेवनसे स्पर्शवातका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।)

स्पर्शवातान्तकृद्वटी

प्र. सं. ६१०५ " रसादि गुटी (२) " देखिये।

(८३११) स्पर्शवातारिरसः (१)

(पलाशादि वटी)

(र. सा. सं., र. चं., र. रा. सु. । वात रो., र. र. स. । अ. २१)

पलाशबीजोत्थरसेन सूतं
गन्धेन युक्तं त्रिदिनं विमर्द्य।
श्लक्ष्णीकृतन्तद्विषतिन्दुबीजं
संयोजयेदस्य कलाप्रमाणम् ॥
मासद्वयं निष्कमितं प्रयत्ना-
दर्शांसि हन्त्याशु नियोजनीयम्।
वातरक्तं तथा शोथमस्पर्शाख्यानिलामयम् ॥

समान भाग शुद्ध पारे और गंधककी कज्जली करके उसे पलाशके बीजोंके रसमें खरल करें और फिर उसमें उस चूर्णका सोलहवां भाग शुद्ध कुचलेका चूर्ण मिला कर खरल करें।

इसे ३।।। माशेकी मात्रानुसार दो मास तक सेवन करनेसे अर्श, वातरक्त, शोथ और स्पर्शवातका नाश होता है।

स्पर्शवातारिरसः (२)

प्र. ६१०५ "रसादि गुटी (२)" तथा ७६४२ "शीतारि रसः (५)" देखिये।

स्पर्शवातारिरसः (३)

प्र. सं. ७६४२ शीतारि रसः (५) देखिये।

(८३१२) स्फटिकाशोधनम्

(र. र. स. । अ. ३)

सौराष्ट्राश्मनि सम्भूता मृत्स्ना सा तुवरी मता।
वस्त्रमारञ्जयेद्यासौ मञ्जिष्ठारागबन्धिनी ॥
फटकी फुल्लिका चेति द्वितीया परिकीर्तिता।
ईषत्पीता गुरुः स्निग्धा पीतिका विषनाशिनी ॥
व्रणकुष्ठहरा सर्वकुष्ठघ्नी च विशेषतः।
निर्भारा शुभ्रवर्णा च स्निग्धा साम्लाऽपरा मता
सा फुल्लतुवरी प्रोक्ता लेपात्ताम्रं चरेदियम् ॥
कांक्षी कषाया कटुकाम्लकण्ठ्या
केश्या व्रणघ्नी विषनाशिनी च।
श्वित्रापहा नेत्रहिता त्रिदोष-
शांतिप्रदापारदजारणी च ॥
तुवरी कांजिके क्षिप्ता त्रिदिनाच्छुद्धिमृच्छति।
क्षाराम्लैर्मर्दिता ध्माता सत्त्वं मुञ्चति निश्चितम् ॥

तुवरी (फिटकरी) सौराष्ट्र देशमें पर्वतोंमें पाने वाली एक प्रकारकी मिट्टी है। यह वस्त्र रंगनेमें उपयोगी है और मजीठके रंगको पक्का करती है।

फिटकरी दो प्रकारकी होती है। एक प्रकारकी कुछ पीली, भारी और स्निग्ध होती है। यह "**पीतिका**" कहलाती है और विषको नष्ट करती है। यह व्रण तथा कुष्ठमें विशेष उपयोगी है।

दूसरे प्रकारकी फिटकरी हल्की, श्वेत, स्निग्ध और अम्लरस युक्त होती है, उसे "**फुल्ल तुवरी**" (फूल फिटकरी) कहते हैं। लेप करनेसे यह ताम्रको खा जाती है (जीर्ण कर देती है।)

फिटकरी (दोनों प्रकारकी) कषैली, कटु, अम्ल, कण्ठ और केशोंके लिये हितकारी, व्रणनाशक, विषनाशक, श्वित्रनाशक, नेत्रोंके लिये हितकारी, त्रिदोषको शान्त करनेवाली और पारदजारणमें उपयोगी है।

फिटकरीको ३ दिन तक कांजीमें रखनेसे वह शुद्ध हो जाती है।

"सत्व पातनम्"

फिटकरीको क्षार और अम्ल पदार्थोंके साथ खरल करके मूषामें रख कर धमानेसे उसका सत्व निकल आता है।

(८३१३) स्मृतिसागररसः

(यो. र. ; वृ. नि. र. । अपस्मारा. ; वृ. यो. त. । तं ८९)

रसगन्धकतालानां सशिलाताम्रभस्मनाम्।
शुद्धानां मूर्छितानां च चूर्णं भाव्यं वचाशृतैः ॥
एकविंशतिधा पश्चाद्ब्राह्मीवारा तथैव च।
कटभीबीजतैलेन भावयेदेकवारकम् ॥

स्मृतिसागरनामाऽयं रसोऽपस्मारनाशनः ।
सर्पिषा माषमात्रोऽयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥
उन्मादोक्तो विधिः सर्वोऽप्यपस्मारे प्रयुज्यते ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शुद्ध हरताल, शुद्ध मनसिल और ताम्र भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर बचके काथकी २१ भावना दें तदनन्तर ब्राह्मीके रसकी २१ भावना दे कर सुखाकर १ भावना मालकंगनीके तेलकी दे कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१। माशा (**व्यवहारिक मात्रा**–१–२ रत्ती।)

अनुपान—घीमें मिला कर सेवन करें।

इसके सेवनसे अपस्मारका नाश होता है।

अपस्मारमें उन्मादोक्त समस्त विधियां हितकारक हैं।

(८३१४) स्रोतोञ्जनशोधनम्

(वृ. यो. त. । त. ४२)

स्रोतोञ्जनं च द्विविधं श्वेतकृष्णप्रभेदतः ।
त्रिफलावारिणा स्वेद्यं तद्द्वयं शुद्धिमृच्छति ॥
सौवीरं ग्राहि मधुरं चक्षुष्यं कफपित्तजित् ।
हिध्माक्षयास्रनुच्छीतं स्रोतोञ्जनमपीदृशम् ॥

स्रोतोञ्जन दो प्रकारका होता है एक श्वेत और दूसरा कृष्ण।

दोनो प्रकारका स्रोतोञ्जन (दोलायन्त्र विधिसे) त्रिफलाके क्वाथमें स्वेदित करनेसे शुद्ध हो जाता है।

सौवीराञ्जन ग्राही, मधुर, नेत्रोंके लिये हितकारी, कफपित्त नाशक, शीतल तथा हिक्का, क्षय और रक्तपित्तको नष्ट करने वाला है। स्रोतोञ्जनमें भी यही गुण हैं।

(८३१५) स्वच्छन्दनायकरसः

(र. र. ; र. का. धे. । वातव्या.)

मृतं सूतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् ।
तुल्यांशं मर्दयेद्द्रावैर्विदार्यार्द्रकसम्भवैः ॥
भृङ्गयुत्थैः काकमाच्युत्थैर्गिरीकर्णीद्रवैर्दिनम् ।
सम्मर्द्य भाण्डगं रुद्ध्वा पचेन्मन्दाग्निना दिनम् ॥
व्योषाग्निगन्धकविषः सरण्याभयाटङ्कणैः ।
समांशैश्चूर्णितं मिश्रैस्तुल्यांशं पूर्व पाचितम् ॥
त्रिदिनं मर्दयेद्द्रावैर्मुण्डीनिर्गुण्डीभृङ्गजैः ।
अष्टगुञ्जामितं खादेद्रसः स्वच्छन्दनायकः ॥
सर्ववातहरः ख्यातो ह्यनुपानमिदं पिबेत् ।
लशुनं सैन्धवं तैलं कर्षमात्रं सुखावहम् ॥

पारद भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, कान्त लोह भस्म, शुद्ध हरताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर १–१ दिन विदारीकन्द, अदरक, भंगरा, मकोय और कोयलके रसमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके १ दिन (बालुका यन्त्रमें) मन्दाग्नि पर पकावें और उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल लें। तदनन्तर सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, प्रसारणी, हर्र और सुहागेकी खील समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और पूर्वोक्त तैयार रसमें यह चूर्ण उसके बराबर मिलाकर मुण्डी,

संभालू और भंगरेके रसमें ३-३ दिन खरल करके ८-८ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे समस्त वातव्याधियां नष्ट होती हैं।

अनुपान—ल्हसन, सेंधानमक और तेल समान भाग ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर १। तोलेकी मात्रानुसार खाना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा—१ से २ रत्ती)

(८३१६) स्वच्छन्दभैरवरसः (१)

(र. प्र. सु. । अ. ८)

सूतं गन्धं ताप्यकं तालकं वै
निर्गुण्डीवह्न्यूषणं चाग्निमन्थम् ।
पथ्योपेतं शाणमात्रं पृथक् स्यात्
खल्वे पिष्ट्वा बीजपूरद्रवेण ॥
चूर्णं कृत्वा भक्षयेन्माषमात्रं
कृष्णासर्पिः क्षौद्रयुक्तं प्रलीढम् ।
सर्वान् हन्याचातिसारान् सुघोरा—
नामं वह्नेर्मान्द्यतां चापि सद्यः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, संभालु, चीता, मिर्च, अरणी और हर्र ५-५ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करें।

मात्रा—१ माशा।

इसे पीपलके चूर्ण तथा शहद और घीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके घोर अतिसार, आम और अग्निमांद्यका नाश होता है।

(८३१७) स्वच्छन्दभैरवरसः (२)

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धश्चैकत्र कारयेत् ॥
रुद्रजटा निशुन्दा च नागदामलकी तथा ।
विषकण्टालिका चैषां स्वरसं शाणमात्रकम् ॥
दत्वा संशोध्य सम्मर्द्य कार्या मुद्गसमा वटी ।
आर्द्रकस्य रसैः पेया जीरकश्चानुभक्षयेत् ॥
स्वच्छन्दो भैरवाख्योयं सन्निपातोग्रहृन्मतः ।
ग्रहणी सूतिकातङ्कं नाशयेदविचारतः ॥

शुद्ध पारद और गन्धक ५-५ माशे ले कर कज्जली बनावें फिर उसमें ५ माशे स्वर्णमाक्षिक भस्म मिला कर उसमें ५-५ माशे रुद्रजटा, निशुन्दा (निर्गुण्डी ?), हर्र, आमला और विषकण्टालिकाका रस मिलाकर खरल करें तथा मूंगके समान गोलियां बनावें।

इनमेंसे १ गोली अदरकके रसमें मिलाकर पिलावें और ऊपरसे जीरेका चूर्ण खिलावें।

इसके सेवनसे उग्र सन्निपात, ग्रहणी और सूतिका रोगका नाश होता है।

(८३१८) स्वच्छन्दभैरवरसः (३)

(भै. र. ; वै. र. ; र. का. धे. । ज्वरा)

समभागांश्च संगृह्य पारदामृतगन्धकान् ।
जातीफलस्य भागार्द्धं दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥
सर्वार्द्धं पिप्पलीचूर्णं खल्लयित्वा निधापयेत् ।
गुञ्जार्द्धप्रमितं चैव नागवल्लीदलैः सह ।
आर्द्रकस्य रसेनापि द्रोणपुष्पीरसेन वा ॥

शीतज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे ।
पीनसे च प्रतिश्याये ज्वरेऽजीर्णे तथैव च ॥
मन्देऽग्नौ वमने चैव शिरोरोगे च दारुणे ।
प्रयोज्यो भिषजा सम्यग् रसः स्वच्छन्दभैरवः ॥
पथ्यं दध्योदनं दद्याद्वीक्ष्य दोषबलाबलम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और शुद्ध बछनाग २-२ भाग तथा जायफलका चूर्ण १ भाग ले कर कज्जली बनावें और उसमें ३॥ भाग पीपलका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसे पानके साथ अथवा अदरकके रस या गूमाके रसके साथ देनेसे शीतज्वर, सन्निपात, विसूचिका, विषमज्वर, पीनस, प्रतिश्याय, जीर्ण ज्वर, अग्निमांद्य, वमन और दारुण शिरोरोगका नाश होता है ।

पथ्य—दोष और रोगीका बलाबल देखकर दही भात आदि देना चाहिये ।

(८३१९) स्वच्छन्दभैरवरसः (४)

(र. र. स. । उ. अ. २१)

तीक्ष्णाऽयस्कान्तगोदन्तमाक्षिकैर्मर्दितो रसः ।
समांशगन्धकः पक्वो हण्डिकायन्त्रमध्यगः ॥
व्योषाग्निमन्थसुरसाकन्दशृङ्ग्यभयाविषैः ।
समैः समं त्र्यहं मुण्डी निर्गुण्डी रसपिण्डितः ॥
सेवितः शमयेद्वातान्नाम्ना स्वच्छन्दभैरवः ।
विशेषाद्वातरक्तं च द्वि वल्लं चार्द्रकैर्ददेत् ॥

तीक्ष्ण लोहभस्म, चुम्बक भस्म, गोदन्ती भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म और शुद्ध पारद १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और फिर उसमें उसके बराबर शुद्ध गन्धक मिलाकर कज्जली बनावें तथा उसे आतशी शीशी में डालकर बालुकायन्त्रमें पकावें और फिर उसके स्वांगशीतल होने पर रसको निकालकर पीस लें । तदनन्तर उसमें उसके बराबर सोंठ, मिर्च, पीपल, अरणी, तुलसी, जिमीकन्द (सूरण), काकड़ासिंगी, हर्र और शुद्ध बछनाग का समान भाग मिश्रित चूर्ण मिलाकर ३-३ दिन मुण्डी और निर्गुण्डीके रसमें खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—६ रत्ती ।

इसे अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे समस्त वातरोगों का और विशेषतः वातरक्तका नाश होता है ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ रत्ती ।)

(८३२०) स्वच्छन्दभैरवरसः (५)

(रसे. सा. सं. । कासा. ; र. चि. म. । स्त. ७ ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । ग्रहण्य. ; र. चं. ; धन्व. । कासा.)

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यश्च सैन्धवम् ।
ज्वालामुखीरसैः पञ्चदिनानि परिमर्दयेत् ॥
मूषिकायां निरुध्याथ पुटेद्रात्रौ च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति वल्लमेनं प्रयच्छति ॥
ग्रहण्यां सङ्ग्रहण्याञ्च कासे श्वासे विशेषतः ।
उग्रासु ज्वरतन्त्रासु निद्रास्वल्पासु योजयेत् ॥
अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।
तुष्टिं पुष्टिमसौ कुर्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और सेंधानमक २ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें। जब कज्जली हो जाय तो उसे ५ दिन ज्वालामुखी (कलियारी)के रसमें खरल करें और फिर मूषामें बन्द करके मध्यपुटमें फूंक दें। तदनन्तर इसके स्वांगशीतल होने पर भस्मको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२-३ रत्ती।

इसके सेवन से ग्रहणी रोग, संग्रहणी, विशेषतः कास, श्वास, उग्र ज्वर और निद्राकी कमी आदि रोग नष्ट होते तथा तुष्टि, पुष्टि और सुकुमारताकी वृद्धि होती है।

(८३२१) **स्वच्छन्दभैरवरसः** (६)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । ज्वरा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः।
गुञ्जार्द्धं सन्निपातादिनवज्वरहरं परम् ॥
आर्द्राम्बुशर्करासिन्धुयुतः स्वच्छन्दभैरवः।
इक्षुद्राक्षासिताश्चापि दधि पथ्यं रुचौ ददेत् ॥

ताम्रभस्म और शुद्ध बछनागका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिलाकर धतूरेके रसकी १०० भावना दें और आधी आधी रत्तीकी गोलियां बना लें।

१-१ गोली अदरकके रस, खांड और सेंधा नमकके साथ देनेसे नवीन सन्निपातादि ज्वरोंका नाश होता है।

भूख लगने पर ईख, द्राक्षा, मिसरी और दही आदिके साथ पथ्याहार देना चाहिये।

(८३२२) **स्वच्छन्दभैरवरसः** (७)

(र. चि. म. । स्त. ४ ; र. का. धे. । ज्वरा.)

वेदतोला रसो ग्राह्यो गन्धको द्वादशात्र च।
कृत्वा कज्जलिकामादौ क्षिपेत्ताम्रकटोरिके ॥
अष्टतोलाप्रमाणेऽस्मिन् धृत्वा सूतं विशोधितम्।
सन्धिलेपं विधायाऽथ वालुकायन्त्रके क्षिपेत् ॥
ऊर्ध्वं ढक्कणिकां दत्त्वा तां मृदा लेपयेत्ततः।
अहोरात्रं विधेयः स्याद्वह्निस्तत्र च पारदे ॥
उत्तार्य शीतलं तं च मधुना सम्प्रदापयेत्।
श्लेष्मिके च ज्वरे देयस्त्रिगुञ्जो मरिचैः सह ॥
वातिकेऽथ ज्वरे दद्याद्द्विगुञ्जः पिप्पलीयुतः।
रोगयोग्यानुपानेन देयः स्वच्छन्दभैरवः ॥
त्रिफलारससंयुक्तः सर्वरोगे प्रयुज्यते ॥

शुद्ध पारद ४ तोला और शुद्ध गन्धक १२ तो. ले कर कज्जली बनावें और उसे तांबेकी कटोरीमें डालकर उस पर ८ तो. शुद्ध पारद रख दें तथा उस पर दूसरी तांबेकी कटोरी ढक कर दोनोंके जोड़को अच्छी तरह बन्द कर दें। फिर इस सम्पुटको वालुकायन्त्रमें रख कर उसके ऊपर ढकना ढक कर जोड़पर मिट्टीका लेप कर दें और उसके नीचे २४ घंटे अग्नि जलावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर रसको निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

इसे कफज ज्वरमें शहद और काली मिर्चके चूर्ण के साथ ३ रत्ती की मात्रानुसार देना चाहिये।

तथा वातज्वरमें २ रत्तीकी मात्रानुसार पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देना चाहिये ।

इसे त्रिफला के क्वाथ के साथ समस्त रोगों में दे सकते हैं ।

स्वच्छन्दभैरवरसः (८)

(यो. त. । त. ४० ; र. र. स. । उ. अ. २१ ; र. का. धे. ; र. रा. सु. । वातव्या. ; र. सं. क. । उल्लास ४ ; वृ. यो. त. । त. ९० ; शा. सं. । खं. २ अ. १२ ; यो. र. ; र. चं. ; र. र. ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

प्र. ६९८२ "वातगजाङ्कुशरसः (२)" देखिये

इसमें (स्वच्छन्द भैरव में) भृङ्गी (काकड़ासिंगी) के स्थानमें निर्गुण्डी है ।

(८३२३) स्वयमग्निरसः (१)

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

मरिचाब्द वचाकुष्ठं समांशं विषमेव च ।
आर्द्रकस्य रसैः पिष्ट्वा मुद्गमात्रन्तु कारयेत् ॥
स्वयमग्निरसो नाम सर्वाजीर्णप्रशान्तये ॥

काली मिर्च, नागरमोथा, बच, कूठ और शुद्ध बछनाग का चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर अदरकके रसमें खरल करके मूंगके समान गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके अजीर्ण का नाश होता है ।

(८३२४) स्वयमग्निरसः (२)

(र. चि. म. । स्त. ११ ; वृ. नि. र. । क्षय. ; कासा. ; र. र. रसायन खं. । उप. २ ; र. का. धे. । कासा. ; शा. सं. । खं. २ अ. १२)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं कुर्यात्खल्वेन कज्जलीम् ॥
तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ।
[1]द्वियामान्ते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् ॥
आच्छाद्येरण्डपत्रेण यामार्धेऽत्युष्णता भवेत् ।
धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात् अहोरात्रात्समुद्धरेत्[2] ॥
सञ्चूर्ण्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत् ।
भावयेत्कन्यकाद्रावैः सप्तधा भृङ्गजैस्तथा ॥
काकमाचीकुरण्टोत्थद्रवैर्मुण्डयाः पुनर्नवैः ।
सहदेव्यमृतानीलीनिर्गुण्डीचित्रजैस्तथा ॥
सप्तधा तु पृथग्द्रावैर्भाव्यं शोष्यं तथातपे ।
सिद्धयोगो ह्ययं ख्यातः सिद्धानां च मुखागतः ॥
अनुभूतो मया सत्यं सर्वरोगगणापहः ।
स्वर्णादीन्मारयेदेवं चूर्णीकृत्य तु लोहवत् ॥
त्रिफलामधुसंयुक्तः सर्वरोगेषु योजयेत् ।
त्रिकटु त्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः ॥
नवभागोन्मितैरेतैः समः पूर्वरसो भवेत् ।
सञ्चूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् ।
स्वयमग्निरसो नाम्ना क्षयकासनिकृन्तनः ॥

शुद्ध पारा १ भाग, और शुद्ध गंधक २ भाग लेकर कज्जली बनावें फिर उसमें उसके बराबर तीक्ष्ण लोह (फौलाद) का चूर्ण मिलाकर घृतकुमारी

१ "दिनैकं गोलकं कृत्वा" इति पाठान्तरम् ।
२ "द्वि दिनान्ते समुद्धरेत्" इति पाठान्तरम् ।

के रस में २ पहर (पाठान्तरके अनुसार १ दिन) खरल करके गोला बनावें और उसे ताम्र पात्रमें रखकर अरण्डके पत्तोंमें लपेट दें। (इसे धूप में रखदें) आधा पहर पश्चात् जब गोला अत्युष्ण हो जाय तो उसे अनाजके ढेर में दबा दें और १ दिन (पाठान्तरके अनुसार २ दिन) पश्चात् निकालकर बारीक चूर्ण करके वस्त्रसे छान लें। वह निस्सन्देह वारितर हो जायगा। तदनन्तर उसे घृत-कुमारी, भंगरा, मकोय, पियाबासा, मुण्डी, पुनर्नवा, सहदेवी, गिलोय, नील, संभालू और चित्रकके रसकी ७-७ भावना दें। हर भावनाके पश्चात् धूपमें सुखा लेना चाहिये।*

यह सिद्धयोग सिद्ध महानुभावोंसे प्राप्त हुवा है और बिल्कुल सत्य है। मैं परीक्षा कर चुका हूं यह समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

इसी प्रकार स्वर्णादि धातुओंका चूर्ण करके उनकी भी भस्म की जाती है।

इस लोह--भस्मको त्रिफला चूर्ण और शहदके साथ समस्त रोगोंमें देना चाहिये।

* र. चि. म. में तथा वृ. नि. र. के कासाधिकारोक्त पाठ तथा अन्य कई ग्रन्थों में भावनाओं का अभाव है।

र. र. रसा. खं. के अनुसार तीक्ष्ण लोह, कान्त लोह, और मुण्डलोहमें से कोई एक ले सकते हैं तथा भावना-द्रव्य निम्नलिखित लेने चाहियें:-

घृतकुमारी, भंगरा, मकोय, मुण्डी, संभालु, चीता, पियांवासा, बाबची, ब्राह्मी, सहदेवी, पुनर्नवा, सेंभल, भांग, धतूरा और त्रिफला।

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची, जायफल और लौंग का चूर्ण १-१ भाग तथा उपरोक्त लोहभस्म ९ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे क्षयकास का नाश होता है।

मात्रा—२ निष्क

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।)

(८३२५) स्वरप्रसादको रसः

(र. रा. सु. । स्वरभेदा.)

पारदं गन्धकं तुल्यं तालकञ्च मनःशिला।
सर्वं तुल्यश्च कङ्कोलजलैस्तु दिवसत्रयम् ॥
ततः पुटेद्गजपुटे शरपुङ्खाजलैः पुनः।
सम्मर्द्य पाचयेद् भूयस्ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥
स्वरप्रसादको नाम रसोयं दृष्टविक्रमः।
पर्णखण्डेन दातव्यो गुञ्जाद्वयमितो बुधैः ॥
गुडार्द्रकेन मद्येन पिप्पली मधुनाथवा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शुद्ध हरताल और शुद्ध मनसिल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे कंकोलके क्वाथमें ३ दिन खरल करके गोला बनावें और उसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गज-पुटमें पकावें।

तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर उसे ३ दिन शरपुंखा (सर-फोका) के रसमें खरल करके उपरोक्त विधिसे गजपुटमें पकावें।

इसके सेवनसे स्वरभेद रोग नष्ट होता है यह बात प्रत्यक्ष देखी गई है।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे पानमें रखकर अथवा गुड़ और अदरकके साथ या मद्यके साथ अथवा पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देना चाहिये।

स्वर्जिक्षारादियोगः

प्र. सं. ८१५९ "सर्ज्जीक्षारादियोगः" देखिये

(८३२६) स्वर्णक्षारीरसः

(शा. सं. । खं. २ अ. १२ ; र. र. स. । उ. अ. २०)

हेमाह्वां पञ्चपलिकां क्षिप्त्वा तक्रघटे पचेत् ।
तक्रे जीर्णे समुद्धृत्य पुनः क्षीरघटे पचेत् ॥
क्षीरे जीर्णे समुद्धृत्य क्षालयित्वा विशोधयेत् ।
तच्चूर्णं पञ्चपालिकं मरिचानां पलद्वयम् ॥
पलैकं मूर्च्छितं सूतमेकीकृत्य तु भक्षयेत् ।
निष्कैकं सुप्तिकुष्ठार्तः स्वर्णक्षीरीरसो ह्ययम् ॥

२५ तोले स्वर्णक्षीरीकी जड़को १ घड़ा तक्रमें पकावें। जब तक्र सूख जाय तो उसे निकालकर दूधके घड़ेमें पकावें। जब दूध भी जल जाय तो स्वर्णक्षीरी मूलको निकाल कर धो डालें और चूर्ण कर लें। अब २५ तोले यह चूर्ण, १० तोले काली मिर्च और ५ तोले मूर्च्छित पारद ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

मात्रा—१ निष्क (३॥ माशे।)

इसके सेवनसे सुप्तिकुष्ठका नाश होता है।

(८३२७) स्वर्णपत्ररसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

नागं सूतं गन्धकं वत्सनाभं
रसैर्मर्द्यं कन्यकाया दिनैकम् ।
गोलं कृत्वा निक्षिपेद्धाण्डमध्ये
सन्धावर्य वै श्रावकेनापि सम्यक् ॥
मुद्रां दत्त्वा भूतिसामुद्रकेण
यामं चैकं मन्दवह्नौ विपाच्य ।
वल्लं चैकं भक्षितं क्षौद्रयुक्तं
यक्ष्मारोगं नाशयेद्धि प्रसह्य ॥

सीसा भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक और शुद्ध बछनाग १-१ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ दिन घृतकुमारीके रसमें खरल करके गोला बनावें तथा उसे हाण्डीमें रख कर शरावसे ढक कर सन्धिको राख और समुद्र नमकके मिश्रणसे बन्द कर दें। तदनन्तर उसे १ पहर मन्दाग्नि पर पकावें और स्वांगशीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

मात्रा—३ रत्ती।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे क्षयरोग अवश्य नष्ट हो जाता है।

(**व्यवहारिक मात्रा**—१ रत्ती।)

(८३२८) स्वर्णपर्पटी

(वृ. यो. त. । तं. ७६ ; वृ. नि. र. ; यो. र. । ग्रहण्य. ; र. रा. सु. ; भै. र. ; रसे. सा. सं. । ग्रहण्य. ; रं. चं. । ग्रहण्य. , राजयक्ष्मा. ; वृ. नि. र. । क्षय. ; वृ. यो. त. । त. ६७ ; यो. र. । राजयक्ष्मा.)

शुद्धसूतं पलमितं तुर्यांशस्वर्णसंयुतम् ।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण यावदेकत्वमाप्नुयात् ॥
प्रक्षाल्योष्णाम्बुना पश्चात्पलमात्रे तु गन्धके ।
द्रुते लोहमये पात्रे बादरानलयोगतः ॥

प्रक्षिप्य चालयेल्लोह्यां मन्दं लोहशलाकया ।
ततः पाकं विदित्वा तु रम्भापत्रे शनैः क्षिपेत् ॥
गोमयस्थे तदुपरि रम्भापत्रेण यन्त्रयेत् ।
शीतं तच्चूर्णितं गुञ्जाक्रमवृद्धं निषेवयेत् ॥
माषमात्रं भवेद्यावत्ततो मात्रां न वर्धयेत् ।
सक्षौद्रेणोषणेनैव लेहयेद्भिषगुत्तमः ॥
ग्रहणीं हन्ति शोषं च सुवर्णरसपर्पटी ।
सद्योबलकरी शुक्रवर्धिनी वह्निदीपनी ॥
क्षयकासश्वासमेहशूलातीसारपाण्डुनुत् ॥

शुद्ध पारद ५ तोले और सोनेके वर्क १। तोला ले कर पारेमें १-१ वर्क डाल कर नीबूके रसके साथ खरल करें । जब दोनों मिल जावें तो गर्म पानीसे धो डालें । तदनन्तर लोह पात्रमें (घी पोत कर) ५ तोले शुद्ध गंधक डाल कर बेरीके कोयलों पर रक्खें । जब गंधक पिघल जाय तो उसमें उपरोक्त स्वर्णमिश्रित पारद डाल कर लोहेकी सलाईसे अच्छी तरह चलावें । जब पाक तैयार हो जाय तो उसे गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला कर उसके ऊपर पुनः केलेका पत्ता ढक दें और गोबरसे दबा दें । जब शीतल हो जाय तो पीसकर रक्खें ।

सेवन विधि—प्रथम दिन १ रत्ती पर्पटी काली मिर्चके चूर्ण और शहदके साथ खिलावें । दूसरे दिन इसी अनुपानके साथ दो रत्ती पर्पटी दें । इसी प्रकार प्रतिदिन १-१ रत्ती पर्पटी बढ़ाते रहें ।

जब १ माषा (१। माशा-१० रत्ती) हो जाय तब प्रतिदिन १-१ रत्ती घटाना शुरु करें ।

इसके सेवनसे ग्रहणी, शोष, क्षय, कास, श्वास प्रमेह, शूल, अतिसार और पाण्डुका नाश होता तथा बल, वी और अग्निकी शीघ्र ही वृद्धि हो जाती है ।*

(८३२९) स्वर्णपर्पटीरसः

(र. रा. सु. । कासा.)

शुद्धं सूतं भवेत्कर्षं गन्धकं द्विगुणं तथा ।
भस्महाटक सूतांशं त्रयं खल्वे विमर्दयेत् ॥
कज्जलाभं लोहपात्रे कदल्याद्रावभावयेत् ।
ऊर्ध्वाधो गोमयं दत्त्वा हेमपर्पटिका रसः ॥
कासं क्षयं सकृच्छ्रं च मूत्रघातं तथाश्मरीम् ।
सिद्धा पर्पटिका ख्याता सर्वरोगविनाशनी ॥
रसायिनी त्वियं श्रेष्ठा शिशूनाञ्च गदापहा ॥

शुद्ध पारद १। तोला, शुद्ध गंधक २॥ तोले और स्वर्ण भस्म १। तोला ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर खरल करें जब कज्जली हो जाय तो उसे लोहपात्रमें पिघला कर गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला दें और उसके ऊपर दूसरा पत्ता रख कर उसे गोबरसे ढक दें । जब शीतल हो जाय तो निकाल कर पीस लें ।

इसके सेवनसे कास, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और अश्मरीका नाश होता है । यह पर्पटी बालरोग-नाशक तथा रसायन है ।

*पाठान्तरके अनुसार पारद स्वर्णसे आठ गुना है और पित्तज रोगोंमें खांडके साथ, वातज रोगोंमें बंसलोचनके साथ एवं कफज रोगोंमें वंसलोचन, पीपल और शहदके साथ देना लिखा है ।

(८३३०) **स्वर्णभूपतिरसः**

(र. चं., वृ. नि. र. ; र. रा. सु. ; यो. र. । राजयक्ष्मा.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतशुल्बं तयोः समम् ।
अभ्रलोहकयोर्भस्म कान्तभस्म सुवर्णजम् ॥
रजतं च विषं सम्यक् पृथक् मृतसमं भवेत् ।
हंसपादीरसैर्मर्द्य दिनमेकं वटीकृतम् ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य मृदा संलेपयेद्बहिः ।
शुष्का सा वालुकायन्त्रे शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
चतुर्गुञ्जमितं देयमार्द्रकद्रवपिप्पली ।
क्षयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
आमवातं धनुर्वातं शृङ्खलावातमेव च ।
आढयवातं पङ्गुवातं कफवाताग्निमांद्यनुत् ॥
कटिवातं सर्वशूलं नाशयेन्नात्र संशयः ।
गुल्मशूलमुदावर्तं ग्रहणीमतिदुस्तराम् ॥
प्रमेहमुदरं सर्वामश्मरीं मूत्रविड्ग्रहम् ।
भगन्दरं सर्वकुष्ठं विद्रधीं महतीं तथा ॥
श्वासकासमजीर्णं च ज्वरमष्टविधं तथा ।
कामलां पाण्डुरोगं च शिरोरोगं च नाशयेत् ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगान् विनाशयेत् ।
यथा सूर्योदये नश्येत्तमः सर्वगतं तथा ॥
सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग, ताम्र भस्म २ भाग तथा अभ्रक भस्म, लोह भस्म, कान्तलोहभस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म और शुद्ध बछनाग १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गंधक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको हंसपदीके रसमें एक दिन खरल करें और उसकी गोलियां बना कर सुखा लें । तत्पश्चात् उन गोलियोंको कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर (१ दिन) बालुका-यन्त्रमें मन्दाग्नि पर पकावें । तदनन्तर उसके स्वांग-शीतल होने पर निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—४ रत्ती ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—१ रत्ती ।)

इसे अदरकके रस और पीपलके चूर्णके साथ सेवन करना चाहिये । इसके सेवनसे त्रिदोषज क्षय, १३ प्रकारके सन्निपात, आमवात, धनुर्वात, शृंखलावात, आढयवात, पंगुता, कफवात, अग्निमांद्य, कटिवात, शूल, गुल्म, उदावर्त, दुस्तर ग्रहणी, प्रमेह, उदर रोग, अश्मरी, मूत्राघात, भगंदर, कुष्ठ, विद्रधि, श्वास, कास, अजीर्ण, आठ प्रकारके ज्वर, कामला, पाण्डु, शिरोरोग और अनुपान विशेषके साथ देनेसे अन्य समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

जिस प्रकार सूर्यके सम्मुख अंधकार नहीं रह सकता इसी प्रकार इस रसके सम्मुख रोग नहीं ठहर सकते ।

(८३३१) **स्वर्णमाक्षिकद्रावणम्**

(र. र. स. । पू. अ. २)

एरण्डोत्थेन तैलेन गुञ्जा क्षौद्रं च टङ्कणम् ।
मर्दितं तस्य वापेन सत्वं माक्षिकजं द्रवेत् ॥

चौंटली (गुंजा), शहद और सुहागा समान भाग ले कर, सबको एकत्र मिला कर अरण्डीके तेलमें खरल करें ।

स्वर्ण माक्षिकके सत्वको अग्नि पर तपाकर उसमें उपरोक्त मिश्रण डालनेसे वह द्रवित (पतला) हो जाता है।

(८३३२) स्वर्णमाक्षिकमारणम् (१)

(आ. वे. प्र. । अ. १२ ; र. मं. ; यो. र. ; बृ. यो. त. । तं. ४१ ; रसे. सा. सं.)

माक्षिकस्य चतुर्थांशं दत्त्वा गन्धं विमर्दयेत् ।
उरुबूकस्य तैलेन ततः कार्योऽस्य चक्रिका ॥
शरावसम्पुटे धृत्वा पुटेद्गजपुटेन च ।
धान्यस्य तुषमूर्ध्वाधो दत्त्वा शीतं समुद्धरेत् ॥
सिन्दूराभं भवेद्भस्म माक्षिकस्य न संशयः ॥

४ भाग स्वर्ण माक्षिकके चूर्णमें १ भाग शुद्ध गंधक मिला कर अरण्डीके तेलमें खरल करें और टिकिया बना कर उन्हें, नीचे ऊपर धानकी भूसी रख कर शराव-सम्पुटमें बन्द करें तथा गजपुटमें फूंक दें।

इस विधिसे स्वर्णमाक्षिककी सिन्दूरके समान लाल भस्म हो जाती है।

(८३३३) स्वर्णमाक्षिकमारणम् (२)

(आ. वे. प्र. । अ. १२ ; शा. ध. ; बृ. यो. त. । त. ४१ ; यो. चि. म. । अ. ७ ; यो. र. ; भा. प्र. ; र. चं.)

कुलत्थस्य कषायेण घृष्ट्वा तैलेन वा पुटेत् ।
अजामूत्रेण वा नूनं म्रियते स्वर्णमाक्षिकम् ॥

स्वर्णमाक्षिकके चूर्णको कुलथीके क्वाथ या (अरण्डीके) तेल अथवा बकरीके मूत्रमें खरल करके टिकिया बना कर सुखावें और शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। इस विधिसे स्वर्णमाक्षिक अवश्य मर जाती है।

(८३३४) स्वर्णमाक्षिकयोगः

(शा. ध. । खं. २ अ. १२)

काञ्चनारत्वचोत्थेन क्वाथेन परिशीलितम् ।
ताप्यमन्तः प्रविष्टान्तु बहिः कुर्यान्मसूरिकाम् ॥

कचनारकी छालके काथके साथ "**स्वर्ण माक्षिक भस्म**" देनेसे (निकल कर) भीतर घुसी हुई मसूरिका बाहर निकल आती है।

(मात्रा—१-२ रत्ती ।)

(८३३५) स्वर्णमाक्षिकरसायनम्

(र. र. स. । पू. अ. २)

माक्षीकसत्वं च रसेन पिष्टं
कृत्वा विलीने च बलिं निधाय ।
सम्मिश्र्य सम्मर्द्य च खल्वमध्ये
निक्षिप्य सत्वं द्रुतिमभ्रकस्य ॥
विधाय गोलं लवणाख्ययन्त्रे
पचेद्दिनार्धं मृदुवह्निना च ।
स्वतः सुशीतं परिचूर्ण्य सम्य-
ग्वल्लोन्मितं व्योषविडङ्गयुक्तम् ॥
संसेवितं क्षौद्रयुतं निहन्ति
जरां सरोगामपमृत्युमेव ।
दुःसाध्यरोगानपि सप्तवासरै-
र्नैतेन तुल्योस्ति सुधारसोपि ॥

स्वर्णमाक्षिकसत्व और शुद्ध पारद १-१ भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल करें।

जब दोनों मिल जाएं तो उसमें १ भाग शुद्ध गंधक मिला कर खरल करें और कज्जली हो जाने पर उसमें १ भाग अभ्रक सत्वको द्रुति मिलाकर खरल करें और गोला बना कर (शरावसम्पुटमें बन्द करके) उसे १२ घण्टे लवणयन्त्रमें मन्दाग्नि पर पकावें और फिर स्वांग-शीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस लें।

मात्रा—२ रत्ती। (व्यवहारिक मात्रा-१ रत्ती)

इसे सोंठ, मिर्च, पीपल और बायबिडंगके (१॥ माशा) चूर्णमें मिला कर शहदके साथ सेवन करनेसे जरा, रोग और अपमृत्युका नाश होता है। यह दुःसाध्य रोगोंको भी सात दिनमें नष्ट कर देता है। यह रस सुधासे भी अधिक गुणकारी है।

(८३३६) स्वर्णमाक्षिकशोधनम् (१)

(र. र. स. । पू. अ. २)

सुवर्णशैलप्रभवो विष्णुना काञ्चनो रसः।
तापीकिरातचीनेषु यवनेषु च निर्मितः॥
ताप्यः सूर्यांशु सन्तप्तो माधवे मासि दृश्यते।
मधुरः काञ्चनाभासः साम्लो रजतसन्निभः॥
किञ्चित्कषायमधुरः शीतः पाके कटुर्लघुः।
तत्सेवनाज्जराव्याधिविषैर्न परिभूयते॥
माक्षिको द्विविधो हेममाक्षिकस्तारमाक्षिकः।
तत्राद्यं माक्षिकं कान्यकुब्जोत्थं स्वर्णसन्निभम्॥
तपतीतीरसम्भूतं पञ्चवर्णसुवर्णवत्।
पाषाणबहलः प्रोक्तस्ताराख्योऽल्पगुणात्मकः॥
माक्षीकधातुः सकलामयघ्नः
प्राणो रसेन्द्रस्य परं हि वृष्यः।
दुर्मेललोहद्वयमेलनश्च
गुणोत्तरः सर्वरसायनाग्र्यः॥
एरण्डतैललुङ्गाम्बुसिद्धं सिद्ध्यति माक्षिकम्।
सिद्धं वा कदलीकन्दतोयेन घटिकाद्वयम्॥
तप्तं क्षिप्तं वराक्वाथे शुद्धिमायाति माक्षिकम्॥

सुवर्णमाक्षिक सुमेरु पर्वतमें होने वाले सोनेके रसके योगसे उत्पन्न होती है और तापी नदीके निकट, चीन देश तथा यवन देश (अरब) में पाई जाती है। जब वैशाख मासमें सूर्य खूब तपता है तब (पर्वतमें) स्वर्णमाक्षिक दिखलाई देती है।

जो स्वर्णमाक्षिक स्वर्णके समान चमकवाली होती है वह मधुर तथा जो चांदीके समान चमकवाली होती है वह अम्ल होती है।

स्वर्णमाक्षिक (साधारणतः) कुछ कषैली और मधुर होती है तथा शीतल, पाकमें कटु एवं लघु है।

इसे सेवन करने वाले पर जरा (वृद्धावस्था), व्याधि और विषका प्रभाव नहीं पड़ता।

माक्षिक दो प्रकारकी होती है, एक स्वर्णमाक्षिक और दूसरी तार माक्षिक। जो स्वर्णमाक्षिक कान्यकुब्ज (कनौज) में उत्पन्न होती है उसमें सोनेकी सी चमक पाई जाती है, और जो तापी नदीके किनारे होती है उसमें स्वर्णकी सी चमक तथा पांच रंग दिखलाई देते हैं।

जिस स्वर्णमाक्षिकमें पत्थर अधिक होता है

उसे तारमाक्षिक कहते हैं, उसमें दूसरीकी अपेक्षा अल्प गुण होते हैं।

स्वर्णमाक्षिक सर्व रोगनाशक, पारदकी प्राण स्वरूप, अत्यन्त वृष्य, दो अनमेल धातुओंको मिला कर एक करदेने वाली और श्रेष्ठ रसायन औषध है।

स्वर्णमाक्षिकके चूर्णको अण्डीके तेल और बिजौरेके रसमें पकानेसे अथवा केलेकी जड़के रसमें २ घड़ी पकानेसे अथवा तपा तपा कर (७ बार) त्रिफलाके क्वाथमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाती है।

(८३३७) **स्वर्णमाक्षिकशोधनम्** (२)

(यो. चि. म. । अ. ७)

माक्षिकं स्वेदयेत्पूर्वं कुलत्थ क्वाथ योगतः।
अथवा नरमूत्रेण दोलायन्त्रे विशुध्यति ॥

स्वर्णमाक्षिकके चूर्णको कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर दोलायन्त्रविधिसे कुलथीके क्वाथ या मनुष्यके मूत्रमें स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाती है।

(८३३८) **स्वर्णमाक्षिकशोधनम्** (३)

(आ. वे. प्र. । अ. १२ ; यो. चि. म. । अ. ७; र. मं. ; भा. प्र. ; यो. र. , रसे. सा. सं. ; वृ. यो. त. । त. ४१ ; शा. ध.)

माक्षिकस्य त्रयो भागा भागैकं सैन्धवस्य च।
मातुलुङ्गद्रवैर्वाऽथ जम्बीरस्य द्रवैः पचेत् ॥
चालयेल्लोहजे पात्रे यावत्पात्रं सुलोहितम्।
भवेत्ततस्तु संशुद्धं स्वर्णमाक्षिकमत्र तु ॥

३ भाग स्वर्णमाक्षिकके चूर्णमें १ भाग सेंधानमकका चूर्ण मिला कर लोहेकी कढ़ाईमें डाल कर तेज अग्नि पर पकावें और थोड़ा थोड़ा मातुलुंग या बिजौरेका रस डालते हुवे लोहेकी करछीसे चलाते रहें। जब लोह पात्र (और स्वर्ण माक्षिक) खूब लाल हो जाय तो अग्नि बन्द कर दें। इस विधिसे स्वर्णमाक्षिक शुद्ध हो जाती है।

(बार बार पानीसे धो कर सेंधानमक निकाल देना चाहिये।)

(८३३९) **स्वर्णमाक्षिकशोधनम्** (४)

(रसे. सा. सं.)

स्वर्णमाक्षिकचूर्णन्तु वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत्।
कालमारिषशालिञ्चक्वाथे दोलाविधानतः ॥
तदधः पतितं शस्तमेवं शुध्यति माक्षिकम् ॥

स्वर्ण-माक्षिकके बारीक चूर्णको कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर दोलायन्त्र विधिसे कालमारिष (जल चौलाई) के क्वाथमें स्वेदित करें। जब सब चूर्ण कपड़ेसे छन कर क्वाथमें गिर जाय तो उसे इसी प्रकार पोटलीमें बांध कर शालिञ्चशाकके क्वाथमें स्वेदित करें। जब सब चूर्ण कपड़ेसे छन कर क्वाथमें गिर जाय तो उसे सुखा लें। इस प्रकार स्वर्ण माक्षिक शुद्ध हो जाती है।

(८३४०) **स्वर्णमाक्षिकशोधनमारणम्**

(र. प्र. सु. । अ. ५)

मूत्रे तक्रे च कौलत्थे मर्दितं शुष्कमेव च।
गन्धाश्मबीजपूराभ्यां पिष्टं तच्छ्रावसम्पुटे ॥
पञ्चवाराहपुटकैर्दग्धं मृतिमवाप्नुयात् ॥

स्वर्णमाक्षिकके चूर्णको क्रमशः गोमूत्र, तक्र और कुलथीके क्वाथमें घोट घोट कर सुखा लें फिर उसमें (चतुर्थांश) शुद्ध गंधक मिलाकर नीबूके रसमें खरल करें और टिकिया बना कर सुखा लें तथा शरावसम्पुटमें बन्द करके वराहपुटमें फूंक दें। इसी प्रकार ५ पुट देनेसे भस्म हो जाती है। *

***अशुद्ध स्वर्णमाक्षिकके दोष**

मन्दानलत्वं बलहानिमुग्रां
विष्टम्भितां नेत्रगदान् सकुष्ठान्।
मालां विधत्तेऽपि च गण्डपूर्वां
शुध्यादिहीनं खलु माक्षिकं तु ॥

(आ. वे. प्र.)

अशुद्धं माक्षिकं कुर्यादान्ध्यं कुष्ठं क्षयं कृमीन्।
शोधनीयं प्रयत्नेन तस्मात्कनकमाक्षिकम् ॥
स्वर्णवर्णं गुरु स्निग्धमीषन्नीलच्छविच्छटम्।
कषे कनकवद् घृष्टं तद्वरं हेममाक्षिकम् ॥
माक्षिकं तिक्तमधुरं मेहार्शः क्षयकुष्ठनुत्।
कफपित्तहरं शीतं योगवाहि रसायनम् ॥

(वृ. यो. त.)

अशुद्ध स्वर्ण माक्षिक सेवन करनेसे अग्निमांद्य, बलह्रास, विष्टम्भ (कब्ज), नेत्ररोग, कुष्ट, गण्डमाला, अन्धता, क्षय और कृमि रोग उत्पन्न होते हैं।

जो स्वर्णमाक्षिक सोनेके समान रंगवाली भारी, स्निग्ध, और कुछ नीलापन लिये हो तथा जो कसौटी पर घिसनेसे स्वर्णके समान दिखाई दे वह उत्तम होती है।

स्वर्ण माक्षिक तिक्त, मधुर, प्रमेहनाशक, अर्शोहर तथा क्षय, कुष्ट, कफ और पित्तको नष्ट करने वाली; शीतल एवं योगवाही रसायन है।

(८३४१) स्वर्णमाक्षिकसत्वपातनम् (१)

(र. प्र. सु.। अ. ५)

लोहपात्रे सुसंदिग्धं लोहदण्डेन घर्षितम्।
यदा रक्तं धातुनिभं जायते निम्बुकद्रवैः ॥
घर्षयेत्त्रिगुणं सूतं मुक्त्वा सङ्घर्षणं कुरु।
दिनैकं घर्षयित्वा तु दृढवस्त्रेण गालयेत् ॥
वस्त्रस्था पिष्टिका लग्ना त्वधः पतति पारदः।
अनेनैव प्रकारेण द्वित्रिवारेण गालयेत् ॥
तत्पिष्टी गोलकं ग्राह्यं यन्त्रे डमरुके न्यसेत्।
प्रहरद्वयमात्रं चेदग्निं प्रज्वालयेदधः ॥
इन्द्रगोपसमं सत्वमधःस्थं ग्राहयेत्सुधीः।
अनेनैव विधानेन ताप्यसत्वं समाहरेत् ॥
टङ्कणेन समायुक्तं द्रावितं मूषया यदा।
तदा ताम्रप्रभं सत्वं जायते नात्र संशयः ॥
देहलोहकरं सम्यग्देवीशास्त्रेण भाषितम् ॥

स्वर्णमाक्षिकके चूर्णको लोहपात्रमें डालकर आग पर रक्खें और लोहदण्डसे रगड़ते रहें। जब वह लाल हो जाय तो नीबूका रस डाल कर घोटें और उसमें स्वर्णमाक्षिकसे ३ गुना पारद मिला कर १ दिन घोट कर मज़बूत कपड़ेसे छान लें। छाननेसे कपड़ेमें पिट्ठी रह जायगी और नीचे पारद निकलेगा। इसी प्रकार २–३ बार छान लें। तदनन्तर उस पिट्ठीके गोलेको डमरुयन्त्रमें रख कर दो पहर अग्नि पर पकावें। तत्पश्चात् यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर उसे खोलकर नीचेके पात्र-

मेंसे बीर बहूटीके समान लाल रंगके सत्वको निकाल लें।

इस सत्वमें सुहागा मिलाकर मूषामें रखकर धमानेसे वह ताम्रके समान हो जाता है।

यह सत्व देहको लोहके समान दृढ़ कर देता है। यह विधि "देवी शास्त्र" में वर्णित है।

(८३४२) **स्वर्णमाक्षिकसत्वपातनम्** (२)

(र. र. स. । पू. अ. २)

त्रिंशांशनागसंयुक्तं क्षारैरम्लैश्च मर्दितम् ।
ध्मातं प्रकटमूषायां सत्वं मुञ्चति माक्षिकम् ॥
सप्तवारं परिद्राव्य क्षिप्तं निर्गुण्डिकाद्रवे ।
माक्षिकसत्वसम्मिश्रं नागं नश्यति निश्चितम् ॥

स्वर्णमाक्षिकके चूर्णमें तीसवां भाग सीसा मिलाकर क्षार और अम्लद्रवोंके साथ खरल करें। तदनन्तर उसे खुली हुई मूषामें रख कर धमानेसे उसका सत्व निकल आता है।

इस सत्वको पिघला पिघला कर सात बार संभालुके रसमें बुझानेसे उसमें मिला हुवा सीसा नष्ट हो जाता है।

(८३४३) **स्वर्णमाक्षिकसत्वपातनम्** (३)

(र. र. स. । पू. अ. २)

क्षौद्रगन्धर्वतैलाभ्यां गोमूत्रेण घृतेन च ।
कदलीकन्दसारेण भावितं माक्षिकं मुहुः ॥
मूषायां मुञ्चति ध्मातं सत्वं शुल्बनिभं मृदु ।
गुञ्जाबीजसमच्छायं द्रुतद्रावं च शीतलम् ॥
तात्सत्वं विशुद्धं तद्देहलोहकरं परम् ॥

स्वर्णमाक्षिकको शहद, अरण्डीके तेल, गोमूत्र, घी और केलेकी जड़के रसकी अनेक भावनाएं दे कर मूषामें रख कर धमानेसे उसका सत्व निकल आता है। स्वर्ण माक्षिक-सत्व ताम्रके समान होता है, उसका रंग चौंटलीके समान लाल होता है और वह मृदु होता है तथा शीघ्र पिघल जाता है।

स्वर्णमाक्षिक सत्व शीतल और देहको दृढ़ करने वाला है।

(८३४४) **स्वर्णमाक्षिकसत्वपातनम्** (४)

(आ. वे. प्र. । अ. १२ ; र. चं.)

एरण्डोत्थेन तैलेन गुञ्जा क्षौद्रं च टङ्कणम् ।
मर्दितं तस्य वापेन सत्वं माक्षिकजं भवेत् ॥

गुञ्जा (चौंटली), शहद और सुहागा समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अरण्डीके तेलके साथ खरल करें। स्वर्णमाक्षिकको तपाकर उसमें इस मिश्रणका प्रक्षेप देनेसे स्वर्णमाक्षिकका सत्व निकल आता है।

(८३४५) **स्वर्णमाक्षिकादिचूर्णम्**

(वृ. यो. त. । त. १४७; व. से. । वाजीकरणा.)

माक्षीकधातुगदपारदलोहचूर्णं
पथ्याशिलाजतुविडङ्गघृतानि योऽद्यात् ।
एकोनविंशति दिनानि गदार्दितोऽपि
साशीतिकोऽपि रमत्यबलां युवेव ॥

स्वर्णमाक्षिक भस्म, कूठ, पारद भस्म, लोह भस्म, हर्र, शिलाजीत और बायबिडंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे २१ दिन तक घृतके साथ सेवन करनेसे रोगी और ८० वर्षका वृद्ध पुरुष भी युवाके समान स्त्री--समागम करनेमें समर्थ हो जाता है।

(मात्रा—२-३ रत्ती)

(८३४६) **स्वर्णमाक्षिकादियोगः**

(वृ. नि. र. । क्षय.)

मधुताप्यविडङ्गाश्मजतु लोहं घृतं मतम् ।
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमानं हिताशिनः ॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म, बायबिड़ंग, शिलाजीत और लोहभस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सेवन करनेसे उग्र राजयक्ष्मा भी नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—२ रत्ती)

अनुपान—घी और शहद.

(८३४७) **स्वर्णमारणम्** (१)

(भा. प्र । पू. खं. १ ; वृ. यो. त. । त. ४१; रसे. सा. सं. ; यो. र.; शा. ध.)

काञ्चने गलिते नागं षोडशांशेन निक्षिपेत् ।
चूर्णयित्वा तथाम्लेन घृष्ट्वा कृत्वा तु गोलकम् ॥
गोलकेन समं गन्धं दत्त्वा चैवाधरोत्तरम् ।
शरावसम्पुटे धृत्वा पुटेद्विंशद्वनोपलैः ॥
एवं सप्तपुटैर्हेम निरुत्थं भस्म जायते ॥

स्वर्णको गलाकर उसमें उसका १६ वां भाग सीसा× मिलाकर खरल करें और फिर नीबूके रसमें खरल करके गोला बना लें। इस गोलेको, नीचे ऊपर उसके बराबर गंधकका चूर्ण बिछाकर, शरावसम्पुटमें बन्द करें। तत्पश्चात् उसे २० जंगली उपलोंमें फूंक दें।

इसी प्रकार (गंधकके बीचमें रख कर) सात पुट देनेसे निरुत्थ भस्म हो जाती है।

×आ. वे. प्र. के मतानुसार स्वर्णके बराबर पारद भी डालना चाहिये।

(८३४८) **स्वर्णमारणम्** (२)

(र. चं. ; र. प्र. सु. । अ. ४)

हेम्नःसूक्ष्मदलानि भूर्जसदृशान्यादाय संलेप्य वै ।
वज्रीदुग्धकहिङ्गुहिङ्गुलसमैरेकत्र पिष्टीकृतैः ॥
सत्यं सम्पुटके निधाय दशभिश्चैवं पुटै कुक्कुटैः ।
पाच्यं हेम च रक्तगैरिकसमं सञ्जायते निश्चितम् ॥

सोनेके, भोजपत्रके समान बारीक पत्रों पर समान भाग मिलित थूहरका दूध, हींग और शिंगरफका लेप करें (यह मिश्रण स्वर्णके बराबर तथा अच्छी तरह घुटा हुवा होना चाहिये।) तदनन्तर उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके कुक्कुट पुटमें फूंकें।

इस प्रकार दस पुट देनेसे सोनेकी, गेरूके समान लाल रंगकी भस्म हो जाती है।

(८३४९) **स्वर्णमारणम्** (३)

(वृ. यो. त. । त. ४१ ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; र. रा. सु.)

रसस्य भस्मना वाऽथ रसेनाऽऽलिप्य तद्दलम् ।
हिङ्गुहिङ्गुलसिन्दूरशिलासाम्येन मेलयेत् ॥
सम्मर्द्य काञ्चनद्रावैर्दिनं कृत्वाऽथ गोलकम् ।
तं भाण्डस्य तले दत्त्वा भस्मना पूरयेद्दृढम् ॥
अग्निं प्रज्वालयेद्गाढं द्विनिशं स्वाङ्गशीतलम् ।
उद्धृत्य सावशेषं चेत्पुनर्देयं पुटद्वयम् ॥

अनेन विधिना स्वर्णं निरुत्थं जायते मृतम् ॥
स्वर्णं शीतं पवित्रं क्षयवमि-
कसनश्वासमेहास्रपित्त
क्षैण्यक्ष्वेडक्षतास्रमदर-
गदहरं स्वादुतिक्तं कषायम् ।
वृष्यं मेधाग्निकान्तिप्रद-
मगुरुसरं कार्श्यहारि त्रिदोषो-
न्मादापस्मार शूलज्वरजयि
वपुषो बृंहणं नेत्रपथ्यम् ॥

स्वर्णके बारीक पत्रोंपर पारद भस्म या पारदका लेप करें और फिर हींग, हिंगुल, सिन्दूर तथा मनसिल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर कचनारकी छालके रसमें खरल करें तथा (स्वर्णके बराबर) यह मिश्रण उसमें मिला कर कचनारकी छालके रसके साथ १ दिन खरल करें। तदनन्तर उसका एक गोला बना कर उसे एक मज़बूत और कपडमिट्टी की हुई हांडीमें रख कर (उसे शरावसे ढक कर) हांडीमें मुंह तक अरने उपलोंकी भस्म दबा दबा कर भर दें और उसे चूल्हे पर चढ़ा कर दो दिन तीव्राग्नि पर पकावें। तदनन्तर स्वांगशीतल होने पर गोलेको निकाल कर देखें, यदि स्वर्ण कच्चा हो तो उपरोक्त विधिसे २ पुट और लगा दें।

इस विधिसे स्वर्णकी निरुत्थ भस्म हो जाती है।

स्वर्ण भस्म शीतल, पवित्र तथा क्षय, वमन, कास, श्वास, प्रमेह, रक्तपित्त, क्षीणता, विष, घाव, रक्त प्रदर, कृषता, त्रिदोष, उन्माद, अपस्मार, शूल और ज्वरको नष्ट करने वाली है। इसमें मधुर तिक्त और कषाय रस होता है। यह वृष्य, लघु, सर (सारक—दोषोंको बाहर निकालने वाला), बृंहण एवं मेधा, अग्नि और कान्तिको बढ़ाने वाला है। नेत्रोंके लिये हितकारी है।×

(८३५०) स्वर्णमारण (४)

(भा. प्र. । प. खं. १ ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; शा. ध.)

काञ्चनाररसैर्घृष्टा समसूतकगन्धयोः ।
कज्जलीं हेमपत्राणि लेपयेत्समया तया ॥
काञ्चनारत्वचः कल्कैर्मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ।
धृत्वा तत्सम्पुटे गोलं मृन्मूषासम्पुटे च तत् ॥
विधाय सन्धिरोधं च कृत्वा संशोष्य गोलकम् ।
वह्निं खरतरं कुर्यादेवं दत्वा पुट त्रयम् ॥
निरुत्थं जायते भस्म सर्वकर्मसु योजयेत् ॥

समान भाग शुद्ध पारद और गंधककी कज्जली बना कर उसे कचनारकी छालके रसमें खरल करें और १ भाग स्वर्णपत्रों पर १ भाग इस कज्जली-का लेप कर दें। तत्पश्चात् कचनारकी छालको बारीक पीस कर उसकी दो मूषा बनावें और उनमें उपरोक्त स्वर्णपत्रोंको बन्द कर दें। इस मूषाको मिट्टीके शराव—सम्पुटमें बन्द करके उसके जोड़को अच्छी तरह बन्द कर दें और उस पर

×सर्वौषधिप्रयोगेण व्याधयो न गता यदा।
कर्मभिपञ्चभिश्चापि स्वर्णं तेषु योजयेत् ॥
जो व्याधियां पञ्चकर्म तथा अन्य समस्त औषधोंसे नहीं मिटतीं वे स्वर्णसे नष्ट हो जाती हैं।
(र. रा. सु.)

कपडमिट्टी करके मुस्वा लें। इसे तीव्राग्निमें पकावें। इस प्रकार ३ पुट देनेसे स्वर्णको निरुत्थ भस्म हो जाती है।

• (८३५१) स्वर्णमारणम् (५)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; आ. वे. प्र. । अ. ११)

काञ्चनारप्रकारेण लाङ्गली हन्ति काञ्चनम् ।
ज्वालामुखी तथा हन्याद्यथा हन्ति मनःशिला ॥

जिस प्रकार कचनारकी छालसे स्वर्ण भस्म बनाई जाती है (देखो प्र. सं. ८३५०) उसी प्रकार लांगली और ज्वालामुखीसे भी बनाई जाती है।

स्वर्ण, मनसिलके योगसे भी मर जाता है। (मनसिलको नीबूके रसमें घोट कर स्वर्ण पत्रोंपर लेप करें और शराव-सम्पुटमें बन्द करके लघु पुटमें फूंक दें।)

(८३५२) स्वर्णमारणम् (६)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; र. ग. सु. ; शा. ध.)

शिलासिन्दूरयोश्चूर्णं समयोरर्कदुग्धकैः ।
सप्तधा भावनां दद्याच्छोषयेच्च पुनः पुनः ॥
ततस्तु गलिते हेम्नि कल्कोऽयं दीयते समः ।
पुनर्धमेदतितरां यथा कल्को विलीयते ॥
एवं वेलात्रयं दद्यात्कल्कं हेममृतिर्भवेत् ।
सुवर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरु रसायनम् ॥
स्वादु तिक्तं च तुवरं पाके च स्वादु पिच्छिलम् ।
पवित्रं बृंहणं नेत्र्यं मेधास्मृतिमतिप्रदम् ॥
हृद्यमायुष्करं कान्तिवाग्विशुद्धिस्थिरत्वकृत् ।
विषद्वयक्षयोन्मादत्रिदोषज्वरशोषजित् ॥

शुद्ध मनसिल और सिन्दूर बराबर बराबर ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर आकके दूधकी ७ भावना दें। हरेक भावनाके पश्चात् अच्छी तरह सुखाते रहना चाहिये।

तदनन्तर १ भाग स्वर्णको गला कर उसमें १ भाग उपरोक्त मिश्रण डाल दें और तीव्राग्नि पर रख कर इतना धमावें कि वह मनसिल आदिका मिश्रण अदृश्य हो जाय। इसी प्रकार यह मिश्रण ३ बार मिला कर धमानेसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है।

स्वर्ण, शीतल, वृष्य, बलवर्द्धक, भारी, रसायन, पिच्छिल, पवित्र, बृंहण, नेत्रोंके लिये हितकारी, मेधा वर्द्धक, बुद्धि वर्द्धक, स्मृति वर्द्धक, हृदयके लिये हितकारी, आयु वर्द्धक, कान्तिकारक, वाणी शोधक, तथा स्थावर और जंगम विष नाशक एवं क्षय, उन्माद, त्रिदोष, ज्वर और शोषको नष्ट करने वाला है। उसमें मधुर, तिक्त और कषाय रस होता है। पाकमें स्वादु है।

(८३५३) स्वर्णमारणम् (७)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

लोहपर्पटिका बद्धं मृतं सूतं समांशकम् ।
विद्रुते हेम्नि निक्षिप्तं स्वर्णं भूतिसमं भवेत् ॥
तद्भस्म पूरतोयेन दरदेन समन्वितम् ।
मर्दयेद्दिनमेकं तु सम्पुटे धारयेत्ततः ॥
पुटितं दशवारेण स्वर्णं सिन्दूरसन्निभम् ।
जायते नात्र सन्देहो रञ्जनं कुरुते ध्रुवम् ॥
देहं लोहं च मतिमान् मुषली साधयेद्ध्रुवम् ॥

स्वर्णको पिघला कर उसमें उसके बराबर लोहपर्पटिकाबद्ध पारद भस्म डाल दें । इससे स्वर्ण भस्मके समान हो जायगा । तत्पश्चात् उसमें शिंगरफ (हिंगुल) मिला कर बिजौरेके रसमें १ दिन खरल करें और शरावसम्पुटमें बन्द करके (लघु) पुटमें फूंक दें । इसी प्रकार दस पुट देनेसे सिन्दूरके समान लाल भस्म हो जाती है ।

(८३५४) स्वर्णमारणम् (८)

(र. चं.)

स्वर्णार्धं पारदं दत्वा कुर्याद्यत्नेन पिष्टिकाम् ।
दत्वोर्ध्वाधो नागचूर्णं पुटनान्म्रियते ध्रुवम् ॥

२ भाग स्वर्णमें १ भाग पारद मिला कर अच्छी तरह खरल करें और उस पिष्टीको, ऊपर नीचे सीसेका चूर्ण बिछा कर, शरावसम्पुटमें बन्द करें तथा (लघु) पुटमें फूंक दें । इस प्रकार (कई) पुट देनेसे स्वर्ण मर जाता है ।

(८३५५) स्वर्णमारणम् (९)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु.)

माक्षिकं नागचूर्णञ्च पिष्टमर्करसेन च ।
हेमपत्रं पुटेनैव म्रियते क्षणमात्रतः ॥

स्वर्ण माक्षिक और सीसेका चूर्ण १-१ भाग ले कर दोनोंको आकके पत्तोंके रस (या अर्क दुग्ध) में खरल करें और फिर समान भाग स्वर्ण-पत्रों पर उसका लेप करके उन्हें शराव-सम्पुटमें बन्द करके पुट लगा दें । इस विधिसे शीघ्र ही स्वर्णकी भस्म हो जाती है ।

(८३५६) स्वर्णमारणम् (१०)

(यो. र.)

स्वर्णपत्रसमं नागभस्म निम्बुविलेपितम् ।
त्रिवारं वै गजपुटे सुवर्णं भस्मतां व्रजेत् ॥

स्वर्ण-पत्र और सीसेकी भस्म समान भाग ले कर सीसा भस्मको नीबूके रसमें खरल करके स्वर्ण-पत्रों पर लेप करें और उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । इस प्रकार ३ पुट देनेसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है ।

(८३५७) स्वर्णमारणम् (११)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; रसे. सा. सं.; र. चं.; बृ. यो. त. । त. ४१ ; शा. ध. ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; रसे. चि. म. । अ. ३६)

स्वर्णाच्च द्विगुणं सूतमम्लेन सह मर्दयेत् ।
तद्गोलकसमं गन्धं निदध्यादधरोत्तरम् ॥
गोलकं च ततो रुन्ध्याच्छरावदृढसम्पुटे ।
त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात्पुटान्येवं चतुर्दश ॥
निरुत्थं जायते भस्म गन्धो देयः पुनः पुनः ॥

१ भाग स्वर्ण-पत्र, २ भाग शुद्ध पारद× और ३ भाग शुद्ध गंधक ले कर प्रथम पारद और स्वर्णको पक्के खरलमें डाल कर थोड़ा थोड़ा नीबूका रस डालते हुवे खरल करें और जब दोनों अच्छी तरह मिल जाएं तो सबका एक गोला बना लें । तदनन्तर एक मिट्टीकी प्यालेमें आधा गंधकका चूर्ण बिछा कर उस पर उपरोक्त गोला रक्खें और उसके ऊपर शेष गंधकका चूर्ण डाल कर गोलेको उससे आच्छादित कर दें । तत्पश्चात् उस पर दूसरा प्याला ढक कर सन्धिको बन्द करके सम्पुट बनावें और उस पर ३-४ कपरमिट्टी दे कर सुखा लें । इस सम्पुटको ३० बनकण्डोंकी आगमें फूंकें । इसी प्रकार बार बार गंधक डालकर १४ पुट देनेसे सोनेकी निरुत्थ भस्म हो जाती है ।

×पाठान्तरके अनुसार पारद स्वर्णके बराबर.

(८३५८) **स्वर्णमारणम्** (१२)

(यो. र. ; शा. ध. ; र. रा. सु.)

पारावतमलैर्लिम्पेदथवा कुक्कुटोद्भवैः ।
हेमपत्राणि तेषां च प्रदद्यादन्तरान्तरम् ॥
गन्धचूर्णं समं धृत्वा शरावयुगसम्पुटे ।
प्रदद्यात्कुक्कुटपुटं पञ्चभिर्गोमयोपलैः ॥
एवं नवपुटं दद्याद्दशमं च महापुटम् ।
त्रिंशद्वनोपलैर्देयं जायते हेमभस्म तु ॥

स्वर्णपत्रों पर कबूतर अथवा मुरगेकी विष्टा का (पानीमें पीसकर) लेप कर दें और फिर उन्हें नीचे ऊपर समान भाग गंधक दे कर शराव सम्पुटमें बन्द करें और कुक्कुट पुटमें ५ बनकण्डों (अरने उपलों) में फूंक दें। इसी प्रकार गंधकके साथ ९ पुट दें और फिर दसवीं पुट ३० उपलों (कण्डों) की दें। इस विधिसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है।

(१ तोला सोनेके वर्कोंके लिये ५ कण्डे लेने चाहियें। स्वर्ण अधिक हो तो कण्डे भी अधिक लें।)

(८३५९) **स्वर्णमारणम्** (१३)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

हेम्नः पादं मृतं सूतं पिष्टमम्लेन केनचित् ।
पत्रे लिप्त्वा पुटैः पच्यादष्टभिर्म्रियते ध्रुवम् ॥
एतद्भस्म सुवर्णजं कटुघृतोपेतं द्विगुञ्जोन्मितम् ।
लीढं हन्ति नृणां क्षयाग्नि-
सदनं श्वासं च कासारुचिम् ।
ओजोधातुविवर्धनं बलकरं पाण्ड्वामयध्वंसनम् ।
पथ्यं सर्वविषापहं गरहरं दुष्टग्रहण्यादिनुत् ॥

४ भाग स्वर्ण-पत्रों पर १ भाग पारद भस्मको नीबूके रस आदिमें खरल करके लेप करें और शराव-सम्पुटमें बन्द करके पुट दें। इसी प्रकार (पारद भस्मके योगसे) ८ पुट देनेसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार त्रिकुटेके चूर्ण और घीके साथ सेवन करनेसे क्षय, अग्निमांद्य, श्वास, कास, अरुचि, पाण्डु, विषविकार, गरविष और ग्रहणी रोगादिका नाश तथा ओज और बलकी वृद्धि होती है।

(८३६०) **स्वर्णमारणम्** (१४)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

द्रुते विनिक्षिपेत्स्वर्णे लोहमानं मृतं रसम् ।
विचूर्ण्य लुङ्गतोयेन दरदेन समन्वितम् ॥
जायते कुङ्कुमच्छायं स्वर्णं द्वादशभिः पुटैः ॥

१ भाग स्वर्णको पिघलाकर उसमें १ भाग पारदभस्म मिलावें और फिर उसमें १ भाग शुद्ध हिंगुल मिलाकर नीबूके रसमें खरल करके शराव-सम्पुटमें बन्द करें और पुट लगा दें। इसी विधिसे १२ पुट देनेसे स्वर्णकी केसरके समान रंगवाली भस्म हो जाती है।

(८३६१) **स्वर्णमारणम्** (१५)

(रसे. चि. म. । अ. ६)

हेमपत्राणि सूक्ष्माणि जम्भाम्भो नागभस्मतः ।
लेपतः पुटयोगेन त्रिवारं भस्मतां नयेत् ॥
पुनः पुटेत् त्रिवारं तत् म्लेच्छतो नागहानये ॥

(१६ भाग) स्वर्ण पत्रों पर नीबूके रसमें घुटी हुई (१ भाग) सीसेकी भस्मका लेप करके

शराव-सम्पुटमें बन्द करके पुट दें। इसी प्रकार ३ पुट देनेसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है। इस भस्ममें (समान भाग) हिंगुल मिला कर (नीबूके रसमें घोट कर) पुनः पुट दें। इसी प्रकार हिंगुलके साथ ३ पुट देनेसे स्वर्णके साथ मिलाया हुवा सीसा नष्ट हो जाता है।

(८३६२) **स्वर्णमारणम्** (१६)

(रसे. चि. म. । अ. ६)

स्वर्णमावर्त्य तोलैकं माषैकं शुद्धनागकम् ।
क्षिप्त्वा चाम्लेन सञ्चूर्ण्य तत्तुल्यौ गन्धमाक्षिकौ ॥
अम्लेन मर्दयेद्यामं रुद्ध्वा लघुपुटे पचेत् ।
गन्धः पुनः पुनर्देयो म्रियते दशभिः पुटैः ॥

१ तोला स्वर्णको पिघलाकर उसमें १ माशा शुद्ध सीसेका चूर्ण डालकर नीबूके रसमें घोटें फिर उसमें १।-१। तोला शुद्ध गंधक और स्वर्ण माक्षिकका चूर्ण मिला कर पुनः नीबूके रसमें १ पहर घोटें और फिर उसका गोला बनाकर शराव-सम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें फूंक दें। इसी प्रकार हरबार १। तोला गंधकके साथ खरल करके १० पुट देनेसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है।

(८३६३) **स्वर्णमारणम्** (१७)

(र. रा. सु.)

सौवीरमञ्जनं पिष्ट्वा मार्कवस्वरसैः दिहेत् ।
जातरूपस्य पत्राणि शरावे सम्पुटे पुटेत् ॥
गजाख्येन पुटेनैव सुवर्णं याति भस्मताम् ॥

१ भाग काले सुरमेको भंगरेके रसमें खरल करके उसका १ भाग सोनेके पत्रों पर लेप कर दें और उन्हें शराव-सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। इस विधिसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है।

(८३६४) **स्वर्णमारणम्** (१८)

(र. रा. सु. ; र. चं.)

सूतस्य द्विगुणं गन्धमम्लेन कृतकज्जलिम् ।
द्वयो समीकृतं स्वर्णं सम्यगम्लेन मर्दयेत् ॥
शरावसम्पुटान्तस्थमध ऊर्द्ध्वं च सैन्धवम् ।
अष्टयामाद्भवेद्भस्म सर्वयोगेषु योजयेत् ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गंधककी कज्जली बनावें और उसे ३ भाग स्वर्णपत्रोंमें मिला कर नीबूके रसमें खरल करें तथा गोला बनाकर ऊपर नीचे सेंधानमकका चूर्ण बिछाकर शराव-सम्पुटमें बन्द करें। उसे ८ पहर तक पकानेसे सुवर्णकी भस्म हो जाती है।

(८३६५) **स्वर्णमारणम्** (१९)

(र. रा. सु.)

सुशुद्धं पारदं दत्वा कुर्याद्यत्नेन पिष्टिकाम् ।
दत्वोर्द्ध्वाधो नागचूर्णं पुटेन म्रियते ध्रुवम् ॥

शुद्ध पारद और सोनेके वर्क समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल करें। जब दोनों मिलकर पिट्ठी (पिष्टिका) हो जाय तो उसे, ऊपर नीचे सीसेका चूर्ण रख कर शरावसम्पुटमें बन्द करें और पुट लगा दें। इस विधिसे स्वर्ण अवश्य मर जाता है।

(८३६६) **स्वर्णमारणम्** (२०)

(र. र. स. । पू. अ. ५; र. प्र. सु. । अ. ४)

कृत्वाकण्टकवेध्यानि स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ।
लुङ्गाम्बुभस्मसूतेन म्रियते दशभिः पुटैः ॥

स्वर्णके कण्टकवेधी पत्र बना कर उन पर पारद-भस्मको नीबूके रसमें घोट कर लेप करें और शराव-सम्पुटमें बन्द करके पुट लगा दें । इसी प्रकार दस पुट देनेसे स्वर्णकी भस्म हो जाती है ।

(८३६७) **स्वर्णयोगः** (१)

(आ. वे. प्र. । अ. ११)

मेधाकामस्तु वचया श्रीकामः पद्मकेसरैः ।
शङ्खपुष्प्या वयोर्थी च विदार्या च प्रजार्थकः ॥

स्वर्णको बचके साथ सेवन करने से मेधा की; कमल-केसरके साथ सेवन करने से कान्ति की; शंखपुष्पी के साथ सेवन करने से आयु की, और विदारीकन्द के साथ सेवन करने से सन्तानकी वृद्धि होती है ।

(८३६८) **स्वर्णयोगः** (२)

(र. चं. । राजयक्ष्मा. ; वै. मृ.)

नवनीतसीतामधुप्रयुक्तो
वरखो हेमभवः क्षयं क्षिणोति ।
वितथः प्रभवेदयं प्रयोगो
यदि तन्मे शपथः सदाशिवस्य ॥

सोनेके वर्क, मक्खन, मिश्री और शहदमें मिलाकर सेवन करने से क्षय रोग अवश्य नष्ट हो जाता है । मैं शिवकी शपथ खाकर कहता हूं कि यह प्रयोग सत्य है ।

(८३६९) **स्वर्णयोगः** (३)

(सु. सं. । चि. स्था. अ. २८ ; आ. वे. प्र. । अ. ११)

मध्वामलकचूर्णानि सुवर्णमिति च त्रयम् ।
प्राश्यारिष्ट गृहीतोऽपि मुच्यते प्राणसंशयात् ॥

आमले का चूर्ण तथा स्वर्ण एकत्र मिला कर शहदके साथ सेवन करने से अरिष्ट लक्षणयुक्त व्यक्ति की आयु भी स्थिर हो जाती है ।

(८३७०) **स्वर्णयोगः** (४)

अपक्वं हेम सङ्घृष्टं शिलायां जलयोगतः ।
द्रवरूपं तु तत्पेयं मधुना गुणदायकम् ॥
यद्वा च वरखाख्यं तु स्वर्णपत्रं विचूर्णितम् ।
मधुना सङ्गृहीतं च सद्यो हन्ति विषादिकम् ॥

कच्चे स्वर्णको पानीके साथ पत्थर पर घिसकर शहद मिला कर पीने से अथवा सोनेके वरकोंको शहदमें घोट कर खाने से विषादि शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(८३७१) **स्वर्णयोगः** (५)

(यो. त. । त. ३८)

ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः
सशङ्खपुष्पः ससुवर्णचूर्णः ।
उन्मादिनामुन्मदमानसाना-
मपस्मृतौ भूतहतात्मनां हि ॥
नस्येऽञ्जने पानविधौ च शस्तो
ब्राह्मीरसोऽयं सवचादि चूर्णः ॥

ब्राह्मीके रसमें बच, कूठ, शंखपुष्पी और स्वर्णका चूर्ण मिला कर सेवन करने से उन्माद, चित्तभ्रम, अपस्मार और भूतबाधा का नाश होता है ।

इस प्रयोगको नस्य और अंजन द्वारा भी प्रयुक्त करना चाहिये ।

(८३७२) स्वर्णयोगः (६)

(सु. सं. । चि. अ. २८ ; ग. नि. । रसायना. १)

सुवर्णं पद्मबीजानि मधु लाजाः प्रियङ्गवः ।
गव्येन पयसा पीतमलक्ष्मीं प्रतिषेधयेत् ॥

स्वर्ण, कमलगट्टे की गिरी, धानकी खील और फूलप्रियङ्गु; इनके चूर्ण को शहदके साथ खाकर ऊपर से गायका दूध पीने से अलक्ष्मी का नाश होता है ।

(८३७३) स्वर्णयोगः (७)

(सु. सं. । चि. अ. २८)

शतावरीघृतं सम्यगुपयुक्तं दिने दिने ।
सक्षौद्रं ससुवर्णञ्च नरेन्द्रं स्थापयेद्वशे ॥

शतावरी के साथ पकाये हुवे घृत और शहद के साथ स्वर्ण सेवन करने से (शरीर इतना स्वस्थ सुन्दर और बलवान् हो जाता है कि) राजा भी वशमें हो जाते हैं ।

(८३७४) स्वर्णयोगः (८)

(सु. सं. । चि. स्था. अ. २८)

पद्मनीलोत्पलक्वाथे यष्टीमधुकसंयुते ।
सर्पिरासादितं गव्यं ससुवर्णं सदा पिबेत् ॥
पयश्चानुपिबेत्सिद्धं तेषामेव समुद्भवे ।
अलक्ष्मीघ्नं सदायुष्यं राज्याय सुभगाय च ॥
यत्र नोदीरितो मन्त्रो योगेषु तेषु साधने ।
शब्दिता तत्र सर्वत्र गायत्री त्रिपदी भवेत् ॥
पाप्मानं नाशयन्त्येता दद्युश्चौषधयः श्रियम् ।
कुर्युर्नागबलं चापि मनुष्यममरोपमम् ॥

कमल और नीलोत्पल के क्वाथ तथा मुलैठीके कल्कके साथ गोघृत सिद्ध करें । इस घृतके साथ स्वर्ण सेवन करने से अलक्ष्मी का नाश और आयुकी वृद्धि होती है तथा हाथी के समान महा बल प्राप्त होकर मनुष्य देवताके समान हो जाता है ।

अनुपान—कमल, नीलोत्पल और मुलैठीके साथ पकाया हुवा दूध ।

प्रयोग बनानेमें जहां मन्त्र न बतलाया गया हो वहां त्रिपदी गायत्री मन्त्रका जाप करके प्रयोग सिद्ध करना चाहिये ।

(८३७५) स्वर्णयोगः (९)

(वा. भ. । उ. अ. १)

हेमश्वेतवचाकुष्ठमर्कपुष्पी सकाञ्चना ।
हेममत्स्याक्षकः शङ्खः कैण्डर्यः कनकं वचा ॥
चत्वार एते पादोक्ताः प्राश्या मधुघृतप्लुताः ।
वर्षं लीढा वपुर्मेधाबलवर्णकराः शुभाः ॥

(१) सोने के वर्क, सफेद बच और कूठ (२) अर्कपुष्पी और सोनेके वर्क (३) सोनेके वर्क, मत्स्याक्षी (मछेछी) और शंख का चूर्ण (४) कैडर्य्य, सोनेके वर्क और बच, ये चारों प्रयोग बल, वर्ण, मेधा और शरीरकी वृद्धि करने वाले हैं। इन्हें घी और शहदमें मिला कर १ वर्ष तक सेवन करना चाहिये ।

स्वर्णराजवङ्गेश्वरः

प्र. सं. ५५२७ "मस्कमृगाङ्को रसः" देखिये ।

(८३७६) स्वर्णशोधनम् (१)

(आ. वे. प्र. । अ. ११ ; बृ. यो. त. । त. ४१ ; यो. र.)

स्वर्णमुत्तमं वह्नौ विद्रुतं निक्षिपेत्त्रिशः ।
काञ्चनाररसे शुद्धं काञ्चनं जायते भृशम् ॥

स्वर्णको आगपर पिघला पिघला कर ३ बार कचनार के रसमें बुझाने से वह शुद्ध हो जाता है ।

(८३७७) स्वर्णशोधनम् (२)

(आ. वे. प्र. । अ. ११)

वर्णमृत्तिकया लिप्त्वा मुनिशो ध्मापितं वसु ।
विशुध्यति वरं किञ्चिद्वर्णवृद्धिश्च जायते ॥

यया कुम्भकाराः भाण्डानि रञ्जयित्वा पाचयन्ति सा वर्णमृत्तिकेत्युच्यते, "कावीस" इति भाषा ।

जिस मिट्टी से कुम्हार बर्तन रंग कर पकाते हैं उसको (पानीमें पीस कर) स्वर्ण पत्तों पर लेप करें और उन्हें आगमें रख कर ध्मावें । इसी प्रकार ७ बार लेप करके ध्माने से स्वर्ण शुद्ध हो जाता है तथा उसका रंग भी कुछ उत्तम हो जाता है ।

(८३७८) स्वर्णशोधनम् (३)

(आ. वे. प्र. । अ. ११ ; र. चं.)

वल्मीकमृत्तिका धूमं गैरिकं चेष्टिका पटु ।
इत्येता मृत्तिकाः पञ्च जम्बीरैरारनालकैः ॥
पिष्ट्वा कण्टकवेध्यानि स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ।
पुटेत्पृथुहसन्त्यां तु निर्वाते विंशदुत्पलैः ॥
अधिकैर्वाऽधिके हेम्नि यावद्वर्णो विवर्धते ।
इत्येवं पुटनैर्युत्तया सम्यक् शुध्यति काञ्चनम् ॥

बल्मीक मृत्तिका (बांबीकी मिट्टी), घरका धुंवां, गेरु, ईंटका चूर्ण और सेंधा नमक समान भाग ले कर चूर्ण करें और उसे जम्बीरी नीबूके रस या कांजीमें पीस कर स्वर्णपत्रों पर लेप कर दें । तदनन्तर उन्हें शराव सम्पुट में बन्द करके एक बड़ी अंगीठीमें निर्वातस्थान में २० उपलोंकी आग दें । यदि स्वर्ण अधिक हो तो उपले भी अधिक लगाने चाहियें । जब तक स्वर्ण का रंग उत्तम न हो जाए तब तक अग्नि देनी चाहिये । इस प्रकार स्वर्ण भली भांति शुद्ध हो जाता है ।

(८३७९) स्वर्ण शोधनम् (४)

(भा. प्र. । पू. खं. १)

पत्तलीकृतपत्राणि हेम्नो वह्नौ प्रतापयेत् ।
निषिञ्चेत्तप्ततप्तानि तैले तक्रे च काञ्जिके ॥
गोमूत्रे च कुलत्थानां कषाये तु त्रिधा त्रिधा ।
एवं हेम्नः परेषाञ्च धातूनां शोधनं भवेत् ॥*

स्वर्णके पत्रोंको आगमें तपा तपा कर ३–३ बार तेल, तक्र, कांजी, गोमूत्र और कुलथीके क्वाथमें बुझाने से वह शुद्ध हो जाता है ।

अन्य धातु भी इसी प्रकार शुद्ध होती हैं ।*

---

* यद्यपि भाव प्रकाश ने स्वर्णकी शुद्धि भी अन्य धातुओं के अनुसार तैल तक्रादिमें लिखी है परन्तु आयुर्वेद प्रकाश कारका कथन है कि स्वर्णको तैल तक्रादि में शुद्ध करनेकी आवश्यकता नहीं है ।

इयमेव सुवर्णस्य शुद्धिर्नान्या हि विद्यते ।
तैले तक्रादिके या तु रूप्यादीनामुदाहृता ॥

(आ. वे. प्र. । अ. ११)

(८३८०) स्वर्णसिन्दूरम्

(भै. र. । वाजीकरणा.)

पलं रसेन्द्रस्य च गन्धकस्य
हेम्नोऽपि कर्षं परिगृह्य सम्यक् ।
वटप्ररोहस्य रसेन यामं
यामं विमर्द्याथ कुमारिकायाः ॥
तत्काचकूप्यां निहितं प्रयत्नात्
पचेद् विधिज्ञः सिकताख्य यन्त्रे ।
ततो रजश्चोर्द्ध्वगतं सुरम्यं
प्रगृह्य यत्नादरुणप्रभं यत् ॥
तद्योजयेत्सर्वगदेषु वीक्ष्य
धातुं बलं वह्निमथो वयश्च ।
रसायनं वृष्यतरञ्च बल्यं
मेधाग्निकान्तिस्मरवर्द्धनञ्च ॥

शुद्ध पारद ५ तो., शुद्ध गन्धक ५ तो और सोनेके वर्क १। तो. ले कर प्रथम स्वर्ण और पारेको एकत्र मिला कर खरल करें । जब दोनों अच्छी तरह मिल जाएं तो गन्धक मिला कर खरल करें और कज्जली हो जाने पर उसे १-१ पहर वटांकुरोंके रस और घृतकुमारीके रसमें खरल करें तथा सुखाकर आतशी शीशीमें डालकर बालुका-यन्त्रमें (१२ पहर) पकावें । तदनन्तर यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर शीशीके गले में लगे हुवे रसको शीशी तोड़ कर निकाल लें (शीशी की तलीमें स्वर्णभस्म मिलेगी उसे पृथक् रक्खें)

इसके सेवनसे समस्त रोगोंका नाश और धातु, बल, अग्नि, आयु, मेधा, कान्ति और काम शक्ति की वृद्धि होती है । यह अत्यन्त रसायन और वृष्य है ।

(८३८१) स्वर्णादिगुटिका

(र. का. धे. । नेत्ररोगा.)

स्वर्ण रूप्यार्कमुक्तार्को वार्धिफेनवराभृताः ।
श्रक्कव्योष निशातुत्थयवालं मधुयष्टिका ॥
सर्वं च क्लीतकाम्भोभिः सुपिष्टं वटिका हरेत् ।
अशेषनयनातङ्कास्तदुपद्रवदुस्तरान् ॥

स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, ताम्र भस्म, मोती भस्म, ताम्रभस्म (अथवा आककी जड़की छाल), समुद्रफेन, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, शंखभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हल्दी, तुत्थ भस्म, प्रवाल भस्म और मुलैठी; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर मुलैठीके क्वाथमें खरल करें और (२-२ रत्तीकी) गोलियां बनाकर सुखा लें ।

इनके सेवनसे उपद्रवयुक्त समस्त नेत्ररोग नष्ट होते हैं ।

स्वल्पकस्तूरी भैरवो रसः

(भै. र. ; र. रा. सु. ; धन्व. । ज्वरा.)

प्र. सं. ९७१ "कस्तूरी भैरवो रसः" देखिये ।

स्वल्प ग्रहणीकपाटो रसः

प्र. सं. १६०२ "ग्रहणी कपाटो रसः" देखिये

(८३८२) स्वल्पचन्द्रोदयमकरध्वजः

(भै. र. । वाजीकरणा.)

जातीफलं लवङ्गं च कर्पूरं मरिचं तथा ।
प्रत्येकं तोलकं दत्त्वा सुवर्णस्य च माषकम् ॥
अण्डजं माषमानञ्च सर्वतुल्यमथेश्वरम् ।
यत्नतो मर्दयेत् खल्ले द्विगुञ्जां तु वटीं चरेत् ॥
एष चन्द्रोदयो नाम रसो वाजीकरः परः ।
हन्ति रोगानशेषांश्च बलवीर्याग्निवर्द्धनः ॥

जायफल, लौंग, कपूर और काली मिर्चका चूर्ण १-१ तोला, (५-५ माशे) तथा स्वर्णभस्म और कस्तूरी १।-१। माशा एवं रससिन्दूर सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिलाकर (पानके रसमें) खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

यह रस अत्यन्त वाजीकरण; बल, वीर्य और अग्निवर्द्धक तथा समस्त रोग नाशक है।

स्वल्पद्रावकरसः

(भै. र.)

"महाद्रावकरस" देखिये

स्वल्पमृगाङ्करसः

(र. चं.; रसे. सा. सं.; धन्व.; र. रा. सु.। राजय.)

प्र. सं. ५६३९ "मृगांकरसः" (७) देखिये।

स्वल्पवडवानलरसः

(रसे. सा. सं.। ज्वरा.)

प्र. सं. ६९५६ "वडवानलरसः (स्वल्प) (११)" देखिये।

इति सकारादिरसप्रकरणम्

अथ सकारादिमिश्रप्रकरणम्

(८३८३) सक्तुयोगः

(वै. म. र.। पट. २)

पक्वेन दाडिमफलस्वरसेन वाऽपि
सक्तून् पिबेत् प्रबलपित्तभवज्वरार्तः।
तद्वत् षडङ्गसृतमम्बु पिबेत् सिताढ्यं
तृड्दाहज्वरविशमनाय च दीपनाय॥

तीव्र पित्तज ज्वर में दाह, तृषा और ज्वरका वेग कम करनेके लिये पके हुवे अनारके रसमें (जौका) सत्तू मिला कर पीना चाहिये अथवा षडंग क्वाथ (नागरमोथा, पित्त पापड़ा, खस, लाल चन्दन, सुगन्धबाला, सोंठ-इनका समान भाग मिश्रित मोटा चूर्ण १। तोला ले कर १ सेर पानीमें पकाकर आधासेर रहे हुवे क्वाथ) में मिश्री मिलाकर पीना चाहिये। ये दोनों प्रयोग अग्निको भी दीप्त करते हैं।

(८३८४) सङ्कोचनयोगाः

(धन्व.। वाजीकरणा.)

मोचरससूक्ष्मचूर्णं क्षिप्तं योनौ स्थितं प्रहरम्।
शतवारं सूताया अपि योनिः सूक्ष्मरन्ध्रा स्यात्॥
बब्बूलकुसुमं लोध्रं दाडिमीमूलवल्कलम्।
चूर्णीकृत्य क्षिपेद्योनौ योनिसङ्कोचनं परम्॥
माजूफलं च त्रिफला खदिरोन्मत्तनी तथा।
पटपूतं च सौराष्ट्री पूगं चैव समं समम्॥
जलेन गुटिकां कृत्वा योनौ स्थाप्या घटी द्वयम्॥

(१) मोचरसके बारीक चूर्णको योनिमें छिड़कनेसे १ पहरमें ही सौ बारकी प्रसूता स्त्रीकी योनि भी सूक्ष्मछिद्र वाली हो जाती है।

(२) बबूलके फूल, लोध, और अनारकी जड़की छाल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। इसे (पोट-

लीमें बांधकर) योनिमें रखनेसे वह संकुचित हो जाती है।

(३) माजूफल, त्रिफला, कत्था, धायके फूल, फिटकरी और सुपारी समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे पानीमें घोट कर बड़ी बड़ी गोलियां बना लें।

इनमें से १ गोली २ घड़ी तक योनिमें रखनेसे योनि संकुचित हो जाती है।

(८३८५) समङ्गादियवागूः

(व. से. । बालरोगा.)

समङ्गाशाल्मलीवेष्टं धातकीपद्मकेसरैः ।
पिष्टैरेतैर्यवागूः स्यादतीसारविनाशिनी ॥

लज्जालुमूल, सेंमलकी छाल, धायके फूल और कमलकेसर समान भाग ले कर पीसकर इनसे यवागू सिद्ध करें।

यह यवागू अतिसारको नष्ट करती है।

(८३८६) सर्जकाद्यो योगः

(व. से. । बालरो.)

अभ्यज्य तिलतैलेन सर्जचूर्णावचूर्णिताम् ।
विच्छिन्नन्नश्येत्स्थिरैरण्डबीजाभ्याश्च प्रलेपनात् ॥

बालकके विच्छिन्न नामक रोग (व्रण विशेष) में तिलका तेल मल कर ऊपरसे रालका चूर्ण छिड़क देने से लाभ होता है अथवा शालपर्णी और अरण्डके बीजोंको पीस कर लेप करने से भी विच्छिन्न रोग नष्ट हो जाता है।

(८३८७) सर्जरसयोगः

(व. से. । विषा.)

सर्जरसेन सेको संदंशेनापि कण्टकोद्धरणम् ।
वरटीदंष्ट्रविषस्य प्रशमनमेतद् द्वयं दृष्टम् ॥

वर्र (ततैन) के दंशसे उसका डंक निकालकर वहां शालवृक्षका रस (या तारपीनका तेल) लगा देना चाहिये।

(८३८८) सर्पकञ्चुकी योगः

(रा. मा. । स्त्रीरोगा. ३०)

पुटदग्धभुजगकञ्चुककज्जलमधुपूरिते क्षणद्वन्द्वात् ।
सद्यो भवति विशल्या विमूढगर्भाऽपि गर्भवती ॥

सांपकी कांचलीको सम्पुटमें बन्द करके भस्म करें और फिर बारीक पीसकर शहदमें मिला लें।

इसे योनिमें भरनेसे मूढगर्भ भी तुरन्त बाहर आ जाता है।

(८३८९) सर्वगन्धम्

(भै. र.)

चातुर्जातककर्पूरकक्कोलागुरुशिह्लकम् ।
लवङ्गसहितश्चैव सर्वगन्धं विनिर्दिशेत् ॥

दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, कपूर, कंकोल, अगर, शिल्हक (शिलारस) और लवङ्ग--इनको सर्वगन्ध कहते हैं।

(८३९०) सहदेवीमूलबन्धनम्

(रा. मा. । नेत्ररोगा. ३ ; ग. नि. । नेत्ररो. ३)

कर्णे निबद्धं नयनामयघ्नं
दण्डोत्पलायाः प्रवदन्ति मूलम् ।
क्षौद्रान्वितः शिग्रुदलोद्भवो वा
रसोऽक्ष्णि दत्तोऽक्षि रुजापहः स्यात् ॥

सहदेवीकी जड़को कानमें बांधने से अथवा सहंजनेके पत्तोंके रसमें शहद मिला कर आंखमें लगानेसे नेत्रपीड़ा शान्त हो जाती है।

(८३९१) **सहदेवीमूलयोगः**

(व. से. । ज्वरा.)

सहदेवाया मूलं विधिना कण्ठनिबद्धमपहरति ।
एकद्वित्रिचतुर्भिर्दिवसैर्भूतज्वरं पुंसाम् ॥

सहदेवीकी जड़को विधिपूर्वक कण्ठमें बांधनेसे १,२,३ या ४ दिनमें भूतज्वर नष्ट हो जाता है ।

(८३९२) **सहदेवीमूलिकाबन्धनम्**

(वृ. मा. । ज्वरा.)

नखेनोत्पाटिताः सहदेवीमूला कर्णबन्धनात् ।
ज्वरं चातुर्थिकं हन्ति भानुवारे न संशयः ॥

रविवारके दिन सहदेवीकी जड़ नाखूनसे निकालकर कानमें बांधनेसे चातुर्थिक ज्वर अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(८३९३) **सामुद्रादिवर्तिः**

(वृ. यो. त. । त. ९८ ; व. से. । गुल्मा. ; यो. र. । गुल्मा.)

वातवर्चो निरोधेषु सामुद्रार्द्रकसर्षपैः ।
कृत्वा पायौ विधातव्या वर्तयो मरिचान्वितैः ॥

यदि मल और अपान वायु रुक गया हो तो समुद्र लवण, अदरक, सरसों और काली मिर्च समान भाग ले कर चूर्ण बना कर (उसे पानीमें पकाकर कपड़ेकी पट्टी पर लेप करके) बत्तियां बनावें और १-१ बत्ती मलमार्गमें रक्खें ।

(८३९४) **सिद्धशाल्मलीकल्पः**

(भै. र. । वाजीकरणा.)

भूकूष्माण्डं तालमूलीं धात्री चैव पुनर्नवा ।
समभागं समाहृत्य भागार्द्धं गन्धकं तथा ॥
तदर्द्धं पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत् ।
श्वेतशाल्मली तोयेन सप्तधा भावयेत्पुनः ॥
माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भावयेत् पुनः ।
शुष्कं तच्चूर्णयेद् यत्नाल्लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
अनेनाशीति वर्षोऽपि शतधा रमते स्त्रियाः ।
ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत् कामदेव इव स्वयम् ॥
ज्वरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।
माषमेकन्तु कर्तव्यं, दुग्धमात्रानुपानकम् ॥

विदारीकन्द, तालमूली (मूसली), आमला, और पुनर्नवाकी जड़ २-२ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग और शुद्ध पारद आधा भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको सफेद सेंभलकी जड़के रसकी सात भावना दें और फिर भैंसके दूधमें खरल करके सुखा लें ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे ८० वर्षका वृद्ध पुरुष भी १०० स्त्रियोंसे रमण करनेमें समर्थ हो जाता है ।

इसे सेवन करने वाले का लिङ्ग कभी शिथिल नहीं होता और वह ज्वरादि रोगोंसे मुक्त होकर संसार सुखका उपभोग करता है ।

इसे १ मास तक सेवन करना चाहिये ।

अनुपान—दूध ।

(**मात्रा—१** माशा ।)

(८३९५) **सिद्धार्थोद्वर्तनम्**

(यो. र. ; ग. नि. । शीतपित्ता. २ ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; वृ. नि. र. शीतपित्ता. ; वृ. यो. त. । त. १२१)

सिद्धार्थरजनीकुष्ठप्रपुन्नाटतिलैः सह ।

कटुतैलेन सम्मिश्रमेतदुद्वर्तनं हितम् ॥
शीतपित्ते उदर्दे च तथा कोठाभिधे गदे ॥

सफेद सरसों, हल्दी, कूठ, पंवाड़के बीज और तिल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। इसे सरसोंके तेलमें मिलाकर मलनेसे शीत पित्त, उदर्द और कोठका नाश होता है।

(८३९६) सिंहिकादिपेया

(व. से. । ज्वरा. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सिंही व्याघ्र्यमृता द्राक्षा अजाजी सकटुत्रिकम् ।
भृङ्गी-विडङ्गश्च समं पक्त्वा विस्राव्य साधयेत् ॥
घृताक्तैस्तण्डुलैर्भृष्टैः पेयामुष्णां ज्वरी पिबेत् ।
हिक्काश्वासी च कासी च तथाभिन्यासपीडितः ॥
विबद्धवातविण्मूत्रः पानमेतत्प्रयोजयेत् ॥

बासा (अडूसा), कटेली, गिलोय, मुनक्का, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, काकड़ासिंगी और बायबिडंग, समान भाग लेकर अधकुटा करलें। इसमें से १। तोला चूर्ण १ सेर पानीमें पकाकर आध सेर पानी रहने पर छान लें। इस पानीमें घी लगाकर भूने हुवे चावल पकाकर पेया बनावें।

यह पेया ज्वर, हिक्का, श्वास, कास, अभिन्यास-ज्वर, वायुका अवरोध, मूत्रावरोध और मलावरोध में गुणकारी है। इसे गरम गरम ही पीना चाहिये।

(८३९७) सीसकादियोगः

(र. र. रसा. ख. । उपदे. ५)

वासापलाशचिञ्चोत्थैर्दण्डैर्वाऽश्वत्थजैर्दृढम् ।
नागं पात्रगतं चाल्यं यावद्भवति मूर्च्छितम् ॥
पलैकं तत्समादाय लोहचूर्णं पलद्वयम् ।
त्रिपलं त्रिफलाचूर्णं दाडिमस्य फलत्वचः ॥
शुष्कं चूर्णं पलैकं तत्सर्वेषां काञ्जिकं समम् ।
भाण्डे सर्वं पचेत्किंचित्तं क्षिपेल्लोहभाजने ॥
भृङ्गराजकुरण्टोत्थद्रवं दत्त्वाऽऽतपे क्षिपेत् ।
त्रिसप्ताहं प्रयत्नेन द्रवो देयः पुनः पुनः ॥
ततस्तं रक्षयेत्तेन लेपात्स्यात्केशरञ्जनम् ।
उक्तानुक्तेषु लेपेषु वेष्टयमेरण्डपत्रकैः ॥
शिरो रात्रौ दिवा स्नानं युक्तिरेषा प्रशस्यते ॥

सीसेको पात्रमें डालकर बासा (अडूसा), पलाश, इमली और अश्वत्थ-इनमेंसे किसी वृक्षके डंडेसे रगड़ते रहें। जब सीसा मूर्च्छित (चूर्ण रूप) हो जाय तो ५ तोले यह चूर्ण, १० तोले लोह चूर्ण, १५ तोले त्रिफला चूर्ण, और ५ तोले अनारके फलका शुष्क छिलका लेकर बारीक चूर्ण बनावें और उसमें सबके बराबर कांजी मिलाकर थोड़ी देर आग पर पकावें एवं उसे लोहपात्रमें डालकर उसमें भंगरे और कुरण्ट (पियाबांसे) का रस भर कर धूप में रख दें। जब रस सूख जाय तो पुनः डाल दें; इसी प्रकार बार बार रस डालते हुवे २१ दिन धूपमें रक्खें।

रातको बालों पर इसका लेप करके अरण्डका पत्ता बांध दें और प्रातःकाल खोलकर धो डालें। इससे केश काले हो जाते हैं।

(८३९८) सीसकादियोगः

(र. र. रसा. खं. । उप. ५)

नागचूर्णं पलैकं तु शङ्खचूर्णं पलद्वयम् ।
पथ्याचूर्णं निष्कमेकं सर्वं पेष्यं दिनावधि ॥

अम्लदध्ना युतं यत्नात्स्नात्वाऽऽदौ शिरसि क्षिपेद्
मर्दयेद्धटिकार्धं तु वेष्टयमेरण्डपत्रकैः ॥
शिरः संवेष्ट्य वस्त्रेण प्रातः स्नानं समाचरेत् ।
इत्येवं त्रिदिनं यत्नात्कृत्वा केशांश्च रञ्जयेत् ॥

सीसेका चूर्ण ५ तोले, शंख चूर्ण १० तोले और हर्रका चूर्ण ३॥। माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर १ दिन खट्टी दहीके साथ मर्दन करें। तदनन्तर स्नान करके (बालोंको अच्छी तरह साफ करके) यह लेप लगावें और आधी घड़ी तक मालिश करनेके बाद अरण्डका पत्ता बांध दें। दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान कर लें। इसी प्रकार ३ दिन करनेसे बाल काले हो जाते हैं।

(८३९९) सूत्रवर्ति योगः

(यो. त. । त. ६०)

आरग्वधनिशा कालाचूर्णाज्यक्षौद्रसंयुता ।
सूत्रवर्तिर्व्रणे योज्या शोधिनी गतिनाशिनी ॥

अमलतासकी छाल, हल्दी और मजीठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसमें शहद तथा घी मिलाकर उसे सूतकी बत्ती पर लपेट लें। यह बत्ति व्रणमें रखनेसे व्रण शुद्ध हो जाता है और आगे नहीं बढ़ता।

(८४००) सूरणवर्तिः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

सूरणकन्दकवर्तिर्विधेया
चाम्लरसेन घृतेन च लिप्त्वा ।
रोगगुदे गुदकीलकमाशु
नाशयते गुदजांश्च क्रिमींश्च ॥

सूरणकन्द (जिमीकन्द) को चाकूसे छीलकर चिकनी बत्ती बनावें। इसे नीबूके रसमें भिगोकर फिर घीमें भिगोकर गुदामें रखनेसे अर्शके मस्से और गुदाके कृमि नष्ट हो जाते हैं।

(८४०१) सैन्धवादियोगः

(वृ. नि. र. । बालरोगा.)

बालो यश्चिरजातः स्तन्यं
गृह्णाति नोदितस्तस्य ।
सैन्धवधात्रीमधुघृतपथ्या-
कल्केन घर्षयेज्जिह्वाम् ॥

यदि नवजात शिशु उत्पन्न होनेके पश्चात् यथेष्ट समय बीत जाने पर भी दूध न पिये तो सेंधा नमक, आमला, और हर्रके समान भाग मिलित चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर उसकी जिह्वापर मलना चाहिये।

(८४०२) सैन्धवाद्याश्च्योतनम् (१)

(ग. नि. । नेत्र. ३)

सिन्धूत्थरोध्रसितजीरकतिन्तिडीक-
पत्रं नवं दृषदि चूर्णितमम्बरस्थम् ।
आश्चोतनं नयनयोरसकृत्प्रयुक्त-
मेतद्धि रुक्श्वयथुरोगविकारहारि ॥

सेंधा नमक, लोध, सफेदजीरा और इमलीके नवीन पत्र (कोंपल) समान भाग ले कर पत्थर पर (पानीके साथ) पीसकर कपड़ेमें बांधें। इस पोटलीको बार बार आंखमें निचोड़ने से आंखोंकी पीड़ा और सूजनका नाश होता है।

(८४०३) **सैन्धवाद्याश्च्योतनम्** (२)

(ग. नि. । नेत्ररो. ३ ; वृ. मा. । नेत्र.)

ससैन्धवं रोध्रमथाज्यभृष्टं
सौवीरपिष्टं सितवस्त्रबद्धम् ।
ह्याश्चोतनं तन्नयनस्य कुर्या-
त्कण्डूं च दाहं च रुजं च हन्यात् ॥

सेंधा नमक और घी में भुना हुवा लोध समान भाग ले कर दोनोंको सौवीरक कांजीमें पीस कर सफेद कपड़ेमें बांधकर आंखमें निचोड़ने से आंखकी खाज, दाह और पीड़ाका नाश होता है।

(८४०४) **सोमलचूर्णयोगः**

(र. का. धे. । अर्शो.)

सोमक्षारस्य चूर्णं वै कार्पासान्तरसंस्थितम् ।
धारयेद्गुदतो दूरे त्रिदिनं तच्च भेषजम् ॥
पक्वानि स्फाटयित्वाशु तथापक्वानि नाशयेत् ।
न पीडा जायते तत्र न व्यथाऽपि भवेद्गुदे ॥
न रोहन्ते पुनर्देहे गुदपार्श्ववलित्रये ॥

संखियेके चूर्णको रुईमें लपेटकर गुदा पर बांध दें । रुई इस प्रकार लगानी चाहिये कि संखियेका चूर्ण गुदाको स्पर्श न करे । इस रुईको ३ दिन तक बंधा रहने दें ।

इस विधिसे अर्शके पक्के मस्से फट जाते हैं और अपक्व नष्ट हो जाते हैं । इस प्रयोगसे तनिक भी कष्ट नहीं होता और गुदाकी तीनों वलियों के मस्से नष्ट हो जाते हैं तथा फिर नहीं उभरते ।

(८४०५) **सौवर्चलादियोगः**

(यो. र. । उदावर्ता.)

सौवर्चलाढ्यां मदिरां मूत्रे त्वभिहते पिबेत् ।
एलां वाऽप्यथ मस्त्वन्नं क्षीरं वाऽथ वराम्बु वा ॥

मूत्र रोकनेसे उत्पन्न हुवे उदावर्त में शराबमें काला नमक मिलाकर पिलाना या इलायचीका चूर्ण (गुड़के साथ) खिलाना या दहीके पानीके साथ भात देना अथवा दूध या त्रिफलाका क्वाथ पिलाना चाहिये ।

(८४०६) **स्नुक्क्षारयोगः**

(वै. म. र. । पटल ११)

क्षारो महावृक्षज आशु हन्या-
देरण्डतैलेन सहानुलिप्तः ।
कण्डूतिमन्तं किटिभं पुराणं
सर्पं कठोरो गरुडो यथैव ॥

स्नुही (सेंड-थूहर) के क्षारको अरण्डीके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे खुजलीयुक्त पुराना किटिभ रोग अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है ।

(८४०७) **स्नुक्क्षीरयोगः**

(रा. मा. । स्त्रीरोगा.)

न्यस्तेन मूर्धनि सुधापयसाऽल्पकेन
स्त्रीणामुपैति सहसैव हि गर्भशल्यम् ।

स्त्रीके शिर पर ज़रासा थूहर (सेंड-स्नुही) का दूध लगानेसे मूढ गर्भ तुरन्त निकल आता है ।

(८४०८) **स्नुक्क्षीरशोधनम्**

(रसे. सा. सं.)

चिञ्चापत्ररसे कर्षं वस्त्रपूते पलद्वयम् ।
स्नुहीक्षीरं रौद्रयन्त्रे भावयेद्यत्नतः सुधीः ॥
द्रवे शुष्के समुत्तार्य सर्वयोगेषु योजयेत् ॥

१० तोले स्नुही (सेहुंड-सेंड) के दूधमें १। तोला इमलीके पत्तोंका कपड़ेसे छना हुवा रस मिला कर मिट्टीके पात्रमें भरकर धूपमें रख दें । जब दूध शुष्क हो जाए तो सुरक्षित रक्खें ।

(८४०९) स्नुक्पत्रयोगः

(वै. म. र. । पटल ६)

स्विन्नं निष्पीडितं स्नुह्याः पत्रं पायौ निधापयेत्।
दुर्नामकृमिकण्डूतिशोफरुक्शान्तिकृत् परम् ॥

स्नुही (सेंड–थूहर) के पत्तोंको आग पर सेककर मलकर गुदा पर बांधनेसे अर्श, कृमि, खाज, शोथ और पीडाका नाश होता है।

(८४१०) स्नुक्पत्रयोगः

(वै. म. र. । पट. १६)

द्रुतजातमपि सुकठिनं नाश-
यति व्रणं चिरन्तनं चापि।
स्विन्नं विमृज्य लिप्तं
स्नुक्पत्रं पञ्चषैर्दिवसैः ॥

नवीन अथवा पुराने कठिन व्रण पर स्नुही (सेंड) के पत्तेको उबालकर पीस कर लेप करनेसे वह ५–६ दिनमें नष्ट हो जाता है।

(८४११) स्नुहीक्षीराद्या वर्तिः

(ग. नि. । भगन्दरा. ; व. से. । नाडीव्रणरो. ; वृ. मा. । भगन्दरा. ; भा. प्र. । मं. खं. २ नाडीव्रणा.)

स्नुह्यर्कदुग्धदार्वीभिर्वर्तिं कृत्वा विचक्षणः।
भगन्दरगतिं ज्ञात्वा पूरयेत्तां प्रयत्नतः ॥
एषा सर्वशरीरस्थां नाडीं हन्यादसंशयम् ॥

दारुहल्दीका चूर्ण, स्नुही (सेंड–थूहर)का दूध और आकका दूध समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर (कपड़ेपर लगाकर) बत्ती बनावें। इसे भगन्दरमें सूराखकी ओरको लगावें। इससे समस्त शरीरगत नाड़ीव्रण भी नष्ट हो जाता है।

(८४१२) स्नुहीस्वेदः

(व. से. । श्लीपदा.)

स्नुहीगण्डीरिकास्वेदो नाशयेदर्बुदानि च।
लवणेनाऽथवा स्वेदः सीसकेन तथैव च ॥

स्नुही (सेंड–थूहर) के टुकड़ोंसे स्वेदित करनेसे अथवा सैंधा नमकसे स्वेदित करनेसे या सीसेसे स्वेदित करनेसे अर्बुद (रसौली)का नाश हो जाता है।

(सेंडके टुकड़ोंको पानीमें उबालकर उस पानीकी भाप देनी चाहिये या उन्हें भापकी सहायतासे बार बार गरम करके रसौली पर रखना या बांधना चाहिये। सेंधानमक और सीसेके टुकड़े को सहने योग्य गरम करके कपड़ेमें लपेटकर रसौली पर रखना चाहिये।

(८४१३) स्वगुप्ताद्यो योगः

(वृ. यो. त. । त. १०१; वृ. मा. । मूत्राघाता.; ग. नि. । मूत्राघाता. २८; यो. र. । मूत्राघाता.)

स्वगुप्ताफलमृद्वीकाकृष्णेक्षुरसितारजः।
समानमर्धभागानि क्षीरक्षौद्रघृतानि च ॥
सर्वं सम्यग्विमथ्याक्षमात्रं लीढ्वा पयः पिबेत्।
हन्ति शुक्रक्षयोत्थांश्च दोषान्वन्ध्यासुतप्रदम् ॥

कौंचके बीज, मुनक्का, काली ईखका रस और मिश्री समान भाग लेकर सबको एकत्र पीस लें। इसमें इससे आधा दूध, शहद और घीका मिश्रण

(समान भाग मिलित) मिलाकर अच्छी तरह मथें। इसमेंसे १। तोला खाकर दूध पीनेसे शुक्र-क्षय सम्बन्धी समस्त विकार नष्ट होते तथा बन्ध्या को पुत्र प्राप्त होता है।

(८४१४) स्वर्जिकादियोगः

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

स्वर्जिकाचूर्णसंयुक्तं बीजपूररसं क्षिपेत्।
कर्णस्रावरुजादाहाः प्रणश्यन्ति न संशयः ॥

बिजौरेके रसमें सज्जीका चूर्ण मिलाकर कानमें डालनेसे कर्णस्राव, कर्णपीडा और दाहका नाश होता है।

इति सकारादिमिश्रप्रकरणम्

ह

अथ हकारादिकषायप्रकरणम्

(८४१५) **हरिद्रादिकषायः** (१)

(ग. नि. । अर्शो. ४)

पलानि पञ्च कुर्वीत रजन्यास्तु प्रमाणतः ।
कौटजस्याथ वल्कस्य द्विपलं सूक्ष्मकुट्टितम् ॥
द्व्याढके वारिणः साध्यमष्टभागावशेषितम् ।
तत्कषायं पिबेद्युक्त्या शीतं माक्षिकसंयुतम् ॥
एतेन पित्तजातानि रक्तजान्यपि सर्वशः ।
रक्तातिसारश्च तथा रक्तपित्तं च शाम्यति ॥

हल्दी २५ तोले और कुड़ेकी छाल १० तोले लेकर बारीक कूट लें और १६ सेर पानीमें पकावें जब २ सेर रह जाय तो छानकर ठंडा कर लें।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तज और रक्तज अर्शका नाश होता है । यह क्वाथ रक्तातिसार और रक्तपित्तको भी नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—प्रातः, दोपहर और सायं १०—१० तोले । मधु १। तोला ।)

(८४१६) **हरिद्रादिकषायः** (२)

(ग. नि. । ज्वर. १)

हरिद्रा भद्रमुस्तं च त्रिफला कटुरोहिणी ।
पिचुमन्दः पटोली च देवदारु निदिग्धिका ॥
एषां कषायः पीतस्तु सन्निपातज्वरं जयेत् ।
अग्निपक्ति प्रसेकं च शोषं कासमरोचकम् ॥

हल्दी, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, नीमकी छाल, पटोल, देवदारु और कटेली समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ सन्निपात ज्वर, अग्निमांद्य, मुख प्रसेक (थूक अधिक आना), शोष, खांसी और अरुचिको नष्ट करता है ।

(८४१७) **हरिद्रादिकषायः** (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१; ग. नि. । प्रमेहा. ३०)

हरिद्राद्वितयं शुण्ठी विडङ्गानि हरीतकी ।
कफप्रमेहे विहितः क्वाथोऽयं मधुना सह ॥

हल्दी, दारुहल्दी, सोंठ, बायबिडंग और हर्र समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे कफज प्रमेहका नाश होता है ।

(८४१८) **हरिद्रादिकषायः** (४)

(ग. नि. । कुष्ठ. ३६)

निशोत्तमानिम्बपटोलमूल
तिक्तावचालोहितयष्टिकाभिः ।
कृतः कषायः कफपित्तकुष्ठं
सुसेवितो धर्म इवोच्छिनत्ति ॥

हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, पटोलकी जड़, कुटकी, बच और मजीठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कफपित्तज कुष्ठको नष्ट करता है।

(८४१९) हरिद्रादिकषायः (५)

(भै. र. । बालरोगा.; वृ. मा.; व. से.; च. द. । बालरोगा. ६३; यो. त. । त. ७७)

हरिद्राद्वययष्ट्याह्वसिंहीशक्रयवैः कृतः।
शिशोर्ज्वरातिसारघ्नः कषायः स्तन्यदोषनुत्[1]

हल्दी, दारुहल्दी, मुलैठी, कटेली और इन्द्रजौ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ बालकोंके ज्वरातिसार और स्तन्य-दोषको नष्ट करता है।

(८४२०) हरिद्रादिक्वाथः

(ग. नि. । ज्वरा. १)

हरिद्रां चित्रकं निम्बमुशीरातिविषे वचाम्।
कुष्ठमिन्द्रयवान् मूर्वां पटोलं चापि साधितम्॥
पिबेन्मरिचसंयुक्तं सक्षौद्रं कफजे ज्वरे॥

हल्दी, चीतामूल, नीमकीछाल, खस, अतीस, वच, कूठ, इन्द्रजौ, मूर्वा और पटोल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमें काली मिर्चका चूर्ण और शहद मिलाकर पीनेसे कफज्वर नष्ट होता है।

(८४२१) हरिद्रादिगणः

(सु. सं. । सू. अ. ३८)

हरिद्रा दारुहरिद्रा कलशी कुटजबीजानि मधुकञ्चेति।

एतौ वचाहरिद्रादिगणौ स्तन्यविशोधनौ।
आमातीसारशमनौ विशेषाद्दोषपाचनौ॥

हल्दा, दारुहल्दी, शालपर्णी, इन्द्रजौ और मुलैठी। इन ओषधियोंके योगको "हरिद्रादिगण" कहते हैं।

हरिद्रादि गण और वचादि गण स्तन्यशोधक, (स्त्रियोंके दूधको शुद्ध करनेवाले), और आमातिसार नाशक एवं विशेषतः दोष पाचक हैं।

(८४२२) हरिद्रादियोगः

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६; व. से.; वृ. नि. र. । कुष्ठा.)

हरिद्राकल्कसंयुक्तं गोमूत्रस्य पलद्वयम्।
पिबेन्नरः कामचारी कण्डूपामाविनाशनम्॥

१० तोले गोमूत्रमें पत्थर पर पिसी हुई हल्दी (३ माशा) मिलाकर पीनेसे कण्डू और पामाका नाश होता है।

इस पर किसी विशेष परहेज़की आवश्यकता नहीं है।

(८४२३) हरीतकीयोगः

(भै. र. । वातरक्ता.)

हरीतकीमाश्य समं गुडेन
एकाथवा द्वे च ततो गुडूच्याः।
क्वाथोऽनुपीतः शमयत्यवश्यं
प्रभिन्नमाजानुजवातरक्तम्॥

१ या दो हर्रों को पीसकर गुड़के साथ खावें और फिर गिलोयका क्वाथ पीवें।

इससे जानु तक फैला और स्फुटित वातरक्त भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

---

[1] श्वासकासवमीहरमिति पाठभेदः

(८४२४) **हरीतक्यादिकषायः**

(धन्व. । उरुस्तम्भा.)

हरीतकी शृङ्गवेरं देवदारु च चन्दनम् ।
क्वाथयेच्छागदुग्धेन अपामार्गस्य मूलकम् ॥
जङ्घाशूलमुरुस्तम्भं सप्तरात्रेण नाशयेत ॥

हर्र, अदरक (सोंठ), देवदारु, लालचन्दन, और अपामार्गकी जड़ समान भाग मिलित (२॥ तोले) लेकर कूटकर (२० तोले) बकरीके दूधमें डालें और उसमें (१ सेर) पानी मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो दूधको छान लें।

इसे पीनेसे सात दिनमें जंघाशूल और उरुस्तम्भका नाश होता है।

(८४२५) **हरीतक्यादिक्काथः** (१)

(भै. र. । वृद्धच.)

हरीतकी वचा शुण्ठी त्रिवृता स्वर्णपत्रिका ।
एलाद्वयं देवपुष्पं क्वाथयित्वा जलं पिबेत् ॥
अनेन प्रशमं यान्ति ब्रध्नकासज्वरा ध्रुवम् ॥

हर्र, बच, सोंठ, निसोत, सनाय, छोटी और बड़ी इलायची तथा लौंग समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ ब्रध्न, कास और ज्वरको अवश्य नष्ट कर देता है।

(८४२६) **हरीतक्यादिक्काथः** (२)

(व. से. । ज्वरा.)

हरीतकी प्रियङ्गुश्च पिप्पलीलोध्रमेव च ।
दार्वी हरिद्रा तेजोह्वा सक्षौद्रं मुखधावने ॥
एतेन कटुभावाच मुखरोगश्च शाम्यति ।
वक्त्र विशदतामेति भक्तच्छन्दश्च जायते ॥

हर्र, फूलप्रियंगु, पीपल, लोध, दारुहल्दी, हल्दी और तेजबल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें इसमें शहद मिलाकर उससे कुल्ले करनेसे ज्वरमें होनेवाली मुखकी कटुता और मुखरोग नष्ट होकर मुख शुद्ध हो जाता है और भोजनमें रुचि उत्पन्न होती है।

(८४२७) **हरीतक्यादिक्काथः** (३)

(वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

हरीतकीपर्पटद्राक्षा-
शम्बूकपुष्पैः कटुकीपयोदैः ।
शम्पाकदेवाह्वयभारतीभि-
श्चित्तभ्रमं हन्ति कृतः कषायः ॥

हर्र, पित्तपापड़ा, मुनक्का, शंखपुष्पी, कुटकी, नागरमोथा, अमलतासका गूदा, देवदारु और ब्राह्मी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ चित्तभ्रम सन्निपातको नष्ट करता है।

(८४२८) **हरीतक्यादिक्काथः** (४)

(भै. र. । उदरा. ; यो. र. ; वृ. मा. । शोथोदरा.; वृ. नि. र. । उदरा.; वृ. यो. त. । त. १०५)

हरीतकीनागरदेवदारु-
पुनर्नवाच्छिन्नरुहाकषायः ।
सगुग्गुलुर्मूत्रयुतन्तु पेयः
शोथोदराणां प्रवरः प्रयोगः ॥

हर्र, सोंठ, देवदारु, पुनर्नवा और गिलोय समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमें गोमूत्र और शुद्ध गूगल मिलाकर पीनेसे शोथोदर का नाश होता है। शोथोदरके लिये यह एक श्रेष्ठ योग है।

(८४२९) **हरीतक्यादिक्वाथः** (५)

(भै. र. । मूत्रकृच्छ्रा. ; यो. त. । त. ५०; यो. र. । मूत्रकृच्छ्रा. ; ग. नि. । मूत्रकृच्छ्रा. २७; वृ. मा. ; व. से. ; यो. चि. म. । अ. ४ ; वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा. ; शा. सं. । खं. २ अ. २)

हरीतकीगोक्षुरराजवृक्ष-
पाषाणभिद्धन्वयवासकानाम् ।
क्वाथं पिबेन्माक्षिकसम्प्रयुक्तं
कृच्छ्रे सदाहे सरुजे विबन्धे ॥

हर्र, गोखरु, अमलतास, पखानभेद और धमासा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे दाह और पीड़ा युक्त मूत्रकृच्छ्र तथा मूत्राघातका नाश होता है ।

(८४३०) **हरीतक्यादियोगः** (१)

(वै. म. र. । पटल ११)

हरीतकीत्रिवृन्मूलकुलत्थैः साधुसाधितः ।
क्वाथस्तु रुबुतैलाढ्यः शोफदाहोदरापहः ॥

हर्र, निसोत और कुलथी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें अरण्डीका तेल मिलाकर पीनेसे शोथ, दाह और उदर रोगका नाश होता है ।

(८४३१) **हरीतक्यादियोगः** (२)

(वै. म. र. । पटल ११)

हरीतकीनागररात्रिसिद्धं
जलं ज्वरोत्थश्वयथुं निहन्यात् ॥

हर्र, सोंठ और हल्दी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ ज्वरके कारण उत्पन्न होनेवाले शोथको नष्ट करता है ।

(८४३२) **हरेणुकादिक्वाथः**

(वैद्यामृत । विषय ११ ; भा. प्र. म. खं. २ हिक्का. ।)

हरेणुका पिप्पलिका कषायो
हिङ्ग्वन्वितोऽपोहति पञ्च हिक्काः ।
नस्यं तथालक्तकसम्भवं च
स्तन्येन वाऽपोहति मक्षिकाविट् ॥

रेणुका और पीपलके क्वाथमें हींग मिलाकर पीनेसे अथवा लाखके रसकी नस्य लेनेसे या स्त्रीके दूधमें मक्खीकी विष्ठा मिलाकर उसकी नस्य लेनेसे ५ प्रकारकी हिचकी नष्ट हो जाती है ।

(८४३३) **हिक्कानिग्रहणो दशको महाकषायः**

(च. सं. । सू. स्था. १ अ. ४)

शटीपुष्करमूलबदरबीजकण्टकारिकाबृ-
हतीवृक्षरुहाभयापिप्पलीदुरालभाकुलीरशृङ्ग्य
इति दशेमानि हिक्कानिग्रहणानि भवन्ति ॥

कचूर, पोखरमूल, बेरकी गुठली की मींग, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, बन्दा, हर्र, पीपल, धमासा और काकड़ासिंगी—ये दश औषधियां हिक्का-नाशक क्वाथ द्रव्योंमें मुख्य हैं ।

(८४३४) **हिङ्ग्वादिक्वाथः** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

हिङ्गुपौष्करसठीसुवर्चलं
क्वाथमेवमपि शूलिनां हितम् ।

वातशूलशमनाय शस्यते
पाचनं निगदितं च वर्त्तते ॥

हींग, पोखरमूल, कचूर और काला नमक (संचल) समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ शूल और विशेषतः वातज शूलको नष्ट करता है तथा पाचक है।

(काला नमक क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिये।)

(८४३५) **हिङ्ग्वादिक्काथः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

हिङ्गुनागरसठीसुवर्चलं
दारुपौष्करघनं पुनर्नवा ।
क्वाथपानमिति शूलिनां
हितं पाचनं जठरगुल्मिनामपि ॥

हींग, सोंठ, कचूर, काला नमक (संचल), देवदारु, पोखरमूल, नागरमोथा और पुनर्नवाकी जड़ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ शूल, उदररोग और गुल्मको नष्ट करता है तथा पाचक है।

(काला नमक क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिये।)

(८४३६) **हिज्जलपत्रस्वरसः**

(ग. नि. । अतिसारा. २)

दलोत्थः स्वरसः पीतो हिज्जलस्य समाक्षिकः।
जयत्याममतीसारं क्वाथो वा कुटजोद्भवः ॥

हिज्जल वृक्षके पत्तोंके स्वरसमें शहद मिला कर पीने या कुड़ेकी छालका (या इन्द्रजौका) क्वाथ पीनेसे आमातिसारका नाश होता है।

(८४३७) **हृद्यो दशको महाकषायः**

(च. सं. । सू. स्था. १ अ. ४)

आम्राम्रातकनिकुचकरमर्दवृक्षाम्लाम्लवेतसकुवलबदरदाडिममातुलुङ्गानीति दशेमानि हृद्यानि भवन्ति।

आम, अम्बाड़ा, लकुच, करौंदा, तिन्तड़ीक (इमली), अम्लवेत, कुवल (बड़ा बेर), झाड़ीका बेर, अनार और बिजौरा—ये दश चीजें हृदयके लिये हितकारी हैं।

(८४३८) **ह्रीबेरादिकषायः** (१)

(भै. र. । स्त्रीरोगा. ; च. द. । स्त्रीरोगा. ६२; र. र. । स्त्री, वृ. यो. त. । त. १४० ; व. से. । स्त्री. ; धन्व. । सूतिका. ; यो. र. । स्त्री.)

ह्रीबेरारलुरक्तचन्दनबला-
धन्याकवत्सादनी-
मुस्तोशीर यवासपर्पटविषा-
क्वाथं पिबेद् गर्भिणी ।
नानावर्णरुजातिसारकगदे
रक्तस्रुतौ वा ज्वरे
योगोऽयं मुनिभिः पुरा
निगदितः सूत्यामयेषूत्तमः ॥

सुगन्धबाला, अरलुकी छाल, लाल चन्दन, खरेंटी, धनिया, गिलोय, नागरमोथा, खस, जवासा, पित्तपापड़ा और अतीस समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ गर्भिणी और प्रसूताके पीड़ायुक्त अनेकरंगों वाले अतिसार, रक्तस्राव और ज्वरको नष्ट करता है।

(८४३९) **ह्रीबेरादिकषायः** (२)

(रा. मा. । ज्वरा. २० ; ग. नि. । ज्वरा. १)

ह्रीबेरपर्पटचन्दनशुण्ठ्युशीर-
मुस्तैः कृतं पिबति यः पुरुषः कषायम् ।
तृड्दाहस्वेदजननं जयति ज्वरं स
पित्तोत्थमुग्रमपि दत्तदुरन्तमूर्च्छम् ॥

सुगन्धबाला, पित्तपापड़ा, लाल चन्दन, सोंठ, खस और नागरमोथा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ तृषा, दाह और पित्तज उग्र ज्वरको नष्ट करता है ।

(८४४०) **ह्रीबेरादिक्वाथः** (१)

(वृ. यो. त. । त. ६४ ; व. से. । अतिसारा. ; र. र. । ज्वराति.)

ह्रीबेरातिविषा मुस्तं बिल्वधान्यकवत्सकम् ।
समङ्गा धातकी लोध्रं विश्वं दीपनपाचनम् ॥
हन्त्यरोचकपित्तामविबन्धं चातिवेदनम् ।
सशोणितमतीसारं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् ॥

सुगन्धबाला, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, धनिया, इन्द्रजौ, मजीठ, धायके फूल, लोध और सोंठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ दीपन पाचन है और अरुचि, पित्त, आम, मलावरोध, पेटकी पीड़ा (मरोड़) रक्तातिसार, ज्वरयुक्त अतिसार और ज्वररहित अतिसारको नष्ट करता है ।

(८४४१) **ह्रीबेरादिक्वाथः** (२)

(वै. र. । अतीसारा. ; यो. चि. म. । अ. ४ ; वृ. यो. त. । त. ६५ ; वं. से. ; ग. नि. । ज्वरातिसारा. १ ; वृ. मा. ; भै. र. । ज्वराति.)

ह्रीबेरातिविषामुस्ताबिल्वधान्यकनागरैः ।
पिबेत्पिच्छाविबन्धघ्नं शूलदोषामपाचनम् ॥
सरक्तं हन्त्यतीसारं सज्वरं वाथविज्वरम् ॥

सुगंधबाला, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, धनिया और सोंठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ ज्वर सहित और ज्वर रहित अतिसार, रक्तातिसार, शूल, पिच्छल अतिसार और मलावरोधको नष्ट करता तथा आमको पचाता है ।

(८४४२) **ह्रीबेरादिक्वाथः** (३)

(वृ. नि. र. । स्त्री रोगा.)

ह्रीबेरातिविषामुस्तामोचशक्रैः शृतं जलम् ।
दद्याद्गर्भे प्रचलिते प्रदरे कुक्षिरुज्यपि ॥

सुगन्धबाला, अतीस, नागरमोथा, मोचरस और इन्द्रजौ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ गर्भके चलित होने (हिलने)में, प्रदरमें और कुक्षिशूलमें उपयोगी है ।

(८४४३) **ह्रीबेरादिक्वाथः** (४)

(वृ. नि. र. । आमातिसारा.)

ह्रीबेरशृङ्गवेराभ्यां मुस्तापर्पटकेन च ।
मुस्तोदीच्यशृतं तोयं देयं वापि पिपासिते ॥

आमातिसारमें रोगीको प्यासमें सुगन्धबाला और सोंठका या नागरमोथा और पित्तपापड़ेका

अथवा नागरमोथा और सुगन्धबालाका पानी देना चाहिये ।

(१। तोला औषधको १ सेर पानीमें पकाकर आध सेर रहने पर छान लें ।)

(८४४४) ह्रीबेरादिक्वाथः (५)

(वृ. नि. र. । अतिसारा ; शा. सं. । खं. २ अ. २)

ह्रीबेरधातकीलोध्रपाठालज्जालुवत्सकैः ।
धान्यकातिविषामुस्तगुडूचीबिल्वनागरैः ॥
कृतः कषायः शमयेदतीसारं चिरोत्थितम् ।
अरोचकामशूलास्रज्वरघ्नः पाचनः स्मृतः ॥

सुगन्धबाला, धायके फूल, लोध, पाठा, लज्जालु की जड़, इन्द्रजौ, धनिया, अतीस, नागरमोथा, गिलोय, बेलगिरी और सोंठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ पुराने अतिसार, अरुचि, आम, शूल, रक्तस्राव और ज्वरको नष्ट करता है एवं पाचन है ।

(८४४५) ह्रीबेरादिक्वाथः (६)

(भै. र. । रक्तपित्ता. ; वृ. नि. र. । रक्तपित्ता. ; व. से. । रक्तपित्ता.)

ह्रीबेरमुत्पलं धान्यं चन्दनं यष्टिकामृता ।
उशीरश्च त्रिवृच्चैषां क्वाथं समधुशर्करम् ॥
पाययेत्तेन सद्यो हि रक्तपित्तं प्रणश्यति ।
रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहं ज्वरं तथा ॥

सुगन्धबाला, नीलोत्पल, धनिया, लाल चन्दन, मुलैठी, गिलोय, खस और निसोत समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें खांड और शहद मिलाकर पीनेसे उग्र रक्तपित्त, तृष्णा, दाह और ज्वरका शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

(८४४६) ह्रीबेरादिक्वाथः (७)

(यो. र. । रक्तपित्ता. ; वृ. नि. र. । रक्तपित्ता. ; व. से । ज्वरा.)

ह्रीबेरं धान्यकं शुण्ठी[१] चन्दनं मधुयष्टिका ।
वृषोशीरयुतः क्वाथः शर्करामधुयोजितः ॥
रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहं ज्वरं तथा ॥

सुगन्धबाला, धनिया, सोंठ (पाठान्तरके अनुसार नागरमोथा), लाल चन्दन, मुलैठी, बासा (अडूसा) और खस समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें खांड और शहद मिला कर पीने से प्रबल रक्तपित्त, तृष्णा, दाह और ज्वर का नाश होता है ।

१ ह्रीबेरं धान्यकं मुस्तमिति पाठान्तरम् ।

इति हकारादिकषायप्रकरणम्

अथ हकारादिचूर्णप्रकरणम्

(८४४७) हरिद्रकयवक्षयोगः

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

सहरिद्रयवक्षारौ पीत्वा चोष्णेन वारिणा ।
नानादेशसमुद्भूतं वारिदोषमपोहति ॥

हल्दी और जवाखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे नाना देशोंके जलका विकार नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—१॥ माशा **)**

(८४४८) हरिद्रादिक्षारः

(च. सं. । चि. स्था ६ अ. १९ ग्रहण्य. ; व. से. । ग्रहण्य.)

द्वे हरिद्रे वचा कुष्ठं चित्रकः कटुरोहिणी ।
मुस्तं च वस्तमूत्रेण सिद्धः क्षारोऽग्निवर्द्धनः ॥

हल्दी, दारुहल्दी, बच, कूठ, चीता, कुटकी और नागरमोथा समान भाग ले कर यथाविधि भस्म करके बकरीके मूत्रमें घोलकर क्षार बनावें ।

इसे बकरीके मूत्रके साथ सेवन करनेसे अग्नि की वृद्धि होती है ।

(मात्रा—२—३ माशे । **)**

(८४४९) हरिद्रादिचूर्णम् (१)

(यो. र. । श्वासा.)

हरिद्रा मरिचं द्राक्षा गुडो रास्ना कणा सटी ।
कटुतैले लिहन्हन्याच्छ्वासान्प्राणहरानपि ॥

हल्दी, काली मिर्च, मुनक्का, गुड़, रास्ना, पीपल और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे सरसों के तेलमें मिला कर सेवन करनेसे भयंकर श्वास भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—१॥—२ माशा । **)**

(८४५०) हरिद्रादिचूर्णम् (२)

(वृ. नि. र. । कामला.)

निशाचूर्णं कर्षमितं दध्नः पलमितं तथा ।
प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परम् ॥

प्रातःकाल १। तोला (व्यवहा. मा. ३—४ माशा) हल्दीके चूर्ण को ५ तोले दहीमें मिलाकर सेवन करनेसे कामला रोग नष्ट हो जाता है ।

(८४५१) हरिद्रादियोगः (१)

(वृ. यो. त. । त. १०२ ; यो. र. । अश्मर्य. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । मूत्रकृ.)

यः पिबेद्रजनीं सम्यक्सगुडां तुषवारिणा ।
तस्याऽऽशु चिररूढाऽपि यात्यस्तं मेढ्रशर्करा ॥

(३—४ माशा) हल्दीके चूर्णको (१ तोला) गुड़में मिला कर कांजीके साथ सेवन करनेसे पुरानी शर्करा भी नष्ट हो जाती है ।

(८४५२) हरिद्रादियोगः (२)

(वै. म. र. । पटल ७)

प्रातरेव रजनी सुभक्षिता
मेहविंशतिविनाशिनी ध्रुवम् ॥

प्रातःकाल हल्दीके (३ माशा) चूर्णको शहदके साथ सेवन करने से २० प्रकारके प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

(८४५३) **हरिद्राद्यं चूर्णम्**

(वैद्यामृत । विषय ३५)

गोमूत्रेण निशाचूर्णं सगुडं यः पिबेत्सखे ।
वर्षोत्थं श्लीपदं तस्य दद्रु कुष्ठं च नश्यति ॥

हल्दीके (३-४ माशा) चूर्णको गुड़में मिला कर गोमूत्रके साथ सेवन करने से १ वर्षका पुराना श्लीपद और दाद तथा कुष्ठ रोग नष्ट हो जाता है।

(८४५४) **हरिद्राद्युद्वर्तनम्**

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

निशासुधारग्वधकाकमाची-
पत्रैश्च दार्वीप्रपुन्नाटबीजैः ।
तक्रेण पिष्टैः कटुतैलमिश्रैः
पामादिषूद्वर्तनमेतदिष्टम् ॥

हल्दी, थूहर (स्नुही) का दूध, अमलतासके पत्ते, मकोयके पत्ते, दारुहल्दी और पंवाड़के बीज समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे छाछके साथ पीसकर सरसोंके तेलमें मिला कर मालिश करने से पामा आदि का नाश होता है।

(८४५५) **हरीतकीयोगः (१)**

(च. सं. । चि. ६ अ. ९)

सगुडां पिप्पलीयुक्तां घृतभृष्टां हरीतकीम् ।
त्रिवृद्दन्तीयुतां वापि भक्षयेदानुलोमिकीम् ॥
विड्वातकफपित्तानामानुलोम्येन निर्मले ।
गुदेऽर्शांसि प्रशाम्यन्ति पावकश्चाभिवर्द्धते ॥

हर्रको घीमें भूनकर चूर्ण करें और फिर उसमें उसके बराबर पीपलका चूर्ण या निसोत और दन्तीमूलका चूर्ण मिला कर, गुड़में मिला कर सेवन करने से मल, वायु, कफ और पित्त स्वमार्गगामी होते और गुदा निर्मल हो जाती है तथा अर्शका नाश हो जाता है।

(**मात्रा**—३ माशा ।)

(८४५६) **हरीतकीयोगः (२)**

(भै. र. । वृद्धच. ; व. से. । अन्त्रवृद्धच.)

हरीतकीं मूत्रसिद्धां सतैलां लवणान्विताम् ।
प्रातः प्रातश्च सेवेत कफवातामयापहाम् ॥

हर्रोको गोमूत्रमें पका कर चूर्ण करें। (३ माशे) इस चूर्णमें (१ माशा) सेंधानमक और तिलका तेल मिला कर प्रातःकाल सेवन करनेसे कफवातज वृद्धिका नाश होता है।

(८४५७) **हरीतक्यादिकल्कः (१)**

(ग. नि. । ऊरुस्तम्भा. २१)

हरीतकी च चव्या च चित्रको देवदारु च ।
कल्कं मधुयुतं पीत्वा ऊरुस्तम्भाद्विमुच्यते ॥

हर्र, चव, चीतामूल और देवदारु समान भाग ले कर सबको पत्थर पर पानीके साथ पीसकर शहदमें मिलाकर पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट हो जाता है।

(**मात्रा**—६ माशे ।)

(८४५८) **हरीतक्यादिकल्कः** (२)

(यो. र. । बाला. ; वा. भ. । उ. अ. २ ; वृ. मा. । बाला.)

हरीतकीवचाकुष्ठकल्कं माक्षिकसंयुतम् ।
पीत्वा कुमारः स्तन्येन मुच्यते तालुकण्टकात् ॥

हर्र, वच और कूठ समान भाग लेकर पत्थर पर पानी के साथ पीस लें और शहदमें मिला लें।

इसे बच्चेकी मांके दूधमें घोलकर उसे पिलानेसे तालुकण्टकरोग नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—३–४ रत्ती ।)

(८४५९) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१)

(भा. प्र. म. खं. २ । अम्लपित्ता.)

अभया पिप्पली द्राक्षा सिता धान्ययवासकम् ।
मधुना कण्ठदाहघ्नं पित्तश्लेष्महरं परम् ॥

हर्र, पीपल, मुनक्का, मिश्री, धनिया और जवासा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे कण्ठकी दाह तथा पित्त और कफका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१॥–२ माशा ।)

(८४६०) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (२)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । जीर्णज्वरा.)

हरीतकीं निम्बपत्रं नागरं सैन्धवोनलः ।
एषां चूर्णं सदा खादेद् दुर्जलज्वरशान्तये ॥

हर्र, नीमके पत्ते, सोंठ, सेंधा नमक और चीता समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवन से दुर्जल दोषसे उत्पन्न होने वाला ज्वर नष्ट हो जाता है ।

(**मात्रा**—२ माशा ।)

(८४६१) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (३)

(यो. र. । कृम्य.)

हरीतकी चैव तथा हरिद्रा
सौवर्चलं चैव समं विचूर्णितम् ।
इन्द्रवारुणिजलेन भावितं
कीटसङ्घविनिवारणं परम् ॥

हर्र, हल्दी और संचल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे इन्द्रायण के स्वरसमें खरल करके सुखा लें ।

यह चूर्ण कृमियों को नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—३ माशा ।)

(८४६२) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (४)

(ग. नि. । छर्दि. १४ ; वृ. नि. र. । बाला. ; वृ. नि. र. । छर्दि. ; यो. र. । छर्दि. ; वृ. मा. ; वृ. यो. त. । त. ८३ ; व. से. छर्दि.)

हरीतक्याः कृतं चूर्णं मधुना सह लेहयेत् ।
अधस्ताद्धिते दोषे शीघ्रं छर्दिः प्रशाम्यति ॥

हर्र के चूर्णको शहद में मिलाकर सेवन करने से अधोगत दोष नष्ट होते और छर्दि शान्त हो जाती है ।

(यह योग पित्तज छर्दि में उपयोगी है ।)

(**मात्रा**—थोड़ी थोड़ी देरमें १–१ माशा चटावें ।)

(८४६३) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (५)

(वृ. नि. र. । आमातिसारा. ; शूला. ; यो. र. ; व. से. । आमाति. ; शा. ध. । खं. २ अ. ६)

हरीतकी प्रतिविषासिन्धुसौवर्चलं वचा ।
हिङ्गु चेति कृतं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥
आमातीसारशमनं ग्राहि चाऽग्निप्रबोधनम् ॥

हर्र, अतीस, सेंधा नमक,[1] काला नमक (संचल), बच और हींग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे आमातिसार का नाश होता है। यह चूर्ण ग्राही और दीपन है।

(मात्रा—६ रत्ती।)

(८४६४) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (६)

(वृ. मा. । उदावर्ता. ; यो. र. ; वृ. नि. र. ; ग. नि. । उदावर्ता. १४)

हरीतकी यवक्षारः पीलूनि त्रिवृता तथा ।
घृतैश्चूर्णमिदं पेयमुदावर्तविनाशनम् ॥

हर्र, जवाखार, पीलुके फल और निसोत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घृतमें मिलाकर पीनेसे उदावर्तका नाश होता है।

(मात्रा—६ माशे।)

(८४६५) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (७)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

चूर्णं हरीतकीहिङ्गुपिप्पलीनागरान्वितम् ।
मातुलुङ्गरसाक्तं तु सन्निपातज्वरे हितम् ॥

हर्र, हींग, पीपल और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे बिजौरेके रसमें मिला कर सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

(मात्रा—४ रत्ती।)

१ पाठान्तरके अनुसार "सेंधा नमक" के स्थान पर "इन्द्रजौ" है।

(८४६६) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (८)

(व. से. । वातव्या. ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

हरीतकी वचा रास्ना सैन्धवं चाम्लवेतसम् ।
घृतमार्द्रकसंयुक्तमपतन्त्रकनाशनम् ॥

हर्र, बच, रास्ना, सेंधा नमक, अम्लवेत और अदरक (सोंठ) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घीमें मिला कर चाटने से अपतन्त्रक रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

(८४६७) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (९)

(ग. नि. । हृद्रोगा. २६ ; भै. र. । हृद्रोगा. ; वृ. नि. र. । हृद्रोगा.)

हरीतकी वचा रास्ना पिप्पली विश्वभेषजम् ।
शठीपुष्करमूलं च चूर्णं हृद्रोगनाशनम् ॥

हर्र, बच, रास्ना, पीपल, सोंठ, कचूर और पोखरमूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे सेवन करनेसे हृद्रोग का नाश होता है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

(८४६८) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१०)

(रा. मा. । ज्वरा. २०)

चूर्णं शिवामलकचित्रकपिप्पलीनां
श्लक्ष्णीकृतं पिबति यः शिशिरोदकेन ।
दीप्तिं करोति च परां जठरानलस्य
क्षीणेन्द्रियस्य कुरुते रतिशक्तिमेतत् ॥

हर्र, आमला, चीतामूल और पीपल समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे शीतल जलके साथ सेवन करने से जठराग्नि दीप्त होती तथा इन्द्रियोंकी निर्बलता नष्ट हो कर कामशक्ति बढ़ती है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

(८४६९) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (११)

(वृ. मा., व. से. । अजीर्णा. ; ग. नि. । अजीर्णा. ५)

हरीतकी भक्ष्यमाणा नागरेण गुडेन वा ।
सैन्धवोपहिता वापि सातत्येनाग्निदीपनी ॥

हर्र और सोंठ के समान भाग मिश्रित (१॥ माशा) चूर्णको या हर्र और गुड़के (६ माशा) चूर्णको (गरम पानीसे) सेवन करने से या हर्रके चूर्णमें सेंधा नमक मिलाकर (गरम पानीसे) सेवन करने से अग्नि दीप्त होती है ।

(८४७०) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १४)

हरीतकीं सनागरं पिबेत् सुखोष्णवारिणा ।
निहन्ति कासश्वासौ च जयेच्च कामलामयम् ॥

हर्र और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कास, श्वास और कामलाका नाश होता है ।

(मात्रा — २-३ माशा ।)

(८४७१) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१३)

(ग. नि. । वृद्ध्य. ३५ ; यो. र. । वृद्ध्य. ; यो. त. । त. ५५)

गोमूत्रसिद्धां रुबुतैलभृष्टां
हरीतकीं सैन्धवचूर्णयुक्ताम् ।
खादेन्नरः कोष्णजलानुपानां
निहन्ति वृद्धिं चिरतः प्रवृद्धाम ॥

हर्रों को गोमूत्रमें पका कर अण्डीके तेलमें भून कर चूर्ण कर लें और उसमें (स्वाद योग्य) सेंधा नमक का चूर्ण मिला लें ।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे पुराना वृद्धि रोग भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(८४७२) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१४)

(वृ. नि. र. । अन्तर्विद्रध्य. ; वृ. यो. त. । त. ११० ; यो. र. । अन्तर्वि.)

हरीतकीसैन्धवधातकीनां
रजो घृतक्षौद्रयुतं तु शीघ्रम् ।
निहन्ति लीढं ध्रुवमेव पुंसा-
मन्तर्भवं विद्रधिमुग्ररूपम् ॥

हर्र, सेंधा नमक और धायके फूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करने से भयंकर अन्तर्विद्रधि भी अवश्यमेव शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा—३-४ माशे ।)

(८४७३) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१५)

(यो. र. । श्लीपदा.)

गन्धर्वतैलभृष्टां हरीतकीं गोजलेन यः पिबति ।
श्लीपदबन्धनमुक्तो भवत्यसौ सप्तरात्रेण ॥

हर्रको अरण्डीके तेलमें भूनकर गोमूत्रके साथ सेवन करने से सात दिन में श्लीपद रोग नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(८४७४) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१६)

(व. से. । अजीर्णा. ; ग. नि. । परि. चूर्णा. ३ ; अजीर्णा. ५)

हरीतकी धान्यतुषोदसिद्धा-
सपिप्पलीसैन्धवहिङ्गुयुक्ता ।
सोद्गारधूमं भृशमप्यजीर्णं
विजित्य सद्यो जनयेत्क्षुधां च ॥

हर्रको कांजी में पकाकर चूर्ण कर लें फिर उसमें पीपल, सेंधा नमक और हींगका चूर्ण (प्रत्येक उसके बराबर) मिला लें।

इसके सेवनसे प्रवृद्ध अजीर्ण और धूमोद्गार का नाश होकर भूख लगती है।

(मात्रा —८ रत्ती।)

(८४७५) **हरीतक्यादिचूर्णम्** (१७)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

हरीतकी पिप्पलीदीप्यकं सठी
सनागरं तुम्बरु हिङ्गु सैन्धवम् ।
सौवर्चलेनापि युतं तु चूर्णकं
त्वजीर्णकं हन्ति सदैव सेवितम् ॥

हर्र, पीपल, अजवायन, कचूर, सोंठ, तुम्बुरु, हींग, सेंधानमक और संचल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे सेवन करनेसे अजीर्णका नाश होता है।

(मात्रा—१। माशा ।)

(८४७६) **हरीतक्यादियोगः** (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १०)

आटरूषकरसेन सप्तधा
भाविता च पुनरेव शोषिता ।
पिप्पली मधुसमन्विताऽभया
रक्तपित्तमतिदुर्जयं जयेत् ॥

हर्रको बासे (अडूसे) के रसकी सात भावना दें। हर भावनाके पश्चात् सुखाते रहना चाहिये। तदनन्तर उसमें उसके बराबर पीपलका चूर्ण मिला कर रक्खें।

इसे शहद के साथ सेवन करनेसे दुर्जय रक्त-पित्त भी नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—२-३ माशा ।)

(८४७७) **हरीतक्यादियोगः** (२)

(ग. नि. । उदरा. ३२)

हरीतकीं पुष्करतैलपक्वां
सञ्चूर्ण्य गोमूत्ररसैः पिबेद्वै ।
सपिप्पलीसैन्धवमिश्रितां च
जलोदराक्रान्तजनः सुखाय ॥

हर्रको पोखरमूलके तेलमें पकाकर चूर्ण करें और फिर उसमें पीपल और सेंधा नमकका चूर्ण (प्रत्येक उसके बराबर) मिला लें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करने से जलोदरका नाश होता है।

(मात्रा—६ माशे ।)

(८४७८) **हरीतक्यादियोगः** (३)

(वा. भ. । उ. अ. ३९ रसायना.)

हरीतकीमामलकं सैन्धवं नागरं वचाम् ।
हरिद्रां पिप्पलीं वेल्लं गुडं चोष्णाम्बुना पिबेत् ॥
स्निग्धः स्विन्नो नरः पूर्वं तेन साधु विरिच्यते ॥

हर्र, आमला, सेंधा, सोंठ, बच, हल्दी, पीपल, बायबिड़ंग और गुड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

रोगीको स्निग्ध करके स्वेदित करनेके पश्चात् उष्ण जलसे यह चूर्ण पिलानेसे सुख पूर्वक विरेचन हो जाता है ।

(**मात्रा**—६ से ९ माशे तक ।)

(८४७९) **हरीतक्यादिरसायनम्**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ६ ; वै. र. । अग्निमांद्या. ; वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

हरीतकी हरिहरतुल्य ! षड्गुणा
चतुर्गुणा चतुर्विशाल ! पिप्पली ।
हुताशनं सैन्धवहिङ्गुसंयुतं
रसायनं हे नृप ! वह्निदीपनम् ॥

हर्र ६ भाग, पीपल ४ भाग तथा चीता, सेंधा नमक और हींग १–१ भाग लेकर चूर्ण करें ।

यह चूर्ण अग्निदीपक और रसायन है । (पाठान्तरके अनुसार चीता २ भाग तथा हींगका अभाव है ।)

(**मात्रा**—१॥ माशा ।)

(८४८०) **हस्तिकर्णकल्पः**

(र. र. रसा. खं. । उपदेश ४)

ग्राह्यं सोमत्रयोदश्यां हस्तिकर्णस्य पत्रकम् ।
छायाशुष्कं तु तच्चूर्णं गवां क्षीरैः पिबेत्पलम् ॥
वर्षमात्राज्जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं नरः ।
हस्तिकर्णस्य पञ्चाङ्गं छायाशुष्कं विचूर्णितम् ॥
कर्षमात्रं पिबेन्नित्यं मासैकमुदकैः सह ।
आरनालैस्ततस्तक्रैर्दधिक्षीराज्यक्षौद्रकैः ॥
प्रत्येकेन क्रमात्सेव्यं मासैकेन जरापहम् ।
जीवेद्ब्रह्मदिनं सार्धं वज्रकायो महाबलः ॥

ॐ गरविषं हृष्टौ गृह्णामि स्वाहा" हस्तिकर्णग्रहणमन्त्रः ॥ "ॐ अमृतकुटीजातानां अमृतं कुरु कुरु स्वाहा " अनेन पूजयेत् । 'ॐ अमृतोद्भवाय अमृतं कुरु कुरु नित्यं नमो नमः' भक्षणमन्त्रः ॥

शुक्ल पक्षकी त्रयोदशी को हस्तिकर्ण पलाशके पत्र ला कर छायामें सुखा लें और बारीक चूर्ण कर लें ।

इसमें से नित्य प्रति ५ तोला चूर्ण गायके दूधके साथ १ वर्ष तक सेवन करनेसे वृद्धावस्थाका नाश होता और आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है ।

हस्तीकर्ण पलाशके पंचांगको छायामें सुखाकर चूर्ण करें । इसमें से नित्य प्रति १। तोला चूर्ण १ मास तक पानीके साथ सेवन करें । फिर १–१ मास क्रमशः कांजी, तक्र, दही, दूध, घी और शहद्के साथ सेवन करें ।

इस प्रयोगसे वृद्धावस्थाका नाश होकर शरीर वज्रके समान दृढ़ और आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है ।

(८४८१) **हस्तिकर्णरसायनम्**

(वृ. मा. । रसायना. ; र. र. । रसायना.)

हस्तिकर्णरजः खादेत्प्रातरुत्थाय सर्पिषा ।
यथेष्टाहारचारोऽपि सहस्रायुर्भवेन्नरः ॥
मेधावी बलवान्कामी स्त्रीशतानि व्रजत्यसौ ।
मधुनाश्वसवेगः स्याद्बलिष्ठः स्त्रीसहस्रगः ॥

प्रातः काल हस्तिकर्ण पलाश (के पत्तों) का चूर्ण घीके साथ खाने और इच्छानुसार आहार करने से आयु अत्यन्त दीर्घ होती है; मेधा, बल और

काम शक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है। इसके प्रभावसे पुरुष सौ स्त्रियोंसे समागम करने में समर्थ हो सकता है।

इसे शहदके साथ सेवन करने से भी अत्यन्त बल बढ़ता है; चाल घोड़ेके समान तेज़ हो जाती है और हज़ार स्त्रियों के साथ समागम का बल आ जाता है। (?)

(८४८२) हारहूरादिचूर्णम्

(वृ. नि. र । हृद्रोगा.)

हारहूराहरीतक्योस्तुल्यं शर्करया रजः ।
पीतं हिमाम्बुना हन्ति पित्तहृद्रोगमञ्जसा ॥

मुनक्का और हर्र का चूर्ण समान भाग ले कर पत्थर पर पीस लें। इसमें सबके बराबर खांड मिला कर ठंडे पानीसे सेवन करनेसे पित्तज हृद्रोग का नाश होता है।

(मात्रा—९ माशे।)

(८४८३) हिङ्गुद्वादशकं चूर्णम्

(व. से. । अजीर्णा.)

हिङ्गुसैन्धवकृष्णानां कृष्णामूलककोलयोः ।
यवान्याश्च हरीतक्या दाडिमाम्लिकयोस्तथा ॥
वह्निनागरकोग्राणां भागाः संवर्धिताः क्रमात् ।
हिङ्गुद्वादशकं नाम चूर्णं ब्रह्मविनिर्मितम् ॥
अरुचिं पञ्चगुल्मांश्च हृद्रोगं संनियच्छति ।
आध्मानशूलानां द्वन्द्वमर्शांसि नाशयेत् ॥

हींग १ भाग, सेंधा नमक २ भाग, पीपल ३ भाग, पीपलामूल ४ भाग, काली मिर्च ५ भाग, अजवायन ६ भाग, हर्र ७ भाग, अनारदाना ८ भाग, इमली ९ भाग, चीतामूल १० भाग, सोंठ ११ भाग, और धनिया १२ भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें।

(हींग को थोड़े घी में भून लेना चाहिये। इमलीको पानीमें भिगोकर मलकर वह पानी चूर्णमें मिलाकर सुखा लेना चाहिये।)

(मात्रा—२-३ माशे।)

यह चूर्ण अरुचि, गुल्म, हृद्रोग, अष्ठीला, आध्मान, शूल और शुष्कार्श तथा रक्तार्शको नष्ट करता है।

(८४८४) हिङ्गुनवकचूर्णम्

(यो. र. ; व. से. । गुल्मा. ; च. द. । गुल्मा. २९. ; ग. नि. । गुल्मा. २५)

हिङ्गुपुष्करमूलानि तुम्बरूणि हरीतकी ।
श्यामा बिडं सैन्धवं च यवक्षारं महौषधम् ॥
यवक्वाथोदकेनैतद् घृतभृष्टं तु पाययेत् ।
तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥

हींग, पोखरमूल, तुम्बरु (नेपाली धनिया), हर्र, काली निसोत, बिड नमक, सेंधा नमक, जवाखार और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घीमें सेककर जौके क्वाथके साथ पिलानेसे उपद्रवयुक्त गुल्म और शूलका नाश होता है।

(मात्रा—१। माशा।)

(८४८५) हिङ्गुपञ्चकं चूर्णम् (१)

(हिङ्ग्वादिचूर्णम्)

(व. से. । हृद्रोगा. ; ग. नि. । चूर्णा. ३ ; यो. चि. म. । अ. २ ; वृ. नि. र. । हृद्रोगा.)

हिङ्गुसौवर्चलं विश्वं दाडिमं साम्लवेतसम् ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पेयं श्वासहृद्रोगशान्तये ॥

हींग, सञ्चल (काला नमक), सोंठ, अनारदाना और अम्लवेत समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करने से श्वास और हृद्रोग का नाश होता है।

(मात्रा—५ रत्ती)

(८४८६) **हिङ्गुपञ्चकं चूर्णम्** (२)

(यो. र. । गुल्मा. ; वृ. यो. त. । त. ९८)

हिङ्गुसैन्धववृक्षाम्लराजिकानागरैः समैः ।
चूर्णं गुल्मप्रशमनं स्यादेतद्धिङ्गुपञ्चकम् ॥

हींग, सेंधा नमक, तिन्तड़ीक, राई और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे गुल्मका नाश होता है।

(मात्रा—५ रत्ती।)

(८४८७) **हिङ्ग्वष्टकं चूर्णम्**

(भै. र. । अग्निमांद्या. ; र. र. ; यो. र. ; भा. प्र. म. खं. २ । अजीर्णा. ; च. द. । अग्निमांद्या. ६ ; यो. चि. म. । अ. २ ; वृ. यो. त. । त. ७१ : धन्व. । वातरोगा. ; ग. नि. । चूर्णा. ३)

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे ।
समधरणधृतानामष्टमो हिङ्गुभागः ॥
प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेत-
ज्जनयति जठराग्निं वातरोगांश्च हन्ति ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद (अजवायन), सेंधा नमक, सफेद जीरा, काला जीरा और हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे भोजनके समय घृतमें मिलाकर प्रथम ग्रास के साथ खानेसे अग्नि दीप्त होती और वातरोगका नाश होता है।

(हींगको घीमें भून लेना चाहिये। यदि सोंठ और जीरेको भी भून लिया जाय तो अधिक उत्तम है। इस योगमें प्रायः वैद्य १ भाग हींग डालते हैं परन्तु इतना हींग डालनेसे चूर्ण अधिक गरमी करता है अतः मेरी सम्मति में आठवां भाग हींग डाला जाय तो उत्तम है।)

(मात्रा—१ माशा।)

(८४८८) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१)

(यो. र. । अजीर्णा.)

कर्षं हिङ्गु द्विकर्षं विडमथ
मारचं सैन्धवं विश्वकृष्णा-
दीप्याजीराजमोदासितजरण-
विभीताभया वेदकर्षाः ।
अष्टौ मार्कण्डिधात्र्योरथ
बदरकपित्थोद्भवाः षोडश स्युः
सर्वं लुङ्गोदकार्द्रं हरति
रुचिवधाध्मानबन्धाग्निसादान् ॥

हींग १। तोला, बिड नमक २॥ तोले, तथा मिर्च, सेंधा नमक, सोंठ, पीपल, अजवायन, जीरा (काला), अजमोद, सफेद जीरा, बहेड़ा और हर्र ५-५ तोले एवं सनाय और आमला १०-१० तोले और बेर तथा कैथका गूदा २०-२० तोले लेकर चूर्ण बनावें और उसे बिजौरे नीबूके रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवन से अरुचि, अफारा, मलावरोध और अग्निमांद्य का नाश होता है।

(मात्रा—५ माशे।)

(८४८९) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (२)
(ग. नि. । ग्रहण्य. ३)

हिङ्गुक्षारौ समौ पथ्याशुण्ठीपिप्पलिचित्रकाः
द्व्यंशास्तत्पूर्ववत्पीतं श्लेष्मग्रहणिदोषजित् ॥

हींग और जवाखार १-१ भाग तथा हर्र, सोंठ, पीपल और चीतामूल २-२ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे सेवन करने से कफज ग्रहणी रोग नष्ट होता है ।

(अनुपान—दही या मद्य ।)

मात्रा—१। माशा ।

(८४९०) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (३)
(भै. र. ; वृ. मा. ; व. से. । गुल्मा.; वृ. नि. र.। वातव्या. उदावर्ता.; यो. र. । गुल्मा.)

हिङ्गूग्रगन्धा विडशुण्ठ्यजाजी
हरीतकीपुष्करमूलकुष्ठम् ।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं
गुल्मोदराजीर्णविसूचिकासु ॥

हींग १ भाग, बच २ भाग, विडनमक ३ भाग, सोंठ ४ भाग, जीरा ५ भाग, हर्र ६ भाग, पोखरमूल ७ भाग और कूठ ८ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण गुल्म, उदररोग, अजीर्ण, और विसूचिका को नष्ट करता है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(८४९१) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (४)
(वै. म. र. । पटल ३)

हिङ्गुवचाग्निमहौषधदीप्य-
कपथ्याकणात्रिवृताम् ।
क्रमवृद्धया जनितरजः
कासं श्वासं जयेत्सघृतम् ॥

हींग १ भाग, बच २ भाग, चीतामूल ३ भाग, सोंठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग, हर्र ६ भाग, पीपल ७ भाग और निसोत ८ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घीके साथ सेवन करने से कास और श्वासका नाश होता है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(८४९२) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (५)
(वैद्यामृत । वि. ५ विषूचिका.)

हिङ्गूग्रगन्धाविडनागरदीप्यपथ्या
चूर्णं विभागपरिवर्द्धितमेतदाशु ।
आनाहशूलगुदजानलमान्द्यगुल्म-
विष्टम्भकोदरविषूचिहरं समस्तम् ॥

हींग १ भाग, बच २ भाग, विडनमक ३ भाग, सोंठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग और हर्र ६ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अफारा, शूल, अर्श, अग्निमांद्य, गुल्म, मलावरोध और विसूचिकाको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(८४९३) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (६)
(भै. र. । शूला.; वृ. मा.; च. द. । शूला. २६; ग. नि. । वाता. १९)

हिङ्गु सौवर्चलं पथ्या विडसैन्धवतुम्बुरु ।
पौष्करञ्च पिबेच्चूर्णं दशमूलयवाम्भसा ॥
पार्श्वहृत्कटिपृष्ठांसशूले तन्द्रापतानके ।
शोथे श्लेष्मप्रसेके च कर्णरोगे च शस्यते ॥

हींग, काला नमक, हर्र, बिडनमक, सेंधानमक, तुम्बरु (नेपाली धनिया) और पोखरमूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे दशमूलके क्वाथ या जौ के क्वाथके साथ सेवन करनेसे पार्श्व, हृदय, कमर, और पीठके शूल; तन्द्रा, अपतानक, शोथ, कफ, आनाह और कर्णरोगोंका नाश होता है।

(मात्रा-१ माशा।)

(८४९४) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (७)

(वा. भ. चि. अ. १० । ग्रहण्य.)

हिङ्गु तिक्ता वचा माद्री पाठेन्द्रयवगोक्षुरम्।
पञ्चकोलं च कर्षांशं पलांशं पटुपञ्चकम् ॥
घृततैलद्विकुडवे दध्नः प्रस्थद्वये च तत्।
आपोथ्य क्वाथयेदग्नौ मृदावनुगते रसे ॥
अन्तर्धूमं ततो दग्ध्वा चूर्णीकृत्यघृताप्लुतम्।
पिबेत्पाणितलं तस्मिञ्जीर्णे स्यान्मधुराशनः ॥
वातश्लेष्मामयान्सर्वान्हन्याद्विषगरांश्च सः ॥

हींग, कुटकी, बच, काला अतीस, पाठा, इन्द्रजौ, गोखरु, पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल और सोंठ १।-१। तोला तथा पांचों नमक ५-५ तोले लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसमें २०-२०तोले घी तथा तिलका तेल एवं ४ सेर दही मिलाकर अग्नि पर पकावें। जब पकते पकते लेही सी हो जाय तो उसे हाण्डीमें बन्द करके जलावें। तत्पश्चात् हाण्डीके स्वांगशीतल होने पर उसमें से भस्मको निकालकर चूर्ण करलें।

इसमें से १। तोला औषध घी में मिलाकर पीनी चाहिये और उसके पचने पर मधुर आहार करना चाहिये।

इसके सेवनसे वात कफज ग्रहणी रोग और गर विषका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा-१॥ से ३ माशे तक।)

(८४९५) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (८)

(हा. सं। स्था. ३ अ. ७)

हिङ्गु सौवर्चलं पथ्या यवानी सपुनर्नवा।
बालैरण्डो बृहत्यौ द्वे तुम्बरुं व्योषसंयुतम् ॥
क्षारसौवर्चलोपेतं क्वाथं वा चूर्णकं तथा।
सद्यो वातात्मकं शूलं हन्ति सद्यो विषूचिकाम् ॥

हींग, सञ्चल (काला नमक), हर्र, अजवायन, पुनर्नवा (बिसखपरा), सुगन्धबाला, अरण्डमूल, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, तुम्बरु, सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार और सञ्चल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण वातज शूल और विषूचिकाको तुरन्त नष्ट करता है।

(मात्रा-२ माशे।)

(८४९६) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (९)

(व. से.। बालरोगा.; वृ. नि. र.। बालरोगा.)

हिङ्गुसैन्धवपालाशचूर्णं माक्षिकसंयुतम्।
लीढं निवारयत्याशु शिशूनामुद्धतां तृषाम् ॥

हींग, सेंधा नमक और पलाश (ढाक) की जड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद के साथ चटाने से बच्चोंकी प्रबल तृषा नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(८४९७) **हिङ्ग्वादिचूर्णम् (१०)**

(वृ. नि. र. । बालरोगा.)

हिङ्गु कर्कटशृङ्गी च गैरिकं मधुजेष्ठिका ।
त्रुटिः क्षौद्रं नागरं च हिक्काश्वासनिवारणम् ॥

हींग, काकड़ासिंगी, गेरु, मुलैठी, छोटी इलायची और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद में मिलाकर चटानेसे बालकों की हिचकी और श्वास का नाश होता है ।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(८४९८) **हिङ्ग्वादिचूर्णम् (११)**

(वृ. यो. त. । त. ९४ ; वृ. मा. । शूला. ; ग. नि. । शूला. २३ ; भै. र. । शूला. ; व. से. । अतिसारा. ; भा. प्र. म. खं. २ । अतिसारा. ; वृ. नि. र. । अति.)

शूले निरन्नकोष्ठेऽद्भिरुष्णाभिश्चूर्णिताः पिबेत् ।
हिङ्गुप्रतिविषाव्योषवचा सौवर्चलाभयाः ॥

हींग, अतीस, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, संचल (काला नमक) और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे प्रातःकाल खाली पेट (निरन्न कोष्ठमें) गरम पानीके साथ पीनेसे शूल नष्ट होता है । *

(मात्रा—१ माशा ।)

* भा. प्र. तथा वं. से. में इसी प्रयोगको श्लेष्मातिसारमें गरम पानीसे सेवन करने के लिये लिखा है ।

(८४९९) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१२)

(भै. र. । शूला.)

हिङ्ग सौवर्चलं शुण्ठी पथ्या च द्विगुणोत्तरा ।
एतच्चूर्णं कटीकुक्षिपार्श्वहृद्बस्तिशूलनुत् ॥

हींग १ भाग, संचल (काला नमक) २ भाग, सोंठ ४ भाग और हर्र आठ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण कमर, कुक्षि, पार्श्व, हृदय, और बस्ति के शूलको नष्ट करता है ।

(मात्रा—२ माशा ।)

(८५००) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१३) (बृहद्)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

हिङ्गुनागरषड्ग्रन्था यवानी चाभया त्रिवृत् ।
विडङ्गं दारु चव्यं च तुम्बुरुकुष्ठमुस्तकाः ॥
हपुषा कलशी रास्ना वत्सका सदुरालभा ।
शतावरी बृहत्यौ च त्वगेला पत्रजीरकम् ॥
पुष्करं तिन्तिडीकं च वृक्षाम्लं चाम्लवेतसम् ।
द्वौ क्षारौ पञ्चलवणं समं चैकत्र मिश्रयेत् ॥
मूत्रेण भावनां चैकां दत्त्वा छायाविशोषितम् ।
बीजपूरकतोयेन भावयेच्च दिनत्रयम् ॥
बिडालपदिकां मात्रां युञ्जीत शूलशान्तये ।
वाते चोष्णोदकेनापि पित्ते शर्करयान्वितः ॥
त्रिफलाकाथमद्याभ्यां श्लेष्मरोगे प्रशस्यते ।
शूलानाहविबन्धेषु मन्दाग्नौ गुल्मविद्रधौ ॥
प्लीहोदराणां पाण्डूनां ज्वरिणां च विशेषतः ।
निहन्ति रोगसङ्घातं मेघवृन्दं मरुद् यथा ॥

हींग, सोंठ, बच, अजवायन, हर्र, निसोत, बायबिडंग, देवदारु, चव्य, तुम्बरु, कूठ, नागरमोथा, हाऊबेर, शालपर्णी, रास्ना, इन्द्रजौ, धमासा, शतावर,

छोटी कटेली, बड़ी कटेली, दालचीनी, इलायची, तेजपात, जीरा, पोखरमूल, तिंतड़ीक, इमली, अम्लवेत, जवाखार, सज्जीखार और पांचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे गोमूत्रकी १ भावना देकर छायामें सुखा लें। तदनन्तर बिजौरे नीबूके रस में ३ दिन खरल करके सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१। तोला। **व्यवहारिक मात्रा**—१॥-२ माशे)

इसके सेवनसे शूल, अफारा, मलावरोध, अग्निमांद्य, गुल्म, विद्रधि, प्लीहा, पाण्डु और विशेषतः ज्वरका नाश होता है।

अनुपान—वातमें उष्ण जलके साथ, पित्तमें खांडके साथ, कफमें त्रिफलेके क्वाथ और सुराके साथ सेवन करना चाहिये।

(८५०१) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१४)

(ग. नि. । शूला. २३ ; वृ. मा. ; व. से. । शूला. ; च. द. । शूला. २६; व. से. । उदरा.)

हिङ्गु त्रिकटुकं कुष्ठं यवक्षारोऽथ सैन्धवम् ।
मातुलुङ्गरसे पेयं प्लीहशूलरुजापहम् ॥

हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, कूठ, जवाखार और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे बिजौरे नीबूके रसके साथ सेवन करनेसे प्लीहा और शूलका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ माशा।)

(८५०२) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१५)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २८)

हिङ्गुफलत्रिकजीरकयुग्मं
चित्रकभार्गीसकुष्ठविडङ्गम् ।
तुम्बुरुपुष्करविश्वसुराह्वं
क्षारयुगं लवणानि च पञ्च ॥
वातिकगुल्मविनाशनहेतोः
शूलरुजश्च निहन्ति नराणाम् ॥

हींग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सफेद जीरा, कालाजीरा, चीतामूल, भरंगी, कूठ, बायबिड़ंग, तुम्बरु, पोखरमूल, सोंठ, देवदारु, जवाखार, सज्जीखार, और पांचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण वातज गुल्म और शूलको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—२ माशे।)

(८५०३) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१६)

(भै. र. ; व. से. ; वृ. मा. । शूला. ; ग. नि. । शूला. ३)

सहिङ्गुतुम्बुरुव्योषयमानीचित्रकाभयाः ।
सक्षारलवणाश्चूर्णं पिबेत्प्रातः सुखाम्बुना ॥
विण्मूत्रानिलशूलघ्नं पाचनं वह्निदीपनम् ॥

हींग, तुम्बरु, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, चीतामूल, हर्र, जवाखार और पांचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे प्रातःकाल मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे मल मूत्र और वायुका रुकना तथा शूलका नाश होता है एवं यह पाचन और दीपन है।

(**मात्रा**—२ माशे।)

(८५०४) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१७)

(वृ. नि. र. । शूला.)

हिङ्ग्वक्षार्द्रकुबेराक्षाद्द्राः शूलेम्बुना सुखाः ।
गुडाभयं वा सघृतो रसोनः शूलनुत्परः ॥

हींग १ भाग, बहेड़ा २ भाग, अदरक (सोंठ), ३ भाग और करञ्ज बीज ४ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे जलके साथ सेवन करने से शूल नष्ट होता है।

गुड़में हर्रका चूर्ण मिला कर खानेसे या घीके साथ ल्हसन खानेसे भी शूल नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

(८५०५) हिङ्ग्वादिचूर्णम् (१८)

(ग. नि. । चूर्णा. १; व. से. । गुल्मा.; यो. त. । त. ४६; वृ. नि. र.। वातव्याध्य.; भा. प्र. म. खं. २ । वातव्या.; गुल्मा.; यो. र. । गुल्मा.; भा. प्र. म. खं. २ । गुल्मा.; सु. सं. । चि. स्था. अ. ५; वै. जी. । वि. ३; वृ. यो. त. । त. ९०, ९४; भै. र.; धन्व.; र. र. । गुल्मा.; च. सं. । चि. अ. ५ गुल्मा.; शा. ध. । खं. २ अ. ६)

हिङ्गु त्रिकटुकं पाठां हवुषामभयां शटीम्।
अजमोदाजगन्धे च तिन्तिडीकाम्लवेतसौ॥
दाडिमं पौष्करं धान्यमजाजीं चित्रकं वचाम्।
द्वौ क्षारौ लवणे द्वे च चव्यश्चैकत्र चूर्णयेत्॥
चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमनुपानेष्वनत्ययम्।
प्राग्भक्तमथवा पेयं मद्येनोष्णोदकेन वा॥
पार्श्वहृद्वस्तिशूलेषु गुल्मे वात कफात्मके।
आनाहे मूत्रकृच्छ्रेषु गुदयोनिरुजासु च॥
ग्रहण्यर्शोविकारेषु प्लीह्नि पाण्डवामयेऽरुचौ।
उरोविबन्धे हिक्कायां श्वासे कासे गलग्रहे॥
भावितं मातुलुङ्गस्य चूर्णमेतद्रसेन वा।
बहुशो गुटिका कार्याः कार्मुकाः स्युस्ततोऽधिकाः॥

हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, पाठा, हपुषा हर्र, कचूर, अजमोद, अजवायन, तिन्तड़ीक, अम्लवेत, अनारदाना, पोखरमूल, धनिया, जीरा, चीतामूल, बच, जवाखार, सज्जीखार, सेंधानमक, सञ्चल (काला नमक), और चव्य समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इस चूर्णको नीबूके रसकी अनेक भावनाएं देकर गोलियां भी बना सकते हैं।

इसे भोजनके आरम्भ में मद्य अथवा उष्ण जलके साथ सेवन कराना चाहिये।

इसके सेवनसे पार्श्वशूल, हृदयशूल, वस्तिशूल, वातकफज गुल्म, अफारा, मूत्रकृच्छ्र, गुदपीड़ा, योनिशूल, ग्रहणी विकार, अर्श, प्लीहा, पाण्डु, अरुचि, छातीकी जकड़ाहट, हिचकी, श्वास, कास और गलग्रहका नाश होता है।*

(मात्रा—२ माशे)

*** पाठान्तर—**

सुश्रुत तथा ग. नि. के मतानुसार पीपलामूल और भिलावा अधिक हैं तथा अद्रकके रसकी भावनायें भी लिखी हैं।

वै. जीवन में शटी के स्थान पर करंज है और दाड़िमका अभाव है।

वृ. नि. र. के मतानुसार दाड़िम (अनारदाने)के स्थानमें सारिवा है तथा अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलोहभस्म, लौंग और तुम्बरु अधिक हैं। शा. ध. के मतानुसार पंच लवण लेने चाहिएं।

(८५०६) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (१९)

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

हिङ्गुपिप्पलिपाटल्यौ भार्ङ्गीमेदामहौषधम् ।
रास्नामतिविषाचव्यमेभिर्दोषः प्रसिध्यति ॥
योनिश्च मृद्वी भवति योनिशूलश्च शाम्यति ॥

हींग, पीपल, दो प्रकारका लोध, भरंगी, मेदा, सोंठ, रास्ना, अतीस और चव समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे योनि दोष और योनिशूल नष्ट होकर योनि मृदु हो जाती है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(८५०७) **हिङ्ग्वादिचूर्णम्** (२०)

(भै. र. ; वृ. मा. ; व. से. । शूला.)

हिङ्ग्वम्लकृष्णामलकं यवानी
क्षाराभयासैन्धवतुल्यभागम् ।
चूर्णं पिबेद्वारुणिमण्डमिश्रं
शूले प्रवृद्धेऽनिलजे शिवाय ॥

हींग, अम्लवेत, पीपल, आमला, अजवायन, जवाखार, हर्र और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे सुरामण्ड (मद्यके ऊपरके स्वच्छ भाग) के साथ सेवन करने से प्रवृद्ध वातज शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(८५०८) **हिङ्ग्वादिजलयोगः**

(वृ. नि र. । अतिसारा.)

हिङ्गुशुण्ठीविडङ्गं च सौवर्चलसमन्वितम् ।
कर्षयुग्ममितं तोयं भक्षितं भस्रापहम् ॥

हींग, सोंठ, बायविडंग और सञ्चल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे २॥ तोले पानीमें मिलाकर पीनेसे भस्रातिसारका नाश होता है ।

(मात्रा—४ रत्ती ।)

(८५०९) **हिङ्ग्वादियोगः** (१)

(वृ. नि. र. । छर्द.)

हिङ्गुना सारिवामूलं सर्ववान्तिहरं परम् ।
जातीफलं वमौ शोषे जागरे विप्रयोजयेत् ॥

हींग और सारिवामूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण हर प्रकारकी वमनको नष्ट करता है ।

(मात्रा—१-१ रत्ती चूर्ण १-१ धंटाबाद पानीसे दें) जायफल भी वमन, शोष और निद्रानाशको नष्ट करता है ।

मात्रा—१ रत्ती । पानीमें घिसकर १-१ घंटा बाद पिलावें ।)

(८५१०) **हिङ्ग्वादियोगः** (२)

(वा. भ. । चि. अ. १५)

हिङ्गूपकुल्ये त्रिफलां देवदारु निशाद्वयम् ।
भल्लातकं शिग्रुफलं कटुका तिक्तकं वचाम् ॥
शुण्ठीं माद्रीं घनं कुष्ठं सरलं पटुपञ्चकम् ।
दाहयेज्जर्जरीकृत्य दधिस्नेहचतुष्कवत् ॥
अन्तर्धूमं ततः क्षाराद्विडालपदकं पिबेत्
मदिरादधिमण्डोष्णजलारिष्ट सुरासवैः ॥
उदरं गुल्ममष्ठीलां तून्यौ शोफं विषूचिकाम् ।
प्लीहहृद्रोगगुदजानुदावर्त्तं च नाशयेत् ॥

हींग, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु हल्दी, दारुहल्दी, भिलावा, सहंजनेकी फली, कुटकी, चिरायता, बच, सोंठ, काला अतीस, नागरमोथा, कूठ, सरलकाष्ठ (चीर) और पांचों नमक १-१ भाग लेकर चूर्ण करें और फिर उसमें सबसे ४ गुना दही तथा उतना ही घी मिलाकर हाण्डीमें वन्द करके इस प्रकार जलावें कि धुंवा बाहर न निकले। तदनन्तर हाण्डीके स्वांगशीतल होनेपर निकाल कर पीस लें।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार मदिरा, दही, माण्ड, उष्ण जल, अरिष्ट और आसवमें से किसीके साथ मिलाकर पीनेसे उदररोग, गुल्म, अष्ठीला, तूनी, प्रतितूनि, शोफ, विसूचिका, प्लीहा, हृद्रोग, अर्श और उदावर्तका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—१-१॥ माशा।)

(८५११) हिङ्ग्वादियोगः (३)

(भै. र. ; व. से. । अम्लपित्ता.)

हिङ्गु च कतकफलानि चिञ्चा-
त्वचो घृतश्च पुटदग्धम्।
शमयति तदम्लपित्तमम्ल-
भुजो यदि यथोत्तरं द्विगुणम्॥

हींग १ भाग, कतकफल (निर्मली के बीज) २ भाग और इमली की छाल ४ भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसमें ८ भाग घी मिलाकर हाण्डीमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। तदनन्तर स्वांगशीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

इसके सेवन से अम्ल पदार्थ खानेवाले रोगीका अम्ल पित्त नष्ट होता है।

(मात्रा—१॥-२ माशा।)

(८५१२) हिङ्ग्वादियोगः (४)

(व. से. । मुखरोगा. ; वा. भ. । उ. अ. २२)

हिङ्गुकट्फलकासीससर्जिकाकुष्ठवेल्लजम्।
रदरुजं जयत्याशु वक्त्रस्थं दशने धृतम्॥

हींग, कायफल, कसीस, सज्जी, कूठ और काली मिर्च समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमेंसे ज़रासा चूर्ण पीड़ावाले दांतके नीचे रखने (या मलने)से दन्त पीड़ा शीघ्र ही शान्त हो जाती है।

(८५१३) हिङ्ग्वाद्यं चूर्णम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ९९ ; भै. र. । हृद्रोगा. ; ग. नि. । हृद्रोगा. २६; धन्व. ; वृ. मा. । हृद्रोगा.; यो. त. । त. ४७ ; वृ. नि. र. । हृद्रोगा. ; शा. सं. । खं. २ अ. ६)

हिङ्गूग्रगन्धाविडविश्वकृष्णा
कुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम्।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराढ्यं
यवाम्भसा शूलहृदामयघ्नम्॥

हींग, बच, बिड़लवण, सोंठ, पीपल, कूठ, हर्र, चीता, जवाखार, संचल (काला नमक) और पोखरमूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे जौ के क्वाथके साथ सेवन करने से शूल और हृद्रोगका नाश होता है।

(मात्रा—१॥ माशा।)

(८५१४) हिङ्ग्वाद्यं चूर्णम् (२)

(यो. र. ; भै. र.; वृ. नि. र. ; वृ. मा. । आमवाता. ; ग. नि. । आमवाता. २२ ; भा प्र. । म. खं. २ आम. ; च. द. । आमवाता. २५)

हिङ्गु चव्यं।वडं शुण्ठी कृष्णाजाजी सपौष्करम्।
भागोत्तरमिदं चूर्णं पीतं वातामजिद् भवेत्॥

हींग १ भाग, चव्य २ भाग, बिडलवण ३ भाग, सोंठ ४ भाग, काला जीरा ५ भाग और पोखरमूल ६ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण आमवातको नष्ट करता है।

(**मात्रा**---२-३ माशा।)

(८५१५) हिङ्ग्वाद्यं द्विरुत्तरं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. १ ; वृ. मा. । आनाहा. ; वृ. नि. र. । आनाहा.)

द्विरुत्तरं हिङ्गुवचाग्निकुष्ठं
सुवर्चिका चैव विडङ्गचूर्णम् ।
सुखाम्बुनानाहविषूचिकार्ति
हृद्रोगगुल्मोर्ध्वसमीरणघ्नम् ॥

हींग १ भाग, बच २ भाग, चीतामूल[1] ४ भाग, कूठ ८ भाग, संचल (काला नमक) १६ भाग और बायबिडंग ३२ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करने से अफारा, विसूचिका, हृद्रोग, गुल्म और ऊर्ध्ववायुका नाश होता है।

(**मात्रा**—३ माशा।)

१ वृ. मा. में. चीतामूलका अभाव है

(८५१६) हुताशनं चूर्णम्

(वै. म. र. । पटल ६)

मणिमन्थजीरकाजमोदमागधौषधै-
र्वर्धितैः क्रमेण तैः समं हरीतकीरजः ।
पाचनं विरेचनं प्रदीपनं प्ररोचनं
पायुकीलनाशनं हुताशनाह्वयं तु तत् ॥

सेंधा नमक १ भाग, जीरा २ भाग, अजमोद ३ भाग, पीपल ४ भाग, सोंठ ५ भाग और हर्र १५ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण पाचन, रेचक, अग्नि दीपक, रोचक और अर्शके मस्सोंको नष्ट करने वाला है।

(**मात्रा**—३-४ माशे।)

(८५१७) ह्रीबेरादिचूर्णम्

(व. से. ; वृ. नि. र. । बालरो.)

ह्रीबेरशर्कराक्षौद्रं पीतं तण्डुलवारिणा ।
शिशोः सर्वातिसारघ्नं तृट्छर्दिज्वरनाशनम् ॥

सुगन्धबाला और खांड समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे बच्चोंका अतिसार, तृषा, छर्दि और ज्वर नष्ट होता है।

(**मात्रा**--१ रत्तीसे १ माशा तक।)

(बृहन्निघण्टु रत्नाकरमें इस योगको रक्तातिसार, कास, श्वास और वमन नाशक लिखा है।)

इति हकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ हकारादिगुटिकाप्रकरणम्

हयचोलीवटिका

(र. चं. । रसायना.)

प्र. सं. ३४४ "अश्वकञ्चुकी" देखिये

(८५१८) हरीतक्यादिगुटिका (१)

(र. र. । कासा.)

हरीतकीनागरमुस्तचूर्णं
गुडेन तुल्यं गुटिका विधेया ।
निवारयत्यास्यविधारितेयं
श्वासं प्रवृद्धं प्रबलश्च कासम् ॥

हर्र, सोंठ और नागरमोथेका चूर्ण १-१ भाग लेकर ३ भाग गुड़में मिलाकर गोलियां बनावें ।

इनमेंसे १-१ गोली मुंहमें रखने से प्रवृद्ध श्वास और कासका नाश होता है ।

(**मात्रा**--दिन भर में १ तोला तक ।)

(८५१९) हरीतक्यादिगुटिका (२)

(हरीतक्याद्यो मोदकः)

(वै. र. । कासा ; यो. र. ; वृ. नि. र. ; च. द. । कासा. ११ ; र. र. ; व. से. । कासा ; वृ. यो. त. । त. ७८ ; भा. प्र. म. खं. २ । कासा.)

हरीतकी कणा शुण्ठी मरिचं गुडसंयुतम् ।
कासघ्नो मोदकः प्रोक्तः परं वानलदीपनः ॥

हर्र, पीपल, सोंठ, और काली मिर्चका समान भाग चूर्ण लेकर सबको गुड़में मिलाकर (३-३ माशेकी) गुटिका बना लें ।

इनके सेवनसे खांसीका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है ।

(८५२०) हरीतक्यादिगुटी

(भा. प्र. म. खं. २ । ज्वरा. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

हरीतकीत्रिवृद्दृद्धदारकाणां पृथग्भवेत् ।
पलद्वयं कणाशुण्ठी गुडूची गोक्षुरो वरी ॥
सहदेवी विडङ्गश्च प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
मधुना वटिकां कृत्वा खादञ्ज्वरमपोहति ॥
कासं श्वासं मलस्तम्भं वह्निमान्द्यं नियच्छति ॥

हर्र, निसोत और विधाराका चूर्ण १०-१० तोले, तथा पीपल, सोंठ, गिलोय, गोखरु, शतावर, सहदेवी और बायबिडंगका चूर्ण ५-५ तोले लेकर सबको आवश्यकतानुसार शहद में मिलाकर गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे ज्वर, कास, श्वास, मलावरोध और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

(**मात्रा**--४-५ माशे ।)

(८५२१) हरीतक्यादिवटिका

(ग. नि. । उदरा. ३२)

हरीतकी रोहितकं वचा च
मध्वन्वितानां गुटिकां विधाय ।

सम्भाव्य गोमूत्ररसेन तां तु
सर्वोदरे सोष्णजलेन सेवेत् ॥

हरे, रोहितक (रुहेड़ेकी छाल) और बच; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर गोमूत्रकी (३ या सात) भावना दें और फिर उसमें शहद मिला कर गोलियां बना लें।

इन्हें उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके उदर रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—२-३ माशा।)

(८५२२) हिङ्ग्वादिगुटिका (१)

(धन्व. । शूला.)

हिङ्ग्वम्लवेतसव्योषयमानीलवणत्रिकैः ।
बीजपूररसोपेतैर्गुटिकावातशूलनुत् ॥

हींग, अम्लवेत, सेंठ, काली मिर्च, पीपल, अजवायन, सेंधा नमक, बिड लवण और संचल (काला नमक); इन का चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर बिजौरेके रसमें घोटकर गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे वातज शूल नष्ट होता है।

(मात्रा-१-१॥ माशा। अनुपान-उष्णजल)

हिङ्ग्वादिगुटिका (२)

(भै. र. ; वृ. मा. ; व. से. । गुल्मा. ; वृ. यो. त. । त. ९८)

प्र. सं. ८४८८ "हिङ्ग्वादि चूर्ण" देखिये।

(८५२३) हिङ्ग्वाद्या वटी

(हिङ्ग्वाद्यवटकः)

(वृ. यो. त. । त. ९४ ; र. र. ; व. से. । शूला.)

हिङ्गु सौवर्चलं पाठां द्वौ क्षारौ लवणत्रयम् ।
चूर्णीकृत्य विधातव्यं भिषजा लशुने रसे ॥
कर्षमात्रा वटीः कृत्वा तासामेकां नियोजयेत् ।
हृच्छूले पार्श्वशूले च मन्यास्तम्भे च दारुणे ॥
प्रयोज्या कुक्षिशूले वा भिषजा सिद्धिमिच्छता ॥

हींग, संचल (काला नमक), पाठा, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, काला नमक और बिड नमक; इनका चूर्ण समान भाग लेकर ल्हसनके रसमें खरल करके गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, मन्यास्तम्भ, और कुक्षिशूलका नाश होता है।

मात्रा—१। तोला।

(व्यवहारिक मात्रा—१-१॥ माशा। अनुपान-उष्ण जल)

इति हकारादिगुटिकाप्रकरणम्

अथ हकारादि गुग्गुलुप्रकरणम्

(८५२४) **हरीतक्यादिगुग्गुलुः**

(वृ. नि. र. । आमवाता.)

हरीतकी नागरं च वृद्धदारुसमं समम् ।
द्विगुणं गुग्गुलं दत्त्वा तैलमेरण्डजं तथा ॥
मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातनुत् ॥

हर्र, सोंठ और विधारेकी जड़का चूर्ण १–१ भाग लेकर सबको ६ भाग शुद्ध गूगलमें मिलाकर आवश्यकतानुसार अण्डीका तेल मिलाकर १ दिन खरल करें ।

इसके सेवनसे आमवातका नाश होता है ।
(मात्रा—३ माशे । **अनुपान**—उष्ण जल।)

इति हकारादिगुग्गुलु-प्रकरणम्

अथ हकाराद्यवलेहप्रकरणम्

हरिद्राखण्डः

रस प्रकरणमें देखिये

हरिद्राद्यवलेहः

(ग. नि. । पाण्डुवा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(८५२५) **हरीतकीखण्डः** (१)

(भै. र. ; धन्व. । शूला.)

त्रिफलाब्द चतुर्जातं यमानीकटुकत्रयम् ।
धान्यं मधूरिका चैव शतपुष्पा लवङ्गकम् ॥
प्रत्येकं कार्षिकं ग्राह्यं त्रिवृता स्वर्णपत्रिका ।
पलद्वन्द्वप्रमाणेन सर्वतुल्या हरीतकी ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि सिता तद्द्विगुणा मता ।
दत्त्वैतानि विधानेन क्षीरेणोष्णेन सम्पिबेत् ॥
हन्त्यम्लपित्तं शूलञ्च षडर्शांस्यनिलामयम् ।
कोष्ठवातं कटीशूलमानाहमपि दारुणम् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, अजवायन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, धनिया, मुलैठी, सोया और लौंग; इनका चूर्ण १।–१। तोला तथा निसोत और सनायका चूर्ण १०–१० तोले एवं हर्रका चूर्ण सबके बराबर (४० तोले) और खांड इन सबसे दो गुनी (२ सेर) लेकर खांडकी चाशनी बनाकर उसमें समस्त चूर्ण मिला दें ।

इसे उष्ण दूधके साथ सेवन करनेसे अम्लपित्त, शूल, ६ प्रकारकी अर्श, वातज रोग, कोष्ठगत वायु, कटिशूल, और आनाहका नाश होता है ।

(मात्रा—१ तोला ।)

हरीतकीखण्डः (२)

रस-प्रकरणमें देखिये ।

हरीतकीखण्डः (३)

रस-प्रकरणमें देखिये ।

(८५२६) **हरीतक्यवलेहः (१)**

(ग. नि. । लेह्य. ५)

भार्गीजटापलशतं सलिलार्मणाभ्यां
युक्तं च मूलतुलया सहितं विपाच्य ।
पादस्थिते तु शतमत्र हरीतकीनां
पक्त्व्यमुज्ज्वलगुडस्य शतेन सार्धम् ॥
उत्तार्य तत्र शिशिरे मधुनः पलानि
चत्वारि च त्रिगुणितानि पलत्रयं च ।
व्योषं त्रुटित्वगिभकेसरपत्रकाणा-
मेषां पलं खलु निधेयमथोपयुज्य ॥
श्वासं सकासमपि शोषमथातिहिक्का-
मेकाहिकं ज्वरमपीनसमुत्कटं च ।
हन्याद्रसायनमिदं हि पुरन्दरस्य
प्रोक्तं सहस्रकरपुत्रभिषग्वराभ्याम् ॥

६। सेर भरंगीकी जड़ और ६। सेर दशमूलको कूटकर एकत्र मिलाकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें ६। सेर सफेद गुड़ और १०० हर्रें डालकर पुनः पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार लें और ठंडा होने पर उसमें ९५ तोले शहद एवं ५-५ तोले सोंठ, काली मिर्च, पीपल, इलायची, दालचीनी, नागकेसर, और तेजपात; इनका चूर्ण मिला दें ।

इसके सेवनसे श्वास, कास, शोष, हिचकी, एकाहिक ज्वर और पीनस का नाश होता है ।

(मात्रा—२ हर्र और १ तोला लेह ।)

(८५२७) **हरीतक्यवलेहः (२)**

(ग. नि. । लेह्य. ५)

दशमूलकषायस्य कंसे पथ्याशतं पचेत् ।
दत्त्वा गुडतुलां तस्मिँल्लेहे दद्यात्सुचूर्णितम् ॥
त्रिजातकं त्रिकटुकं किञ्चिच्च यवशूकजम् ।
प्रस्थार्धं च हिमे क्षौद्रात्स निहन्त्युपयोजितः ॥
प्रवृद्ध शोफज्वरमेहगुल्म
कार्श्यामवाताम्लकरक्तपित्तम् ।
वैवर्ण्यमूत्रानलशुक्रदोष
श्वासारुचिप्लीहगरोदरांश्च ॥

दशमूलके ८ सेर क्वाथमें १०० हर्रें (साबित) और ६। सेर गुड़ मिलाकर पकावें । जब लेह तैयार हो जाय तो उसमें दालचीनी, तेजपात, इलायची, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और जवाखार; इनका १।-१। तोला चूर्ण मिला दें एवं ठंडा होने पर आधा सेर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे प्रवृद्ध शोथ, ज्वर, प्रमेह गुल्म, कार्श्य, आमवात, अम्लपित्त, रक्तपित्त विवर्णता, मूत्रदोष, अग्निविकार, शुक्रदोष, श्वास, अरुचि, प्लीहा, गरदोष और उदररोगोंका नाश होता है ।

(मात्रा—२ हर्र और १ तोला लेह ।)

हरीतक्यादिपाकः

रसप्रकरणमें देखिये ।

इति हकाराद्यवलेहप्रकरणम्

अथ हकारादिघृतप्रकरणम्

(८५२८) हरिद्रादिघृतम्

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. २० पाण्डुवा. ; व. से. ; ग. नि. । पाण्डुवा. ; च. द. ; भै. र. ; वृ. मा. ; यो. र. । पाण्डुवा.)

हरिद्रात्रिफलानिम्बबलामधुकसाधितम् ।
सक्षीरं माहिषं सर्पिः कामलाहरमुत्तमम् ॥

कल्क—हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, बला (खैरटी की जड़), और मुलैठी समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ बारीक पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त वस्तुएं समान भाग मिश्रित २ सेर लेकर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर रहने पर छान लें।

२ सेर भैंसके घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ तथा ४ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो घीको छान लें।

यह घृत कामलाको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—१-२ तोला ।)

(८५२९) हरीतक्यादिघृतम्

(व. से. । हृद्रोगा.)

हरीतकीपुष्करनागराह्वै-
र्यवैर्वयस्थालवणैश्च कल्कैः ।
सहिङ्गुभिः साधितमेव सर्पि-
र्हितञ्च हृत्पार्श्वगदेऽनिलोत्थे ॥

कल्क—हर्र, पोखरमूल, सोंठ, जौ, आमला, सेंधा नमक और हींग, समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानीके साथ पीस लें।

२ सेर घी में यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत वातज हृद्रोग और पार्श्व शूलादिमें उपयोगी है।

(**मात्रा**—१ से दो तोले तक ।)

(८५३०) हवुषादिघृतम्

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ५ गुल्मा. ; भै. र. ; वृ. मा. ; धन्व. ; र. र. । गुल्मा. २९ ; ग. नि. । घृता. १ ; वा. भ. । चि. अ. १४ गुल्मा. ; व. से. । गुल्मा.)

हवुषा व्योषपृथ्वीकाचव्यचित्रकसैन्धवैः ।
साजाजीपिप्पलीमूलदीप्यकैर्विपचेद् घृतम् ॥
मातुलुङ्गदधिक्षीरकोलमूलकदाडिमैः ।
रसैस्तद्वातगुल्मानं शूलानाहविमोक्षणम् ॥
योन्यर्शोग्रहणीदोषश्वासकासारुचिज्वरान् ।
वातहृत्पार्श्वशूलञ्च घृतमेतद्व्यपोहति ॥

कल्क—हपुषा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हिंगुपत्री (पाठान्तरके अनुसार मुनक्का), चव, चीतामूल, सेंधा नमक, जीरा, पीपलामूल और अजवायन समान भाग मिलित २० तोले लेकर पानीके साथ बारीक पीस लें।

द्रव पदार्थ—बिजौरेका रस, दही, दूध, बेरका क्वाथ, मूलीका क्वाथ, और अनारका रस २-२ सेर ।

२ सेर घी में उपरोक्त कल्क और द्रव पदार्थ मिला कर मंदाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत वातज गुल्म, शूल, आनाह (अफारा) योनिरोग, अर्श, ग्रहणी विकार, श्वास, कास, अरुचि, ज्वर, वातरोग और पार्श्वशूलको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**--१-२ तोला ।)

(८५३१) **हिङ्ग्वादिघृतम्** (१)

(च. सं. । चि. स्था. अ. ५ गुल्मा. ; व. से.; वा. भ. । चि. अ. १४ ; सु. सं. । चि. अ. ४२ गुल्मा.)

हिङ्गुसौवर्चलाजाजीविडदाडिमदीप्यकैः ।
पुष्करव्योषधान्याम्लवेतसक्षार चित्रकैः ॥
शठीबचाजगन्धैलासुरसैश्च विपाचितम् ।
शूलानाहहरं सर्पिर्दध्ना चानिलगुल्मिनाम् ॥

कल्क—हींग, संचल, (काला नमक), जीरा, विड नमक, अनारदाना, (या अनारकी जड़की छाल), अजमोद, पोखरमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, अम्लवेत, जवाखार, चीतामूल, कचूर, वच, अजमोद, इलायची और तुलसी समान भाग मिश्रित २० तोले।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर दही मिलाकर पकावें ।

यह घृत वात-गुल्म, शूल और आनाहको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—१-२ तोला ।)

(८५३२) **हिङ्ग्वादिघृतम्** (२)

(वृ. मा. ; व. से.; यो. र.; र. र. । उन्मादा.; ग. नि. । उन्मादा. १; यो. त. । त. ३८ ; वृ. यो. त. । त. ८८ ; च. द. । उन्मादा. २० ; वा. भ. । उ. अ. ६)

हिङ्गुसौवर्चलव्योषैर्द्विपलांशैर्घृताढकम् ।
चतुर्गुणे गवां मूत्रे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥

कल्क—हींग, संचल (कालानमक), सोंठ, मिर्च और पीपल १०-१० तोले ।

८ सेर घीमें यह कल्क और ३२ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावें ।

यह घृत उन्मादको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—१-२ तोला ।)

(८५३३) **हिङ्ग्वादिघृतम्** (३)

(वा. भ. । उ. अ. ५ ; ग. नि. । भूतोन्मादा. १)

हिङ्गुसर्षपषड्ग्रन्था व्योषैरर्द्धपलोन्मितैः ।
चतुर्गुणे गवां मूत्रे घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
तत्पाननावनाभ्यङ्गैर्देवग्रहविमोक्षणम् ॥

कल्क—हींग, सरसों, बच, सोंठ, मिर्च और पीपल २॥-२॥ तोले ।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावें ।

इसे पीने, तथा इसकी नस्य लेने और मालिश करनेसे देवग्रहजनित उन्माद नष्ट होता है ।

(८५३४) हिङ्ग्वादिघृतम् (४)

(वृ. यो. त. । त. ९८; यो. र. । गुल्मा.)

हिङ्गु पुष्करमूलानि तुम्बरूणि हरीतकी ।
श्यामा बिडं सैन्धवं च यवक्षारं महौषधम् ॥
यवक्वाथोदकेनैतद् घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥

कल्क—हींग, पोखरमूल, तुम्बरु (नेपाली धनिया), हर्र, काली निसोत, बिड नमक, सेंधा नमक, जवाखार और सोंठ समान भाग मिलित २० तोले ।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर जौका क्वाथ मिलाकर पकावें ।

यह घृत शूल और उपद्रवयुक्त गुल्मको नष्ट करता है ।

(८५३५) हिंस्रादिघृतम्

(वृ. मा.; व. से.; च. द. । हिक्काश्वासा. १२)

हिंस्राविडङ्गपूतीकत्रिफलाव्योषचित्रकैः ।
द्विक्षारं सर्पिषः प्रस्थं चतुर्गुणजलान्वितम् ॥
कोलमात्रैः पचेत्तद्धि श्वासकासौ व्यपोहति ।
अर्शांस्यरोचकं गुल्मं शकृद्भेदं क्षयं तथा ॥

कल्क—कटेली, बायबिड़ंग, पूतिकरञ्जकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, जवाखार और सज्जीखार १।-१। तोला ।

२ सेर घीमें ८ सेर पानी और यह कल्क मिलाकर पकावें ।

यह घृत श्वास, कास, अर्श, अरुचि, गुल्म, अतिसार और क्षयको नष्ट करता है ।

(८५३६) हिंस्राद्यघृतम्

(हा. सं. । स्थान ३ अ. १४)

हिंस्रात्रिगन्धकृमिशत्रुकरञ्जकाश्च
व्योषंफलत्रिकमथाजपयोजलेन ।
पक्वाज्यपानकविधानमपि प्रशस्तं
श्वासं च पञ्चविधमाशु निहन्ति हिक्काम् ॥

कल्क—कटेली, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बायबिड़ंग, करञ्जकी छाल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग मिलित २० तोले ।

२ सेर घीमें यह कल्क और ४-४ सेर बकरीका दूध तथा पानी मिलाकर पकावें ।

इसे पीनेसे पांच प्रकारके श्वास और हिचकी का शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

(मात्रा—१-२ तोले ।)

(८५३७) ह्रीबेरादिघृतम्

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ९ अर्शो. ; व. से. ; यो. र । अर्शो.)

ह्रीबेरमुत्पलं रोध्रं समङ्गाचव्यचन्दनम् ।
पाठा सातिविषा बिल्वं धातकी देवदारु च ॥
दार्वीत्वङ्नागरं मांसीं मुस्तं क्षारो यवाग्रजः ।
चित्रकश्चेति पेष्याणि चाङ्गेरीस्वरसो घृतम् ॥
एकध्यं साधयेत्सर्वं तत्सर्पिः परमौषधम् ।
अर्शोऽतिसारग्रहणीपाण्डुरोगज्वरारुचौ ॥
मूत्रकृच्छ्रे गुदभ्रंशे बस्त्यानाहे प्रवाहने ।
पिच्छास्रावेऽर्शसां शूले योज्यमेतत्त्रिदोषनुत् ॥

कल्क—सुगंधबाला, नीलोत्पल, लोध, मजीठ, चव, सफेद चन्दन, पाठा, अतीस, बेलगिरी, धायके फूल, देवदारु, दारुहल्दी, दालचीनी, सोंठ, जटामांसी, नागरमोथा, जवाखार और चीतामूल समान भाग मिलित २० तोला।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर चांगेरीका स्वरस मिलाकर पाक सिद्ध करें।

यह घृत अर्श, अतिसार, संग्रहणी, पाण्डु, ज्वर, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र, गुदभ्रंश, पेडू फूलना, प्रवाहिका, पिच्छास्राव, शूल और त्रिदोषज अर्शकी महौषध है।

(**मात्रा**—१–२ तोला।)

इति हकारादि घृतप्रकरणम्

अथ हकारादितैलप्रकरणम्

(८५३८) हरिद्रादितैलम् (१)

(व. से. । क्षुद्ररोगा.)

हरिद्रागुल्मकालीयकल्कैश्च सरसाञ्जनैः।
सिद्धेन तिलतैलेन ततस्तु रोपयेद्व्रणम्॥

कल्क—हल्दी, गठीवन, दारुहल्दी और रसौत समान भाग मिलित २० तोले लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और आठसेर पानी मिलाकर पाक करें।

यह तैल व्रणोंको नष्ट करता है।

(८५३९) हरिद्रादितैलम् (२)

(यो. र. । प्रमेहा.)

निशारसं चतुष्प्रस्थं द्विप्रस्थक्षीरसंयुतम्।
कुष्ठाश्वगन्धालशुननिशापिप्पलिकल्कितम्॥
विपक्वं तिलजप्रस्थं मेहानां विंशतिं जयेत्॥

कल्क—कूठ, असगन्ध, लहसन, हल्दी और पीपल ४–४ तोले लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ८ सेर हल्दीका स्वरस तथा ४ सेर दूध मिलाकर पकावें।

यह तेल २० प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करता है।

(८५४०) हरिद्रादितैलम् (३)

(र. र. । कुष्ठा.)

हरिद्रे पथ्याकुष्ठञ्च घनं सहरितालकम्।
विभीतकं मुस्तकञ्च कटुतैलं मनःशिला॥
एतद्विचूर्ण्य सम्मिश्र्य रौद्रे तु परिपाचयेत्।
विचर्चिकापामादद्रुखजकुष्ठहरं परम्॥

हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, कूठ, मोथा, हरताल, बहेड़ा, नागरमोथा और म[illegible]सिल का (समान भाग मिलित २० तोले) चूर्ण लेकर सबको २ सेर सरसोंके तेलमें मिलाकर धूपमें रक्खें (और एक या दो सप्ताह पश्चात् छान लें।)

यह तैल विचर्चिका, पामा, दाद और कुष्ठको नष्ट करता है।

(८५४१) हरिद्रादितैलम् (४)

(भा. प्र. । म. खं. २ मुखरोगा.; यो. र. ; व. से. । मुखरोगा.; वृ. नि. र. । मुखरोगा.)

हरिद्रानिम्बपत्राणि मधुकं नीलमुत्पलम् ।
तैलमेभिर्विपक्तव्यं मुखपाकहरं परम् ॥

कल्क—हल्दी, नीमके पत्ते, मुलैठी और नीलोफर २॥-२॥ तोले लेकर पानीके साथ बारीक पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त द्रव्य ४०-४० तोला लेकर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

१ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पकावें। पानी जल जाने पर तेलको छान लें।

यह तेल मुखपाकको नष्ट करता है।

(८५४२) हरिद्रादितैलम् (५)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४२)

हरिद्रासमङ्गा सुराह्वं सचित्रं
विडङ्गानि कृष्णां विषालाबु कुष्ठम् ।
तथालाङ्गली चक्रमर्दं च गुञ्जा
विशालातथारिष्टपत्राणि चैतत् ॥
विचूर्णं कृतं भावितं चार्कदुग्धे-
न तैलं विपाच्यं नरस्यातिशोग्रम ।
हितं लेपेन कुष्ठपामाविचर्चिं
निहन्ति तथेदं हरिद्रादितैलम् ॥

कल्क—हल्दी, मजीठ, देवदारु, चीतामूल, बायविडंग, पीपल, अतीस, कड़वी तूंबीके बीज, कूठ, लाङ्गली (कलियारी), पंवाड़, गुंजा, इन्द्रायन, और नीमके पत्ते समान भाग मिलित २० तोले लेकर बारीक चूर्ण करके उसे आकके दूधकी भावना दें।

२ सेर तेलमें यह कल्क (और ८ सेर पानी) मिलाकर तैल सिद्ध करें।

यह तैल कुष्ठ, पामा (खुजली) और विचर्चिका को नष्ट करता है।

(८५४३) हरिद्रादितैलम् (६)

(वै. म. र । पटल १२)

जानुप्रदेशजनितानिलनाशनाय-
तैलं निशामिशिसुरद्रुमदेवधूपैः ।
सिद्धं जले लिकुचजन्मनि शस्तमेत-
च्छोफोग्रतोदसहिते रुधिरस्रुतौ च ॥

कल्क—हल्दी, सौंफ, देवदारु और धूप सरल ५-५ तोला लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ८ सेर लकुच (बड़ल)का रस मिलाकर पकावें।

यह तैल जानु की वायु, शोथ, उग्र पीड़ा और रुधिरस्रावको नष्ट करता है।

(८५४४) हरिद्रादितैलम् (७)
(हरिद्राद्वयतैलम्)

(ग. नि. । क्षुद्ररोगा. १० ; वृ. मा. ; च. द. । क्षुद्ररोगा. ५४ ; व. से.)

हरिद्राद्वययष्ट्याह्वकालीयककुचन्दनैः ।
प्रपौण्डरीकमञ्जिष्ठापद्मपद्मककुङ्कुमैः ॥
कपित्थतिन्दुकप्लक्षवटपत्रैः पयोन्वितैः ।
लेपयेत्कल्कितैरेभिस्तैलं वाऽभ्यञ्जनं चरेत् ॥

पिप्लुकान् नीलिकाव्यङ्गां-
स्तिलकान्मुखदूषिकान् ।
नित्यसेवी जयेत्क्षिप्रं मुखं कुर्यान्मनोरमम् ॥

कल्क—हल्दी, दारुहल्दी, मुलैठी, कालीयक (काला चन्दन), लालचन्दन, पुण्डरिया, मजीठ, कमलपुष्प, पद्माक, केसर, कैथके पत्ते, तेन्दुके पत्ते, पिलखनके पत्ते, और बड़के पत्ते समान भाग मिलित २० तोले लेकर कल्क बनावें ।

२ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ८ सेर दूध मिलाकर पाक सिद्ध करें ।

इस तेलकी हमेशा मालिश करनेसे पिप्लु (जतुमणि), नीलिका, व्यङ्ग (झांई), तिल और मुखदूषिका आदिका शीघ्र नाश होकर मुख सुन्दर हो जाता है ।

कल्ककी औषधियोंको दूधमें पीसकर लेप करनेसे भी यही लाभ होता है ।

(८५४५) हरिद्राद्यतैलम्

(व. से. । मुखरोगा., शिरोरोगा.)

उभे हरिद्रे पिप्पल्यः सैन्धवं देवदारु च ।
विडङ्गं चित्रकं बिल्वं रोहिषस्य च पल्लवाः ॥
गन्धं सौवर्चलं द्राक्षा मञ्जिष्ठा मधुकं बला ।
वेतसस्य च मूलानि पद्मकोशीरचन्दनैः ॥
बिल्वप्रमाणैः कल्कैस्तु तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
द्विगुणं च पयो दद्यात् तत्सिद्धं नश्यतां नयेत् ॥
श्लेष्मजं सन्निपातोत्थं शिरोरोगं नियच्छति ।
उपजिह्वां च मालाञ्च कण्ठशालूकमर्बुदम् ॥
विदारिकां मांसपाकं मुखशोफं गलग्रहम् ।
दन्तचालं हनुस्तम्भं तैलमेतन्नियच्छति ॥

कल्क—हल्दी, दारुहल्दी, पीपल, सेंधा नमक, देवदारु, बायबिड़ंग, चीतामूल, बेलकी छाल, रोहिष घासके पत्ते, अगर, संचल (कालानमक), दाख, मजीठ, मुलैठी, खरैटी, बेतकी जड़, पद्माख, खस और सफेद चन्दन ५-५ तोले लेकर कल्क बनावें ।

२ सेर तैलमें यह कल्क और ४ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाए तो तेलको छान लें ।

यह तैल कफज और सान्निपातिक शिरो रोग, उपजिह्वा, गण्डमाला, कण्ठशालूक, अर्बुद, विदारिका, मांसपाक, मुखकी सूजन, गलग्रह, दन्तचालन और हनुस्तम्भ को नष्ट करता है ।

(८५४६) हंसपादीतैलम्

(च. द. । नाडीव्रणा. ४४ ; भै. र. । नाडीव्रणा.)

हंसपाद्यरिष्टपत्रं जातीपत्रं ततो रसैः ।
तत्कल्कैर्विपचेत्तैलं नाडीव्रणविरोहणम् ॥

कल्क—हंसपादी, नीमके पत्ते और चमेलीके पत्ते समान भाग मिलित २० तोला ।

द्रव पदार्थ—उपरोक्त तीनों प्रकारके पत्तों का रस समान भाग मिलित ८ सेर ।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और रस मिलाकर यथाविधि तैल पाक करें ।

यह तैल नाड़ीव्रण (नासूर)को भरता है ।

(८५४७) हिङ्ग्वादितैलम् (१)

(ग. नि. । नासा. ४ ; वृ. नि. र. ; यो. र. वृ. यो. त. । त. १३०; यो. त. । त. ७२)

हिङ्गुव्योषविडङ्गकट्फलवचारुक्तीक्ष्णगन्धायुते-
र्लाक्षाहेमवतीकलिङ्गकयवै[१] पुष्पोद्भवैः सौरसैः ।

१ पाठान्तर—लाक्षा श्वेतपुनर्नवा कुटजैः पुष्पो....।

इत्येभिः कटुतैलमेतदनले मन्दे समूलं भृतं पीतं नासिकया यथाविधि भवेन्नासामयिभ्यो हितम् ॥

कल्क—हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, कायफल, बच, कूठ, छोटी इलायची, लाख, स्वर्ण-जीवन्ती, इन्द्रजौ, और तुलसीके फूल समान भाग मिश्रित २० तोला।

२ सेर सरसों के तेलमें यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पाक सिद्ध करें।

इसे नासिका द्वारा पीने से नासारोग नष्ट होते हैं।

(८५४८) हिङ्ग्वादितैलम् (२)

(भै. र. ; व. से. ; वृ. नि. र. ; यो. र. ; र. र. ; वृ. मा. । कर्णरोगा. ; वृ. यो. त. । त. १२९ ; यो. त. । त. ७० ; शा. सं. । खं. २ अ. ९ ; भा. प्र. म. खं. २ । कर्णरोगा.)

हिङ्गुतुम्बुरुशुण्ठीभिः साध्यं तैलन्तु सार्षपम् ।
कर्णशूले प्रधानन्तु पूरणं हितमुच्यते ॥

कल्क—हींग, तुम्बरु (नेपाली धनिया) और सोंठ समान भाग मिलित २० तोले।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ८ सेर पानी या (इन्हीं द्रव्योंका क्वाथ) मिलाकर तैल सिद्ध करें।

इसे कानमें भरनेसे कर्णशूल नष्ट होता है।

(नोट—पाठान्तर के अनुसार तुम्बरुके स्थानमें सेंधा नमक है।)

(८५४९) हिमसागरतैलम्

(भै. र. ; धन्व. । वातव्या.)

शतावरीरसप्रस्थे विदार्य्याः स्वरसे तथा ।
कूष्माण्डकरसप्रस्थे धात्र्याश्च स्वरसे तथा ॥
शाल्मल्याः स्वरसप्रस्थे तथा गोक्षुरकस्य च ।
नारिकेलरसप्रस्थे तिलतैलस्य प्रस्थतः ॥
कदल्याः स्वरसप्रस्थे क्षीरप्रस्थचतुष्टये ।
अस्यौषधस्य कल्कस्य प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥
चन्दनं तगरं वाप्यं मञ्जिष्ठा सरलागुरुः ।
मांसी मुरा च शैलेयं यष्टी दारु नखी शिवा ॥
पूतिका पोतिकापत्रं कुन्दुरुर्नलिका तथा ।
वरी लोध्रं तथा मुस्तं त्वगेलापत्रकेशरम् ॥
लवङ्गं जातिकोषश्च तथा मधुरिका शटी ।
चन्दनं ग्रन्थिपर्णश्च कर्पूरं लाभतः क्षिपेत् ॥
अस्य तैलस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम् ।
उच्चैः प्रपततो वायोर्गजतो वाजिनस्तथा ॥
उद्भूतो लोष्टपाताच्च पङ्गूनां पीठसर्पिणम् ।
एकाङ्गशोषिणाञ्चैव तथा सर्वाङ्गशोषिणाम् ॥
क्षतानां क्षीणशुक्राणामत्यन्तक्षयरोगिणाम् ।
हनुमन्याहतानाञ्च दुर्बलानान्तथैवच ॥
शोषिणां लल्लाजिह्वानां तथा मिन्मिनभाषिणाम् ।
अत्यन्तदाहयुक्तानां क्षीणानां वातरोगिणां ॥
एतत्तैलं परं श्रेष्ठं विष्णुना परिकीर्तितम् ।
हिमसागरमाख्यातं सर्ववातविकारनुत् ॥
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवा ।
शिरोमध्यगता ये च शाखामाश्रित्य ये स्थिताः॥
ते सर्वे प्रशमं यान्ति तैलस्यास्य प्रसादतः ॥

द्रव पदार्थ—शतावरका रस २ सेर, विदारीकन्दका रस २ सेर, कुष्माण्ड (भूरे कुम्हड़े-पेठे)

का रस २ सेर, आमलेका स्वरस २ सेर, सेंमलकी जड़का रस २ सेर, गोखरु का रस (या क्वाथ) २ सेर, नारियलका पानी २ सेर, केलेका रस २ सेर और दूध ८ सेर।

कल्क—सफेद चन्दन, तगर, कूठ, मजीठ, सरलकाष्ठ, अगर, जटामांसी, मुरामांसी, शैलज (भूरि छरीला), मुलैठी, देवदारु, नखी, हर्र, पूतिका (खट्टाशी—जुन्दबेदस्तर), हल्दीके पत्ते, कुन्दरु, नलिका, शतावर, लोध, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, लौंग, जावत्री, सौंफ, कचूर, लालचन्दन, गठिवन और कपूर १।-१। तोला लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और उपरोक्त समस्त द्रव पदार्थ मिलाकर यथाविधि तैल सिद्ध करें।

गुण—यह तैल ऊंचे स्थानोंसे या घोड़े, हाथी अथवा ऊंट आदि से गिरनेसे उत्पन्न हुई वातज वेदनाको नष्ट करता है। पत्थर आदिसे लगी चोटको आराम करता है। पंगुता, पीठसर्पिता, एकाङ्गशोष (किसी अङ्गका सूखना), और सर्वांग-शोषमें यह तैल गुणकारी है तथा क्षत, शुक्र, क्षय, उग्र राजयक्ष्मा, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, निर्बलता, तोतला बोलना, मिनमिनाना, अत्यन्त दाह, क्षीणता, समस्त वातविकार, पित्तज रोग, शिरोरोग और शाखाओंकी व्याधियोंमें अत्युत्तम है।

(८५५०) हिंस्राद्यं तैलम् (१)

(व. से. । गलगण्डा.)

हिंस्रावचागुडूचीत्रिफलाऽनलदारुपिप्पलीकल्कैः।
भृङ्गस्वरसैः सिद्धं तैलं गलगण्डजिन्मधुना॥

कल्क—जटामांसी, बच, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीतामूल, देवदारु और पीपल समान भाग मिलित २० तोला लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर भंगरेका रस मिलाकर यथाविधि तैल पाक करें।

इसमें शहद मिलाकर प्रयुक्त करनेसे गल-गंडका नाश होता है।

(इसे पीना और गलगण्ड पर मलना चाहिये।)

(८५५१) हिंस्राद्यं तैलम् (२)

(व. से. ; भै. र. । नाडीव्रणा.)

हिंस्रां हरिद्रां कटुकां वचाञ्च
गोजिह्विकाञ्चापि सबिल्वमूलम्[1]।
संहृत्य तैलं विपचेद् व्रणस्य
संशोधनपूरणरोपणञ्च॥

कल्क—जटामांसी, हल्दी, कुटकी, बच, गोजिह्वा और बेलकी जड़की छाल (पाठान्तरके अनु-सार बृहत्पंचमूल) समान भाग मिलित २० तोले लेकर कल्क बनावें।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां समान भाग मिलित ४ सेर लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर यथाविधि तैल पाक करें।

यह तेल व्रणोंको शुद्ध करके भरदेता है।

(८५५२) हेमसुन्दरतैलम्

(यो. त. । त. ७५)

आर्द्रहेमफलं पिष्ट्वा कटुतैलं चतुर्गुणम्।
विपचेद्घटिकायुग्मं तत्तैलं हेमसुन्दरम्॥
दुष्टप्रस्वेदशमनं सूतिका दोषनाशनम्॥

१ स पञ्चमूलमिति पाठान्तरम्

धतूरेके ताजे फलोंका रस १ सेर और कड़वा तेल ४ सेर लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर २ घड़ी तक पकावें (इतने समयमें पानी जल जायगा) फिर तेलको छान लें।

यह तेल दुष्ट प्रस्वेद (पसीने) और सूतिका-विकारोंको नष्ट करता है।

(८५५३) ह्रीवेराद्यं तैलम्

(भै. र. । रक्तपि.)

ह्रीवेरं नलदं लोध्रं पद्मकेशरपत्रकम् ।
नागपुष्पश्च बिल्वश्च भद्रमुस्तां तथा शठी ॥
चन्दनश्चैव पाठा च कुटजस्य फलत्वचम् ।
त्रिफला शृङ्गवेरश्च भूतवासत्वचस्तथा ॥
आम्रास्थिजम्बुसारास्थि मूलं रक्तोत्पलस्य च ।
एतेषां कार्षिकैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
लाक्षारसाढकश्चैव क्षीरं स्नेहसमं भवेत् ।
रक्तपित्तश्च त्रिविधं नाशयेदविकल्पतः ॥
कासं पञ्चविधं हन्ति तथा श्वासमुरःक्षतम् ।
ह्रीवेराद्यमिदं तैलं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितं विश्वसम्पदे ॥

कल्क——सुगन्धबाला, खस, लोध, कमलकेसर, तेजपात, नागकेसर, बेलगिरी, नागरमोथा, कचूर, सफेद चन्दन, पाठा, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, त्रिफला, सोंठ, बहेड़ेकी छाल, आमकी गुठली, जामनकी गुठली और लाल कमलकी जड़ १।-१। तोला लेकर कल्क बनावें।

२ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ८ सेर लाखका रस तथा २ सेर दूध मिलाकर यथाविधि पाक सिद्ध करें।

यह तेल तीनों प्रकारके रक्तपित्तको अवश्यही नष्ट कर देता है। इसके अतिरिक्त यह पांच प्रकारकी खांसी, उरःक्षत और श्वासको भी नष्ट करता तथा बलवर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है।

इति हकारादितैलप्रकरणम्

अथ हकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

हपुषादितक्रारिष्टः

(यो. र. । अर्शो.)

प्र. सं. २४८३ तक्रारिष्ट देखिये ।

(८५५४) हरीतक्यासवः

(ग. नि. । आसवा. ६)

हरीतकीनां प्रस्थार्धं धात्रीप्रस्थद्वयं तथा ।
दशमूलशतार्धं च पौष्करं च तदर्धकम् ॥
तत्तुल्यं चित्रकं दद्याच्चित्रकार्धा दुरालभा ।
गुडूच्या विंशतिपलं विशाला पलपञ्चकम् ॥
खदिरस्य पलान्यष्टौ तदर्धं बीजपूरकम् ।
मञ्जिष्ठा मधुकं कुष्ठं कपित्थं देवदारुकम् ॥
विडङ्गं चविका रोध्रं भार्ङ्गी स्यादेलवालुकम् ।
संवर्तकं पिप्पलीं च क्रमुकं शठिमुग्रभम् ॥
प्रियङ्गुसारिवामांसीनागकेसररेणुकम् ।
त्रिवृतां रजनीं रास्नां मेषशृङ्गीं पुनर्नवम् ॥
शताह्वां रोहिणीं दन्तीं पलांशान्काथयेज्जले ।
चतुर्थपादशेषे तु द्राक्षां षष्टिपलां क्षिपेत् ॥
त्रिंशत्पलानि धातक्या गुडाच्छुद्धाच्चतुः शतम् ।
द्वात्रिंशत्पलिकं क्षौद्रं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
भाण्डे पुराणे सुस्निग्धे मांसीमरिचधूपिते ।
धूपिते च पुनर्दद्यात्पिप्पलीनां पलद्वयम् ॥
जातीफलं लवङ्गं च त्वगेलापत्रकेसरान् ।
कर्षमात्रां च नेपालीं दत्त्वा पक्षं निधापयेत् ॥
कतकफलचूर्णेऽपि क्षिप्ते निर्मलता भवेत् ।
पक्षादूर्ध्वं पिबेद्यस्तु मात्रया च यथाबलम् ॥
धातुक्षयं जयेत्पीतः कासं पञ्चविधं तथा ।
अर्शांसि षट्प्रकाराणि तथाष्टावुदराणि च ॥
प्रमेहं च महाव्याधिमरुचिं पाण्डुतां तथा ।
सर्वान् वातान् तथाप्यामं श्वासं छर्दिं तथैव च ॥
अष्टादशैव कुष्ठानि शोषं शूलं भगन्दरम् ।
शर्करां मूत्रकृच्छ्रं च ह्यश्मरीं च विनाशयेत् ॥
कृशानां च महापुष्टिं कुरुते च महाबलम् ।
महावेगो महातेजा महावीर्यबलोद्धतः ॥
कामपुष्टिं करोत्येष वन्ध्यानां पुत्रदो भवेत् ॥

हर्रकी बकली आधा सेर, आमला २ सेर, दशमूल ३ सेर १० तोले, पोखरमूल १॥ सेर ५ तोले, चीतामूल १॥ सेर ५ तोले, धमासा ६२॥ तोले, गिलोय १। सेर, इन्द्रायनकी जड़ २५ तोले, खैरसार ४० तोले, बिजौरेकी छाल २० तोले तथा मजीठ, मुलैठी, कूठ, कैथकी छाल, देवदारु, बाय-बिडंग, चव, लोध, भारंगी, एलवालु, नागरमोथा, पीपल, सुपारी, कचूर, पद्माख, फूलप्रियंगु, सारिवा, जटामांसी, नागकेसर, रेणुका, निसोत, हल्दी, रास्ना, मेढासिंगी, पुनर्नवा (बिसखपरा), सोया, कुटकी और दन्तीमूल ५–५ तोले लेकर सबको कूटकर ८ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ३॥ सेर मुनक्का कूट कर डाल दें और फिर १ सेर ७० तोले धायके फूलोंका चूर्ण तथा २५ सेर शुद्ध गुड़ और २ सेर शहद मिलाकर सबको जटामांसी और काली मिर-चसे धूपित मिट्टीके घृतलिप्त पुराने पात्रमें भरदें तद-

न्तर उसमें पीपलका चूर्ण १० तोले तथा जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची तेजपात और नागकेसर इनका चूर्ण एवं कस्तूरी १।-१। तोला मिलाकर मुख बन्द करके रख दें और १५ दिन पश्चात् उसमें निर्मलीके बीजोंका चूर्ण डाल दें कि जिससे आसव निर्मल हो जायगा। इसके १५ दिन पश्चात् छान कर बोतलोंमें भर दें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे धातु-क्षय, ५ प्रकारकी खांसी, ६ प्रकारका अर्श, ८ प्रकारके उदर रोग, प्रमेह, अरुचि, पाण्डु, समस्त वातव्याधि, आम, श्वास, छर्दि, अठारह प्रकारके कुष्ठ, शोष, शूल, भगन्दर, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरीका नाश होता है। यह अत्यन्त बलवीर्य और कामशक्ति वर्द्धक तथा वृषणोंको पुष्ट करनेवाला है। इसके प्रभावसे वन्ध्या स्त्रीको भी पुत्र प्राप्ति होती है।

इति हकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम् ।

अथ हकारादि-लेप-प्रकरणम्

(८५५५) हयादिलेपः

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

हयवेल्लाग्निभल्लातदन्तीरम्पाकनिम्बजैः ।
काञ्जिकैः पेषितैर्लेपः श्वेतकुष्ठविनाशकृत् ॥

असगन्ध, बायबिडंग, चीता, भिलावा, अमलतासकी छाल, और निबौली (नीमके बीज) समान भाग लेकर कांजीमें पीसकर लेप करनेसे श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है।

(८५५६) हरितालादि लेपः (१)

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

हरितालभाग एको भागाः पञ्चैव शङ्खचूर्णस्य ।
भागः पलाशभस्मत एतल्लेपात्कचा न स्युः ॥

हरताल का चूर्ण १ भाग, शंखका चूर्ण ५ भाग, और पलाश (ढाक)की राख १ भाग लेकर सबको एकत्र खरल कर लें।

(पानीमें घोलकर) इसका लेप करनेसे बाल गिर जाते हैं।

(८५५७) हरितालादिलेपः (२)

(वै. म. र. । पट. १८)

हरितालवचाकुष्ठचूर्णं पीतवटच्छदम् ।
अद्भिः पिष्ट्वा मुखे लिम्पेद्व्यङ्गलोपनलोलुपः ॥

हरताल, बच, कूठ, और बड़के पीले पत्ते समान भाग लेकर पानीमें पीसकर लेप करनेसे मुखव्यंग (झांई)का नाश होता है।

(८५५८) हरितालादिलेपः (३)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६ ; रा. मा. । कुष्ठा. ८)

गोमूत्रपिष्टैर्हरितालदूर्वा-
सिन्धूद्भवैर्लेपितमादरेण ।
प्रयाति नाशं रकसं नराणां
दद्रुश्च यायाच्चिरसंप्ररूढा ॥

हरताल, दूर्वा घास और सेंधा नमक समान भाग लेकर गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे रकस (खाजवाली स्रावहीन फुंसियों) का तथा पुराने दादका शीघ्रही नाश हो जाता है ।

(८५५९) **हरिद्रादिलेपः** (१)

(वै. म. र. । पटल ११)

निशामरिचसिन्धूत्थैः सार्धं नृजलपेषिता ।
लेपात् किटिभसंहन्त्री कुलत्थशरपुङ्खिका ॥

हल्दी, काली मिर्च, सेंधानमक, कुलथी और सरफोंका समान भाग लेकर मनुष्यके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे किटिभ कुष्ठ नष्ट होता है ।

(८५६०) **हरिद्रादिलेपः** (२)

(व. से. । अर्बुदा. ; वृ. मा. ; । यो. र । अर्बुदा.)

हरिद्रालोध्रपतङ्गगृहधूममनःशिलाः ।
मधुप्रगाढो लेपोऽयं मेदोऽर्बुदहरः परः ॥

हल्दी, लोध, पतङ्ग काष्ठ, घरका धुंवां और मनसिल समान भाग ले कर चूर्ण करके शहदमें मिलाकर लेप करनेसे मेदजनित अर्बुद नष्ट होता है।

(८५६१) **हरिद्रादिलेपः** (३)

(भा. प्र. । म. खं. २)

हरिद्राजालिनी चूर्णं कटुतैलसमन्वितम् ।
एष लेपो वरः प्रोक्तो ह्यर्शसामन्तकारकः ॥

हल्दी और कड़वी तूंबी (या देवदाली) के चूर्णको सरसोंके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे अर्शके मस्से नष्ट हो जाते हैं ।

(८५६२) **हरिद्रादिलेपः** (४)

(यो. र. । व्रणा.)

हरिद्राभस्मचूर्णाभ्यां प्रलेपो दारणः परः ॥

हल्दीकी भस्म और पत्थरका चूना समान भाग लेकर (पानी या शहदमें मिलाकर) लेप करनेसे व्रण फट जाता है ।

(८५६३) **हरीतक्यादिलेपः** (१)

(यो. त. । त. ७१)

हरीतकीसैन्धवतार्क्ष्यशैलैः
सगैरिकैः स्वच्छजलप्रपिष्टैः ।
बाह्ये प्रलेपं नयनस्य कुर्यात्
सद्योऽक्षिरोगोपशमार्थमेनम् ॥

हर्र, सेंधानमक, रसौत और गेरु समान भाग लेकर स्वच्छ जलमें पीसकर आंखोंके बाहर लेप करनेसे नेत्ररोग (अक्षिपाकादि)का नाश होता है ।

(८५६४) **हरीतक्यादिलेपः** (२)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६ ; ग. मा. । कुष्ठा. ८)

हरीतकीसैन्धवसोमराजी
विडङ्गसिद्धार्थकरञ्जबीजैः ।
करोति गोमूत्रयुतैः प्रपिष्टैः
कुष्ठप्रणाशं विहितः प्रलेपः ॥

हर्र, सेंधानमक, बाबची, बायबिड़ंग, सफेद सरसों और करञ्जबीज समान भाग लेकर गोमूत्रमें पीस कर लेप करनेसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(८५६५) **हरीतक्यादिलेपः** (३)

(वै. म. र. । पटल १६)

हरीतकीशिग्रुकरञ्जभास्वत-
पुनर्नवासैन्धवमिश्रमूत्रैः ।
पिष्टैः प्रशस्तः पिटकासु लेपो
ग्रन्थ्यामपच्यामथ विद्रधौ च ॥

हर्रे, सहंजनेकी छाल, करञ्जकी छाल (या बीज), आककी जड़, पुनर्नवा (बिस खपरे) की जड़ और सेंधा नमक; इनका चूर्ण समान भाग लेकर गोमूत्रमें पीसकर पिटिका तथा कच्ची और पक्की ग्रन्थि एवं विद्रधि पर लेप करना लाभदायक है।

(८५६६) हरेण्वादिलेपः (१)

(वृ. मा. । विसर्पा.)

हरेण्वो मसूराश्च मुद्गाश्चैव सशालयः ।
पृथक्पृथक्प्रदेहाः स्युः सर्वे वा सर्पिषा सह ॥

रेणुका, मसूर, मूंग और शाली चावल; इनमेंसे किसी एकके या सबके चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करनेसे विसर्प का नाश होता है।

(८५६७) हरेण्वादिलेपः (२)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

हरेणुनतशैलेयमुस्तैलागरुदारुभिः ।
मांसीरास्नारुबूकैश्च कोष्णो लेपः कफार्तिनुत् ॥

रेणुका, तगर, छरीला (पत्थर फूल), नागरमोथा, इलायची, अगर, देवदारु, जटामांसी, रास्ना और अरण्डमूलकी छाल; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको (पानीमें) पीसकर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे कफज शिर पीड़ा नष्ट होती है।

(८५६८) हलिन्यादियोगः

(ग. नि. । विस्फोटा. ४०)

मूलबीजान्विता पिष्टा काञ्जिकेन प्रलेपतः ।
हलिनी देवदाली वा दुग्धिका स्फोटनाशिनी ॥

लांगली (कलियारी) या देवदाली (बिंडाल) अथवा दुग्धिका (दूधी) और मूलीके बीज समान भाग लेकर कांजीमें पीसकर लेप करनेसे विस्फोटका नाश होता है।

(८५६९) हस्तिकर्णपलाशादिलेपः

(व. से. । गलगण्डा.)

तण्डुलोदकपिष्टेन मूलेन परिलेपतः ।
हस्तिकर्ण पलाशस्य गलगण्डः प्रशाम्यति ॥

हस्तिकर्ण पलाशकी जड़को चावलोंके पानीमें पीसकर लेप करनेसे गलगण्डका नाश होता है।

(८५७०) हस्तिदन्तादिलेपः (१)

(यो. र. । व्रणशोथ. ; वृ. नि. र. । व्रणशोथा. ; वृ. मा. । व्रणशोथा.)

हस्तिदन्तो जले घृष्टो बिन्दुमात्रः प्रलेपितः ।
अत्यन्तकठिने चापि शोफे पाचनभेदनः ॥

हाथीदांतको पानीके साथ घिस कर एक बिन्दु मात्र लेप करनेसे अत्यन्त कठिन व्रणशोथ भी पक कर फूट जाता है।

(८५७१) हस्तिदन्तादिलेपः (२)

(र. र. रसायन खं. । उप. ५)

हस्तिदन्तस्य दग्धस्य समं योज्यं रसाञ्जनम् ।
अजाक्षीरेण तत्पिष्ट्वा लेपनात्केशरञ्जनम् ॥

हाथीदांतकी भस्म और रसौत बराबर बराबर लेकर बकरीके दूधमें पीसकर लेप करनेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

(८५७२) हस्तिदन्ताद्यो लेपः

(ग. मा. । शिरो रोगा. १ ; वृ. मा. । क्षुद्ररोगा. ; व. से. । क्षुद्ररो. ; शा. ध. । खं. ३ अ. ११)

द्विपदन्तः पुटदग्धः साजक्षीरो रसाञ्जनोपेतः ।
दिनसप्तकं प्रलेपात् खलतेरपि केशसञ्जननः ॥

हाथीदांतको सम्पुटमें बन्द करके भस्म करें। यह भस्म और रसौत बराबर बराबर लेकर बकरीके दूधमें पीसकर सात दिन तक रोज लेप करने से गंजेके भी बाल निकल आते हैं।

(८५७३) **हिङ्ग्वादिलेपः** (१)

(यो. र. । सन्निपाता.)

हिङ्गु द्विनिशा विशाला सैन्धवसुरदारुकुष्ठ-रविदुग्धैः।
दत्तः क्रमेण लेपो हन्ति महाकर्णकग्रन्थिकम् ॥

हींग, हल्दी, दारुहल्दी, इन्द्रायणकी जड़, सेंधा नमक, देवदारु और कूठके समान भाग मिलित चूर्णको आकके दूधमें पीसकर लेप करनेसे कर्णमूल (सन्निपात ज्वरमें होनेवाली कानके पीछेकी सूजन) का नाश होता है।

(८५७४) **हिङ्ग्वादिलेपः** (२)

(यो. र. । शूला.)

हिङ्गु तैलं सलवणं गोमूत्रेण विपाचितम् ।
नाभिस्थाने प्रदातव्यं यस्य शूलं सवेदनम् ॥

हींग, तेल, सेंधा नमक और गोमूत्रको एकत्र मिलाकर पकाकर (गाढ़ा लेपसा बनाकर) नाभि पर लेप करनेसे शूल नष्ट होता है।

(अथवा—हींग और सेंधा नमकके कल्क तथा गोमूत्रके साथ तेल पकाकर नाभि पर लगाने या नाभिमें भरनेसे भी लाभ होगा।)

(८५७५) **हिङ्ग्वादिलेपः** (३)

(च. द. । अग्निमांद्या. ६)

आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गुत्र्यूषणसैन्धवैः ।
दिवास्वप्नं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥

हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग लेकर (पानीके साथ) पीस कर पेट पर लेप करके दिनमें सोनेसे समस्त प्रकारके अजीर्ण नष्ट हो जाते हैं।

(८५७६) **हिलमोचिकादिलेपः**

हिलमोची रसो युक्तश्चूर्णैरुदधिफेनजैः ।
प्रलेपेन निहन्त्याशु देहदौर्गन्ध्यमुत्कटम् ॥

समुद्रफेनके चूर्णमें हिलमोची (हुरहुर)का रस मिलाकर लेप करने से शरीरकी तीव्र दुर्गन्ध भी नष्ट हो जाती है।

(८५७७) **हेमक्षीर्यादिलेपः** (१)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

हेमक्षीरी विडङ्गानि दरदं गन्धकस्तथा ।
दद्रुघ्नः कुष्ठसिन्दूरे सर्वाण्येकत्र मर्दयेत् ॥
धत्तूरनिम्बताम्बूलीपत्राणां स्वरसैः पृथक् ।
अस्य प्रलेपमात्रेण पामादद्रुविचर्चिकाः ॥
कण्डूश्च रकसश्चैव प्रशमं यान्ति वेगतः ॥

स्वर्णक्षीरी की जड़ (चोक), बायबिडंग, हिंगुल, गंधक, पमांड़के बीज, कूठ और सिन्दूर; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र करके धतूरेके पत्तोंके तथा नीम और ताम्बूली (पान)के पत्तोंके रसमें पृथक् पृथक् एक एक दिन खरल करें।

इसे (पानी या तेलमें मिलाकर) लेप करनेसे पामा, दाद, विचर्चिका (खुजली), खाज और रकस (स्राव सहित खुजली युक्त पिड़िका)का नाश होता है।

(८५७८) **हेमक्षीर्यादिलेपः** (२)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११)

हेमक्षीर्यास्तथा लेपो व्रणे परमदारणः ॥

हेमक्षीरीकी जड़ (चोक) का लेप व्रणशोथको फाड़नेके लिये उत्तम उपाय है ।

(८५७९) ह्रीवेरादिलेपः

(रा. मा. । कुष्ठा. ८)

ह्रीवेरोशीरदलैर्मलयजकाश्मीरकाञ्जिकैर्लेपात् ।
अपगच्छति दौर्गन्ध्यं मुण्डीचूर्णस्य पानाद्वा ॥

सुगन्धबाला, खस, तेजपात, सफेद चन्दन और केसर के समान भाग मिलित चूर्णको कांजीमें पीस कर लेप करने से शरीर की दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है ।

गोरखमुंडीका चूर्ण सेवन करनेसे भी शरीर की दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है ।

इति हकारादिलेप-प्रकरणम्

अथ हकारादिधूम्र-प्रकरणम्

(८५८०) हरिद्रादि धूमः

(यो. र. । कासा.)

रात्रिद्वयं शिलाधूमपानात्कासश्रुतिः कुतः ।
जलपानादपि तथा क्षणेन क्षणदाक्षये ॥

हल्दी, दारुहल्दी, और मनसिल; इनका धूम्र पान करनेसे खांसी अवश्य नष्ट हो जाती है ।

उषःपान करनेसे भी खांसी नष्ट होती है ।

(८५८१) हिङ्ग्वादिधूम्रः

(भा. प्र. । म. खं. २ हिक्का.)

निर्धूमाङ्गारनिक्षिप्तहिङ्गुमाषरजोभवः ।
हिक्काः पञ्चापि हन्त्याशु धूमः पीतो न संशयः ॥

निर्धूम अंगारों पर हींग और उर्द का चूर्ण डालनेसे जो धुवां निकले उसे पीनेसे पांच प्रकारकी हिचकी निस्सन्देह नष्ट हो जाती है ।

(चिलममें रखकर आसानीसे धूम्र-पान किया जा सकता है ।

इति हकारादिधूम्र-प्रकरणम्

अथ हकाराद्यञ्जन-प्रकरणम्

(८५८२) हरितालादि प्रतिसारणम्

(यो. र. ; वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

हरितालवचादारु सुरसारसपेषितम् ।
अभयारसपिष्टं वा तगरं पिल्लनाशनम् ॥

हरताल, बच और देवदारुके समान भाग मिलित बारीक चूर्णको तुलसी के रसमें खरल करके या तगरके बारीक चूर्णको हर्रके रसमें खरल करके रोहें पर लगाने से वे नष्ट हो जाते हैं ।

(८५८३) हरिद्रादिवर्तिः

(वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

हरिद्रामलकीकृष्णकेतकश्वेतसर्षपैः ।
व्योमवारियुता वर्तिः सर्वनेत्रामयापहा ॥

हल्दी, आमला, कृष्ण केतकीका फूल और सफेद सरसों; इनके समान भाग मिलित चूर्णको बरसातके पानीमें खरल करके वर्तियां बनावें।

यह वर्ति समस्त नेत्ररोगोंको नष्ट करती है।

(८५८४) हरिद्राद्यञ्जनम् (१)

(वृ. मा. । नेत्ररोगा. ; र. र. । नेत्ररोगा.)

हरिद्रे त्रिफला लोध्रं मधुकं रक्तचन्दनम् ।
भृङ्गराजरसे पिष्ट्वा घर्षयेल्लोहभाजने ॥
तथा ताम्रे च सप्ताहं कृत्वा वर्तिं रजोऽथवा ।
पिच्चटी धूमदर्शी च तिमिरोपहतेक्षणः ॥
प्रातर्निश्यं जयेन्नित्यं सर्वनेत्रामयापहम् ॥

हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, लोध, मुलैठी और लाल चन्दन; इनके समान भाग मिलित बारीक चूर्णको भंगरेके रसमें सात दिन लोहके खरल में और सात दिन ताम्र पात्रमें मर्दन करके बर्तियां बना लें या बारीक चूर्ण करके रक्खें।

यह अञ्जन पिच्चिट, धूमदर्शन और तिमिर रोग तथा अन्य समस्त नेत्ररोगोंको नष्ट करता है।

इसे प्रातःकाल तथा रात्रिको लगाना चाहिये।

(८५८५) हरिद्राद्यञ्जनम् (२)

(व. से. । नेत्ररोगा. ; ग. नि. । नेत्ररोगा. ३ ; यो. र. ; र. र. । नेत्ररोगा.)

हरिद्रां मधुकं पथ्यां[१] देवदारु च पेषयेत् ।
आजेन पयसा श्रेष्ठमभिष्यन्दे तदञ्जनम् ॥

हल्दी, मुलैठी, हर्र (पाठान्तरके अनुसार दाख), और देवदारु; इनके समान भाग मिलित बारीक चूर्णको बकरीके दूधमें खरल करके अंजन बनावें। यह अंजन नेत्राभिष्यन्दमें उत्तम गुणकारी है।

१ द्राक्षा इति पाठन्तरम्

(८५८६) हरिद्राद्यञ्जनम् (३)

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

जातीपत्ररसे पिष्टं निशायुग्मं रसाञ्जनम् ।
निशान्ध्यं नाशयत्येव यथा पापं जिनः स्मृतः ॥

हल्दी, दारुहल्दी और रसौतके बारीक चूर्णको चमेलीके पत्तोंके रसमें खरल करके अंजन बनावें।

यह अंजन नक्तान्ध्य (रतौंधे) को अवश्य नष्ट करता है।

(८५८७) हरिद्राद्यवर्तिः

(भै. र. ; वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

हरिद्रानिम्बपत्राणि पिप्पल्यो मरिचानि च ।
भद्रमुस्तं विडङ्गानि सप्तमं विश्वभेषजम् ॥
गोमूत्रेण गुडी कार्या छागमूत्रेण चाञ्जनात् ।
ज्वरांश्च निखिलान् हन्ति भूतावेशं तथैव च ॥
वारिणा तिमिरं हन्ति मधुना पटलं तथा ।
नक्तान्ध्यं भृङ्गराजेन नारीस्तन्येन पुष्पकम् ॥
शिशिरेण परिस्रावमर्बुदं पिच्चटं तथा ॥

हल्दी, नीमके पत्ते, पीपल, कालीमिर्च, नागरमोथा, बायबिड़ंग और सोंठ; इनके समान भाग मिलित बारीक चूर्णको गोमूत्रमें पीसकर गोलियां बनालें

इसे बकरीके मूत्रमें घिसकर अंजन करनेसे ज्वर और भूतावेशका; पानीमें घिसकर अंजन करनेसे तिमिरका; शहदमें घिसकर आंखमें लगानेसे पटलका; भंगरेके रसमें घिसकर लगानेसे रतौंधे (नक्तान्ध्य)का; स्त्रीके दूधमें घिसकर लगानेसे फूलेका और शीतलजल में घिसकर आंखमें लगानेसे नेत्रस्राव, अर्बुद और पिच्चिटका नाश होता है।

(८५८८) **हरीतक्यञ्जनम् (१)**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४८)

हरीतकी वचाकुष्ठं पिप्पली मरिचानि च ।
विभीतकस्य मज्जा वा शङ्खनाभिर्मनःशिला ॥
एतानि समभागानि अजाक्षीरेण पेषयेत् ।
नाशयेत्तिमिरं कण्डूं पटलान्यर्बुदानि च ॥
हन्ति पुष्पं सपटलं रात्र्यान्ध्यं च नियच्छति ।
क्षताभिघातशोकेन अग्निदग्धं च वा पुनः ॥
काचं च नीलिकां चैव सिद्धिमिच्छन्ति नेत्रयोः ॥

हर्र, बच, कूठ, पीपल, काली मिर्च, बहेड़ेकी मज्जा (गुठलीकी मींग), शंखकी नाभि और मनसिल; इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर बकरीके दूधमें खरल करके अत्यन्त महीन कर लें और सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह अंजन तिमिर, कंडू (खाज), पटल, अर्बुद, फूला, रात्र्यान्ध्य (रतौंधा), क्षत, आंख पर चोट लगना, अत्यन्त शोक जनित नेत्र रोग, आंखका आगसे जल जाना, काच और नीलिकाका नाश करता है ।

(८५८९) **हरीतक्यञ्जनम् (२)**

(ग. नि. । नेत्ररोगा.)

अञ्जनमधुघृतगर्भा धात्रीकल्केन वाह्यतो लिप्ता ।
अन्तर्धूमविदग्धा हरीतकी सर्वतिमिरघ्नी ॥

हर्रको बीचसे चीरकर उसकी गुठली निकाल दें और उसके भीतर सुरमे का चूर्ण तथा शहद और घी (समान भाग मिलित जितना आ सके उतना) भर दें एवं उसके ऊपर आमलेको पानीमें पीसकर लेप कर दें । इसे शरावसम्पुटमें बन्द करके भस्म करें । धुंवा बाहर न निकले, यह ध्यान रक्खें ।

इसे बारीक पीसकर आंखमें लगाने से हर प्रकार का तिमिर रोग नष्ट होता है ।

(८५९०) **हरीतक्यादिवर्तिः**

(भै. र. । नेत्ररोगा. ; व. से. ; वृ. मा. ; धन्व । नेत्ररोगा.)

हरीतकी हरिद्रा च पिप्पल्यो लवणानि च ।
कण्डूतिमिरजिद् वर्त्तिर्न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥

हर्र, हल्दी, पीपल, सेंधा नमक, काला नमक (संचल), विड लवण, काच लवण और सामुद्र-लवण; इनका चूर्ण समान भाग लेकर (पानीके साथ) खरल करके बत्तियां बना लें ।

इसे आंखमें आंजनेसे कण्डू (खाज) और तिमिर का नाश होता है । यह वार्ति कभी निष्फल नहीं होती ।

(८५९१) **हिङ्ग्वाद्यञ्जनम्**

(रा. मा. । नेत्ररोगा. ३)

हिङ्गुना द्रोणपुष्प्या वा रसेनाञ्जितलोचनः ।
अचिरात्कामलाव्याधिं नरो विजयते ध्रुवम् ॥

हींगका या द्रोणपुष्पी (गूमा) के रसका अंजन लगानेसे कामला रोग शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(८५९२) **हिताञ्जनम्**

(**रसायनसार**)

नीलपुष्पाञ्जनांशौ द्वौ समौ मर्देद् रसाञ्जने ।
वराक्वाथद्रुते चक्रीं शोषितां पलमानिताम् ॥

षण्मासान् निम्बमूलान्तर्मासं रम्भातरौ क्षिपेत्।
भीमकर्पूरकस्तूर्य्योर्योगादान्ध्यं रुणद्धि सा ॥

१ भाग रसौतको त्रिफलाके क्वाथमें घोलकर उसमें १-१ भाग काला और सफेद सुरमा बारीक पीस कर मिला दें तथा उसकी ४-४ तोलेकी टिकिया बना कर धूपमें सुखा लें।

इनमें से १ टिकियाको कपड़ेमें लपेटें और फिर नीमकी जड़में एक गढ़ा करके उसमें वह टिकिया रख दें तथा उस गढ़ेमें से जो नीमका बुरादा निकला है उसीसे उसे भरकर गोबरसे बन्द कर दें। ६ मास बाद उस टिकियाको निकालकर केलेकी जड़में गाढ दें और फिर १ मास पश्चात् निकालकर छाया में सुखा लें। तदनन्तर उसे बारीक पीसकर उसमें [चौथाई (चतुर्थांश)] कपूर और (कपूर से छठा भाग) कस्तूरी मिलाकर बारीक सुरमा बना लें। इसे आंखमें लगाने से अन्धता नहीं आती।

इति हकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

अथ हकारादिनस्यप्रकरणम्

(८५९३) हरीतक्यादिनस्यम्

(ग. नि. । रक्तपित्ता. ८ ; वृ. नि. र. ; यो. र. । रक्तपित्ता. ; रा. मा. । नासा. ४)

हरीतकीदाडिमपुष्पदूर्वा
लाक्षारसो नस्यविधानयागात् ।
निवारयत्येव चिरप्रवृत्त-
मप्याशु नासान्तरशोणितौघम् ॥

हर्र, अनारके फूल, दूर्वा (दूब घास) और लाख; इनके (पृथक् पृथक् अथवा सम्मिलित) रसकी नस्य लेने से पुराना नासाप्रवृत्त रक्तस्राव (नकसीर) भी नष्ट हो जाता है।

(८५९४) हिक्काहरयोगाः

(ग. नि. । हिक्का. ११)

शर्कराशृङ्गबेरं च, गैरिकं मूत्रभावितम् ।
गुडार्द्रकं च पादोक्तं हिक्काघ्नं नावनत्रयम् ॥

अदरकके रस में खांड मिलाकर उसकी, या गोमूत्र में खरल किये हुवे गेरुकी अथवा अदरकके रसमें गुड मिलाकर उसकी नस्य लेनेसे हिचकी नष्ट हो जाती है।

(८५९५) हिङ्ग्वादिनस्यम्

(वै. जी. । वि. १ ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

चातुर्थिको नश्यति रामठस्य
घृतेन जीर्णेन युतस्य नस्यात् ।
लीलावतीनां नवयौवनानां
मुखावलोकादिव साधुभावः ॥

पुराने घृतमें हींग मिलाकर उसकी नस्य लेनेसे चातुर्थिक ज्वर (चौथिया) नष्ट हो जाता है।

इति हकारादिनस्यप्रकरणम्

अथ हकारादिरसप्रकरणम्

(८५९६) हरगौरीरसः

(र. का. धे. । वातव्या. ; र. सं. क. । उ. अ. ४)

पारदं तत्तृतीयांशं गन्धं दत्वा तु मर्दयेत् ।
दशांशनवसारेण शुतं चोन्मत्तवारिणा ॥
खल्वे सम्मर्द्य तत्सर्वं काचकुप्यां निवेशयेत् ।
गुरूक्तसम्प्रदायेन वालुकायन्त्रमध्यगम् ॥
पचेत्षोडशयामांश्च मन्दमध्यहठाग्निना ।
पक्वः सुशीतलो ग्राह्यो हरगौरीरसो भवेत् ॥

शुद्ध पारद ३ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग और नवसादरका चूर्ण दशवां भाग लेकर तीनोंको एकत्र मिलाकर कज्जली बनावें और उसे धतूरे के रस में खरल करके सुखा कर कपर मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरें एवं उसे बालुका यन्त्रमें रखकर क्रमशः मृदु, मध्यम और तीव्राग्नि पर १६ पहर पकावें। तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर शीशीसे रसका निकाल लें ।

(यह रस वातव्याधिको नष्ट करता है ।)

(८५९७) हरगौरीसृष्टिरसः

(र. र. । प्रमेहा.)

शुद्धसूतं चतुर्भागं सूतार्द्धं मृतताम्रकम् ।
गन्धकश्च द्वयोस्तुल्यं मस्तुना मर्दयेद्दिनम् ॥
गोलकं बन्धयेद्वस्त्रे वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
मन्दाग्निना पचेत्तावद्यावत्तप्ताश्च वालुकाः ॥
स्पर्ष्टुं न शक्यते तापमथोद्धृत्यो विचूर्णयेत् ।
धात्रीफलरसैर्भाव्यं सप्तधा गोक्षुरस्य च ॥
श्लक्ष्णचूर्णं ततः कृत्वा सर्वं क्षीरेण गोलयेत् ।
निष्कद्वयं वटीं कुर्याद्घृतमध्ये विपाचयेत् ॥
स्वाङ्गशीतलतां खादेत्प्रत्यहं पाचितां घृतैः ।
महिषीक्षीरकर्षैकमनुपानश्च सर्वदा ॥
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः ।
दुग्धौदनं घृतं पथ्यं शाकं चिञ्चाफलम्भवेत् ॥

शुद्ध पारद ४ भाग, ताम्रभस्म २ भाग और शुद्ध गंधक ६ भाग लेकर तीनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ दिन मस्तु (दही के तोड़) में खरल करें । तदनन्तर सबका एक गोला बनाकर उसे (सुखाकर) चार तह किये हुवे कपड़ेमें बांधकर, बालुकायन्त्रमें रखकर मन्दाग्नि पर इतना पकावें कि बालू खूब गरम हो जाए । जब बालू इतनी गर्म हो जाए कि हाथसे न छुई जा सके तो अग्नि देनी बन्द करदें और यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर रसको निकालकर पीस लें तथा उसे आमले के स्वरस और गोखरुके रसकी सात सात भावना देकर दूधमें खरल करके २–२ निष्क की गोलियां बना लें ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती ।)

इनमें से १–१ गोली प्रति दिन घीमें पकाकर ठंडा करके १। तोला भैंसके दूधके साथ खानेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते है ।

पथ्य—दूध, भात, घी, और इमली के (पक्के) फलोंका शाक ।

(८५९८) **हरनेत्रो रसः**

(र. र. । राजयक्ष्मा.)

टङ्कणं शुद्धगन्धं तु सुवर्णं माक्षिकं पृथक् ।
एकं द्वि त्रि चतुः पञ्चक्रमाच्च शुद्धसूतकम् ॥
चाङ्गेर्याश्च द्रवैर्मर्द्य दिनैकं गोलकीकृतम् ।
गन्धकं ताम्रपर्ण्याथ गोलकांशं प्रमर्दयेत् ॥
गोलकं लेपयेत्तेन ततो वस्त्रेण वेष्टयेत् ।
मृगाङ्कं पाचयेत्स्थाल्यां वालुकाभिश्च पूरिते ॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हरनेत्रो रसोत्तमः ।
मृगाङ्कवत् क्षयं हन्ति तद्वन्मात्रानुसारतः ॥

सुहागेकी खील १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, स्वर्णभस्म ३ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म ४ भाग, और शुद्ध पारद ५ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ दिन चांगेरीके रसमें खरल करके सबका एक गोला बना लें। तदनन्तर गोलेके बराबर शुद्ध गंधकको मजीठके रसमें खरल करके इस गोले पर लेप कर दें। और फिर उसे कपड़ेमें लपेटकर मृगाङ्क रसके समान बालुकायन्त्र में पकावें।

यह रस क्षयमें मृगाङ्कके समान गुणकारी है। इसकी मात्रादि भी मृगाङ्कके समान ही है।

(८५९९) **हररुद्ररसः**

(वृ. नि. र. । क्षय.)

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णं च मारितं पृथक् ।
एकद्वित्रिचतुपञ्चक्रमात्षट् शुद्धसूतकम् ॥
चाङ्गेर्याश्च द्रवैर्मर्द्य दिनैकं कृतगोलकम् ।
मृगाङ्कवत्पचेत् स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरितम् ॥
उद्धृत्य चूर्णयेत् श्लक्ष्णं हररुद्रो रसोत्तमः ।
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तद्वन्मात्रानुपानकम् ॥

तीक्ष्ण लोहभस्म १ भाग, ताम्रभस्म २ भाग, सीसा भस्म ३ भाग, चांदीभस्म ४ भाग, स्वर्णभस्म ५ भाग और शुद्ध पारद ६ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके एक दिन चांगेरीके रसमें घोटकर सबका एक गोला बनावें और उसे मृगांक के समान बालुकायन्त्रमें पकावें।

यह रस क्षयमें 'मृगाङ्क रस' के समान गुणकारी है एवं इसकी मात्रा तथा अनुपानादि भी मृगाङ्कके समान ही हैं।

(८६००) **हरशशाङ्करसः** (१)

(भै. र. । वाजीकरणा.)

शाल्मल्यास्त्वचमादाय श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
शुद्धगन्धकचूर्णानि तद्रसेनैव भावयेत् ॥
मासमात्रप्रयोगेण शृणु वक्ष्यामि ये गुणाः ।
मकरध्वजरूपोऽपि स्त्रीशतानन्दवर्द्धनः ॥
शतायुश्च भवेद्देवि वलीपलितवर्जितः ।
तेजस्वी बलसम्पन्नो वेगेन तुरगोपमः ॥
सततं भक्षयेद्यस्तु तस्य मृत्युर्न जायते ॥

सेंभलकी छालका चूर्ण और शुद्ध गंधक बराबर बराबर लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर सेंभलकी छालके रसकी सात भावना दें और फिर बारीक चूर्ण करके सुखाकर रख लें।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे मनुष्य कामदेवके समान रूपवान हो जाता है तथा कामशक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है। उसको बलि—पलित रहित १०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है; तेज और बल बढ़ जाता है और गति अत्यन्त तीव्र हो जाती है। यदि इसे निरन्तर सेवन किया जाय तो (अकाल) मृत्यु नहीं होती।

(**मात्रा**—२-३ रत्ती। खांड और शहदके साथ खाकर ऊपरसे दूध पीना चाहिये।)

(८६०१) हरशशाङ्करसः (२)

(र. रा. सु. । वाजीकरणा.)

गन्धकामलकं चूर्णं धात्रीरसविभावितम् ।
सप्तधा शाल्मलीतोयैः शर्करामधुयोजितम् ॥
लीढ्वा चानुपयः पानं प्रत्यहं कुरुते तु यः ।
एतेनाशीतिवर्षोऽपि शतधा रमते स्त्रिया ॥

शुद्ध गंधक और आमलेका चूर्ण समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर आमले और सेंभल की छालके स्वरसकी ७-७ भावना देकर बारीक चूर्ण करके रक्खें ।

इसे खांड और शहदके साथ सेवन करनेसे अस्सी वर्षका वृद्ध भी युवाके समान १०० बार स्त्रीसमागममें समर्थ हो जाता है ।

अनुपान—दूध ।

(मात्रा—२ रत्ती ।)

हरिताल शोधन मारण सत्व पातनादि के लिए ताल-शोधनादि देखिये

(८६०२) हरिद्राखण्डः (१)

(भै. र. । शीतपित्ता.; धन्व. । अम्लपित्ता.)

हरिद्रायाः पलान्यष्टौ षट्पलं हविषस्तथा ।
क्षीराढकेन संयुक्तं खण्डस्यार्द्धशतं तथा ॥
पचेन्मृद्वग्निना वैद्यो भाजने मृण्मये दृढे ।
त्रिकटुश्च त्रिजातश्च क्रिमिघ्नं त्रिवृता तथा ॥
त्रिफला केशरं मुस्तं लौहं प्रति पलं पलम् ।
सञ्चूर्ण्य प्रक्षिपेत्तत्र तोलकार्द्धन्तु भक्षयेत् ॥

कण्डूविस्फोटदद्रूणां नाशनं परमौषधम् ।
प्रतप्तकाञ्चनाभासो देहो भवति नान्यथा ॥
शीतपित्तोदर्दकोठान् सप्ताहादेव नाशयेत् ।
हरिद्रानामतः खण्डः कण्डूनां परमौषधम् ॥

हल्दीका चूर्ण ४० तोले, गायका घी ३० तोले, गोदुग्ध ८ सेर और खांड ३ सेर १० तोले लेकर प्रथम हल्दीको घी में भूनें और फिर उसमें दूध तथा खांड मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब पाक तैयार होनेके निकट आ जाय तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बायबिड़ंग, निसोत, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागकेसर, नागरमोथा और लोहभस्म; इनका ५-५ तोले चूर्ण मिला दें ।

इसे मिट्टीके बर्तनमें बनाना चाहिये ।

मात्रा—आधा तोला ।

इसके सेवनसे कण्डू (खुजली), विस्फोट, और दाद का नाश होकर शरीर तप्त कांचन के समान (निर्मल और उज्ज्वल) हो जाता है ।

यह हरिद्राखण्ड शीतपित्त, उदर्द और कोठ को एक सप्ताहमें ही नष्ट कर देता है । कण्डू (खाज) की तो यह परमौषध है ।

(८६०३) हरिद्राखण्डः (२) (बृहत्)

(भै. र. । शीतपि०)

निशाचूर्णस्य कुडवं त्रिवृत्पलचतुष्टयम् ।
अभया तत्समं देयं सार्द्धप्रस्थद्वयं सिता ॥
दार्वी मुस्ता यमान्यौ द्वौ चित्रकं कटुरोहिणी ।
अजाजी पिप्पली शुण्ठी त्रिजातं क्रिमिकण्टकम् ॥

अमृता वासकं कुष्ठं त्रिफला चव्यधान्यकम् ।
मृतलौहं मृताभ्रश्च प्रत्येकं कोलसम्मितम् ॥
पचेन्मृद्वग्निना वैद्यो भाजने मृण्मये नवे ।
कर्षार्द्धश्च ततः खादेदुष्णतोयानुपानतः ॥
शीतपित्तोदर्दकोठकण्डूपामाविचर्चिकाः ।
जीर्णज्वरक्रिमीन् पाण्डुशोथादींश्च विनाशयेत् ॥

हल्दीका चूर्ण २० तोले, निसोतका चूर्ण २० तोले, हर्रका चूर्ण २० तोले, मिश्री २॥ सेर और दारुहल्दी, नागरमोथा, अजवायन, अजमोद, चीतामूल, कुटकी, जीरा, पीपर, सोंठ, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बायबिड़ंग, गिलोय, सुगन्धबाला, कूठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव, धनिया, लोहभस्म और ताम्रभस्म; प्रत्येकका चूर्ण १॥ माशे ले कर उसमें मिट्टीके पात्रमें मन्दाग्नि पर मिश्रीकी चाशनी बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियों का चूर्ण मिला दें ।

मात्रा—आधाकर्ष (७॥ माशे)

अनुपान—उष्ण जल

इसके सेवनसे शीत पित्त, उदर्द, कोठ, खाज, खुजली, विचर्चिका, जीर्णज्वर, क्रिमि, पाण्डु और शोथादिका नाश होता है ।

(८६०४) हरिद्रादिवटिका

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

निशाकणानागरवेल्लतौवरं
सवह्निताप्य क्रमशो विवर्धितम् ।
गवाम्बुपीतं वटकीकृतं तथा
निहन्ति कुष्ठानि सुदारुणानि ॥

हल्दी १ भाग, पीपल २ भाग; सोंठ ३ भाग, बायबिड़ंग ४ भाग, तुवरक (चाल मोगरा) ५ भाग, चीतामूल ६ भाग और सुवर्णमाक्षिक भस्म ७ भाग लेकर सबको गोमूत्रमें खरल करके (४-४ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें सेवन करने से भयंकर कुष्ठ भी नष्ट हो जाता है ।

अनुपान—गोमूत्र ।

(८६०५) हरिद्राद्यवलेहः

(ग. नि. । पाण्डुवा. ७)

हरिद्रा त्रिफला दन्ती व्योषं चित्रक आहुली ।
कटुकारोहिणी श्यामा पिप्पलीमूलमेव च ॥
वचा विडङ्गं त्रिफला त्रिवृता हस्तिपिप्पली ।
चूर्णान्येषां तु तुल्यानि द्विगुणं स्यादयोरजः ॥
तानि क्षीरानुपानानि लेहयेन्मधुसर्पिषा ।
पाण्डुरोगं नुदत्येप श्वयथुं चापकर्षति ॥

हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, आहुली (तरवट नामसे काश्मीरमें प्रसिद्ध), कुटकी, काली निसोत, पीपलामूल, बच, बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत और गज पीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म, सबसे दो गुनी ले कर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करने से पाण्डु और शोथका नाश होता है ।

अनुपान—दूध ।

(८६०६) हरिबोलाङ्कुशरसः

(र. र. स. । उ. अ. २०)

घनभवमृतसत्त्वं कान्तलोहार्कभस्म-
त्रिगुणरससमेतं तुल्यगन्धेन युक्तम् ।
समतुलकृतमेभिष्टङ्कणं ताप्यचूर्णं
हरिदलमथ बोलं खण्डसञ्ज्ञं मनोज्ञम् ॥

अभ्रकसत्वकी भस्म १ भाग, कान्तलोह भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग, शुद्ध पारद ३ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग, सुहागेकी खील ९ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म ९ भाग, शुद्ध हरताल ९ भाग हीराबोल ९ भाग और खांड ९ भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिलाकर खरल करलें।

(यह रस समस्त प्रकार के कुष्ठोंको नष्ट करता है ।

मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(८६०७) हरिरुद्ररसः

(र. का. धे. । राजयक्ष्मा.)

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णं च मरिचं पृथक् ।
एकद्वित्रिचतुष्कं च क्रमवृद्धं च सूतकम् ॥
चाङ्गेरीद्रवसम्मर्द्य दिनैकं तच्च गोलकम् ।
गन्धकं चाल्पमर्यादगोलकं च विमर्दयेत् ॥
गोलकं लेपयेत्तेन ततो वस्त्रेण वेष्टयेत् ।
मृगाङ्कवत्पचेत्स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरिताम् ॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हरिरुद्रो मृगाङ्कवत् ।
रसोऽयं च क्षयं हन्ति यथामात्रानुपानतः ॥

तीक्ष्ण लोहभस्म १ भाग, ताम्रभस्म २ भाग सीसा भस्म ३ भाग, चांदी भस्म ४ भाग, स्वर्ण भस्म ५ भाग और कालीमिर्च का चूर्ण ६ भाग तथा शुद्ध पारद (या रससिंदूर) ७ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह खरल करें और फिर उसे चांगेरीके रसमें घोटकर गोला बनाकर सुखा लें । तदनन्तर उस गोलेके बराबर शुद्ध गंधकको चांगेरीके रसमें खरल करके उस गोले पर लेप कर दें । अब उसे कपड़ेमें लपेटकर मृगाङ्करसकी भांति बालुकायन्त्रमें पकावें ।

इसे यथोचित मात्रा और अनुपानसे सेवन करनेसे क्षय का नाश होता है ।

(८६०८) हरिशङ्कररसः (१)

(र. र. स. । उ. अ. १७; र. र.; र. रा. सु.; रसे. सा. सं. । प्रमेहा.; रसे. चि. म. । अ. ९; यो. र.; वृ. नि. र. । प्रमेहा.; वृ. यो. त. । त. १०३; र. का. धे. । प्रमेहा.; यो. त. । त. ५१)

मृतं सूताभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिज[१]द्रवैः ।
सप्ताहं भावयेत्खल्वे रसोयं हरिशङ्करः ॥
माषमेकां वटीं खादेन्नीलमेहप्रशान्तये ।
पूर्वयोगानुपाने* स्यादसाध्यं साधयेत्क्षणात् ॥

पारद भस्म और अभ्रक भस्म समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर एकसप्ताह तक आमलेके

१ "निशाद्रवैः" इति पाठभेदः

*महानिम्बस्य बीजानि षण्निष्कं पेषितानि च ।
पलतण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च ॥
एकीकृत्य पिबेच्चानु हन्ति मेहं चिरन्तनम् ॥

स्वरस में (पाठान्तरके अनुसार हल्दीके स्वरसमें भी) खरल करें और फिर सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१। माशा (व्यवहारिकमात्रा—३-४ रत्ती।)

अनुपान—५ तोले चावलोंके पानी में ६ निष्क (व्यवहारिक मा. १॥ से ३ माशे) बकायनके बीजों को पीसकर उसमें ७॥ माशे घी मिलाकर पिलावें।

इसके सेवनसे नीलमेह नष्ट होता है।

(८६०९) **हरिशङ्कररसः** (२) (बृहद्)

(र. रा. सु.। प्रमेहा.; रसे. चि. म.। अ. ९)

रसगन्धकलौहं च स्वर्णवङ्गश्च माक्षिकम्।
समभागन्तु सम्पिष्य वटिकां कारयेद्भिषक्॥
सप्ताहमामलद्रावैर्भावितोयं रसेश्वरः।
हरिशङ्करनामायं गहनानन्द भाषितः॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोहभस्म, स्वर्णभस्म, बंगभस्म और स्वर्णमाक्षिकभस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सात दिन आमलेके रसमें खरल करके (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

यह रस २० प्रकारके प्रमेहको नष्ट कर देता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

(८६१०) **हरीतकीखण्डः**

(भै. र.। शूला.)

चतुः पलं हरीतक्यास्त्रिवृतायाश्चतुःपलम्।
चातुर्जातं समुस्तश्च तालीशं जीरकं तथा॥
जातीकोषं लवङ्गश्च लौहमभ्रश्च टङ्कणम्।
प्रत्येकं कर्षमानेन श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत्॥
प्रस्थेन गव्यदुग्धस्य पचेन्मृद्वग्निना भिषक्।
शर्करायाः दशपलं पाकसिद्धिविधानवित्॥
दर्वीप्रलेपावस्थायां क्षिपेच्चूर्णं विचक्षणः।
पूजयेद्भास्करं शम्भुं द्विजातीनभिवादयेत्॥
शूलमष्टविधं हन्ति अम्लपित्तं सुदुर्जयम्।
अन्नद्रवभवं शूलं कासं श्वासं तथा वमिम्॥
कान्तिपुष्टिकरो हृद्यो बलमेधाग्निवर्द्धनः।
ख्यातो हरीतकीखण्डः सर्वशूलनिकृन्तनः॥

हर्रका चूर्ण २० तोले, निसोतका चूर्ण २० तोले, तथा दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, नागरमोथा, तालीसपत्र, जीरा, जावत्री, लौंग, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और सुहागेकी खील, प्रत्येकका चूर्ण १। तोला; गोदुग्ध २ सेर और खांड ५० तोले लेकर प्रथम दूधको पकावें जब १ सेर दूध रह जाय तो उसमें खांड डालकर चाशनी बनावें और उसमें उपरोक्त समस्त द्रव्योंका चूर्ण मिला दें।

सूर्यदेव और शंकरकी पूजा करके तथा द्विजातियोंको नमस्कार करके इसे सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे दुर्जय अम्लपित्त, अन्नद्रवशूल, तथा अन्य सब प्रकारके शूल, कास, श्वास और वमनका नाश तथा कान्ति, पुष्टि, बल, मेधा और अग्निकी वृद्धि होती है। यह हरीतकी खण्ड हृद्य भी है।

(**मात्रा—**१ तोला।)

(८६११) **हरीतकीयोगः**

(ग. नि. । रसायना. १)

आज्येनायसपात्रस्थां सायश्चूर्णां हरीतकीम् ।
खादतः प्रत्यहं जन्तोर्जरानाशमवाप्नुयात् ॥

हर्र के चूर्ण में लोह भस्म मिलाकर उसे घीमें मिलाकर लोहपात्रमें रख दें ।

इसे सेवन करने से वृद्धावस्था का नाश होता है ।

(८६१२) **हरीतक्यवलेहः**

(ग. नि. । परि. अवलेहा. ५)

हरीतक्याः शतं द्रोणे पयसि परिसाधयेत् ।
घृतावशेषमुत्तार्य निष्कुलीकृत्य च क्रमात् ॥
रसगन्धकलोहानां चूर्णेनापूर्य वेष्टयेत् ।
सूत्रेण मासमेकं तु मधुमध्ये निधापयेत् ॥
पथ्याशी भक्षयेदेकां सर्वरोगविमुक्तये ॥

१०० हर्रोको ३२ सेर दूधमें पकावें । जब दूधका मावा हो जाय और वह घी छोड़ दे तो अग्निसे नीचे उतारकर हर्रोंको चीरकर गुठली दूर करदें और समान भाग पारे, गन्धक तथा लोह भस्मको एकत्र खरल करके कज्जली बनाकर उपरोक्त हर्रों के भीतर भरदें और उन पर सूत लपेट कर शहदमें डाल दें तथा एक मास पश्चात् सेवन करें ।

पथ्य—पालन पूर्वक इनके सेवन से समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(८६१३) **हरीतक्यादि चूर्णम्**

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

पथ्याविभीतधात्रीणां चूर्णं चूर्णं मृतायसः ।
मधुना सह संलीढं मुहुर्मूत्रस्य शान्तिकृत् ॥

हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण तथा लोह भस्म समान भाग लेकर एकत्र खरल करें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे बहुमूत्र रोग नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—४ रत्ती ।)

(८६१४) **हरीतक्यादिपाकः**

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

प्रस्थमेकं शिवानां च जलद्रोणे निधापयेत् ।
द्विप्रस्थं दशमूलस्य सार्धप्रस्थयवाः स्मृताः ॥
ग्रन्थिकं चित्रकं भार्गी शङ्खपुष्पी बला सठी ।
विश्वापामार्गमेघाश्च पुष्करं गजपिप्पली ॥
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकं च पलं पलम् ।
अष्टांशे निसृते चैषा पथ्या पिष्टा पचेत्ततः ॥
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम् ।
जातीफलं केसरं च चतुर्जातं च धात्रिका ॥
दीप्याक्षौ जातिपत्रीं च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम् ।
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकं च पलार्धकम् ॥
पथ्या पाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा ।
जीर्णज्वरहरः सम्यस्तुष्टिपुष्टिबलप्रदः ॥
रसकोपे ग्रहण्यां च क्षीणधातौ च निःसृतौ ।
गुदामये श्वासकासे वातरक्ते हितो मतः ॥

१ सेर हर्र, २ सेर दशमूल, १॥ सेर जौ तथा ५-५ तोले पीपलामूल, चीता, भरंगी, शंखपुष्पी, खरैटी, कचूर, सोंठ, अपामार्ग (बिसखपरा), नागरमोथा, पोखरमूल और गजपीपल लेकर हर्रोंके अतिरिक्त सबको एकत्र कूट लें और ३२ सेर पानीमें पकावें। हर्रोंको पोटलीमें बांध कर इस पानी में डाल देना चाहिये। जब ४ सेर पानी रह जाय तो उसे छान लें और हर्रोंकी गुठली दूर करके उन्हें पीस लें और २५ तोले गोघृतमें भून लें। तत्पश्चात् उनमें उपरोक्त छना हुवा क्वाथ और ३ सेर गुड़ मिलाकर पकावें। जब अवलेह तैयार होने के करीब हो तो उसे अग्निसे नीचे उतारकर उसमें जायफल, केसर, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, आमला, अजवायन, बहेड़ा, जावित्री, सोंठ, काली मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण तथा ताम्रभस्म और लोहभस्म प्रत्येक २।।-२।। तोले मिला दें।

यह पाक जीर्णज्वरनाशक, तृप्तिकारक, बलदायक, पौष्टिक एवं रसविकार, संग्रहणी, धातुक्षीणता, धातुस्राव, अर्श, श्वास, कास और वातरक्तमें गुणकारीहै।

(८६१५) हरीतक्यादियोगः

(यो. र. । शूला. ; वृ. मा. ; व. से. । शूला.)

मूत्रान्तः पाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम् ।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशान्तये ॥

हर्रोंको (४ गुने) गोमूत्रमें इतना पकावें कि मूत्र शुष्क हो जाय। तदनन्तर उनका चूर्ण करके उसमें समान भाग लोहभस्म मिला लें। इसे गुड़में मिलाकर सेवन करने से समस्त प्रकार के शूल नष्ट होते हैं।

(मात्रा—२-३ रत्ती।)

(८६१६) हरीतक्यादिरसायनम्

(ग. नि. । रसायना. १)

हरीतकीमागधिकाक्षधात्र्य-
श्चूर्णीकृता लोहरजो विमिश्राः ।
सर्पिर्मधुभ्यां लिहतः शरीरे
जराप्रदूतं पलितं निहन्युः ॥

हर्र, पीपल, बहेड़ा और आमला; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह-भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे पलित का नाश होता है।

(मात्रा—२-३ रत्ती।)

(८६१७) हरीतक्यादिवटी

(वृ. नि. र. । शूला.)

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिला गन्धं हिङ्गु च ।
सैन्धवं च समं सर्वं वटीं कुर्यात्सुखावहाम ॥
लघुकोलप्रमाणां तां भक्षयेत्प्रातरेव हि ।
एकैका वटिका भुक्ता जन्मशूलनिवारिणी ॥
ग्रहण्यामतिसारे वाजीर्णे मन्दे च पावके ।
उष्णोदकानुपानेन सुखमाप्नोति नित्यशः ॥

हर्र, सोंठ, काली मिर्च, शुद्ध कुचला, शुद्ध गंधक, हींग और सेंधा नमक; इनके समान भाग

चूर्णको एकत्र मिलाकर (पानीके साथ) खरल करके छोटे बेर के समान गोलियां बना लें।

इनमें से १-१ गोली प्रातःकाल सेवन करनेसे जन्मका शूल भी नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह वटी ग्रहणी, अतीसार, अजीर्ण और अग्निमांद्यको भी नष्ट करती है।

अनुपान—उष्ण जल।

(८६१८) **हरीतक्याद्यवलेहः**

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. २२ कासा. ; वा. भ. । चि. अ. ३)

हरीतकीर्यवक्वाथद्व्याढके विंशतिं पचेत् ।
स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन्पुराणं गुडषट्पलम् ॥
दद्यान्मनःशिला कर्षं कर्षार्द्धं च रसाञ्जनात् ।
कुडवार्द्धं च पिप्पल्याः स लेहः श्वासकासनुत् ॥

२० हर्रों को जौके १६ सेर क्वाथमें पकावें। जब वे मृदु हो जायं तो उनकी गुठली अलग कर दें और हर्रोंको पीसकर पुनः उसी क्वाथमें मिला लें तथा उसमें ३० तोले पुराना गुड़ मिलाकर पुनः पकावें। जब अवलेह तैयार होने के करीब हो तो उसमें १। तोला शुद्ध मनसिल, ७॥ माशे रसौत और १० तोले पीपलका चूर्ण मिला दें।

यह अवलेह श्वास कासको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—३ माशेसे ६ माशे तक।)

(८६१९) **हाटकेश्वरीगुटिका**

(र. र. रसा. खं. । उप. ३)

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।
जम्बीरशरपुङ्खोत्थद्रवैर्मर्द्यं दिनावधि ॥
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे पचेद्गोक्षीरपूरिते ।
दोलायन्त्रे दिवारात्रं गुटिका हाटकेश्वरी ॥
जायते धारिता वक्त्रे जरामृत्युविनाशिनी ।
वर्षमात्रान्न संदेहो जीवेद्वर्षायुतं नरः ॥
दिनैकं त्रिफलाचूर्णं क्वाथैः खदिरबीजकैः ।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां पलैकं क्रामकं लिहेत् ॥

१ निष्क शुद्ध स्वर्णपत्र और ३ निष्क शुद्ध पारदको एकत्र मिलाकर १ दिन जम्बीरी नींबू और शरपुंखाके रसमें खरल करके गोली बना लें तथा उसे कपड़ेमें लपेटकर दोलायन्त्र विधिसे २४ घंटे गोदुग्धमें पकावें और फिर स्वांगशीतल होने पर निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे १ वर्ष तक मुखमें रखनेसे जरा मृत्युका नाश हो जाता है। (?)

त्रिफला चूर्णको १ दिन खैरके बीजोंके क्वाथ में खरल करके रक्खें।

इसमें से ५ तोले चूर्ण घी और शहदके साथ सेवन करनेसे रसका शरीरमें क्रामण होता है।

(८६२०) **हिक्कानाशनरसः**

(र. र. स. । उ. अ. १३ ; र. चं.)

रसगन्धकधान्याभ्रं तालताप्यो पलं क्रमात् ।
भागवृद्धं वचाकुष्ठहरिद्राक्षारचित्रकैः ॥
सपाठालाङ्गलीव्योषसैन्धवाक्षविषैः समम् ।
भावितं भृङ्गनीरेण हिक्कावैस्वर्यकासनुत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, धान्याभ्रक भस्म ३ भाग, शुद्ध हरताल ४ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म ५ भाग, उपल (शुद्ध गंधक या

पाषाणभेद) ६ भाग तथा बच, कूठ, हल्दी, जवाखार, चीतामूल, पाठा, कलियारी, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, सेंधा नमक, बहेड़ा और शुद्ध बछनाग; इनका चूर्ण १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियों का चूर्ण मिलाकर भंगरेके रसकी १ भावना देकर सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

यह रस हिचकी, स्वरभंग और कासको नष्ट करता है।

(मात्रा—२ रत्ती ।)

(८६२१) हिक्कान्तक रसः
(सुवर्णभस्मादि योगः)

(र. चं. ; र. रा. सु. । हिक्का.)

हेममुक्तार्ककान्तानां भस्म वल्लमितं वरम् ।
बीजपूररसक्षौद्रसौवर्चलसमन्वितम् ॥
हन्ति हिक्काशतं सत्यमेकमात्रादयत्नतः ।
का कथा पञ्चहिक्कानां हरणे सूत उच्यते ॥

स्वर्ण भस्म, मोती भस्म, ताम्र भस्म, और कान्तलोह भस्म १-१ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसमेंसे २-३ रत्ती रस बिजौरे नीबू के रस, शहद और संचल (काले नमक) के साथ मिलाकर सेवन करने से सैकड़ों प्रकारकी हिक्का (हिचकी) केवल एकही मात्रासे नष्ट हो जाती है फिर पांच प्रकारकी हिचकी की तो बात ही क्या है ?

(८६२२) हिङ्गुलभस्मविधिः

(यो. र.)

वल्लमात्रं तालपिष्टं शरावे स्थापयेत्ततः ।
तस्मिन्कर्षसमं देयं शकलं दरदस्य च ॥
पूरयेदार्द्रकरसं द्विगुणं तत्र बुद्धिमान् ।
पुष्पाणि माषमात्राणि परितः स्थापयेत्ततः ॥
शरावसम्पुटं दत्वा चुल्ल्यां मध्याग्निना पचेत् ।
घटिका त्रयपर्यन्तं तत उत्तार्य पेषयेत् ॥
ताम्बूले गुञ्जमात्रं तु देयं पुष्टिकरं मतम् ।
पाण्डौ क्षये च शूले च सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

एक मिट्टीके शरावमें ३ रत्ती हरतालका चूर्ण बिछाकर उसके बीचमें १। तोला हिंगुलकी डली रख दें और फिर उस पर २॥ तोले अदरकका रस डाल दें तथा उसके चारों ओर १ माषा लौंग रख दें। तदनन्तर उसे दूसरे शरावसे ढककर सन्धिको भली भांति बन्द कर दें और उस सम्पुटपर कपरमिट्टी करके सुखा लें।

अब इस सम्पुटको चूल्हे पर रखकर उसके नीचे ३ घड़ी तक मध्यमाग्नि जलावें और फिर स्वांग शीतल होने पर हिंगुलकी भस्मको निकालकर पीस लें।

इसमेंसे १-१ रत्ती पान में रखकर खिलाने से शरीर पुष्ट तथा क्षय, पाण्डु और शूलादिका नाश होता है।

(८६२३) हिङ्गुलशोधनम् (१)

(र. प्र. सु. । अ. ६)

कूष्माण्डखण्डमध्ये तु स्वेदितो लकुचाम्बुना ।
सकृत्सञ्जायते शुद्धः सर्वकार्येषु योजयेत् ॥

हिंगुलकी डलीको पेठे (भूरे कुम्हड़े)के टुकड़ेके भीतर रखकर (दोलायन्त्र विधिसे १ दिन) लकुच (बढल) के रसमें स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८६२४) **हिङ्गुलशोधनम्** (२)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२)

निम्बूकस्वरसेनेह हिङ्गुलं श्लक्ष्णचूर्णितम् ।
विभावयेत्सप्तवारं क्षालयेद्बहुशोऽम्भसा ॥
ततः संशोषयेद्धर्मे रसतन्त्रविधानवित् ।
एवं संशोधितं रक्तं वीतशङ्कः प्रयोजयेत् ॥

हिंगुलको बारीक पीसकर नीबूके रसकी सात भावना दें और फिर कई बार पानीसे धो डालें (जिससे उसकी अम्लता जाती रहे) तद-नन्तर उसे धूपमें सुखा कर रख लें ।

(८६२५) **हिंगुलशोधनम्** (३)

(शा. ध. । खं. २ अ. १२ ; भा. प्र.; यो. र. ; र. म. ; र. र. स. । अ. ३; आ. वे. प्र. । अ. ३ ; रसें. सा. स.)

मेषीक्षीरेण दरदमम्लवर्गैश्च भावितम् ।
सप्तवारं प्रयत्नेन शुद्धिमायाति निश्चितम् ॥

हिंगुलको भेड़के दूध और अम्लवर्गके रसकी सात सात भावना देने से वह शुद्ध हो जाता है।

(८६२६) **हिङ्गुलशोधनम्** (४)

(र. र. स. । पू. अ. ३ ; आ. वे. प्र. । अ. ३ ; रसे. सा. सं.)

सप्तकृत्वाऽऽर्द्रकद्रावैर्लकुचस्याम्बुनाऽपि वा ।
शोषितो भावयित्वा च निर्दोषो जायते खलु ॥

हिंगुलको अदरकके या लकुच (बढल)के रसकी सात भावना देकर सुखा लेनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८६२७) **हिङ्गुलशोधनम्** (५)

(रसे. सा. सं.; यो. त. । त. १७)

अम्लवर्गद्रवैः पिष्ट्वा दरदो माहिषेण च ।
दुग्धेन सप्तधा पिष्टा शुष्कीभूतो विशुध्यति ॥

हिंगुलको अम्लवर्गमें खरल करनेके पश्चात् भैंसके दूधमें ७ बार घोट घोट कर सुखा लेने से वह शुद्ध हो जाता है।

(८६२८) **हिङ्गुलशोधनम्** (६)

(रसे. सा. सं.)

दरदं दोलिकायन्त्रे पक्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ।
सप्तवारमजामूत्रैर्भावितं शुद्धिमेति हि ॥

हिंगुलको दोलायन्त्र विधिसे (१ दिन) जम्बीरी नीबूके रसमें स्वेदित करके बकरीके मूत्रकी सात भावना देनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८६२९) **हिङ्गुलात्पारदनिस्सारण विधिः** (१)

(शा. ध. । ख. २ अ. १२; भा. प्र. ; र. रा. सु. ; आ. वे. प्र. । अ. ३ ; रसे. सा. सं.)

निम्बूरसैर्निम्बपत्ररसैर्वा याममात्रकम् ॥
पिष्ट्वा दरदमूर्ध्वं च पातयेत्सूतयुक्तिवत् ।
ततः शुद्धरसं तस्मान्नीत्वा कार्येषु योजयेत् ॥

हिंगुलको १ पहर नींबूके या नीमके पत्तोंके रसमें खरल करके डमरुयन्त्रमें ऊर्ध्व पातन करलें। (नीचेकी हांडीमें हिंगुल रखकर उसपर दूसरी हांडी उल्टी ढक दें और संधिको मजबूतीसे बन्द करके आग पर चढ़ा दें । ऊपर वाली हांडीके पेंदे पर

भीगे हुवे कपड़ेकी गद्दी रक्खें और उसे बार बार ठंडा करते रहें। इस विधिसे पारद ऊपरकी हांडीमें आ लेगेगा।)

इस प्रकार निकाला हुवा पारद शुद्ध होता है।

(८६३०) **हिङ्गुलात्पारदनिस्सारण विधिः** (२)

(रसायन सार)

यावत्प्रमाणन्दरदं गृहीतं
तावत्प्रमाणञ्च पटम्प्रगृह्य ।
प्रसार्य चूर्णं खलु हिङ्गुलस्य
निर्धौतवस्त्रेऽम्ल सुभावितस्य ॥
वस्त्रन्तथाऽऽकुञ्चयता बुधेन
यथा न सङ्घातमुपैति चूर्णम् ।
कार्य्यन्तयोर्वर्तुलगोलकञ्च
लड्डुकवद्धिङ्गुलवस्त्रयोस्तत् ॥
बद्ध्वा पुनस्सूत्रमुखेन सम्यग्
लोहस्य तापे निदधीत धीमान् ।
तथा यथानैति चलत्ववृत्ति
गतिङ्कपालैः कतिभिः सुरुध्य ॥
वेदप्रमाणाङ्गुलमुच्छ्रिते द्वे
दृढेष्टके भूमितले निदध्यात् ।
लम्बेन पत्रेण समास्तृते च
तयोर्ऋजीषं ह्युपवेशयेत ॥
प्रज्वाल्य दीपस्य शलाकया तद्
दरोत्थ नान्द्या पिदधीत धीमान् ।
यन्त्रे सुशीते स्वयमेव नान्दी-
मुत्थाप्य गृह्णातु विशुद्धसूतम् ॥
नान्द्यावक्षसि मग्नं लग्नन्तस्मिन्नृजीषपात्रेऽपि ।
गोलकमध्ये नग्नं कञ्चुकसप्तकविनाभावे ॥

हिंगुलको नीबूके रसमें घोटकर सुखालें। तदनन्तर जितने तोले हिंगुल हो उतने ही तोले स्वच्छ वस्त्रके टुकड़े लेकर उनमेंसे एक टुकड़ेको बिछाकर उस पर हिंगुलके चूर्णको फैला दें और फिर कपड़ेको इस प्रकार लपेट कर गेंदसी बनावें कि हिंगुल इकट्ठा न हो जाय। तत्पश्चात् उस गेंदपर बाकी रहा हुवा कपड़ा लपेटकर उस पर सुतली या डोरा लपेट दें। अब भूमि पर एक अच्छा लम्बा चौड़ा कागज़का तख्ता बिछाकर उस पर ४ अंगुल ऊंची दो ईटें रखकर उन पर लोहे का तवा रख दें और उस तवे पर उपरोक्त गोला रख कर उसके चारों ओर मिट्टीके ठीकरे लगा दें कि जिससे गोला इधर उधर न खिसक सके। इसके पश्चात् दियासलाईसे उस गोलेमें आग लगादें (या उस पर दो चार अंगारे रख दें अथवा मिट्टीका तेल छिड़ककर दियासलाई जलाकर लगा दें और गोलेमें अच्छी तरह आग लग जाने पर लपट बुझा दें।) जब गोला अच्छी तरह सुलग जाए और आग बुझनेका भय न रहे तो तवेके ऊपर एक नांद ढकदें। इस नांदको ठीकरियोंके ऊपर इस प्रकार रखना चाहिये कि नांद भूमिसे आध अंगुल ऊंची रहे कि जिससे वायु आ जा सके। (नांद भूमिसे अधिक ऊंची रहेगी तो पारद बाहर निकल जायगा।)

(चार छः पहर पश्चात्) जब नांदकी पेंदी स्वांग शीतल हो जाय तो धीरेसे उसे सीधा करलें और उसके भीतर लगे हुवे पारको छुड़ा लें।

(यदि बीच ही में आग बुझ जानेसे गोला कच्चा रह गया हो तो उस पर थोड़ा कपड़ा लपेट

कर पुनः उक्त विधिसे पारद निकालें। जले हुवे कपड़ेकी राखको खरलमें घोटकर फूंकसे उड़ा देनेसे या बार बार पानी डालकर नितारनेसे उसमें मिला हुवा शेष पारदभी निकल आयेगा। इस विधिसे ८० तोले हिंगुलसे ७५ तोले तक पारद निकल आता है।)

(८६३१) हिङ्गुलात्पारद निस्सारण-विधिः (३)

(रसे. सा. सं.)

दरदं तण्डुलस्थूलं कृत्वा मृत्पात्रके त्रिदिनम्।
भाव्यं जम्बीररसैश्चाङ्गेर्य्या वा रसैर्बहुधा॥
ततश्च जम्बीरवारिणा चाङ्गेर्य्यारसेनपरिप्लुतम्।
कृत्वा स्थालीमध्ये निधाय तदुपरि कठिनी घृष्टम्॥
चारुशरावं तत्र त्रिशद्वारं जलं देयम्।
उष्णे हेयं तथैव तदूर्ध्वपातनेन निर्म्मलः शिवजः॥

हिंगुलके चावलोंके समान बारीक टुकड़े करके मिट्टीके बरतन में रख कर उसमें जम्बीरी नीबूका या चांगेरीका रस इतना डालें कि हिंगुल उसमें डूब जाय। उसे ३ दिन तक इसी प्रकार भिगोए रहें। ज्यों ज्यों रस कम होता जाए और डालते रहें। तदनन्तर उसमें और नया रस डालकर उस बरतन पर एक ऐसा शराव सीधा ढक दें कि जिसकी तली पर खड़िया मिट्टीका लेप किया हुवा हो। तत्पश्चात् सन्धिको अच्छी तरह बन्द कर दें। (हाण्डी पर पहिले से ही ३-४ कपड़मिट्टी करलेनी चाहियें।) अब इस हाण्डीको अग्नि पर चढ़ा दें और ऊपरके शरावमें पानी भरदें। जब पानी गरम हो जाए तो उसे बदल दें। इसी प्रकार जब ३० बार पानी बदला जा चुके तो आग देनी बन्द करदें और हांडीके स्वांगशीतल होने पर उसे आहिस्ता से खोलकर ऊपरके प्यालेमें लगे हुवे पारदको छुड़ा लें।

(८६३२) हिङ्गुलेश्वररसः (१)

(र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

तोलकैकं समादाय शुद्धं हिङ्गुलगन्धयोः।
माषद्वयं जीर्णताम्रं सर्वमेकत्र मर्दयेत्॥
शिलायां शिउया यामं शाल्मलीसत्वभावितम्।
गुञ्जाद्वयं वटीं कुर्य्यात्प्रयत्नेन भिषग्वरः॥
सम्मर्द्य मधुना खादेदतिसारनिपीडितः।
ग्रहणीरोगसंयुक्तः सङ्ग्रहग्रहणीयुतः॥
प्रवाहिकां क्लान्ततनुरग्निमान्द्यादिकं जयेत्।
धान्यकं जीरकं क्वाथमनुपानं प्रयोजयेत्।
हिङ्गुलेश्वरनामोयं रसः सर्वगदापहः॥

शुद्ध हिंगुल और शुद्ध गंधक १-१ तोला तथा ताम्रभस्म २ माशे लेकर सबको पत्थरके खरलमें १ पहर सेंभलकी जड़के रस में खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक एक गोली शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे अतिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका और अग्निमांद्यादिका नाश होता है।

अनुपान—धनिये और जीरेका क्वाथ।

(८६३३) हिङ्गुलेश्वररसः (२)

(वृद्धज्वराङ्कुशरसः)

(र. र. स. । उ. अ. १२)

रसहिङ्गुलजेपालैर्वृद्धया दन्त्यम्बुमर्दितः।
दिनार्धेन ज्वरं हन्याद् गुञ्जैकं सितया सह॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध हिंगुल २ भाग, और शुद्ध जमालगोटा ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर दन्तीमूलके क्वाथमें खरल करके सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमें से १ रत्ती रस मिश्रीके साथ देनेसे (विरेचन होकर) ज्वर जाता रहता है ।

हिङ्गुलेश्वररसः (३)

(रसे. सा. सं. ; भै. र.; र. का. धे. ; र. चं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । ज्वरा. ; रसे. चि. म. । अ, ९)

प्र. सं. ५६५० "मृतसञ्जीवनीवटी" देखिये

इसमें हिंगुल भी एक भाग है तथा जम्बीर रस की भावना का अभाव है ।

(८६३४) हिमांशुरसः

(र. र. स. । उ. अ. १७ ; र. च. । प्रमेहा.)

रसस्य कर्षमादाय खल्वे निक्षिप्य बुद्धिमान् ।
रक्तागस्त्यप्रसूनस्य स्वरसेन विमर्दयेत् ॥
सप्तवारं तथा साधु श्वेतदूर्वारसेन च ।
निष्कद्वयं टङ्कणं च कर्षं खादिरसारतः ॥
कर्पूरं रसतुल्यं च सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
यावच्चिक्कणतां याति युक्त्या चन्दनवारिणा ॥
हरेणुमात्रान्वटकान् छायायां परिशोषितान् ।
प्रातः प्रातश्च सेवेत मध्याह्ने च विशेषतः ॥
निशायां च विशेषेण सेवनीयः प्रयत्नतः ।
एतद्धि मेहनुद् द्रव्यं मुखशोषहरं परम् ।
सोमरोगहरं सर्वपिटिकानाशनं मतम् ।
हिमांशुनामतः ख्यातं तृष्णादाहनिवारकम् ॥

१। तोला शुद्ध पारद (या रस सिन्दूर)को खरलमें डालकर लाल अगस्तिके फूलोंके रसकी सात भावना दें । तदनन्तर इसी प्रकार दूर्वा (दूब घास)के रसमें साठ बार घोटें । तत्पश्चात् उसमें ७॥ माशे सुहागे की खील और १।-१। तोला कत्था तथा कपूर मिलाकर चन्दनके पानीके साथ इतना खरल करें कि चिकनाहट आ जाए । तब रेणुकाके समान (आधी आधी रत्तीकी) गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें ।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातः दोपहर और शामको खानेसे प्रमेह, मुखशोष, सोमरोग, प्रमेह-पिडिका, तृष्णा और दाहका नाश होता है ।

(८६३५) हिरण्यगर्भपोट्टलीरसः

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

एकांशो रसराजस्य ग्राह्यौ द्वौ हाटकस्य च ।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागाः षड् दीर्घनिःस्वनात् ॥
त्र्यंशं बलेर्वराटयाश्च टङ्कणो रसपादिकः ।
पक्वनिम्बूकतोयेन सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥
मूषामध्ये न्यसेत् कल्कं तस्य वक्त्रं निरोधयेत् ।
गर्तेऽरत्निप्रमाणे तु पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः ॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषोदरान्नयेत् ।
ततः खल्लोदरे मर्द्य सुधारूपं समुद्धरेत् ॥
एतस्यामृतरूपस्य दद्यात् द्विगुञ्जसम्मितम् ।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥
मन्दाग्नौ रोगसङ्घे च ग्रहण्यां विषमज्वरे ।
गुदाङ्कुरे महामूले पीनसे श्वासकासयोः ॥
अतिसारे ग्रहण्याश्च श्वयथौ पाण्डुके गदे ।
सर्वेषु कोष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहादिकेषु च ॥

वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च ।
दद्यात् सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद्रसायनम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, स्वर्ण भस्म २ भाग, मोती भस्म ४ भाग, शंख भस्म ६ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग, कौड़ी भस्म ३ भाग और सुहागेकी खील ½ भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको पके नीबूके रसमें खरल करके मूषामें बन्द करदें । तदनन्तर उसे ३० उपलों की अग्निमें गढ़ेमें रखकर पकावें । जब पुट स्वांगशीतल हो जाय तो औषधको निकालकर पीस लें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसे घी, शहद और २९ काली मिर्चोंके चूर्णके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्य, ग्रहणीरोग, विषमज्वर, अर्श, पीनस, श्वास, कास, अतिसार, पाण्डु, शोथ, उदररोग, यकृद्विकार और प्लीहाविकारोंका नाश होता है । यह रस एक दोषज, द्वन्द्वज और सान्निपातिक अनेक रोगों में अमृतके समान गुणकारी है ।

हिरण्यगर्भ पोटलीके अन्य प्रयोग ' हेमगर्भपोटली ' नामसे दिये गये हैं ।

(८६३६) हिरण्यगर्भरसः (१)

(र. का. धे. । क्षय.)

शुद्धताम्रस्य पत्राणि कुर्यात्तनुतराणि च ।
निर्गुण्डीनवसाराभ्यां शोधयित्वाऽथ तानि तु ॥
तालसोमलसत्वाभ्यां रसगन्धकतैलतः ।
समैः समैः सुपिष्टैश्च मूत्रार्कक्षीरतः पुनः ॥
त्रिक्षारं पञ्चलवणसोरतोरीविषैरपि ।
सर्वतुल्यैः शोषयित्वा संरोध्य च शरावके ॥
विमुद्रय गजगर्ते तु वह्नियामाष्टकं भवेत् ।
शीतानि च गृहीत्वाऽथ रसभस्मालभस्मकम् ॥
गन्धं शुद्धं षोडशकद्वादशाष्टविभागतः ।
अर्कक्षीरेण संमर्द्य वन्हिरेकोनविंशतिम् ॥
यामान्सिद्धो रसो नाम्ना सर्वरोगहरः परः ।
हिरण्यगर्भो गुञ्जैकः क्षयरोगनिवारणः ॥
श्वासकासौ सङ्ग्रहणीं वातव्याधीं च सर्वशः ।
विशेषान्नाशयत्येव यथारोगानुपानतः ॥

शुद्ध ताम्रके बारीक पत्रोंको तपा तपाकर नवसादर मिले हुवे संभालुके रसमें सात बार बुझावें । तदनन्तर १ भाग ये पत्र लेकर उनपर गोमूत्र और आकके दूधमें एकत्र खरल किये हुवे १–१ भाग हरतालसत्व सोमल सत्व, शुद्ध पारद और गंधकके तेल का लेप कर दें । तत्पश्चात् जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, पांचों नमक, शोरा, फिटकरी और शुद्ध बछनाग; इनका चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र मिलावें और यह मिश्रण उपरोक्त औषधोंके बराबर (५ भाग) लेकर आकके दूध और गोमूत्रमें खरल करके उपरोक्त पत्रों पर लेप करदें और सुखाकर शराव–सम्पुट में बन्द करें । फिर इस सम्पुटको गजपुटके गढ़ेमें रख कर ८ पहर तक पकावें । इसके पश्चात् जब वह स्वांगशीतल हो जाय तो औषधको निकाल कर उसमें १६ भाग पारदभस्म, १२ भाग हरिताल भस्म और ८ भाग शुद्ध गंधकका चूर्ण मिलाकर आकके दूधमें खरल करें और गोला बनाकर सुखाकर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके पहिलेकी भांति गजपुटके गढ़ेमें रखकर १९ पहर

पाक करें और फिर स्वांगशीतल होने पर निकाल कर खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसके सेवनसे क्षय, श्वास, कास, वातव्याधि और संग्रहणीका नाश होता है ।

(८६३७) हिरण्यगर्भरसः (२)

(र. चि. । स्त. ७)

उच्चवर्णसुवर्णस्य गाल्य गद्याणका दश ।
तेषां सूक्ष्माणि पत्राणि कुर्यादेकाङ्गुलानि च ॥
यावन्त्येतानि पत्राणि तत्तुल्यः शुद्धपारदः ।
मिश्रं विंशति गद्याणं निम्बुकस्य रसेन च ॥
खल्वे दृढं विभाव्यं हि यामयुग्मात्प्रपीयते ।
शुष्के शुष्के रसं क्षेप्य स्वेद्या पिष्टी दिनाष्टकम्॥
आरनालं क्षिपेत्स्थाल्यां खण्डैर्निम्बुकजैः समम् ।
शिग्रुवृक्षस्य पत्रैश्च नित्यं नित्यं च नूतनैः ॥
वर्तितैः कुहरीं कुर्यात्तद्गर्भे हेमपिष्टिकाम् ।
क्षिप्त्वा वक्त्रं तयाऽऽच्छाद्य कृत्वा वर्तुलगोलकम् ॥
दोलायन्त्रे ततः स्थाल्यां विन्यसेद्वस्त्रवेष्टितम् ।
इत्थमष्टदिनं स्वेद्यं यावन्नश्यति काञ्जिकम् ॥
चणकाख्यबदर्याश्च मृदुपत्राणि वर्तयेत् ।
तत्पिण्डं प्रक्षिपेद्धीमान्पत्र कुहिरिकान्तरे ॥
विष्णुक्रान्ताजटानां च श्रीखण्डस्य च वल्कलम् ।
पिण्डस्योपरि मुक्त्वाऽथ श्रीखण्डोपरि पिष्टकम् ॥
श्रीखण्डं च पुनर्दद्यात्पिण्डं बादर्यकं क्षिपेत् ।
ब्रध्ने कोडीयकं वेध्यं सूचीवेधप्रमाणकम् ॥
अधोवक्त्रं च तद्देयं पिधानं कुहिकोपरि ।
खर्परे कुहिकां क्षिप्त्वा वेष्टितां वस्त्रमृत्स्नया ॥
बारम्बारं पुटैकैकं दद्यात्कनकपञ्चकम् ।
बदर्याः पत्रपिण्डाद्यैर्न्यूनैर्न्यूनैर्मुहुर्विधः ॥
एकविंशतिवारांश्च मुक्त्या दद्यात्पुटस्तथा ।
स्वेदस्य कर्मणाऽनेन खटिकासन्निभो रसः ॥
भूमावालेखिता रेखा श्वेता निःसरति स्फुटा ।
क्षिप्त्वा तं भूधरे यन्त्रे चतुर्भिश्छाणकैः पुटः ॥
प्रदद्यात्स्वाङ्गशीतेत्र युक्त्येत्थं पुटपञ्चकम् ।
पञ्चभिश्छाणकैः पञ्च पञ्च षड्भिश्च छाणकैः ॥
छाणकैः सप्तभिः पञ्च त्वष्टभिः पञ्च गोमयैः ।
एवं पञ्चपुटः प्रान्ते छाणैकैकं विवर्धयेत् ॥
एकवृद्ध्यादिकं देयं यावत्पुटशतं भवेत् ।
छाणकानि च पञ्चाशच्छतानीह चतुर्दश ॥
गणितानि भवन्त्येव दत्ते शतपुटे ध्रुवम् ।
षोडशांशविभागेन ह्यधस्ताद्द्विपुटे पुटे ॥
षड्गुणो जीर्यते यावद्दातव्यः शुद्धगन्धकः ।
एवं पुटशते दत्ते लाक्षासिन्दूरसन्निभः ॥
जपाकुसुमसंकाश उद्यदर्कसमप्रभः ।
अतीवारुणतां प्राप्तस्तच्चूर्णं कूपके क्षिपेत् ॥
सिद्धो हिरण्यगर्भोऽभूत्तज्ज्ञैः प्रोक्तः पुरा रसः।
विधाय रक्तिकामात्रस्ताम्बूलेन च भक्षयेत् ॥
द्वीपसंख्येषु मेहेषु ज्वरेषु विविधेषु च ।
अतिसारेषु सर्वेषु शूलेऽजीर्णे च दुस्तरे ॥
कामलायां पाण्डुरोगे हलीमकगदेष्वपि ।
अशीतिवातरोगेषु जीर्णदेहेषु दीयते ॥
सम्यग्रोगं परिज्ञाय देयो वैद्येन रोगिषु ।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते प्रत्यहं सेविते रसे ॥
देहकान्तिः सुवर्णाभा प्रत्यहं जायतेऽधिका ॥

ऊंची जातिके ५ तोले स्वर्णके एक एक अङ्गुल लम्बे चौड़े सूक्ष्म पत्र करावें और फिर

उसमें ५ तो. शुद्ध पारद मिलाकर खरल करें। जब दोनों मिल जाएं तो उसमें नींबूका रस डालकर तप्त खल्वमें खरल करें। रस इतना डालना चाहिये कि दो पहरमें सूख जाय। फिर नया रस डालकर दोपहर खरल करें। इसी प्रकार दो दो प्रहर पश्चात् नया रस डालते हुवे ८ दिन तक तप्त खल्वमें मर्दन करें। तत्पश्चात् सहंजनेकी नवीन कोंपलोंको पीसकर उसकी मूषा बनाकर उसमें उपरोक्त स्वर्ण और पारदकी पिष्टी डालकर उसके मुखको इसी (सहंजनेके पत्तों की) लुगदीसे बन्द कर दें। तदनन्तर एक मजबूत हाण्डीमें नींबूके टुकड़े और कांजी भर कर चूल्हे पर चढ़ावें। तथा उसमें उपरोक्त पिष्टियुक्त संहजनेके पत्तोंकी मूषाको कपड़ेमें लपेट कर दोलायन्त्रविधिसे ८ दिन तक स्वेदित करें। ज्यों ज्यों कांजी सूखती जाए नई डालते जाएं। इसके बाद कांजीके सूख जाने पर अग्नि देनी बन्द करदें और स्वांगशीतल होने पर औषधकी पोटलीको निकाल लें।

अब चणिबोर (झड़बेरा)के कोमल पत्तोंको पीस कर लुगदी बनावें। और एक पक्की मूषामें इस लुगदीको रखकर उसके ऊपर विष्णुक्रान्ता (कोयल)की जड़की लुगदी रक्खें और उस पर मलयागिरी सफेद चन्दनके वृक्षकी छालका एक टुकड़ा रखकर उस पर उपरोक्त स्वर्ण पारद वाली पिष्टी रख दें एवं उसके ऊपर चन्दन की छालका टुकड़ा रखकर उसे बेरीके पत्तोंकी लुगदीसे ढक दें। इसके पश्चात् इस मूषा पर एक ढकना ढक दें कि जिसमें सुईके समान छेद हो और उस मूषा पर ३-४ कपड़मिट्टी करदें तथा उसे सुखाकर एक मिट्टीके कूण्डेमें रक्खें और उस पर ५ कण्डे रखकर पुट लगादें इसीप्रकार २१ पुट दें। हर बार बेरीके पत्तोंकी लुगदी आदि थोड़ी थोड़ी कम करते रहना चाहिये। इस विधिसे २१ पुट पूरी हो जानेके बाद पारद खड़ियाके समान सफेद हो जायगा और उससे भूमिपर रेखा खींची जायगी तो वह भी स्पष्ट और सफेद होगी।

अब इस खिड़ियाके समान तैयार हुवे स्वर्ण पारदके मिश्रणको भूधरयन्त्रमें रख कर निम्नलिखित प्रकारसे १०० पुट दें (१) ५ पुट ४-४ कण्डोंमें; (२) ५ पुट ५-५ कण्डोंमें (३) ५ पुट ६-६ कण्डोंमें (४) ५ पुट ७-७ कण्डोंमें (५) ५ पुट ८-८ कण्डोंमें (६) ५ पुट ९-९ कण्डोंमें (७) ५ पुट १०-१० कण्डोंमें; इसी प्रकार हर ५ पुटके बाद १-१ कण्डा बढ़ाते जाएं। इस विधिसे १०० पुट पूरी करनेमें कुल १४५० कण्डे खर्च होंगे। (हिसाब लगाने पर १३५० होते हैं।) उपरोक्त पुटों में हर बार औषध का सोलहवां भाग शुद्ध गंधक भी औषधके नीचे रखना चाहिये। इस विधिसे १०० पुटोंमें षड्गुण (६। गुना) गंधक जारित हो जायगा और अत्यन्त रक्तवर्ण तथा तेज युक्त रस तैयार होगा उसे खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे १ रत्ती रस पानमें रखकर खाना चाहिये।

इसके सेवन से समस्त प्रकारके प्रमेह, अनेक प्रकारके ज्वर, अतिसार, शूल, अजीर्ण, कामला, पाण्डु, हलीमक, वातव्याधि, और शरीरकी क्षीणता आदिका नाश होता है।

रोगका ठीक ठीक निदान करनेके पश्चात् उचित रीति से यह रस सेवन कराया जाय तो धीरे धीरे रोग नष्ट होकर शरीरकी कान्ति बढ़ जाती है ।

(८६३८) **हिरण्याख्यवलेहः**

(वृ. मा. । बाला.)

कुष्ठं वचाऽभया ब्राह्मी कनकं क्षौद्रसर्पिषा ।
वर्णायुष्कान्तिजननं लेहं बालस्य दापयेत् ॥

कूठ, बच, हर्र और ब्राह्मी; इनका चूर्ण तथा स्वर्ण भस्म १–१ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर खरल करलें ।

इसे शहद और घीके साथ मिलाकर बालकको चटानेसे वर्ण, आयु और कान्तिकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—१ रत्ती ।)

(८६३९) **हीरकमारणम्** (१)

(रसे. सा. सं. ; र. मं.)

त्रिसप्तकृत्वः सन्तप्तं खरमूत्रेण सेचयेत् ।
मुद्ररैस्तालकं पिष्ट्वा तद्गोले कुलिशं क्षिपेत् ॥
प्रध्मातं वाजिमूत्रेण सिक्तं पूर्वक्रमेण तु ।
भस्मी भवति तद्वज्रं वज्रवत्कुरुते तनुम् ॥
आयुष्यं सौख्यजननं बलरूपप्रदं तथा ।
रोगघ्नं मृत्युहरणं वज्रभस्म भवत्यलम् ॥

हीरे को तपा तपा कर २१ बार गधीके मूत्रमें बुझावें । तदनन्तर हरतालको (पानीके साथ) पीसकर उसमें वह हीरा रखकर गोला बनावें और उसे तपाकर घोड़ीके मूत्रमें बुझा दें । इसी प्रकार हरतालके गोलेमें रखकर तपा तपा कर २१ बार घोड़ीके मूत्रमें बुझानेसे उसकी भस्म हो जाती है ।

यह भस्म रोग समूहको नष्ट करके बल, आयु और सौख्य की वृद्धि करती है तथा शरीरको वज्रके समान दृढ़ बना देती है ।

(८६४०) **हीरकमारणम्** (२)

(र. र. स. । पू. अ. ४)

ब्रह्मज्योतिर्मुनीन्द्रेण क्रमोयं परिकीर्तितः ।
नीलज्योतिर्लताकन्दे घृष्टं घर्मे विशोषितम् ॥
वज्रं भस्मत्वमायाति कर्मैतज्ज्ञानवह्निना ॥

हीरेको नीलज्योति नामक लताके कन्दके (रसके) साथ खरल करके धूपमें सुखा लें । इस विधिसे उसकी भस्म हो जाती है । यह विधि ब्रह्मज्योति नामक मुनिकी बतलाई हुई है ।

(८६४१) **हीरकमारणम्** (३)

(र. र. स. । पू. अ. ४)

कुलत्थक्वाथसंयुक्तलकुचद्रवपिष्टया ।
शिलया लिप्तमूषायां वज्रं क्षिप्त्वा निरुध्य च ॥
अष्टवारं पुटेत्सम्यग्विशुष्कैश्च वनोपलैः ।
शतवारं ततो ध्मात्वा निक्षिप्तं शुद्धपारदे ॥
निश्चितं म्रियते वज्रं भस्म वारितरं भवेत् ॥

शुद्ध मनसिलको कुलथीके क्वाथमें मिले हुवे लकुच (बढल) के रसमें घोटकर दो शरावोंके भीतर उसका लेप कर दें और उन्हें सुखाकर उनमें हीरेको रखकर यथाविधि सम्पुट बनावें एवं उसे

सुखाकर अरण्य उपलों (वन कण्डों) में फूंक दें। इसी प्रकार ८ पुट दें। (हर बार शरावोंमें मनसिलका लेप कर लेना चाहिये।) तदनन्तर उस हीरे को तपा तपा कर १०० बार शुद्ध पारद में बुझावें।

इस विधिसे हीरेकी अवश्य ही वारितर भस्म हो जाती है।

(८६४२) हीरकमारणम् (४)

(भा. प्र. । पू. अ. १)

मेषशृङ्गभुजङ्गास्थि कूर्मपृष्ठाम्लवेतसम् ।
शशदन्तं समं पिष्ट्वा वज्रीक्षीरेण गोलकम् ॥
कृत्वा तन्मध्यगं वज्रं म्रियते ध्मातमेव हि ।
आयुः पुष्टिं बलं वीर्यं वर्णं सौख्यं करोति च ॥
सेवितं सर्व रोगघ्नं मृतं वज्रं न संशयः ॥

भेड़का सींग, सांपकी हड्डी, कछुवेकी पीठकी हड्डी, अमलबेत और खरगोशका दांत समान भाग लेकर चूर्ण करके सेहुंड के दूधमें खरल करें और उसका गोला बनाकर उसमें हीरेको रखकर ध्मावें। इस विधिसे हीरेकी भस्म हो जाती है।

हीरा–भस्म, आयुवर्द्धक, पौष्टिक, बलवीर्य–वर्द्धक, वर्णदायक और सर्वरोग नाशक है।

(८६४३) हीरकमारणम् (५)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; यो. र. ; र. चं. ; आ. वे. प्र. । अ. १३ ; शा. सं. । खं. २ अ. ११)

हिङ्गुसैन्धवसंयुक्ते क्षिपेत्क्वाथे कुलत्थजे ।
तप्तं तप्तं पुनर्वज्रं भवेद्भस्म त्रिसप्तधा ॥

कुलथीके क्वाथ में हींग और सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर उसमें हीरेको तपा तपाकर २१ बार बुझाने से हीरेकी भस्म हो जाती है।

(८६४४) हीरकमारणम् (६)

(रसे. सा. सं. ; शा. सं. । खं. २ अ. ११ ; आ. वे. प्र. । अ. १३ ; र. मं.)

मण्डूकं कांस्यजे पात्रे निगृह्य स्थापयेत्सुधीः ।
स भीतो मूत्रयेत्तत्र तन्मूत्रे वज्रमावपेत् ॥
तप्तं तप्तं च बहुधा वज्रस्यैवं मृतिर्भवेत् ॥

एक मेंढकको पकड़कर कांसीके पात्रमें रक्खें वह भयभीत होकर मूत्र त्याग कर देगा। उस मूत्रको पृथक् पात्रमें लेकर उसमें हीरेको तपा तपा कर बहुत बार बुझानेसे हीरेकी भस्म हो जाती है।

(८६४५) हीरकशोधनम् (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. ११)

तप्तं तप्तं तु तद्वज्रं खरमूत्रनिषेचयेत् ।
पुनस्ताप्यं पुनः सेच्यमेवं कुर्यात्त्रिसप्तधा ॥

हीरेको तपा तपाकर २१ बार गधेके मूत्रमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८६४६) हीरकशोधनम् (२)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; आ. वे. प्र. । अ. १३)

गृहीत्वाह्नि शुभे वज्रं व्याघ्रीकन्दोदरे क्षिपेत् ।
महिषीविष्ठया लिप्त्वा करीषाग्नौ विपाचयेत् ॥
त्रियामायां चतुर्यामं यामिन्यन्तेऽश्वमूत्रके ।
सेचयेत्पाचयेदेवं सप्तरात्रेण शुद्ध्यति ॥

हीरेको शुभ दिन में कटेलीकी जड़के भीतर रखकर उसके मुखको उसीके (कटेलीकी जड़के)

कपड़ेसे बन्द करके उसके ऊपर भैंसके गोबरका लेप कर दें और उसे रात्रिमें ४ पहर तक अरने उपलोंकी आगमें पकावें एवं प्रातःकाल घोड़ेके मूत्रमें बुझा दें। इसी प्रकार सात रात पाक करके घोड़ेके मूत्रमें सात बार बुझानेसे हीरा शुद्ध हो जाता है।

(८६४७) हीरकशोधनम् (३)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; आ. वे. प्र. । अ. १३ ; र. मं. ; रसे. सा. सं. ; शा. सं. । खं. २ अ. ११)

कुलत्थकोद्रवक्वाथे दोलायन्त्रे विपाचयेत् ।
व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं त्रिदिनात्तद्विशुद्धयति ॥

हीरेको कटेलीके कन्दमें बन्द करके कपड़ेमें लपेटकर कुलथी और कोदोंके क्वाथमें दोलायन्त्र विधि से ३ दिन तक पकानेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(८६४८) हीरावेध्यो रसः (हीरवज्ररसः)

(र. चि. म. । स्त. ७ ; र. का. धे. । सन्निपाता.)

टङ्काष्टकरसः शुद्धः क्षारिका टङ्कषोडश ।
खरमूत्रेण[1] सप्ताहं कृत्वा तन्मर्दयेद्द्वयम् ॥
हण्डिकायां निरुध्याऽथ काञ्जिके स्वेदयेद्दिनम् ।
शुद्धं हीरमथो नीत्वा गुञ्जायुग्मं द्विजातिकम् ॥
सप्तवेलमिदं तप्तं म्रियते हीरकं ध्रुवम् ।
अथ नो म्रियते चैव कदाचिदपि हीरकम् ॥
कण्टकारीरसे चैव पञ्चवेलं प्रकल्पयेत् ।
कृत्वाग्नौ लोहमूषायां म्रियते नान्यथा हि तत् ॥
मृतं नीत्वा तदा तैले वसुमात्रे[2] विनिक्षिपेत् ।
प्रतप्ते हण्डिकामध्ये रसोर्धस्तत्र दीयते ॥
नागहेम्नोश्च[3] पत्राणि षण्माषप्रमितानि च ।
पृथक् पृथक् निधाप्यन्ते हीरमूषमुखे ततः ॥
अति सूक्ष्माणि जायन्ते पिष्टयः सर्वस्य वस्तुनः।
पुनरर्धममुं सूतं पूर्वमर्द्धघृतं च यत् ॥
निःस्नेहे हण्डिकामध्ये कृत्वाग्निं ज्वालयेत्ततः ।
चुल्लिकोपरि विन्यस्य किञ्चित्तप्ते च पिष्टिकम् ॥
क्षिप्त्वा तामेकतः कृत्वा खोटरूपो रसस्तदा ।
खल्वे निष्पिष्य किञ्चिच्च मृत्तिकायाश्च सम्पुटे॥
निवेश्य भूतले किञ्चित्कोकिलैः परिपूर्यते ।
स्वल्पकैस्तैश्च यावत्स्याज्ज्वलदग्निप्रदीपनम् ॥
एवं सिद्धो भवेदेष रसराजश्च साधितः ।
हीरावेध्यो रसो नाम यत्नतः प्रतिपादितः ॥
यत्र तत्र न वक्तव्यो योक्तव्यो रोगशान्तये ।
निसंज्ञः सन्निपाते यस्तस्य तालुनि दीयते ॥
रक्तिकार्धार्धमात्रश्च सन्निपातं नियच्छति ।
शर्करा कोशकारं च खण्डमिक्षुप्रियालकान् ॥
पयश्च पायसं चैव कदलीफलमुत्तमम् ।
रसालां च परूषांश्च पानकं पथ्यमीरितम् ॥
अतिलौल्यकरं देयं शीतलं सलिलं तृषि ।
अग्नेर्बलमसौ कुर्याद्ग्रहणीरोगनाशनः ॥
दुष्टकुष्ठक्षयादींश्च विकारान्नाशयत्यसौ ।
हीरावेध्यो रसो नाम्ना यत्रयत्र प्रयुज्यते ॥
तान्रोगान्नाशयेन्नूनं रोगयोग्यानुपानतः ॥

आठ टंक (४० माशे) शुद्ध पारद और १६ टंक क्षारिका (ऊष–रेह मिट्टी) लेकर दोनोंको १ सप्ताह तक गधेके मूत्रमें खरल करें और फिर उसे कांजीसे भरी हुई हांडी में डालकर उसका मुख

---

१ पाठान्तराणि—नरमूत्रेण
२ चुल्लुमात्रे
३ नभोहेम्नश्च

बन्द करके १ दिन स्वेदित करें। (तदनन्तर हांडीके स्वांगशीतल होने पर उसमें से पारदको निकालकर कपड़ेसे कई बार छान कर स्वच्छ कर लें। बची हुई कांजीको धीरेसे निकाल देना चाहिये कि जिससे पारद उसके साथ न चला जाय।)

अब उत्तम जातिका २ रत्ती शुद्ध हीरा लेकर उसे तपा तपा कर सात बार उक्त पारदमें बुझावें। इससे हीरेको भस्म हो जायगी। यदि इस प्रकार भस्म न हो तो फिर उसे लोहेके मूषामें रख कर तपा तपा कर पांच बार कटेलीके रसमें बुझावें। इससे वह अवश्य भस्मी भूत हो जायगा।

तत्पश्चात् एक मूषामें १ चुल्लु तेल डालकर उसमें वह हीरक भस्म डालकर गरम करें और अच्छी तरह तप्त हो जाने पर उसमें उपरोक्त पारद का (जिसमें सात बार हीरा बुझाया था उसका) आधा भाग डाल दें और उसके ऊपर शुद्ध सीसे तथा स्वर्णके ६-६ माशे (वर्तमान तोलसे प्रत्येक ७॥ माशे) बारीक पत्र डाल दें। (इस मूषाको अग्नि पर तपानेसे) सब वस्तुओंकी सूक्ष्म पिट्ठी सी हो जायगी। तत्पश्चात् पूर्वोक्त आधा बचा हुवा (जिसमें हीरेको तपा तपा कर बुझाया था वह) पारद चिकनाई रहित हाण्डी (मूषा) में डालकर आगपर रक्खें और उसके कुछ गरम हो जाने पर उसमें यह पिट्ठी डाल दें एवं सबको अच्छी तरह मिलाकर उतार लें और खरलमें डालकर थोड़ी देर घोटकर मिट्टीके सम्पुटमें बन्द करें तथा उसे भूमिमें दबाकर (बहुत गहराई में नहीं) उसके ऊपर कोयलों की अग्नि जलावें। (कोयले अधिक न हों परन्तु उनसे ज्वाला निकलने लगे इतनी तेज आग अवश्य करनी चाहिये।) अग्निके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इस उत्तम रसकी जहां तहां चर्चा करनेकी आवश्यकता नहीं है, केवल समय पड़ने पर इसका चमत्कार दिखलाना चाहिये।

जब कोई रोगी सन्निपातसे मूर्च्छित हो तो उसकेशिरमें तालु पर (छुरे आदिसे जरा सा घाव करके) २ चावल भरसे आधी रत्ती तक यह रस उस जगह मल दें। इससे उसे चेत आ जायगा और सन्निपात नष्ट हो जायगा।

पथ्य—खांड, कोषकार (ईख भेद), मिश्री, ईख, प्रियाल (चिरौंजी फल), दूध, खीर, उत्तम केले की फली, रसाला, फालसे और हितकर शरबत आदि।

प्यास में शीतल जल देना चाहिये।

यह रस अग्निबल-वर्द्धक, ग्रहणीरोग नाशक है एवं दुष्ट क्षय और कुष्ठको भी नष्ट कर देता है तथा उचित अनुपानसे जिस रोगमें दिया जाता है उसीका नाश करता है।

(८६४९) **हीरावेध्यो रसः**

(रसें. चि. म. । अ. ७)

द्वौ भागौ मृतहीरस्य ह्यभ्रकस्य त्रयः पुनः।
भस्म सूतस्य चत्वारः षट्शुद्धगन्धकस्य च॥
मृतलोहस्य द्वौ भागौ चत्वारस्तारकस्य च।
रोचनाया भवन्त्यत्र भावनाः पञ्च सूतके॥
तथा सुवर्चलायाश्च दातव्या भावनाः क्रमात्।
अथो दृढायां मूषायां मध्ये दत्त्वा च तं रसम्॥

पुनः शरावद्वितये दत्त्वा पश्चाद्विमुद्रयेत् ।
हस्तप्रमाणके कुण्डे पुटो देयः शनैर्लघुः ॥
द्वियामं यावदेवैतच्छीतमादाय तं रसम् ।
विधाय भैरवस्याऽथ पूजनं भिषजस्ततः ॥
गुञ्जामेकममुं दद्याद्धीरावेध्यं रसेश्वरम् ।
मरिचेन समं प्रातस्ततस्ताम्बूलभक्षणम् ॥
क्रोधमात्सर्यमुत्सार्य व्यायामं घर्मसेवनम् ।
अतिप्रलपनं चिन्तामभ्यसूयां च वर्जयेत् ॥
असत्यभाषणं चैव पथ्यं सेव्यं निरन्तरम् ।
अनेन जायते पुष्टिर्दृष्ट्यारोग्यश्च जायते ॥
अनेन सुखमाप्नोति पुत्रं चानेन चोत्तमम् ।
अनेन नश्यते वायुरनेनायुश्च वर्धते ॥
अनेन लभते कान्तिमनेनापि जराञ्जयेत् ।
अनेन पलितं याति खालित्यञ्च विशेषतः ॥
अनेन वज्रकायः स्याद्विशेषेण निरामयः ।
स्थावरं जङ्गमञ्चापि कृत्रिमञ्चापि यद्विषम् ॥
अनेन न प्रभवति सेवमानस्य न क्वचित् ।
अनेन देवरूपः स्याज्जायते बुद्धिरुत्तमा ॥
क्षयं कासं प्रमेहञ्च रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
विद्रध्यष्ठीलिके गुल्मं ग्रहणीमपि दुस्तराम् ॥
अतिसारं महाघोरं सर्वान् व्याधींश्च नाशयेत् ॥

हीरा भस्म २ भाग, अभ्रक भस्म ३ भाग, पारद भस्म ४ भाग, शुद्ध गंधक ६ भाग, लोहभस्म २ भाग और चांदी भस्म ४ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके गोरोचन के पानी की तथा हुलहुलके स्वरसकी ५-५ भावना दें। तदनन्तर उसे एक दृढ मूषामें रखकर उस मूषाको २ शरावोंके सम्पुटमें बन्द करके १ हाथ गहरे और इतने ही लम्बे चौड़े गढे में रखकर इतने कण्डोंमें फूकें कि जिससे २ पहरमें अग्नि शान्त हो जाय। तत्पश्चात् उसके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर भैरव और वैद्य का पूजन करके उसे सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे १ रत्ती रस काली मिर्चके चूर्णके साथ (उचित अनुपान से) प्रातःकाल खिलाकर ऊपरसे पान खिलाना चाहिये।

इसके सेवनकालमें क्रोध, मात्सर्य, व्यायाम, धूपमें जाना, अधिक बोलना, चिन्ता, चुगली और असत्यभाषण का त्याग करके सदा पथ्य सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे पुष्टि, दृष्टि. आरोग्य, सुख, सन्तान, आयु, और कान्तिकी वृद्धि होती तथा वायुका नाश होता है। यह रस जरा (वृद्धावस्था), पलित, और विशेषतः खालित्य को नष्ट करता है। यह शरीरको निरोग और वज्रके समान दृढ बना देता है। इसे सेवन करने वाले पर स्थावर, जंगम या कृत्रिम विषका प्रभाव नहीं पड़ता।

यह रस बुद्धिको बढ़ाता और क्षय, कास, प्रमेह, दारुण रक्तपित्त, विद्रधि, अष्ठीला, गुल्म, संग्रहणी, और घोर अतिसारादिको नष्ट करता है।

(८६५०) हुताशनरसः (१)

(र. रा. सु.; वृ. यो. त.। त. ५९; भा. प्र.। म. खं. २)

नागरं कर्षमात्रञ्च टङ्कणं कर्षकद्वयम् ।
मरिचं सार्द्धकर्षं स्यात्तावद्दग्धवराटकम् ॥
विषं कर्षचतुर्थांशं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
रसो हुताशनो नाम्ना खाद्यो गुञ्जामितो ज्वरे॥

सोंठ का चूर्ण १। तोला, सुहागेकी खील २।। तोले, काली मिर्चका चूर्ण १।। कर्ष (१ तोला १०।। माशे), कौड़ी भस्म १।। कर्ष और शुद्ध बछनागका चूर्ण ३।।। माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

यह रस ज्वरोंको नष्ट करता है।

मात्रा—१ रत्ती।

(८६५१) हुताशनरसः (२)

(र. चं. ; यो. र, । अजीर्णा.)

एकांशकाः पारदगन्धटङ्काः
कपर्दशङ्खामृतगेहधूमा।
त्र्यंशा इमेऽथो मरिचं त्रिमांशं
सम्मर्दितं जृम्भरसेन गाढम् ॥
गुल्मारोचकशूलवह्निसदनाजीर्णे विषूचीं कफम्।
जाड्यं शीर्षसमुद्भवं च मुद्गप्रमाणा वटी ॥
लीढाऽऽर्द्रस्य रसेन हन्ति कथितानेतान्
गदान्ब्रह्मणा।
पूर्वं निर्मित एष यत्नशतकैर्नाम्ना हुताशो रसः॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक और सुहागेकी खील, १–१ भाग तथा कौड़ी भस्म, शंख भस्म, शुद्ध विषका चूर्ण, घरका धुंवा और काली मिर्चका चूर्ण ३–३ भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर जम्बीरी नीबूके रसमें अच्छी तरह घोटकर मूंगके समान गोलियां बना लें।

इसके सेवन से गुल्म, अरुचि, शूल, अग्निमांद्य, अजीर्ण, कफ और शिरकी जड़ताका नाश होता है।

इनमेंसे १–१ गोली अदरकके रसमें मिलाकर चाटनी चाहिये।

(८६५२) हुताशनरसः (३)

(र. चं. ; यो. र. ; वृ. नि. र. ; वै. र. । अग्निमांद्या. ; वृ. यो. त. । त. ७१ ; रसे. सा. सं. । अग्निमांद्या.)

एकद्विरुद्रादशभागयुक्तं
योज्यं विषं टङ्कणमूषणं च।
हुताशनो नाम हुताशनस्य
करोति वृद्धिं कफजित्वराणाम् ॥

शुद्ध विष १ भाग, सुहागेकी खील २ भाग और काली मिर्चका चूर्ण १२ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

यह रस अग्निकी वृद्धि और कफका नाश करता है।

(मात्रा—१ माशा।)

(८६५३) हुताशनो रसः

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । अग्निमांद्या.)

गन्धेशटङ्कणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम्।
अष्टभागन्तु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥
तद्वटीं मुद्गमानेन कृत्वार्द्रेण प्रयोजयेत्।
शूलारोचकगुल्मेषु विसूच्यामग्निमान्द्यके ॥
अजीर्णे सन्निपातादौ शैत्ये जाड्ये शिरोगदे ॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारद और सुहागेकी खील १–१ भाग तथा शुद्ध विष (बछनाग) ३ भाग एवं काली मिर्चका चूर्ण आठ भाग लेकर प्रथम

पारे गंधक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको जंभीरी नीबूके रसमें खरल करके मूंगके समान गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसके साथ देनेसे शूल, अरुचि, गुल्म, विसूचिका, अग्निमांद्य, अजीर्ण, सन्निपात, शीत और जड़ताका नाश होता है ।

(८६५४) **हृदयार्णवरसः**

(रसे. सा. सं.; धन्व.; र. र.; र. का. धे.; यो. र.; र. रा. सु.; भै. र.; रसे. चि. म.; र. चं. । हृद्रोगा.)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्रं तयोः समम् ।
मर्दयेत्रिफलाक्वाथैः काकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥
चणमात्रां वटीं खादेद्रसोऽयं हृदयार्णवः ।
काकमाचीफलं कर्षं त्रिफलापलसंयुतम् ॥
द्वात्रिंशत्तोलकं तोयं क्वाथमष्टावशेषितम् ।
अनुपानं पिबेच्चात्र हृद्रोगे च कफोत्थिते ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक १-१ भाग तथा ताम्रभस्म २ भाग (पाठान्तरके अनुसार १ भाग) ले कर तीनोंको एकत्र मिलाकर १-१ दिन त्रिफलाके क्वाथ और मकोयके रसमें खरल करके चनेके समान गोलियां बना लें ।

यह रस कफज हृद्रोगको नष्ट करता है ।

अनुपान—मकोयके फल १। तोला और त्रिफला चूर्ण ५ तोला लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर ४० तोले पानीमें पकाकर ५ तोले शेष रहने पर छान लें ।

(८६५५) **हृद्रोगहररसः**

(र. का. धे. । उरोग्रहा.)

वाह्लीकविश्वदहनामययावशूक-
पथ्यावचाबिडकणारुबुकैर्निहन्यात् ।
सूतः सपुष्करजटो यववारिपिष्टो-
हृद्रोगमग्निविकलत्वमतिप्रवृद्धम् ॥

हींग, सोंठ, चीतामूल, कूठ, जवाखार, हर्रे, बच, बिडनमक, पीपल; अरण्डमूल और पोखरमूल; इनका चूर्ण तथा पारद भस्म १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर जौके क्वाथमें खरल करके सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह रस प्रवृद्ध हृद्रोग और अग्निमांद्यको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**—१ माशा ।)

(८६५६) **हेमगर्भपोटलीरसः** (१)

(र. चं.; रसे. सा. सं.; धन्व.; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम् ।
मृतताम्रस्य भागैकं तोलैकं गन्धकस्य च ॥
मर्दयेच्चित्रकद्रावैर्दियामान्ते समुद्धरेत् ।
पूर्यां वराटिका तेन टङ्कणेन विलेपयेत् ॥
वराटीं पूरयेद्भाण्डे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
विचूर्णयेत्स्वाङ्गशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम् ॥
मृगाङ्कवच्चतुर्गुञ्जाभक्षणाद्राजयक्ष्मनुत् ॥

पारद भस्म ३ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग, और शुद्ध गंधक १ भाग (प्रत्येक १-१ तोला) लेकर सबको एकत्र मिलाकर चीतेके

क्वाथमें २ पहर खरल करके उसे कौड़ियोंके भीतर भर दें और उनके मुख (दूधमें पिसे हुवे) सुहागेसे बन्द कर दें एवं उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गज पुटमें फूंक दें तथा स्वांग शीतल होने पर निकाल कर (कौड़ी समेत) पीस लें।

मात्रा—४ रत्ती।

सेवन विधि आदि मृगाङ्क रस के समान।

इसे सेवन करनेसे क्षयका नाश होता है।

(८६५७) हेमगर्भपोटलीरसः (२)

(यो. र.; र. चं. । कासा.)

शुद्धसूतं चतुर्भागं द्विभागं गन्धकस्य च।
भागमेकं सुवर्णं च त्रिभागं शुल्बभस्म च॥
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम्।
गुटिकां कारयेत्तां तु बध्नीयात्खरकर्पटे॥
वस्त्रे किंचिद्बलिं स्थाप्य तत्र गोलं निधाय च।
बन्ध्नीयात्पोटलीं गाढां पश्चाद्वस्त्रेण वेष्टयेत्॥
सर्वभागसमं गन्धं दत्त्वा मृन्मयभाजने।
तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य मुखे मुद्रां च कारयेत्॥
विधायच्छिद्रं मुद्रास्थं द्रावं दृष्ट्वा शलाकया।
पाचयेत्सिकतायन्त्रे रसोऽयं मृदुवह्निना॥
यामार्धेन सुसंजातं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे॥
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोटली॥

शुद्ध पारद चार भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग, और ताम्र भस्म ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर १ सप्ताह तक घृतकुमारी (ग्वारपाठा) के रसमें खरल करें और फिर उसकी गोली बनाकर सुखा लें तथा एक मोटे कपड़े पर थोड़ा शुद्ध गंधक का चूर्ण रख कर उस पर वह गोली रख दें और कपड़ेको लपेट कर कड़ी पोटली बनावें तथा उस पर थोड़ा वस्त्र और लपेट दें। तत्पश्चात् एक मिट्टीके प्यालेमें सम्पूर्ण औषधियोंके समान शुद्ध गंधकका चूर्ण डालकर उस पर वह पोटली रक्खें और उसे दूसरे प्याले से ढक कर सन्धि बन्द करदें (तथा उस पर ३—४ कपड़मिट्टी करके सुखा लें।) ऊपर वाले प्यालेमें एक छिद्र कर देना चाहिये।

अब इस सम्पुटको बालुका यन्त्रमें रखकर मन्दाग्नि पर पकावें। आध पहरमें प्याले का गंधक पिघल जायगा। ऊपर वाले छिद्रसे सलाई डाल कर देखें और गंधक पिघल गया हो तो अग्नि देना बन्द कर दें तथा स्वांग शीतल होने पर गोलीको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे कास, श्वास, क्षय, वायु, कफ और संग्रहणी आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं।

(८६५८) हेमगर्भपोटलीरसः (३)

(यो. र.; वृ. नि. र. । कासा.)

शुद्धसूतं त्रिभागं च तत्समं शुल्बभस्म च।
भागैकं गन्धकं दद्यात्तदर्धं स्वर्णमेव च॥
कज्जलीं कारयेत्तां तु खल्वके सप्तवासरम्।
अथ निर्गुण्डिकाद्रवैर्मर्दयेद्दिनसप्तकम्॥
अथवा कनकद्रावैर्गुटिकां कारयेत्ततः।
किंचिद्बलिसमायुक्ते वस्त्रे गोलं निधाय च॥
बध्नीयात्पोटलीं गाढामेवं च त्रिपुटं चरेत्।
दृढमृन्मयपात्रे तु गन्धं दत्त्वाऽधरोत्तरम्॥

तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य निर्वातभवनान्तरे।
वितस्तिप्रमितं गर्तं तस्मिन्संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥
अङ्गुलीमृत्तिकाभिश्च ज्वालयेदिन्धनानि च।
यामेन ।सद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोटली ॥
अनुपाना।नुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

शुद्ध पारद ३ भाग, ताम्र भस्म ३ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग और स्वर्ण भस्म आधा भाग लेकर सबको खरलमें डालकर सात दिन तक घोटें और फिर उसे सात दिन संभालु या धतूरे के रसमें खरल करके गोली बनावें और फिर एक कपड़ेपर थोड़ा शुद्ध गंधकका चूर्ण बिछा कर उस पर वह गोली रखकर मजबूत पोटली बनावें तथा इस पोटलीको पुनः एक अन्य वस्त्र पर गंधक बिछाकर उसमें लपेटें और फिर उसपर भी एक कपड़ा इसी प्रकार (गंधकके साथ) लपेट दें। अब एक मजबूत मिट्टीके प्याले में ऊपर नीचे गंधकका चूर्ण रखकर यह पोटली रक्खें और उस पर दूसरा प्याला ढक कर सन्धिको बन्द करदें तथा इस सम्पुट पर ३-४ कपड़मिट्टी कर के सुखा लें। तत्पश्चात् निर्वात स्थानमें १ बालिश्त गहरा गढ़ा खोदकर उसमें यह सम्पुट रखकर उस पर १ अंगुल मिट्टी चढ़ा दें और ऊपर १ पहर तक अग्नि जलावें। तदनन्तर स्वांग शीतल होने पर गोलीको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

यह रस अनुपान भेदसे समस्त रोगों को नष्ट करता है।

(८६५९) हेमगर्भपोटलीरसः (४)

(र. र. स. । उ. अ. १४; वृ. नि. र. । क्षय.)

द्विनिष्कं भस्म सूतस्य निष्कैकं स्वर्णभस्मकम्।
शुद्धगन्धकनिष्कौ द्वौ चूर्णित्वा चित्रकद्रवैः ॥
द्वियामान्ते विशोष्याथ तेन पूर्या वराटिकाः।
वराटान्मृण्मये भाण्डे रुध्वा गजपुटे पचेत् ॥
स्वाङ्गशीतं विचूर्ण्याथ पोटलीं हेमगर्भिताम्।
मृगाङ्कवच्चतुर्गुञ्जं भक्षितं राजयक्ष्मनुत् ॥

पारद भस्म २ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग और शुद्ध गंधकका चूर्ण २ भाग लेकर तीनोंको एकत्र खरल करके चीतेके क्वाथमें २ पहर घोट कर सुखा लें और उसे कौड़ियों में भरकर (उनके मुखको दूधमें पिसे हुवे सुहागेसे बन्द करके) उन्हें शराव-सम्पुट में बन्द करके गजपुटमें पकावें। तदनन्तर स्वांग शीतल होने पर कौड़ियों सहित औषधको पीस लें।

इसके सेवन से क्षयका नाश होता है।

मात्रा—४ रत्ती।

अनुपानादि—मृगाङ्कके समान्।

(८६६०) हेमगर्भपोटलीरसः (५)

(रसायनसार)

स्वर्णसिन्दूरकं तज्जं स्वर्णभस्म सुमौक्तिकम्।
स्वर्णतुल्यं समं गन्धं त्रयाणामपि मर्दयेत् ॥
ताम्रवङ्गभुजङ्गानां भस्मान्यत्रानुपातयेत्।
सिन्दूरसममानानि मर्दयेदर्कदुग्धतः ॥
शुष्कां कज्जलिकामेतां वराटीष्वेव पूरयेत्।
मन्दारपयसा पिष्टटङ्कणेन च मुद्रयेत् ॥
शङ्खचूर्णे धृता एताः पुटित्वा गजसञ्ज्ञके।
पोटलीं पूर्ववत् कृत्वा दिष्टरोगेषु याजयेत् ॥

चन्द्रोदयमुखान् तालशिलामल्लादिचिह्नितान्।
ईषद्गोलादिजाम्भोभिस्तन्तुलैर्मर्दयेद्दृढम् ॥
कुर्यात्पोटलिकां स्वेष्टां तन्मुद्रामुद्रितामपि ।
स्वसञ्ज्ञाचिह्नितां चापिच्छायाशुष्कां करोत्वपि ॥
कोषीं कौशेय वस्त्रोत्थामर्द्धभागे प्रपूरयेत् ।
गन्धकेनाऽन्तरस्थां तां पोटलीं गन्धकाऽऽवृताम्॥
कुर्वीताऽथ सीव्येत्तां कोषीं कौशेयतन्तुभिः ।
पुनश्चापर कोषीस्थां गन्धकाऽऽवृतरूपिणीम् ॥
कोषीं कृत्वा च तद्वक्त्रं दृढं सीव्येच्चिकित्सकः।
ऊर्ध्वाऽधो गन्धकं दत्त्वा हण्ड्यां धृत्वा पचे-
दिमाम् ॥
परीक्षेताऽथ घटयन्ते चोत्थाप्याऽयः शलाकया ।
वस्त्रे दग्धे तु निस्सार्य्य पोटलीं स्वाङ्गशीत-
लाम् ॥
घृष्ट्वा चेनां तु कुर्वीत पोटलीं मञ्जुदर्शनाम् ॥
कूपीसङ्ग्रहणे दुःखं दुःखं भारोद्वहे परम् ।
दुःखं वा दालिका भङ्गादौषधक्षयजं महत् ॥
विधिनाऽनेन भैषज्य प्रकारो भाति शोभनः ।
इत्याकलय्य निर्म्माति पोटलीं श्यामसुन्दरः ॥

स्वर्ण सिन्दूर १ भाग, स्वर्णसिन्दूर बनाते समय निकली हुई स्वर्ण भस्म १ भाग, मोती भस्म १ भाग और शुद्ध गन्धकचूर्ण ३ भाग* लेकर तीनों को एकत्र खरल करें और फिर उसमें १–१ भाग ताम्र भस्म, वङ्ग भस्म, और नाग भस्म मिलाकर आकके दूध में घोटें और सुखाकर पीली कौड़ियों में भर दें तथा उनके मुखको आकके दूधमें घिसे हुवे सुहागे से बन्द करके शंखके बारीक चूर्णके भीतर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। तदनन्तर पुटके स्वांगशीतल होने पर उसमें से कौड़ियों को निकालकर पीस लें। तत्पश्चात् इस चूर्णकी एक वा अधिक शिखराकार वटी बनाकर कपड़े में बांधकर मज़बूत पोटली बनावें और एक प्याले में गंधकका चूर्ण रखकर उस पर वह पोटली रक्खें तथा पोटलीको गंधकके चूर्णसे ढक दें एवं उस पर दूसरा शराव ढककर १ पहर मन्दाग्नि पर पकावें। जब कपड़ा जल जाय तो शरावको आगसे नीचे उतार लें और स्वांगशीतल होने पर गुटिकाको निकालकर ऊपर लगी हुई गंधकको घिसकर छुड़ा दें।

इसके सेवनसे क्षय, संग्रहणी, ज्वर, खांसी आदिका नाश होता है।

* श्रीयुत् रसायनाचार्य श्यामसुन्दराचार्य वैश्य (रसायनसार के कर्त्ता) ने स्वयं इन श्लोकोंकी हिंदी टीकामें स्वर्ण और मोती चौथाई भाग तथा गंधक १॥ भाग लिखा है।

(८६६१) हेमगर्भपोटलीरसः (६)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२ ; र. प्र. सु. । अ. ८ : र. रा. सु. । कासा. ; र. चं. । राजयक्ष्मा. ; वृ. नि. र. ; यो. र. । कासा.)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावन्तः कनकस्य च ।
तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गन्धो द्वादशभागिकः ॥
कुर्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ता भागाश्च षोडश ।
चतुर्विंशच्च शङ्खस्य भागैकं टङ्कणस्य च ॥
एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिम्बूकजै रसैः ।
कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासम्पुटके न्यसेत् ॥
मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः ।
पुटेद् गजपुटेनैव स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥

**पिष्ट्वा गुञ्जा चतुर्मानं दद्याद्गव्याज्यसंयुतम् ।
एकानत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दीयते ॥
राजते मृण्मये पात्रे काञ्चने वाऽवलेहयेत् ।
लोकनाथसमं पथ्यं कुर्याच्च स्वस्थमानसः ॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे ।
अतीसारे प्रयोक्तव्या पोट्टली हेमगर्भिका ॥**

शुद्ध पारद ४ भाग और शुद्ध सोनेके वर्क ४ भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करें, जब स्वर्ण पारदमें मिल जाय तो उसमें १२ भाग शुद्ध गंधक मिलाकर कज्जली बनावें और फिर उसमें १६ भाग मोतीका चूर्ण, २४ भाग शंखका चूर्ण और १ भाग सुहागा मिलाकर पक्के नीबूके रसमें खरल करें और फिर सबका एक गोला बनाकर उसे मूषाके सम्पुट में बन्द करके (उस पर ३-४ कपरमिट्टी करके) १ हाथ चौड़े, १ हाथ लम्बे और इतने ही गहरे गढ़े में रखकर बन कण्डों में फूक दें । तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर पीस लें ।

इसमें से ४ रत्ती रस सोनेके या चांदी अथवा मिट्टीके पात्रमें रखकर उसमें २९ काली मिर्चोंका चूर्ण और थोड़ा गोघृत मिलाकर चाटना चाहिये ।

इस पर पथ्यादिकी व्यवस्था **'लोकनाथ रस'** के समान करनी चाहिये ।

इसके सेवनसे कास, स्वास, क्षय, वायु, कफ, संग्रहणी और अतिसारका नाश होता है ।

(८६६२) हेमगर्भपोटलीरसः (७)

(शा. ध. । खं. २ अ. १२ ; र. प्र. सु. । अ. ८ ; वृ. नि. र. । क्षय.; र. का. धे. । क्षय.)

**सूतात्पादप्रमाणेन हेम्नः पिष्टिं प्रकल्पयेत् ।
तयोः स्याद्द्विगुणो गन्धो मर्दयेत्काञ्चनारकैः ॥
कृत्वा गोलं क्षिपेन्मूषासम्पुटे मुद्रयेत्ततः ।
पचेद् भूधरयन्त्रेण वासरत्रितयं बुधः ॥
तत उद्धृत्य तत्सर्वं दद्याद्गन्धं च तत्समम् ।
मर्दयेदार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन च ॥
स्थूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तितः ।
एतस्मादौषधात्कुर्यादष्टमांशेन टङ्कणम् ॥
टङ्कणार्धं विषं दत्त्वा पिष्ट्वा सेहुण्डदुग्धकैः ।
मुद्रयेत्तेन कल्केन वराटानां मुखानि च ॥
भाण्डे चूर्णप्रलिप्ते च धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् ।
गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पुटेद्गजपुटेन च ॥
स्वाङ्गशीतं रसं ज्ञात्वा प्रदद्याल्लोकनाथवत् ।
पथ्यं मृगाङ्कवज्ज्ञेयं त्रिदिनं लवणं त्यजेत् ॥
यदा छर्दिर्भवेत्तस्य दद्याच्छिन्नामृतं तदा ।
मधुयुक्तं तथा श्लेष्मकोपे दद्याद्गुडार्द्रकम् ॥
ज्वरेके भर्जिता भङ्गा प्रदेया दधिसंयुता ।
जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा ॥
अग्निं च कुरुते दीप्तं कफवातं नियच्छति ।
हेमगर्भः परो ज्ञेयो रसः पोट्टलिकाभिधः ॥**

४ भाग शुद्ध पारद और १ भाग सोने के वर्क एकत्र मिलाकर खरल करें और जब स्वर्ण पारदमें मिल जाय तो उसमें १० भाग शुद्ध गंधक मिलाकर कज्जली बनावें और उसे कचनारकी छालके रसमें खरल करके सबका एक गोला बनावें तथा उसे (सुखाकर) मूषाके सम्पुट में बन्द करके (उस पर ३-४ कपर मिट्टी करके) ३ दिन भूधरयन्त्र में पकावें । तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकालकर उसमें उसके बराबर शुद्ध गंधक का चूर्ण मिलाकर अदरक के रस तथा चीता-मूलके स्वरस के साथ १-१ दिन खरल करके

बड़ी बड़ी पीली कौड़ियोंमें भरदें और फिर समस्त औषधसे अष्टमांश सुहागा तथा सुहागेसे आधा शुद्ध विष लेकर दोनोंको सेहुंड (थूहर) के दूधमें घोटकर उससे उन कौड़ियोंका मुख बन्द कर दें। तथा उन्हें चूना पुते हुवे मृत्पात्रमें रखकर उस पर ढकना ढक कर सन्धि बन्द करदें एवं उस पात्र पर ३-४ कपड़मिट्टी करके सुखाकर १ हाथ लम्बे चौड़े और उतने ही गहरे गढ़े में रखकर गजपुटकी अग्नि दें। जब वह स्वांगशीतल हो जाय तो रसको निकाल कर पीस लें।

इसे लोकनाथ रसके समान सेवन कराना और मृगाङ्क रसके समान पथ्यादिकी व्यवस्था करनी चाहिये।

३ दिन तक लवणका त्याग करना चाहिये।

यदि वमन होने लगे तो गिलोयका क्वाथ शहद मिलाकर पिलावें। यदि कफ का प्रकोप हो तो गुड़ और अदरक खिलावें। दस्त आने लगें तो सेकी हुई भांग दही में मिलाकर सेवन करावें।

इस रसके सेवनसे कास, क्षय, श्वास, ग्रहणी-रोग, अरुचि, कफ और वायुका नाश होता तथा अग्निकी वृद्धि होती है।

(८६६३) हेमगर्भरसः (१)

(वृ. नि. र. । कासा.)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धं कनकस्य च।
तदर्धं ताम्रकं चैव मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥
तत्समानेन बलिना सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पचेद्भूधरयन्त्रके ॥
मृदुना वह्निना चैव स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
बलिमेव च सम्यग्वै षड्गुणं जारयेत्सुधी ॥
हेमगर्भरसो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः।
कासश्वासेषु सर्वेषु शूलेषु च हितस्तथा ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान् रोगाञ्जयेत्परम् ॥

शुद्ध पारद ४ भाग, शुद्ध सोनेके वरक (या स्वर्णभस्म) २ भाग तथा ताम्र भस्म, मोती भस्म और प्रवाल भस्म १-१ भाग एवं गंधक सबके बराबर (९ भाग) लेकर प्रथम पारे गंधक और स्वर्णको एकत्र मिलाकर खरल करें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर घोटकर एकजीव कर लें। तदनन्तर उसे (अदरक के रस में) खरल करके सबका एक गोला बनावें और उसे शराव सम्पुट में बन्द करके मन्दाग्निसे भूधरयन्त्रमें पकावें और फिर (जब समझें कि गंधक जीर्ण हो गया तब)उसके स्वांगशीतल होने पर रसको निकाल कर उसमें पुनः उसके बराबर गंधक मिलाकर पहिलेकी तरह भूधरयन्त्र में पकावें। इसी प्रकार षड्गुण गंधक जारण करें और अन्त में खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे कास, श्वास, शूल और रोगोचित अनुपानके साथ देने से अन्य अनेक रोग नष्ट होते हैं। यह एक अत्यन्त प्रसिद्ध रस है।

(८६६४) हेमगर्भरसः (२)

(यो. र. । कासा.)

रसं च गन्धकं चैव समं खल्वे विमर्दयेत्।
कज्जल्यां च तथा स्वर्णं संशुद्धं च विनिक्षिपेत्॥
सुसूक्ष्मे सुदृढे वस्त्रे बद्ध्वा पोटलिकां दृढाम्।

गन्धकेनाऽऽयसे पात्रे पक्त्वा पोटलिकां चिरम् ॥
मन्दाग्निना पचेद्यावद् व्योमवर्णं भवेत्तु तत् ।
हेमगर्भ इति ख्यातो रसोऽयं श्वासकासनुत् ॥
अनुपानविभेदेन सर्वरोगाक्षयत्यसौ ॥

१–१ भाग शुद्ध पारद और शुद्ध गंधककी कज्जली बनाकर उसमें १ भाग शुद्ध स्वर्णके पत्र मिलाकर खरल करें और फिर (वासा आदि के रसमें घोटकर गोली बनाकर) उसे सूक्ष्म परन्तु मजबूत वस्त्रमें बांधकर दृढ़ पोटली बनावें तत्पश्चात् लोहपात्रमें गंधक डालकर उसमें इस पोटली को मंदाग्निपर पकावें । जब वह आसमानी रंगकी हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार लें और स्वांगशीतल होने पर गुटिकाको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

यह रस श्वास कास और अनुपान भेदसे अन्य समस्त रोगोंको नष्ट करता है ।

(८६६५) हेमगर्भरसः (३)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । कासा.)

शुद्धसूतं पलैकं स्यात्पादांशं शुद्धहेमकम् ।
शुद्ध गन्धस्य माषैकं प्रतिकर्ष प्रयोजयेत् ॥
त्रयमेकत्र कुर्वीत सूक्ष्मं खल्वे विमर्दयेत् ।
सुदृढं बन्धयेद्वस्त्रे स्थाप्यं लोहजसम्पुटे ॥
मर्दितं गन्धकपलं तस्योपरि प्रदापयेत् ।
सम्पुटं मुद्रितं कृत्वा भूधराख्यपुटे पचेत् ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य दग्धं गन्धं परित्यजेत् ।
वेष्टयित्वा पुनर्वस्त्रं सूत्रे बध्वा च गोलकम् ॥
तत्तुल्यं च पुनर्गन्धं सम्पुटे निक्षिपेद् भिषक् ।
मुद्रितं सम्पुटं कृत्वा पुनर्यन्त्रेण पाचयेत् ॥
हेमगर्भरसो नाम्ना सर्वव्याधिनिवारणः ।
रोगराजादिकं हन्ति इतरेषां तु का कथा ॥

शुद्ध पारद ५ तोले, सोनेके वर्क १। तोला तथा शुद्ध गंधक ६। माशे लेकर तीनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे कपड़ेमें लपेट कर (डोरेसे बांधकर) दृढ़ पोटली बनावें तथा उसे लोहेके सम्पुटमें रख कर उसके ऊपर ५ तोले शुद्ध गंधकका चूर्ण डालकर सम्पुटको बन्द कर दें। तत्पश्चात् उसे भूधरपुटमें पकावें और स्वांगशीतल होने पर उसे निकालकर ऊपर से जले हुवे गंधकको छुड़ा दें तथा उसे पुनः वस्त्रमें लपेटकर पहिलेकी भांति लोहके सम्पुटमें रखकर, उस पर उसके बराबर गंधकका चूर्ण डालकर सम्पुटको बन्द करदें एवं भूधरपुटमें पकावें ।

यह रस राजयक्ष्मा जैसे घातकरोगको भी नष्ट कर देता है फिर अन्य रोगोंका तो कहना ही क्या है ।

(८६६६) हेमनाथरसः

(र. चं. । प्रमेहा. ; भै. र. । बहुमूत्रा.)

सूतं गन्धं हेमताप्यं प्रत्येकं कोलसम्मितम् ।
अयश्चन्द्रं प्रवालं च वङ्गं चार्धं विनिक्षिपेत् ॥
फणिफेनस्य तोयेन कदलीकुसुमेन च ।
उदुम्बररसेनापि सप्तधा परिमर्दयेत् ॥
वल्लमात्रां वटिं खादेद्यथाव्याध्यनुपानतः ।
प्रमेहान्विंशतिं हन्ति बहुमूत्रं सुदारुणम् ॥
सोमरोगक्षयं चैव श्वासं कासमुरःक्षतम् ।
हेमनाथरसो नाम्ना कृष्णात्रेयेण भाषितः ॥
प्रयोजितो भवेन्नॄणां विशेषफलदायकः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, स्वर्णभस्म और स्वर्ण माक्षिक भस्म, १-१ भाग तथा अभ्रकभस्म, कपूर (या चांदी भस्म), प्रवाल भस्म और वंग भस्म आधा आधा भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और कज्जली हो जाने पर उसे अफीमके पानी, केले के फूलोंके रस और गूलरके रस की सात सात भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे २० प्रकारके प्रमेह, दारुण बहुमूत्र रोग, सोम रोग, क्षय, श्वास, कास और उरःक्षतका नाश होता है ।

कृष्णात्रेय निर्दिष्ट यह रस विशेष फलदायकहै।

हेममात्रा

(वृ. नि. र. । हिक्का.)

प्र. सं. ८६२१ हिक्कान्तक रसः देखिये ।

(८६६७) हेममृगाङ्करसः (१)

(र. र. । राजयक्ष्मा.)

मृतं सूतं मृतं हेम शुद्धगन्धकटङ्कणम् ।
प्रत्येकमर्द्धनिष्कं स्यान्मृतशुल्वं द्विनिष्ककम् ॥
शङ्खनिष्कद्वयं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
पूरयेत्पूर्वचूर्णेन पुटयेच्च मृगाङ्कवत् ॥
ततश्चार्द्रकनिर्यासैः सार्द्धं रुद्ध्वा पुटे पचेत् ।
आदाय चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं द्वात्रिंशन्मरिचैर्युतम् ॥
चूर्णाच्चतुर्गुणं गन्धमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
पञ्चमांशं घृतं लेह्यमसाध्यं राजयक्ष्मनुत् ॥
शोथोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्मांश्च नाशयेत् ।
रसो हेममृगाङ्कोऽयं ह्यनुपानं मृगाङ्कवत् ॥

पारद भस्म, स्वर्ण भस्म, शुद्ध गंधक और सुहागे की खील आधा आधा निष्क; ताम्रभस्म २ निष्क, तथा शंखका चूर्ण २ निष्क लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और उस चूर्णको पीली कौड़ियों में भरकर मृगांक रसके समान पकावें। तदनन्तर औषधको निकाल कर अदरकके रसमें खरल करके शरावसम्पुटमें बन्द करें और गजपुट में फूंक लें। तत्पश्चात् बारीक चूर्ण करके सुरक्षित रक्खें।

इसमें ३२ काली मिर्चों का चूर्ण; इससे चार गुना शुद्ध गंधक और पांचवा भाग घी मिलाकर सेवन करनेसे असाध्य राजयक्ष्मा रोग भी नष्ट हो जाता है ।

यह रस शोथोदर, अर्श, ग्रहणी, ज्वर और गुल्मको भी नष्ट करता है ।

अनुपानादि मृगांक के समान ।

हेममृगाङ्करसः (२)

प्रयोगसंख्या ५६३६ देखिये ।

(८६६८) हेमयोगः

(र. र. स. । उ. अ. २६)

हेमधात्रीफलं क्षौद्रं गायत्रीरसमर्दितम् ।
लिहन्ननु पिबन्क्षीरं दृष्टारिष्टोऽपि जीवति ॥

स्वर्णभस्म, आमलेका चूर्ण और शहद समान भाग लेकर तीनों को एकत्र मिलाकर खैरके रसमें खरल करके चाटने से अरिष्ट लक्षणोंयुक्त रोगी भी बच जाता है । अनुपान दूध ।

(८६६९) हेमवज्ररसः

(र. रा. सु. । प्रमेहा.)

भस्मसूतं मृतं कान्तलोहभस्मशिलाजतु ।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषं त्रिफला बिल्वजीरकम् ॥
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।
त्रिंशद्वारं विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह ॥
निष्कमात्रं हरेन्मेहान् मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ।
महानिम्बस्य बीजश्च षड्निष्कं पेषितश्च यत् ॥
पलं तण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च ।
एकीकृत्य पिबेच्चानु हन्ति मेहं चिरोत्थितम् ॥

पारद भस्म, कान्तलोह भस्म, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक भस्म, मनसिल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बेलगिरी, जीरा, कैथ और हल्दी; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर भंगरे के रसकी ३० भावना दें और फिर सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे मधुके साथ सेवन करने से प्रमेह और भयंकर मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है ।

मात्रा—३॥ माशे । (व्य. मात्रा-१ माशा)

अनुपान-२१। माशे । (व्य. मा. ३ माशे)

बकायनके पिसे हुवे बीजों में ५ तोले चावलोंका धोवन और ७। माशे घी मिलाकर पियें ।

(८६७०) हेमसुन्दररसः (१)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । रसायना. ; रसे. चि. म. । अ. ८ ; आ. वे. प्र. । अ. १)

मृतसूतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत् ।
क्षीराज्यदधि सम्मिश्रं माषैकं कांस्यपात्रके[1] ॥
लेहयेन्मासषट्कन्तु जरामरणनाशनम् ।
वागुजीचूर्णकर्षैकं धात्रीफलरसाप्लुतम् ॥
अनुपानं पिबेन्नित्यं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥

पारद भस्म ४ भाग और स्वर्ण भस्म १ भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

इसमें से १ माशा (व्यवहा. मात्रा-२ रत्ती) औषध कांसीके पात्रमें लेकर उसमें दूध, दही और घी मिलाकर चाटें । इसी प्रकार ६ मास तक सेवन करनेसे जरामृत्युका नाश होता है। (?)

अनुपान—१। तोला बावचीके चूर्णको आमलेके रसमें मिलाकर पिएं ।

(८६७१) हेमसुन्दररसः (२)

(र. का. धे. ; र. सं. क. । उल्ला. ४)

हिङ्गुलं मरिचं गन्धं पिप्पली टङ्कणं विषम् ।
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः ॥
मर्दयेद्याममात्रं तु चणमात्रा वटीकृता ।
ज्वरातीसारग्रहणीर्नाशयेद्धेमसुन्दरः ॥

शुद्ध हिंगुल, काली मिर्च, शुद्ध गंधक, पीपल, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग और शुद्ध धतूरबीज समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर भांगके रसमें १ पहर खरल करके चनेके बराबर गोलियां बना लें ।

इसके सेवनसे ज्वरातिसार और संग्रहणी का नाश होता है ।

(८६७२) हेमसुन्दररसः (३)

(र. र. ; धन्व. । वाजीकरणा.)

शुद्धं सूतं समं ग्राह्यं सुवर्णं गन्धकं त्रयः ।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुल्वपात्रे भिषग्वरः ॥

[1] कान्तपात्रके

राजिका स्वरसं दत्वा कृष्णोन्मत्तस्य वै रसम् ।
दत्वा दत्वा प्रयत्नेन मर्दयेच्च त्रिभिर्दिनैः ॥
त्रिभिश्च सार्षपं तैलं दत्वा कल्कं विमर्दयेत् ।
शोषयेद्भानुभिर्भानोर्ज्वालं दद्याच्छनैः शनैः ॥
वालुकायन्त्रयोगे तु प्रोक्तभेषजमध्यतः ।
तावज्ज्वाला प्रदातव्या यावत्स्यादुष्णवालुका ॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा कर्षयेत्तं भिषग्वरः ।
ततो गुञ्जाप्रमाणेन माषमाषार्द्धकं पुनः ॥
ज्ञात्वा रोगं शरीरं च योजनीयं बुधैः सदा ।
घृतेन मधुना सार्द्धं मर्दयित्वा तु खल्वके ॥

रसं वा भक्षयेत्पश्चादाज्यं गव्यं गवां पयः ।
सामान्येन तु कर्तव्यं चित्रकार्द्रकसैन्धवैः ॥
रोगिणामनुपानीयं रसमाज्येन भोजनम् ।
एतेनापि विधानेन प्रातः प्रातर्निषेवयेत् ॥
साध्यासाध्येषु रोगेषु तथा व्याधिचयेषु च ॥

शुद्ध पारद, सुवर्ण भस्म, शुद्ध गंधक और लोह भस्म समान भाग लेकर सबको ताम्रके खरलमें डालकर ताम्रकी मूसलीसे खरल करके कज्जली बनावें। तदनन्तर उसे राई और काले धतूरे के पत्तोंके स्वरस में ३–३ दिन खरल करें। फिर उसे ३ दिन सरसोंके तेलमें खरल करें और तेज धूपमें सुखावें। तत्पश्चात् उसे आतशी शीशी में भरकर बालुकायन्त्रमें आककी जड़की धीमी अग्नि पर पकावें। जब हाण्डीका रेत खूब गर्म हो जाय तो अग्नि देनी बन्द कर दें और स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

इसे रोगी तथा रोगके बलाबलके अनुसार १ रत्तीसे १। माशा तक घी और शहदके साथ खरल में घोटकर खाना चाहिये।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् गोदुग्धमें गोघृत डालकर पीना चाहिये। अथवा इस रसको चीतामूल, अदरक और सेंधा नमकके चूर्ण के साथ मिलाकर भी दे सकते हैं।

इसे इस विधिसे प्रातःकाल सेवन करने से साध्यासाध्य समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

(८६७३) हेमादिपर्पटीरसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

भागमेकमिह सूतभस्मनो
भागयुग्ममपि गन्धकस्य च ।
सूतमानमपि हेमभस्मकं
तारभस्म अपि चाभ्रसत्वकम् ॥

लोहभस्म अथ चार्कजं क्षिपे-
ल्लोहपात्रजठरे प्रपाचयेत् ।
द्राव्यता भवति तत्र वै यदा
निक्षिपेच्च कदलीदले तदा ॥

आटरूष सुरसा जयन्तिका
मुण्डिकात्रिफलार्द्रकभृङ्गिका-
मेघनादकटुकन्यकारसैः
प्रत्यहं तु परिमर्दयेद्दृढम् ॥
वत्सनाभजरसैर्दिनत्रयं
लोहपात्रनिहितं पचेत्क्षणम् ।
जायते हि वरपर्पटीरसः
शृङ्गवेरकरसेन योजयेत् ॥

वल्लयुग्ममितमानतस्त्वयं
श्वासकासविनिवृत्तिदायकः ।
पिप्पलीभिरनुपाययेत्तथा
क्वाथमत्र सुरसाटरूषजम् ॥

पारदभस्म १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, स्वर्णभस्म १ भाग, चांदी भस्म १ भाग, अभ्रकसत्व भस्म १ भाग, लोहभस्म १ भाग और ताम्र भस्म १ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और फिर उसे (घृत लिप्त) लोहपात्र में डालकर मन्दाग्नि पर पिघलावें तथा गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फुरती से फैलाकर उसपर दूसरा कदली पत्र ढककर उसे गोबरसे दबा दें । एवं स्वांग शीतल होने पर पर्पटीको निकाल लें ।

तदनन्तर उस पर्पटीको १--१ दिन बासा, तुलसी, जयन्ती, गोरखमुंडी, त्रिफला, अदरक, भांगरा, चौलाई और घृतकुमारी; इनके स्वरसमें खरल करें तथा ३ दिन बछनागके क्वाथ में खरल करके ज़रा देर लोहपात्रमें मन्दाग्नि पर पकावें । तत्पश्चात् सुखा कर खरल करके रक्खें ।

मात्रा—४-६ रत्ती । (व्यवहारिक मात्रा-२ रत्ती ।)

इसे अदरकके रसमें मिलाकर सेवन करनेसे कास श्वासका नाश होता है ।

अनुपान—तुलसी और बासेके क्वाथ में पीपरका चूर्ण मिलाकर पिलावें ।

(८६७४) हेमाद्रिरसः

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे. । क्षुद्ररोगा.)

वै कृष्णरसकऽपलं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम् ।
पलं नागाभ्रयोः सर्वं सञ्चूर्ण्य सिकताघटे ॥
पक्वमूषागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन् द्रवम् ।
केतकीकुष्ठनिर्गुण्डीशिग्रुग्रन्थाग्निचव्यजम् ॥
वन्ध्याहिंस्रेभकर्ण्युत्थं व्याघ्रीलुङ्गबलोद्भवम् ।
अश्वगन्धाभवं वारान् विंशद्द्वित्रीषु सागरान् ॥
षट्सप्तवसुदिग्द्वित्रियुगं भुवनतः क्रमात् ।
कुमार्याः पुटयेत् प्रौढो रसो हेमाद्रिसञ्ज्ञकः ॥
भुक्तो माषो निहन्त्याशु सर्वार्शोरोचकग्रहान् ।
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालार्बुदापचीः ॥
गलगण्डप्रमेहादीन् मुष्कलिङ्गाक्षिकर्णजान् ।
क्षुद्ररोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानिव ॥

कृष्ण खर्पर ३॥ तोले, शुद्ध गंधकका चूर्ण १० तोले नागभस्म ५तोले और अभ्रक भस्म ५तोले लेकर एकत्र खरल करके खुली हुई मजबूत मूषामें रखकर उस मूषाको बालुकायन्त्रमें रखकर १ पहर पकावें और फिर उसमें निम्न लिखित ओषधियोंके रस की भावना दें अर्थात् एक ओषधिका रस डालकर जलावें जब वह सूख जाय तो पुनः उसीका डालें । इसी प्रकार जब एक ओषधिकी नियत भावनाएं पूरी हो जायं तो दूसरी ओषधिके रसकी भावना दें । भावना द्रव्य और भावनाओंकी संख्या इस प्रकार है—

केतकी की २०, कूठकी २, संभालूकी ३, संहजनेकी ५, पीपलामूलकी ७, चीतेकी ६, चव्यकी ७, बांझककोड़ेकी ८, जटामांसीकी ८, हस्तीकर्णी (कासालु) की २, कटेलीकी ३, बिजौरेकी ४, खरैटीकी १४, असगन्धकी १४, तथा घृत-कुमारी की १४ ।

सम्पूर्ण ओषधियोंकी भावना पूर्ण होने पर स्वांगशीतल होनेके बाद रसको निकालकर पीस लें ।

मात्रा—१ माशा । (व्य. मा. १-२ रत्ती ।)

इसके सेवनसे अरुचि, अर्श, अग्निमांद्य, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्बुद, अपची, गलगण्ड, प्रमेह; तथा अण्डकोष, लिंग, आंख और कानोंके रोग एवं अनेक प्रकारके क्षुद्र रोग नष्ट होते हैं।

(८६७५) हेमाभ्रकरससिन्दूरम्

(यो. र.; र. रा. सु.; वृ. नि. र.। राजयक्ष्मा.)

अभ्रकं रससिन्दूरमिश्रितं हेमभस्मना।
समभागं प्रकुर्वीत रसेनाऽऽर्द्रकयोजितम्॥
क्षयं च क्षयपाण्डुं च क्षयकासं च कुष्ठकम्।
जयेन्मण्डलपर्यन्तं पूर्वकर्मविपाककृत्॥

अभ्रक भस्म, रससिन्दूर और स्वर्णभस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसे अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे क्षय, क्षयजनित पाण्डु, क्षयकी खांसी और पूर्व जन्मके पापोंसे उत्पन्न कुष्ठ नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—१–२ रत्ती।)

(८६७६) हंसपोटलीरसः (१)

(रसें. चि. म.। अ. ८; रसें. सा. सं.। ग्रहणी.; शा. ध. सं.। खं. २ अ. १२; र. चं.। ग्रहण्य.)

दग्धान्कपर्दिकान् पिष्ट्वा त्र्यूषणं टङ्कणं विषम्।
गन्धकं शुद्धसूतं च तुल्यं जम्बीरजैर्द्रवैः॥
मर्दयेद्भक्षयेन्माषं मरिचाज्यं लिहेदनु।
निहन्ति ग्रहणीरोगं पथ्यं तक्रौदनं हितम्॥

कौड़ी भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गंधक, और शुद्ध पारद समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियां मिलाकर सबको जंबीरीके रसमें खरल करके सुखाकर रक्खें।

यह रस ग्रहणी रोगको नष्ट करता है।

मात्रा—१। माशा। व्यवहा. मा. ३–४ रत्ती।)

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् घीमें काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर चाटना चाहिये।

पथ्य—तक्र भात।

(८६७७) हंसपोटलीरसः (२)

(र. रा. सु.। ग्रहण्य.)

निष्कैकं मर्दितं सूतं द्विनिष्कं मृततीक्ष्णकम्।
शिखितुत्थं तीक्ष्णतुल्यं कर्षार्द्धं गन्धमौक्तिकम्॥
विषं निष्कं चेतत्सर्वं भृङ्गार्द्रसुरसारसैः।
अग्निपर्णी हरिद्रा च लाङ्गलीकन्दजैर्द्रवैः॥
मरिचैर्मधुना लेह्या माषैका हंसपोटली।
हन्ति सङ्ग्रहणीं चैव अतिसारं च पाण्डुताम्॥
दौर्बल्यं गुल्मश्वासं च कासं हिक्कामरोचकम्।
क्षौद्रेण विजया निष्कं लेहयेदनुपानकम्॥

शुद्ध पारद १ भाग, तीक्ष्णलोहभस्म २ भाग, तुत्थ भस्म २ भाग, शुद्ध गंधक १॥ भाग, मोती भस्म १॥ भाग और शुद्ध बछनाग १ भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियां मिलाकर सबको अच्छी तरह खरल करके भंग, अदरक, तुलसी, अग्निपर्णी,* हल्दी, और लांगली (कलियारी) की जड़ के रसमें (१–१ दिन) खरल करके सुखाकर सुरक्षित रक्खें।

*अनुभूत योगमाला द्वारा प्रकाशित वैद्यक शब्द कोषमें अग्निपर्णीका अर्थ 'कौंच' किया है।

मात्रा—१ माषा (व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती ।) इसे काली मिर्चोंके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, निर्बलता, गुल्म, श्वास, कास, हिक्का और अरुचि का नाश होता है ।

औषध खानेके पश्चात् ५ माशे (व्य. मा. १-३ माशे) भांगका चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

(८६७८) हंसपोटलीरसः (३)

(र. का. धे. । संग्रहण्य.)

रसगन्धकमुक्तानां विषस्यैकं पलं भवेत् ।
तीक्ष्णतुत्थकयोश्चैकं पलं तत्सुरसारसैः ॥
विष्णुक्रान्तावह्निवह्निहलीभृङ्गैर्विमर्दयेत् ।
गोलं संस्वेदयेदस्य मन्दाग्नौ चरणांशकम् ॥
विषं दग्धकपर्दानां चूर्णं तुल्यं नियोजयेत् ।
आर्द्रजम्बीरनीरेण पिष्टं स्याद्धंसपोटलिः ॥
सोषणो वा समधुको माषोऽस्य ग्रहणीगदम् ।
अतिसारं पाण्डुरोगं गुल्मं कार्श्यं ध्रुवं जयेत् ॥
क्षौद्रेण विजयानिष्कमनुपानेन योजयेत् ।
उत्तमा विदिता चेयं क्रियाज्ञैर्हंसपोटली ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, मोती, शुद्ध वछनाग, तीक्ष्ण लोहभस्म और तुत्थ भस्म ५-५ तोला लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर थोड़ी देर खरल करके तुलसी, विष्णुक्रान्ता (कोयल), चीता, भिलावा, हली (कलियारी) और भांगके रसमें १-१ दिन घोटकर सबका एक गोला बनावें और उसे (सुखाकर शराव संपुटमें बन्द करके) मन्दाग्निमें स्वेदित करें ।

तत्पश्चात् स्वांगशीतल होने पर निकालकर उसमें उसका चौथा भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण तथा उसके (गोलेके) बराबर कौड़ी भस्म मिलाकर अदरक और जंबीरी नीबूके रसमें १-१ दिन खरल करके सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ माषा (व्यवहारिक मात्रा—४ रत्ती)

इसे काली मिरचोंके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी रोग, अतिसार, पाण्डु, गुल्म और कृशताका नाश होता है ।

औषध खानेके पश्चात् १ निष्क (व्यवहारिक मात्रा ३ माशा) भांगके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

(८६७९) हंसभैरवरसः

(र. का. धे. । प्रमेहा.)

सूकरीक्षीरपुटिते शुक्तिक्षारेण शोधिते ।
वङ्गे द्रुते रसं क्षिप्त्वा तृतीयांशं च हिङ्गुलम् ॥
छिक्कारसेन सम्मर्द्य तदर्धार्धानि निक्षिपेत् ।
सौम्याल[1]सिन्दूरशिलाटङ्कणानि च प्रक्षिपेत् ॥
पलाशवल्कलरसैरर्कक्षीरैश्च सप्तधा ।
पलाशवटचिञ्चानां क्षिप्त्वा क्षारांश्छरावके ॥
सिद्धो हठाग्निनाऽयं तु द्वात्रिंशत्महरं पुनः ।
द्विगुञ्जं दापयेच्छीतं समानं हंसभैरवम् ॥

१ रसशाला गोंडलद्वारा प्रकाशित पुस्तकमें "सौम्वाल" पाठ है ।

पथ्याऽर्जुनविडङ्गोत्थं क्वाथं चानु मधुप्लुतम् ।
शुक्रमेहादिकान्हन्ति रसोयं हंसभैरवः ॥

३ भाग बंगको पिघला कर (कई कई बार) सूरीके दूध और सीपकी भस्मके पानीमें बुझावें। फिर उसे पिघलाकर उसमें ३ भाग शुद्ध पारा और १ भाग शुद्ध हिंगुल मिलाकर १ दिन नकछिकनीके रसमें खरल करें और फिर उसमें आधा आधा भाग चौंटली (गुंजा), शुद्ध हरताल, रससिन्दूर, शुद्ध मंसिल और सुहागा; इनका चूर्ण मिलाकर पलाशकी छालके रस और आकके दूधकी सात सात भावना दें । तत्पश्चात् उसमें आधा आधा भाग पलाश (ढाक) का, वट (वड़) का और चिंचा (इमली)का क्षार मिलाकर शरावसम्पुटमें बन्द करें और उसे ३२ पहर (बालुकायन्त्रमें) तीव्राग्नि पर पकावें । जब स्वांग शीतल हो जाय तो रसको निकालकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

अनुपान—हर्र, अर्जुनकी छाल और बायबिड़ंग इनका मधुमिश्रित क्वाथ ।

इसके सेवनसे शुक्रमेहादिका नाश होता है।

(८६८०) **हंसमण्डूरम्**

(र. र. स. । उ. अ. १९ ; र. चं. ; यो. र. ;[१] र. रा. सु. ; वृ. नि. र.; र. का. धे. । पाण्डुवा.)

मण्डूरं मर्दयेच्छ्लक्ष्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
त्र्यूषणं त्रिफला मुस्ता विडङ्गं चव्यचित्रकौ ॥
दार्वी ग्रन्थी देवदारु तुल्यं तुल्यं विचूर्णयेत् ।
घृतं मण्डूरतुल्यं च पाकान्ते मिश्रयेत्ततः ॥
भक्षयेत्कर्षमात्रं च जीर्णान्ते तक्रभोजनम् ।
पाण्डुरोगं हलीमं च उरुस्तम्भं च कामलाम् ॥
अर्शांसि हन्ति नो चित्रं हंसमण्डूरकाह्वयम् ॥

शुद्ध मण्डूरके बारीक चूर्णको आठ गुने गोमूत्रमें पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित ओषधियां मिलादें—

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग, चव, चीता, दारुहल्दी, पीपलामूल और देवदारु; इनमेंसे प्रत्येकका चूर्ण तथा घी मण्डूरके बराबर ।

मात्रा—१। तोला । (व्यवहा. मा. २—३ माशे ।)

औषध पचने पर तक्र भात खाना चाहिये । इसके सेवनसे पाण्डुरोग, हलीमक, उरुस्तम्भ, कामला और अर्शका नाश होता है ।

१ यो. र. में दारुहल्दी का अभाव है तथा पीपल और सोंठ दो बार आई है एवं घीका अभाव है।

इति हकारादिरसप्रकरणम्

अथ हकारादिमिश्रप्रकरणम्

(८६८१) हरिद्रादिवर्तिः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

हरिद्रा मार्कवं कुष्ठं गृहधूमं सुवर्चला ।
सिद्धार्थकरसश्चैव काञ्जिकेन पिष्यते ॥
मधुना सह वर्तिः स्याद् गुदे सञ्चारिता यदि ।
अर्शसां नाशनं चैव करोति सहसा नृणाम् ॥

हल्दी, भंगरा, कूठ, घरका धुंवा, सुवर्चला (हुलहुल) और सफेद सरसोंका रस समान भाग लेकर सबको कांजीमें पीसकर शहदमें मिलाकर (कपड़ेपर लगाकर) बत्ती बनावें ।

इसे गुदामें रखनेसे अर्श (बवासीर)का नाश होता है ।

(८६८२) हरिद्रावचादि शोधनम्

(व. से. । वातव्या.)

गोमूत्रे चालम्बुषके पक्त्वा पञ्चदलोदके ।
पुनः सुरभितोयेन वाष्पस्वेदेन स्वेदयेत् ॥
गन्धोग्रा शुध्यते ह्येवं रजनी च विशेषतः ॥

बचको क्रमशः गोमूत्र, गोरखमुण्डीके क्वाथ और पञ्चपल्लव (आम, जामन, कैथ, बिजौरा और बेलके पत्तों) के क्वाथमें पकाकर गोमूत्रकी भाफसे स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाती है ।

हल्दी भी इसी प्रकार शुद्ध होती है ।

(८६८३) हरिद्राद्याश्च्योतनम्

(व. से. । नेत्ररोगा.)

द्वौ द्वौ भागौ रजन्योश्च भागिकौ धूमसर्षपौ ।
कफाभिष्यन्दजिद्भृष्टं पिष्टमाश्च्योतमम्भसा ॥

हल्दी और दारुहल्दी २-२ भाग तथा घरका धुंवा और सरसों १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर (तवे में) मंदाग्नि पर सेकें और फिर पानीके साथ पीसकर स्वच्छ कपड़ेसे निचोड़कर रस निकालें ।

इसे आंखमें डालनेसे कफाभिष्यन्द नष्ट होता है ।

(८६८४) हरीतकीकल्पः

(ग. नि. । ओषधिकल्पा. १)

(१)

हरीतकीं सर्पिषि पाचयित्वा
समश्नतः संपिबतोऽनुसर्पिः ।
वातात्मकास्तस्य न सन्ति
रोगाः स्यात्पृष्ठजङ्घोरुकटीबलं च ॥

(२)

एरण्डतैलेन विपाच्य पथ्यां
खादेत्तथा चानुपिबेच्च तैलम् ।
सशूलविष्टम्भकृतान्विकारान्
सर्वाञ्जयेत्पित्तकफानिलोत्थान् ॥

(३)

मूत्रस्थिताः सप्तदिनं महिष्याः
पञ्चाभया मूत्रपलानि पञ्च ।
क्षीरैकतः सप्तदिनानि खादेत्
क्षीरौदनाशी परतस्तथा च ॥
एषस्त्रिसप्ताहपरः प्रयोगो
वातोदरं तीव्रमपीह हन्यात् ।
प्लीहानमुग्रं श्वयथुं त्रिदोषं
शिरोग्रहं पाण्डुगरकृमींश्च ॥

(४)

हरीतकीं वा मधुनाऽवलिह्या-
दामातिसारे प्रथमं प्रवृत्ते ।
प्रवाहयेत्सा ह्यवशिष्टदोषान्
संशोधयेत्कोष्ठमशेषतश्च ॥

(५)

द्वे पूर्वमद्यादशनाद्द्वतो द्वे
द्वे चापि भुक्त्वा च तथा स्वपंस्तु ।
अस्य प्रयोगादभयाष्टकस्य
त्रिसप्तरात्रेण पुनर्नवः स्यात् ॥
मेधास्मृतिः शक्तिरतीव कान्तिः
श्रीमद्वपुर्नित्यमनामयत्वम् ।
दीप्ताग्निता दृष्टिबलं परं स्यात्
सर्वे च रोगाः प्रशमं प्रयान्ति ॥

(१)

हर्रोंको घीमें भूनकर रक्खें । इन्हें यथोचित मात्रानुसार खाकर ऊपरसे घी पीनेसे वायुके रोग नहीं होते और पृष्ठ, जंघा, उरु तथा कटिका बल बढ़ता है ।

(२)

हर्रोंको एरण्ड (अण्डी) के तेलमें पकाकर खाने और ऊपरसे तेल (अण्डीका तेल) पीनेसे शूल, विष्टम्भ, तथा पित्त, कफ और वायुके समस्त रोगोंका नाश होता है ।

(३)

हर्रोंको सात दिन तक भैंसके मूत्रमें भिगोए रखें (मूत्र प्रति दिन बदल कर नवीन डालना चाहिये ।)

इनमें से नित्य प्रति ५ हर्रे खाकर २५ तोले (भैंसका) मूत्र पीनेसे तीव्र वातोदर, उग्र प्लीहा, शोथ, त्रिदोष, शिरोग्रह, पाण्डु, गरविष और कृमि रोगका नाश होता है ।

यह प्रयोग ३ सप्ताह तक करना चाहिये । प्रथम सप्ताह में केवल दुग्धाहार करना चाहिये और उसके पश्चात् दो सप्ताह तक दूधभात खाना चाहिये ।

(४)

आमातिसारके प्रारम्भमें शहदके साथ हर्रेका चूर्ण मिला कर चाटना चाहिये । इससे कोष्ठके दोष निकल कर वह शुद्ध हो जाता है ।

(५)

दो हर्रे भोजनके पूर्व, २ भोजन करते समय (भोजनके मध्यमें), २ भोजनान्त में और दो सोते समय खावें । इस प्रकार ३ सप्ताह तक नित्य आठ हर्रें खानेसे शरीर में नवजीवन आ जाता है, मेधा, स्मृति, शक्ति, कान्ति और शरीर-श्रीकी वृद्धि होती है; शरीर नीरोग रहता है; अग्नि और दृष्टि बढ़ती है तथा समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(८६८५) **हरीतकीयोगः** (१)

(ग. नि. । उदरा. ३२)

समादाय पलाशिन्याः क्षारप्रस्थचतुष्टयम् ।
चतुर्गुणे समालोड्य गोमूत्रे क्वाथयेद्भिषक् ॥
निःस्राव्य पादशिष्टं तु क्वाथं पञ्चशतानि च ।
निक्षिप्य तत्र पथ्यानां पुनरग्नावधिश्रयेत् ॥

**अर्धस्विन्नास्तु संस्थाप्याः क्वाथेन सह यत्नतः।
अद्यात्ततः सिन्धुयुता यवक्षारविमिश्रिताः ॥
क्रमेणाग्निबलं लब्ध्वा प्रातरुत्थाय योगवित् ।
जीर्णे पथ्यां च युञ्जानो मुच्यते तूदरामयात् ॥
क्षारवारिपलं प्रातः पलाशिन्याः पिबेन्नरः ।
यवक्षारस्य कर्षेण मिश्रितं तूदरापहम् ॥**

पलाशी (केले) का क्षार ४ सेर लेकर १६ सेर गोमूत्रमें पकावें और ४ सेर रहने पर छान लें। तत्पश्चात् उसमें ५०० हर्रें डालकर पुनः पकावें और जब हर्रें आधी उसीज जाएं तब (पककर बिल्कुल मुलायम होने से पहिले ही) अग्निसे नीचे उतार कर ठंडा करके उस शेष क्वाथ सहित सुरक्षित रक्खें ।

नित्य प्रति ये हर्रें सेंधा नमक और जवाखार मिला कर बलानुसार सेवन की जायं तो उदररोग नष्ट होता है। औषध पचने पर पथ्याहार करना चाहिये ।

पलाशी (केले) के ५ तोला क्षारजल में १। तोला जवाखार मिलाकर प्रातः काल पीनेसे भी उदररोग नष्ट होता है ।

नोट—क्वाथके साथ उबाली.हुई हर्रें रखनेसे उनके शीघ्रही खराब हो जानेका भय है।

(८६८६) हरीतकीयोगः (२)

(ग. नि. । अर्शो. ४)

**गोमूत्रद्रोणसंयुक्ते विपचेदभयाशतम् ।
क्षीणे मूत्रे हरीतक्यौ खादेद्द्वे मधुना सह ॥
एष प्रयोगः शमयेदर्शः श्लेष्मसमुत्थितम् ।
ग्रहणीकृमिदोषांश्च पाण्डुत्वं श्वयथूनपि ॥**

१०० हर्रोंको ३२ सेर गोमूत्रमें पकावें और गोमूत्र जल जाने पर हर्रोंको ठंडा करके सुरक्षित रक्खें ।

इनमें से नित्य प्रति २ हर्रें शहदके साथ खाने से कफज अर्श, ग्रहणी, कृमि, पाण्डु और शोथका नाश होता है ।

(८६८७) हरीतकीयोगः (३)

(रा. मा. । मुखरोगा. ५)

**गोमूत्रमध्ये क्वथिता प्रगाढं
मांस्यन्विता[1] बालककुष्ठयुक्ता ।
हरेच्च पथ्या विहिता मुखान्ते
दौर्गन्ध्यमन्यानपिवक्त्ररोगान् ॥**

गोमूत्रमें जटामांसी (पाठान्तरके अनुसार सौंफ) सुगन्ध बाला (तगर) और कूठका चूर्ण मिलाकर उसमें हर्रें डाल कर पकावें। जब हर्रें उसीज जाएं तो उन्हें गोमूत्रसे निकालकर ठंडा करके सुरक्षित रक्खें ।

इन में से एक एक टुकड़ा मुंहमें रखनेसे दुर्गन्धि और (मुखपाकादि) मुंहके अन्य रोग नष्ट होते हैं ।

(हर्रें १ सेर, गोमूत्र ८ सेर; तीनों ओषधियोंका चूर्ण २० तो०)

(८६८८) हरीतकीयोगः (४)

(भै. र. । अग्निमान्द्या.)

**हरीतक्याः शतं ग्राह्यं तक्रैः स्विन्नञ्च कारयेत् ।
यत्नाद् बीजं समुद्धृत्य चूर्णानीमानि पूरयेत् ॥**

१ " मिश्यन्विता " ~ पाठान्तरम्

षड्डूषणं पञ्चपटु यमानीद्वयमेव च ।
त्रिक्षारं हिङ्गु दिव्यञ्च कर्षद्वयमितं पृथक् ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं चुक्राम्लेनापि भावयेत् ।
लिम्पाकस्वरसेनापि भावयेच्च दिनत्रयम् ॥
खादेदभयामेकां सर्वाजीर्णविनाशिनीम् ।
चतुर्विधमजीर्णञ्च वह्निमान्द्यं विसूचिकाम् ॥
गुल्मशूलादिरोगांश्च नाशयेदविकल्पतः ॥

१०० हर्रों को तक्रमें डालकर पकावें जब वे उसीजकर कोमल हो जाएं तो उन्हें बीचसे चीरकर गुठली निकाल दें और उनके भीतर निम्न लिखित चूर्ण भरकर सूतसे बांध दें ।

चूर्ण—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ काली मिर्च, सेंधा नमक, काला नमक (संचल), विड नमक, सामुद्र लवण, काच लवण, अजवायन, अजमोद, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, हींग और लौंग २॥-२॥ तोले लेकर बारीक चूर्ण बनावें और उसे चुक्राम्ल (कांजी भेद) तथा बिजौरे के रस में ३-३ दिन खरल करके सुखा लें ।

उपरोक्त हर्रों में से १-१ हर्र रोज खानेसे चारों प्रकारका अजीर्ण, अग्निमांद्य, विसूचिका, गुल्म और शूलादिका नाश होता है ।

(८६८९) हरीतकीयोगः (५)

(ग. नि. । उदरा. ३२)

हरीतकी सहस्रं वा विधिवच्चोपयोजयेत् ।
अन्नाम्बुवर्जी पित्तोत्थाज्जठराद्विप्रमुच्यते ॥

अन्न जल बन्द करके १००० हर्र सेवन करने से पित्तोदर नष्ट होता है ।

(प्रथम दिन १ हर्र खावें और फिर रोज १-१ बढ़ाते जावें इस प्रकार जहां तक सहन हो सके बढ़ाते रहें फिर १-१ घटाना शुरु करें और १ पर आकर पुनः १-१ बढ़ावें । इसी क्रमसे सेवन करते हुवे १००० संख्या पूरी करें । पथ्य में केवल दूध पीना चाहिये ।)

(८६९०) हरीतकीयोगः (६)

(वृ. मा. । कासा.)

मुखे धृताऽभया शुण्ठीकणया वा विभीतकम् ।
विभीतकमथैकं वा कासश्वासौ व्यपोहति ॥

हर्र अथवा सोंठ, पीपल और बहेड़ा अथवा केवल बहेड़ा मुंहमें रखनेसे कास श्वासका नाश होता है ।

(८६९१) हरीतकीरसायनम्

(ग. नि. । रसायना. १)

हरीतकीं सर्पिषि सम्प्रताप्य
समश्नुतस्तत्पिबतो घृतं च ।
भवेच्चिरस्थायि बलं शरीरे
सकृत्कृतं साधु यथा कृतज्ञे ॥

हर्रको घीमें सेककर खावें और अनुपान रूपमें वही घी पीवें । इस प्रयोगसे शरीरमें स्थायी बल प्राप्त होता है ।

(८६९२) हरीतक्यादियोगः

(वा. भ. । चि. अ. १५ उदरा.)

हरीतकीसूक्ष्मरजः प्रस्थयुक्तं घृताढकम् ।
अग्नौ विलाप्यमथितं खजेन यवपल्लके ॥

निधापयेत्ततो मासादुद्धृतं गालितं पचेत् ।
हरीतकीनां क्वाथेन दध्ना चाम्लेन संयुतम् ॥
उदरं गरमष्ठीलामानाहं गुल्मविद्रधिम् ।
हन्त्येतत्कुष्ठमुन्मादमपस्मारं च पानतः ॥

१ सेर हर्रके बारीक चूर्णको ४ सेर शहदमें मिलाकर गरम करके मथनीसे मथें और मृत्पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें। १ मास पश्चात् उसे निकालकर कपड़ेसे छान लें और उसमें हर्रका क्वाथ, तथा खट्टी दही (प्रत्येक उसके बराबर) मिलाकर पकावें। (जब कुछ गाढ़ा हो जाय तो ठंडा करके सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे उदररोग, गरविष, अष्ठीला, आनाह, गुल्म, विद्रधि, कुष्ठ, उन्माद और अपस्मारका नाश होता है।

(८६९३) हिक्काहरयोगाः

(ग. नि. । हिक्काश्वासा. ११)

श्वासावरोधिनी हिक्का शमं यात्यति वेगतः ।
चुलुकैर्वा जले पीते धृत्वा श्वासं निवर्तते ॥
मधुना कटुकीचूर्णं लीढं हिक्कानिवारणम् ।
शिलाधूमस्य पानं वा नलिका यन्त्रयोगतः ॥

(१) श्वासको रोककर चुल्लुसे जल पीने से दम बन्द कर देने वाली हिचकी भी बन्द हो जाती है।

(२) कुटकीके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटने से अथवा (३) मनसिल को चिलममें रखकर हुक्के से धूम्र पान करनेसे भी हिचकी नष्ट हो जाती है।

(८६९४) हिङ्गुशोधनम्

(यो. र.)

पद्मपत्ररसे याममातपे भावितं विदुः ।
रामठं शुद्धिमाप्नोति रसयोगेषु योजयेत् ॥

कमलके पत्तोंके रसमें १ पहर धूपमें घोटने से हींग शुद्ध हो जाता है।

(८६९५) हिङ्ग्वादि यवागू

(यो. र. वृ. नि. र. । हिक्का. ;)

हिङ्गुसौवर्चलाजाजीबिडपौष्करचित्रकैः ।
सटी कर्कटशृङ्गी च यवागूः श्वासहिक्किनाम् ॥

हींग, संचल, जीरा, बिडनमक, पोखरमूल, चीतामूल, कचूर और काकड़ासिंगी; इनसे बनाई हुई यवागू श्वास और हिक्का रोगमें हितकारक है।

(हींग, संचल और बिड नमक यवागू तैयार होने पर डालने चाहियें तथा शेष चीजोंका षडङ्ग पानीय विधिसे क्वाथ बनाकर उसमें यवागू पकानी चाहिये।)

(८६९६) हिङ्ग्वादियोगः (१)

(व. से. । मुखरोगा. ; भा. प्र. । म. खं. २)

कृमिदन्तापहं कोष्णं हिङ्गुदन्तान्तरे स्थितम् ॥

हींगको ज़रा गरम करके दांतके नीचे (या उसके गढ़े में) रखनेसे दन्तकृमि नष्ट हो जाते हैं।

(८६९७) हिङ्ग्वादियोगः (२)

(ग. नि. । चूर्णा. ३ ; वा. भ. । चि. अ. १४ गुल्मा.)

हिङ्गुत्रिगुणं सैन्धवमस्मात्त्रिगुणं च तैलमैरण्डम् ।
तत्त्रिगुण रसोनरसं गुल्मोदावर्तशूलघ्नम् ॥

हींग १ भाग, सेंधानमक ३ भाग, एरण्ड तैल ९ भाग और ल्हसनका रस २७ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे गुल्म, उदावर्त और शूलका नाश होता है।

(मात्रा—६ माशे)

(८६९८) हिङ्ग्वादि वर्तिः

(यो. र. । उदावर्ता. ; भै. र. ; वृ. मा. ; वृ. नि. र. ; व. से. ; र. र. । उदावर्ता.)

हिङ्गुमाक्षिकसिन्धूत्थैः पक्त्वा वर्तिं सुखावर्तिताम् ।
घृताभ्यक्तां गुदे दद्यादुदावर्तविनाशिनीम् ॥

हींग, शहद और सेंधानमक समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर पकाकर गाढ़ा करके वत्ती बनावें। इसे घी लगाकर गुदामें रखनेसे उदावर्त नष्ट हो जाता है।

(८६९९) ह्रीबेरादियोगः

(वं. से ; यो. र. । दाहरोगा.)

ह्रीबेरपद्मकोशीरचन्दनक्षोदवारिणा ।
सम्पूर्णामवगाहेत द्रोणीं दाहार्दितो नरः ॥

सुगन्धवाला, पद्माक, खस और लाल चन्दन समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इस चूर्णको (८ गुने) पानी में मिलाकर (२४ घंटे रखने के बाद) उस पानीमें डुबकी लगानेसे दाह शान्त हो जाती है।

इति हकारादिमिश्रप्रकरणम्

क्ष

अथ क्षकारादिकषायप्रकरणम्

(८७००) क्षुद्रादिक्वाथः (१)

(भा. प्र. । म. खं. २)

क्षुद्रानागरपुष्कराऽमृतलताब्राह्मीवचासुव्रताभार्ङ्गीवासकयासतोयसुरसाक्वाथो जयेज्जिह्वकम् ।

कटेली, सोंठ, पोखरमूल, गिलोय, ब्राह्मी, बच, सुव्रता (गन्धशटी) भरंगी, बासा, धमासा, सुगन्धबाला और तुलसी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ जिह्वक सन्निपातको नष्ट करता है।

(८७०१) क्षुद्रादिक्वाथः (२)

(यो. त. । त. २० ; शा. सं. । खं. २ अ. २; यो. चि. म. । अ. ४ ; वृ. नि. र. ; यो. र. । ज्वरा.)

क्षुद्राधान्यकशुण्ठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः ।
रक्तचन्दनभूनिम्बपटोलवृषपौष्करैः ॥
कटुकेन्द्रयवारिष्टभार्ङ्गीपर्पटकैः समैः ।
क्वाथं प्रातर्निषेवेत सर्वशीतज्वरच्छिदम् ॥

कटेली, धनिया, सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, पद्माक, लालचन्दन, चिरायता, पटोलपत्र, बासा, पोखरमूल, कुटकी, इन्द्रजौ, नीमकी छाल, भरंगी और पित्तपापड़ा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें। इसे प्रातः काल पीनेसे समस्त प्रकारके शीतज्वर नष्ट होते हैं ।

(८७०२) क्षुद्रादिक्वाथः (३)

(वृ. नि. र. । ज्वरा. ; वृ. मा. । ज्वरा.; च. द. । ज्वरा. ; व. से. ; र. र. । ज्वरा. ; शा. सं. । खं. २ अ. २; वृ. यो. त. । त. ५९; यो. चि. म. । अ. ४; ग. नि. । ज्वरा. १)

क्षुद्राशुण्ठीगुडूचीनां कषायः पौष्करस्य च ।
कफवाताधिके पेयो ज्वरे वापि त्रिदोषजे ॥
कासश्वासारुचिहरो पार्श्वशूलविनाशनः ॥

कटेली, सोंठ, गिलोय और पोखरमूल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कफवात प्रधान ज्वर तथा सन्निपातज्वर एवं कास, श्वास, अरुचि और पार्श्वशूलको नष्ट करता है ।

(८७०३) क्षुद्रादिक्वाथः (४)

(शा. सं. । खं. २ अ. २)

क्षुद्रा किराततिक्तं च शुण्ठी छिन्ना च पौष्करम् ।
कषाय एषां शमयेत् पीतश्चाष्टविधं ज्वरम् ॥

कटेली, चिरायता, सोंठ, गिलोय और पोखरमूल का क्वाथ आठ प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है।

(८७०४) क्षुद्रादिक्वाथः (५)

(शा. सं. । खं. २ अ. २; यो. चि. म. । अ. ४)

क्षुद्राकुलित्थवासाभिर्नागरेण च साधितः ।
क्वाथः पौष्करचूर्णाढ्यः श्वासकासौ निवारयेत् ॥

कटेली, कुलथी, वासा (अडूसा) और सोंठ; इनके क्वाथमें पोखरमूलका चूर्ण मिलाकर सेवन करने से श्वास कासका नाश होता है ।

(८७०५) क्षुद्रादिक्वाथः (६)

(वृ. नि. र. । मूर्च्छा.)

क्षुद्रामृताग्रन्थिकनागराणां
मूर्छां जयेद्दारुणकां कषायः ।

कटेली, गिलोय, पीपलामूल और सोंठ; इनका क्वाथ सेवन करनेसे प्रबल मूर्च्छा रोग नष्ट हो जाता है ।

(८७०६) क्षुद्रारसयोगः

(यो. त. । त. १८)

पचेत्क्षुद्रां सपञ्चाङ्गां पुटपाकेन तद्रसः ।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तः कासश्वासक्षयापहः ॥

कटेलीके पंचांगको कूटकर (गोला बनाकर उसे अरण्ड या बासेके पत्तोंमें लपेट कर उस पर १ अंगुल मोटा मिट्टीका लेप करके) पुटपाक विधिसे पकावें और रस निकाल लें ।

इसमें (१ माशा) पीपलका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे कास, श्वास और क्षयका नाश होता है।

(मात्रा—२ तोला ।)

इति क्षकारादिकषाय-प्रकरणम्

अथ क्षकारादिचूर्णप्रकरणम्

(८७०७) क्षारद्वयादिचूर्णम्

(यो. र. । गुल्मा., उदरा.; वृ. नि. र. । गुल्मा.)

क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपञ्चकम् ।
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

जवाखार, सज्जीखार, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, नीलकी जड़ और पांचों नमक (सेंधा, संचल, विड लवण, सामुद्र लवण और उद्भिद्लवण) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घीके साथ मिलाकर पीनेसे समस्त प्रकारके गुल्म और उदर रोगोंका नाश होता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(८७०८) क्षारयोगः (१)

(सुश्रुत सं. । चि. अ. ७ अश्मर्य.)

तिलापामार्गकदलीपलाशयववल्कजः ।
क्षारः पेयोऽविमूत्रेण शर्करानाशनः परः ॥

तिल, अपामार्ग, केला, पलाश (ढाक), जौ और लोध; इनके क्षार समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर खरल कर लें।

इसे भेड़के मूत्रके साथ सेवन करने से शर्करा रोग नष्ट होता है।

(८७०९) **क्षारयोगः** (२)

(यो. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

अङ्कोलतिलकाष्ठानां क्षारः क्षौद्रेण संयुतः ।
दधिवार्यनुपानेन मूत्ररोधं नियच्छति ॥

अंकोल की लकड़ी का और तिलके वृक्षों का क्षार (एकत्र बना हुवा या समान भाग मिश्रित) शहदमें मिलाकर चाटने से मूत्रावरोध नष्ट होता है।

अनुपान—दहीका पानी।

(**मात्रा**—१॥ माशा।)

(८७१०) **क्षारयोगः** (३)

(क्षारामृतचूर्णम्)

(वृ. नि. र. । शूला.; यो. चि. म. । अ. २; हा. सं. । स्था. १ अ. ४)

क्षारं मुष्ककर्किंशुकार्जुन-
धवापामार्गरम्भातिला-
जीवन्तीकनकाह्वयं च
रजनी कूष्माण्डवल्ली तथा ।
वासासूरणमेव तीव्र-
दहने प्रज्वाल्य भस्मीकृतं
तोयेन प्रतिसेव्य निःसृत-
पयः पानं विधेयं यकृत् ॥
शूलानाहविबन्धगुल्म
कफजान् रोगान् जयेत्कामलां
विद्रध्यो हृदिशूलपाण्डु-
ग्रहणीशोफार्शसां पीनसान् ।
मन्दाग्नौ ज्वरपीडने कृमिगुदभ्रंशे प्रमेहे तथा ।
शस्तं वृद्धिषु दाहशूलकसनो-
द्गारे वमौ प्लीहि च ॥

पलाश (ढाक), मुष्कक (मोखावृक्ष), अर्जुन, धव, अपामार्ग, केला, तिल, जीवन्ती, धतूरा, हल्दी, पेठे (भूरे कुम्हड़े) की बेल, बासा, और सूरण; इनका यथाविधि क्षार बनावें।

इसे पानीके साथ सेवन करना और फिर यथेष्ट दूध पीना चाहिये।

इसके सेवन से यकृत्‌रोग, शूल, आनाह, विबन्ध गुल्म, कफज रोग, कामला, विद्रधि, हृदय-शूल, पाण्डु, ग्रहणीरोग, शोथ, अर्श, पीनस, अग्नि-मांद्य, ज्वर, कृमि, गुदभ्रंश, प्रमेह, अण्डवृद्धि, दाह, शूल, कास, उद्‌गार अधिक आना, वमन और प्लीहावृद्धिका नाश होता है।

(८७११) **क्षारादियोगः** (१)

(यो. त. । त. ४६)

सक्षारत्र्यूषणं मद्यं प्रपिबद्रक्तगुल्मनुत् ।
पलाशक्षारतोयेन सिद्धं सर्पिः पिबेच्च सा ॥

जवाखार, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र मिलावें।

यह चूर्ण मिलाकर मद्य पीनेसे रक्त गुल्म का नाश होता है।

अथवा पलाश के क्षारजलसे सिद्ध घृत पीने से भी रक्तगुल्म नष्ट होता है।

(८७१२) **क्षारादियोगः** (२)

(वृ. नि. र.; वृ. मा. । उदरा.; यो. र. । यकृद्रोगा.)

क्षारं वा बिडकृष्णाभ्यां पूतिकस्याम्बुमिश्रितम् ।
यकृत्प्लीहप्रशान्त्यर्थं पिबेत प्रातर्यथाबलम् ॥

जवाखार, बिड लवण और पीपल; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको करंज (कण्टक करंज) के रसमें मिलाकर प्रातःकाल सेवन करने से यकृत और प्लीहारोगका नाश होता है ।

(८७१३) **क्षुद्रकरवन्दयोगः** (१)

(वै. म. र. । पटल ९)

क्षुद्रकरवन्दवरुणानलसुवर्ण
दुग्धसहितं पिबति यो जयति शूलम् ।
अन्त्रजनितं, लशुननागरकुबेरा-
क्षीन्द्रलतिकामृतजलं च निशि पीतम् ॥

छोटा करौंदा, बरनेकी छाल, चीतामूल और नागकेसर समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे दूधके साथ पीनेसे अन्त्रशूल नष्ट होता है।

अथवा रातको लहसन, सोंठ, करञ्जमूल और इन्द्रायण की जड़ का क्वाथ पीने से भी अन्त्रशूल नष्ट हो जाता है ।

(८७१४) **क्षुद्रकरवन्दयोगः** (२)

(वै. म. र. पटल ७)

क्षुद्रकरवन्द (मर्द) मूलं पयसा पीतं प्रभात-
कालेषु ।
निरुणद्धि मूत्रकृच्छ्रं सन्तमसं भानुबिम्बमिव ॥

प्रातःकाल क्षुद्रकरमर्द (छोटे करौंदे) की जड़को दूधके साथ पीसकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है ।

इति क्षकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ क्षकारादिगुटिकाप्रकरणम्

(८७१५) **क्षारगुटिका** (१)

(रसे. चि. म. । अ. ९; रसे. सा. सं; धन्व; च. द.; र. रा. सु. । शोथा.; ग. नि. । गुटिका. ४; च. सं । चि. अ. १२ श्वयथु.)

क्षारद्वयं स्याल्लवणानि चत्वा-
र्ययोरजो व्योष फलत्रिके च ।
सपिप्पलीमूलविडङ्गसारं
मुस्ताजमोदामरदारुबिल्वम् ॥
कलिङ्गकाश्चित्रकमूलपाठे
सयष्टिकं चातिविषं पलांशम् ।
सहिङ्गुकर्षं तु सुसूक्ष्मचूर्णं
द्रोणं तथा मूलकशुण्ठकानाम् ॥

स्याद्भस्मनस्तत् सलिलेन साध्य-
मालोड्य यावद्घनमप्रदग्धम् ।
स्त्यानं ततः कोलसमां तु मात्रां
कृत्वा सुशुष्कां विधिनोपयुञ्ज्यात् ॥
प्लीहोदरश्वित्रहलीमकार्शः
पाण्ड्वामयारोचकशोषशोफान् ।
विषूचिकागुल्मगराश्मरीश्च
सश्वासकासाः प्रणुदेत् सकुष्ठाः ॥

जवाखार, सज्जीखार, चारों नमक* (सेंधा नमक, संचल, विड नमक और उद्भिद्लवण), लोहभस्म, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपलामूल, वायबिडंगकी गिरी, नागरमोथा, अजमोद, देवदारु, बेलकी छाल, इन्द्रजौ, चीतामूल, पाठा, मुलैठी और अतीस; इनका चूर्ण ५-५ तोले एवं हींग १। तोला लेकर सबको एकत्र मिला लें।

सूखी मूलीकी राख १६ सेर लेकर उसे (६ गुने) पानीमें घोलकर (क्षारनिर्माण विधिसे) स्वच्छ पानी नितार लें और उसमें उपरोक्त चूर्ण मिलाकर करछे से चलाते हुवे (मंदाग्निपर) पकावें। जब गोली बनाने योग्य गाढ़ा हो जाय तो अग्नि से नीचे उतारकर बेरके समान गोलियां बना लें। यह ध्यान रखना चाहिये कि औषध जल न जाए।

इनके सेवन से प्लीहा, उदररोग, श्वित्रकुष्ठ, हलीमक, अर्श, पाण्डु, अरुचि, शोष, शोथ, विषूचिका, गुल्म, गरविष, अश्मरि, श्वास, कास और कुष्ठका नाश होता है।

---

* पाठान्तर के अनुसार पंचलवण और ४ प्रकारका लोह लेना चाहिये।

(८७१६) क्षारगुटिका (२)

(च. सं. । चि. अ. १९ ग्रहण्य.)

चतुष्पलं सुधाकाण्डं त्रिपलं लवणत्रयात् ।
वार्ताकीकुडवं चार्काद्दष्टौ द्वे चित्रकात्पले ॥
दग्धानि वार्ताकुरसे गुलिका भोजनोत्तराः ।
भुक्तं भुक्तं पचत्याशु कासश्वासार्शसां हिताः ॥
विषूचिकाप्रतिश्यायहृद्रोगशमनाश्च ताः ॥

थूहरका काण्ड (डंडा) २० तोले, सेंधा नमक १५ तोले, संचल (काला नमक) १५ तोले, बिड नमक १५ तोले, बड़ी कटेली (या बैंगन) २० तोले, अर्कमूल ४० तोले और चित्रकमूल १० तोले लेकर सबको जला कर भस्म करें और बैंगन के रसमें घोटकर गोलियां बना लें।

इन्हें भोजनके पश्चात् सेवन करने से भोजन शीघ्र पच जाता है। ये गोलियां कास, श्वास, अर्श, विषूचिका, प्रतिश्याय और हृद्रोगका नाश करती हैं।

(८७१७) क्षारगुटिका (३)

(व. से.। उदरा. ; वा. भ.*। चि. अ. १५ उदररो.)

क्षारं वनकरीषाणां स्विन्नं वस्त्रेण गालयेत् ।
कार्षिकं पिप्पलीमूलं पञ्चैव लवणानि च ॥
पिप्पली चित्रकं शुण्ठी त्रिवृता त्रिफला वचाः ।
द्वौ क्षारौ सातलादन्ती स्वर्णक्षीरी विषाणिका ॥
कोलप्रमाणां वटिकां पिबेत्सौवीरसंयुताम् ।
श्वयथावथ वक्त्रस्य प्रवृद्धे च दकोदरे ॥

---

*वाग्भटके मतानुसार—

(१) बकरीकी मेंगनियोंका क्षार लेना और गोमूत्रमें पकाना चाहिये।

(२) चित्रकका अभाव है।

बन कण्डों की भस्म को पानीमें घोलकर यथाविधि क्षार बनावें। इस क्षारको पानीमें घोलकर पकाकर गाढ़ा करें और फिर १।-१। तोला पीपलामूल, पांचों नमक (सेंधा नमक, संचल, बिड लवण, उद्भिद्लवण, सामुद्रलवण), पीपल, चीतामूल, सोंठ, निसोत हर्र, बहेड़ा, आमला, बच, जवाखार, सज्जीखार, सातला, दन्तीमूल, स्वर्णक्षीरी (सत्यानाशीकी जड़-चोक), और मेढ़ासिंगी; इनका चूर्ण लेकर सबको एकत्र खरल करके उपरोक्त क्षारमें घोटें और बेरके समान गोलियां बना लें।

इन्हें सौवीर कांजी के साथ सेवन करने से मुखशोथ और जलोदरका नाश होता है।

(८७१८) क्षारगुटिका (४)

(भै. र.; च. द.; व. से.। मुखरोगा.)

पञ्चकोलकतालीशपत्रैलामरिचत्वचः।
पलाशमुष्ककक्षारयवक्षाराश्च चूर्णिताः॥
गुडे पुराणे क्वथिते द्विगुणे गुडिकाः कृताः।
कर्कन्धुमात्राः सप्ताहं स्थिता मुष्ककभस्मनि॥
कण्ठरोगेषु सर्वेषु धार्याः स्युरमृतोपमाः॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, तालीस पत्र, तेजपात, इलायची, काली मिर्च, दारचीनी, पलाशक्षार, मुष्कक (मोखावृक्ष) का क्षार और जवाखार इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और फिर सब से दो गुने पुराने गुड़की चाशनी बनाकर उसमें वह चूर्ण मिलाकर बेरके समान गोलियां बना लें और उन्हें सात दिन तक मुष्कक वृक्षकी राखमें दबाए रक्खें और फिर सेवन करें।

यह गुटिका कण्ठ रोगोमें अमृतके समान गुणकारी है। १-१ गोली मुंहमें रखकर रस चूसना चाहिये।

क्षारवटी (महा)

(यो. र.। उपदंशा.)

प्र. सं. ५१६९ महाक्षारवटी देखिये

क्षीरवटी

(भै. र.। शोथा.)

प्र. सं. ३२१४ दुग्धवटी (३) देखिये

क्षुधावतीगुटिका

रस प्रकरणमें देखिये

इति क्षकारादिगुटिकाप्रकरणम्

अथ क्षकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(८७१९) क्षतशुक्रहरगुग्गुलुः

(र. चं.; रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । नेत्ररोगा.)

अयः सयष्टित्रिफलाकणानां
चूर्णानि तुल्यानि पुरेण नित्यम् ।
सर्पिर्मधुभ्यां सह भक्षितानि
शुक्राणि काचानि निहन्ति शीघ्रम् ॥

लोहभस्म, मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला, और पीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर (थोड़ा थोड़ा घी डालकर) अच्छी तरह कूटें ।

इसे घी और शहदमें मिलाकर सेवन करने से नेत्रकाच (मोतियाबिन्द) और नेत्र शुक्र (फूले) का शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

इति क्षकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

अथ क्षकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(८७२०) क्षारगुटिका

(क्षारगुडः)

(ग. नि. । गुटिका. ४)

द्वे पञ्चमूल्यौ त्रिवृता निकुम्भा
पाठा वचास्फोटबलाश्च रास्ना ।
सकारवीचित्रकमर्कमूलं
पृथक् पृथक् तानि पलैर्दशाख्यैः ॥
भस्मीकृतान्यम्भसि गालयित्वा
पचेत्तुलां जीर्णगुडस्य सम्यक् ।
द्वे पञ्चमूल्यौ यवशूकजं च
क्षारं तथा स्वर्जिकसंज्ञिकं च ॥
व्योषं वचां चैव हरीतकीं च
पृथक् पलानां सह चित्रकेण ।
हिङ्ग्वम्लभल्लातकमक्षतुल्यं
विपाचयेत्क्षारगुडं यथावत् ॥
ततोऽक्षमात्रा गुटिका प्रयोज्या
कायाग्निहीनैरबलैर्नरैश्च ।
सश्लेष्मकासारुचिगुल्मवृद्धौ
कफश्च कण्ठोरसि यस्य तिष्ठेत् ॥
कुष्ठप्रमेहान् श्वयथुं च हन्या-
द्वातामयप्लीहयकृद्रवांश्च ।
अन्नं हि भुक्तं जरयेच्च शीघ्रं
युक्तो रसैः क्षारगुडप्रयोगः ॥

दशमूलकी प्रत्येक औषध, निसोत, दन्तीमूल, पाठा, बच, आस्फोता (कोयल), खरैटी, रास्ना, कलौंजी, चीतामूल और आककी जड़ १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर सबको जलाकर भस्म

करें और उस भस्म को पानीमें मिलाकर (क्षार-निर्माण विधिसे) छान लें। जब स्वच्छ पानी निकल आवे तो उसे पकाकर कुछ गाढ़ा करें और फिर उसमें ६। सेर पुराना गुड़ मिलाकर पुनः पकावें। जब पाक तैयार हो जाय तो उसमें निम्न लिखित औषधियोंका चूर्ण मिला दें—

दशमूल, जवाखार, सज्जीखार, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, हर्र; और चीता इनमें से प्रत्येकका चूर्ण ५-५ तोले तथा हींग, अम्लबेत और भिलावा १।-१। तोला।

इसके सेवन से शरीरकी कृशता, निर्बलता, अग्निमांद्य, कफ, अरुचि, गुल्म, कण्ठ और छातीमें स्थित कफ, कुष्ठ, प्रमेह, वातरोग, प्लीहा और यकृत् वृद्धि का नाश होता तथा आहार शीघ्र पच जाता है।

मात्रा—१। तोला

(व्यवहारिकमात्रा—२ माशे।)

(८७२१) क्षारगुडः

(च. द.; व. से.। अग्निमांद्य.)

द्वे पञ्चमूले त्रिफलामर्कमूलं शतावरीम्।
दन्तीं चित्रकमास्फोतां रास्नां पाठां सुधां शठीम्॥
पृथग्दशपलान् भागान् दग्ध्वा भस्म समावपेत्।
त्रिःसप्तकृत्वस्तद्भस्म जलद्रोणे च गालयेत्॥
तद्रसं साधयेदग्नौ चतुर्भागावशेषितम्।
ततो गुडतुलां दत्त्वा साधयेन्मृदुनाग्निना॥
सिद्धं गुडन्तु विज्ञाय चूर्णानीमानि दापयेत्।
वृश्चिकालीं द्विकाकोल्यौ यवक्षारं समावपेत्॥
एते पञ्चपला भागाः पृथक् पञ्च पलानि च।
हरीतकी त्रिकटुकं सर्जिकां चित्रकं वचाम्॥
हिङ्ग्वम्लवेतसाभ्याञ्च द्वे पले तत्र दापयेत्।
अक्षप्रमाणां गुडिकां कृत्वा खादेद् यथाबलम्॥
अजीर्णं जरयत्येष जीर्णे सन्दीपयत्यपि।
भुक्तं भुक्तञ्च जीर्येत पाण्डुत्वमपकर्षति॥
प्लीहार्शः श्वयथुश्चैव श्लेष्मकासमरोचकम्।
मन्दाग्निविषमाग्निनां कफे कण्ठोरसि स्थिते॥
कुष्ठानि च प्रमेहांश्च गुल्मश्चाशु व्यपोहति।
ख्यातः क्षारगुडो ह्येष रोगयुक्ते प्रयोजयेत्॥

दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, हर्र, बहेड़ा, आमला, आककी जड़ (पाठान्तरके अनुसार निसोत), शतावर, दन्तीमूल, चीता, आस्फोता (कोयल-अपराजिता), रास्ना, पाठा, थूहर, और कचूर (पाठान्तरके अनुसार हर्र भी) ५०-५० तोले लेकर सबको एकत्र जलाकर भस्म करें और उसे ३२ सेर पानीमें मिलाकर (क्षारनिर्माण विधिसे) २१ बार वस्त्र से छान लें एवं उसे अग्निपर चढ़ाकर पकावें। जब चतुर्थांश पानी रह जाय तो उसमें ६। सेर गुड़ मिलाकर पुनः मन्दाग्निपर पकावें। जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित चीज़ोंका चूर्ण मिला दें—

वृश्चिकाली (बहेंटा), काकोली, क्षीरकाकोली, और जवाखार २५-२५ तोले तथा हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, सज्जी, चीतामूल और बच; इनका समान भाग मिलित चूर्ण २५ तोले, हींग ५ तोले एवं अम्लवेत ५ तोले।

इसके सेवन से अजीर्णका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है। तथा पाण्डु, प्लीहा, अर्श, शोथ, कफ, कास, अरुचि जठराग्निकी विषमता, कण्ठ और छातीका कफ, कुष्ठ, प्रमेह और गुल्मका नाश होता है।

मात्रा—१। तोला।

व्यवहारिक मात्रा—२ माशा।

(८७२२) **क्षुद्रावलेहः** (१)

(वृ. नि. र. । कासा.)

समूलकण्टकारी च चपला चपलाजटा।
अपामार्गस्य बीजानि जीर्णं सामुद्रकं तथा॥
मधुना लेहयेत्सर्वं कासश्वासहरं परम्।
उरः क्षतक्षये तीव्रे कफरक्तवमीषु च॥

कटेलीका पंचाग, पीपल, पीपलामूल, चिरचिटेके बीज, जीरा और सामुद्रलवण समान भाग लेकर चूर्ण करके शहदमें मिलाकर अवलेह बनावें।

इसे चाटनेसे खांसी, श्वास, उरःक्षत, तीव्र क्षय और कफ तथा रक्त वमनका नाश होता है।

क्षुद्रावलेहः (२)

(यो. र. । श्वासा.)

प्र. सं. ४८६७ "भृगुहरीतकी" देखिये।

इति क्षकाराद्यवलेह-प्रकरणम्

अथ क्षकारादिघृतप्रकरणम्

(८७२३) **क्षारघृतम्** (१)

(वा. भ. । चि. अ. ३ कासा.)

क्षाररास्नावचाहिङ्गुपाठायष्ट्याह्वधान्यकैः।
द्विशाणैः सर्पिषः प्रस्थं पञ्चकोलयुतैः पचेत्॥
दशमूलस्य निर्यूहे पीतो मण्डानुपायिना।
सकासश्वासहृत्पार्श्वग्रहणीरोगगुल्मनुत्॥

कल्क—जवाखार, रास्ना, बच, हींग, पाठा, मुलैठी, धनिया, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ १०-१० माशे।

२ सेर घी में यह कल्क और दशमूलका ८ सेर क्वाथ मिलाकर पकावें।

इसके सेवन से कास, श्वास, हृदयरोग, पार्श्वरोग, ग्रहणीरोग और गुल्मका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ से २ तोले तक।)

अनुपान—मण्ड।

(८७२४) **क्षारघृतम्** (२)

(च. सं. । चि. अ. १९ ग्रहण्य.)

बिडं कालोत्थलवणं स्वर्जिका यावशूकजम्।
सप्तला कण्टकारी च चित्रकश्चेति दाहयेत्॥
सप्तकृत्वः स्रुतस्यास्य क्षारस्य द्व्याढकेन तु।
आढकं सर्पिषः पक्त्वा पिबेदग्निविवर्द्धनम्॥

बिड नमक, काला नमक, सज्जीखार, जवाखार, सप्तलाकी भस्म, कटेली की भस्म और चीतेकी

भस्म समान भाग लेकर सबको (६ गुने) पानीमें घोलकर (क्षारनिर्माण विधिसे) सात बार वस्त्र से छान लें। फिर ८ सेर यह पानी और ४ सेर घी एकत्र मिलाकर पकावें।

यह घृत अग्निको दीप्त करता है।

(८७२५) **क्षारघृतम्** (३)

(भै. र. । क्षुद्ररोगा.)

मुष्ककं कुटजं गुञ्जां चित्रकं कदलीं द्रुपम् ।
अर्कस्नुह्यावपामार्गमश्वमारं विभीतकम् ॥
पलाशं पारिभद्रञ्च नक्तमालञ्च सन्दहेत् ।
ततः प्रस्थं समादाय क्षारस्य षड्गुणाम्भसा ॥
त्रिःसप्तकृत्वो विस्राव्य पचेत्सर्पिस्तदम्बुना ।
कल्कं क्षारत्रयं दत्त्वा नातितीव्रेण वह्निना ॥
क्षारसर्पिरिदं हन्यान्मशकं तिलकालकम् ।
पद्मिनीकण्टकं चिप्पमलसं दद्रुसिध्मनी ॥

मुष्कक (मोखावृक्ष); कुड़ा, गुञ्जा (चौंटली) चीता, केला, बासा, आक, थूहर, चिरचिटा, कनेर, बहेड़ा, पलाश, नीम और करञ्ज; इनकी भस्म समान भाग मिलित १ सेर लेकर ६ गुने पानीमें मिलाकर २१ बार वस्त्र से छान कर स्वच्छ पानी निकालें।

४ सेर यह पानी, १ सेर घी और जवाखार, सज्जीखार तथा सुहागा (समान भाग मिलित १० तोले) एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें और फिर छान लें।

यह घृत (लगाने से) मशक, तिल, कालक, पद्मिनी कण्टक, चिप्प, अलस (खारवा), दाद और सिध्मको नष्ट करता है।

(८७२६) **क्षारद्वयाद्यघृतम्**

(व. से. । बालरोगा. ।)

क्षारद्वयं देवदारु विश्वाजाजी सदीप्यकम् ।
ग्रन्थिकं पिप्पली तिक्ता द्रव्यैरेतैः समैर्घृतम् ॥
सौवीरदधिमद्यैश्च कल्कैरेतैः पचेद्भिषक् ।
प्रयुक्तं हन्ति तत्सर्पिः शिशोः परिभवाख्यकम्॥

कल्क—जवाखार, सज्जीखार, देवदारु, सोंठ, जीरा, अजवायन, पीपलामूल, पीपल और कुटकी समान भाग मिलित २० तोले।

२ सेर घी में यह कल्क और समान भाग मिलित ८ सेर सौवीरक कांजी, दही तथा मद्य मिलाकर पकावें।

यह घृत बालकोंके पारिगर्भिक रोगको नष्ट करता है।

क्षीरषट्पलघृतम्

(यो. र. ; धन्व. । गुल्मा.; वृ. नि. र. ; र. र.; भै. र. । ज्वरा. ; च. द. । ज्वरा.; गुल्मा. ; व. से. । ज्वरा.; गुल्मा. ; वृ. मा. । गुल्मा.; वृ. यो. त. । त. ९८; ग. नि. । गुल्मा. २५)

प्र. सं. ७७५१ षट्पलघृतम् देखिये।

कई ग्रन्थों में सेंधा नमकके स्थानमें जवाखार लिखा है तथा इसे कास, ग्रहणी एवं पांडु नाशकभी लिखा है।

(८७२७) **क्षीरामलकघृतम्**

(यो. र. । कासा.; वृ. यो. त. । त. ७८)

माहिष्यजाविगोक्षीरधात्रीफलरसैः समैः ।
सर्पिःप्रस्थं पचेद्युक्त्या पित्तकासनिबर्हणम् ॥

भैंस, बकरी, भेड़, और गाय; इनका दूध तथा आमलेका रस १-१ सेर और घी १ सेर

लेकर सबको एकत्र मिलाकर घृत मात्र शेष रहने तक पकावें और छान लें।

यह घृत पित्तज कास को नष्ट करता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक।)

(८७२८) क्षीरिघृतम्

(यो. र.; व. से.। कासा.)

क्षीरिवृक्षाङ्कुरक्वाथे पचेत्क्षीरसमं घृतम्।
पाययेत्पित्तकासघ्नं मधुना वाऽवलेहयेत्॥

क्षीरी वृक्षों (पीपल, पिलखन, बड़, गूलर, पारस पीपल) की कोंपल समान भाग मिलित २॥ सेर लेकर कूटकर २० सेर पानीमें पकावें और ५ सेर रहने पर छान लें। तत्पश्चात् १। सेर घी में यह क्वाथ और १। सेर दूध मिलाकर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें।

इसे पीने या शहद मिलाकर चाटने से पित्तज कासका नाश होता है।

(मात्रा—१ से २ तोले तक।)

(८७२९) क्षीरिद्रुमाद्यं घृतम्

(च. द.। अतिसारा. ४)

क्षीरिद्रुमाभीरुरसे विपक्वं
तज्जैश्च कल्कैः पयसा च सर्पिः।
सितोपलार्धं मधुपादयुक्तं
रक्तातिसारं शमयत्युदीर्णम्॥
जीर्णेऽमृतोपमं क्षीरमतीसारे विशेषतः।
छागं तु भेषजैः सिद्धं देयं वा वारिसाधितम्॥

क्षीरी वृक्षों (पीपल, पिलखन, बड़, गूलर और पारस पीपल) की कोंपलोंका क्वाथ २ सेर, शतावरका रस २ सेर, दूध १ सेर और घी १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलावें तथा उसमें क्षीरी वृक्षों की कोंपलों और शतावरका १० तोले कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घी को छान लें।

इसमें इस से आधी खांड और चौथाई शहद मिलाकर सेवन करने से रक्तातिसारका नाश होता है।

पुराने अतिसारमें उचित औषधियों से या केवल पानी से सिद्ध किया हुवा बकरीका दूध अमृतके समान गुण करता है।

इति क्षकारादिघृतप्रकरणम्

अथ क्षकारादितैलप्रकरणम्

(८७३०) क्षारतैलम् (१) (लघु)

(ग. नि.[1] । तैला. ९; यो. त.[2] । त. ७०)

शुष्कमूलकशुण्ठीनां क्षारो हिङ्गु महौषधम् ।
शतपुष्पा वचा कुष्ठं दारु शिग्रु रसाञ्जनम् ॥
मातुलुङ्गरसश्चैव कदल्या रस एव च ।
तैलमेभिर्विपक्तव्यं कर्णशूलहरं परम् ॥
बाधिर्यं कर्णनादश्च पूयास्रावश्च दारुणः ।
कृमयश्च विनश्यन्ति तैलस्यास्य प्रपूरणात् ॥

कल्क—सूखी मूलीका क्षार, हींग, सोंठ, सोया, बच, कूठ, देवदारु, सहंजनेकी छाल और रसौत समान भाग मिलित २० तोले लेकर कल्क बनावें ।

द्रव पदार्थ—बिजौरे नीबूका रस ४ सेर और केलेका रस ४ सेर ।

२ सेर तेलमें उपरोक्त समस्त औषधियां मिलाकर पकावें और पानी जल जाने पर तेलको छान लें ।

इसे कानमें डालने से कर्णशूल, कर्णनाद, बधिरता, पीप निकलना और कर्ण कृमि आदि कर्ण रोगोंका नाश होता है ।

१ ग. नि. में इसी पाठको पुनः उद्धृत करके उसका नाम बृहत्क्षार तैल दिया है,

२ यो. त. में केवल मूलीक्षार, हींग और सोंठ तथा शुक्तके साथ तैल पाक करने को लिखा है।

(८७३१) क्षारतैलम् (२)

(शा. सं. । खं २ अ. ९; वृ. यो. त. । त. १२९; वृ. मा.; व. से.; र. र.; च. द.; भै. र.; यो. र.; वृ. नि. र. । कर्णरोगा.; यो. त. । त. ७०; वा. भ. । उ. अ. १८; च. सं. । अ. २६ त्रिमर्मीयचिकित्सा.)

बालमूलकशुण्ठीनां क्षारः क्षारयुगं तथा ।
लवणानि च पञ्चैव हिङ्गु शिग्रु महौषधम् ॥
देवदारु वचा कुष्ठं शतपुष्पा रसाञ्जनम् ।
ग्रन्थिकं भद्रमुस्तं च कल्कैः कर्षमितैः पृथक् ॥
तैलप्रस्थं च विपचेत् कदलीबीजपूरयोः ।
रसाभ्यां मधुसूक्तेन चातुर्गुण्यमितेन च ॥
पूयस्रावं कर्णनादं शूलं बधिरतां कृमीन् ।
अन्यांश्च कर्णजान् रोगान् मुखरोगांश्च नाशयेत् ॥
जम्बीराणां फलरसः प्रस्थैकः कुडवोन्मितम् ।
माक्षिकं तत्र दातव्यं पलैका पिप्पली स्मृता ॥
एतदेकीकृतं सर्वं मृद्भाण्डे च निधापयेत् ॥

कच्ची मूलियोंका क्षार, जवाखार, सज्जीखार, पांचों नमक, (सेंधा, काला नमक, बिड नमक, सामुद्रलवण, काच लवण), हींग, सहंजनें की छाल, सोंठ, देवदारु, बच, कूठ, सोया, रसौत, पीपलामूल, और नागरमोथा १।-१। तोला लेकर कल्क बनावें।

तदनन्तर २ सेर तेलमें यह कल्क तथा ८-८ सेर केलेका रस, बिजौरे नीबूका रस और

मधुसुक्त मिलाकर पकावें जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल कानमें डालनेसे पीप निकलना, कर्णनाद, कर्णशूल, बधिरता, कर्णकृमि और अन्य समस्त कर्णरोग नष्ट होते हैं।

यह तेल मुखरोगोंको भी नष्ट करता है।

मधुशुक्त बनानेकी विधि—जम्बीरी नीबूका रस २ सेर, शहद ४० तोले और पीपलका चूर्ण ५ तोला लेकर सबको मिट्टीके पात्रमें भरकर मुख बन्द करदें और १ मास पश्चात् निकाल लें।

(८७३२) **क्षारतैलम्** (३)

(भै. र. । स्त्रीरोगा. ; च. द. । स्त्रीरोगा. ; यो. चि. म. । अ. ६)

शुक्तिशम्बूकशङ्खानां दीर्घवृन्तात्समुष्ककात् ।
दग्ध्वा क्षारं समादाय खरमूत्रेण भावयेत् ॥
क्षाराष्टभागं विपचेत्तैलं वै सार्षपं बुधः ।
इदमन्तः पुरे देयं तैलमात्रेयपूजितम् ॥
बिन्दुरेकः पतेद्यत्र तत्र लोमापुनर्भवः ।
मदनादिव्रणे तैलमश्विभ्यां परिकीर्त्तितम् ॥
अर्शसां कुष्ठरोगाणां पामादद्रुविचर्चिनाम् ।
क्षारतैलमिदं श्रेष्ठं सर्वक्लेदरुजापहम् ॥

सीपका चूना, शंख का चूना (भस्म), शम्बूक (घोंघे)का चूना (भस्म), अरलुका क्षार और मुष्कक (मोखावृक्ष)का क्षार समान भाग मिलित १॥ सेर लेकर सबको ९ सेर गधेके मूत्रमें घोलकर २१ बार वस्त्रसे छान लें। तदनन्तर ८ सेर यह पानी और १ सेर सरसोंका तेल एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इस तेलकी एक बूंद लगा देनेसे भी योनिके बाल गिर जाते हैं और फिर उत्पन्न नहीं होते।

यह तेल लिङ्गव्रण, अर्श, कुष्ठ, पामा, दाद, विचर्चिका और क्लेद में भी गुणकारी है।

(८७३३) **क्षीरवृक्षाद्यतैलम्**

(व. से. । ज्वरा. ; सु. सं. । उ. त. अ. ३९)

क्षीरवृक्षासनारिष्टजम्बूसप्तच्छदार्जुनैः ।
शिरीषखदिरास्फोतामृतवल्याटरूषकैः ॥
कटुकापर्पटोशीरवचातेजोवतीघनैः ।
साधितं तैलमभ्यङ्गादाशु जीर्णज्वरं जयेत् ॥

क्षीरवृक्ष (बड़, गूलर, पीपल, पिलखन, पारस पीपल), असना, नीम, जामन, सतौना, अर्जुन वृक्ष, सिरस, खैर और आस्फोता, इनकी छाल तथा गिलोय, बासा, कुटकी, पित्त पापड़ा, खस, बच, मालकंगनी और नागरमोथा। इनके क्वाथ और कल्कके साथ सिद्ध किये हुवे तेलकी मालिश करनेसे जोर्णज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

इति क्षकारादितैलप्रकरणम्

अथ क्षकारादि-लेपप्रकरणम्

(८७३४) **क्षीरकाकोल्यादिलेपः**

(भा. प्र. । म. खं. २ विद्रध्य.)

पैत्तिकं विद्रधिं वैद्यः प्रदिह्यात्सर्पिषा युतैः ।
पयस्योशीरमधुकचन्दनैर्दुग्धपेषितैः ॥

पैत्तिक विद्रधिमें क्षीरकाकोली, खस, मुलैठी और लालचन्दनको दूधमें पीसकर उसमें घी मिलाकर लेप करना चाहिये ।

(८७३५) **क्षौद्रादिलेपः (१)**

(रा. मा. । मुखरोगा. ५)

क्षौद्ररोध्रमधुकैः ससर्षपै-
र्निस्तुषीकृतयवैश्च पेषितैः ।
लेपितं भवति तप्त काञ्चनं
प्रेक्ष्यमाननमतीव सुन्दरम् ॥

लोध, मुलैठी, सरसों और छिलके रहित जौ समान भाग लेकर बारीक पीसकर शहदमें मिला लें । इसका लेप करनेसे मुख तप्त कांचनके समान शोभायमान हो जाता है ।

(८७३६) **क्षौद्रादिलेपः (२)**

(भै. र. । उरुस्तम्भा.)

क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिषक् ।
गाढमुत्सादनं कुर्यादूरुस्तम्भे प्रलेपनम् ॥

सरसों और वल्मीकमृत्तिका (बांबीकी मिट्टी) को बारीक पीस कर शहदमें मिलाकर गाढ़ा गाढ़ा लेप करनेसे ऊरुस्तम्भ में लाभ होता है ।

इति क्षकारादि-लेपप्रकरणम्

अथ क्षकारादिरसप्रकरणम्

(८७३७) **क्षयकुलान्तकरसः**

(र. चं. । राजयक्ष्मा.)

गुडूचिकासत्त्वरसेन्द्रभस्म
कृष्णाभ्रकं माक्षिकलोहवङ्गम् ।
प्रवालमुक्ताफलहेमपत्रं
सर्वैः समानं त्रिफलारसेन ॥
सम्मर्दयेत्सप्तदिनं भिषग्भि-
र्वल्लैकमात्रं मधुना समेतम् ।
भक्षेद्द्विकालं सकलामयघ्नं
सर्वक्षये जीर्णज्वरे च मेहे ॥
पाण्ड्वामये पित्तमये च कासे
सरक्तपित्ते तमके तथैव ।
यथाऽनुपाने खलु योजनीयं
षण्ढत्वनाशं प्रकरोति सम्यक् ॥
वाजीकरं पुष्टिबलं ददाति
रसायनं सर्वक्षयापहारि ॥

गिलोयका सत, पारदभस्म, कृष्णाभ्रकभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, लोहभस्म, बंगभस्म, प्रवालभस्म, मोती-

भस्म और सोनेके वर्क समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर सात दिन त्रिफलाके रसमें खरल करें और ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमें से १-१ गोली शहदमें मिलाकर सुबहशाम सेवन करनेसे समस्त प्रकारका क्षयरोग, जीर्ण ज्वर, प्रमेह, पाण्डु, पित्तज कास, रक्तपित्त, तमकश्वास और षण्ढत्व का नाश होता है। यह रस वाजीकरण, पौष्टिक, बलवर्द्धक, और रसायन है।

(८७३८) क्षयकेसरीरसः (१)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहञ्च ताम्रकम् ।
मृतं नागञ्च कांस्यञ्च मण्डूरं विमलं मृतम् ॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम् ।
मृतं स्वर्णं मृतं कान्तं वैक्रान्तं विद्रुमौक्तिकम् ॥
वराटं मणिरागञ्च राजपट्टञ्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्लमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥
मर्दयेत्त्वग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक्पृथक् ॥
मातुलुङ्गवरावह्निस्त्वम्लवेतसमार्कवम् ।
हयमाराद्रकरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥
वातपित्तकफोत्क्लेशाञ्ज्वरान्सम्मर्दितानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकार्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥
सेवितो हन्ति रोगान्हि व्याधिवारणकेशरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं क्रिमिं जयेत् ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्महलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः ॥

अभ्रक भस्म, पारद भस्म, लोह भस्म, ताम्र भस्म, सीसा भस्म, कांसी भस्म, मण्डूर भस्म, विमल (माक्षिकभेद) भस्म, बंग भस्म, खपरिया भस्म, हरताल भस्म, शंख भस्म, सुहागेकी खील, स्वर्ण माक्षिक भस्म, स्वर्ण भस्म, कान्तलोह भस्म, वैक्रान्त भस्म, मूंगा भस्म, मोती भस्म, कौड़ी भस्म, शुद्धहिंगुल, राजपट्ट (चुम्बक पत्थर)की भस्म, और शुद्ध गंधक समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके चीतामूल के क्वाथ और आककी जड़के क्वाथकी १-१ भावना दें और फिर (शराव सम्पुटमें बन्द करके) ३ दिन लघु पुटमें पकावें। इसी प्रकार उक्त दोनों ओषधियोंकी भावना दे दे कर ३ बार पुटपाक करें। तदनन्तर बिजौरेके रसमें १ दिन खरल करके लघु पुटमें पकावें और फिर इसी प्रकार त्रिफला, चीतामूल, अम्लवेत, भंगरा, कनेर और अदरकके रसमें १-१ दिन खरल करके हर बार लघु पुटमें पकावें।

यह रस वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज ज्वर तथा एकांग और सर्वांग गत वायु एवं एकादश विध क्षय, शोष, पाण्डु, कृमि, ५ प्रकारकी खांसी, श्वास, प्रमेह, मेद, उदरवृद्धि, अश्मरि, शर्करा, शूल, प्लीहा, गुल्म और हलीमक आदि रोगोंको नष्ट करता है। यह रस वृष्य, बलवर्द्धक, मेधावर्द्धक और रसायन है।

अनुपान—मिश्री और पीपलके चूर्णके साथ मिलाकर अदरकके रस और शहदके साथ या अन्य रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करना चाहिये।

(८७३९) क्षयकेसरीरसः (२)

(वृ. नि. र. ; र. चं. । राजयक्ष्मा.)

नेत्रलोचनचन्द्रेन्दुप्रमाणं भागमाहरेत् ।
वह्निजं फटकी भृष्टा गरलं नवसागरम् ॥
चूर्णमेषां सितायुक्तं गुञ्जार्द्धं योजयेद्भिषक् ।
क्षयकेसरीनामायं रसः परम दारुणः ॥

काली मिर्च २ भाग, फिटकी की खील २ भाग, शुद्ध विष १ भाग और नौसादर १ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके चूर्ण बनावें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसे खांडमें मिलाकर सेवन करनेसे क्षयका नाश होता है ।

क्षयकेसरीरसः (३)

(भै. र. ; र. चं. ; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

प्र. सं. ५८२७ यक्ष्मकेसरी रसः देखिये ।

पाठांतरके अनुसार पारद और रससिंदूर का अभाव है तथा बकरीके दूधमें भी घोटनेके लिये लिखा है ।

(८७४०) क्षयशामकरसः

(र. चं. । राजयक्ष्मा. ; र. र. स. । अ. १४)

तुल्यं पारदगन्धकं त्रिकटुकं
ताभ्यां रजः कम्बुजम् ।
तैस्तुल्यं च भवेत्कपर्द-
भसितं स्यात्पारदाट्टङ्कणम् ॥
पादांशं सकलैः समानमरिचं
लिह्यात्क्रमात्साज्यकम् ।
यावन्निष्कमितं भवेत्प्रति-
दिनं मासात्क्षयः शाम्यति ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक, १-१ भाग, त्रिकुटाचूर्ण २ भाग, शंख भस्म ४ भाग, कौड़ी भस्म ४ भाग और सुहागेकी खील चौथाई भाग तथा इन समस्त औषधियोंके बराबर काली मिर्चका चूर्ण लेकर प्रथम पारद गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियें का चूर्ण मिलाकर भली प्रकार खरल करें ।

इसे घीके साथ मिलाकर १ मास तक सेवन करनेसे क्षयका नाश होता है ।

मात्रा—धीरे धीरे बढ़ाकर ५ माशे की मात्रा से सेवन कराना चाहिये ।

(८७४१) क्षयान्तकरसः

(र. च. । राजय.)

लोहं च रससिन्दूरं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
मौक्तिकं स्वर्णभस्म च प्रत्येकं शाणसम्मितम् ॥
अमृतायाः कर्षमात्रं सत्त्वं च त्रिफला तथा ।
कर्षपादं कुङ्कुमं च कस्तूरी माषसम्मिता ॥
अटरूषकषायेण त्रिदिनं भावयेत्पृथक् ।
रसः क्षयान्तको नाम गुञ्जामात्रं मधुप्लुतम् ॥
सघृतो राजयक्ष्माणं जयेत्पाण्डुं शिरोग्रहम् ।
जीर्णज्वरं मेहरुजं प्रदरं वह्निमान्द्यकम् ॥
सोमरोगं धातुदोषं वातश्लेष्मोद्भवं गदम् ।
उक्ता मयानुपानैश्च सर्वरोगान् क्षयं नयेत् ॥

लौह भस्म और रस सिन्दूर १-१ तोला; मोती भस्म और स्वर्ण भस्म ४-४ माशे, गिलोयका सत १ तोला, त्रिफला चूर्ण १ तोला, केसर ३ माशे और कस्तूरी १ माशा लेकर सबको एकत्र मिला-कर ३ दिन बासा (अडूसा)के रसमें खरल करें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

अनुपान—शहद और घी ।

इसके सेवनसे राजयक्ष्मा, पाण्डु, शिरोग्रह, जीर्णज्वर, प्रमेह, प्रदर, अग्निमांद्य, सोमरोग, धातुविकार और वात कफज रोगोंका नाश होता है ।

क्षयारिरसः

(र. सं. क. । उ. ४)

प्र. सं. ७५९३ "शिलाजतु योगः" देखिये ।

(८७४२) क्षारगुटिका

(र. का. धे. । उदरा.)

शुक्तिका कदलीभस्म टङ्कणं तुत्थकं निशा ।
मरिचं गुटिका गुञ्जा यकृद्वृद्धिहरा मता ॥

सीपकी भस्म, केलेकी भस्म, सुहागेकी खील, तुत्थ भस्म, हल्दी और काली मिर्च समान भाग लेकर पानीके साथ खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें । इनके सेवनसे यकृद्वृद्धिका नाश होता है ।

(८७४३) क्षारताम्ररसः (१)

(यो. र. ; र. रा. सु.; वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

शङ्खक्षारार्कभूतिं च वराटं लोहभस्मकम् ।
अयोमलं यवक्षारं टङ्कणक्षारमेव च ॥
त्रिकटुं सैन्धवं तुल्यं भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ।
आटरूषरसैर्मर्द्यमार्द्रकस्वरसेन च ॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा रसोऽयं क्षारताम्रकः ।
श्वासे कासे प्रतिश्याये पुराणज्वरपीडिते ॥
मन्दाग्नौ ग्रहणीदोषे त्वनुपानं यथोचितम् ।
सेवयेत्सप्तरात्रेण नाशयेन्नात्र संशयः ॥
चिरकालानुबन्धे च सेवयेन्मण्डलावधि ।
तत्तद्व्याधिहरं पथ्यं नियमेन समाचरेत् ॥

शंख भस्म, सज्जीखार, ताम्र भस्म, कौडी भस्म, लोह भस्म, मण्डूर भस्म, जवाखार, सुहागेकी खील, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर भंगरा, अडूसा और अदरक के रसमें पृथक् पृथक् १-१ दिन खरल करके चनेके समान गोलियां बना लें ।

यह रस श्वास, खांसी, प्रतिश्याय, पुराने ज्वर, अग्निमांद्य और ग्रहणी विकारों को नष्ट करता है ।

यह रस साधारण रोगोंको सात दिनमें और पुराने रोगों को ४० दिनमें नष्ट कर देता है ।

इस पर अनुपान और पथ्य रोगोचित देना चाहिये ।

(८७४४) क्षारताम्ररसः (२)

(र. र. स. । उ. अ. १८; र. चं ; वृ. नि. र. । शूला.)

पलमितमृतशुल्बं तन्मितं गन्धचूर्णं ।
वसुमितपलमानं तिन्तिणीक्षारचूर्णम् ।
त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेत-
द्धरति सकलशूलं पीतमुष्णोदकेन ॥

ताम्र भस्म ५ तोले, शुद्ध गंधक ५ तोले और इमलीका क्षार ४० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१-१॥ माशा ।)

(८७४५) क्षारताम्ररसः (३)

(र. र. स. । उ. अ. १८)

रसेन ताम्रस्य दलानि लिप्त्वा
गंधेन ताम्रद्विगुणेन पश्चात् ।
वस्त्रेण बध्वाऽथ समुद्रजेन
क्षारत्रयेणापि च वेष्टयित्वा ॥
मृदा च संलिप्य पुटं ददीत
दलानि ताम्रस्य विचूर्णयेत् ।
धत्तूरचित्रार्द्रकटुत्रयैश्च
विमर्दयेत्तत्रिगुणप्रमाणम् ॥
कलाप्रमाणेन विषं च दत्वा
वल्लं ददीतास्य च वातशूले ॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग लेकर कज्जली बनावें और (उसे नीबूके रसमें खरल करके) १ भाग शुद्ध ताम्रपत्रों पर उसका लेप करके उन्हें कपड़ेमें लपेटकर पोटली बनावें । तथा उसे सामुद्र लवण, जवाखार, सज्जीखार और सुहागे के समान भाग मिश्रित चूर्णके बीचमें रखकर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें । और फिर स्वांगशीतल होने पर पीसकर रख लें । (यदि भस्म कच्ची हो तो पुनः पुट लगावें ।) तत्पश्चात् उसे धतूरेके रस, चित्रकमूल के क्वाथ, अदरकके रस और त्रिकुटेके क्वाथकी ३-३ भावना देकर उसमें उसका १६ वां भाग शुद्ध बछनाग मिलाकर खरल करें ।

इसके सेवनसे वातज शूल नष्ट होता है ।

मात्रा—२ रत्ती ।

(८७४६) क्षारयोगः

(बृ. नि. र. । अजीर्णा.)

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् ।
पिप्पलीगन्धकं शुण्ठी मरीचं पलसम्मितम् ॥
कर्षमेकं विषं दत्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
अर्कदुग्धस्य दातव्या भावनाः सप्तवासरम् ॥
अन्धमूषागजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ततो लवङ्गं मरिचं स्फटिकानां पलं पलम् ॥
सर्वं सम्मर्द्य सुदृढं दृढभाण्डे निधापयेत् ।
सोयं गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥
पुनर्भोजनवाञ्छां च जनयेत्प्रहरोपरि ।
आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिकृन्तनः ॥

जवाखार, सज्जीखार, सुहागेकी खील, शुद्ध पारद, लौंग, सेंधानमक, कालानमक, बिडलवण, पीपल, शुद्ध गंधक, सोंठ और काली मिर्च ५-५ तोले तथा शुद्ध बछनाग १। तोला लेकर प्रथम पारे गंधकको कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर खरल करें । तदनन्तर उसे आकके दूधकी सात भावना देकर अंधमूषामें बन्द करके गजपुटमें पकावें तत्पश्चात् उसमें ५-५ तोले लौंगका चूर्ण, काली मिर्चका चूर्ण और फिटकरीकी खील मिलाकर अच्छी तरह खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

यह अत्यन्त पाचक है । भोजनोपरान्त इसे खा लेनेसे १ पहर बाद पुनः भूख लग आती है । यह रस कच्चे मांस तकको भी पचा देता है । कफरोगोंमें भी गुणकारी है ।

(८७४७) **क्षारवटी**

(र. र. स. । उ. अ. १८)

अमृतं मेघभस्माथ शङ्खं चिञ्चा सुभास्करम् ।
क्रमाद्द्विगुणितं कृत्वा तत्तुल्यं च कटुत्रयम् ॥
तुलसीभृङ्गराजोत्थमातुलुङ्गार्द्रकद्रवैः ।
भावितं बहुशश्चूर्णं रजो वा गुटिकापि वा ॥
गुञ्जामात्रं तु सेवेत गुल्मशूलान्विनाशयेत् ।
मन्दाग्निं ग्रहणीमर्शो रक्तगुल्ममरोचकम् ॥
एषा क्षारवटी नाम्ना कृशदेहेषु युज्यते ॥

शुद्ध बछनाग १ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, शंख भस्म ४ भाग, इमलीका क्षार ८ भाग और ताम्र भस्म १६ भाग तथा त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपलका समान भाग मिलित चूर्ण) १६ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर तुलसी, भंगरा, बिजौरा नीबू और अदरक; इनके स्वरसकी पृथक् पृथक् कई कई भावनाएं देकर या तो १-१ रत्ती की गोलियां बना लें या सुखाकर चूर्ण कर लें।

इसके सेवनसे गुल्म, शूल अग्निमांद्य, ग्रहणी, अर्श, रक्तगुल्म और अरुचिका नाश होता है।

यह रस कृश पुरुषोंके लिये विशेष उपयोगी है।

(८७४८) **क्षीरमण्डूरम्**

(भै. र. । शूला. ; यो. त. । त. ४४; च. द. ; वृ. मा. ; व. से. । शूला.)

लौहकिट्टपलान्यष्टौ गोमूत्राद्धाढके पचेत् ।
क्षीरप्रस्थेन तत्सिद्धं पक्तिशूलहरं परम् ॥

४० तोले लोहकिट्ट (मंडूर)की भस्मको ४ सेर गोमूत्रमें पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें २ सेर गोदुग्ध मिलाकर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उतारकर ठंडा करके सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे पक्ति शूल नष्ट होता है।

(मात्रा—१ माशा।)

क्षीरसारो रसः (क्षीरसागररसः)

(र. रा. सु. । ज्वरा. ; रोचका. ; र. का. धे. । दाहा. ; र. चं. । ज्वरा.)

प्र. सं. १४९४ "गगनादि वटी" देखिये।

(८७४९) **क्षुद्बोधकरसः** (१)

(र. रा. सु. । अजीर्णा. ; वै. र. । अग्निमांद्या.)

व्योषसिन्धुबलिभिरेकद्वित्रिलवैः स्मृतः ।
निम्बाम्बुमर्दितो गाढं नाम्ना क्षुद्बोधको रसः ॥

त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) १ भाग, सेंधानमक २ भाग और शुद्ध गंधक ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर नीबूके रसमें खरल करके सुखाकर रक्खें।

इसके सेवनसे क्षुधावृद्धि होती है।

(मात्रा—२ रत्ती।)

क्षुद्बोधकरसः (२)

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

प्र. सं. २७८ अजीर्णकण्टकरस देखिये।

उसकी हिन्दी टीकामें भावना द्रव्योंमें कमलका नाम छूट गया है अर्थात् मुलैठी की भावना के पश्चात् १ दिन कमलके रसमें भी घोटना चाहिये।

(८७५०) क्षुधावती गुटिका (१) (स्वल्प)

(भै. र. । अम्लपित्ता.)

रसगन्धकमभ्राणि यमानी त्र्यूषणं तथा ।
त्रिफला शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥
पुनर्णवा वचा दन्ती त्रिवृता घण्टकर्णकम् ।
दण्डोत्पला शारिवे द्वे चाक्षमात्राणि कारयेत् ॥
मण्डूरं द्विगुणं दत्त्वा पेषणीयं प्रयत्नतः ।
आर्द्रस्वरस आलोड्य गुडिकां कारयेद् बुधः ॥
प्रत्यहं भक्षयेदेकां भक्तवारि पिबेदनु ।
वटी क्षुधावती नाम्ना चाम्लपित्तविनाशिनी ॥
अग्निश्च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धिं बलन्तथा ।
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं विनाशयेत् ॥
परिणामभवं शूलं कासं पञ्चविधं तथा ।
जगतस्तु हितार्थाय वाग्भटेन प्रकीर्तिता ॥

शुद्ध पारद, गन्धक, अभ्रक भस्म, अजवाइन, सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिफला, सोया, चव्य, जीरा, कालाजीरा, पुनर्नवा, वच, दन्तीमूल, निसोत, घण्टकर्ण, दण्डोत्पलामूल, अनन्तमूल, श्यामलता; प्रत्येक १। तोला, मण्डूर भस्म २।। तोले । इन्हें अदरख के रससे मर्दन कर गुटिका बनावें । मात्रा ४ रत्ती। अनुपान—कांजी। यह वटी अम्लपित्त, प्लीहा, श्वास, आनाह, आमवात, परिणामशूल तथा कास को नष्ट करती है । यह तेज एवं बलको बढ़ाती तथा अग्नि को प्रदीप्त करती है ।

(८७५१) क्षुधावती गुटिका (२)

(भै. र. ; धन्व. । अम्लपित्ता.)

रसायोगन्धकाभ्राणि त्र्यूषणं त्रिफला वचा ।
यमानी शतपुष्पा च चविका जीरकद्वयम् ॥
प्रत्येकं पलमेषान्तु घण्टकर्णपुनर्णवा ।
माणकं ग्रन्थिकं चेन्द्रकेशराजसुदर्शना ॥
दण्डोत्पला त्रिवृद्दन्ती जामातृ रक्तचन्दनम् ।
भृङ्गापामार्गकुलका मण्डूकश्च पलार्द्धकम् ॥
आर्द्रकस्वरसेनाथ गुडिकां सम्प्रकल्पयेत् ।
बदरास्थिसमां चैषां भक्षयित्वा पिबेदनु ॥
वारिभक्तजलञ्चैव प्रातरुत्थाय मानवः ।
वटी क्षुधावती नाम सर्वाजीर्णविनाशिनी ॥
अग्निश्च कुरुते दीप्तं भस्मकश्च नियच्छति ।
अम्लपित्तश्च शूलश्च परिणामकृतश्च यत् ॥
तत्सर्वं शमयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
मधुरं वर्जयेदत्र विशेषात् क्षीरशर्करे ॥

शुद्ध पारद, लोह भस्म, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, वच, अजवायन, सोया, चव, ज़ीरा और काला ज़ीरा ५–५ तोले तथा घण्टकर्ण, पुनर्नवा (बिसखपरा), मानकन्द, पीपलामूल, इन्द्रजौ, भंगरा, सुदर्शना, दण्डोत्पला, निसोत, दन्तीमूल, जामातृ (हुलहुल), लाल चन्दन, भंगरा, अपामार्ग (चिरचिटा), परवल और मंडूकपर्णी; इनका बारीक चूर्ण २।।–२।। तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको अदरकके रसमें घोट कर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बनालें ।

इनमें से १–१ गोली पानी अथवा कांजीके साथ सेवन करनेसे अजीर्ण, भस्मक रोग, अम्लपित्त और परिणाम शूलका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है ।

इसके सेवन कालमें साधारणतया समस्त मधुर पदार्थ और विशेषतः दूध तथा खांड वर्जित है।

(८७५२) **क्षुधावती गुटिका** (३) (वृहद्)

(रसे. सा. सं.; भै. र.; र. रा. सु.; च. द.; र. का. धे. । अम्लपित्ता.; रसे. चि. म. । अ. ९)

(१)

आशुभक्तोदकैः पिष्टमभ्रकं तत्र संस्थितम् ।
कन्दमाणास्थिसंहारखण्डकर्णरसैरथ ॥
तण्डुलीयश्च शालिश्च कालमारिषजेन च ।
वृश्चीरबृहतीभृङ्गलक्ष्मणाकेशराजकैः ॥
पेषणं भावनं कुर्य्यात्पुटश्चानेकशो भिषक् ।
यावन्निश्चन्द्रकं तत्स्याच्छुद्धिरेवं विहायसः ॥

(२)

स्वर्णमाक्षिकसालिश्च ध्मातं निर्वापितं जले ।
त्रैफलेऽथ विचूर्ण्यैवं लौहं कान्तादिकं पुनः ॥
बृहत्पत्रकरीकर्णत्रिफलावृद्धदारजैः ।
माणकन्दास्थिसंहारभृङ्गवेरभवै रसैः ॥
दशमूलीमुण्डितिकातालमूलीसमुद्भवैः ।
पुटितं साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो व्रजेत् ॥

(३)

वशिरं श्वेतवाट्टालं मधुपर्णी मयूरकम् ।
तण्डुलीयश्च वर्षाहं दत्त्वाऽधश्चोर्ध्वमेव च ॥
पाक्यं सुजीर्णमण्डूरं गोमूत्रेण दिनत्रयम् ।
अन्तर्बाष्पमदग्धश्च तथा स्थाप्यं दिनत्रयम् ॥
विचूर्णितं शुद्धिरियं लोहकिट्टस्य दर्शिता ।

(४)

जयन्त्या वर्द्धमानस्य आर्द्रकस्य रसेन तु ॥
वायस्याश्चानुपूर्वैवं मर्दनं रसशोधनम् ।

(५)

गन्धकं नवनीताख्यं क्षुद्रितं लौहभाजने ॥
त्रिधा चण्डातपे शुष्कं भृङ्गराजरसाप्लुतम् ।
ततो वह्नौ द्रवीभूतं त्वरितं वस्त्रगालितम् ॥
यत्नाद्भृङ्गरसे क्षिप्तं पुनः शुष्कं विशुध्यति ॥

× × × ×

गगनाद्विपलं चूर्णं लौहस्य पलमात्रकम् ।
लोहकिट्टपलार्द्धश्च सर्वमेकत्र संस्थितम् ॥
मण्डूकपर्णीवशिरतालमूलीरसैः पुनः ।
वरीभृङ्गकेशराजकालमारिषजैरथ ॥
त्रिफलाभद्रमुस्ताभिः स्थालीपाकाद्विचूर्णितम् ।
रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः ॥
तन्मसृणशिलाखण्डे यत्नतः कज्जलीकृतम् ।
वचा चव्यं यमानी च जीरके शतपुष्पिका ॥
व्योषं मुस्तं विडङ्गश्च ग्रन्थिकं खरमञ्जरी ।
त्रिवृता चित्रको दन्ती सूर्य्यावर्त्तः सितस्तथा ॥
भृङ्गमाणककन्दाश्च खण्डकर्णक एव च ।
दण्डोत्पला केशराजकोलाकर्कटकोपि च ॥
एषामर्द्धपलं ग्राह्यं पटघृष्टं सुचूर्णितम् ।
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलार्द्धं पलमेव च ॥
एतत्सर्वं समालोडय लोहपात्रे तु भावयेत् ।
आतपे दण्डसंघृष्टमार्द्रकस्य रसैस्त्रिधा ॥
तद्रसेन शिलापिष्टं गुटिकां कारयेद्भिषक् ।
बदरास्थिनिभां शुष्कां सुनिगुप्तां निधापयेत् ॥
तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुटिकात्रयम् ।
अम्लोदकानुपानश्च हितं मधुरवर्जितम् ।
दुग्धश्च नारिकेलश्च वर्जनीयं विशेषतः ॥
भोज्यं यथेष्टमिष्टश्च वारिभक्ताम्लकाञ्जिकम् ।
हन्त्यम्लपित्तं विविधं शूलश्च परिणामजम् ॥

पाण्डुरोगश्च गुल्मश्च शोथोदरगुदामयान् ।
यक्ष्माणं पञ्चकासांश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ।
गुटी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥

(१) शुद्ध धान्याभ्रकको साठी चावलोंकी कांजीमें पीसकर १ दिन उसीमें भिगोये रक्खें और फिर उसे सुखाकर जमीकन्द, मानकन्द, अस्थि-संहार, खण्डकर्ण, (एक प्रकारका आलु), कांटे वाली चौलाई, शालिञ्च शाक, काला मरसा, सफेद पुनर्नवा, कटेली, भंगरा, लक्ष्मणा और काला भंगरा; इनमेंसे प्रत्येकके रसमें घोट घोटकर बार बार पुट दें कि जिससे अभ्रककी निश्चन्द्र भस्म हो जाय ।

(२) सोनामक्खीका शालिञ्च शाकके रसमें खरल करके तपाकर त्रिफलाके क्वाथमें बुझावें । इसी प्रकार अनेक बार बुझावें और फिर उस क्वाथमें कान्त लोह या किसी अन्य प्रकारके उत्तम लोहको तपा तपाकर बार बार बुझावें । जब लोह बारीक हो जाय तो उसे सफेद लोध, हस्तिकर्ण पलाश, त्रिफला, विधारा, मानकन्द, अस्थिसंहार, अदरक, दशमूल, मुंडी, और तालमूली (मूसली); इनके क्वाथ या रसमें पृथक् पृथक् खरल करके गजपुटमें पकावें कि जिससे वारितर भस्म हो जाय ।

(३) सफेद पुनर्नवा, सफेद फूलकी खरैटी, गिलोय, चिरायता, कांटेवाली चौलाई, और पुनर्नवा; इनके पंचांग लेकर सबको पीसकर लुगदीसी बनावें और उसे पुराने मण्डूरके ऊपर नीचे रखकर सम्पुट-में बन्द करके पुटमें पकावें। तदनन्तर उस मंडूरको हाण्डीमें डालकर उसमें गोमूत्र भरकर उसका मुख बन्द करदें और ३ दिन तक पकाते रहें। तत्पश्चात् उसे सुखाकर पीसलें।

(४) शुद्ध पारदको क्रमशः जयन्ती पत्र, अरण्ड, अदरक और मकोयके रसमें १-१ दिन खरल करके धोकर सुखालें ।

(५) आमलासार गंधकके चावलके समान बारीक टुकड़े करके लोह पात्रमें रक्खें और उसमें भंगरेका रस भरदें एवं उसे तेज धूपमें सुखा दें। इसी प्रकार भंगरेके रसकी ३ भावना दें। तत्पश्चात् उसे मंदाग्निपर पिघलालें और भंगरेके रससे भरे हुवे पात्रके मुख पर कपड़ा बांधकर उस पर वह पिघली हुई गंधक फुरतीसे डाल दें कि जिससे वह छनकर पात्रमें गिरजाय। तत्पश्चात् उस गंधकको निकालकर सुखा लें।

उपरोक्त विधिसे बनाई हुई अभ्रक भस्म १० तो., लोह भस्म ५ तो. और मण्डूर भस्म २॥ तो. लेकर सबको एकत्र खरल करके एक हाण्डीमें डालें और उसमें मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), लाल पुन-र्नवा और तालमूलीका रस (समान भाग मिश्रित) इतना डालें कि सब ओषधियां रसमें डूब जाएं तद-नन्तर हांडीको चूल्हे पर चढ़ाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब सब रस सूख जाय तो उसमें शता-वर, भंगरा, काला भंगरा और मरसाका रस डालकर पुनः पकावें। जब यह रस भी सूख जाय तो त्रिफला और नागरमोथेका क्वाथ डालकर पकावें और इसके सूख जाने पर आग देनी बन्द करदें तथा हाण्डीके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकालकर पीसलें ।

तदनन्तर उपरोक्त विधिसे शुद्ध किया हुवा पारा और गन्धक १।-१। तोला लेकर पत्थरके उत्तम खरलमें कज्जली बनावें और फिर उसमें उपरोक्त (हांडीमें पकाई हुई) औषधोंका चूर्ण तथा बच, चव, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, सोया, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, बायविडंग, पीपलामूल, चिरचिटा, निसोत, चीता, दन्तीमूल, सफेद फूलकी हुल हुल, भंगरा, मानकन्द, जिमीकन्द, खण्डकर्णक, दण्डोत्पला, काला भंगरा, काला निसोत, और काकड़ासिंगी; इनका चूर्ण २॥-२॥ तो. एवं त्रिफलाका चूर्ण ७॥ तोले मिलाकर लोहेके खरलमें घोटें और अदरकका रस डालकर धूपमें मर्दन करें। इसी प्रकार अदरकके रसकी ३ भावनायें देकर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बनावें और सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

इनमें से ३-३ गोली प्रातःकाल और भोजनके आरम्भमें कांजीके साथ खानी चाहियें (व्यवहारिक मात्रा-४ रत्ती)

इसके सेवनकालमें साधारणतः समस्त मधुर पदार्थ और विशेषतः दूध तथा नारियल त्याज्य है।

वारिभक्त (पतला भात) और कांजी विशेष पथ्य है।

इसे सेवन करनेसे अनेक प्रकारका अम्लपित्त, परिणाम शूल, पाण्डु, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदरोग, राजयक्ष्मा, पांच प्रकारकी खांसी, अग्निमांद्य, अरुचि, प्लीहा, श्वास, आनाह और दारुण आमवात रोग नष्ट होता है।

(८७५३) क्षुधासागरो रसः

(भै. र.; धन्व.; र. रा. सु.; वै. र.। अग्निमांद्य.)

त्रिकटु त्रिफला चैव तथालवणपञ्चकम् ।
क्षारत्रयं रसं गन्धं भागैकं पूर्ववद्विषम् ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कुर्याल्लवङ्गैः पञ्चभिः सह ।
क्षुधासागरनामायं रसः सूर्येण निर्मितः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सेंधा नमक, काला नमक, सामुद्र लवण, विड लवण, काच लवण, जवाखार, सज्जीखार, सुहागेकी खील, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक और शुद्ध बछनाग समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण, मिलाकर (पानीके साथ) खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इन्हें ५ लौंगोंके चूर्णके साथ सेवन करनेसे क्षुधा वृद्धि होती है।

(८७५४) क्षेत्रपालरसः

(भै. र.; रं. चं.। शोथा)

हिंगुलञ्च विषं ताम्रं लौहं तालकटङ्कणम् ।
जीरमाहूरफेनञ्च समभागं विमर्दयेत् ॥
यवार्द्धा वटिका कार्या पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
अलवणं वारिहीनञ्च दातव्यं भिषजां वरैः ॥
गुरुशोथमग्निमान्द्यं ग्रहणीमतिदुस्तराम् ।
ज्वरञ्च विषमं जीर्णं नाशयेन्नात्र संशयः ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्ध बछनाग, ताम्र भस्म, लोह भस्म, शुद्ध हरताल, सुहागेकी खील, जीरा और अफीम समान भाग लेकर सबको एकत्र (पानीके साथ) खरल करके आधे जौके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे शोथ, अग्निमांद्य, दुस्तर संग्रहणी, विषम ज्वर और जीर्णज्वरका नाश होता है।

पथ्य—दूध भात।

अपथ्य—लवण और जल।

इति क्षकारादिरसप्रकरणम्

अथ क्षकारादिमिश्रप्रकरणम्

(८७५५) क्षारनिर्माणविधिः

(योगरत्नाकर)

क्षारवृक्षस्य काष्ठानि शुष्काण्यग्नौ प्रदीपयेत्।
नीत्वा तद्भस्म मृत्पात्रे क्षिप्त्वा नीरे चतुर्गुणे॥
विमर्द्य धारयेद्रात्रौ प्रातरच्छं जलं नयेत्।
तन्नीरं क्वाथयेद्वह्नौ यावत्सर्वं विशुष्यति॥
ततः पात्रात्समुद्धृत्य क्षारो ग्राह्यः सितप्रभः।
चूर्णाभः प्रतिसार्यः स्यात्तैजसः क्वाथवत्स्थितः॥
इति क्षारद्वयं धीमान् युक्तकार्येषु योजयेत्॥

जिस वृक्षका क्षार बनाना हो उसके सूखे काष्ठको जलाकर राख करें और उसे मिट्टीकी नांदमें डालकर उसमें ४ गुना पानी डालकर अच्छी तरह मिला दें एवं रात भर रक्खा रहने दें। फिर दूसरे दिन ऊपरसे स्वच्छ पानी नितार कर उसे इतना पकावें कि सब पानी सूख जाय और कढ़ाईमें सफेद चूर्ण रह जाए। इसे "प्रतिसारणीय क्षार" कहते हैं।

यदि सब पानी न जलाकर क्षारको द्रवरूप ही रक्खा जाय तो उसे "तैजस क्षार" कहते हैं।

दोनों प्रकारके क्षार यथोचित अवसर पर प्रयुक्त करने चाहियें।

(८७५६) क्षारपिप्पली (१)

(व. से. उदरा.)

चपलायाः पलं पञ्च यवाग्रं तावदेव तु।
सामुद्रलवणानाञ्च तावन्मात्रं प्रदापयेत्॥
वेणुसाक्षोटकश्चैव शिखर्यङ्गांस्तथैव च।
शिरीषो लोध्रवृक्षश्च विशाखामाणकन्दकम्॥
सुधा च सुरपुष्पश्च शम्पाकदलसञ्चयम्।
वरुणं शिग्रुमूलञ्च नाटयालं चित्रकं तथा॥
एषां पञ्चपलान्भागान्पलाशात्पञ्चविंशतिम्।
क्षारं दत्त्वा तु सर्वेषां पचेत्तत्र जलाढके॥
गोमूत्रं तावदेवात्र साधयेच्च यथाविधिः।
भक्षयेद् घृतसंयुक्तां यकृत्प्लीहहरां पराम्॥
वातमष्ठीलकाश्चैव गुल्मं हन्ति त्रिदोषजम्॥

बांसके पत्ते, अखरोटकी छाल, अपामार्ग (चिरचिटा), सिरसकी छाल, लोध, पुनर्नवा, मानकन्द, थूहर, लौंग, अमलतासके पत्ते, बरनेकी छाल, सहंजनेकी जड़, पीले फूलकी खरैटी और चीता २५-२५ तोले तथा पलाश (ढाक) १२५ तोले लेकर सबको जलाकर क्षार बनावें। तदनन्तर यह क्षार और लौंडी पीपल (बिनाकुटी), जवाखार तथा समुद्रलवण २५-२५ तोले लेकर सबको ८ सेर पानीमें मिलावें और उसमें ८ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावें। जब पानी सूख जाय तो उतारकर सुरक्षित रक्खें।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे यकृत्, प्लीहा, वातष्ठीला, और त्रिदोषज गुल्मका नाश होता है।

(८७५७) क्षारपिप्पली (२)

(व. से. । स्वरभेदा.)

तिस्रस्तिस्रस्तु पूर्वाह्णे भुक्ताग्रे भोजनस्य च।
पिप्पल्यः किंशुकक्षारभाविता घृतभर्जिताः॥
प्रयोज्या मधुसम्मिश्रा रसायनगुणैषिणा।
जेतुं कासक्षयश्वासहिक्काशोषगलामयान्॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं पाण्डुतां विषमज्वरान्।
वैस्वर्यपीनसं शोफं गुल्मं वातबलासकम्॥
मासमेवाश्नतो युक्त्या माध्विकां पिबतोऽनु च।
अवधारितवेगस्य यक्ष्मा न भवति ध्रुवम्॥

लौंडी पीपर को पलाश (ढाक) के क्षारजल की भावना देकर घीमें भूनकर रक्खें।

इनमें से प्रतिदिन ३० पीपल प्रातःकालके भोजनके पूर्व शहदके साथ खाकर ऊपरसे माध्वी सुरा पीनी चाहिये।

यह प्रयोग रसायन है। इसे १ मास तक सेवन करनेसे कास, क्षय, श्वास, हिक्का, शोष, गलरोग, अर्श, संग्रहणी, पाण्डु, विषमज्वर, स्वरभंग, पीनस, शोथ, गुल्म, और वायु तथा कफके विकार नष्ट होते हैं एवं वेगावरोध-जनित क्षयका भय नहीं रहता।

(८७५८) क्षारपिप्पली (३) (बृहद्)

(व. से. । उदरा.)

प्रशस्तेऽहनि नक्षत्रे कुटजं लोध्रचित्रकम्।
वरुणं शिग्रुमूलञ्च वाट्यालं चाथ पुष्करम्॥
कन्दो विश्वाखपुष्पी च तथा ब्राह्मणयष्टिका।
पृथक्पञ्च पलान्येषां पलाशात्पञ्चविंशतिः॥
क्षारं कृत्वा पचेद्वारि गोमूत्राढकयोस्तथा।
सर्वं विपाच्य सक्षारा समुस्ताऽनलपिप्पली॥
पृथक्पञ्च पलैर्भागैः पिप्पलीघृतमर्दिता।
यकृत्प्लीहहरा श्रेष्ठा वाताष्ठीलामगुल्मनुत्॥

सफेद कुड़ेकी छाल, लोध, चीता, बरनेकी छाल, सहंजनेकी जड़की छाल, पीले फूलकी खरैटी, पोखरमूल, सूरण, पुनर्नवा, शंखपुष्पी और भरंगी २५-२५ तोले तथा पलाश (ढाक) का काष्ठ १२५ तोले लेकर सबको जलाकर क्षार बनावें। तदनन्तर इसमें ८-८ सेर पानी और गोमूत्र मिलाकर उसमें २५-२५ तोले जवाखार, नागरमोथा, और चीता; इनका चूर्ण तथा २५ तोले (बिना कुटी) पिप्पली मिलाकर पकावें। जब पानी सूख जाए तो पिप्पली को निकाल कर घी में मसल लें।

इसके सेवनसे यकृत्, प्लीहा, वातष्ठीला, आम और गुल्मका नाश होता है।

(८७५९) **क्षारपिप्पलीयोगः**

(यो. र. । यकृद्रोगा. ; वृ. नि. र. । उदरा.)

पलाशक्षारतोयेन पिप्पली परिभाविता ।
गुल्मप्लीहार्तिशमनी वह्निदीप्तिकरी मता ॥

छोटी पीपरों को पलाश (ढाक) के क्षार की भावना देकर रक्खें ।

ये पीपर गुल्म और प्लीहा का नाश तथा अग्निकी वृद्धि करती हैं ।

(८७६०) **क्षारवर्गः**

(रसे. सा. सं.)

स्वर्जिकाटङ्कणश्चैव यवक्षार उदाहृतः ॥

सज्जीखार, सुहागा और जवाखारके समूहको क्षारवर्ग कहते हैं ।

(८७६१) **क्षारसूत्रम् (१)**

(वृ. यो. त. । त. ६९; वृ. मा. ; व. से. ; च. द. । अर्शो. ५)

भावितं रजनीचूर्णं स्नुहीक्षीरैः पुनः पुनः ।
बन्धनात्सुदृढं सूत्रं छिनत्त्यर्शोभगन्दरम् ॥

हल्दीके चूर्णको सेहुंड (थूहर) के दूधकी अनेक भावनाएं देकर उसे डोरे पर लपेटकर सुखा लें ।

यह डोरा बांधनेसे अर्शके मस्सोंका तथा भगन्दरका नाश होता है ।

(८७६२) **क्षारसूत्रम् (२)**

(व. से. । अर्शो.)

स्नुहीकाण्डगते क्षीरे भल्लातकसमन्विते ।
ज्योतिष्मत्त्रिफलादन्तीकोशातक्यऽग्निसैन्धवैः ॥
चूर्णैरेतैः समघृतैः बन्धयेत्सूत्रकं दृढम् ।
मूत्रं तत्पातयेदर्शः छिन्नमूल इव द्रुमः ॥

भिलावा, मालकंगनी, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, कड़वी तोरीके बीज, चीता और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे स्नुही (सेंड) के दूधमें घोटकर उसमें सूतके डोरे को भिगोकर सुखा लें ।

इस डोरेको घी लगाकर अर्शके मस्सों पर बांध देनेसे मस्से गिर जाते हैं ।

(८७६३) **क्षारागदः**

(सुश्रुत सं. । कल्प अ. ७)

धवाश्वकर्णतिनिशपलाशपिचुमर्दपाटलि-पारिभद्रकाम्रोडुम्बरकरहाटकार्जुनककुभसर्जक-पीतनश्लेष्मातकाङ्कोठामलकप्रग्रहकुटजशमीक-पित्थाश्मन्तकार्कचिरबिल्वमहावृक्षारुष्करारलु-मधुशिग्रुशाकगोजीमूर्वातिल्वकेक्षुरगोपघोण्टा-रिमेदानां भस्मान्याहृत्य गवां मूत्रेण क्षारकल्पेन परिस्राव्य विपचेद्यथाचात्र पिप्प-लीमूलतण्डुलीयकवराङ्गचोचकमञ्जिष्ठाकरञ्जि-काहस्तिपिप्पलीमरिचोत्पलसारिवाविडङ्गगृह-धूमानन्तासोमसरलावाह्लीकगुहाकोशाम्रश्वेत-सर्षपवरुणलवणप्लक्षनिचुलकवर्द्धमानवञ्जुल-

पुत्रश्रेणीसप्तपर्णदण्डकैलवालुकनागदन्त्यतिविषाभयाभद्रदारुकुष्ठहरिद्रावचाचूर्णानि लोहानाञ्च समभागानि ततः क्षारवदागतपाकमवतार्य्य लोहकुम्भे निदध्यात् ।

अनेन दुन्दुभिं लिम्पेत् पताका तोरणानि च ।
श्रवणाद्दर्शनात्स्पर्शाद्विषात्सम्प्रति मुच्यते ॥
एष क्षारागदो नाम शर्करास्वश्मरीषु च ।
अर्शःसु वातगुल्मेषु कासशूलोदरेषु च ॥
अजीर्णे ग्रहणीदोषे भक्तद्वेषे च दारुणे ।
शोफे सर्वसरे चापि देयः श्वासे च दारुणे ॥
एष सर्वविषार्तानां सर्वथैवोपयुज्यते ।
तथा तक्षकमुख्यानामयं दर्पाङ्कुशोऽगदः ॥

धव, अश्वकर्ण, तिनिश, पलाश, नीम, पाढल, पारिभद्र (फरहद), आम, गूलर, अकरकरा, अर्जुन, ककुभ (अर्जुन), सर्ज (राल), कपीतन (सिरस), ल्हसोड़ा, अंकोट, आमला, छोटा अमलतास, कुड़ा, शमीवृक्ष, कैथ, अश्मन्तक (पाषाणभेद), आक, करञ्ज, सेहुण्ड (थूहर), भिलावा, अरलु, मुलैठी, सेहजना, शाक वृक्ष, गोजी (गोजिह्वा), मूर्वा, लोध, तालमखाना, गोपघोंटा और अरिमेद (दुर्गन्धित खैर); इनके काष्ठोंकी भस्म समान भाग लेकर सबको (४ गुने) गोमूत्र में मिलाकर क्षार बनानेकी विधिसे वस्त्रसे छानलें और फिर उसे पकाकर गाढ़ा करें तथा पीपलामूल, चौलाई, दालचीनी, लौंग, मजीठ, करंज, गजपीपल, काली मिर्च, नीलोत्पल, सारिवा, बायबिडङ्ग, घरका धुंवा, सोमलता, निसोत, केसर, शालपर्णी, कोशाम्र (जंगली आम), सफेद सरसों, बरना, सेंधा नमक, पिलखनकी छाल, जलबेत, अरण्डमूल, वञ्जुल (अशोक), पुत्रश्रेणी (कृष्णादन्ती), सातविन, दण्डक (शर), एलवालुक, नागदन्ती, अतीस, हर्र, देवदारु, कूठ, हल्दी और बच; इनका चूर्ण तथा लोह चूर्ण (भस्म) समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर उपरोक्त क्षारमें मिलावें एवं शुष्क हो जाने पर उसे उतार कर लोहपात्रमें भर कर रख दें ।

दुन्दुभि, पताका, तोरण आदि पर इस क्षारका लेप करना चाहिये । इस क्षारसे लिप्त बाजोंका शब्द सुनने और पताका तोरण आदिको देखने तथा स्पर्श करने आदिसे विषका प्रभाव नष्ट हो जाता है ।

यह अगद, शर्करा, अश्मरी, अर्श, वातगुल्म, कास, शूल, उदररोग, अजीर्ण, ग्रहणी दोष, अरुचि, शोथ, सर्वसर, श्वास और सर्प-विष आदिको नष्ट करता है ।

(८७६४) क्षाराम्बुयोगः

(यो. र. । शूला. ; वृ. यो. त. । त्र. ९४)

क्षारोदकं पिबेदुष्णं पिप्पलीलवणान्वितम् ।
वातश्लेष्मोद्भवं शूलं कुक्षिशूलं च नाशयेत् ॥

क्षार (जवाखारके) (५ तोले) पानीको उष्ण करके उसमें पीपल और सेंधा नमकका (१-१ माशा) चूर्ण मिलाकर पीनेसे वातकफज शूल और कुक्षिशूलका नाश होता है ।

(८७६५) क्षाराष्टकम्

(वृ. नि. र । हृद्रोगा. ; वै. र. । गुल्मा. ; भा. प्र. । म. खं. २ गुल्मा.)

पलाशवज्रशिखरीचिञ्चार्कतिलनालजः ।
यावकः स्वर्जिका चेति क्षाराश्चाष्टौ प्रकीर्तिताः ॥
गुल्मशूलहराः क्षारा अजीर्णस्य च पाचनाः ॥

पलाश (ढाक)का क्षार, थूहरका क्षार, अपामार्गका क्षार, इमलीका क्षार, आकका क्षार, तिलनालका क्षार, जवाखार और सज्जीखार; इस क्षार-समूहको "**क्षाराष्टक**" कहते हैं।

ये क्षार गुल्म, शूल और अजीर्णको नष्ट करते हैं।

(८७६६) **क्षीरगण्डूषः**

(व. से. । तृषा. ; वृ. नि. र. । तृषा.)

क्षीरेक्षुरसमाद्वीकक्षौद्रसीधुगुडोदकैः ।
वृक्षाम्लाम्लैश्च गण्डूषास्तालुशोषप्रणाशनाः ॥

दूध, ईखका रस, मुनक्काका क्वाथ, शहद, सीधु और गुड़का शरबत समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर वृक्षाम्ल (इमली)से खट्टा करें।

इससे गण्डूष (कुल्ले) करनेसे तालुशोष नष्ट होता है।

(८७६७) **क्षीरयोगः** (१)

(ग. नि. । पाण्डु. ८)

लोहपात्रे शृतं क्षीरं सप्ताहं पथ्यभोजनः ।
पिबेत् पाण्ड्वामयी शोफी ग्रहणीदोषपीडितः ॥

लोह-पात्रमें पकाया हुवा दूध एक सप्ताह तक पीने और पथ्याहार करनेसे पाण्डु, शोथ और ग्रहणी विकारमें लाभ होता है।

(८७६८) **क्षीरयोगः** (२)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

यथादोषप्रशमनैरौषधैः साधितं पयः ।
सर्वज्वराणां जीर्णानां प्रोक्तं भैषज्यमुत्तमम् ॥

दोषानुसार औषधियोंके साथ पकाया हुवा दूध जीर्ण ज्वरमें उत्तम औषधका काम करता है।

(८७६९) **क्षीरयोगः** (३)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

जीर्णज्वरे कफे क्षीणे क्षीरं स्यादमृतोपमम् ।
तदेव तरुणे पीतं विषवद्धन्ति मानवम् ॥
कृशोऽल्पदोषो दीनश्च नरो जीर्णज्वरान्वितः ।
पिपासार्तः सदाहो वा पयसा स सुखी भवेत् ॥

क्षीणकफ जीर्ण ज्वरमें दूध अमृतके समान गुणकारी है। परन्तु वही तरुण ज्वरमें विषके समान मारक है।

यदि दोष अल्प हों और पिपासा दाहादि अधिक हों तो जीर्ण ज्वरके कृश रोगीको दूध पिलानेसे लाभ होता है।

(८७७०) **क्षीरयोगः** (४)

(ग. नि. । वाजीकरणा.)

गृष्टीनां वृद्धवत्सानां माषचूर्णभृतां गवाम् ।
यत्क्षीरं तत्प्रशंसन्ति बलकामेषु जन्तुषु ॥

बड़े बछड़ेवाली प्रथम बारकी ब्याही हुई गायको चारेके साथ उड़दका आटा खिलाया जाय तो उसका दूध अत्यन्त बलकारक हो जाता है।

(८७७१) **क्षीरयोगः** (५)

(ग. नि. । उदरा. ३२)

क्षीरं पित्तोदरं हन्ति पीतमुष्णं यथाबलम् ॥

बलानुसार उष्ण दूध पीनेसे पित्तोदर नष्ट होता है।

(अन्य खान पान बन्द रखना चाहिये।)

(८७७२) **क्षीरयोगः** (६)

(ग. नि. । अतिसारा. २; वृ. मा. । अतिसारा.)

यथाऽमृतं तथा क्षीरमतीसारेषु पूजितम् ।
चिरोत्थितेषु तत्पेयमपां भागैस्त्रिभिः शृतम् ॥

१ भाग गायके दूधमें ३ भाग पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पानी जलने तक पकावें ।

यह दूध पुराने अतिसारमें अमृतके समान गुणकारी है ।

(८७७३-७४) **क्षीरयोगः** (७-८)

(ग. नि. । ज्वरा. १; रा. मा. । ज्वरा. २०)

यः पिप्पलीमूलविमिश्रिताज्य-
मध्वन्वितं सुक्वथितं च गव्यम् ।
पयः पिबत्याशु विनाशमेतौ
हृद्रोगकासौ विषमज्वराश्च ॥
गव्यं पयो गोमयसारवारि-
मिश्रं प्रदेयं विषमज्वरार्तौ ।
आजं कदाचिन्मसृणप्रमृष्ट-
विश्वौषधोपेतमिमं निहन्ति ॥

गायके पकाये हुवे दूधमें पीपलामूलका चूर्ण, घी और शहद मिलाकर पीनेसे हृद्रोग, कास और विषम ज्वरका नाश होता है ।

गायके अथवा बकरीके दूधमें गायके गोबरका रस और सोंठका बारीक चूर्ण मिलाकर पीनेसे विषम ज्वरका नाश होता है ।

(८७७५) **क्षुद्रादिकवलग्रहः**

(वा. भ. । उ. अ. २२)

क्षुद्रागुडूची सुमनः प्रवाला
दार्वीयवासत्रिफलाकषायः ।
क्षौद्रेण युक्तः कवलग्रहोऽयं
सर्वामयान्वक्त्रगतान्निहन्ति ॥

कटेली, गिलोय, चमेलीकी कोंपल, दारुहल्दी जवासा और त्रिफला समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिलाकर कवल धारण करने (कुल्ले करने) से समस्त मुखरोग नष्ट होते हैं ।

(८७७६) **क्षौद्रार्द्धभागघृतम्**

(यो. र. ; व. से. । मूत्राघाता.)

क्षौद्रार्धभागः कर्त्तव्यो भागः स्यात्क्षीरसर्पिषोः।
शर्करायाश्च चूर्णं च द्राक्षाचूर्णं च तत्समम् ॥
स्वयंगुप्ताफलं चैव तथैवेक्षुरकस्य च ।
पिप्पलीनां तथा चूर्णं समभागं प्रदापयेत् ॥
तदेकत्र मेलयित्वा खल्वेनोन्मथ्य च क्षणम् ।
तस्य पाणितलं चूर्णं लिहेत्क्षीरं ततः पिबेत् ॥
एतत्सर्पिः प्रयुञ्जानः शुद्धदेहो नरः सदा ।
शुक्रदोषाञ्जयेत्सर्वानेवापि भृशदुर्जयान् ॥
जयेच्छोणितदोषांश्च बन्ध्यास्त्री गर्भमाप्नुयात्॥

शहद आधा भाग, दूध १ भाग, घी १ भाग तथा खांड, द्राक्ष (किशमिश)का चूर्ण (पिट्ठी), कौंचके बीजोंका चूर्ण, तालमखानेका चूर्ण और पीपलका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर मथनीसे मथें ।

इसमेंसे १। तोला खाकर ऊपरसे दूध पीना चाहिये । देहशुद्धिके पश्चात् इसे सेवन करनेसे दुर्जय शुक्रदोष भी नष्ट हो जाते हैं । यह रक्त-दोषोंको भी नष्ट करता है एवं इसके सेवनसे वंध्याको पुत्र प्राप्त होता है ।

इति क्षकारादिमिश्र-प्रकरणम्

ज्ञ

अथ ज्ञकारादिरसप्रकरणम्

(८७७७) ज्ञानोदयरसः

(वै. र. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

कलावेदाङ्ग चन्द्रांशैः सर्वांशसितया युतैः ।
शक्रासनरजोजातीफलशुक्रैः सुमेलितैः ॥
ज्ञानोदयो भवेदेष साधकानन्दसिद्धिदः ।
सेवितः सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदनः ॥
वातश्लेष्मामयध्वंसी ज्वरातीसारनाशनः ॥

भांग १६ भाग, जायफल ४ भाग, रससिंदूर १ भाग और खांड २१ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें ।

यह रस ग्राही, जलदोष नाशक, वातकफज रोगोंको नष्ट करने वाला और ज्वरातिसार नाशक है ।

इति ज्ञकारादिरसप्रकरणम्

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

परिशिष्ट

चिकित्सा-पथ-प्रदर्शिनी

भारत-भैषज्य-रत्नाकर

पांचवां भाग

चिकित्सा-पथ-प्रदर्शिनी

(१) अग्निमान्द्याजीर्णविसूचिकाधिकारः

नम्बर.	नाम. प्रयोग	संक्षिप्त गुण.
	कषाय-प्रकरणम्	
७२७७	श्वेतपर्णासमूल योगः	अजीर्णको शीघ्र नष्ट करता है।
	चूर्ण-प्रकरणम्	
७२८८	शतपुष्पादि चूर्णम्	अग्निसंदीपक
७३११	शुण्ठ्यादि ,,	क्षुधावर्द्धक । सरल योग
७३१७	,, ,,	अजीर्ण
७३१८	,, योगः	,, मलावरोध
७३१९	शुण्ठ्याद्यं चूर्ण	अग्निमान्द्य
७८४२	सिंहचूर्णम्	,,
७८४३	,, ,,	,,
७८४५	सिंहराज,चूर्णम्	अजीर्ण, विषूचिका, प्लीहा नाशक, अग्निदीपक
७८४८	हरिद्रादिक्षारः	अग्निवर्द्धक
७८६७	सैन्धवादिचूर्णम्	अग्निदीपक, रोचक, पार्श्वशूलनाशक
७८६९	सैन्धवादिचूर्णम्	अग्निदीपक
७८७४	सैन्धवाद्यं ,,	अग्निदीपक
७८७५	,, ,,	अग्निको शीघ्र दीप्त करता है।
७८८३	सौवर्चलाद्यं ,,	अग्निमांद्य
८४६९	हरीतक्यादि ,,	अग्निवर्द्धक
८४७४	,, ,,	प्रवृद्ध अजीर्ण, धूमोद्गार
८४७५	,, ,,	अजीर्ण
८४७९	,, रसायन	अग्निदीपक । रसायन
८४८३	हिङ्गुद्वादशकं	अरुचि, अजीर्ण
८४८७	हिङ्ग्वष्टकं ,,	अग्निवर्द्धक, वातरोग-नाशक
८४८८	हिङ्ग्वादि ,,	अफारा, मलावरोध, अग्निमांद्य, अरुचि
८४९२	हिंग्वादि ,,	विषूचिका, अफारा, शूल, मलावरोध

गुटिका-प्रकरणम्

७३४० शुण्ठ्यादिगुटी अग्निमांद्य
७९०७ सैन्धवादिगुटि० अत्यन्त पाचक

अवलेह-प्रकरणम्

८७२१ क्षारगुडः अजीर्ण, अग्निमांद्य, शोथादि अनेक रोग

लेप-प्रकरणम्

८५७५ हिङ्ग्वादिलेपः अजीर्ण

अञ्जन-प्रकरणम्

७५०९ शिवावर्तिः विषूचिकाके वेगको शीघ्र शान्त करती है।

रस-प्रकरणम्

७५३२ शंखद्रावकः अग्निवर्द्धक
७५३३ शंखद्रावः अजीर्ण, गुल्म, अग्निमांद्य, प्लीहादि, यकृत् शूलादि.
७५३४ शंखद्रावः अजीर्ण, शूलादि
७५३५ „ „ „ „
७५३८ „ „ अजीर्ण, ऊर्ध्ववायु, अग्निमांद्यादि
७५४० शंखद्रावको रस आहारको तुरन्त पचा देता है
७५४८ शंखवटी अजीर्ण, शूल, विसूचिका, अलसक
७५४९ „ „ शूल, अजीर्ण, अग्निमांद्य, अरुचि
७५५० शंखवटी अत्यन्त पाचक
७५५१ „ „ अजीर्ण, शूल, विसूचिका
७५५२ „ „ अजीर्ण, शूल, आम, अग्निमांद्य
७५५३ „ „ अजीर्ण, विसूची, शूल, अफारा
७५५४ „ „ (महा) भस्मक, अग्निमांद्य, शूलादि अनेकरोग
७५५५ „ „ अजीर्ण, शूल, विषूचिका
७५५६ „ „ (महा) अत्यन्त पाचक, दीपन
७५७४ शम्भुरसः अग्निमांद्य, अजीर्ण
८१२५ संजीवनीवटी अजीर्ण, गुल्म। विषूचिकामें अत्यन्त गुणकारी
८१७५ सर्वरोगान्तकवटी अग्निमांद्य
८२३२ सुकुमारमोदकः वातज अजीर्ण, उदावर्त, आनाह। विष्टम्भको परमौषध
८२७९ सूर्यप्रभा गु० अग्नि दीपक
८३२३ स्वयमग्निरसः समस्त प्रकारके अजीर्ण।
८६५१ हुताशन रसः अग्निमांद्य, शिरकी जड़ता, गुल्म
८६५२ हुताशन रसः अग्निवर्द्धक, कफनाशक
८६५३ „ „ अग्निमांद्य, अजीर्ण, शूलादि।
८७४६ क्षारयोगः भोजनके बाद खानेसे १ पहरमें पुनः भूख लग आती है।
८७४९ क्षुद्बोधक रसः क्षुधावर्द्धक
८७५३ क्षुधासागरो रसः „ „

मिश्र–प्रकरणम्

७७१२ शार्दूलकाञ्जिक अजीर्ण, शूलादि अनेक रोग
७७२४ शीताम्बु योगः विदग्धाजीर्ण
८६८८ हरीतकी योगः अजीर्ण. (मसालेकी हुई)

(२) अतिसाराधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

७१८८ शतावरीकल्कः रक्तातिसार । सरल योग
७२१६ शाल्मलीमूलकल्कः दाहयुक्त रक्तातिसार, शोष
७२४२ शुण्ठ्यादिक्वाथः पित्तातिसार
७२६२ शोथघ्न्यादिक्वाथः शोथातिसार
७७७५ समङ्गादिक्वाथः समस्त अतिसार
७७७६ ,, ,, कफपित्तातिसार, रक्तातिसार
८४२१ हरिद्रादिगणः आमातिसार.दोषपाचक
८४३६ हिज्जलपत्रस्वरसः आमातिसार
८४४० ह्रीबेरादि क्वाथः रक्तातिसार, आम, पीड़ा, मलावरोध, पित्त
८४४१ ,, ,, रक्तातिसार, पिच्छातिसार, मलावरोध, आम, शूल, ज्वरातिसार
८४४३ ,, ,, आमातिसार, तृषा
८४४४ ,, ,, पुराना अतिसार, आम, शूल, रक्तस्राव, अरुचि, ज्वर

चूर्ण–प्रकरणम्

७२८७ शतपुष्पादि चूर्णम् समस्त अतिसार
७२९८ शल्लकी त्वचादियो० रक्तातिसार
७३१० शुण्ठ्यादिचूर्णम् आमातिसार
७३१६ ,, ,, ,, शूल
७३२१ शुण्ठ्याद्यं ,, उग्र अतिसार
७८२५ समङ्गादि ,, पित्तातिसार और शूल को शीघ्र नष्ट करता है
७८२७ समङ्गादियोग–चतुष्टयम् पित्तातिसार
७८३८ सिताञ्जनादिचूर्णम् अतिसार, पित्तज्वर
७८५३ सुवर्चलादि चूर्णम् वातातिसार
७८८१ सौवर्चलादि चूर्णम् आमातिसार, शूल । ग्राही, पाचक
८४६३ हरीतक्यादि ,, आमातिसार । ग्राही, दीपक
८५०८ हिंग्वादियोगः भक्तातिसार

गुटिका–प्रकरणम्

७८९७ सर्वातिसारहारिणी गुटिका समस्त अतिसार

अवलेह-प्रकरणम्

७९२८ समङ्गाद्यवलेहः	रक्तातिसार

घृत-प्रकरणम्

७७५३ षडङ्गघृतम्	भयंकर त्रिदोषज अतिसारको शीघ्र नष्ट करता है
७९६० सुनिषण्णकचाङ्गेरी घृतम्	त्रिदोषज अतिसार, रक्तस्राव, प्रवाहिका, पिच्छातिसार, गुदभ्रंश, शोथ, शूल, अन्त्रग्रह
८५३७ ह्रीवेरादिघृतम्	अतिसार, प्रवाहिका, पिच्छातिसार, गुदभ्रंश, शूल
८७२९ क्षीरिद्रुमाद्यं-घृतम्	रक्तातिसार

रस-प्रकरणम्

७५४३ शंखपोटलीरसः	आमातिसार, प्रवाहिका, अतिसार, कास, श्वास, निर्बलता, अग्निमांध
७५६१ शंखोदर रसः	समस्त प्रकारके अतिसारों में उत्तम।
७६२३ शीघ्रप्रभावरसः	अतिसार, वायु, आध्मान, मलत्यागके पश्चात् भी हाजत बनी रहना।
८२४२ सुधासार रसः	अन्य किसी औषध से आराम न होने वाले अतिसारको भी नष्ट करता है। आम, आमरक्त, आनाह, हिक्का, अरुचि, आदिको २-३ मात्रामें नष्ट करता है।
८३१६ स्वच्छन्द भैरव रसः	समस्त घोर अतिसार, आम, अग्निमांद्य।
८६३२ हिंगुलेश्वर रसः	अतिसार, प्रवाहिका, ग्रहणी, अग्निमांद्य
८६७७ हंसपोटली रसः	अतिसार, कास, हिक्का, निर्बलता, ग्रहणी

मिश्र-प्रकरणम्

७७१३ शालिपर्ण्यादिपेया	कफपित्तातिसार
७७१४ शालिपर्ण्यादि-योगः	अतिसार
७७२६ शुण्ठिपुटपाकः	सोपद्रव जीर्णातिसार
७७२९ शुण्ठ्यादि-पुटपाकः	आमातिसार, (अग्निदीपक)
७७३० ,,	,, शूल नाशक (दीपन)
७७३४ श्योनाकादियोगः	पक्वातिसार
८७७२ क्षीर योगः	पुराना अतिसार

(३) अपस्माराेन्मादाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१९१ शतावरी योगः अपस्मार

चूर्ण-प्रकरणम्

७८३७ सारस्वतचूर्णम् उन्माद नाशक । बुद्धि, स्मृति, मेधा वर्द्धक

घृत-प्रकरणम्

७३५७ शङ्खपुष्प्याद्यं घृतम् अपस्मार, उन्माद

७९५१ सारस्वतघृतम् उन्मादनाशक;मेधा, स्मृति और आयु वर्द्धक ।

७९५२ सारस्वतघृतम् अत्यन्त स्मृतिवर्द्धक

७९६१ सूर्योदयघृतम् अपस्मार, घोर उन्माद, दाह, विष, भूतपिशाच बाधा ।

७९६२ सैन्धवघृतम् अपस्मार, ग्रहदोष

७९६३ सोम घृतम् अत्यन्तस्मृतिवर्द्धक

८५३२ हिङ्ग्वादि घृतम् उन्माद

८५३३ ,, ,, देवग्रहजनित उन्माद

तैल-प्रकरणम्

७४११ शिग्रुतैलम् अपस्मार

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

८०१९ सारस्वतारिष्टः स्मृतिवर्द्धक, वाणीशोधक

अञ्जन-प्रकरणम्

७५०७ शिरीषाद्यञ्जनम् उन्माद

८०८३ सञ्ज्ञाप्रबोधनरसः अपस्मार

रस-प्रकरणम्

८१५३ समीरगजकेसरी-रसः अपस्मारमें उत्तम

८१८७ सर्वांगसुन्दररसः अपस्मार, वातव्याधि शूल

८२५८ सूतभस्मयोगः अपस्मार

८३१३ स्मृतिसागर रसः

८३७१ स्वर्ण योगः अपस्मार, उन्माद, चित्त-भ्रम, भूतबाधा ।

(४) अम्लपित्ताधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

७८२९ समसर्करं चू० अम्लपित्त, अरुचि, अव-साद, परिणामशूल

८४५९ हरीतक्यादि ,, कण्ठकी दाह, पित्त, कफ

८५११ हिंग्वादियोगः अम्लपित्त

अवलेह-प्रकरणम्

७३५३ शुण्ठीखण्डः अम्लपित्त, शूल, वमन

घृत-प्रकरणम्

७३६९ शतावरीघृतम् अम्लपित्त, तृषा, मूर्च्छा संताप

तैल-प्रकरणम्

७४२८	श्रीबिल्वतैलम्	अम्लपित्त, शूल, दाह, दुर्बलता, ज्वर आदि

रस-प्रकरणम्

७५४६	शंखभस्म	शूल, अम्लपित्त, अग्निमांद्य
७५५२	शंखवटी	अम्लपित्त, शूल, अजीर्ण.
७५५७	शंखादिचूर्णम्	,, ,, ,,
७५६७	शतावरी-मण्डूरम्	दारुण अम्लपित्त, वमन, शूल, कास
८१७३	सर्वतोभद्रलौहः	सर्व उपद्रव युक्त अम्लपित्त, शूल, आम, शोथ, वायु आदि
८२१६	सितामण्डूरम्	असाध्य अम्लपित्त, तज्जन्य शूल, वमन, दाह, अफारा, पित्तज रुधिर विकार
८२६१	सूतशेखर रसः	अम्लपित्त, वमन, अतिसार, उदावर्त.
८२७८	सूर्यपाकताम्रम्	अम्लपित्त, पाण्डु, वमन, ज्वर
८३०३	सौभाग्यशुंठि-मोदकः	अम्लपित्त, शूल, कण्ठदाह, हृद्दाह, गुदपीड़ा
८७५०	क्षुधावतीगु०	अम्लपित्त, शूल, आनाहादि
८७५१	,, ,, ,,	अम्लपित्त, परिणाम शूल, भस्मक
८७५२	,, ,, ,,	अनेक प्रकारका अम्लपित्त, शोथ, गुदरोग, आनाहादि ।

(५) अरोचकाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

७७४३	षाडवं चूर्णम्	रोचक, हृद्य । कास तथा ग्रहणी नाशक
७८३७	सैन्धवादि चू०	अरुचि, अग्निमांद्य
८४८३	हृद्भुद्रादशकं चूर्णम्	अरुचि, अजीर्ण
८४८८	हिङ्ग्वादि चू०	अरुचि, अफारा, मलावरोध

गुटिका-प्रकरणम्

७९००	सितादिगुटिका	अरुचि

रस-प्रकरणम्

८२३७	सुधानिधिरसः	सर्व प्रकारकी अरुचि, भक्तद्वेष, शूल, अग्निमांद्यादि
८२४८	सुलोचनाभ्रम्	समस्त अरुचि, कास, श्वासादि
८२५९	सूतभस्मयोगः	अरुचि
८२६०	सूतादिगुटिका	अरुचि नाशक, जिह्वाशोधक

(६) अर्बुदाधिकारः

लेपप्रकरणम्

७४४३ शंखादिलेपः कफज अर्बुद
७४५४ शरपुंखायोगः अर्बुद, अपची
७४६२ शिग्रुमूलादिलेपः अर्बुदादि
८०७६ स्वर्जिकादिलेपः अर्बुद, ग्रन्थि
८५६० हरिद्रादि ,, मेदज अर्बुद

(७) अर्शोधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२२६ शिरीषमूलादि-कल्कः रक्तार्श
७७७८ समंगादिक्षीरम् रक्तार्शके रक्तको बन्द करता है
७८१२ सूरणपुटपाकः अर्श
८४१५ हरिद्रादिकषायः पित्तज और रक्तज अर्श

चूर्ण-प्रकरणम्

७८३९ सितासितादि चूर्णम् वातकफज अर्श
७८४४ सिंहनपुरी ,, अर्श, अफारा, वायु
७८६० सूरणादि ,, अर्शनाशक। सरलयोग
७८६२ ,, योगः अर्श
७८६३ ,, ,, ,, वातविकार
७८६४ सूरणाद्यं चू० ,, शूल, कृमि, अग्निमांद्य
७८७० सैन्धवादिप्रतिसारणम् कान, गला, नाभि, नासा, लिंग और गुदा के मस्से।
८४५५ हरीतकीयोगः अनुलोमन, मलसारक, अग्निवर्द्धक, अर्शनाशक

८५१६ हुताशनं चूर्णम् अर्श के मस्सोंको नष्ट करता है। पाचक, रेचक, रोचक, दीपक

गुटिका-प्रकरणम्

७९०३ सूरणमोदकः अर्श, अतिसार, वायु, शूल, अग्निमांद्य, । बलवर्द्धक, बालकों और वृद्धों के लिये विशेष उपयोगी।
७९०४ ,, ,, अर्श में अत्युपयोगी, अत्यन्त अग्निवर्द्धक, श्वास, कास नाशक
७९०५ ,, वटकः अर्श
७९०६ ,, ,, अर्शनाशक, उत्तम अग्निवर्द्धक, वातकफज ग्रहणी तथा कासादि नाशक
८७१६ क्षारगुटिका अर्श, श्वास, कास। पाचक

अवलेह-प्रकरणम्

७९३९ सैन्धवाद्यवलेहः वातवर्चोनुलोमक सरल योग

घृत-प्रकरणम्

७३८२	शुण्ठीघृतम्	अर्श, पाण्डु, ज्वर, अरुचि
७३८३	शुण्ठीधान्यक-घृतम्	अर्श, वातकफज रोग, श्वास, कास
७९०७	सुनिषण्णक-चांगेरीघृतम्	अर्श, अतिसार, गुदभ्रंश, रक्तस्राव, शोथ, अग्निमांद्य
८५३७	ह्रीबेरादिघृ०	अर्श, गुदभ्रंश, आध्मानादिमें उत्तम

लेप-प्रकरणम्

७४६७	शिरीषबीजादि-लेपः	अर्श
७४६८	शिरीषबीजाद्यं लेपत्रयम्	अर्शनाशक, उत्तम सरल ३ योग।
८०५४	सुवर्चिकाद्यो लेपः	७ दिनमें मस्सोंको नष्ट करता है।
८०५८	सूरणादिलेपः	प्रवृद्ध अर्शके मस्से।
८०६२	सैन्धवादिलेपः	अर्श
८०७२	स्नुहीक्षीरलेपः	,,
८०७४	स्नुह्यादि ,,	,,
८५६१	हरिद्रादिलेपः	,,

रस-प्रकरणम्

७५२६	शंकरलोहः	अर्शमें अत्यन्त प्रभावशाली, अग्निवर्द्धक, शूलादि नाशक। (प्रतिज्ञा की है कि चाहे सूर्य चन्द्र स्थान भ्रष्ट हो जावें यह प्रयोग निष्फल नहीं होगा)
७५५४	शंखवटी (महा)	अजीर्ण, अर्शादि।
७५९०	शिलागंधकयोगः	अर्श नाशक, वायु अनुलोमक
७६२०	शिव रसः	अर्श
७७६५	षडानन रसः	,,
८१७६	सर्वलोकाश्रय-रसः	अर्श पाण्डु, ज्वर, अग्निमांद्य
८१७८	सर्वसुन्दर रसः	वातार्श, कफार्श, द्वन्द्वजार्श, ग्रहणी
८२२४	सिद्धसाररयोगः	त्रिदोषज अर्श

मिश्र-प्रकरणम्

८४००	सूरणवर्तिः	मस्से, गुदकृमि
८४०४	सोमल चूर्णयोगः	बिना कष्ट तीनों बलियोंके मस्से नष्ट कर देता है।
८४०९	स्नुकपत्र योगः	अर्श, गुदकण्डू, कृमि
८६८१	हरिद्रावर्तिः	अर्श
८६८६	हरीतकी योगः	कफज अर्श, शोथ, पाण्डु
८७६१	क्षारसूत्रम्	मस्सोंको काटता है।
८७६२	,, ,,	,, ,, ,,

(८) अश्मरिशर्कराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१९० शतावरीमूलयोगः शर्करा

७२०१ शतावर्यादिरसः पुरानी अश्मरी । सरल योग

७२२० शिग्रुक्वाथः कफज अश्मरी शीघ्र नष्ट होती है।

७२२२ शिग्रुमूलादिक्वा० अश्मरीपातक

७२४० शुण्ठ्यादिक्वाथः वातज अश्मरी, गुद तथा मेढ्रगतवायु

७२७४ श्वदंष्ट्रादिक्वाथः अश्मरी

चूर्ण-प्रकरणम्

७३२४ शृङ्गवेरादियोगः पथरी टूटकर शीघ्र निकल जाती है

८४५१ हरिद्रादियोगः पुरानी मेढ्रशर्कराको शीघ्र नष्ट करता है । सरल योग

८७०८ क्षारयोगः शर्करा

घृत-प्रकरणम्

७३७५ शरादिपञ्चमूल-घृतम् अश्मरि, शुक्रमार्गकी पीड़ा

रस-प्रकरणम्

७६०० शिलाजतुयोगः अश्मरी तथा तज्जन्य मूत्रकृच्छ्र

(९) आमवाताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१७४ शठ्यादिकल्कः आमवातको ७ दिन में नष्ट करता है

७१८२ शठ्यादिक्वाथः आमवात

७२४१ शुण्ठ्यादिक्वा० आमवात, कटिशूल, शरीरपीड़ा

चूर्ण-प्रकरणम्

८५१४ हिङ्ग्वाद्यं चूर्णम् आमवात

गुग्गुलु-प्रकरणम्

७३४६ शिवागुग्गुलुः आमवात, कटिशूल, गृध्रसी

७९२२ सिंहनादगुग्गुलुः आमवात

७९२३ सिंहनादगुग्गुलुः कष्टसाध्य आमवात, कास, श्वास, वातरक्तादि

८५२४ हरीतक्यादिगुग्गुलुः आमवात

घृत-प्रकरणम्

७३८६ शृङ्गवेराद्यं घृतम् आमवात, उदररोग, कटिग्रह आदि

७३८७ ,, ,, आमवात, विबन्ध, शूल

तैल-प्रकरणम्

८००५ सैन्धवाद्यं तै० आमवात, पार्श्वशूल, बाह्यायामादि

८००६ ,, ,, आमवात, बहुविध शूल

लेप-प्रकरणम्

७४४७ शतपुष्पादिलेपः आमवात

(१०) उदररोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२२३ शिग्रुमूलादिक्षारः सर्वोदर
८४२८ हरीतक्यादिक्वा० शोथोदरके लिये श्रेष्ठ
८४३० ,, योगः उदररोग, शोथ, दाह। (सरल योग)

चूर्ण-प्रकरणम्

७८३५ सामुद्राद्यं चूर्णम् वातोदर, गुल्म, अजीर्ण
७८८७ स्नुहीयोगः उदररोग
७८९१ स्वर्जिक्षारादियोगः समस्त प्रकारके उदर रोग
८४७७ हरीतक्यादियोगः जलोदर
८५१० हिंग्वादियोगः उदररोग, गुल्म, अष्ठीला, उदावर्त ।

गुटिका-प्रकरणम्

७३३५ शठ्यादिगुटिका प्लीहा, गुल्म, अफारा
८५२१ हरीतक्यादि वटिका समस्त उदररोग, यकृतके लिये विशेष उपयोगी
८७१७ क्षारगुटिका जलोदर, मुखशोथ

घृत-प्रकरणम्

७९७४ स्नुक्क्षीरयोगः उदररोग, (विरेचक)
७९७५ स्नुहीक्षीराद्यं घृ० उदररोग, गुदरोग, गुल्म
७९७६ स्नुही ,, ,, उदररोग, प्लीहा, कच्छप

रस-प्रकरणम्

७५३२ शंखद्रावकः उदररोग
७६०२ शिलाजतुयोगः पित्तोदर
७६४४ शुक्तिक्षारादियोगः प्लीहावृद्धि
७६४५ ,, ,, ,, उदररोग
८२०७ सामुद्रशुक्तिक्षारादियोगः समस्त उदररोग

मिश्र-प्रकरणम्

८६८५ हरीतकीयोगः उदररोग
८६८९ ,, ,, पित्तोदर
८६९२ हरीतक्यादियोगः उदररोग, अष्ठीला, आनाहादि
८७७१ क्षीरयोगः पित्तोदर

(११) उदावर्ताध्मानाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

८४६४ हरीतक्यादिचूर्णम् उदावर्त
८४८३ हिंगुद्वादशकं चू० आध्मान, शूल, अरुचि आदि
८५१५ हिङ्ग्वाद्यं-द्विरुत्तरं चूर्णम् आध्मान, गुल्म, उर्ध्व वायु

घृत-प्रकरणम्

७३८४ शुष्कमूलाद्यं घृतम् उदावर्तको अवश्य नष्ट करता है

७९२२ स्थिराद्यं घृतम् वातावरोध, आनाह

मिश्र-प्रकरणम्

७७३२ श्यामादिगणः उदावर्त, आनाह, उदर रोग

७७३३ „ वर्तिः उदावर्त

८४०५ सौवर्चलादियो० मूत्रावरोध जनित उदर रोग

८६९८ हिंग्वादिवर्तिः उदावर्त

(१२) उपदंशाधिकारः

गुटिका-प्रकरणम्

८०८२ सम्प्रसारिणीगुटिका फिरंगरोगको अवश्य नष्ट कर देती है

अवलेह-प्रकरणम्

७९३२ सारिवाद्यवलेहः उपदंश, पारदविकार, रक्तदोष, प्रमेह, प्रमेहपिडिका, मूत्रकृच्छ्र

लेप-प्रकरणम्

८०३० सर्जिकादिलेपः उपदंशव्रण, विसर्प

८०३१ सर्जिकाद्य „ मांसाङ्कुर

-प्रकरणम्

८१४७ सप्तशालिवटी फिरंग रोग

८२६४ सूतादिवटी समस्त प्रकारका उपदंश

(१३) कण्ठरोगाधिकारः

घृत-प्रकरणम्

७३८० शुङ्गाद्यघृतम् स्वरभंग

७९५२ सारस्वत „ एतत्प्राशितमात्रेण किन्नरैः सह गीयते ।

तैल-प्रकरणम्

७४३६ श्वेतादितैलम् कफज गलशुण्डिका

रस-प्रकरणम्

८२११ सारस्वतरसः स्वरभंग

८३०५ सौभाग्यसुन्दर-टंकणरसः स्वरभेदादि

८३२५ स्वरप्रसादको र० स्वरभेदमें उत्तम

(१४) कफरोगाधिकारः

रस-प्रकरणम्

७६८४ श्लेष्मकालानलोरसः समस्त कफरोग

७६८५ श्लेष्मकुठाररसः कफविकार

(१५) कर्णरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७८१४ सौभाञ्जनस्वरसयोगः कर्णशूल

चूर्ण-प्रकरणम्

७८३० समुद्रफेनचूर्णम् कर्णस्राव, कर्णव्रण
७८३१ सर्जत्वक्चूर्णम् कर्णस्राव

तैल-प्रकरणम्

७४०५ शतावर्यादितैलम् कर्णपालीको पुष्ट करता है
७४१७ शुष्कमूलाद्यंतैलम् कर्णशूल, बधिरता, कर्णनाद, कर्णस्राव, कर्णकृमि
७४२१ शृङ्गवेरादि ,, कर्णपीड़ा
७४२५ श्योनाक ,, त्रिदोषज कर्णशूल
७९१९ सैन्धवाद्य ,, समस्त कर्णरोग
८०१४ श्योनाक ,, त्रिदोषज कर्णशूलको तुरन्त नष्ट करता है।
८०१५ स्वर्जिकाद्यं तै० कर्णनाद, कर्णशूल, बधिरता, कर्णस्रावको शीघ्र नष्ट करता है।
८५४८ हिंग्वादि ,, कर्णशूल
८७३० क्षार तैलम् कर्णशूल, कर्णनाद, बधिरता, कर्णस्राव, कर्णकृमि आदि
८७३१ ,, ,, ऊपरके समान

रस-प्रकरण

८२१२ सारिवादिवटी समस्त कर्णरोग, क्षयादि

मिश्र-प्रकरणम्

८४१४ स्वर्जिकादियोगः कर्णस्राव, कर्णपीड़ा, दाह

(१६) कासश्वासहिक्काधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१७६ शठ्यादिकषायः पित्तकास
७१८६ शतमूलीक्वाथः खांसी, शूल
७२४४ शुण्ठ्यादिक्वाथः श्वास
७२५५ शृङ्गवेररसयोगः कफ, प्रतिश्याय, कास
७२७५ श्वासहरो दशको महाकषायः श्वास
७८०१ सिंहीकषायः कास नाशक सरलयोग
७८०३ सिंह्यादिक्वाथः श्वास
८४३२ हरेणुकादिक्वाथः पांच प्रकारकी हिचकी
८४३३ हिक्कानिग्रहणो दशको महाकषायः हिचकी
८७०४ क्षुद्रादि क्वाथः श्वास कास,
८७०६ क्षुद्रारस योगः ,, ,, क्षय(सरलयोग)

चूर्ण-प्रकरणम्

७२८१ शठ्यादि चूर्णम् श्वास और खांसी
७२८२ ,, ,, श्वास और हिचकी

७२८६ शठ्याद्यं चूर्णम् तमक श्वास, हिचकी
७२९७ शर्करासमं चूर्णम् श्वास, अरुचि, अग्निमांद्य
७३१२ शुण्ठ्यादि ,, वातजकास
७३२२ शुण्ठ्याद्यं ,, हिचकी
७३२६ शृङ्ग्यादि ,, हिक्का, श्वास, कास
७३२७ ,, ,, घोर श्वास को ३ दिनमें नष्ट करता है
७३२८ ,, ,, खांसीको शीघ्र नष्ट करता है
७८५२ सुरसाद्यं ,, कास, हिक्का, मलावरोध, श्वास, पार्श्वशूल
७८८२ सौवर्चलादि ,, श्वास, हृद्रोग, अपतन्त्रक
८४४९ हरिद्रादि ,, भयंकर श्वास
८४९१ हिङ्ग्वादि ,, कास, श्वास

गुटिका-प्रकरणम्

७३४३ श्वासकासघ्नीवटी श्वास, कास
८५१८ हरीतक्यादि-गुटिका प्रवृद्ध, श्वास, कास, नाशक सरल योग।
८५१९ ,, ,, कासनाशक, अग्निदापक सरल योग।

अवलेह-प्रकरणम्

७३४७ शठ्यादिलेहः कफजकास
७३४९ शर्करादिलेहः पित्तजकास
७३५१ शिखिपिच्छलेहः प्रबल हिचकी, श्वास और दुस्तर छर्दि
७५३४ सितादिलेहः भयंकर श्वास को शीघ्र नष्ट करता है। सरल योग।
७९३८ स्वर्णगैरिकादि लेहः हिक्कानाशक उत्तम योग।
८५२६ हरीतक्यवलेहः श्वास, कास, हिचकी, पीनस, एकाहिक ज्वर।
८७२२ क्षुद्रावलेहः श्वास, कास, तीव्र क्षय।

घृत-प्रकरणम्

७३५६ शठ्याद्यं घृतम् कास, हिक्का, श्वास, उरःशूल, पार्श्वशूल
७९५६ सिंहामृतघृतम् कास, श्वास, ज्वर, अग्निमांद्य
७९६८ सौवर्चलादिघृतम् श्वास
७९७१ स्थिराद्यघृतम् कास, ज्वर, दाह, क्षतक्षय
८५३५ हिंस्रादि ,, श्वास, कास, अतिसार, अरुचि, क्षय, अर्श
८५३६ हिंस्राद्य ,, श्वास, हिक्का
८७२३ क्षार ,, कास, श्वास, हृद्रोग, पार्श्व पीड़ा
८७२७ क्षीरामलकघृतम् पित्तज कास
८७२८ क्षीरिघृतम् ,, ,,

धूप-प्रकरणम्

७४८९ शरपुंखादि धूपः कास

धूम्र-प्रकरणम्

८५८० हरिद्रादिधूमः कासको अवश्य नष्ट करता है।

८५८१ हिङ्ग्वादि घृ.: ५ प्रकारकी हिक्का को नष्ट करता है।

नस्य-प्रकरणम्

५५१३ शर्करादि नस्यम् हिक्का
८११८ सैंधवादि „ „
८५९४ हिक्काहरयोगः „

रस-प्रकरणम्

७५२९ शंखचूलरसः मुमुर्षुकी हिक्का भी तुरन्त नष्ट होती है।
७५८६ शिखिपिच्छ-भस्मयोगः प्रबलहिक्का, श्वास, दुस्साध्यछर्दि
७६१३ शिलातालो रसः श्वास, कास
७६१५ शिलाद्यवलेहः कास, श्वास, हिक्का
७६१६ „ „ कास, श्वास, कफ
७६१७ शिलामृतरसः हिक्का
७६५० शुल्वतालेश्वरः कास, श्वास, पीनस, ज्वरादि
७६६८ शृंगाराभ्रम् कास, हृच्छूल, पार्श्वशूल, शिरशूल, स्वरभेदादि
७६७८ श्रीडामरानन्दाभ्रम् कास, ज्वर, स्वरभंग, हिचकी, क्षय, कफ, दाह, पीनस
७६९१ श्वासकालेश्वर पञ्च श्वास, कास, क्षय
७६९२ श्वासगजकेसरिः श्वास, कास
७६९३ श्वासकासचिंतामणिरस „ „
७६९४ श्वासकुठाररसः हर प्रकारका श्वास
७६९५ „ „ „ पञ्चकास, कफ, श्वास और शिरोरोगों को अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।
७६९६ श्वासहरवटकः श्वास, कास, ज्वर अग्निमांद्य, अरुचि
७६९७ श्वासहेमाद्रि महाश्वास
७६९८ श्वासान्तकरसः श्वास, कास, शूल, पांडु
७६९९ श्वासारिरसः श्वासको शीघ्र नष्ट करता है।
८१५१ समशर्करलौहम् सर्वदोषज क्षयज कास, श्वास, रक्तपित्त
८१९६ सर्वेश्वर रसः कास, श्वास, क्षय
८२१३ सार्वभौमरसः कास श्वासादि
८२८३ सूर्य रसः कासादि
८२८४ „ „ कास, श्वास, हिक्का
८२८८ सूर्यावर्त रसः श्वास
८३२९ स्वर्णपर्पटीरसः कास, क्षय, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र
८६१८ हरीतक्याद्यवलेहः कास, श्वास
८६२० हिक्कानाशनरसः हिक्का, कास, स्वरभेद
८६२१ हिक्कान्तक रसः १ मात्रासे भयंकर हिक्का नष्ट होती है।
८६६३ हेमगर्भरसः कास, श्वास, शूल
८६६४ „ „ श्वास कासादि अनेक रोग
८६६५ „ „ कास क्षयाद
८६७३ हेमादिपर्पटीरसः कास, श्वास

मिश्र-प्रकरणम्

७७११ शरादिक्षीरम् पित्तज कास
८६९० हरीतकीयोगः कास, श्वास
८६९३ हिक्काहरणयोगः हिक्का नाशक सरल योग।
८६९५ हिंग्वादि यवागू हिक्का, श्वास

(१७) कुष्ठ-वातरक्त-रक्तविकाराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२०५ शम्पाकादिक्काथः सर्वाङ्गगत वातरक्त
७२३९ शुण्ठयादिक्वाथः कुष्ठ
७२५२ शुण्ठ्यादिमहाक० १८ प्रकारके कुष्ठ
८४१८ हरिद्रादिकषायः कफ पित्तज कुष्ठ
८४२२ हरिद्रादि योगः कण्डू, पामा नाशक सरल योग
८४२३ हरीतकीयोगः दूर तक फैला स्फुटित वातरक्त

चूर्ण-प्रकरणम्

७३३२ श्यामाद्युद्वर्तनम् सिध्म
७८२४ सप्तसमयोगः कुष्ठनाशक, मेध्य, वृष्य
७८३३ सर्वकुष्ठाङ्कुश समस्त प्रकारके कुष्ठ
७८३४ सर्षपादिचूर्णम् स्फुटित कुष्ठ तथा तोद भेदादि कुष्ठ की पीड़ा
७८७७ सोमराजीयोगः श्वेत कुष्ठको शीघ्र नष्ट करता है।
७८७८ ,, रसायनम् १ वर्ष में तीव्र कुष्ठ को भी नष्ट कर देता है।
७८७९ सोमराज्याद्युद्वर्तनम् मर्दन करनेसे उग्र कुष्ठ नष्ट होता है।
८४५३ हरिद्राद्यं चूर्णम् दाद, कुष्ठ
८४५४ हरिद्राद्युद्वर्तनम् पामा आदि

गुटिका-प्रकरणम्

७३४४ श्वित्रहरीवटी ८ दिनमें श्वित्रको नष्ट करती है।
७८९५ सप्तसमावटी कुष्ठ नाशक, रसायन
७८९६ सर्वाङ्गसुन्दरी गुटिका उग्रकुष्ठको शीघ्र नष्ट करती है

गुग्गुलु-प्रकरणम्

७९२० समशर्करगुग्गु० वातरक्त, भगन्दर, क्षय, विषमज्वर, अग्निमांद्य, वातरोग
७९२१ सिंहनाद ,, कुष्ठ, वातरक्त, नाड़ीव्रण आदि
७९२६ स्वायम्भुवो ,, श्वित्र, वातरक्त, कोठ, श्लीपदादि
७९२७ ,, ,, श्वित्र, वातरक्त, कुष्ठादि

अवलेह-प्रकरणम्

७९२९ सप्तसमोऽवलेहः कुष्ठनाशक, मेध्य, वृष्य
७९३३ सितादि लेहः कष्टसाध्य कुष्ठनाशक सरलयोग

घृत-प्रकरणम्

७३५९	शतावरीगुडूच्यादि	वातरक्त, कुष्ठ
७३५६	शतावरी घृतम्	,,
७३९२	श्रीवास घृतम्	भयंकर कच्छू, कुष्ठ
७७५२	षट्पल घृतम्	कुष्ठ, पामा, कण्डू, विसर्प, गंड, व्रण, ज्वर, संग्रहणी आदि
७९६५	सोमराजी ,,	श्वेत कुष्ठमें अत्यन्त प्रभावशाली
७९६६	,, योगः	गलकुष्ठ का नाश हो-कर नवीन उंगली आदि निकल आती हैं।
८७२५	क्षार घृतम्	दाद, सिध्म, अलस (खारवा)

तैल-प्रकरणम्

७३९८	शतपाकबलातै०	वातरक्त, रक्तविकार, वातव्याधिनाशक, इन्द्रिय प्रसादक
७३९९	शतपाकमधुपर्णी	त्रिदोषज वातरक्त, दाह
७४०६	शताह्वादितैलम्	वातरक्त
७४०९	शारिवाद्यं तैलम्	स्फुटित, गलित, घोर वातरक्त, चर्मदल, विपादिका आदि
७४३१	श्वित्रगजसिंह ,,	सैकड़ों वैद्यों से त्यक्त भयंकर श्वेत कुष्ठ
७४३२	श्वित्रहर तैल०	श्वेत कुष्ठ नाशक, अत्यन्त प्रभावशाली योग
७४३३	श्वेतकरवीराद्यं ,,	श्वेत कुष्ठ, कण्डू
७४३४	श्वेतकरवीराद्यं तै०	चर्मदल, पामा, विस्फोटक, सिध्म
७४३५	श्वेतकरवीराद्यं ,,	कुष्ठ
७७६१	षड्बिन्दु तैलम्	कुष्ठ, विचर्चिका
७९८८	सिद्धार्थक ,,	१८ प्रकारके कुष्ठोंको शीघ्र नष्ट करता है।
७९९०	सिन्दूराद्यतैलम्	पामा, विचर्चिका, खाज, विसर्प
७९९१	सिन्दूराद्यतैलम्	कच्छू और विचर्चिका को शीघ्र नष्ट करता है।
७९९३	सिन्दूराद्यंतैलम्	कपालकुष्ठ, किटिभ, पामा, विचर्चिका, दाद
८००७	सोमराजीतैलम्	कच्छु, कंडू, दाद, पामा, दुष्ट, नाड़ीव्रण और गंभीर वातरक्त को शीघ्र नष्ट करता है।
८००८	सोमराजी तैलम्	किटिभ कुष्ठ, दाद, कष्ट साध्य विसर्प, लिचपिचे चर्म और मांसादि में उपयोगी
८०१०	स्नुह्याद्यं तैलम्	किटिभकुष्ठ, प्रबल वायु
८०११	स्नुह्याद्यं तैलम्	पामा, व्रण, राध (पीप)
८५४०	हरिद्रादि तैलम्	पामा, दाद, विचर्चिका
८५४२	हरिद्रादि तैलम्	पामा, विचार्चिका

लेप-प्रकरणम्

७४५१	शताह्वादि लेपः	वातरक्त
७४६०	शिखरि लेपः	सिध्म
७४६४	शिग्र्वादि लेपः	वातरक्तनाशक सिद्ध योग

७४७७ शुण्ठ्यादि लेपः चकते और कोठ नाशक सरल योग
७४८१ शृङ्गवेरादिलेपः दाद
७४८२ शैलेयादिलेपः स्रावयुक्त कुष्ठ
७४८७ श्वित्रनाशकले० श्वित्र
७४८८ श्वित्रहर लेपः ,, (छाला डालने वाला सरल योग)
८०२२ सप्तामृत लेपः वातरक्त तथा अन्य कुष्ठ
८०२८ सर्जादि लेपः अण्डकोषों की खुजली
८०३२ सर्षपकल्कलेपः विचर्चिका को अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।
८०३५ सवर्णकर्ता ले० श्वेत कुष्ठ।
८०४३ सिद्धार्थादिलेपः दाद
८०४५ सिध्महर लेपः सिध्म
८०४६ सिध्महर लेपः सिध्म
८०४७ सिध्महर लेपः सिध्मकी उत्तम औषध।
८०४८ सिध्महर लेपः सिध्म
८०५० सिन्दूराद्यो ले० पामा को शीघ्र नष्ट करता है। (सरल योग)
८०५१ सिंहास्यादिले० कच्छू को ३ दिनमें अवश्य नष्ट कर देता है।
८०५२ सुदर्शनामूल योगः श्वित्र।
८०५५ स्वर्णपुष्प्यादि लेपः श्वित्र।
८०५७ सूतादि लेपः गजचर्म।
८०६१ सैन्धवादिलेपः दादको शीघ्र नष्ट करता है।
८०६३ सैन्धवादिलेपः पामा, कण्डू
८०६५ सैन्धवादिलेपः पैरोंकी बिवाइ (पाददारी) को नष्ट करके पैरोंको कोमल करता है।
८०७० स्थौणेयकादिले० कण्डू।
८०७१ स्नुक् लेपः श्वित्र, दाद, व्रण
८०७३ स्नुह्यर्कादि लेपः कण्डू।
८५५५ हयादि लेपः श्वेत कुष्ठ।
८५५८ हरितालादिलेपः पुराने दाद और रकस (स्रावहीन कण्डू युक्त फुंसियों) को शीघ्र नष्ट करता है।
८५५९ हरिद्रादिलेपः किटिभ कुष्ठ
८५६४ हरीतक्यादिलेपः कुष्ठ
८५७७ हेमक्षीर्यादिलेपः पामा, दाद, खाज, विचर्चिका, रकस

रस-प्रकरणम्

७५८० शशाङ्क रसः श्वेत कुष्ठ
७५८२ शशाङ्कलेखादिले० समस्त कुष्ठ
७५८३ शशिलेखावटी श्वित्र
७५९४ शिलाजतुयोगः वातरक्त
७५९७ शिलाजतुयोगः वातरक्त
७६२१ शिवा गुटी पुराना भयंकर वातरक्त, क्षय आदि बहु संख्यक रोग
७७०० श्वित्रकुष्ठारिरसः श्वित्र कुष्ठ
७७०१ श्वित्रारियोगः श्वित्र कुष्ठ
७७०२ श्वित्रारियोगः कुष्ठ जनित विकार
७७०३ श्वित्रारिरसः श्वित्र
७७०४ श्वित्रेभसिंहो रसः ,,

७७०५	श्वेतकुष्ठारिरस:	छाले पड़कर ३ सप्ताह में श्वित्र नष्ट होता है।
७७०६	श्वेतारि रस:	श्वेत कुष्ठ
७७०७	श्वेतारि रस:	श्वेत कुष्ठ
७७६४	षडाननगुटिका	कुष्ठ, आमाशयका तीव्र शूल, रेचक
८१२०	संकोचगोलरस:	कुष्ठ, विसर्प, विष
८१२२	संकोच रस:	उदुम्बर कुष्ठ
८१३१	सन्निपातकुष्ठहर रस:	सन्निपातज कुष्ठ
८२०२	सर्वेश्वर रस:	सुप्ति कुष्ठ, मण्डल कुष्ठ
८२१७	सिद्धतालेश्वर:	कुष्ठ
८२१८	सिद्धतालेश्वर रस:	१ मासमें कुष्ठको नष्ट करता है।
८२१९	सिद्ध पंचानन रस:	कुष्ठ, शोथ, शूलादि
८२७६	सूर्यकान्तरस:	ऋष्यजिह्वक कुष्ठ
८२८१	सूर्यप्रभागुटिका	वातरक्त, वातरोग
८२९५	सोमानल रस:	समस्त कुष्ठ
८२९७	सोमेश्वर रस:	कपाल कुष्ठ
८३१९	स्वच्छन्दभैरवरस:	वातरक्त, वातरोग
८३२६	स्वर्णक्षीरीरस:	सुप्तिकुष्ठ
८६०४	हरिद्रादिवटिका	भयंकर कुष्ठ
८६०६	हरिबोलांकुशर०	समस्त कुष्ठ

(१८) कृमिरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१८१ शट्यादिक्वाथ: कृमिरोग, ज्वर

चूर्ण-प्रकरणम्

७३३० शोभाञ्जनादिचू० कृमिरोग

७८५६ सुवर्चिकाद्यं चू० कृमिरोग

लेप-प्रकरणम्

७४५५ शरपुङ्खायोग: कृमियों को निकाल देता है।

(१९) क्लोमरोगाधिकारः

रस-प्रकरणम्

८२४७ सुरेन्द्राभ्रवटी समस्त क्लोम रोग

(२०) क्षयराजयक्ष्माधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

७३३४	श्वदंष्ट्रादिचूर्णम्	शोष, कास
७७४४	षाडवं ,,	यक्ष्मान्तर्गत अग्निमांद्य, मलभेदमें विशेष उपयोगी, पार्श्व पीड़ा नाशक, रोचक, दीपन, श्वास कास नाशक
७८१६	सामुद्राद्ययोगः	यक्ष्मामें मल शुद्धिके लिये उपयोगी
७८४०	सितोपलादिचू०	क्षय, दाह, कास, जिह्वाकी सुप्तता, पार्श्वशूल, अरुचि, ऊर्ध्वगत रक्त पित्त

अवलेह-प्रकरणम्

७३४८	शतावर्यादिलेहः	क्षय
७९३०	सर्पिर्गुडः	क्षय, ज्वर, कास, श्वास, निद्रानाश, हिचकी, शुक्र क्षय, पांडु
७९३१	,, ,,	हाथ पैरोंका टूटना, पार्श्वशूल, शिरशूल, क्षत क्षीणता, श्रम, व्यवाय और भारवहन जनित रक्त निष्ठीवन, पीनस
८७२२	क्षुद्रावलेहः	तीव्र क्षय, रक्त वमन, उरः क्षत, कास, श्वास

घृत-प्रकरणम्

७३९५	श्वदंष्ट्रादिघृतम्	क्षय, ज्वर, दाह, कास, पार्श्वपीड़ा, शिरपीड़ा, तृष्णा, छर्दि, अतिसार
७७५४	षडङ्ग घृतम्	स्रोत-शोधक

तैल-प्रकरणम्

७९९४	सुकुमारतैलम्	क्षय और उसके उपद्रवोंमें अत्यन्त उपयोगी, रक्त और मांसवर्द्धक

लेप-प्रकरणम्

७४४८	शतपुष्पादिलेपः	शिरशूल, पार्श्वशूल, अंशशूल

रस-प्रकरणम्

७५२८	शंख गर्भपोटली	क्षय
७५४४	शंख पोटली रसः	क्षय
७५६०	शङ्खेश्वर रसः	क्षय
७५६२	शङ्खोदररसः	क्षय, उदरेस्थवायु, अतिसार
७५६४	,, ,,	खांसी, श्वास, ज्वर, क्षय, अजीर्ण, अतीसार
७५६५	शतपत्रिकापाकः	जीर्णज्वर, क्षय, कास, अग्निमांद्य
७५९१	शिलाजतुचूर्णम्	क्षय, कामला, अपस्मार, (बलवीर्य वर्द्धक)

७५९३	शिलाजतुयोगः	क्षयको शीघ्र नष्ट करता है
७६०३	„ „	क्षय
७६११	शिलाजत्वादि-लौहम्	क्षय
७६२१	शिवागुटिका	क्षय, ज्वर, अतिकृशता आदि
८१५०	सप्तामृतलौहम्	अत्युग्र यक्ष्मा
८१७७	सर्वसुन्दररसः	राजयक्ष्मा, वातरोग
८१८४	सर्वांगसुन्दर	राजयक्ष्मा, वातपित्त ज्वर, वातकफज रोग
८२८०	सूर्यप्रभागुटिका	ऊरःक्षत, शोथ, कास, पार्श्वशूल, विषमज्वरादि
८३२४	स्वयमग्निरसः	क्षय
८३२७	स्वर्णपत्ररसः	क्षयको अवश्य नष्ट करता है
८३२८	स्वर्णपर्पटी	क्षय, शोथ, ग्रहणी, कास, श्वासादि
८३३०	स्वर्णभूपति	त्रिदोषज क्षय, वातरोगादि
८३४६	स्वर्णमाक्षिकादि-योगः	उग्रराजयक्ष्मा
८३६८	स्वर्णयोगः	क्षय
८५९८	हरिनेत्ररसः	क्षयनाशक (मृगांक वत)
८५९९	हरिरुद्र रसः	क्षय. (मृगांक वत्)
८६०७	हरिरुद्र रसः	क्षय
८६२२	हिंगुल भस्म	क्षय, पाण्डु, शूल (पौष्टिक)

८६३६	हिरण्यगर्भरसः	क्षय, श्वास, कास, ग्रहणी, वातव्याधि
८६५६	हेमगर्भ पोटली	क्षय
८६५७	„ „ „	क्षय, कास, श्वास, वायु, कफ, संग्रहणी
८६५८	„ „ „	क्षय, कास, श्वासादि
८६५९	हेमगर्भपोटली	क्षय
८६६०	हेमगर्भ „	ज्वर, क्षय, संग्रहणी आदि
८६६१	„ „ „	क्षय, कास, श्वास, संग्रहणी, कफ
८६६२	„ „ „	(ऊपरके समान)
८६६७	हेमभृगांक	असाध्य राजयक्ष्मा, शोथोदर, ग्रहणी, अर्श
८६७५	हेमाभ्रकरससिन्दूर	क्षयज पाण्डु, कास, क्षय
८७३७	क्षयकुलान्तक	समस्त प्रकारका क्षय, जीर्णज्वर, पित्तजकास, रक्तपित्त, षण्ढत्व
८७३८	क्षयकेसरी रसः	एकादशरूप क्षय, ज्वर, वायु, शोष, कृमि, मेदरोग
८७३९	क्षयकेसरी रसः	क्षय
८७४०	क्षयशामक रसः	क्षय
८७४१	क्षयान्तकरसः	क्षय, जीर्णज्वर, शिरोग्रह, अग्निमांद्य, वातकफ विकार

(२१) क्षुद्ररोगाधिकारः

घृत-प्रकरणम्

७९५०	सहाचरघृतम्	तिल, कालक, मुखदूषिका, पाददारी, अंगुली वेष्ठ
८७२५	क्षार घृतम्	मशक, तिल, कालक, पद्मिनी कंटक, अलस (खारवा)

तैल-प्रकरणम्

७९७७ सप्तच्छदादि तै० पद्मिनी कण्टक, चिप्प, व्यंग, जालगर्दभ

८००९ स्नुही तैलम् विपादिका में चमत्कारी

८०१२ स्नुह्याद्यं तैलम् खालित्यमें अत्यन्त गुणकारी

८५४४ हरिद्रादि ,, जतुमणि, नीलिका, व्यंग, तिल, मुखदूषिका

लेप-प्रकरणम्

७४४१ शंखचूर्णादि केश रंजक।

७४४६ शतपुष्पादि ,, ,,

७४५९ शाल्मलीकण्टकादि लेपः सौन्दर्यवर्द्धक।

७४७६ शिलापुष्पादि केशरंजक।

८०४४ सिद्धार्थादिलेपः मुखदूषिका।

८५५७ हरितालादि ,, व्यंग

(२२) गलगण्ड-गण्डमालाग्रन्थ्यधिकारः

तैल-प्रकरणम्

७४०८ शाखोटकबिल्व तै० गण्डमाला

घृत-प्रकरणम्

७९६७ सौरेश्वर घृतम् ,, अपची

७९९२ सिन्दूराद्य ,, कष्टसाध्य गण्डमाला

८५५० हिंस्राद्यं ,, गलगण्ड

लेप-प्रकरणम्

७७४३ शंखादि लेपः कफज अर्बुदादि, ग्रन्थि (सरल योग)

७४५४ शरपुङ्खायोगः अपची, अर्बुद

७४८३ शोभाञ्जनादि अपची को अवश्य नष्ट करता है। (सरल योग)

८०३३ सर्षपादि लेपः गण्ड, गण्डमाला, ग्रन्थिको शीघ्र नष्ट करता है।

८०३४ ,, ,, अपची

८०६० सूर्यावर्तादि लेपः गलगण्डनाशक (छाला डालता है।)

८०६७ सौभाञ्जनादि ,, दुस्साध्य अपची

८५६९ हस्तिकर्णपलाशादि लेपः गलगण्ड

८०७६ स्वर्जिकादि लेपः ग्रन्थि, अर्बुद

८५६५ हरीतक्यादि ,, कच्ची पक्की ग्रन्थि, विद्रधि

मिश्र-प्रकरणम्

७७३८ श्वेतापराजितामूलयोगः घोर अपची

(२३) गुल्माधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१७८ शट्यादि क्वा० गुल्म
७२०४ शताह्वादि क० रक्तगुल्म

चूर्ण-प्रकरणम्

७३३१ श्यामादि योगः गुल्म
७८५९ सूरणादि क्षारः प्रवृद्ध गुल्म
७८७१ सैन्धवादि योगः ५ दिनमें गुल्मको नष्ट करता है। (सरल योग).
७८८४ सौवर्चलाद्यं चूर्णम् गुल्म
७८९० स्वर्जिकादि क्षारयोगः वातज गुल्म
८४८४ हिङ्गुनवकं चू० सोपद्रव गुल्म, शूल
८४८६ ,, पञ्चकं ,, गुल्म
८४९० हिङ्ग्वादि ,, गुल्म, विसूचिका, उदर रोग
८७०७ क्षारद्वयादि ,, समस्त गुल्म, उदररोग
८७११ क्षारादि योगः रक्त गुल्म

गुटिका-प्रकरणम्

७९०८ सैन्धवादि गुटि पित्तज गुल्म
७९१४ स्वर्जिका वटी गुल्म नाशक सरल योग

घृत-प्रकरणम्

७९७५ स्नुहीक्षीराद्य घृतम् गुल्म, उदर रोग, गर विष
७९७६ स्नुहीक्षीरा० घृतम् सोपद्रव वातज गुल्ममें अत्यन्त प्रभावशाली
८५३० हपुषादि घृतम् वातगुल्म, शूल, अफारा
८५३१ हिङ्ग्वादि ,, ,, ,, ,,
८५३४ ,, ,, सोपद्रव गुल्म, शूल

रस-प्रकरणम्

७५३३ शंखद्रावः गुल्म, शूलादि
७५३४ ,, ,, ,,
७५३६ ,, ,, ,, कफ, श्वास
७५३७ ,, गुल्म
७५३९ ,, गुल्म, प्लीहा, ग्रहणी
७५४१ शंखद्राव रसः गुल्म, ग्रन्थ, शूलादि
७५५१ शंखवटी ५ प्रकारका गुल्म, अजीर्णादि
७५५५ ,, ,, गुल्म, शूलादि
७५८७ शिखिवाडवरसः वातज गुल्म
७५९९ शिलाजतुयोगः ,, ,,
८१९७ सर्वेश्वर रसः रक्त, गुल्म
८२०३ ,, ,, वातज तथा पित्तज गुल्म, मलावरोध, अग्निमांद्य, ज्वर, कफ, वायु
८७४७ क्षारवटी गुल्म, शूल, अरुचि

मिश्र-प्रकरणम्

८३९३ सामुद्रादिवर्तिः मल तथा अपान वायुका रुकना
८६९७ हिंग्वादि योगः गुल्म, उदावर्त शूल

(२४) ग्रहणी–रोगाधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

७२४६	शुण्ठ्यादिक्वाथः	आम, संग्रहणी, पेटमें सदा आम संचित होते रहना
७२५४	शृङ्गवेरक्वाथः	कफज ग्रहणी
७२७२	श्रीफलादिकल्कः	उग्र ग्रहणी । सरल योग

चूर्ण–प्रकरणम्

७२८५	शठ्यादि चूर्णम्	कफज ग्रहणी
७३१३	शुण्ठ्यादि चूर्णम्	कफज ग्रहणी नाशक, अग्निदीपक
७८३२	सर्जरस ,,	श्वेत तथा रक्त पक्व ग्रहणी, (सरल उत्तम योग ।)
८४८९	हिंग्वादि ,,	कफज ग्रहणी
८४९४	,, ,,	वातकफ ग्रहणी, विष

घृत–प्रकरणम्

७३७०	शतावरीघृतम्	त्रिदोषज संग्रहणी रक्तस्राव
७३८१	शुण्ठी ,,	ग्रहणी, खांसी, ज्वर, तिल्ली
८७२४	क्षारघृतम्	अग्निदीपक

आसवारिष्ट–प्रकरणम्

७४३७	शर्करासवः	संग्रहणी, उदावर्त, अरुचि, मल मूत्र तथा डकार का रुकना, अर्श, पाण्डु, हृद्रोग

रस–प्रकरणम्

७५४३	शंखपोटलीरसः	ग्रहणी, निर्बलता, शूल, श्वास, कास, आमातिसार
७५५१	शंखवटी	ग्रहणीमें उत्तम, शूल, अजीर्ण नाशक
७५५२	,, ,,	ग्रहणी, शूल, अम्लपित्तादि
७५६३	शंखोदर रसः	ग्रहणी, वायु, शूल, कफ, मलावरोध
७५७१	शम्बूकादिवटी	वातज संग्रहणी (सरल योग)
७६२३	शीघ्रप्रभावरसः	भयंकर ग्रहणी, आध्मान, वायु, मलत्यागके पश्चात भी हाजत बनी रहना ।
८१२३	संग्रहणी रसः	संग्रहणी, शूल, क्षय, वातव्याधि
८१५९	स्वर्जिक्षारादि योगः	संग्रहणी, शोथ, शूल
८२०९	सारकल्पः	समस्त ग्रहणी विकार, शोथ, शूल
८२३४	सुदर्शन रसः	ग्रहणी
८२४२	सुधासार रसः	आम, आमरक्त, संग्रहणी, हिक्का, आनाह और अरुचि आदिको २–३ मात्रामें नष्ट करता है ।
८२६०	सूतराजः	संग्रहणी, क्षय, अर्श

८३२०	स्वच्छन्द भैरव रसः	ग्रहणी, कास, श्वास, ज्वर, निद्राकी कमी
८३२८	स्वर्णपर्पटी	ग्रहणी, कास, श्वास, क्षय, पाण्डु
८६३२	हिंगुलेश्वर रसः	ग्रहणी, प्रवाहिका, अग्नि०
८६३५	हिरण्यगर्भ पोटली रसः	ग्रहणी, शोथ, जीर्ण ज्वरादि
८६७६	हंसपोटली रसः	संग्रहणी
८६७७	„ „ „	ग्रहणी, कास, हिक्का, निर्बलता
८६७८	„ „ „	ग्रहणी, पाण्डु, कृशता
८७४३	क्षारताम्र रसः	ग्रहणी, प्रतिश्याय, श्वास, कास, जार्णज्वर

(२५) ज्वरातिसाराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२५०	शुण्ठ्यादिक्वाथः	ज्वरातिसार

चूर्ण-प्रकरणम्

७८२६	समङ्गादि चूर्णम्	ज्वरातिसार

रस-प्रकरणम्

८१५९	स्वर्जिक्षारादि योगः	ज्वरातिसार, शोथ, शूल
८२२०	सिद्धप्राणेश्वरो	घोर त्रिदोषज ज्वरातिसार, शूलादि
८२४२	सुधासार रसः	ज्वरातिसार, आमरक्त, आनाह, हिक्का
८६७१	हेमसुन्दररसः	ज्वरातिसार, संग्रहणी
८७७७	ज्ञानोदय रसः	ज्वरातिसार, जलदोष

(२६) ज्वराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१७१	शक्राह्वादिक्वाथः	पित्तज्वर
७१७२	„ „	शीतज्वर
७१७५	शठ्यादिकषायः	सन्निपात, विषमज्वर, जीर्णज्वर
७१७७	शठ्यादिक्वाथः	कफजज्वर
७१७९	„ „	समस्त ज्वर
७१८०	„ „	सन्निपातज ज्वरमें दोषोंको पचाता है
७१८३	शठ्यादि गणः	सन्निपात, कास, हृद्ग्रह, पार्श्वपीड़ा
७१८४	„ पाचनम्	ज्वरकी तन्द्रा, श्वास, शिरपीड़ा, जड़ता आदि उपद्रव
७१८५	शतपुष्पादिक०	वातजज्वर
७२०२	शतावर्यादि स्व०	„ „ (सरलयोग)
७२१३	शालिपर्ण्यादि	तीव्र वातज्वर
७२२८	शिशिरादिकषायः	तृतीयक ज्वर

७२३२	शुण्ठीक्वाथः	जीर्णज्वर, अरुचि, अग्निमांद्य, का़ा, जलविकार। सरल योग
७२३३	शुण्ठ्यादिकल्कः	सन्निपात, श्वास, भ्रम, अरुचि, हृदयकी निर्बलता
७२३५	,, ,,	तीव्र शीतज्वर
७२३८	,, क०	कफज्वर
७२४७	,, क्वा०	वातज्वर
७२४८	,, ,,	दाहज्वर, शीतज्वर,
७२४९	,, ,,	तृतीय जीर्णज्वर, कास,
७२५६	शृङ्गवेरादि	ज्वर, विस्फोटक, दाह, वमन, खुजली
७२५७	शृङ्ग्यादिक्वा०	अभिन्यास सन्निपात, कफ
७२५८	,, ,,	कण्ठकुब्ज सन्निपात
७२५९	,, ,,	अभिन्यास सन्निपात, तन्द्रा, हिक्का, कर्णशूल
७२६७	श्रीखण्डादिक०	पित्तज्वर
७२६९	श्रीपर्ण्यादि क्वाथः	,,
७२७०	श्रीपर्ण्यादिपाचन	वातज्वर
७७४०	षडङ्गपानीयम्	ज्वर, दाह, पिपासा
७७४१	षोडशाङ्गः	उग्र सन्निपात
७७६९	सप्तच्छदादि	कफज्वर
७७७३	सप्तमुष्टिक यूषः	कफ, वायु, सन्निपात नाशक, हृदय, मुख शोधक
७७९१	सारिवादिगणः	ज्वर, दाह, पिपासा, रक्तपित्त
७७९२	सारिवादिगणः	पित्तज्वर, दाह, पिपासा, रक्तपित्त
७७९५	सितादिक्वाथः	अन्तर्दाह तथा पित्तज्वर को शीघ्र नष्ट करता है। अति सरल योग
७७९६	सिन्धुवार ,,	कफज्वर, जंघाबलह्रास, कानोंका बन्द होना। सरल योग
७७९७	सिंहास्यादि	सन्निपात, शूल, श्वास, अरुचि, अतिसार
७७९८	सिंहास्यादि	पित्त कफज्वर, खांसी, श्वास
७८००	सिंहिकादि	कफवातज्वर, श्वास, कास, शूल, पीनस (सरल योग)
७८०२	सिंह्यादिकषायः	सन्निपात ज्वरान्तर्गत श्वास
७८०४	सिंह्यादिक्वाथः	जिह्वक सन्निपात
७८०६	सुनिषण्णादि	३ दिनमें तीव्र ज्वरको नष्ट करता है
७८०७	सुरभ्यादिक०	अभिन्यास सन्निपात, शूल
७८०८	सुरसादिक्वाथः	वातज्वर
७८१९	स्थिरादिक्वाथः	तीव्र चातुर्थिक ज्वर, अग्निमांद्य
८४१६	हारद्रादिकषायः	मुखप्रसेक, सन्निपात, अग्निमांद्य, अरुचि, शोष, कास
८४२०	हरिद्रादिक्वाथः	कफ ज्वर

८४२६	हरीतक्यादि	मुखकी कटुता, अरुचि, मुखरोग
८४२७	हरीतक्यादि	चित्तभ्रम सन्निपात
८४११	हरीतक्यादि	ज्वरोत्थ शोथ
८४३९	ह्रीवेरादिकषायः	उग्र पित्तज्वर, तृषा, दाह
८७००	क्षुद्रादि क्वाथः	जिह्वक सन्निपात
८७०१	,, ,,	समस्त शीत ज्वर
८७०२	,, ,,	कफवात ज्वर, सन्निपात, कास, श्वास, पार्श्वशूल, अरुचि
८७०३	,, ,,	समस्त ज्वर

चूर्ण-प्रकरणम्

७३०३	शिरीषादिचूर्णम्	विषम ज्वर
७७४५	षोडशाङ्ग ,,	ज्वर, शूल
७७४६	,, ,,	समस्त विषम ज्वर
७८४६	सुदर्शन ,,	धातुगत, विषम, मानस और मेलेरिया आदि अनेक ज्वर, तन्द्रा, श्वास, कास, तृषा, कामला, हृद्रोग, कटिशूल, पार्श्वशूल, जानुशूल
७८४७	,, ,,	अनेकविध ज्वर
७८४८	,, ,,	सोपद्रव अनेकविध ज्वर
७८४९	सुरसादियोगः	सन्निपातकी बेहोशी
७८९३	स्वेदशोषक चू०	प्रस्वेद
८४६०	हरीतक्यादि ,,	दुर्जल जनित ज्वर
८४६५	,, ,,	सन्निपात

गुटिका-प्रकरणम्

७८९४	समलाद्यो मोदकः	वातकफ ज्वर, पक्वाशय शूल, (रेचक)
८५२०	हरीतक्यादिगुटी	ज्वर, कास, श्वास, मलावरोध, अग्निमांद्य

अवलेह-प्रकरणम्

७३५०	शोद्धरपर्य्याद्यवलेह	वाणी-शोधक

घृत-प्रकरणम्

७७५१	षट्पल घृतम्	विषम ज्वर, अग्निमांद्य, प्लीहा

तैल-प्रकरणम्

७७५७	षट्कट्वर तैलम्	वातकफ ज्वर, मेलेरिया, पाक्षिक मासिक द्वयमासिक ज्वर
७७५८	डुगुणतक्र तै०	दाह, शीत
७७५९	षट्चरण ,,	ज्वर
७९८०	सर्जरसाद्यं ,,	दाह, ज्वर, संताप
८०१८	स्वर्जिकाद्यं ,,	दाह
८७३३	क्षीरवृक्षाद्य ,,	जीर्ण ज्वरको शीघ्र नष्ट करता है ।

लेप-प्रकरणम्

७४६५	शिग्र्वादि लेपः	कर्णमूल शोथ नाशक सरल योग
८०४१	सिद्धार्थादि लेपः	कर्णमूलशोथ पीड़ा
८०४२	,, ,,	समस्त ज्वर

७६४३	शीतारि रसः	पुराना शीतज्वर
७६७९	श्री रसराजः	आठ प्रकारके ज्वर
७६८०	श्री वेष्ठादचूर्णम्	असाध्य शीताङ्ग सन्निपात
७६८३	श्लेष्म कालानलो रसः	वातकफ, पित्तकफ जीर्ण ज्वर, शोथ, कफोल्वण सन्निपात
७६८६	श्लेष्मशैलेन्द्र	कफरोग, शरोरोग, ज्वर, कंडू आदि
७७६६	षडानन रसः	वातपित्तज्वर, तरुणज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर
८१२४	सञ्जीवनाभ्रम्	समस्त विषमज्वर, प्लीहा, यकृत्, वमन, श्वास, कास, अरुचि, शूल
८१२५	सञ्जीवनीवटी	सन्निपातके मृतप्रायः रोगीको भी जीवनदान देती है।
८१२६	सञ्जीवनो रसः	सन्निपातमें विशेष उपयोगी
८१३०	सन्निपातकुठाररसः	सन्निपात
८१३२	सन्निपातगजाङ्कुश रसः	सन्निपातको शीघ्र नष्ट करता है।
८१३३	सन्निपात ,,	अत्यन्त दाह और स्वेद युक्त अभिन्यास सन्निपात
८१३४	सन्निपातभैरवो	घोर सन्निपात
८१३५	सन्निपातभैरवो	सन्निपात में अत्यन्त प्रभावशाली (सोमल और सर्पविषका योग)
८१३६	,, ,,	सर्व उपद्रवयुक्त सन्निपात, जीर्णज्वर, मेलेरिया, जलदोषजज्वर
८१३७	,, ,,	सन्निपात
८१३८	,, ,,	सन्निपात को अवश्य नष्ट करता है।
८१३९	,, ,,	सन्निपात
८१४०	सन्निपातवडवानल रसः	,,
८१४१	सन्निपातविध्वंसकः	सोपद्रव अत्युग्र सन्निपात को भी अवश्य नष्ट करता है।
८१४२	सन्निपातसूर्यरसः	सन्निपात तथा तज्जन्य कफविकार
८१४३	सन्निपातहर रसः	सन्निपात
८१४४	सन्निपातान्तक रसः	सन्निपातको शीघ्र नष्ट करता है।
८१४५	,, ,,	अभिन्यास सन्निपात
८१४६	सन्निपातारि रसः	तीव्र ज्वरको शीघ्र नष्ट करता है।
८१६०	सर्वज्वरहरो रसः	समस्त ज्वर
८१६१	,, ,,	ज्वर
८१६२	,, ,,	समस्त ज्वर

८१६३	सर्वज्वरहरलौ०	सर्वज्वर, ज्वरके उपद्रव, यकृत्, प्लीहा, पाण्डु, आदि
८१६४	सर्वज्वरहरलौ०	प्रतिमास, प्रतिपक्ष, प्रतिवर्ष आनेवाला ज्वर, प्लीहा
८१६५	सर्वज्वरहरलौ०	पुराना ८ प्रकारका ज्वर, कष्टसाध्य धातुगत ज्वर, कास, प्लीहा, पाण्डु आदि
८१६६	सर्वज्वराङ्कुशवटी	एकदोषज, द्वन्द्वज, सान्निपातिक, विषम, बहिर्गत, अन्तर्वेग, साम तथा निराम ज्वर
८१६७	सर्वज्वरारिरसः	सर्वज्वर
८१६८	सर्वज्वरारिरसः	जीर्णज्वर, आमज्वर, विषमज्वर, अजीर्ण
८१६९	सर्वतोभद्ररसः	आमदोष, अफारा, जीर्ण ज्वर, धातुगत विषम ज्वर, कास, पांडु, वमन, संग्रहणी
८१८१	सर्वाङ्गसुन्दररसः	जीर्णज्वर, अरुचि, बल क्षय, हृदयपीड़ा, उदर रोग
८१९५	सर्वेश्वररसः	समस्त विषमज्वर, सन्निपात
८२०१	सर्वेश्वररसः	सर्व ज्वर
८२०६	सामज्वरहररसः	विरेचक, आमज्वरको शीघ्र नष्ट करता है ।
८२१०	सारणसुन्दररसः	विरेचक, ज्वरनाशक
८२२२	सिद्धवटी	सन्निपात

८२३१	सिंहनादरसः	सन्निपात, अरुचि, श्वास, कास
८२३५	सुदर्शनरसः	समस्त ज्वर
८२४६	सुरूपो रसः	कफवात ज्वर, नेत्रस्राव, अग्निमांद्य.
८२५०	सूचिकाभरण रसः	सन्निपात, सर्पदंश, (इंजेक्शन देने से मूर्च्छा नष्ट होती है ।)
८२५१	,, ,,	सन्निपात
८२५२	सूचिकाभरण रसः	भयंकर मूर्च्छाको तुरन्त नष्ट करता है ।
८२.३	,, ,,	सन्निपात
८२.५	सूर्यरसः	ज्वरको शीघ्र नष्ट करता है
८२८६	सूर्यशेखररसः	सन्निपात
८२९३	सोमपाणिरसः	,,
८२९९	सौभाग्यवटी	सन्निपात, शीतांग, प्रस्वेद आदि
८३००	सौभाग्यवटी	शीताङ्ग सन्निपात
८३१७	स्वच्छन्दभैरव	उग्र, सन्निपात, ग्रहणी
८३१८	स्वच्छन्दभैरव	शीतज्वर, सन्निपात, विषमज्व प्रतिश्याय, जीर्णज्वर, वमन
८३२१	स्वच्छन्दभैरव	नवीन सन्निपात
८३२२	,, ,,	वातज तथा कफज ज्वर
८६१४	हरीतक्यादिपाकः	शीतज्वर, रसविकार, श्वास, कास, धातुस्राव- आदि

८६३३ हिंगुलेश्वरःसः ज्वरनाशक, रेचक

८६४८ हीराबेध्यो रसः तालुमें मलने से मूर्च्छा नष्ट होती है।

८६५० हुताशनरसः ज्वर,

मिश्र-प्रकरणम्

८३८३ सक्तुयोगः दाह, तृषा, पित्तज्वर, (ज्वरवेगको घटाता है।)

८३९१ सहदेवीमूल-योगः भूतज्वर,

८३९२ सहदेवीमूल-बंधनम् चातुर्थिक ज्वर.

८३९६ सिहिकादि योगः ज्वर, हिक्का, कासादि नाशक, मलमूत्र प्रवर्तक पेया.

८४४७ हरिद्रक वृक्ष योगः नानादेशज वारिदोष नाशक।

८७६८ क्षीरयागः जीर्णज्वर.

८७६९ ,, क्षीणकफ जीर्णज्वर.

८७७३ ,, विषमज्वर, हृद्रोग, कास.

(२७) छर्द्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१७३ शङ्खपुष्पीरस योगः छर्दि

७२५१ शुण्ठ्यादि पाचनम् छर्दि, अरुचि, ज्वरातिसार

७२७१ श्रीफलगुडू-च्यादिक्वाथः सर्वदोषज छर्दि

७७९० शारिवादि-क्वाथः छर्दि.

चूर्ण-प्रकरणम्

७२८४ शट्यादिचू० त्रिदोषज छर्दि

७८२८ समशर्कचू० वमन, अरुचि, गुल्म, श्वास.

७८७२ सैन्धवादियो० वातछर्दि नाशक सरल योग

७८८० सौवर्चलादि चूर्णम् वातछर्दि

८५०९ हिंग्वादियोगः वमन

अवलेह-प्रकरणम्

७९३५ सितादि लेहः सोपद्रव पित्तजछर्दि (सरलयोग)

७९४४ सौवर्चलाद्यलेहः छर्दिनाशक उत्तमयोग.

घृत-प्रकरणम्

७९६१ सूर्योदयघृतम् घोर छर्दि, श्वास, क्षय.

लेप-प्रकरणम्

८०४४ सिद्धार्थादि वमननाशक

(२८) तृषाधिकारः

मिश्र-प्रकरणम्

८७६६ क्षीरगण्डूषः तालुशोष

(२९) दाहाधिकारः

लेप-प्रकरणम्

८०३६ सहस्रधौतसर्पि लेपः दाह

मिश्र-प्रकरणम्

८६९९ ह्रीवेरादियोगः दाहनाशक अवगाहन स्नान

(३०) नासारोगाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

७२८३ शठ्यादिचू० घोर प्रतिश्याय, हृदयशूल

गुटिका-प्रकरणम्

७९०१ सुधावटी प्रतिश्याय, श्वास, कास, हृद्रोग।

घृत-प्रकरणम्

७७५६ षड्बिन्दुघृतम् पीनस, नासास्थिकेरोग, अनेक शिरोरोग.

७९४९ सर्जादि ,, नासापाक

तैल-प्रकरणम्

७४१० शिखरीतैलम् नासार्श

७४१२ शिग्रु ,, नासा रोग

७४१३ शिग्र्वादि ,, पूति नासा रोग

७४१५ शुण्ठी ,, क्षवथु रोग

७९९६ सुमुखाद्यं तै० नासार्श

७९९७ सुरसादि ,, पूतिनासा

८५४७ हिंग्वादि ,, नासारोग

नस्य-प्रकरणम्

७५२२ शुष्कगोमयादि योगः नकसीर

७५२४ शृङ्ग्यादिनावन योगः ,,

८५९३ हरीतक्यादि नस्यम् पुरानी नकसीर

मिश्र-प्रकरणम्

७७२० शिशिरजल योगः ३ दिनमें कठिन और पक्व पीनसको नष्ट करता है।

(३१)नेत्र-रोगाधिकारः

७५११ शुक्रारि वर्तिः	फूला, अर्म, तिमिर, पिल्ल।
७५१२ श्रीपर्ण्याद्यञ्जनम्	रक्तज नेत्राभिष्यन्द ।
७७६३ षडङ्गी वर्तिः	तिमिर
८०८७ सर्वतोभद्रावर्तिः	समस्त नेत्ररोग ।
८०८८ सारिवादि वर्तिः	पित्तज तिमिर ।
८०८९ सिताद्यञ्जनम्	कफज तिमिर, पिल्ल, अर्म, अक्षिशोष, शुक्र ।
८०९० सुखाञ्जनम्	अत्यन्त पीडायुक्त अक्षिपाक को तुरन्त आराम करता है। नेत्रप्रसादक। काच, फूला।
८०९१ सुखावतीवर्तिः	क्लेद, तिमिर, नेत्रार्बुद, नेत्रमल।
८०९२ सुदर्शनावर्तिः	नेत्रमल, नेत्रकंडू, तिमिर, नेत्रार्बुद, पीड़ायुक्त अत्यधिक नेत्रस्राव
८०९३ सुदर्शनावर्तिः	नेत्ररक्षक ।
८०९४ सुपर्णीवर्तिः	अत्यन्त नेत्रज्योतिवर्द्धक।
८०९६ सूतकाद्यञ्जनम्	नेत्रज्योति वर्द्धक ।
८०९७ सूर्यप्रभावर्तिः	नेत्रमांस, नेत्रग्रन्थि, नेत्रार्बुदादि ।
८०९८ सैन्धवादि वर्तिः	नेत्रशुक्र
८०९९ ,, ,,	कफज नेत्ररोग ।
८१०० सैन्धवाद्यञ्जनम्	पिल्ल रोग ।
८१०१ सैन्धवाद्यञ्जनम्	सद्यो नेत्ररुजापहम् ।
८१०२ सैन्धवाद्यञ्जनम्	अक्षिशूल ।
८१०३ सैन्धवाद्यञ्जनम्	कफज नेत्ररोग, नेत्रपीड़ाको शीघ्र शान्त करता है।
८१०६ सैन्धवाद्यञ्जनम्	पूयालस ।
८१०७ सौगताञ्जनम्	समस्त नेत्ररोग ।
८१०८ सौवीराञ्जनम्	तिमिर ।
८१०९ सौवीराञ्जनम्	नेत्रशुक्र ।
८११० सौवीराञ्जनयोगः	तिमिर (केवल सुरमेका प्रयोग)
८१११ स्नेहनीवटिका	नेत्रस्राव और वातज तथा रक्तज नेत्रपीड़ाको शीघ्र नष्ट करती है।
८११२ स्फाटिकादि वर्तिः	फूला ।
८११३ स्रोतोञ्जनाद्या वर्तिः	अभिष्यन्द के पश्चात् का धुंधलापन ।
८११४ स्वर्णमाक्षिकाद्यञ्जनम्	फूला ।
८५८२ हरितालादि प्रतिसारणम्	पिल्ल
८५८३ हरिद्रादि वर्तिः	समस्त नेत्ररोग ।
८५८४ हरिद्राद्यञ्जनम्	पिच्चिट, धूमदर्शन, तिमिर
८५८५ हरिद्राद्यञ्जनम्	नेत्राभिष्यन्दमें उत्तम ।
८५८६ हरिद्राद्यञ्जनम्	निशान्ध्यको अवश्य नष्ट करता है ।
८५८७ हरिद्राद्यावर्तिः	स्राव, तिमिर, पटल, नक्तान्ध्य ।
८५८८ हरीतक्यञ्जनम्	कण्डू, क्षत, आंख पर चोट लगना, आंखका जल जाना ।
८५८९ हरीतक्यञ्जनम्	तिमिर
८५९० हरीतक्यादिवर्तिः	कण्डू और तिमिरकी अमोघ औषध ।
८५९२ हिताञ्जनम्	अन्धता नहीं आने देता।

रस-प्रकरणम्

८१४९ सप्तामृतलौहम् तिमिर, क्षत, लालरेखा, नेत्रकंडू, नक्तान्ध्य, नेत्र-तोद, दाह, नेत्रशूल, पटल,काचादि, दन्तरोग, गलरोग

८३८१ स्वर्णादिगुटिका सोपद्रव समस्त नेत्ररोग

मिश्र-प्रकरणम्

७७१६ शिग्रुपत्ररसाश्च्योतनम् नेत्रपीड़ा

७७१७ „ पत्रादिपिंडी कफज नेत्राभिष्यन्द

७७२८ शुण्ठ्यादिपिंडी नेत्रशोथ, नेत्रकंडू, पीड़ा (सरलयोग).

७७३६ श्वेतकरवीर रसयोगः नवीननेत्राभिष्यन्द

७७३७ श्वेतगिरिकर्ण्यादि योगः नेत्रपुष्प

८३९० सहदेवीमूल ब॰ानम् नेत्रपीड़ा

८४०२ सैन्धवाद्याश्च्योतनम् „ नेत्र शोथ

८४०३ सैन्धवाद्याश्च्योतनम् „ नेत्रदाह, नेत्रकंडू

८६८३ हरिद्राद्याश्च्योतनम् कफाभिष्यन्द

(३२) पाण्डुरोगाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

८४५० हरिद्रादि चूर्णम् कामला नाशक(सरलयो.)

८४७० हरीतक्यादि चूर्णम् कामला, कास, श्वास

अवलेह-प्रकरणम्

७९३७ सिताद्यवलेहः हलीमक

घृत-प्रकरणम्

८५२८ हरिद्रादिघृतम् कामला

अञ्जन-प्रकरणम्

८५९१ हिङ्ग्वाद्यञ्जनम् कामला नाशक सरलयोग

रस-प्रकरणम्

७५४७ शंखयोगः कामलाको ७ दिनमें नष्ट करता है (सरलयोग)

७५९५ शिलाजतुयोगः कामला, क्षय, अपस्मार (बलवीर्य वर्द्धक)

७६१० शिलाजत्वादि योगत्रयम् कुम्भकामला

८१५८ सम्मोहलौहम् कामला, पाण्डु, शोथ, कृमि, अरुचि

८२१४ सावित्र वटकः पाण्डु, कामला, कृमि, उदररोग, ज्वर, गुल्म

८२२६ सिन्दूरभूषण रसः वातजपांडु, कामला

८२४१ सुधापञ्चक रसः हलीमक

मिश्र-प्रकरणम्

(३३) प्रमेहाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

घृत-प्रकरणम्

तैल-प्रकरणम्

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

रस-प्रकरणम्

८६३४ हिमांशु रसः प्रमेह, मुखशोष, सोमरोग, प्रमेह पिडिका, दाह, तृष्णा

८६६६ हेमनाथ रसः समस्त प्रमेह, दारुण बहुमूत्र, सोमरोग, क्षयादि

८६६९ हेम वज्र रसः प्रमेह, भयंकर मूत्रकृच्छ्र,

८६७९ हंसभैरव रसः शुक्रमेह

(३४) बालरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७७७७ समङ्गादि क्वाथः भयंकर बालातिसार

७७८७ सारिवादि ,, मुखसे लार बहना

७७८८ सारिवादि क्वाथः बालकोंका पित्तज्वर

८४१९ हरिद्रादि कषायः स्तन्यदोष, ज्वरातिसार, श्वास, कास, वमन

चूर्ण-प्रकरणम्

७३२५ शृङ्ग्यादिचूर्णम् कास, ज्वर, वमन

७८६६ सैन्धवादिचूर्णम् अफारा, वातज शूल

७८९२ स्वर्णगैरिकयोगः छर्दि

८४५८ हरीतक्यादि कल्कः तालु कण्टक

८४६२ हरीतक्यादि चूर्णम् छर्दि

८४९६ हिङ्ग्वादिचू० प्रबल तृषा

८४९७ ,, ,, हिक्का, श्वास

८५१७ ह्रीवेरादि ,, अतिसार, छर्दि, तृषा, ज्वर

गुटिका-प्रकरणम्

७३३७ शिवामोदकम् समस्त रोग नाशक, पौष्टिक अग्निवर्द्धक

अवलेह-प्रकरणम्

७३५४ शृङ्ग्यादिलेहः कास, ज्वर, वमन

७३५५ ,, ,, बालकोंकी दुस्तर कास

७९४० सैन्धवाद्यवलेहः अफारा, वातज शूल

घृत-प्रकरणम्

७३८८ शृङ्ग्याद्यं घृतम् बालकोंका सूखा रोग

७३८९ श्यामा ,, बच्चोंकी खांसी, श्वास, रक्तपित्त, पिपासा, मूर्च्छा

७९४८ समङ्गादि ,, दन्तोद्भेदरोग

७९५४ सारिवादि ,, ग्रहविकार

८०२६ क्षारद्याद्य ,, पारिगर्भिक

तैल-प्रकरणम्

७३९६ शङ्खपुष्पीतैलम् सर्व रोग नाशक पौष्टिक, कान्ति मेधा वर्द्धक

७४२५ श्यामाद्यतैलम् स्वास्थ्यरक्षक

लेप-प्रकरणम्

८०३७ सारिवादि लेपः बालविसर्प

धूप-प्रकरणम्

८०७८ सर्षपत्वगादि धूपः बालग्रह, ज्वर

८०८० सर्षपादि धूपः समस्त बालग्रह

रस-प्रकरणम्

७५५९ शंखादिचूर्णम् गुदपाक

८२२९ सिन्दूरादि लेहः बालकोंका पश्चात् रुज-रोग

८६३८ हिरण्याद्यवलेहः बालककी आयु, कान्ति, और बलवर्द्धक

मिश्र-प्रकरणम्

८३८५ समंगादि क्वाथः बालातिसार

८३८६ सर्जकाद्यो योगः विच्छिन्न रोग

८४०१ सैन्धवादि योगः नवजात शिशुका दूध न पीना

(३५) भगन्दराधिकारः

गुग्गुलु-प्रकरणम्

७९१७ सप्तविंशतिको गुग्गुलुः भगंदर, बस्तिशूल, अर्श, अन्त्रवृद्धि, कास, श्वासादि अनेक रोग

तैल-प्रकरणम्

८००० सैन्धवाद्यतैलम् कृमियुक्त असाध्य भगंदर

८०१३ स्यन्दन „ भगंदरको शुद्ध करके भरता और त्वचाको सवर्ण करता है।

(३६) मदात्ययाधिकारः

घृत-प्रकरणम्

७३६४ शतावरीघृतम् पानात्यय

आसव-प्रकरणम्

७४४० श्रीखण्डासवः पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण, अत्युग्र पानविभ्रम

रस-प्रकरणम्

८२६३ सूतादियोगः पानात्यय

मिश्र-प्रकरणम्

७७२३ शीतजलपानयोगः सुपारीका नशा, छर्दि, अतिसार

(३७) मसूरिकाविस्फोटकाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२७६ श्वेतचन्दनादियोगः मसूरिकाके आरम्भमें उपयोगी

७८१० सुषव्यादिस्वरसः विस्फोटक, मसूरिका, ज्वर (सरलयोग)

(३८) मिश्राधिकारः

८१७२ सर्वतोभद्ररसः प्लीहा, यकृत्, शोथ, ज्वर, पाण्डु, प्रमेह, जलोदर
८७४२ क्षारगुटिका यकृत्वृद्धि
८७५६ क्षारपिप्पली प्लीहा, त्रिदोषज, गुल्म, यकृत्, वातष्ठीला
८७५८ क्षारपिप्पली प्लीहा, त्रिदोषज, गुल्म, यकृत्, वातष्ठीला

मिश्र-प्रकरणम्

७७१५ शाल्मलीपुष्पयोगः प्लीहावृद्धि नाशक सरल योग
८७५६ क्षारपिप्ली यकृत्, प्लीहा, गुल्मादि
८७५८ " " " "
८७५९ " " " "

---

(४४) रक्तपित्ताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१९३ शतावर्यादिकषायः रक्तपित्त
७२०० " योगः मूत्रमार्गगत पीड़ायुक्त रक्तस्राव
८४४५ ह्रीवेरादिक्वाथः उग्र रक्तपित्त, तृषा, दाह और ज्वर को शीघ्र नष्ट करता है।
८४४६ " " प्रबल रक्तपित्त, तृषा, दाह, ज्वर।

चूर्ण-प्रकरणम्

८४७६ हरीतक्यादियोगः दुर्जयरक्तपित्त

घृत-प्रकरणम्

७३७१ शतावरीघृतम् रक्तपित्त, ज्वर, कास
७३७२ " " " अंगदाह, शिरोदाह, ज्वर, योनिदाह
७३७३ शतावर्यादिघृ० रक्तपित्त, क्षय, श्वास
७३९० श्यामाघृतम् नासाप्रवृत्त रक्त
७९४६ सप्तप्रस्थघृतम् रक्तपित्त, उरःक्षत एवं हृद्रोग नाशक, बलवीर्य अग्नि वर्द्धक

तैल-प्रकरणम्

८५५३ ह्रीवेराद्यं तैलम् रक्तपित्त, उरःक्षत, कास

रस-प्रकरणम्

७५६६ शतमूल्यादिलौ० रक्तपित्त, तृष्णा, दाह, छर्दि, ज्वर
७५७९ शर्कराद्य लौहम् रक्तपित्त, अम्लपित्त
८१५२ समशर्कर " तीव्र रक्तपित्त, क्षतक्षय, अम्लपित्त
८२३६ सुधानिधि रसः रक्तपित्त
८२४० " " "

(४५) रसायनवाजीकरणाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

७२८९	शतावर्यादिचूर्णम्	अत्यन्त कामवर्द्धक
७२९०	,, ,,	,, बलवर्द्धक
७२९१	,, ,,	,, वीर्यवर्द्धक
७२९२	,, ,,	जरा, व्याधिनाशक, बल बुद्धिवर्द्धक
७२९३	,, ,,	अत्यन्त कामवर्द्धक
७२९४	,, ,,	नपुंस्कता नाशक
७३०८	शुक्रस्तम्भकरं चूर्णम्	स्तम्भक
७८६१	सूरणादि योगः	स्तम्भक सरल योग
७८८५	स्तम्भक चूर्णम्	स्तम्भक
७८८८	स्वगुप्तादि ,,	अत्यन्त वाजीकरण
७८८९	स्वयंगुप्तादि ,,	शुक्ररक्षक सरल योग
८४८०	हस्तिकर्णकल्पः	जरा नाशक, आयुवर्द्धक, शरीर को दृढ़ करनेवाला
८४८१	,, रसायनम्	अत्यन्त वाजीकरण, आयुवर्द्धक

गुटिका-प्रकरणम्

७३३८	शुक्र संजीवनीयो मोदकः	बल, वीर्य, तेज वर्द्धक
७३३९	शुक्रस्तम्भकरी वटिका	१ पहर पश्चात् समागम करनेसे ४ प्रहरका स्तम्भन होता है ।
७९१०	स्तम्भन वटिका	वीर्य स्तम्भक
७९११	,, ,,	अत्यन्त स्तम्भक
७९१२	स्तम्भन वटिका	स्तम्भक, बल वीर्य वर्द्धक
७९१३	स्वयंगुप्तादि मोदकः	अत्यन्त वाजीकरण

अवलेह-प्रकरणम्

७९३६	सितादि वृष्य योगः	अत्यन्त वृष्य, वृंहण, कण्ठ्य
७९४५	स्तम्भनावलेहः	वीर्यस्तम्भक
८७२०	क्षारगुडः	कृशता, निर्बलता, अग्नि-मांद्य अरुचि, कण्ठ छातीमें स्थित कफ, प्रमेह, वायु, प्लीहा यकृत् (आहारको शीघ्र पचाता है ।)

घृत-प्रकरणम्

७३६६	शतावरीघृतम्	शुक्रशोधक
७३६७	,, ,,	वृष्य
७९४७	सप्ताङ्ग ,,	वात कफ नाशक; आयु बुद्धि वर्धक
७९५९	सुकुमारकुमारक घृतम्	कांति, लावण्य, पुष्टिवर्द्धक

तैल-प्रकरणम्

७४२६	श्रीगोपालतैलम्	अत्यन्त कामवर्द्धक, तथा ध्वजभंग प्रमेहादि नाशक, कान्ति, बुद्धि, मेधा वर्द्धक

लेप-प्रकरणम्

८०६८ स्तम्भक लेपः — अत्यन्त स्तम्भक
८०६९ स्थूली करण लेपः — लिंग वर्द्धक

रस-प्रकरणम्

७५२५ शक्रवल्लभो रसः — वाजीकरण, स्तम्भक
७५६९ शतावरी मोदकः — अत्यन्त वाजीकरण
८५८१ शशाङ्क रसः — ,, ,,
७५९६ शिलाजतु योगः — १५ दिनमें दुर्बल शरीर और क्षीणधातु व्यक्तिको पुष्ट कर देता है।
७६१९ शिलाजीररसः — जरा नाशक, आयुवर्द्धक
७६४८ शुक्रस्तम्भकरा वटकाः — अत्यन्त स्तम्भक
७७६७ षण्मुखो रसः — नपुंसकता
८१९३ सर्वेश्वरचूर्णम् — शरीरको रोग रहित करता है।
८२२१ सिद्धयोगेश्वरः — १ वर्ष तक सेवन करनेसे वृद्धावस्था नहीं आती अत्यन्त स्तम्भक, वीर्य वर्द्धक
८२२३ सिद्धशाल्मली कल्पः — अत्यन्त वाजीकरण
८२२५ सिद्धसूतः — ध्वजभंग नाशक बलवर्द्धक
८२[illegible] सिन्दूरा[illegible]वटी — वीर्यस्तम्भक
[illegible] [illegible]सुन्दरीगुटिका — रसायन
[illegible] रस — बलवर्द्धक, ध्वजभंगनाशक
[illegible] सिद्ध रसः — पुराने केश, नख, दन्तादि गिर[illegible] आजाते हैं
८२९८ सौगत वटी — अत्यन्त स्तम्भक, लिंगको दृढ़ करता है।
८३४५ स्वर्णमाक्षिकादि चूर्णम् — अत्यन्त वाजीकरण
८३६७ स्वर्णयोगः — सन्तान वर्द्धक
८३६८ ,, ,, — अरिष्ट लक्षणोंवाला व्यक्ति सुरक्षित रहता है।
८३७२ ,, ,, — अलक्ष्मी नाशक
८३७३ ,, ,, — प्रभाव (रोब) वर्द्धक
८३७४ ,, ,, — अलक्ष्मी नाशक, आयु बल वर्द्धक
८३७५ ,, ,, — बल, वर्ण, मेधा, देहवर्द्धक
८३८० स्वर्ण सिन्दूरम् — सर्वरोग नाशक, बलवीर्य वर्द्धक
८३८२ स्वल्पचन्द्रोदय मकरध्वजः — अत्यन्त वाजीकरण, बल वीर्य अग्नि वर्द्धक
८६०० हरशशाङ्करसः — काम वर्द्धक, आयु, तेज, बल और लावण्यको बढ़ाता है।
८६०१ ,, ,, — अत्यन्त कामवर्द्धक
८६११ हरीतकीयोगः — जरा नाशक
८६१२ हरीतक्यवलेहः — समस्त रोग
८६१६ हरीतक्यादि रसायनम् — पलित नाशक
८६१९ हाटकेश्वरी गु० — जरामृत्यु नाशक
८६४९ हीरावेध्यो रसः — आयु सुख सन्तान पुष्टि आदि बढ़ाता है।
८६७० हेमसुन्दररसः — जरामृत्युनाशक
८६७२ ,, ,, ,, — समस्त रोग नाशक

---

(४६) रसोपरसादिशोधनमारणाधिकारः

(४७) वातव्याध्यधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

७१८७ शतावरीकल्कः शरीरगत वायु
७१९८ शतावर्यादि द्वादशाङ्गः वातव्याधि
७२६० शेफालिकाक्वाथः कष्टसाध्य गृध्रसी। सरल योग
७२६१ शेफालिकादिक्वाथः ऊरुस्तम्भ
७७७९ समीरदावानलक्वाथः समस्त वातव्याधि (भल्लातकयोग)
७७८२ सहचरादि क्वाथः वातव्याधि
८४२४ हरीतक्यादिकषायः जंघाशूल और ऊरुस्तंभको ७ दिनमें नष्ट कर देता है।

चूर्ण–प्रकरणम्

७३०९ शुण्ठीचूर्णम् पक्षाघात, हनुस्तम्भ, कटिभंग तीव्र बाहुपीड़ा
७३१५ शुण्ठ्यादि चूर्णम् समस्त वातज रोग
७७४२ षड्धरण योगः आमाशयगत वायु
८४५७ हरीतक्यादिकल्कः ऊरुस्तम्भ।
८४६६ ,, चूर्णम् अपतन्त्रक।

गुटिका–प्रकरणम्

७३३६ शिग्रुत्वचादिवटिका सर्वांगवात

गुग्गुलु–प्रकरणम्

७३४५ शतावरीगुग्गुलुः वातव्याधि
७३४६ शिवा गुग्गुलुः कटिशूल, गृध्रसी, क्रोष्टुशीर्ष वातव्याधि।
७७४७ षडङ्ग गुग्गुलुः वातव्याधि।
७७४९ षडशीति ,, समस्त धातु गत और समस्त अवयवों में स्थित वायु
७९२५ स्वायंभुव ,, सन्धि, अस्थि और मज्जागत वायु

अवलेह–प्रकरणम्

७३५२ शिंशिपात्वगादियोगः गृध्रसी को २० दिन में नष्ट करता है

घृत–प्रकरणम्

७३६० शतावरी घृतम् पंगुता, अर्दित, नपुंस्कता, वन्ध्यत्व
७९५२ सारस्वत ,, मूकता, जडता और गद्‌गद शब्द।
७९५३ ,, ,, ,, ,, ,,
७९५९ सुकुमारकुमारक घृतम् योनि और लिंगकी वातज पीड़ा, मलावरोध।

तैल प्रकरणम्

७३९७ शतकप्रसारिणी तैलम् वातव्याधि
७४०० शतावरीतैलम् योनिशूल, अंगशूल, शिरशूल, गृध्रसी आदि
७४०१ शतावरीतैलम पंगुता, त्वग्गत वात, शिरा और स्नायु गत वायु

७४०२ शतावरीतैलम् कुब्जता, वामनता, पंगुता पीठविसर्पण

७४०३ „ „ पंगुता, अंगका सिकुड़ जाना आदि अनेक रोग

७४०४ „ „ वातव्याधि

७४३० श्वदंष्ट्रादितैलम् गृध्रसी, पादकम्पन, कटि पृष्ठ ग्रह

७९८१ सहचर तैलम् कुष्ठ नाशक, अस्थि, मज्जा और कर्णगत वायु, मूकता, पीठविसर्पण, अस्थिभंग आदि।

७९८४ „ „ कष्ट साध्य वातव्याधि, कम्प, आक्षेप, स्तम्भ, शोषादि।

७९८५ सहचराद्य „ समस्त वातकफज रोग।

७९८६ „ „ अपबाहुक, शिरः कम्पन अर्दित, मेदयुक्त वायु आदि।

७९८९ सिद्धार्थक „ सन्धिवात, एकांग शोथ, लड़खड़ाकर चलना। (वृद्धावस्थामें विशेष उप०)

७९९५ सुगन्धिततैलम् वातव्याधि।

७९९८ सूत „ बाहु कम्प, जंघाकम्प, एकांग वात।

८००१ सैन्धवाद्य „ गृध्रसी, ऊरुस्तम्भादि।

८००४ „ „ आमवात, शिरपीड़ा, पक्षाघात, सन्धिवात, अण्डगत वायु, ऊरुस्तम्भ।

८५४९ हिमसागर „ चोट की वेदना, बहुतसे वातरोग।

लेप-प्रकरणम्

७४४९ शतपुष्पादि लेपः अस्थि, सन्धि और कटि की वायुको ३ दिनमें नष्ट करता है।

७४७९ शुण्ठ्यादि लेपः जानु तथा बाहुकी पीड़ा।

८७३६ क्षौद्रादि लेपः ऊरुस्तम्भ।

रस-प्रकरणम्

७५३८ शंखद्रावः तूणि, प्रतूणि, तीव्र पीड़ा

७६०१ शिलाजतुयोगः ऊरुस्तम्भ

७६४२ शीतारि रसः वातव्याधि

७६४९ शुण्ठि खण्डः आमवातनाशक, बलवर्णायु वर्द्धक, बलि पलित नाशक

८१२९ सन्धिवातारि गुटिका कष्ट साध्य संधिवात, वातव्याधि (सरल योग)

८१५३ समीरगजकेसरी रसः कुब्जता, खंजवात, गृध्रसी, कम्प, शोषादि वातव्याधि में विशेष उपयोगी

८१५४ समीरपन्नग रसः सन्धिग्रह (सोमलयुक्त योग)

८१५५ „ „ मूर्च्छा, कष्ट साध्य वातव्याधि

८१७९ सर्वांग कम्पारि रसः सर्वांग कम्प

८१८० सर्वांगसुन्दर चिन्तामणि रसः वातव्याधि, अतिसार, संग्रहणी, ज्वर

८१९८ सर्वेश्वर रसः सुप्त वात
८१९९ ,, ,, स्पर्श वात
८२३३ सुखभैरव रसः वात व्याधि
८३१० स्पर्श वातघ्न रसः स्पर्श वात
८३११ स्पर्शवातारिरसः स्पर्शवात, शोथ, वातरक्त
८३१५ स्वच्छन्द नायक रसः समस्त वातव्याधि
८५९६ हरगौरी रसः वातव्याधि

मिश्र-प्रकरणम्

७७०८ शंकरस्वेदः अंगोंकी वातज पीड़ा
७७२७ शुण्ठ्यादिपायसः कटि शूल और गृध्रसीको अवश्य नष्ट करता है ।

(४८) विद्रधि

कषाय-प्रकरणम्

७२२४ शिग्रुमूलादि योगः अन्तर्विद्रधि
७२२५ शिग्रुवादि कषायः ,,
७२६४ शोभाञ्जनादि कल्कः ,,
७२८० श्वेतवर्षाभ्वादि कषायः ,,
७८१३ सौभाञ्जनक क० विद्रधिको शीघ्र नष्ट करता है । सरल यो०

चूर्ण-प्रकरणम्

८४७२ हरीतक्यादि चू० उग्र अन्तर्विद्रधिको अवश्य शीघ्र ही नष्ट करता है । (सरल योग)

लेप-प्रकरणम्

७४६६ शिग्रुवादि लेपः वातज विद्रधि ।
८५६५ हरीतक्यादि ,, विद्रधि, कच्ची पक्की ग्रन्थि
८७३४ क्षीरकाकोल्यादि लेपः पैत्तिक विद्रधि ।

(४९) विरेचनाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

८४७८ हरीतक्यादि योगः सुख विरेचक

रस-प्रकरणम्

८१८२ सर्वांग सुन्दर रसः रेचक, ज्वर, आमवात श्वास नाशक

(५०) विषरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२७८ श्वेतपुनर्नवामूल-योगः — १ वर्ष तक सर्पादि से रक्षा रहती है

चूर्ण-प्रकरणम्

७३०४ शिरीषादियोगः — सर्पविष
७८७३ सैन्धवादि योगः — स्थावर जंगम विष (सरल योग)

घृत-प्रकरणम्

७३७८ शिखरीघृतम् — समस्त विषविकार, विषम ज्वर
७९६१ सूर्योदय ,, — मकड़ीका विष

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

७४३९ शिरीषारिष्टः — समस्त विषविकार

लेप-प्रकरणम्

७४७० शिरीषादिलेपः — विष नाशक सरल योग।
७४७२ ,, ,, — मूषक विषनाशक सरल योग।
७४८६ श्वान विषहरो ,, — श्वान विष ,, ,,
८०६६ सोमवल्कलादि लेपः — दन्तविष, नखविष

अञ्जन-प्रकरणम्

८०८३ संज्ञाप्रबोधनरसः — सर्पविष
८०८५ सर्पविषहराञ्जनम् — ,,

नस्य-प्रकरणम्

७५१७ शिरीषपुष्पनस्यम् — मण्डूक विष
८११७ सिन्दुवारादिन० — मूषक विष।

रस-प्रकरणम्

७५७५ शर्करादिलेहः — उग्र कृत्रिम विष
७६१४ शिलादिपानकम् — तीव्र मूषक विष
८१२५ संजीवनीवटी — सर्पदष्ट मृतप्रायः रोगीको भी जीवन दान देती है।
८२४३ सुरसादियोगः — घोर मूषक विषको अवश्य नष्ट करता है।
८२५० सूचिकाभरणरसः — मूर्च्छा नाशक
८३७० स्वर्ण योगः — विषादि

मिश्र-प्रकरणम्

७७१८ शिरीषपुष्पादियोगः — सर्पविष
८६८७ सर्जरसयोगः — बर्रका दंश
८७६३ क्षारागदः — इसका लेप करके बाजे बजानेसे वायु विष रहित होती है।

(५१) विसर्पाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७७८६ सारिवादिक्वाथः विसर्पको शीघ्र नष्ट करता है।

लेप-प्रकरणम्

७४४५ शतधौतसर्पिः लेपः हर प्रकारका विसर्प

७४७४ शिरीषादि लेपः विसर्प और दाहको शीघ्र नष्ट करता है।

७४७५ शिरीषाष्टकः विसर्प, प्रस्वेद

८५६६ हरेण्वादि ,, विसर्प

(५२) वृद्ध्यधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

८४५६ हरीतकीयोगः कफवातज वृद्धि नाशक सरल योग।

८४७१ हरीतक्यादिचू० पुराना वृद्धि रोग(स. यो.)

घृत-प्रकरणम्

७३५८ शतपुष्पाद्यं घृतम् अन्त्रवृद्धि, वातवृद्धि, पित्तवृद्धि मेद, श्लीपद, मूत्रवृद्धि

७९६७ सौरेश्वरघृ० अन्त्रवृद्धि, शोथ, अर्श

लेप-प्रकरणम्

७४५२ शम्बूकयोगः कुरंड रोग

रस-प्रकरणम्

७५८४ शशि शेखर रसः अन्त्रवृद्धि

७६८८ श्वदंष्ट्रादि चूर्णम् वातज वर्ध्म

(५३) व्रणाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२०८ शरपुङ्खारसयोगः शस्त्राघात, सरलयोग

७२११ शाखोटादियोगः व्रणका वातज शोथ

गुग्गुलु-प्रकरणम्

७९१९ सप्तांगगुग्गुलुः नाड़ीव्रण, भगन्दर

घृत-प्रकरणम्

७३९१ श्यामाघृतम् कोष्ठगत नाड़ीव्रण

८०७५ स्वर्जिकादिघृ० व्रणकी खाज, कृमि, शोधक, रोपण

तैल-प्रकरणम्

८००३ सैन्धवाद्यं तैलम् गम्भीर कफ वातज नाड़ी व्रणको शीघ्र नष्ट करताहै।

८०१६ स्वर्जिकाद्यं तै० दुष्ट व्रण, कफज नाड़ीव्रण
८०१७ ,, ,, नाड़ी व्रण
८५३८ हरिद्रादि ,, व्रण
८५४६ हंसपादी ,, नाड़ी व्रण
८५५१ हिंस्राद्यं ,, शोधन रोपण

लेप-प्रकरणम्

७४४४ शणमूलादिलेपः कच्चे फोड़ेको पकाता है।
७४५३ शरपुंखादियोगः रोपण (सरल योग)
८०२१ सप्तदलादिलेपः व्रण शोथ
८०२९ सर्जिकादि ,, ,,
८०३८ सारिवादि ,, व्रणशोधक
८०३९ सिक्थकघृतम् व्रण
८०४० सिक्थकादिघृ व्रण
८०५३ सुधादि लेपः अग्निदग्ध व्रण. (उत्तम सरल योग)
८५६२ हरिद्रादि ,, व्रणको फाड़ देता है।
८५७० हस्तिदन्तादि ,, अत्यन्त कठिन व्रणको फोड़ता है।
८५७८ हेमक्षीर्यादिले० व्रणशोथको फाड़ देताहै।

मिश्र-प्रकरणम्

८३९९ मूत्रवर्तियोगः व्रणशोधक
८४१० स्नुकपत्रयोगः कठिन व्रण
८४११ स्नुहीक्षीराद्या वर्तिः नाड़ीव्रण, भगन्दर

(५४) शिरोरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२२७ शिरोविरेचनीयो-दशको महाकषायः शिरोरोग
७७३९ षडङ्गक्वाथः शिर भ्रू कर्णशूल, अर्धावभेद, सूर्यावर्त, शंखक, दन्तपात, दन्तपीड़ा

चूर्ण-प्रकरणम्

७३३३ श्रीखण्डादियोगः शिरपीड़ा

घृत-प्रकरणम्

७३७४ शतावर्यादियमकम् समस्त ऊर्ध्वजत्रुगतरोग
७७५५ षड्विन्दु घृतम् शिरशूल (नस्य)

तैल-प्रकरणम्

७४०७ शताह्वादितैलम् शिरशूल, वातकफज तिमिर
७४२९ श्लेष्मान्तकादि तैलम् पलित
७७६० षड्विन्दु ,, वातविकार, कृमिजन्य शिरोरोग
७७६२ ,, ,, समस्त शिरोरोग, बाल गिरना (दन्त पौष्टिक)
७९८७ सारिवाद्यं ,, दारुणक रोग, खाज
८५४५ हरिद्राद्यं ,, कफज तथा सान्निपातिक शिरोरोग

अञ्जन-प्रकरणम्

८०९५ सुप्रचेतना गुटिका शिरपीड़ा

नस्य-प्रकरणम्

७५१४ शर्करादिनस्यम् वातज तथा रक्तज भ्रू-शूल, शंखशूल, अर्धावभेद, सूर्यावर्त

७५१५ शालिपर्ण्यादि नस्यम् अर्धावभेद

७५२० शिरीषादियोगः ,,

७५२१ शिरोर्तिहररसः शिरपीड़ा

८११६ सितोपलादिनस्यम् अर्धावभेद

लेप-प्रकरणम्

७४५० शतावर्यादिलेपः सूर्यावर्त

७४५६ शारिवादि ,, ,, अर्धावभेद

७४५७ ,, ,, ,, ,,

७४८० शुण्ठ्यादि ,, कफज शिरपीड़ा

७४८४ श्यामादिलेपः त्रिदोषज शिरपीड़ाको तुरन्त नष्ट करता है।

८०२४ सरलादि ,, कफज शिरपीड़ा

८०२५ ,, ,, ,, ,, ,,

८०४९ सिन्दूरादि ,, बालोंको तुरन्त काला करने वाला केशकल्प

८०७३ स्नुह्यर्कादि ,, शिरोव्रण, कण्डू

८५६७ हरेण्वादि ,, कफज शिरपीड़ा

८५७१ हस्तिदन्तादि केशकल्प (खिज़ाब)

८५७२ हस्तिदन्ताद्यो खालित्य

रस-प्रकरणम्

७५८८ शिरोरोगारिरसः सूर्यावर्तादिको १ सप्ताहमें नष्ट करता है.

७५८९ शिरोवज्ररसः हर प्रकारकी शिरपीड़ा में उत्तम है.

८२८९ सूर्योदय रसः १ सप्ताहमें सूर्यावर्तादि को नष्ट करता है।

(५५) शीतपित्ताधिकारः

रस-प्रकरणम्

८२५७ सूतभस्मयोगः शीतपित्त

८६०२ हरिद्राखण्डः शीतपित्त, उदर्द और कोठको १ सप्ताहमें नष्ट करता है। खाजकी महौषध

८६०३ हरिद्राखण्डः शीतपित्त, उदर्द, कोठ, कंडू, ज्वर, शोथ, कृमि

मिश्र-प्रकरणम्

८३९५ सिद्धार्थाद्युद्वर्तनम् शीतपित्त, उदर्द, कोठ

(५६) शूलाधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

७१९५ शतावर्यादिक्वाथः दाह, शूल ज्वर
७१९६ " " " " पित्त
७२१८ शिग्रुक्वाथः पार्श्व हृद्बस्ति शूल
७२३६ शुण्ठ्यादिकल्कः परिणाम शूल, आमवात
७२५३ शूलप्रशमनो दशको महाकषायः शूल
८४३४ हिङ्ग्वादि क्वाथः वातज शूल
८४३५ " " शूल, गुल्म

चूर्ण–प्रकरणम्

७२९६ शर्कराद्यं चूर्णम् शूलके लिये अमृतोपम सरलयोग
७३०० शार्दूलं " शूल, आनाह
७३०१ " " कोष्ठरुजा इत्यादि
७३०६ शिवादि " शूल
७८५४ सुवर्चलादि योगः वातजशूल
७८५५ " " शूल
७८६५ सैन्धवादि चूर्णम् शूल
७८६८ " " वातज शूल
७८८४ सौवर्चलाद्यं " शूल, गुल्म
८४९१ हिङ्ग्वादि " पार्श्व हृदय कमर और पीठका शूल, शोथ, आनाह
८४९५ " " वातज शूल, विषूचिका
८४९८ " " शूल, अतिसार
८४९९ हिङ्ग्वादिचू० कुक्षि, पार्श्व, हृदय और बस्ति का शूल
८५०० " " शूल, अफारा, ज्वर, मलावरोध
८५०१ " " शूल, प्लीहा
८५०२ " " शूल, वातगुल्म
८५०३ " " "
८५०४ " " "
८५०५ " " पार्श्व हृदय बस्ति और योनि शूल, अफारा
८५०७ " " प्रवृ वातज शूल
८७१० क्षारामृत " शूल, आनाह, गुदभ्रंश, दाह, उद्गार अधिक आना, वमन
८७१३ क्षुद्र करवन्दयोगः अन्त्र शूल

गुटिका–प्रकरणम्

७९०२ सुवर्चलादिगुटिका वातज शूल
८५२२ हिङ्ग्वादि " वातज "
८५२३ हिङ्ग्वाद्या वटी पार्श्व कुक्षि और हृदयशूल

गुग्गुलु–प्रकरणम्

७९१४ सविंशतिको गुग्गुलुः पार्श्व कटि वंक्षण कुक्षि हृदयशूल

अवलेह-प्रकरणम्

८५२५ हरीतकीखण्डः — शूल, आनाह, कोष्ठकी वायु, अम्लपित्त

घृत-प्रकरणम्

७३८५ शालि घृतम् — हृदयशूल, पार्श्वशूल, वातव्याधि, हिक्का

तैल-प्रकरणम्

७४२० शूलगजेन्द्रतैलम् — उपद्रवयुक्त ८ प्रकारके शूल वमन, ज्वर

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

८०२० सूक्ष्मैलाद्यरिष्टः — शूल

लेप-प्रकरणम्

८५७४ हिङ्ग्वादि लेपः — शूल

धूप-प्रकरणम्

८०७७ सक्तुधूपः — शूल

रस-प्रकरणम्

७५३० शंख चूर्णम् — यकृच्छूल, परिणाम शूल, अन्नद्रव शूल, अन्न शूल

७५३१ ,, ,, — त्रिदोषज शूल

७५३८ शंखद्रावः — तीव्र शूल, तूणि, प्रतूणि, अजीर्ण

७५४५ शंखभास्कररसः — समस्त शूल

७५४८ शंखवटी — शूल, अजीर्ण, विषूचिका, अलसकादि

७५४९ ,, ,, — शूल, अजीर्ण, अग्निमांद्य, मूत्रकृच्छ्र

७५५० ,, ,, — शूल, वातव्याधि, क्षय, कास, श्वास, अजीर्ण

७५५७ शंखादिचूर्णम् — शूल, अम्लपित्तादि

७५५८ ,, ,, — समस्त शूलों में उत्तम

७५६७ शतावरीमण्डूरम् — त्रिदोषज शूल, अम्लपित्त, वमन, कास, श्वास

७५६८ शतावरी ,, — वातपित्तज परिणाम शू०

७५७० शम्बूकयोगः — पक्ति शूलको तुरन्त नष्ट करता है।

७५७२ शम्बूकादिवटी — परिणाम शूलको शीघ्र नष्ट करती है।

७५७३ शम्बूकाद्यगुटिका — पित्तज शूल, शोथ, गुल्म

७५७६ शर्करामण्डूरम् — पक्ति ,,

७५७७ शर्करालौहम् — पित्तज शूल, हृदयशूल, पार्श्व शूल, कुक्षि शूल, बस्ति शूल, गुदपीड़ा, आनाह आदि

७५७८ शर्करालौहम् — समस्त शूल

७६१८ शिलावज्ररसः — पित्तज शूल

७६५१ शुल्वसुन्दररसः — वातज पित्तज पक्तिशूलको शीघ्र नष्ट करता है।

७६५२ शूलकुठाररसः — समस्त शूल

७६५३ ,, गजकेसरी गुटिका — शूल, अग्निमांद्य, विबन्ध, गुल्म, ज्वर

७६५४	शूल गजकेसरी रसः	असाध्य शूल
७६५५	„ „ „	शूल
७६५६	„ „ „	शूल
७६५७	„ „ „	समस्त उपद्रव युक्त शूल
७६५८	शूलगजकेसरीरसः	समस्त शूल
७६५९	शूलदावानलरसः	„ „
७६६०	शूलराजलौहम्	सर्वदोषज कुक्षि शूल, हृदय शूल, पार्श्व शूल, अम्लपित्त, विसूचिका
७६६१	शूलवज्रिणी वटिका	समस्त शूल, गुल्म, शोथ, पिपासादि
७६६२	शूलसिंहरसः	कफज शूल
७६६३	शूलहरक्षारः	शूलको तत्काल नष्ट करता है।
७६६४	शूलहरणयोगः	शूल, ग्रहणी, अतिसार, अग्निमांद्य
७६६५	शूलान्तकरसः	समस्त शूलनाशक, रेचक
७६६६	„ „	परिणाम शूल, अम्लपित्त, वमन, अन्नद्रव शूल
७६६७	शूलेभसिंहिनीगु०	शूल, नेत्रस्राव
७६८७	श्लेष्मान्तकरस.	कफज शूल, अग्निमांद्य
७७६८	षण्मुखो रसः	आमशूल
८१५६	समीरशूलेभहरिः	वातजशूल
८१७४	सर्वतोभद्र लौहः	त्रिक शूल, कटि शूल, मुखस्राव, नाभिसे ऊपरका आम ज्वर
८१८५	सर्वांगसुन्दररसः	शूल, गुल्म
८१८९	„ „ „	समस्त शूल, कफवातज रोग
८१९२	सर्वेश्वर चूर्णम्	समस्त शूल, उदररोग, अग्निमांद्य
८२०८	सामुद्राद्यं चूर्णम्	परिणाम शूल और नाभिशूलमें अत्यन्त प्रभावशाली
८२८२	सूर्यप्रभावटी	आठ प्रकारके शूल
८५१०	हरीतकी खण्डः	दुर्जय अम्लपित्त, अन्नद्रव शूल, समस्त शूल, कासादि
८६१५	हरीतक्यादि योगः	समस्त शूल
८६१७	„ वटी	पुराना भयंकर शूल, अतिसार, अजीर्ण
८७४४	क्षारताम्र रसः	समस्त शूल
८७४५	„ „	वातज शूल
८७४८	क्षीरमण्डूरम्	पक्ति शूल

मिश्र–प्रकरणम्

८७६४	क्षाराम्बु योगः	वातकफज शूल

(५७) शोथाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७२४५ शुण्ठ्यादिकाथः वातज शोथ
७२६२ शोथघ्न्यादिकाथः शोथ
७२६३ शोथहरो दशको महाकषायः शोथ
७७८० सरलादिकल्कः कफ वातज शोथ
७७९९ सिंहास्यादिका० शोथ, कास, श्वास, ज्वर
७८१८ स्थलपद्मकल्कः सर्वाङ्गिकाङ्गशोथ, प्लीहा
८४३१ हरीतक्यादि यो० ज्वरजनित शोथ

चूर्ण-प्रकरणम्

७३२९ शोथारिचूर्णम् दारुण शोथ, और पाण्डु शीघ्र नष्ट होता है।
७८५७ सुवर्ण समकं ,, सर्व शरीरगत शोथ, ज्वर, पांडु, उदररोग
७८८६ स्नुक् क्षारभावित पिप्पली तथा हर्र कफज शोथ

गुटिका-प्रकरणम्

८७१५ क्षार गुटिका शोथ, प्लीहा, उदररोग, पाण्डु, श्वास कासादि

अवलेह-प्रकरणम्

८५२७ हरीतक्यवलेहः प्रवृद्ध शोथ, ज्वर, अम्लपित्त, मूत्रदोष, श्वास, कास, गरदोष

घृत-प्रकरणम्

७९६९ सौवर्चलादिघृतम् शोथ, अर्श, गुल्म, प्रमेह
७९७० स्थल पद्मक ,, दारुण शोथ, खांसी

तैल-प्रकरणम्

७४१६ शुष्कमूलाद्यं तै० शोथ, शूल
७४१८ ,, ,, ,, दुष्ट विकार जनित तथा मलजनित अनेक शोथ
७४१९ ,, ,, ,, विरुद्ध भेषज जनितशोथ व्रणशोथ
७४२२ शैलेयतैलम् वातजशोथ
७४२३ शोथशार्दूलतै० सर्व देहगत भयंकर शोथ, श्लीपद, ज्वर
७९७९ समुद्रशोषणतै० कफपित्तज शोथ, शिरकी सूजन, कर्णशोथ, दन्तवेष्टशोथ, हनुमूल शोथ, नेत्रशोथ, श्लीपद

लेप-प्रकरणम्

७४६१ शिग्रुत्वगादिलेपः कफजशोथ
८०२३ समुद्रफेनजशोथघ्न लेपः समुद्रफेनके घर्षणसे उत्पन्न मण्डल आदि

रस-प्रकरणम्

७५९५ शिलाजतुयोगः त्रिदोषज शोथ

७६७० शोथकालानलो	शोथको अवश्य नष्ट करता है। ज्वर, श्वास, कासादि	७६७७ शोथोदरारिलौहम्	हर प्रकारके कष्टसाध्य पुराने शोथमें उत्तम. शोथोदरमें श्रेष्ठ. उदर-रोग, कामला अर्श और ज्वरनाशक
७६७१ शोथभस्मलौहः	उदरशोथ, समस्त शरीरगतशोथ, संग्रहणी	७६९० श्वयथुघातारि रसः	शोथोदर
७६७२ शोथाङ्कुशो	सर्वाङ्गशोथ, ज्वर, पाण्डु	८२३९ सुधानिधिरसः	शोथ, संग्रहणी, पाण्डु
७६७३ शोथारिमं०	सर्वदोषज सर्वाङ्ग शोथ	८२४९ सुवर्चलाद्य लौ०	शोथ, पाण्डु, कास
७६७४ " रसः	शोथनाशक, मूत्रल	८७५४ क्षेत्रपाल रसः	शोथ, दुस्तर संग्रहणी, ज्वर, अग्निमांद्य
७६७५ " रसः	समस्त शोथ		
७६७६ " लौ०	शोथको शीघ्र नष्ट करता है।		

(५८) श्लीपदाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

८४५३ हरिद्राद्यं चूर्णम्	१ वर्ष पुराना श्लीपद (सरलयोग)
८४७३ हरीतक्यादि"	श्लीपदको ७ दिनमें नष्ट करता है। (सरलयोग)

घृत-प्रकरणम्

७९९७ सौरेश्वरघृतम्	रक्त मांस और मेदमें स्थित कफ वातज श्लीपदको अवश्य नष्ट कर देता है।

रस-प्रकरणम्

७६८१ श्लीपदगजकेसरी	कष्टसाध्य श्लीपद, प्लीहावृद्धि
७६८२ श्लीपदारि लौहम्	श्लीपद

(५९) स्त्रीरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७१८९ शतावरीकल्कः स्तन्यवर्द्धक

७२०४ शताह्वादिकल्कः रक्तगुल्म

७२१५ शालिपिष्टयोगः गर्भपात

७२३७ शुण्ठ्यादिकषायः गर्भिणीकी छर्दि, अतिसार

७७७४ समङ्गादिकल्कः रक्तप्रदर

७७८१ सहचरादि सूतिका ज्वरको शीघ्र नष्ट करता है।

७७८४ ,, ,, प्रसूत ज्वर, शूल

७७८५ ,, ,, प्रसूतरोग, आमज्वर, (दीपन है)

७८०५ सुदर्शनामूलयोगः प्रदरनाशक सरल योग

७८११ सूतिकादशमूलम् ज्वर दाह युक्त सूतिका रोग

७८१६ स्तन्यजननो दशको महाकषायः स्तन्यवर्द्धक

७८१७ स्तन्यशोधनो दशको महाकषायः स्तन्यशोधक

८४३८ ह्रीवेरादिकषायः गर्भिणी और प्रसूताका पीड़ायुक्त और नाना वर्ण वाला अतिसार, रक्तस्राव, ज्वर

८४४२ ह्रीवेरादिक्वाथः गर्भचलन, कुक्षि शूल, प्रदर

चूर्ण-प्रकरणम्

७२९५ शर्करादियोगः गर्भपात

७३१५ शुण्ठ्यादिचू० प्रबल प्रदर नाशक, सरलयोग

७३२३ शूकरशिम्बीमूल योगः पुत्रोत्पादक

८५०६ हिङ्ग्वादि चूर्णम् योनिदोष, योनिशूल योनि को मृदु करता है।

गुटिका-प्रकरणम्

७३४२ श्रीफलकुसुमव० दुःसाध्य सूतिका रोग

अवलेह-प्रकरणम्

७९४१ सौभाग्यशुण्ठिपाकः सूतिका रोग, छर्दि, दाह, ज्वर, दाह, श्वास, कास, प्लीहा

७९४२ सौभाग्य शुण्ठिः समस्त स्त्रीरोग, कास, श्वास, अम्लपित्त (स्तनोंको दृढ करता है।)

७९४३ ,, ,, सूतिका रोगमें विशेष गुणकारी, योनि रोग, प्रदर, आर्तवदोष, शिरो वेदना, कटि शूल.

घृत-प्रकरणम्

७३६१ शतावरी घृतम् रक्तप्रदर, दाह, मूत्रकृच्छ्र

७३६२ ,, ,, रक्तप्रदर, क्षय इत्यादि

७३७७	शाल्मली घृ०	समस्त प्रदर
७३७९	शीतकल्याणकं घृतम्	प्रदर, रक्तगुल्म, ज्वर, अरुचि, अल्पार्त्तव, गर्भ न रहना
७९६३	सोमघृतम्	गर्भावस्थामें सेवन करनेसे बुद्धिमान्, नीरोग और वाग्मी पुत्र उत्पन्न होता है। बन्ध्यत्व और योनिदोष नाशक।
७९६४	" "	ऊपरके समान।

तैल-प्रकरणम्

७४००	शतावरीतैलम्	योनिशूल, रक्तप्रदर नाशक तथा पुत्रदाता
७४२७	श्रीपर्णी तैलम्	स्तनोंको कठोर और पुष्ट करता है
८५५२	हेम सुन्दर तैलम्	सूतिका रोग, दुष्ट प्रस्वेद
८७३२	क्षार तैलम्	बालोंको निर्मूल करता है।

लेप-प्रकरणम्

७४४२	शंखादि लेपः	लोम नाशक
७४४२(अ)	" "	लोम निर्मूलक
७४५८	शालिपर्ण्यादि	सुख प्रसवकारक
७४७८	शुण्ठ्यादि	योनि शूल नाशक, योनि संकोचक सरल योग।
८५५६	हरितालादि	लोमनाशक।

रस-प्रकरणम्

७६०८	शिलाजतु वटिका	रक्त प्रदर, पाण्डु, ज्वर
८१२१	संकोच पिष्टिका रसः	प्रसूत वात, वातव्याधि, कुष्ठ.
८१८२	सर्वांगसुन्दररसः	अङ्गमर्द, पीड़ायुक्त समस्त प्रदर, कष्ट साध्य अग्निमांद्य, कास प्रतिश्या०
८२६५	सूतिकाघ्न रसः	सूतिका रोग, ज्वरातिसार, कास
८२६६	सूतिकान्तकरसः	सूतिका रोग, संग्रहणी, भयंकर अतिसार, कास
८२६७	सूतिकाभरणरसः	प्रवृद्ध सूतिका रोग, विशेषतः धनुर्वात्
८२६८	सूतिकारि रसः	कष्ट साध्य सूतिका रोग, ज्वर, तृषा, अरुचि, शोथ
८२६९	सूतिकारि रसः	सूतिका रोग, जीर्णज्वर, शोथ, ग्रहणी, प्लीहा, कास.
८२७०	सूतिकारोगनाशन रसः	सूतिका रोग
८२७१	सूतिकावल्लभोरसः	सूतिका, कष्ट साध्य ग्रहणी, प्रबल अतिसार, ग्रहणी, दुर्बलता
८२७२	सूतिकाविनोदरसः	सूतिका रोग
८२७३	सूतिकाहरो रसः	सूतिका रोगमें शीघ्र फल प्रद
८२७४	" "	सूतिका रोग, अतिसार शूल

८२९१ सोमनाथ रसः — अनेक प्रकारके सोम रोग, कष्ट साध्यप्रदर, पुराना योनिशूल, कष्ट साध्य बहुमूत्रको अवश्य नष्ट करता है।

८२९२ सोमनाथ रसः — सोमरोग, बहुमूत्र मधुमेह

८३०१ सौभाग्य शुंठी — सूतिकारोग, अतिसार, ग्रहणी

८३०२ सौभाग्यशुण्ठिपाकः — सूतिका रोग, दुग्ध-क्षय, ज्वर, रक्त गुल्म, प्रदर, सोमरोग

८३०४ सौभाग्यशुण्ठ्य-वलेहः — सूतिकारोग, सकल शूल, निर्बलता

मिश्र-प्रकरणम्

७७१० शरपुंखामूलयोगः — सुखप्रसव कारक

७७२१ शीत जल कुंभ धारणम् — रक्त प्रदरमें तुरन्त लाभ पहुंचाता है।

८४०७ स्नुक्क्षीर योगः — मूढ गर्भ

८३८८ सर्प कंचुकी योगः — ,,

(६०) स्नायुकरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

७७७२ सप्तपर्णयोगः — नहरुवा (स्नायुक)

लेप-प्रकरणम्

७४६३ शिग्रुमूलादिलेपः — स्नायुक नाशक सरलयोग

(६१) हृद्रोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

८४३७ हृद्यो दशको महाकषायः — हृद्य

चूर्ण-प्रकरणम्

७३२० शुण्ठ्याद्यं चूर्णम् — हृद्रोग, श्वास

७८५८ सूक्ष्मैलादि ,, — कफज हृद्रोग

८४६७ हरीतक्यादि ,, — हृद्रोग

८४८२ हारहूरादि ,, — पित्तज हृद्रोग

८४८५ हिङ्गुपञ्चकं ,, — हृद्रोग, श्वास

८५१३ हिङ्ग्वाद्यं ,, — ,, शूल

गुटिका-प्रकरणम्

७९०१ सुधावटी — हृद्रोग, प्रतिश्याय, श्वास, कास

घृत-प्रकरणम्

७३९३ श्रेयस्याद्य घृतम् — पित्तज हृद्रोग

७९७३ स्थिराद्यं ,, — ,,

८५२९ हरीतक्यादि ,, — वातज हृद्रोग, पार्श्वशूल

रस-प्रकरणम्

७५२७ शंकर वटी — हृद्रोग, फुफ्फुस रोग, जीर्णज्वर, प्रमेह, श्वास, आमवात

८६५४ हृदयार्णव रसः — कफज हृद्रोग

८६५५ हृद्रोग हर रसः — प्रवृद्ध हृद्रोग, अग्निमांद्य.

हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

अष्टांगहृदयम् (वाग्भट कृत, हिन्दी अनु० सहित)—लालचन्द्र वैद्य	(सजिल्द)	५५
	(अजिल्द)	४५
क्लीनीकल मेडिसिन (दो भागों में) —अत्रिदेव		शीघ्र
कायचिकित्सा—धर्मदत्त वैद्य		१६
चरकसंहिता—श्री जयदेव विद्यालंकार (हिन्दी अनुवाद सहित) भाग १	(सजिल्द)	४५
	(अजिल्द)	३०
भाग २ (अजिल्द) ३०;	(सजिल्द)	४५
देहधात्वग्निविज्ञानम्—हरिदत्त शास्त्री		१५
भावप्रकाशनिघंटु—विश्वनाथ द्विवेदी कृत हिन्दी टीका सहित		२०
भैषज्यरत्नावली—श्री जयदेव विद्यालंकार कृत हिन्दी टीका सहित, आठवां संस्करण (अजिल्द) ९०;	(सजिल्द)	१३५
माधवनिदान (मधुकोश संस्कृत टीका, हिन्दी अनुवाद सहित)—नरेन्द्रदेव शास्त्री (अजिल्द) ३५;	(सजिल्द)	५५
रसतरंगिणी (सदानन्द कृत हिन्दी टीका) —काशीनाथ शास्त्री	(सजिल्द)	६०
	(अजिल्द)	३५
रसरत्नसमुच्चय (धर्मानन्द शर्मा कृत हिन्दी व्याख्या)—अत्रिदेव विद्यालंकार (अजिल्द) ३०;	(सजिल्द)	४५
रसेन्द्रसारसंग्रह—नरेन्द्रनाथ	(सजिल्द)	२५
	(अजिल्द)	२०
व्याधिविज्ञान—आशानन्द पञ्चरत्न, प्रथम भाग १५, द्वितीय भाग	(सजिल्द)	४५
	(अजिल्द)	३०
सुश्रुतसंहिता (सम्पूर्ण)—अत्रिदेव विद्यालंकार कृत हिन्दी टीका सहित	(सजिल्द)	१२०
	(अजिल्द)	९०

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास

आधुनिक चिकित्साशास्त्र

धर्मदत्त वैद्य

इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इसमें आधुनिक काय-चिकित्सा के वर्णन के साथ-साथ आयुर्वेदिक काय-चिकित्सा का भी उल्लेख है। ये दोनों एक-दूसरे के सहायक सिद्ध हुए हैं। जहां आधुनिक काय-चिकित्सा How के प्रश्न का समाधान करती है वहां आयुर्वेदिक काय-चिकित्सा Why के प्रश्न का समाधान करती है, अर्थात् रोग का मूल कारण बताती है, जिसके फलस्वरूप चिकित्सा सुगम और ठीक होती है। यह स्पष्ट बताती है कि शरीर के तीन मूल तत्त्व देहाग्नि, देहप्राण, तथा देहवृद्धि हैं। इनके किसी अंग में मन्दता आ जाने से रोगोत्पत्ति होती है।

आयुर्वेद का एक विशेष दृष्टिकोण है जिससे त्रैदोषिक या त्रैधातुक चिकित्साशास्त्र का अध्ययन किया जाता है और रोगों में औषध, आहार, विहार आदि उपचारों का विधान किया जाता है। आयुर्वेद का मूल त्रैदोषिक दृष्टिकोण कभी नहीं बदला चाहे औषधियां भले ही बदलती रहें। अत: आयुर्वेद उपचारों के प्रयोग में स्वतन्त्रता देता है। इस प्रकार आयुर्वेद-चिकित्साशास्त्र का छात्र त्रैधातुक या त्रैदोषिक दृष्टिकोण को कभी दृष्टि से ओझल नहीं होने देता। इसलिए इन दोनों चिकित्साओं के अध्ययन से अवश्यमेव लाभ ही होगा क्योंकि दोनों का लक्ष्य रोगी को रोगमुक्त करना ही है। (सजिल्द) रु० १४०

(अजिल्द) रु० ९५

मानव-शरीर-रचना (दो भागों में)

मुकुन्दस्वरूप वर्मा

सम्पूर्ण चिकित्साशास्त्र आयुर्वेद के जिन तीन मूल आधारों पर आश्रित है उन्हें शरीररचनाविज्ञान, शरीरक्रियाविज्ञान और विकृतिविज्ञान कहते हैं उनमें शरीररचनाविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके बिना अन्य आयुर्वेद-शाखाओं का ज्ञान होना सम्भव ही नहीं।

इस विषय में पाश्चात्य वैज्ञानिकों के ही अनुसंधान उपयोगिता की दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। पाश्चात्य भाषाओं से अपरिचित चिकित्सक इन अनुसंधानों से लाभ नहीं उठा सकते। इस अभाव की पूर्ति के लिए इस ग्रन्थ की रचना की गई है। दुरूहता को हटाने के लिए अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के अनुवाद में स्वीकृत वैज्ञानिक-तकनीकी-शब्दावली का प्रयोग किया गया है और सैकड़ों चित्रों से समझाया गया है।

प्रथम भाग में ऊतकविज्ञान (Histology), भ्रूणविज्ञान (Embryology) और अस्थिविज्ञान (Osteology) विषयों का वर्णन है और द्वितीय भाग में सन्धिविज्ञान (Syndesmology), मांसपेशीविज्ञान (Myology) और वाहिका-विज्ञान (Angiology) विषयों का विवेचन हुआ है।

यह कृति शरीर-रचना के जिज्ञासुओं के लिए अतीव उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रथम भाग: रु० ५०

द्वितीय भाग: (अजिल्द) रु० ७५; (सजिल्द) रु० १००

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास

आधुनिक चिकित्साशास्त्र

धर्मदत्त वैद्य

इस ग्रन्थ की यह विशेषता है कि इसमें आधुनिक काय-चिकित्सा के वर्णन के साथ-साथ आयुर्वेदिक काय-चिकित्सा का भी उल्लेख है। ये दोनों एक-दूसरे के सहायक सिद्ध हुए हैं। जहां आधुनिक काय-चिकित्सा How के प्रश्न का समाधान करती है वहां आयुर्वेदिक काय-चिकित्सा Why के प्रश्न का समाधान करती है, अर्थात् रोग का मूल कारण बताती है, जिसके फलस्वरूप चिकित्सा सुगम और ठीक होती है। यह स्पष्ट बताती है कि शरीर के तीन मूल तत्त्व देहाग्नि, देहप्राण, तथा देहवृद्धि हैं। इनके किसी अंग में मन्दता आ जाने से रोगोत्पत्ति होती है।

आयुर्वेद का एक विशेष दृष्टिकोण है जिससे त्रैदोषिक या त्रैधातुक चिकित्सा-शास्त्र का अध्ययन किया जाता है और रोगों में औषध, आहार, विहार आदि उपचारों का विधान किया जाता है। आयुर्वेद का मूल त्रैदोषिक दृष्टिकोण कभी नहीं बदला चाहे औषधियाँ भले ही बदलती रहें। अतः आयुर्वेद उपचारों के प्रयोग में स्वतन्त्रता देता है। इस प्रकार आयुर्वेद-चिकित्साशास्त्र का छात्र त्रैधातुक या त्रैदोषिक दृष्टिकोण को कभी दृष्टि से ओझल नहीं होने देता। इसलिए इन दोनों चिकित्साओं के अध्ययन से अवश्यमेव लाभ ही होगा क्योंकि दोनों का लक्ष्य रोगी को रोगमुक्त करना ही है। (सजिल्द) रु० १४०

(अजिल्द) रु० ६५

मानव-शरीर-रचना (दो भागों में)

मुकुन्दस्वरूप वर्मा

सम्पूर्ण चिकित्साशास्त्र आयुर्वेद के जिन तीन मूल आधारों पर आश्रित है उन्हें शरीररचनाविज्ञान, शरीरक्रियाविज्ञान और विकृतिविज्ञान कहते हैं उनमें शरीररचनाविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके बिना अन्य आयुर्वेद-शाखाओं का ज्ञान होना सम्भव ही नहीं।

इस विषय में पाश्चात्य वैज्ञानिकों के ही अनुसंधान उपयोगिता की दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। पाश्चात्य भाषाओं से अपरिचित चिकित्सक इन अनुसंधानों से लाभ नहीं उठा सकते। इस अभाव की पूर्ति के लिए इस ग्रन्थ की रचना की गई है। दुरूहता को हटाने के लिए अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के अनुवाद में स्वीकृत वैज्ञानिक-तकनीकी-शब्दावली का प्रयोग किया गया है और सैकड़ों चित्रों से समझाया गया है।

प्रथम भाग में ऊतकविज्ञान (Histology), भ्रूणविज्ञान (Embryology) और अस्थिविज्ञान (Osteology) विषयों का वर्णन है और द्वितीय भाग में सन्धिविज्ञान (Syndesmology), मांसपेशीविज्ञान (Myology) और वाहिका-विज्ञान (Angiology) विषयों का विवेचन हुआ है।

यह कृति शरीर-रचना के जिज्ञासुओं के लिए अतीव उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रथम भाग: रु० ५०

द्वितीय भाग: (अजिल्द) रु० ७५; (सजिल्द) रु० १००

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास

हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

अष्टांगहृदयम् (वाग्भट कृत, हिन्दी अनु० सहित)—लालचन्द्र वैद्य (सजिल्द)	५५
(अजिल्द)	४५
क्लीनीकल मेडिसिन (दो भागों में) —अत्रिदेव	शीघ्र
कायचिकित्सा—धर्मदत्त वैद्य	१६
चरकसंहिता—श्री जयदेव विद्यालंकार (हिन्दी अनुवाद सहित) भाग १ (सजिल्द)	४५
(अजिल्द)	३०
भाग २ (अजिल्द) ३०; (सजिल्द)	४५
देहधात्वग्निविज्ञानम्—हरिदत्त शास्त्री	१५
भावप्रकाशनिघंटु—विश्वनाथ द्विवेदी कृत हिन्दी टीका सहित	२०
भैषज्यरत्नावली—श्री जयदेव विद्यालंकार कृत हिन्दी टीका सहित, आठवां संस्करण (अजिल्द) ९०; (सजिल्द)	१३५
माधवनिदान (मधुकोश संस्कृत टीका, हिन्दी अनुवाद सहित)—नरेन्द्रदेव शास्त्री (अजिल्द) ३५; (सजिल्द)	५५
रसतरंगिणी (सदानन्द कृत हिन्दी टीका) —काशीनाथ शास्त्री (सजिल्द)	६०
(अजिल्द)	३५
रसरत्नसमुच्चय (धर्मानन्द शर्मा कृत हिन्दी व्याख्या)—अत्रिदेव विद्यालंकार (अजिल्द) ३०; (सजिल्द)	४५
रसेन्द्रसारसंग्रह—नरेन्द्रनाथ (सजिल्द)	२५
(अजिल्द)	२०
व्याधिविज्ञान—आशानन्द पञ्चरत्न, प्रथम भाग १५, द्वितीय भाग (सजिल्द)	४५
(अजिल्द)	३०
सुश्रुतसंहिता (सम्पूर्ण)—अत्रिदेव विद्यालंकार कृत हिन्दी टीका सहित (सजिल्द)	१२०
(अजिल्द)	९०

मोतीलाल बनारसीदास
दिल्ली वाराणसी पटना मद्रास